KADMBINI FEB-JUNE 1979 G.K.U.

110397

[redacted]

~~8~~ 20/3/18

2940 19/3/86

1734

26/5/92

1695

16/6/89

बसंत अंक

भारतीय भाषाओं की विशिष्ट

मासिक प्रकाश

KT-821

5/2/79

कादम्बिनी

फरवरी ७

हिन्दुस्तान टाइम्स प्रकाशन

[illegible] दीर्घ जीवन के लिये 3000 वर्ष पुराना नुसखा

डाबर च्यवनप्राश
पूरे परिवार के लिये 8 सूत्री
आयुर्वेदिक टॉनिक

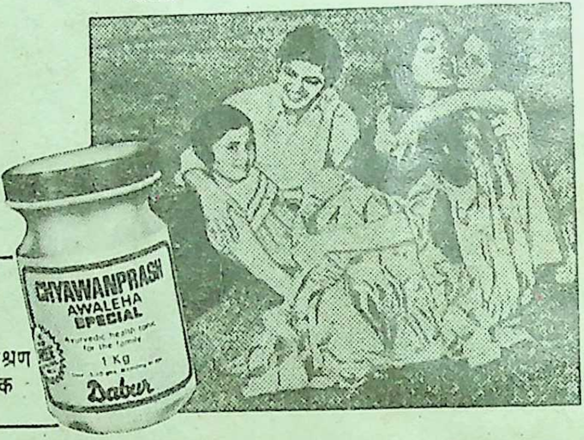
CHYAWANPRASH
AWALEHA
SPECIAL
Ayurvedic health tonic for the family
1 Kg
Dabur

विटामिन सी
से भरपूर
स्वादिष्ट
खट्टा-मीठा मिश्रण
अपने प्राकृतिक
रूप में

१. शरीर के तंतुओं को जवान रखता है
डाबर च्यवनप्राश से शरीर के तंतुओं का क्षय धीमा पड़ जाता है।

२. शरीर की प्रतिरक्षा शक्ति को बढ़ाता है
डाबर च्यवनप्राश शरीर की संपूर्ण प्रतिरोधक शक्ति का विकास करता है तथा सर्दी और जुकाम में भी लाभदायक है।

३. स्फूर्ति प्रदान करता है
डाबर च्यवनप्राश बच्चों में स्फूर्ति बनाए रखता है और वृद्धावस्था में कार्यशक्ति विकसित करता है।

४. इसमें संचय और वृद्धि करने के गुण हैं
डाबर च्यवनप्राश शरीर के विकास में मदद देता है।

देवताओं का नुसखा
च्यवनप्राश का नुसखा ३००० वर्षों से भी पहले का है, जैसाकि कहा जाता है कि देवताओं के चिकित्सकों ने महर्षि च्यवन को उनका यौवन फिर से प्रदान करने के लिए तैयार किया था। यद्यपि च्यवनप्राश सम्भवतः विश्व में प्राचीन स्वास्थ्य-प्रद टानिक है, तथापि डाबर में इसके बनाने का तरीका पूर्ण आधुनिक एवं वैज्ञानिक है।

मुफ्त चम्मच एक किलो डिब्बे के साथ

एक शक्तिदायक आयुर्वेदिक टानिक

डाबर च्यवनप्राश

सभी दवा विक्रेताओं के यहां मिलता है।

110397

रुचिकर और स्वादिष्ट मुखशुद्धि के लिए

CHAMAN
SWEET, DELICIOUS AND FRAGRANT.
STAR COMPANY, 36, Kapileshwar, BELGAUM.
चमन

110397

चमन अति स्वादिष्ट, रुचिकर, सुगंधित चूर्ण है। इसके सेवन से जायका सुधरता है और मुंह सुगंधिक होता है

चमन में क्या-क्या हैं ?

चमन में मुलेठी, केसर, इलायची लौंग, जायपत्री सौंफ, मेंथॉल जैसी अनेक प्रकार की सुगंधित एवं रुचिकर वस्तुएं मिलायी जाती हैं। इसका बच्चों से बूढों तक सभी रुचि से सेवन करते हैं।

स्टार कंपनी, बेलगांव.

इलाहाबाद बैंक की डबल डिपॉजिट योजना से मुझे होता है—दोहरा फायदा।

U-AB-4 Hin

जिसका मतलब है मेरा धन दो तरह से बढ़ रहा है!

जी हाँ, इलाहाबाद बैंक की डबल डिपॉजिट योजना से दुगुना फायदा होता है। मुझे मिलता है एक अच्छा-खासा ब्याज—और ब्याज की रकम हर तिमाही मेरे मूलधन में जोड़ दी जाती है जिससे अगली तिमाही में मुझे और ज्यादा रकम पर ब्याज मिलता है।

और यदि मैं अपनी रकम ८ वर्ष के लिये जमा करूँ तो मेरा मूलधन दुगुने से भी ज्यादा हो जायेगा।

- जमा की अधिकतम अवधि १० वर्ष—१,००० रुपये के गुणितों में।
- बैंक जमा पर प्राप्य ३,००० रुपये तक का वार्षिक ब्याज आयकर से मुक्त है।
- इसके साथ ही बैंक में जमा १,५०,००० रुपये तक की राशि सम्पत्ति कर से मुक्त है।
- अर्जित ब्याज का प्रमाणपत्र हर वर्ष दिया जाता है।

आइये, अपनी बचत से इलाहाबाद बैंक में दोहरा फायदा उठाइये। अधिक जानकारी के लिये किसी भी निकटतम शाखा में पधारिये।

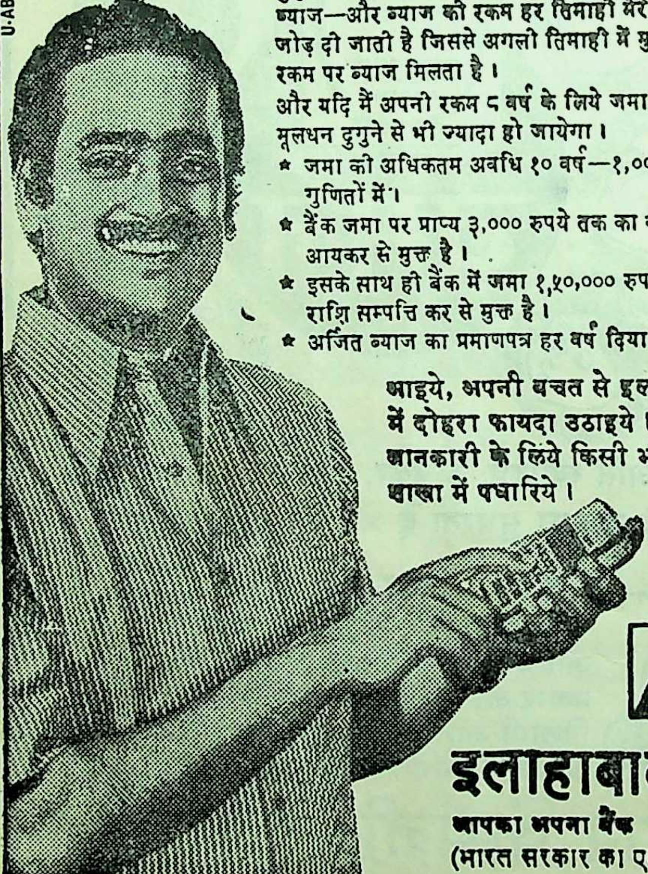

इलाहाबाद बैंक

आपका अपना बैंक
(भारत सरकार का एक प्रतिष्ठान)

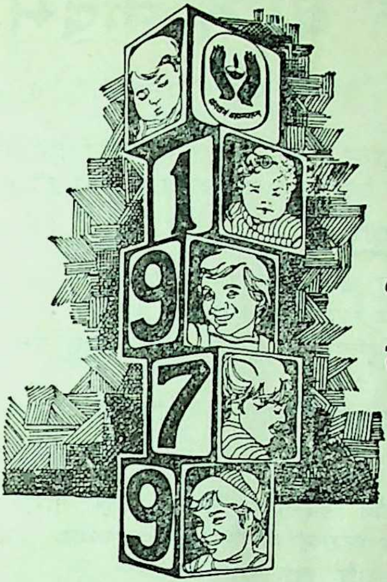

"अन्तर्राष्ट्रीय बाल वर्ष"—

चिल्ड्रन्स एन्टिसिपेटिड पालिसी

इस विशेष पालिसी द्वारा आपका लाड़ला बच्चा यह अनुभव कर सकेगा कि यह वर्ष उसके लिए विशेष महत्त्व रखता है। यह किशोरावस्था में प्रारम्भ होने वाली योजना है जिसमें विस्तृत जीवन-सुरक्षा के साथ साथ जीवन के महत्त्वपूर्ण मोड़ पर एक मुश्त रकम भी मिलती है।

यदि आपके बच्चे की आयु 6 माह से 14 वर्ष तक के बीच में है तो जीवन बीमा निगम की नई चिल्ड्रन्स एन्टिसिपेटिड पालिसी लीजिये। याद रखिये, कम उम्र में, जबकि प्रीमियम काफी कम होते हैं बीमा कराना लाभकर रहता है। आपके बच्चे की आयु 18 या 21 वर्ष हो जाने पर यह पालिसी प्रबन्ध करती है:

- शिक्षा, शादी, जीवन के शुभारम्भ आदि के लिए एक मुश्त रकम।
- पालिसी के पूरे अंकित मूल्य के लिए जीवन सुरक्षा। बोनस का भुगतान पालिसी की मियाद पूरी होने पर या मृत्यु होने पर।

जीवन बीमा निगमने चिल्ड्रन्स एन्टिसिपेटिड पालिसी को राष्ट्र के सभी बच्चों के नाम समर्पित किया है। इसे अपने बच्चों का प्रिय उपहार बनाइए, जो सुरक्षा के मार्ग पर दृढ़ता से कदम रखने में उनकी सहायता करेगा।

भारतीय जीवन बीमा निगम

जीवन बीमा का कोई विकल्प नहीं है

daCunha/LIC/56 HN.

दिल्ली के बढ़ते कदम

स्वच्छ प्रशासन

दिल्ली प्रशासन ने भ्रष्टाचार खत्म करने और जनता को हर प्रकार की बुनियादी सुविधाएं दिलाने के लिए कारगर कदम उउठाए हैं।

हरिजनों व पिछड़े वर्गों की भलाई

हरिजन कल्याण योजनाओं पर ७५ लाख रुपये खर्च
चालू वित्तीय वर्ष में १०४ लाख रुपये की व्यवस्था
कमजोर वर्ग के लोगों के लिए पुनर्वास बस्तियों में १०० आंगनवाड़ियां और अन्य सुविधाएं
तकनीकी संस्थानों में सभी हरिजन छात्रों को विशेष छात्रवृत्तियां।

सबके लिए शिक्षा

शिक्षा प्रसार के मामले में राष्ट्रीय लक्ष्यों से दिल्ली कहीं आगे
सभी बच्चों को शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए १५ उच्चतर माध्यमिक तथा ६ माध्यमिक विद्यालय और खोले गये।
इस वर्ष १९ उच्चतर माध्यमिक, १० माध्यमिक तथा ५० प्राथमिक विद्यालय खोलने का लक्ष्य।
पिछड़े क्षेत्रों में ३० अल्पकालिक स्कूल।
ग्रामीण छात्राओं को मुफ्त परिवहन सुविधा।
निर्धन छात्रों को मुफ्त पुस्तकें वर्दियां।

चिकित्सा सुविधाएं

गरीबों तथा गांवों के लोगों के द्वार पर चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध।
दीनदयाल उपाध्याय अस्पताल में ५०० बिस्तरों की व्यवस्था।
शाहदरा क्षेत्र में ५०० बिस्तरों वाला अस्पताल बनाने का कार्य आरम्भ
ग्रामीण क्षेत्रों व दूर-दराज की बस्तियों में १०० बिस्तरों वाले अस्पताल तथा ५ अस्पतालों के लिए स्थानों का चुनाव।
लोकनायक जयप्रकाश नारायण अस्पताल में गुरू नानक नेत्र चिकित्सा केन्द्र की स्थापना।

खाद्य एवं नागरिक सम्भरण

दाल, सब्जी, चाय, साबुन आदि आवश्यक वस्तुएं उचित दामों पर।
राशन कार्ड पर और अधिक अनाज तथा चाहे जितना आटा।
भ्रष्ट व्यापारियों के विरुद्ध कड़ी कार्यवाही।

सूचना एवं प्रचार निदेशालय, दिल्ली प्रशासन, दिल्ली द्वारा प्रसारित

दुगना अपना प्रीत
मैं इनकी
हर मौसम की मीत!

मन को गर्मी तन को ठंडक पहुँचाती हूँ– ढ़ेरों गरमागरम पानी से नहाते हैं न तब तो बदन खुल जाता है— मन खिल उठता है... इनकी ''ये'' भी मुझे अपना समझती हैं क्यों कि धुलाई और सफाई के लिये उन्हें मेरी मदद लेनी पड़ती है। सिर्फ़ २० मिनट लगते हैं मुझे गर्म पानी का चश्मा बन जाने में। उत्कृष्ट तांबे की मोटी चादर से बनी हूँ और टिन की मोटी पर्त से मढ़ी हूँ ताकि जंग का मुकाबला कर सकूँ।

इसके अलावा विशेष रूप के बढ़िया हीटिंग ऐलीमेंट से युक्त भी हूँ।

'ये' और इनकी 'वो' उन लाखों में से हैं जो समान रूप से मुझे अपना समझते हैं और यही वजह है जो बरसों से लाखों घरों में घर किये हूँ। आखिर मैं बजाज स्टोरेज वॉटर हीटर जो हूँ।

heros' BE-393 HN

bajaj आज ही खरीदें
बजाज ही खरीदें

सफ़ैदी ऐसी चकाचौंध
कि जो भी देखे, वो बोले...

यह है
डेट
डिटर्जेंट
टिकिया की
धुलाई

डेट
सुप्रीम
डेट
डिटर्जेंट धुलाई की टिकिया

Shilpi DM 35A/78 Hin

अब एक बढ़िया आधुनिक शॅम्पू आप के परिवार के हर सदस्य के लिए सचमुच किफायती दाम पर

Palmolive
FAMILY
Shampoo
Good, rich shampoo for your family.

एक सुन्दर अटूट बोतल में सुरक्षित और सुविधा दायक

नया पामऑलिव फॅमिली शॅम्पू

आज का शॅम्पू : बढ़िया और गाढ़ा यह नया पामऑलिव फॅमिली शॅम्पू न अधिक गाढ़ा है और ना ही ज़्यादा पतला किसी भी प्रकार के पानी में भरपूर झाग पैदा करनेवाला।

हर एक के बालों की सुरक्षा : नया पामऑलिव फॅमिली शॅम्पू आप के परिवार के हर सदस्य के लिये विशेष प्रकार से उपयुक्त बनाया गया है, यह छोटे बच्चों के बालों के लिये कोमल है। आपके बालों को मुलायम और चमकदार बनाता है। बालों को बिना रूखापन दिये साफ करता है। आप के घरवालों के लिये भी योग्य।

सचमुच कम दाम पर : जी हाँ–नया पामऑलिव शॅम्पू आप के सम्पूर्ण परिवार के लिये अति सुख दायक, अच्छा और बढ़िया शॅम्पू–अन्य प्रकार के शॅम्पूओं से कम दाम पर।

पामऑलिव फॅमिली शॅम्पू–उत्तम

आस्था के आयाम

नजीर और ताजमहल

सारा आगरा शहर किले में जैसे उमड़ पड़ा था। लोगों के चेहरे उदास, आंखें नम। उनके चहेते शायर नजीर अकबरावादी की आज विदाई थी। आगरा में बीस रुपये माहवार पानेवाले नजीर चार सौ रुपये माहवार पर लखनऊ जा रहे थे। भीड़ में अमीर-उमराव भी थे और वे कुम्हार और ककड़ीवाले भी थे, जिनके लिए नजीर ने कविताएं लिखी थीं। सबके गले रुंधे हुए थे। आखिर नजीर की एक प्रशंसिका तवायफ मोतीजान ने नजीर को लखनऊ ले जाने के लिए आये व्यक्ति से कहा, "आगरा बिना बादशाह का शहर है, इसीलिए आप इतनी बड़ी डकैती डालकर सही-सलामत जा रहे हैं" और रो पड़ी।

लखनऊ से आये व्यक्ति ने नजीर से कहा, "जल्दी कीजिए, देर हो रही है।"

उत्तर में नजीर ने पूछा, "जनाब, एक बात बताइए। लखनऊ है कैसा ?"

"लखनऊ की शान का क्या पूछते हैं ? नवाबों का शहर है। बड़ी-बड़ी आलीशान इमारतें . . ."

"पर वहां ताजमहल है ?"

"ताजमहल तो नहीं, पर उससे आलीशान इमारतें हैं।"

"तो मैं लखनऊ नहीं जाऊंगा। जिस शहर में ताजमहल नहीं, जहां शाहजहां और मुमताज-जैसे प्रेमी नहीं हुए, उस शहर में नजीर का क्या काम ?" यह कहकर नजीर ने चैन की सांस ली और मौजूद लोगों की ओर देखा। सबके चेहरे खिले हुए थे।

गुनाह की माफी

चौक, लखनऊ का भीड़-भाड़ और शोरगुल भरा मशहूर चौराहा।

अचानक एक रिक्शावाला रिक्शे से उतरता है और सड़क के बीचोंबीच कान पकड़कर, उठक-बैठक करने लगता है। आनन-फानन में भीड़ लग जाती है। जितनी जुबानें, उतनी बातें।

थोड़ी देर उठक-बैठक करने के बाद रिक्शावाला पुन: रिक्शे पर सवार होता है और घंटी टनटनाते हुए फिर से सफर पर चल पड़ता है।

रिक्शे में बैठे यात्री उससे पूछते हैं "भई रिक्शेवाले, भरे बाजार में तुम्हें

कान पकड़कर, उठक-बैठक करने की क्या सूझी ? अच्छा-खासा मजमा इकट्ठा हो गया था।"

रिक्शेवाले ने गंभीरता से उत्तर दिया, "जनाब, लगने दें मजमा ! मैं तो अभी हजरतगंज, चारबाग, किशनगंज और गोमती पर भी इसी तरह उठक-बैठक लगाऊंगा।"

"मगर क्यों ?"

"जनाब, मैं इस तरह सरे आम कान पकड़कर अपने एक गुनाह की तौबा कर रहा हूं।"

"कौन-सा गुनाह ?"

"जनाब, एक होटल में मैं भूल से सूअर का मांस खा गया। बस, उस दिन से रोज इसी तरह करता हूं और सरे-आम किये गये अपने गुनाह की खुदा से सरेआम माफी चाहता हूं।"

राजा भी प्रजा

स्वीडन की सैर के लिए निकले एक अमरीकी सैनिक ने पास बैठे सहयात्री से कहा, "अमरीका संसार का सबसे अधिक लोकतांत्रिक देश है। एक आम आदमी भी व्हाइट हाउस जाकर प्रेसीडेंट से बहस कर सकता है।"

"यह तो कुछ भी नहीं है। स्वीडन में तो राजा और प्रजा एक ही बस में साथ-साथ सफर करते हैं।" सहयात्री ने उत्तर दिया। थोड़ी देर बाद जब सहयात्री बस से नीचे उतरा तो उसमें बैठे अन्य यात्रियों ने उस सैनिक को बताया कि उसके साथ बात करनेवाले सज्जन स्वयं स्वीडन के राजा गुस्ताव चतुर्थ अडाल्फ थे।

निर्भीक चक्रवर्ती

नागपुर में विदर्भ हिंदी-साहित्य सम्मेलन द्वारा निर्मित मोर हिंदी-भवन का उद्घाटन! मुख्य अतिथि प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू स्वयं समारोह में हिंदी-भवन के उद्घाटन अवसर पर शुभ-संदेश पढ़े जा रहे हैं। एक संदेश सुनकर उपस्थित लोगों में रोष-सा छा गया है। संदेश स्वर्गीय चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य का है—

"आई कैन नॉट एसोशियेट मायसेल्फ विद् एनी फंक्शन विच प्रोपोगेट्स हिंदी।" (मैं ऐसे किसी भी कार्यक्रम से जो हिंदी का प्रचार करता हो, स्वयं को संबद्ध नहीं रख सकता।)

लेकिन सभा में उपस्थित प्रबुद्ध लोगों को राजाजी की निर्भीकता पसंद आयी। सिद्धांतों के प्रति अटल आस्था का गुण उन्हें एक प्रेरणा दे गया। ●

प्रतिक्रियाएं

जनता भोली है

'कादम्बिनी' के फरवरी अंक में रक्षा-मंत्री से संपादक की बातचीत ने कई बातें स्पष्ट कीं। 'जग्वार' के संबंध में रक्षा-मंत्री का स्पष्टीकरण विशेष संतुष्ट न कर सका। देश की राजनीतिक स्थिति पर बाबूजी की प्रतिक्रिया उनके व्यक्तित्व के अनुरूप ही थी। बाबूजी का कहना सही है कि 'वर्षों से परस्पर लड़नेवाली पार्टियां बीस माह में एक हो जाएंगी, यह अपेक्षा ही गलत है।' वास्तव में इस देश की जनता बहुत भोली है। वह सहज ही बड़ी-बड़ी आशाएं करने लगती है। तीस वर्षों की सतत निराशा ने भी उसका मोह-भंग नहीं किया, यह सचमुच आश्चर्य का विषय है। सत्ता को सर्वोपरि समझनेवालों से जनता क्यों देशहित की अपेक्षा करती है। बाबूजी की बातचीत से लगा, निराशा की कोई बात नहीं है। जो हो रहा है, ठीक हो रहा है।

—सविता सान्याल, कलकत्ता

ईमानदारी की जरूरत है

'कादम्बिनी' के नाम पर लगभग दो सौ पृष्ठों की अमूल्य और ठोस सामग्री से सजी जो 'पुस्तक' आप प्रतिमास पाठकों को केवल सवा दो रुपये में देते हैं, वह निश्चय ही स्तुत्य कार्य है।

जनवरी का अंक पढ़ रहा हूं। बड़ी विविधता है। इस अंक में संगमलाल मालवीय ने 'उठ जाग मुसाफिर भोर भई' लेख में पं. वंशीधर शुक्ल के बारे में और उसे लेकर इस प्रकार के अन्य व्यक्तियों के बारे में सही सवाल उठाया है।

रक्षा-मंत्री श्री जगजीवनराम से हुई आपकी बातचीत भी पढ़ी। उनके उत्तरों में कूटनीतिपूर्ण घुमाव-फिराव है अथवा यथापूर्व स्थिति रहने का संकेत। बातचीत का सारांश यह कि जो पिछले तीस साल से होता आया है, वही आगे भी होता रहेगा। प्रश्न उठता है कि इस 'होने' का शिकार आम जनता ही क्यों होती है, मंत्री क्यों नहीं होता? एक बात और, यदि 'सरकार समाज को नहीं बदल सकती' तो फिर दहेज-प्रथा, विवाह-कानून, अस्पृश्यता-निवारण आदि नियम-कानून बनाते चले जाने का क्या लाभ?

'समय के हस्ताक्षर' में आपने ठीक लिखा है—"साहित्यकार अगर मौन होकर बैठा रहे तो आपातकाल का विरोध और 'दूसरी आजादी' का हर्ष कोई अर्थ नहीं रखता।" पर जो लोग पहले मौन थे वे आज भी मौन हैं और जो लोग सरकारी

क्षेत्रों में पहले पूजित थे, वे ही आपातकाल का समर्थन और विरोध दोनों साथ-साथ करते हुए आज भी सरकारी क्षेत्रों में पूजित हैं।

कला और कलाबाजी में कुशल बुद्धिजीवियों को आप क्या संदेश देना चाहते हैं? जिस ईमानदारी की जरूरत है, वह न राजनीतिक क्षेत्र में है और न साहित्यिक क्षेत्र में।

—विश्वप्रकाश दीक्षित 'बटुक,' नयी दिल्ली

महाभारत का युद्ध-विज्ञान

मेजर पी. सेनसर्मा का 'कुरुक्षेत्र-युद्ध' शीर्षक सार-संक्षेप अत्यंत महत्त्वपूर्ण लगा। महाभारत-युद्ध के वैज्ञानिक अनुसंधान का यह प्रथम सराहनीय प्रयास है, जिसके लिए मेजर साहब को बधाई। पाश्चात्य इतिहासकारों ने महाभारत को केवल पौराणिक कथा (मिथ) कहकर टाल दिया था।

मेरे विचार से अब समय आ गया है कि ऐसी सामग्री का वैज्ञानिक और ऐतिहासिक अध्ययन किया जाए। लोकमान्य तिलक के मतानुसार महाभारत का काल चौदह सौ ईसा-पूर्व विश्वसनीय है, क्योंकि ईसा-पूर्व चौथी सदी के नंदवंशी सम्राट के बारे में उल्लेख मिलता है कि उनका जन्म उसी लग्न में हुआ था जिसमें उनसे एक सहस्र वर्ष पहले महाराज परीक्षित ने जन्म लिया। महाभारत वास्तव में युद्ध-विज्ञान का अद्भुत ग्रंथ है।

—माधवसिंह दीपक, नयी दिल्ली

व्यक्ति-पूजा नहीं...

'व्यक्ति-पूजा आत्मघाती है' लेख आद्यांत कई बार पढ़ा, विशेषकर लेख के अंतिम अनुच्छेद को।

वस्तुत: व्यक्ति-पूजा किसी व्यक्ति की पूजा नहीं, अपितु एक संपूर्ण संस्कृति की पूजा और उपासना है। संस्कृति वह गोलाकार वृत्त है जिसकी परिधि में ज्ञान, विश्वास, कला, आचार, कानून, प्रथा तथा ऐसे ही अन्य क्षमताओं और आदतों का समावेश रहता है। इन्हें व्यक्ति समाज का सदस्य बनकर ही प्राप्त करता है।

—जयप्रकाश, कानपुर

खिसकती हिमघाटी

जनवरी अंक में 'खिसकती हिमघाटी' शीर्षक तथा 'ग्लेशियर अर्थात प्रतिदिन अत्यंत मंद गति से खिसकती हुई समूची हिमघाटी' वर्णन सही नहीं है, क्योंकि हिमघाटी नहीं वरन ग्लेशियर अर्थात हिमनदी या हिमानी खिसकती है।

लेखक ने नंदादेवी को भारत की सबसे ऊंची 'हिमश्रेणी' बताया है। यह बात भी गलत है, क्योंकि वह न तो हिमश्रेणी है और न ही सबसे ऊंची। हमारे देश की सबसे ऊंची चोटी कंचनजंघा (८,५८६ मीटर या २८,१६८ फुट) है।

कुमाऊं का प्रथम अंगरेज कमिश्नर ट्रेल (जैसा कि लेखक ने लिखा है) नहीं बल्कि ई. गार्डनर था, जो २७ अप्रैल से ३१ जुलाई १८१५ तक रहा।

—पूरनसिंह भाकुनी, दिल्ली

जनवरी अंक में प्रकाशित वंशीधर शुक्ल पर संस्मरण अत्यंत मार्मिक रहा। इसे पढ़ने पर लगता है कि सत्ता के चकाचौंध में हमारे नेता-गण अपने पुराने साथियों को जिन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में अप्रतिम योगदान दिया है, भूल गये हैं।

शुक्लजी का लोकसाहित्य में प्रमुख स्थान है। एक समय था जब शुक्लजी द्वारा रचित लोकगीत 'चरखवा चालू रहे', 'पहनो पहनो खद्दर की सारी हो भारत की नारी', 'उठो सोने वालो सबेरा हुआ है' और 'उठ जाग मुसाफिर भोर भयी' पूरे हिंदी भाषा-भाषी क्षेत्र में बड़े प्रेम और उमंग से लोग गाते फिरते थे।

मैं चाहूंगी कि आप प्रयास करें कि उत्तर प्रदेश सरकार शुक्लजी को पेंशन बांध दे जिससे वह अपना शेष जीवन सुख से व्यतीत कर सकें। इसके अतिरिक्त उनका सार्वजनिक अभिनंदन भी किया जाए जिससे नयी पीढ़ी उनका मूल्यांकन कर सके। **—किशोरी, गोरखपुर**

जनवरी अंक में प्रकाशित कादम्बिनी का नया स्तंभ—'आस्था के आयाम' रोचक और प्रेरणाप्रद रहा, इस सूझबूझपूर्ण स्तंभ के लिए बधाई।

प्रभा भारद्वाज ने अपने लेख 'वही गिरा जिसने समझा कमजोर हमें' में समाज की विसंगतियों को जिस सुललित शैली में उजागर कर उन पर चोट की है वह स्तुत्य है, लेख में कहानी का मजा आ गया। **—कमल जोशी, नागपुर**

कादम्बिनी का नववर्षांक सुरुचिपूर्ण और ज्ञानप्रद रहा। 'व्यक्ति पूजा आत्मघाती है' में एक कटु सत्य और यथार्थ उभरकर सामने आता है। लेख ने निश्चय ही आज के समाज में तेजी से पनप रही व्यक्तिपूजा के प्रति धर्मांध और अंधानुकरण करनेवाले लोगों को आगाह करके स्वाभिमानी तथा आत्मविवेकी बनने की दिशा में सोचने पर मजबूर किया है।

'उठ जाग मुसाफिर' में पं. वंशीधर शुक्ल के जीवन की एक झलक पाकर बड़ी सुखद अनुभूति हुई। क्रांतिकारी और देशप्रेम की भावनाओं से ओत-प्रोत उनकी पंक्तियां आज भी जन-मानस में अदम्य उत्साह और प्रेरणा भरने की सामर्थ्य रखती हैं। इस संदर्भ में आज के अश्लील तथा मन-मस्तिष्क को भ्रष्ट करनेवाले साहित्य के प्रचार और उसकी बाहुल्यता को सोचकर आत्मग्लानि-सी हो उठती है।

'गोष्ठी' में अपवर्तन की परिभाषा बतायी गयी है कि 'प्रकाश की गति वायु की अपेक्षा ठोस या द्रव में प्रविष्ट होने पर कम हो जाती है।' जबकि वस्तुतः, प्रकाश की किरणों का वायु से ठोस या द्रव में प्रविष्ट होने पर, उनका अपने मार्ग से 'विचलित' हो जाना ही अपवर्तन कहा जाता है।

—कमलेश भट्ट, लखनऊ

प्रतीक्षा कीजिए
'कादम्बिनी के होली-अंक की

साल भर दिमागी बोझ से दबे अपने पाठकों के लिए एक ही अंक में ऐसी सामग्री का संयोजन जो उन्हें पूरे साल हंसाती रहेगी। मिसाले शेर—'वर्ष भर उनकी रोनी सूरत देखते रहे हम, आज हमने रोना शुरू किया तो क्यों हंसने लगे हैं।' बहुत कुछ है स्वयं हंसने के लिए, दूसरों को हंसाने के लिए। 'कादम्बिनी' का अगला अंक —हास्य-व्यंग्य से ओत-प्रोत 'होली अंक।'

मार्च अंक के आकर्षण

० नहीं भूलती वह होली

समाजसेवियों, राजनीतिज्ञों, साहित्यकारों के ऐसे अछूते प्रसंग जो उनकी जिंदगी के साथ जुड़े एवं निहायत दिलचस्प हैं।

० इंटरव्यू एक राजनेता से, पहचानिए वह कौन है। जिन नेताओं को हम रोज देखते-सुनते हैं, जिनकी इस देश की राजनीति में महत्त्वपूर्ण भूमिका है, उनका एक दिलचस्प इंटरव्यू— इंटरव्यू जो उन्होंने कभी नहीं दिया। इंटरव्यूकार हैं सेवकराम उखाड़ू।

० किसी को बख्शा नहीं जाएगा

एक अनूठी वर्ग-पहेली, जिसे भरकर देखिए कितने जाने-पहचाने चेहरे हाजिर हो जाएंगे।

कुछ और आकर्षण देखिए

० जवाब चाहिए बीस-सूत्री कार्यक्रमों का ० पनियां कैसे भरूं ० इनके भी बयां हैं जुदा-जुदा ० राग तरकारी ० होते हैं चेहरे आदतों के आईने ० मीर कल्लू की गवाही ० गांव के दरवाजे पर सचिवालय की दस्तक ० चोट खाकर वह भविष्यवक्ता बना

इस अंक के लेखक

० महादेवी वर्मा ० धर्मवीर भारती ० अटल बिहारी वाजपेयी ० डॉ. कर्णसिंह ० अल्हड़ बीकानेरी ० कैलाश वाजपेयी ० माणिक वर्मा ० हुल्लड़ मुरादाबादी आदि

शब्द-सामर्थ्य बढ़ाइए

ज्ञानेन्दु

निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों उन पर चिह्न लगाइए और इसी पृष्ठ से आरंभ उत्तरों से मिलाइए।

१. **गणना**——क. संख्या, ख. अंक, ग. सिलसिला, घ. गिनती।

२. **तंद्रा**——क. ऊंघ, ख. बेहोशी, ग. गहरी नींद, घ. निराशा।

३. **जंगम**——क. लड़ाई संबंधी, ख. चल, ग. बेहोश, घ. पुराना।

४. **बेसुध**——क. लापरवाह, ख. मूर्ख, ग. जिसके होशहवास ठीक न हों, घ. पागल।

५. **कछार**——क. कचड़ा, ख. मिट्टी, ग. नदी के किनारे की निचली भूमि, घ. एक जाति।

६. **खल्वाट**——क. सपाट, ख. अनुर्वर, ग. गंजा, घ. बूढ़ा।

७. **घरघुसरा**——क. कमजोर, ख. घर की रखवाली करनेवाला, ग. छिपे तौर पर काम करनेवाला, घ. जो घर में बैठे रहने का आदी हो।

८. **छबीला**——क. फैशनवाला, ख. रोबवाला, ग. सुंदर, घ. साहसी।

९. **जकड़**——क. ऐंठ, ख. पकड़, ग. गतिरोध, घ. कसा हुआ बंधन या फंदा।

१०. **झपाटा**——क. हमला, ख. थप्पड़, ग. तेजी से किसी काम का होना, घ. गुस्सा।

११. **टरकाना**—— क. भगाना, ख. धोखा देना, ग. कोई बहाना करके चलता करना, घ. आनाकानी करना।

१२. **डांवांडोल**——क. उलट-पुलट, ख. नष्ट-भ्रष्ट, ग. अस्थिर, घ. स्थगित।

१३. **ढीठ**——क. दृढ़, ख. धृष्ट, ग. अड़ियल, घ. दुःसाहसी।

१४. **थोथा**——क. दिखावटी, ख. खोखला, ग. हलका, घ. झूठा।

१५. **खाका**——क. रूपरेखा, ख. चित्र, ग. माप, घ. कैनवस।

उत्तर

१. घ. गिनती। उसकी **गणना** अब नगर के बड़े व्यापारियों में की जाती है। क्या तुमने इन सब चीजों की **गणना** कर ली है ?

२. क. ऊंघ, चिंता, श्रम आदि के कारण कुछ निश्चेष्टता। **तंद्रा** को तोड़कर जीवन गतिशील बनाइए। (वि.—तंद्रिल)

३. ख. चल, एक जगह से दूसरी जगह ले जा सकने योग्य (अंग.—मूवेबिल)। उसकी **जंगम** संपत्ति एक लाख रुपये की आंकी गयी है। (विलोम—**स्थावर**)

४. ग. जिसके होशहवास ठीक न हों, भूला-भूला-सा। वह इतना **बेसुध** हो गया कि अपने बचने का कोई उपाय न कर सका।

५. ग. नदी के किनारे की निचली भूमि। **कछार** के सभी गांव बाढ़ग्रस्त हुए थे।

६. ग. गंजा; जिसके सिर के बाल उड़ गये हों। पुरानी कहावत है कि **खल्वाट** निर्धन नहीं होता।

७. घ. जो घर में बैठे रहने का आदी हो। दुनिया में **घरघुसरा** बने रहने से काम नहीं चलता।

८. ग. सुंदर, सजीला। वह जितना **छबीला** है उतना ही साहसी भी है।

९. घ. कसा हुआ बंधन या फंदा। अपराधी अब कानून की **जकड़** में है।

१०. ग. तेजी से किसी काम का होना, झपट्टा, चपेट। एक ही **झपाटे** में उसने अपने प्रतिद्वंद्वी को परास्त कर दिया।

पारिभाषिक शब्द

डिसोल्यूशन—भंग, विघटन
प्रोरोगेशन—सत्रावसान
होल्डिंग—जोत
सीलिंग—अधिकतम सीमा
रूरल—ग्राम्य, देहाती
अरबन—शहरी
(अरबनाइजेशन—शहरीकरण, नगरी-करण)
पैक्ट—समझौता
पैकेज डील—एकमुश्त सौदा
क्वालीटेटिव—गुणात्मक
क्वांटीटेटिव—मात्रात्मक

---

११. ग. कोई बहाना करके चलता करना, टालना। तुमने बड़ी जल्दी उसे **टरका** दिया।

१२. ग. अस्थिर, हिलता-डोलता। उसकी मनःस्थिति **डांवांडोल** है।

१३. ख. धृष्ट, बेअदब। बच्चों को मारने-पीटने से वे **ढीठ** हो जाते हैं।

१४. ख. खोखला, सारहीन। सार-सार को गह लहै, **थोथा** देइ उड़ाय —कबीर।

१५. **खाका**—क. रूपरेखा, रेखाचित्र, स्थूल योजना, ढांचा (अंग.—आउटलाइन)। क्या तुमने योजना का **खाका** तैयार कर लिया है? ●

वर्ष १९ : अंक ४
फरवरी, १९७९

कादम्बिनी

आकल्पं कविनूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

प्रभाकर माचवे
हिंदी का विरोध क्यों ? २५
मुहम्मद खालिद अख्तर
चांद पर जाने के लिए बुकिंग शुरू है . . ३१
मोरारजी देसाई
मानस : जैसा मैंने समझा (५) . . . ४४
महेश्वर दयाल
मरम्मत के बिना पढ़ाई अधूरी . . . ५३
भगवतीप्रसाद डोभाल
सांप : दुश्मन नहीं दोस्त भी . . . ६१
ब्रिजमोहन गोयल
रेगिस्तान का चोर ६६
द्वारकाप्रसाद मिश्र
पुनर्जन्म में मेरी आस्था नहीं ६८
राजेन्द्र अवस्थी
काकेशस आ मिला हिमालय से . . . ८५
मुकुलचंद पांडेय
युग-युग में सुगंधियां ९९
राजशेखर
जो गला काटे उसी से प्यार . . . १०३
रत्नशंकर प्रसाद
'प्रसाद' ने भी 'उर्वशी' लिखी थी . . . १०७
पंडित पुनर्वसु
नक्षत्र और आपका भविष्य . . . ११६
दीनदयाल दिनेश
जब मुरदे को बंदी बनाया गया . . . १२९
ऋतुपर्ण शर्मा
न रहे कृष्ण, न रहीं वे गलियां . . . १३४
योगेन्द्र किसलय
उसने मां से विवाह किया था १४३
जनार्दनसिंह
सही रुद्राक्ष की पहचान आसान नहीं . . १५६
सुरेन्द्रनाथ त्रिपाठी
साहित्य में अस्मिता का प्रश्न . . . १६०
कमलेश चतुर्वेदी
वह एक पदयात्री १६४

स्थायी स्तंभ

आस्था के आयाम—१०, प्रतिक्रियाएं—१२, शब्द-सामर्थ्य—१६, काल-चिंतन—२०, समय के हस्ताक्षर—२२, इनके भी हैं बयां जुदा-जुदा—२९, तनाव से मुक्ति—५०, वचन-वीथी—६४, विधि-विधान—७६, हंसिकाएं—९२, हंसिकाएं काव्य में (डॉ. सरोजनी प्रीतम)—९३, गोष्ठी—१४०, ज्ञान-गंगा—१६६, बुद्धि-विलास—१६७, क्षणिकाएं—१६८, प्रवेश—१६९, नयी कृतियां—१७१

मुखपृष्ठ : प्रेमकपूर, मॉडल : सुविता

कथा-साहित्य

प्रतापचन्द्र 'चंद्र'
पहाड़ी सांझ ३५
अशोक प्रभाकर मोटे.
सितारों से आगे ७९
मशकूर हुसैन 'याद'
व्यर्थ का आरोप ९४
विनोद भट्ट
पांडवों का कहना है ११३
कृष्णा अग्निहोत्री
मन्नत १२३
देवकी अग्रवाल
माध्यम १४९

कविताएं

डॉ. कुमार विमल
कवि ४२
विश्वभावन.
गजल ४२
दिविक रमेश
मत मरने दो आदमी को. . . . ४३
सुरेन्द्र वर्मा
शाश्वत सत्य १२१
वीरेन्द्र मिश्र
बनजारा : एक गीत-संदर्भ . . . १३२

सार-संक्षेप

योहान्न पीटर हेबल
पुराना कर्ज १७७

संपादक

राजेन्द्र अवस्थी

संयुक्त-संपादक
शीला झुनझुनवाला

सह-संपादक : दुर्गाप्रसाद शुक्ल

उप-संपादक : कृष्णचंद्र शर्मा, प्रभा भारद्वाज, डॉ. जगदीश चंद्रिकेश, शैलबाला; प्रूफरीडर : स्वामी शरण;
चित्रकार : सुकुमार चटर्जी

काल-चिंतन

● बहुत सवेरे आकर आज
किसने दस्तक दी है मेरे द्वार पर !

कौन है वह
जो चुपचाप खेल रहा है मृगछौने-सा !
कल शीत की थिरकन
कंपा रही थी हमें,
दर्द को पीनेवाले महासागर-मन की भांति
कौन समेट ले गया वह सब !

● मेरे सामने के बाग की उजड़ी घास
एक रात में किस ओस-अमृत को पा गयी !
वातानुकूलित
कमरे में अचानक उभर आये हों अंकुर
कुकुरमुत्तों के !
धवल-श्वेत छाता ताने
आकाश-गंगा से उतरे हैं वे जमीन पर
अनंत युवा-केंद्रों से बेधड़क
निपटने के लिए !

● गुलाब के पीले और काले फूल
लाल गेंदे के साथ

सोनजुही, बेला और चमेली
से भिलकर
सुगंध का सौदा कर रहे हैं !
रजनीगंधा गुच्छों में भरी है,
सूखे कैक्टस में भी
छोटे लाल फूल निकल आये हैं,
शीत को पराजित कर

110397
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

महाविजेता कौन
उभरा है सम्राट की तरह !

● आदमी ने अपनी सुनहरी देह
नीरस व्यक्ति की तरह
किस तरह ढंक ली थी !
बूढ़े पत्तों की कंपकंपी
उगते सूरज से पहले
क्षितिज में उभरनेवाली
हल्की रक्त रेखाओं की तरह
नन्हे कोंपलों में बदल गयी हैं !

● हम सब
आ खड़े हैं एक मोड़ पर
जिंदगी जहां से करवट लेती है
आगे के दुर्गम रास्ते
जहां से आसान होते हैं,
अंधेरे के बीज यहीं सड़-गलकर

बिजली के खंभे की तरह
सीधा बढ़ने के लिए
अपनी प्रकाशमयी आंखें खोलते हैं !

● स्वागत है तुम्हारा !
गिलहरी से उचाट भरते
कस्तूरी-गंध की मादकता से ओतप्रोत
सुनहरे भविष्य के संदेशवाहक—
मेरी सांसों से बारीक
हे मेरे——
वसंत !

समय के हस्ताक्षर

चार वर्ष पूर्व सन १९७५ में सारे संसार में 'महिला-वर्ष' धूमधाम से मनाया गया था और उन्हीं दिनों सन १९७९ को 'बाल-वर्ष' के रूप में मनाये जाने की घोषणा कर दी गयी थी। 'महिला-वर्ष' में समूची नारी-जाति के उत्थान के लिए क्या-कुछ हुआ, यह किसी से छिपा नहीं है और अब उसकी विस्तृत चर्चा करना व्यर्थ है। 'महिला-वर्ष' की तरह 'बाल-वर्ष' भी कहीं मखौल बनकर न रह जाए, इसी खतरे को ध्यान में रखकर हम कुछ बातें करना उचित समझते हैं।

पांच वर्ष पूर्व के संकल्प के अनुसार अब संयुक्त राष्ट्रसंघ के निर्देश पर सारे संसार में यह वर्ष 'बाल-वर्ष' के रूप में मनाया जा रहा है। भारत में भी 'बाल-वर्ष' के लिए भव्य और प्रभावशाली प्रतीत होनेवाली योजनाएं बना ली गयी हैं, परंतु बताया जाता है कि इन योजनाओं के लिए धनराशि अब तक उपलब्ध नहीं हो पायी है। अगले मास मार्च में, अर्थात जब 'बाल-वर्ष' के तीन मास पूरे होने को होंगे तब, शायद बजट में कुछ व्यवस्था की जाए और तभी संभवतः यह भी पता लगेगा कि किस राज्य में बाल-कल्याण के लिए कितनी धनराशि उपलब्ध हो सकेगी। सरकारी लालफीताशाही में उलझी यह धनराशि जब तक मुक्त न हो पाएगी तब तक आधा 'बाल-वर्ष' बीत चुका होगा। इस देश के करोड़ों बच्चों को पता भी नहीं लग पाएगा कि यह वर्ष उनका था, उनकी समस्याओं के निराकरण का था। उनके लिए आनेवाले कल बीत गये कल की भांति ही दुःख-दर्द और अभावों से ही भरी सुबह-शामवाला होगा।

एक अनुमान के अनुसार इस देश के साढ़े तीन करोड़ से अधिक बच्चों का एक-तिहाई हिस्सा 'गरीबी की रेखा' के भी बहुत नीचे किसी तरह जीवित है। उनके लिए पढ़ने की पुस्तकें तो दूर, तन ढकने के लिए सही कपड़े तक नहीं हैं। हमारी तमाम 'अनिवार्य शिक्षा' के कानून के बावजूद वे आजीवन निरक्षर रहेंगे और बड़ होकर या तो अपने पूर्वजों की भांति दर-दर भटकेंगे या फिर अपराधी-जीवन बिताने के लिए विवश होंगे। एक अनुमान के अनुसार भारत में प्रतिवर्ष १२,००० बच्चे विटामिन 'ए' की कमी के कारण नेत्र-ज्योति खो बैठते हैं। प्रति-हजार में एक सौ बीस बच्चे अपनी प्रथम वर्षगांठ ही नहीं देख पाते।

यही नहीं, हमारे समाज की तरह बच्चे भी, जिन्हें 'ईश्वर-रूप' होने का हम बड़े गर्व से खिताब देते आये हैं, वर्गों में बंटे हुए हैं। अभिजात वर्ग के बच्चे, मध्यम; निम्न मध्यम वर्ग के बच्चे और बिलकुल गरीबों के बच्चे, शहरों के बच्चे, वे बच्चे जिन्हें

शिक्षा पाने का अवसर है, और वे बच्चे जिनके लिए शिक्षा मात्र सुहावना सपना ही है।

यह तय है कि 'बाल-वर्ष' की भनक केवल शहरों के ही कुछ सौभाग्यशाली बच्चों के कानों तक पहुंचेगी। गांव का बच्चा शायद ही कभी जान पाएगा कि कभी कोई वर्ष उनकी प्रतिष्ठा के लिए भी मनाया गया था। गांवों के बच्चों की समस्याएं शहरी बच्चों की समस्याओं से बिलकुल भिन्न हैं। आजादी के इन वर्षों के बाद भी अधिकांश ग्रामीण बच्चों को पीने के पानी की, स्वास्थ्य और मनोरंजन की बुनियादी सुविधाएं मयस्सर नहीं हैं। 'यूनिसेफ' की रिपोर्ट के अनुसार हमारी कुल बाल-जनसंख्या के आधे हिस्से के भाग्य में जन्म के पूर्व ही कुपोषण और छुतहे रोग बदे होते हैं। लाखों बच्चे शारीरिक और मानसिक रूप से रुग्ण जिंदगी बिताने के लिए विवश होते हैं।

पिछले दिनों बड़े संतोष के साथ यह घोषणा की गयी कि भारत में परिवार-नियोजन कार्यक्रमों के फलस्वरूप जन्मदर आठ प्रतिशत से घटकर छह प्रतिशत हो गयी है। भारत-जैसे विशाल आबादीवाले देश में जन्मदर में यह गिरावट विशेष महत्त्व नहीं रखती, जब तक कि वह एक या दो प्रतिशत पर न आ जाए।

बाल-वर्ष : हमारा दायित्व

समाचार-पत्रों में पढ़ने को मिला है कि बच्चों के लिए हवाई-जहाजों में सैर-सपाटे की योजना बनायी गयी है। यह योजना किस खोखले मस्तिष्क से उत्पन्न हुई है, हम नहीं जानते, लेकिन ऐसी योजनाओं को अब तक हम निरंतर देखते रहे हैं, व्यापक जनहित के लिए उपयोग न होकर कुछ अभिजात्य-वर्ग के लिए होता है। विमान-यात्रा भी सरकारी अफसरों के बच्चे ही करेंगे और निष्पक्षता के नाम पर कुछ अति भाग्यशाली गरीब बच्चे शायद जुड़ सकें। हम नहीं समझ सकते कि भारत-जैसे गरीब देश में, जहां विमान-यात्रा की कल्पना राजमहलों से रथ निकालने-जैसी बेतुकी ध्वनि के साथ जुड़ती है, कहां तक संगत है।

यों 'बाल-वर्ष' के सिलसिले में केंद्रीय एवं राज्य सरकारों द्वारा व्यापक योजनाएं शुरू करने की घोषणा की गयी हैं। प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में गठित नेशनल चिल्ड्रेन बोर्ड ने बाल-कल्याण योजनाओं के लिए धनराशि एकत्र करने हेतु कई उपाय सुझाये हैं। प्रधानमंत्री ने भी 'बाल-वर्ष' के दौरान बच्चों के लिए सौ पुस्तकें प्रकाशित करने की घोषणा की है। ऐसा प्रतीत होता है कि 'बाल-वर्ष' में सौ पुस्तकों का प्रकाशन एक बड़ी उपलब्धि होगा। सत्य तो यह है कि देश में हिंदी एवं अन्य भाषाओं में प्रतिमास

सौ से अधिक बाल-पुस्तकें अब भी प्रकाशित होती हैं। बहरहाल नयी योजना के अंतर्गत होनेवाली पुस्तकें क्या होंगी, उनके विषय क्या होंगे, उन्हें प्रकाशित करनेवाले प्रतिष्ठान और उन पुस्तकों के प्रकाशन से राष्ट्रीय एकीकरण अथवा सांस्कृतिक एकरूपता को बढ़ावा मिलने में कितनी मदद मिल सकेगी, ये सब बातें इस घोषणा के साथ ही अपने आप उभरती हैं। यहां यह स्पष्ट कर देना जरूरी है कि सरकारी माध्यमों से जो भी प्रकाशन होंगे, उतने ही बेजान और अनाकर्षक होंगे जितने वे अभी हैं। निजी व्यक्तियों को काम सौंपने में खतरे कम नहीं हैं। यह भी ध्यान रखना होगा कि कहीं वर्षों पहले छपी 'आउट डेटेड' पुस्तकों के पुनर्मुद्रण के लिए ही सरकारी पैसा न मार लिया जाए।

प्रभावशाली नेताओं की अच्छे बाल-साहित्य के प्रति उदासीनता ही नहीं, उपेक्षा का भाव भी ऐसे निहित स्वार्थों को खुली छूट दे देता है। हमारा सुझाव है कि चाहे सौ पुस्तकें ही छपें, वे अकसर छपनेवाली बाल-पुस्तकों से एकदम भिन्न हों और वे बाल-साहित्य के लेखन में सही आदर्श प्रस्तुत कर सकें। हमारा यह भी सुझाव है कि एक विषय पर लिखी पुस्तक भारत की सभी भाषाओं में छापी जाएं, ताकि वह राष्ट्रीय एकता में सहायक बनें। राष्ट्रीय चेतना, महापुरुषों के बाल-जीवन की झांकियां, व्यवसाय के प्रति लगन और देहातों से प्रेम पैदा किया जाए ताकि शहरीकरण से बचा जा सके। इस योजना में छोटी उम्र से लेकर बड़ी वय तक अलग-अलग आयु के बच्चों के लिए उपयोगी सामग्री ध्यान में रखनी चाहिए। बच्चों के मनोरंजन की दृष्टि से ही नहीं, उनके स्वस्थ और सर्वांगीण विकास में बाल फिल्मों की अहम भूमिका बतलाने की जरूरत नहीं। फिल्म एक दृश्य-श्रव्य माध्यम है और पुस्तकों की अपेक्षा बच्चों को सीधे और गहरे प्रभावित कर सकता है।

इस क्षेत्र में चिल्ड्रन फिल्म सोसाइटी का योगदान नगण्य रहा है। हमारा सुझाव है कि भारतीय भाषाओं की ही नहीं, विदेशी भाषाओं की भी बालोपयोगी श्रेष्ठ कृतियां चुनकर अच्छी बाल-फिल्में बनायी जाएं। ये कृतियां एसी हों, जो बच्चों की समस्याओं और उनकी जिंदगी को सीधी छूती हों। यदि 'बाल-वर्ष के शेष महीनों में बच्चों की बुनियादी समस्याएं समझकर उनके निराकरण के लिए सही योजनाएं ही बना ली जाएं तो यह भी एक उपलब्धि होगी, क्योंकि समस्त बाल-समस्याओं के मात्र एक वर्ष में निराकरण की आशा करना हास्यास्पद होगा। 'बाल-वर्ष' की सार्थकता इसी में है कि देश बच्चों के प्रति अपने दायित्व को समझे। राष्ट्रसंघ ने तेंतीस वर्ष पूर्व घोषणा की थी कि 'मानवजाति का यह दायित्व है कि वह बच्चों को, आनेवाली पीढ़ी को, अपनी जो सर्वोत्तम विरासत है, उसे सौंपे।' यह कितनी बड़ी विडंबना है कि हम नयी पीढ़ी को सर्वोत्तम विरासत की बजाय खोखले और भ्रष्ट मूल्य सौंपने में जुटे हैं। ●

हिंदी का विरोध क्यों?

दक्षिण-भारत के चार राज्यों में हिंदी-विरोध की लहर उठी। हिंदी-विरोध की ऐसी नयी लहर में हमने सोचा कि दक्षिण-भारत के प्रसिद्ध साहित्यकारों और हिंदी-सेवियों से कुछ प्रश्न पूछे जाएं और उनके उत्तरों के परिप्रेक्ष्य में एक संतुलित विचार-मंच प्रस्तुत किया जाए। तीन किस्तों की इस चर्चा के संयोजन के लिए हमने बहु-भाषाविद, दक्षिण और उत्तर के बीच सेतु की तरह कार्यरत डॉ. प्रभाकर माचवे से कहा, जो इन विषयों पर अपने सविस्तार विचार अंतिम किस्त में दे रहे हैं।

—संपादक

● डॉ. प्रभाकर माचवे

'कादम्बिनी' के लिए आयोजित विशेष परिचर्चा के लिए अगले पृष्ठ पर प्रकाशित प्रश्नावली पंद्रह चुने हुए हिंदीतर लेखकों, हिंदी-प्रचारकों को भेजी गयी थी। इसमें दक्षिण-भारत के लेखकों पर विशेष ध्यान केंद्रित था। कुछ विद्वान लेखक-विचारकों ने प्रश्न को टाल दिया। किसी ने विदेश-यात्रा के कारण उत्तर नहीं दिया। किसी ने कहा कि भाषा-विवाद श्रेष्ठ साहित्यकार का विषय नहीं है, उसमें उसे नहीं पड़ना चाहिए। किसी ने इस समस्या को व्यापक राजनीतिक उत्तर-दक्षिण के बीच तनाव से जोड़ा, तो किसी ने कहा कि इस समस्या की शुरूआत ही गलत की गयी थी। आजादी मिलते ही नेहरू चाहते तो इस समस्या का समाधान हो जाता, पर उनमें वल्लभभाई पटेल-जैसी दृढ़ता और कर्मण्यता नहीं थी।

हमें बहुत खुशी है कि हमारे उत्तरदाताओं में तीन ज्ञानपीठ पुरस्कार-विजेता, एक भूतपूर्व कुलपति, एक दक्षिण के हिंदी-विभागाध्यक्ष, तीन हिंदी प्रचारक निष्ठावान पुराने कार्यकर्ता, एक दक्षिण की हिंदी-अध्यापिका, एक दक्षिण में छपनेवाली लोकप्रिय हिंदी पत्रिका के संपादक, एक देश-विदेश में आकाशवाणी से संबद्ध बहु-भाषाविद संगीतविशारद लेखिका, कई अनुवादक और दक्षिण के साहित्य के बारे में अंगरेजी में लिखनेवाले दिल्ली-स्थित एक प्रसिद्ध स्वतंत्रचेता लेखक भी हैं।

साहित्य अकादमी के अध्यक्ष, गुजराती के मूर्धन्य कवि, पुराने गांधीवादी विचारक

६७ वर्षीय श्री उमाशंकर जोशी को सोवियत रूस में तालस्ताय की १५० वीं वर्षगांठ के सिलसिले में जाना पड़ा, पर उनके विचार उनकी साहित्यिक मासिक पत्रिका 'संस्कृति' के द्वारा सुपरिचित हैं। जब स्वतंत्रता के बाद गुजराती भाषा के लिए देवनागरी लिपि अपनाने का प्रस्ताव अहमदाबाद के राष्ट्रभाषा प्रचारक श्री जेठालाल जोशी ने रखा था, तब जोशीजी ने उसका विरोध किया था, पर वे भाषा–भाषाओं के बीच सद्भाव और साने गुरुजी के 'अंतर-भारती' के पुराने समर्थक हैं। गांधीजी की भारतीय साहित्य-परिषद ने जब मुंशी प्रेमचंद और कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी के संपादकत्व में 'हंस' निकाला था, तब से वे इसके साथ हैं। मुझे याद आता है, 'हंस' का 'नीर-क्षीर' स्तंभ मैं लिखता था, तब उमाशंकरजी की धोबी और इंद्रधनुषवाली लघुकथा का अनुवाद मैंने उसमें सन सैंतीस में दिया था, यानी चार दशकों से उनकी भारतीय भाषानिष्ठा और हिंदी को संपर्क-भाषा बनाने का दृढ़ विश्वास जोशीजी के गुरु काका कालेलकर की तरह अक्षुण्ण है। प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई और जोशीजी के विचार एक हैं। उत्तम अंगरेजी आने पर भी जोशीजी ने अपनी रचनात्मक प्रतिभा गुजराती में ही व्यक्त की। ज्ञानपीठ पुरस्कार की आधी राशि उनके और डॉ. कु. वें. पुट्टप्पा (कन्नड़ के विख्यात कवि) के बीच में जो बांटी गयी थी, उससे जोशीजी ने एक ट्रस्ट बनाया है जिससे भारत की अन्य भाषाओं से कवियों की चुनी हुई रचनाओं के गुजराती अनुवाद

जो प्रश्न पूछे गये थे : हिंदी का विरोध क्यों ?

१. हिंदी का विरोध किस सीमा तक सच है ? क्या यह राजनीतिक कारणों से है ?
२. हिंदी को संपर्क-भाषा के रूप में अस्वीकार करने के क्या-क्या कारण हैं ?
३. भारतीय भाषा-लेखक के नाते, किसी भाषा से विरोध न रखते हुए, त्रिभाषा-सूत्र के प्रति आपकी क्या प्रतिक्रिया है ?
४. अपनी रचनाओं का अनुवाद आप हिंदी में करना चाहते हैं ? इस दिशा में क्या कठिनाइयां हैं ?
५. क्या आप सोचते हैं कि हिंदी के प्रचार-प्रसार में सरकार ने काफी काम किया है ?
६. हिंदी के प्रचार में फिल्मों का योगदान कहां तक माना जा सकता है ?
७. आकाशवाणी, दूरदर्शन एवं डाक्यूमेंटरी का इस दिशा में क्या योगदान है ?
८. समाचार-पत्र, पत्रिकाएं तनाव दूर करने में और राष्ट्रीय एकता को मजबूत बनाने में किस सीमा तक सहायता कर सकती हैं ?

छापे जाते हैं। मराठी के छह कवि इस सीरीज में छपे हैं। जोशीजी के 'निशीथ' कविता-संग्रह का और एक उपन्यास का हिंदी में अनुवाद छपा है।

जोशीजी गुजरात विश्वविद्यालय के कुलपति रहे हैं और सारी दुनिया घूम आये हैं--चीन, रूस, अमरीका, यूरोप, जापान आदि। वे हिंदी को अधिक उदार और व्यापक वनाने के पक्ष में हैं। टंडन वनाम गांधीजी विवाद में वे गांधी के पक्ष में थे।

दूसरे, ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता, ७४ वर्षीय महाकवि पुट्टप्पा ('कुवेंपु') अपने 'श्री रामायण दर्शनम्' के लिए विख्यात (इसका आंशिक अनुवाद डा. सरोजिनी महिषी ने हिंदी में किया), अरविंद-दर्शन में आस्था रखनेवाले, मैसूर विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति हैं। मैं श्री पुट्टप्पा के दर्शनार्थ श्री उमाशंकर जोशी के साथ मैसूर की पी. ई. एन. परिषद के समय गया था। दोनों की दो भाषाएं होने पर भी, साहित्यिकों की हृदय की भाषा कैसे एक होती है, यह मैंने तव देखा। पुट्टप्पाजी ने अपनी दो टूक शैली में पहले चार प्रश्नों के यों उत्तर दिये हैं :

१. हिंदी का विरोध सच है और वहुत उग्र है।

२. हिंदी को संपर्क-भाषा के नाते अस्वीकार करने के ये कारण हैं:

अ. दक्षिण-भारत के भाषा-परिवार से हिंदी भिन्न भाषा-परिवार की है। दक्षिण-भारत की भाषाएं हिंदी से कहीं अधिक समृद्ध हैं।

महाकवि पुट्टप्पा

आ. यह मानना भूल है कि भाषा जोड़ती है या देशभक्ति की भावनाएं पैदा करती है। हम देख रहे हैं भाषा भेद भी पैदा करती है।

इ. दो सरकारी भाषाएं रहने में क्या वाधा है—हिंदी और अंगरेजी ?

ई. हिंदी को विशेष शाही और सवसे अलग स्थान दिया जाता है और उस भाषा को वोलनेवाले तानाशाही और साम्राज्यवादी प्रवृत्ति से ग्रस्त हैं।

ऐसे और भी कई कारण हैं, पर अभी इतने ही काफी हैं।

श्रद्धांजलि

संत-साहित्य के अधिकारी विद्वान एवं वयोवृद्ध साहित्यकार पं. परशुराम चतुर्वेदी, सुप्रसिद्ध उपन्यासकार श्री अनंत गोपाल शेवड़े एवं युवा समीक्षक डॉ. विजयकुमार शुक्ल अब हमारे बीच नहीं रहे।

स्वर्गीय चतुर्वेदी ने हिंदी में संत-साहित्य के अध्ययन को एक नयी दिशा दी एवं स्वर्गीय अनंत गोपाल शेवड़े ने अहिंदी-भाषी होते हुए भी न केवल हिंदी में अनेक मर्मस्पर्शी उपन्यास लिखे वरन हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए भी ठोस कार्य किया । नागपुर में आयोजित प्रथम विश्व-हिंदी-सम्मेलन के महामंत्री के रूप में श्री शेवड़े का योगदान कभी भुलाया न जा सकेगा ।

डॉ. विजय शुक्ल अपने यशस्वी पिता पं. गिरजादत्त शुक्ल 'गिरीश' के यशस्वी पुत्र थे। स्वर्गीय शुक्ल ने आलोचना एवं शोध के क्षेत्र में बहुमूल्य कार्य किया। पुरानी एवं नयी पीढ़ी के इन प्रतिनिधि-साहित्यकारों का शोकपूर्ण निधन हिंदी जगत के लिए वस्तुतः एक अपूरणीय क्षति है।

दिवंगत आत्माओं को 'कादम्बिनी'-परिवार की विनम्र श्रद्धांजलि ।

—संपादक

---

३. मेरा सिद्धांत है 'दो और बहुत-सी भाषाओं में से कोई भी तीन नहीं।'

४. हिंदी में ही क्यों? अन्य कई भाषाओं में, अंगरेजी में भी मेरी रचनाओं के अनुवाद क्यों न हों?

तीसरे, इसी वर्ष के ज्ञानपीठ-पुरस्कारविजेता, ७६ वर्ष के श्री कोटा शिवराम कारन्त, 'यक्षगान' और 'धरती की ओर' (अनेक वर्षों पहले वर्धा की राष्ट्रभाषा प्रचार समिति से आपका यह उपन्यास हिंदी में छपा) आदि अनेक विख्यात उपन्यासों के लेखक, जिनकी 'चोम्मन-डुडी' कहानी पर आधारित फिल्म को गत वर्ष राष्ट्रपति पुरस्कार मिला और कई विदेशी पुरस्कार भी मिले, अद्‌भुत प्रतिभाशाली लेखक हैं। आपने विज्ञान-कोश भी बनाये, गांव-गांव में घूमकर साक्षरता और समाजवाद का प्रचार करनेवाले त्यागी समाज-सेवक, हाल में इंदिराजी के विरोध में चुनाव में उतरने को तैयार हो गये थे, ऐसे मानवतावादी विद्वान ने अपने बेवाक जवाब यों भेजे हैं:

१. 'हिंदी का विरोध सच है या राजनीतिक कारणों से है?' का उत्तर यों था—अपनी भाषा से प्रेम करना स्वाभाविक है। जब कभी अपनी भाषा के अधिकारों के ऊपर दूसरी किसी भाषा को थोपा जाए तो मानवीय भावनाएं उसका विरोध करती हैं। इसलिए अहिंदी-भाषियों के हिंदी-विरोध के लिए कोई

विशेष राजनीतिक कारण आवश्यक नहीं। उनकी अपनी भाषा बहुत अधिक विकसित है। राजनीति केवल तिरस्कार बढ़ाती है। यदि उत्तर-भारत दक्षिण-भारत पर किसी तरह आधिपत्य जमाने का यत्न करे तो यही होगा।

२. सिवा जनसंख्या के आंकड़ों के, हिंदी का अन्य प्रदेशों की बहुत विकसित भाषाओं की अपेक्षा कोई विशेष दावा बनता नहीं। हमें संपर्क-भाषा के नाते अंगरेजी मिली थी और आज भी वह है। केवल भारत में नहीं, विदेशों में भी संपर्क के लिए देश-देश के बीच में अंगरेजी चलती है। हिंदी का इस सुविधा को हटाने का प्रयत्न विरोध का कारण है। आज आधुनिक विज्ञान और तकनीकी इतने तेजी से बढ़ रहे हैं कि उसका स्थान कोई भी भारतीय भाषा नहीं ले सकती। आप अंगरेजी को बहिष्कृत करना चाहते हैं या आप दो संपर्क-भाषाएं बनाना चाहते हैं? अंगरेजी को विदेशी कहकर उसका मजाक उड़ाने से कोई फायदा नहीं होगा चूंकि हमारे जीवन में इतनी सारी विदेशी बातें हैं।

३. त्रि-भाषा-सूत्र—इसमें कोई विशेष आकर्षण नहीं। सब कुछ इस पर निर्भर करता है कि आप अमल में उसे कहां तक लाते हैं। भाषाएं अपनी आवश्यकताओं के लिए सीखी जाती हैं और किसी की भावनाओं को खुश करने के लिए नहीं। स्विटजरलैंड के बच्चे तीन भाषाएं

इनके भी बयां हैं जुदा-जुदा

शौके-दिल कहता है घबराने से कुछ हासिल नहीं
मंजिले-उल्फत कोई दो-चार सौ मंजिल नहीं
—'बिस्मिल' इलाहाबादी

तू कहां थी ऐ अजल,
ऐ नामुरादों की मुराद
मरनेवाले राह तेरी
उम्र भर देखा किये
—'फानी बदायूनी'

मेहरबानी को मुहब्बत नहीं कहते ऐ दोस्त
आह अब मुझसे तेरी रंजिशे-बेजा भी नहीं
—फिराक

सौ बरस बाद की भाषा में
लिखा कागज हूं
आज क्या समझोगे यूं
देखनेवालो मुझको
—पूर्णकुमार 'होश'

जमाना तेरा मुब्तिला हो रहा है
तुझे भी खबर है कि क्या हो रहा है
न तुम दूसरे हो, न हम दूसरे हैं
जमाना मगर दूसरा हो रहा है
—शैदाई

सीखते हैं—इटालियन, जरमन और फ्रेंच पर वे ये सब कानों से सीखते हैं, यानी सारे जीवनभर ये भाषाएं वे सुनते रहते हैं। आपका यह त्रि-भाषा-सूत्र ऐसा है कि मातृभाषा के अलावा दो भाषाएं उन्हें सिर्फ रटनी पड़ेंगी। पहले जनता को उन भाषाओं की आवश्यकता महसूस होनी चाहिए, जिन्हें सिखाया जाए।

एक और बात, भाषा स्कूलों में पढ़ाने के मामले में भाषा सुनकर, अभिव्यक्ति के लिए प्रयोग में लायी जाती है। हर भाषा की अपनी वाक्य-रचना और व्याकरण होता है। एकसाथ दो-तीन भाषाएं पढ़ाने का मतलब है सहज व्याकरण-सम्मत व्यवहार में बाधा। एक भाषा पहले बच्चा अच्छी तरह सीख ले, बाद में दूसरी भाषा पढ़ायें, मगर एकसाथ नहीं। उन उत्तर-भारतीयों को खुश करने के लिए, जो दक्षिण पर आधिपत्य जमाना चाहते हैं, मैं बिहार या उत्तरप्रदेश के बच्चों को तमिल या अपनी भाषा कन्नड़ जबर्दस्ती सिखाना नहीं चाहूंगा। उनके लिए उन भाषाओं का क्या उपयोग है? अगर वैसी आवश्यकता बाद में पड़े, तो आधुनिक पद्धतियां हैं, जिनके द्वारा कोई भी भाषा तीन महीने में सिखायी जा सकती है।

४. एक लेखक के नाते मैं चाहूंगा कि मेरी रचनाएं हिंदीभाषी पाठक भी पढ़ें, पर किसी भी भाषा में मौलिक लेखन की अपेक्षा अनुवाद करना अधिक कठिन काम है। सुयोग्य अनुवादक बहुत कम हैं। हिंदी प्रकाशकों को चाहिए कि हिंदी मातृभाषावाले पाठकों तक अहिंदी लेखकों को पहुंचायें।

इन तीन ज्ञानपीठ पुरस्कारविजेताओं के विचार उन्हीं की भाषा में देने के बाद मैं एक और बुजुर्ग तमिल लेखक को लेना चाहता हूं, जिनके विचार हमें मूल अंगरेजी में मिले हैं। पहले चार प्रश्नों के उत्तर में ६६ वर्षीय श्री का. ना. सुब्रह्मण्यम् ने लिखा है, "मैं राष्ट्रीय एकता, विचारविनिमय, सार्वजनिक कार्य और बाद में साहित्यिक रचना के लिए भी, एक राष्ट्र की एक भाषा में विश्वास करता हूं। स्वतंत्रता पूर्व युग में महात्मा गांधी ने जिस हिंदी को प्रचारित करने में पहल की थी, उसने एक राष्ट्रीय भाषा के आदर्श के साथ विश्वासघात किया—उसके आपसी झगड़ों से, एक अखिल भारतीय हिंदुस्तानी-हिंदी कैसी हो इसके बारे में उसके प्रचारकों में मतभेद बढ़े। भारतीय साहित्य जिसे कहा जाए और सभी भाषाओं में जो समृद्ध ज्ञान साहित्य था, उस सब का खजाना हिंदी में लाने का मौका वह चूक गये, उस बात की निरंतर उपेक्षा करते रहे।"

श्री का. ना. सुब्रह्मण्यम् का यह भी मानना है कि भाषा का स्वतंत्र विकास सरकारी-तंत्र से मुक्त होना चाहिए। इसे स्कूल-कालेजों के अकादमिक प्रभावों से भी दूर रखना चाहिए। (क्रमशः)

चांद पर जाने के लिए बुकिंग शुरू है

• मुहम्मद खालिद अख्तर

एक अदद फोर्ड गाड़ी; १९१८ का मॉडल विक्रय के लिए है। नया इंजन और नये टायर-ट्यूब पड़ने के बाद चल सकती है। ऊपर का ढांचा वगैरा ज्यों का त्यों कायम है। अठारह-उन्नीस आदमी तक उसकी अगली-पिछली सीटों, बॉनेट और बॉडी के विभिन्न भागों पर बेखतर बिठाये जा सकते हैं। कीमत आम ग्राहकों से सिर्फ डेढ़ हजार रुपये, जिसमें कार को बैलगाड़ी में लादकर ग्राहक के पते पर पहुंचाने का किराया भी शामिल है। अजायबघरवालों से इस दुर्लभ अजूबे के लिए सिर्फ बीस हजार रुपया लिया जाएगा। —हाजी अब्दुल गफूर, लोहा-विक्रेता, भिंडी बाजार से सीधे मिलें या पोस्ट-कार्ड द्वारा आर्डर भिजवायें।

मकान गंदे नाले के किनारे

कॉरपोरेशन के गंदे पानी के निकास के तालाब के इर्द-गिर्द सांडा रोड पर पुरफिजा रिहायशी प्लाट आसान किस्तों पर।

पहली किस्त के भुगतान पर कब्जा हासिल करके साहबे-जायदाद कहलाइए। ऐसे नायाब मौके बार-बार नहीं मिलते। —मालिकान शेख कदूस हाउसिंग कारपोरेशन, प्रापर्टी डीलर्ज, ३० गुलफशी मार्केट, कश्मीरी बाजार, लाहौर।

चीनी बिल्ली ले जाएं

एक चीनी बिल्ली (जो चीन की है, चीनी की नहीं), दो अजगर, एक लकड़बग्घा, चार लंगूर, दो ऊदबिलाव बराये-फरोख्त मौजूद हैं। लंगूर काफी भलेमानस हैं और अजगर बिलकुल अहानिकारक। इच्छुक हजरात पिंजरे वगैरा साथ लायें। अन्य विवरण क्यूरेटर चिड़ियाघर से किसी समय भी मिलकर हासिल किया जा सकता है।

मेरा निधन हो गया है

बहुत खेद के साथ सूचना दी जाती है कि पिछली सितंबर, दस बजे रात को अकस्मात हृदयगति बंद हो जाने से मेरा निधन हो गया। भगवान स्वर्ग में वास दे। मैं अजब आजाद मर्द था। मेरे लिए स्वर्गवास की प्रार्थना करें। चालीसवां निधन-तिथि से पूरे चालीस दिन बाद होगा। —हकीर मुहम्मद अदरीस, बूटा खलद आशियानी, मार्फत लाहौर पागलखाना, लाहौर।

टी-हाउस में आधुनिक कविता

आप आधुनिक कविता सीखने की अभिलाषा रखते हैं, तो मैं आपको एक ही महीने में इस कला में प्रवीण करने का

जिम्मा लेता हूं। टी-हाउस में किसी भी समय तशरीफ लाइए। मैं हर वक्त वहीं पर होता हूं। होनहार कवियों से कोई पारिश्रमिक नहीं लिया जाता, पर चाय के बिलों के भुगतान की उनसे अपेक्षा की जाती है। पता—बेकार मुलतानी, प्रसिद्ध आधुनिक कविता-विशेषज्ञ, टी-हाउस, लाहौर।

कागज का थैला

एक कागज का थैला, जिसमें तीन केले, दो अमरूद और बच्चे की छल्लेदार चूसनी थी, चार मार्च को स्टेशन से लक्ष्मी बिल्डिंग आते हुए ओमनी बस नंबर १९ में रह गया था। जिन साहब को यह थैला मिले, वे कृपया इसे इस पते पर पहुंचा दें—मसलहुद्दीन सादी, कूचा नंबर ८, मलंग टाउन, चौबुर्जी के पीछे। जिला कचहरी से चौबुर्जी तक का एक-तरफा बस का किराया अदा किया जाएगा, पर खाली थैला न लायें।

कार बदल गयी है

मोरखा अट्ठाईस फरवरी को अपने रिश्तेदारों को गाड़ी पर सवार करने के बाद, रेलवे-स्टेशन से घर आते समय मेरी कार तब्दील हो गयी। उसका पता मुझे उस समय चला जब घर पहुंचकर मेरी नजर संयोगवश कार की नंबर-प्लेट पर पड़ी। जिन साहब से कार तब्दील हो गयी है, वे इस पते पर मुझे मिलकर अपनी कार या उसकी नंबर-प्लेट बदलवा लें। वैसे मुझे इस कार के रखने में कोई एतराज नहीं—एफ. ए. टेडी, गुलबर्ग, लाहौर।

चाहिए एक अजीब टीचर

एक तजुर्बेकार उस्ताद यानी टीचर की जरूरत है, जो तीसरी जमात के स्टूडेंट यानी विद्यार्थी को अगले साल मैट्रिक यानी दसवीं जमात का इम्तहान दिला सके। बरखुर्दार गणित, भूगोल, उर्दू वगैरा में काफी कमजोर हैं। तनख्वाह योग्यतानुसार दी जाएगी। खाने-पीने का इंतजाम मुफ्त होगा और बरखुर्दार के कामयाब हो जाने पर एक पगड़ी, एक अचकन, सफेद लट्ठे का एक तहबंद टीचर को पेश किया जाएगा। बिस्तर साथ लायें—मुश्तहर खान, बलोच खान तमंदार बरशाब, कुलात डिवीजन।

ले आइए, मेरे कर्जदार को मेरे नजदीक

अल्लाहरक्खा वल्द अहमददीन, रंग स्याह मुश्की, कद ठिगना, आधे सिर से गंजे। भूरी छोटी-छोटी मूंछें। एक

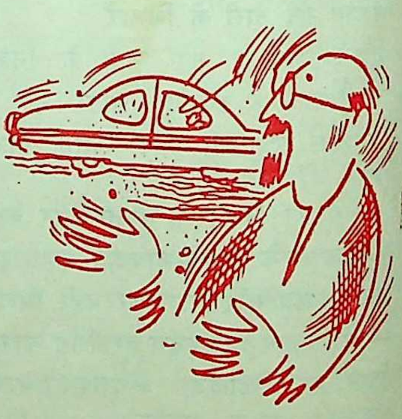

हफ्ते से लापता हैं। उनके घरवाली को या तो उनकी खबर नहीं या जानबूझकर अनजान बने हुए हैं। जिन साहब को मिलें, किसी तरह पकड़-धकड़ या बरगलाकर नीचे के पते पर पहुंचा दें। लानेवाले को तीस रुपये नकद और आने-जाने का उचित किराया पेश किया जाएगा। अल्लाहरक्खा साहब मेरे तीन हजार रुपये के कर्जदार हैं। इसी लिए भागे फिरते हैं। —अख्तर बेग पहलवान, मेवा मंडी, लाहौर।

बीवी और बच्चा

ऊंचे खानदान की सुंदर, शरीफ, फैशनेबल लड़कियों के लिए सी. एस. पी. अफसर या फर्म-मैनेजर की हैसियत के रिश्तों की जरूरत है। सिर्फ वही हजरात पत्र-व्यवहार करें जिनकी अपनी मोटर-कार हो और जो खानसामा रखने का सामर्थ्य रखते हों। बीवी के पीछे-पीछे बच्चे को उठाकर चलने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। पहले ही खत में प्रापर्टी, तनख्वाह और बैंक-बैलेंस वगैरा के बारे में जरूरी जानकारी आनी चाहिए। उम्र की कोई कैद नहीं। बाक्स नंबर ३८, मार्फत रोजाना 'तोप-ओ-तुफंग', लाहौर।

ऐटमी गोलियां

हमें अपनी ऐटमी गोलियों की बिक्री के लिए टूरिंग-एजेंट्स की फौरन जरूरत है। पांच सौ रुपये नकद जमानत लेकर तुरंत इस पते पर पहुंचें—हकीम आफताबी, बूचड़खाने से ऊपर की मंजिल, जींद रोड, लाहौर। तीन बजे दोपहर के बाद तशरीफ लायें। इससे पहले मैं बूचड़खाने में व्यस्त होता हूं।

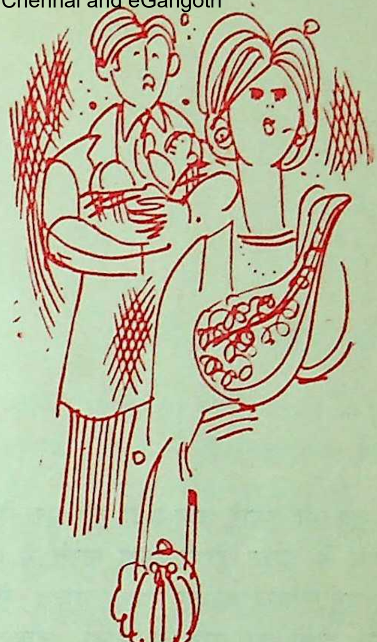

हाथी बापदादों का साथी

एक चुस्त-चालाक, समझ-बूझवाले फीलवान (महावत) की जरूरत है जो फीलवानी (महावतगीरी) में पूरी महारत रखता हो और हर किस्म के हाथियों को बस में कर सकता हो। हमारा 'फीलवान' नामक हाथी बेहद शरीफ हाथी है। यद्यपि हफ्ते में एक बार उस पर दौरा पड़ता है और मस्त हो जाता है। फीलवान को आठ घंटे हाथी की पीठ पर बैठकर हमारी कोठी के फाटक पर पहरा देना होगा। हम अपने पुश्तैनी वतन सितमाबाद में

थे, तब भी हमारे बाप-दादा की पुरानी हवेली के बाहर हाथी झूला करते थे। हम यह परंपरा कायम रखना चाहते हैं और हाथी को काम में लाना चाहते हैं। पता—नवाब खान बहादुर फरजंद-अली, खान बहादुर ऑव सितमाबाद, स्टेट जेड ५७, गुलबर्ग।

चोरी में निपुण मिस्त्री

एक तजुर्बेकार मिस्त्री की सेवाएं चाहिए। जो हर किस्म के ताले खोल सके और उनकी दूसरी चाबियां ढाल सके। सेंध लगाने में भी थोड़ी-बहुत सामर्थ्य रखता हो। कमीशन बहुत माकूल दिया जाएगा। पता—कजाक ब्रदर्स, कूचा राहगीरां, भाटी गेट, लाहौर।

लड़का मेरा नहीं है

मेरा लड़का सखी सरवर सख्त नाफरमाबरदार और दुष्ट है, इसलिए मैं उसे आक (बहिष्कृत) करता हूं और उसके किसी कार्य और लेन-देन का जिम्मेदार नहीं हूं। सखी सरवर पिछले दो माह से मेरे नाम पर चंद दुकानदारों से गोश्त, आटा, सब्जी वगैरा लाता रहा है। उनके बिलों के भुगतान के लिए मेरा दरवाजा न खटखटाया जाए। खास तौर पर चिराग-दीन कसाई और बाबू उम्र सब्जीफरोश नोट कर लें।——मुहम्मद बुकरात, रिटायर्ड पोस्टमैन, कूचा मगुरबयान, शर्कपुर।

ढूंढ़ो आदमकद भालू को !

मेरा रीछ भोलू, जिसकी थूथनी स्याह और कान लंबे और कद खड़ा होने पर लगभग मेरे जितना है। कल रात रूठकर चला गया है। जिन साहब को मिले, इस पते पर सूचना दें या स्वयं नकेल से पकड़कर ले आयें।—साईं खुशी मुहम्मद बाजीगर, कूचा मेहराबपुरा, मिस्री शाह, लाहौर।

चांद पर जाने के लिए बुकिंग शुरू

खुशी से ऐलान किया जाता है कि हमने १९८० में चांद पर जानेवाले 'भोपू' नामक अंतरिक्ष-यान के लिए बुकिंग शुरू कर दी है। यह यान ठीक पहली जनवरी १९८० को नौ बजे लाहौर एयरपोर्ट से अपने सफर पर रवाना होगा। वापसी के बारे में अभी कुछ पता नहीं। सिंगल और रिटर्न-टिकट की लागत सिर्फ दो सौ रुपये और तीन सौ रुपये हैं। जो लोग दुनिया की जिंदगी से तंग आ चुके हों, उनके लिए बहुत अच्छा मौका है। ——बाबा एंड बाबा ट्रैवलर्ज, ८५२५ दी माल, लाहौर।

—अनु. : सुरजीत

पहाड़ी सांझ

• डॉ. प्रतापचंद्र ‘चंद्र

दार्जिलिंग के सुनसान बर्चहिल रोड के समीप चित्रकार दीपक राय चित्र आंक रहा था। उसकी भाव-विभोर आंखें बीच-बीच में दूर कुहासे से घिरे हुए नीले पहाड़ कंचनजंघा की मधुरिमा को चूमती हुई फिर चित्र पर आ टिकती थीं।

“वाह!” दीपक की तन्मयता को तोड़ता हुआ पीछे से नारी-स्वर सुनायी पड़ा। उसने मुड़कर देखा, पीछे एक पहाड़ी लड़की खड़ी है। शायद अनजाने में ही उसके मुख से ‘वाह’ निकली थी। दीपक की आंखें जब उसके शरीर पर आ टिकीं तो उसके गाल गुलाबी हो उठे। उसने झेंप को मिटाते हुए शुद्ध बंगाली में कहा, “बाबूजी, आप काफी सुंदर चित्र बनाते हैं!”

“बनाने की कोशिश करता हूं। मगर आप काफी अच्छी बंगला बोलती हैं,” दीपक ने कहा।

लड़की ने मुसकराते हुए कहा, “मेरी बड़ी इच्छा है कि चित्र बनता देखूं।”

“ठीक है, देखिए। बेंच पर बैठ जाइए,” दीपक ने कहा।

लड़की बैठ गयी। दीपक ने दोबारा चित्र में ध्यान लगाना चाहा, पर मन उसके बस में कहां था? उसका सामीप्य बार-बार उसके चित्त को आलोड़ित करता रहा। दीपक ने बरबस मुड़कर देखा, वह उसे ही देख रही है। पकड़े जाने पर वह थोड़ी झेंप गयी।

दीपक ने पूछा, “क्या, आप चित्र बनाना नहीं देख रही हैं?” लड़की ने मानो भागकर शर्म को छिपाना चाहा। उसने जल्दी से कहा, “फिर कभी देखूंगी। आज एक दूसरा काम है, मैं चलती हूं। नमस्ते।” और दीपक को अभिवादन का मौका दिये बिना वह रास्ते की बांक में ओझल हो गयी। दीपक विस्मित-सा कुछ क्षण उस ओर देखता रहा।

कोर्ट रोड स्थित अपने फ्लैट के बंधे-बंधाये माहौल से उकताकर दीपक एक दिन लेबंग के रास्ते पर टहलने निकल पड़ा। गहरी खाई और दूर जंगल से ढका हुआ श्यामल पर्वत। कुहासा फैला हुआ था, जिससे थोड़ी दूर की चीजें भी दिखायी नहीं देती थीं।

आगे बढ़ने पर दीपक को जैसे ही

एक सुरीली पहाड़ी धुन की आवाज सुनायी पड़ी, वह रुक गया। कुछेक कदम आगे ही गायिका की अस्पष्ट मूर्ति दिखायी दी। अरे, यह तो वही पहाड़ी लड़की है! दीपक रुककर उसका गाना सुनता रहा। सहसा लड़की घूमी और दीपक पर नजर पड़ते ही उसका गाना रुक गया। बोली, "अरे, आप?"

"जी, इस बार कंप्लीमेंट देने की बारी मेरी है। कितना मीठा स्वर है आपका! मगर आप रुक क्यों गयीं?" दीपक ने कहा। लड़की मुसकरायी और निरुत्तर ही रही।

"क्या आप मुझे अपना गाना सुनाने के योग्य नहीं समझतीं?" हंसते हुए दीपक ने पूछा।

"नहीं, नहीं, ऐसी कोई बात नहीं, मैं बंगला गाना बहुत अच्छा नहीं जानती और हमारे पहाड़ी गीतों को सुनकर आप हंसेंगे।"

"आपसे अनुरोध है, मुझे इतना रूखा मत समझियेगा," दीपक ने कहा, "अपना पहाड़ी गीत ही सुना दीजिए न!"

वह अनुरोध को टाल न सकी। गाना शुरू किया, मगर गले में पुराना स्वर वापस नहीं आया, गला कांप उठा। शर्म से लाल होकर उसने कहा, "माफ कीजिए, आज मैं बिलकुल नहीं गा पा रही हूं।" और बात बदलने के लिए उसने दूसरे ही क्षण पूछा, "कहां जा रहे हैं?"

"घूमने निकला हूं।"

"चलिए, मुझे भी उधर जाना है।"

और दीपक खिल उठा। दोनों चल पड़े।

"मेरा नाम दीपक राय है। आपका?" दीपक ने पूछा।

"मुझे कांची के नाम से पुकारियेगा।"

"बड़ा प्यारा नाम है।"

"पूरा नाम सुनने पर आप हंसेंगे। वह है—डारोथी कांची बासु," उसने हंसकर कहा।

"इसका अर्थ?" दीपक ने विस्मित होकर पूछा।

"मेरी मां भूटिया थी, और पिता बंगाली। बचपन में मैं दोनों को खो बैठी, मिशनरियों के पास मेरा पालन-पोषण हुआ। एक बंगाली परिवार के संस्पर्श में आकर बंगला सीखी। बंगला भाषा मुझे बहुत पसंद हैं।"

यकायक आसमान में कुहासे के पुंज ने काले बादल का रूप ले लिया और कुछ देर बाद मूसलाधार बारिश शुरू हो गयी। कांची ने छाता तान लिया और दीपक ने बरसाती पहनकर उसकी टोपी को भौंहों तक खींच लिया।

पहाड़ी वर्षा थी। बड़ी-बड़ी बूंदें तेजी से गिरने लगीं। तेज हवा को कांची का छाता सह नहीं पा रहा था।

"अरे आप तो भीग रही हैं! चलिए, जल्दी से किसी शेड के नीचे चलें।"

दोनों तेज चलने लगे। लेकिन आसपास कोई शेड न था। हवा की गति बढ़ती ही जा रही थी, किसी भी क्षण छाता टूट सकता था। दीपक ने विपत्ति देखकर कहा, "आप मेरी बरसाती ले

लीजिए ।"

"यह कैसे हो सकता है, फिर आप जो भीग जाएंगे !"

"मगर इस प्रकार भीगने से क्या फायदा," दीपक ने कहा, "आइए, एक काम करें, इस बरसाती को हम दोनों किसी तरह लपेटकर खड़े हो जाएं।"

दीपक का यह प्रस्ताव कांची के लिए अकल्पनीय था । एक ही बरसाती-कोट के अंदर एक युवती और युवक ! कांची शर्म और संकोच से बोल पड़ी, "न, न, यह कैसे हो सकता है ?"

"इसमें संकोच की क्या बात है? भीगकर निमोनिया से बीमार पड़ जाना कोई बहादुरी नहीं । प्लीज, आइए ।"

दीपक के आमंत्रण में कुछ ऐसा आकर्षण था कि कांची इनकार नहीं कर सकी । दीपक ने बरसाती-कोट का बटन खोलकर बनाज एक हाथ निकाल लिया; ढीले-से बरसाती कोट को जितना संभव हो सका, ओढ़कर दोनों चुपचाप खड़े रहे । दीपक अपने दोनों हाथों से छाते को सिर पर ताने रहा ।

वर्षा लगातार होती रही । दोनों काफी पास-पास खड़े थे । दीपक कांची के वक्ष का स्पंदन मानो अपने हृदय से अनुभव करता रहा। कांची का शरीर बीच-बीच में कांप उठता था—जाड़े से या उत्तेजना से, कौन जाने !

"आप बहुत 'टायर्ड' लग रही हैं, मेरे कंधों का सहारा लेकर थोड़ा 'रेस्ट'कर लीजिए," दीपक ने कहा और कांची ने बिना प्रतिवाद के दीपक के कंधे पर अपना हाथ रख दिया।

कुछ देर तक तेज वर्षा के बाद जब पानी रुका, तब दोनों घर की ओर चल दिये । वापसी में दोनों के बीच

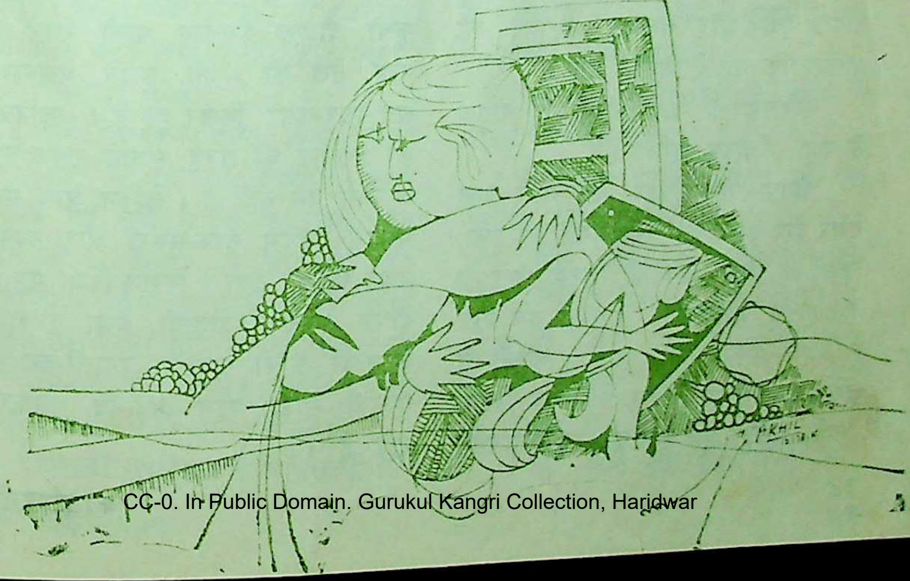

कोई विशेष बात नहीं हुई । निकट संस्पर्श की अपूर्व अनुभूति ने दोनों को ही मूक बना रखा था ।

अगले कई दिनों तक दीपक कांची के आगमन की प्रतीक्षा करता रहा, मगर वह नहीं आयी ।

इतवार का दिन था, हाट लगी थी । भीड़ से दूर दीपक मेकैंजी रोड पर चला जा रहा था । पास से गुजरती हुई गाड़ी ने ब्रेक लगाया और साथ ही किसी ने पुकारा, "बाबूजी !"

दीपक ने देखा गाड़ी में कांची बैठी है, स्टियरिंग व्हील उसके हाथ में है और साथ में बैठा है एक पहाड़ी युवक । युवक साहबी सूट और सिर पर यांकी स्टाइल का फेल्ट-हैट पहने था । "बाबूजी सुनिए, मैं मिशन के काम से सिंचल तक जा रही हूं । आइए, वहां तक घूम आयें ।" फिर बहादुर की ओर देखकर कहा कि यह मिस्टर बहादुर हैं और दीपक की ओर देखकर बहादुर को बताया कि यह हैं मिस्टर राय ।

परिचय के बाद कांची ने दीपक से कहा, "आइए, चलिए ।"

दीपक ने बहादुर की ओर एक नजर देख ईर्ष्या की हंसी हंसते हुए कहा, "हंसों के बीच कौवे की तरह जाने से क्या लाभ, बोलिए ?" बहादुर इस बात का अर्थ समझ नहीं पाया । कांची ने संकेत को समझते हुए प्रतिवाद किया, "नहीं, बहादुर मुझे कुछ दूर पर उतारकर कर्सियांग तक जाएगा । एक साहब ने यह गाड़ी किराये पर ली है । मैं तो शाम की ट्रेन से लौटूंगी ।"

दीपक ने कहा, "नहीं, रहने दीजिए । मुझे कुछ काम है ।"

कांची ने दुःखी होकर कहा, "अच्छा, रहने दीजिए । एक दिन में आपके यहां आऊंगी । गुडबाय ।"

कांची से मुलाकात के दूसरे दिन दीपक की नींद टूटने में नौ बज गये । बाहर चमचमाती धूप में सारा दार्जिलिंग शहर मानो खुशी से झूम उठा । लिहाफ हटा वह बिस्तर से उठ खड़ा हुआ । बीसेक मिनट में तैयार होकर बाहर निकलने के लिए उसने ड्राइंगरूम में प्रवेश किया । ड्राइंगरूम देखते-देखते ही वह भौचक्का रह गया । ड्राइंगरूम ही उसका स्टूडियो है—और स्टूडियो यानी एक बेतरतीब गो़दाम जिसमें दो-तीन चेयर, एक टेबल, ईजल, रंग-कूंची, दो-एक कैनवास, पानी रखने के पात्र, तेल की शीशी, पुराने अखबार-सब इधर-उधर बिखरे हुए हैं । स्टूडियो को तसवीर की तरह सजाये रखने का अभ्यास उसे नहीं है । लेकिन आज यह गोदाम एकदम साफ-सुथरा और व्यवस्थित कैसे हो गया ? किसने किया यह ? दीपक ने नजर दौड़ायी, देखा दरवाजे के सहारे कांची खड़ी है, बंगाली ढंग से गुलाबी साड़ी पहने मंद-मंद मुसकरा रही है ।

"अरे, आप ! कब आयीं ?"

"पता नहीं, सुबह से ही बैठी हुई हूं, लेकिन आपकी नींद ऐसी कि टूटती ही नहीं," कांची ने हंसते हुए कहा ।

"इसलिए मेरे इस गोदाम को साफ करने में लग गयीं !"

"अरे, आप खड़ी क्यों हैं ? बैठिए, सोचा था घूमने निकलूंगा । लेकिन अब यह कमरा इतना सुंदर लग रहा है कि इसे छोड़कर जाने की इच्छा नहीं हो रही ।"

कांची बैठ गयी । दीपक भी एक कुरसी खिसकाकर बैठ गया, बोला, "आप इतने दिनों तक क्यों नहीं आयीं ? शायद बहुत व्यस्त रहीं या मिस्टर बहादुर ने नहीं छोड़ा ?"

कांची का चेहरा थोड़ा लाल हो उठा । उसने बात पलटते हुए कहा, "काम में फंस गयी थी इसलिए आ नहीं पायी । कल सिंचल जा रही थी । बहादुर ने कहा, चलो तुम्हें रास्ते में छोड़ दूंगा ।"

"बहादुर कौन है ?"

"मेरे बचपन का दोस्त, उसके पिताजी एक साहब के यहां काम करते थे । मरते समय वह उसे साहब के हाथों सौंप गये थे । बहादुर के बड़े होने पर साहब ने उसे एक ब्यूक गाड़ी खरीद दी । उसे टैक्सी की तरह चलाकर उसने दो गाड़ियां और खरीद ली हैं । कल वाली स्टैंडर्ड गाड़ी उसी की थी ।"

"आपको ड्राइविंग उसी ने सिखायी ?"

"हां" कांची ने हंसकर कहा । फिर विषय बदलते हुए कहा, "आप अच्छे चित्रकार हैं । उस दिन मैं बहुत देर से छिपकर चित्र बनाते देख रही थी । मुझे स्वयं पता नहीं मैं कब 'वाह' कह बैठी ।"

"आपने उस दिन कहा था न कि चित्र बनते देखना आपको बहुत पसंद है । देखेंगी ?" दीपक ने बातचीत का सिलसिला आगे बढ़ाया ।

"जरूर ! कब दिखाएंगे ?" कांची ने आग्रह के साथ कहा ।

"एक काम कीजिए, आप मुझे एक 'सिटिंग' दे दीजिए !"

"ओहो, आप मुझे माडल बनाएंगे ! ठीक है," बच्चों की तरह उच्छवसित हो कांची ने कहा । मगर दूसरे ही क्षण बोली, "नहीं देखिए . . . "

"क्यों, क्या हुआ ?"

"नहीं, लोग क्या कहेंगे ?"

“क्या आप मुझे इतना नीच समझती हैं ?”

“नहीं, नहीं मेरा मतलब यह नहीं है। कहने दीजिए, लोग चाहे कुछ भी कहें, मैं आपका ‘माडल’ बनूंगी। बोलिए, कब से आना शुरू करूं ?” “कल से” दीपक ने कहा। “नहीं, कल नहीं। परसों से। दोपहर तीन बजे आ जाऊं, आपको असुविधा तो नहीं होगी ?”

“बिलकुल नहीं।”

दीपक ने कांची का ‘पोर्ट्रेट’ शुरू किया। अधखुली खिड़की से सटकर खड़ी कांची दूर अस्पष्ट कंचनजंघा की हिम-श्रेणियों को देख रही है और उसकी चंपई उंगलियां अनजाने ही लंबी काली वेणी से खेल रही हैं। सुनहली धूप उसके चेहरे, वक्ष और बिखरे कुंतलों को चमका रही है।

“पोर्ट्रेट’ बनता रहा और दीपक कांची के रूप से परिचित होने की कोशिश करता रहा। कांची में एक ऐसा अपूर्व माधुर्य है जिसका वर्णन संभव नहीं ! दीपक कितनी ही बार निष्पलक नेत्रों से उसे देखता रह गया, तूलिका हाथ में धरी रह गयी, प्रेम की वाणी ने होठों में मृदु स्पंदन पैदा किये, किंतु कंठ से भाषा निकल नहीं पायी। कांची ने कौतूहल से कई बार पूछा, “रुक क्यों गये ? क्या देख रहे हैं ?”

“आपको ! बहुत ही सुंदर हैं आप !”

कांची शर्म से लाल हो उठी।

उस दिन आसमान साफ था। सूर्य पश्चिम की ओर झुक गया था, कांची आज देरी से आयी थी। सांझ का अंधेरा घिरने लगा था। डूबते सूरज के रक्तिम आलोक में कांची के रेशमी बाल चेहरे, वक्ष पर छितरा गये थे, जिससे उसकी देह की रेखाएं अग्नि-शिखा की तरह दमककर मानो दीपक के प्रत्येक रक्त-कण का आह्वान कर रही थीं। दीपक इस आह्वान की उपेक्षा नहीं कर पाया। हाथ की तूलिका, पैलेट एक ओर रख उसने कांची की देह को बांहों में जकड़ लिया।

कांची हतप्रभ हो गयी। तत्काल उसने दीपक के आलिंगन से बलपूर्वक स्वयं को मुक्त किया।

दीपक स्तंभित-सा चुप खड़ा रहा।

“बाबूजी, क्या आप मुझे स्टेशन की कुली-औरत समझते हैं जो शराब और

रुपये के लिए अपनी देह बेच डालती है?"
और कांची फूट-फूटकर रो पड़ी।

असंयम की लज्जा और अनुशोचना से दीपक का अंतर क्षुब्ध हो उठा। वह कंपित कंठ में बोला, "मुझे माफ कीजिए मिस बसु! मैं आपसे प्यार करता हूं।"

कुछ देर तक अविच्छिन्न नीरवता बनी रही। फिर दीपक ने अपना मन कांची के सामने खोल डाला, बोला, "कांची, मेरा मन आपको लगातार चाहता रहा है। आपका रूप, आपका व्यवहार, आपका मधुर स्वभाव मुझे पागल बनाता रहा है। आपको न पाने पर भी मैं आपको चाहता रहूंगा।" दीपक का कंठ रुद्ध हो गया, उसकी आंखें छलछला आयीं।

कांची मुड़कर खड़ी हो गयी। अश्रुसिक्त नयनों से कुछ देर तक दीपक को देखने के बाद उसने पूछा, "बाबूजी, आप मुझसे शादी करेंगे?"

प्रश्न की आकस्मिकता ने दीपक को कुछ क्षण के लिए स्तब्ध कर दिया। कांची ने सारी व्याकुलता को अपने में समेट फिर प्रश्न पूछा, "मुझसे शादी करेंगे, बाबूजी?"

हर्ष से पुलकित होते हुए दीपक के मुंह से निकल पड़ा, "तुम मुझसे शादी करोगी? मगर बहादुर..."

"उस पागल की बात रहने दीजिए। उसको मैं बचपन से भाई मानती आयी हूं। अब कहिए, मुझसे शादी करेंगे?"

"तुम्हें पाकर मैं धन्य हो जाऊंगा, कांची," कहते हुए दीपक ने कांची का हाथ थाम लिया।

—७ कृष्णमेनन मार्ग, नयी दिल्ली

लघु-कथा

स्वयं अपना दीप बनो

घनघोर अंधेरी रात।

शिष्य ने गुरु से विदा मांगते हुए कहा, "प्रभु, इस अंधेरी रात में गंतव्य तक पहुंचने में क्या मेरी कोई सहायता नहीं करेंगे?"

गुरु ने क्षण-भर विचार कर पास रखा दीपक उठाया और उसे जलाकर शिष्य के हाथ में थमा दिया, फिर कहा, "आओ, मैं तुम्हें आश्रम के बाहरी द्वार तक छोड़ आऊं।"

दिये के प्रकाश में दोनों गुरु-शिष्य आश्रम के द्वार तक पहुंचे। शिष्य को विदा करते हुए गुरु ने कहा, "अच्छा वत्स, शुभस्ते पंथान!"

शिष्य चलने को हुआ तो गुरु ने फूंक मारकर दीपक बुझा दिया।

शिष्य ने आश्चर्य से गुरु की ओर देखा, "प्रभु, यह क्या? आपने मेरा साथ छोड़ने के साथ-साथ दीपक क्यों बुझा दिया?"

गुरु बोले, "वत्स, मैं यों तुमसे अलग हुआ कि कहीं तुम्हें अनुसरण मात्र करने की आदत न पड़ जाए और दीपक यों बुझाया कि दूसरों के जलाये दीपक का कोई मूल्य नहीं होता। अपना ही दीपक मार्ग आलोकित कर सकता है!" ●

—नंदिता सिन्हा

कवि

आसान काम नहीं है
किसी की महिमा को पहचानना
तुम जिसे सबसे बड़ा मानते हो
उसे मैं सिरजता हूं
और उसका प्रयोग करता हूं:
विराट को मुष्टिमेय बनाता हूं
मैं स्रष्टा, प्रयोक्ता
और प्रस्तोता हूं शब्दों का
तुम्हें मालूम नहीं
कि शब्द ही ईश्वर है !
शब्द ही ईश्वर था ! !
मैं अनंत नाद का समर्थ लिपिक
उसके प्रत्येक स्पंद को अर्थ देता हूं
दिक्काल के प्रसार को उपसर्गों से बांधता हूं
और क्षणों के कांपते अयाल को
मुट्ठी में ले
दहाड़ते काल-सिंह को काबू में रखता हूं
मैं ही उस 'वाक्' का नियंता हूं,
जिसे रुद्र अपने धनु की प्रत्यंचा के
रूप में धारण करते हैं
ओ, अस्तित्व की 'अस्ति'
पर निर्भर महाकाल !
मैं कवि हूं——
काल को स्फोट से आहत
और नाद से निनादित करता हूं
अक्षर, नाद और शब्द के
त्रिशूल का धारक मैं शिव नहीं, शिवत्व हूं
इतिहास साक्षी है
जिस क्षण कवि की 'मृत्यु' होती है
वह अमर हो जाता है

——डॉ. कुमार विमल
९६, एम. आई. जी. एच.
लोहियानगर, पटना-२०

गजल

क्यों दिन के उजाले में उन्हें आ गया आक्रोश
जो कर रहे थे रात को तय मंजिलें खामोश
झुलसे हुए शहर की दुआ कौन अब करे
बदनाम हवेली में हैं दुबके हुए खरगोश
जख्मों से भरी जिंदगी के हुक्मरान के
वक्त की थप्पड़ से हिरन हो गये हैं होश
नचते थे आसपास विदूषक जो मंच के
संलग्न हैं निर्माण में फिर से नये मुखोश
बुनियाद हिलाते रहे अपने पड़ाव की
अब कैफियत में खड़े हैं देखो नकाबपोश

मत मरने दो आदमी को

कभी-कभी सोचता हूं
कि इस शहर के अगर
सभी आदमी मर जाएं
और ये घर और
घर और घर रह जाएं
चाहे वे महल रहे हों
या सरकारी अट्टालिकाएं
तो कैसा लगेगा ?

कैसा लगेगा जब
संकरी गलियों की सनसनीखेज चुप्पी
और चौड़ी सड़कों के ढूह सूनेपन में

उजाला या अंधेरा
खो गये अकेले बच्चे-सा
रो-रोकर सो गया हो
गहरी नींद में बेसुध थककर
सब कुछ स्तब्ध निःशब्द और
पागल-सी हवाएं लिपटतीं बेकार
पेड़ों की टहनियों से और

भयखाये कितने ही—कितने ही तरह के
झंडों से ऋतुएं

आ-आकर लौटतीं ताला-ठुके द्वार से
मेहमान-सी, तब कैसा लगेगा ?

शायद किसी कब्रिस्तान-सा या
मानवरहित आदिम काल-सा

कैसा लगेगा तब
जब चीखता होगा कोई मौन

'मत मरने दो आदमी को' तब कैसा लगेगा
लगेगा भी कि नहीं यह भी कौन जानता है

——दिविक रमेश

बी-५७, अमर कॉलोनी लाजपतनगर
नयी दिल्ली-११००२४

अभिव्यक्ति की मजार पर चादर चढ़ा गये
गूंगे के हाथ सौंप गये वृहद् शब्दकोश

यूं दांव पै असवार है हारा हुआ जुआरी
ताश के पत्तों में फंसा रह गया है जोश

हैरान होकर अब हकीकत के मुकाम पर
बन के तीरंदाज खड़ा हो गया है रोष

——विश्वभावन

९०६, कमला नेहरू नगर, जबलपुर-४८२००२

श्रीरामचरितमानस
जैसा मैंने समझा

मोरारजी देसाई

जब राम अयोध्या पहुंचते हैं तब सब लोग उनका बहुत उल्लास से सत्कार करते हैं। लेकिन राम जाते ही महत्त्व का काम कैकेयी से मिलने का करते हैं, जिससे उन्हें यह न लगे कि राम के मन में अभी भी उनके बारे में कुछ कटुता रही है। कैकेयी ने स्वयं बदनामी सहन करके भी राक्षसों के नाश का महत्त्वपूर्ण कार्य—अवतार-कार्य—राम के द्वारा पूरा कराया। कैकेयी की यह समाज-सेवा किसी भी प्रकार कम महत्त्व की नहीं है। यदि उन्होंने वरदान न मांगे होते तो राम वन में न गये होते, असुरों का संहार न हुआ होता।

राम के अयोध्या पहुंचते ही उनके राज्याभिषेक की जोरों से तैयारियां शुरू हो जाती हैं। उस समय भी उनकी सबसे बड़ी चिंता यह है कि उनके साथी-सखाओं की योग्य देखभाल हो। सबसे पहले वे सुग्रीव आदि मित्रों को याद करते हैं। राम भारतीय संस्कृति के मंगल-प्रतीक बन जाते हैं। भारतीय संस्कृति का आदर्श 'अतिथि देवो भव'—अतिथि को देवता की तरह मानना है। राम के उदाहरण से हमें यह दिखायी देता है कि हम मनुष्य के रूप में अच्छा आचरण किस तरह कर सकते हैं। आखिर में राम का राज्याभिषेक होता है।

राम सारा कार्य शासन-तंत्र से ही नहीं करते, बल्कि अपने सदाचरण से उदाहरण प्रस्तुत करते थे। वे सबसे संपर्क रखते, हिलते-मिलते, सबके साथ बातचीत करते और सबको बुलाकर समझाते कि हमें किस प्रकार रहना चाहिए, दूसरों के साथ किस प्रकार अच्छी तरह बर्ताव करना चाहिए। वे गुरु वसिष्ठ को, दूसरे ऋषियों को, ब्राह्मणों को, नगरवासियों को बुलाकर कहते थे :

प्रस्तुत लेखमाला के इस अंतिम लेख में लेखक ने रामचरितमानस के बारे में महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले हैं। उनका कहना है कि जीवन-निर्माण की दृष्टि से 'रामचरितमानस' का बड़ा महत्त्व है, वैसे काव्य के रूप में भी यह एक श्रेष्ठ ग्रंथ है।

नहिं अनीति नहिं कछु प्रभुताई
सुनहु करहु जो तुम्हहिं सोहाई।

इस प्रकार रामचंद्र सबको अपनी बुद्धि स्वतंत्र और स्थिर रखकर आचरण करने की सीख देते हैं। इसके बाद राम कहते हैं:

जौं अनीति कछु भाषौं भाई
तौ मोहि बरजहु भय बिसराई

राज्यकर्ताओं को कोई सच्ची बात बतलाता ही नहीं, सब उनका बखान ही करते हैं। जैसे, लोग सामान्यतः यही कहेंगे —प्रधानमंत्री ने जो कहा, बहुत अच्छा कहा, चाहे वे कैसा भी क्यों न बोले हों। विरोधी शायद प्रधानमंत्री के बारे में उलटा कहेंगे, लेकिन उनकी बात प्रधानमंत्री तक शायद ही पहुंचेगी। प्रधानमंत्री को अपने इन प्रशंसकों से सावधान रहना चाहिए। राम-जैसे राजा भी यदि अपने से अनीति होती हो तो प्रजाजनों से उसे रोकने को कहते हैं, तब हमारी क्या गणना?

इसलिए हमें तो अधिक जाग्रत रहना चाहिए। इसलिए मैंने पहले से ही कहा हुआ है कि यदि मेरी भूल हो, तो मेरे कान पकड़ लेना। बल्कि मैंने तो यह भी कहा है कि यदि मेरे साथी भूल करें तो उनसे भी बेधड़क होकर कहना। भूल कोई करे और प्रायश्चित्त दूसरा करे, इससे कुछ अर्थ नहीं निकलता। भूल करनेवाले को भी प्रायश्चित्त तो करना ही चाहिए। मैं इस बात को सार्वजनिक रूप में कहता रहा हूं और मुझे यह कहने की प्रेरणा रामचंद्रजी के चरित्र से मिली है।

रामराज्य : धर्मनिष्ठ समाज

क्या रामराज्य रामचंद्रजी के आदर्श को सिद्ध किये बिना आ सकता है? रामराज्य में तो हर कोई स्वधर्म का पालन करता है। स्वधर्म अर्थात मनुष्य दूसरों को दुःखी न करे, बल्कि दूसरों को सुख पहुंचाने के लिए स्वयं दुःख सहन करे, दूसरों को उस दुःख से बचाए, किसी को दुःखी करके उसमें से सुख प्राप्त न करे। सबके सुख में अपना सुख है, ऐसा समझे। सब अपना-अपना कार्य मन लगाकर करें। इसलिए रामराज्य में जो शांति है, समाज की जो प्रसन्नता है, वह सन्निष्ठ कर्त्तव्य-पालन से पैदा हुई शांति और प्रसन्नता है। जहां परिश्रम है, वहां आरोग्य और दीर्घायु है।

रामराज्य का समाज सुंदर और सुखी था, क्योंकि वह समाज धर्मनिष्ठ था। उनके नेता रामचंद्र-जैसे धर्मनिष्ठ राजा थे। रामराज्य के निर्माण के लिए रामचंद्रजी सतत जाग्रत, चिंतनरत और कर्त्तव्यरत रहते थे। उनका व्यवहार भी धर्म के अनुकूल, पवित्र और उदात्त था। तुलसीदासजी ने 'रामचरितमानस' के द्वारा रामराज्य को साकार कर सकें, ऐसे धर्ममानस का दर्शन भी कराया है। रामराज्य रामचंद्र के त्याग, तप और सामर्थ्य के बिना संभव नहीं था। रामचंद्र का यह आदर्श प्रत्येक प्रजाजन का लक्ष्य बनना चाहिए। हरेक प्रजाजन राम को दृष्टि में रखकर जीवन जिये, तभी रामराज्य

आ सकता है।

गरुड़ की शंका

तुलसीदासजी ने 'उत्तरकांड' में शंकर-पार्वती का संवाद भी दिया है। जिस गरुड़ ने रामचंद्रजी को नागपाश से छुड़ाया था, उस गरुड़ के मन में रामचंद्रजी की शक्ति के बारे में संदेह पैदा हुआ। इस शंका के निवारण के लिए वे ब्रह्मा के पास गये। ब्रह्मा ने उन्हें शंकर के पास भेजा। शंकर ने कहा, 'राम वास्तव में कौन हैं, इसकी बात मैं तुमसे नहीं करूंगा। तुम्हारे प्रश्न का उत्तर मैं नहीं दूंगा। तुम काकभुशुंडि के पास जाओ।' काकभुशुंडि कौवे की योनि में थे, लेकिन थे ऋषि। गरुड़ को काकभुशुंडि के पास क्यों भेजा गया, इसकी स्पष्टता करते हुए महादेव ने पार्वती से कहा, 'भगवान रामचंद्र की कृपा से काकभुशुंडि को उनका रहस्य ज्ञात हो गया था। मुझे गरुड़ का अभिमान दूर करना था। जिस रहस्य को पक्षी-राज गरुड़ नहीं समझता था, उसको काकभुशुंडि—कौआ समझता था। मुझे गरुड़ को इस बात की प्रतीति करानी थी। दूसरे, पंखी ही पंखी की भाषा को समझ सकता है।' महादेवजी ने इस बात में बड़ा रहस्य स्पष्ट किया है। वक्ता-श्रोता जब तक समान भूमि पर इकट्ठे नहीं होते, तब तक संप्रेषण संभव नहीं होता।

भगवद्गीता में कहा है—'संशयात्मा विनश्यति।' संशय अज्ञान और मोह से पैदा होता है, अतः संशय में नहीं रहना चाहिए। गरुड़ ने काकभुशुंडि से राम का स्वरूप जानने की इच्छा व्यक्त की, इसलिए उन्होंने राम का स्वरूप समझाया।

धनुर्धारी राम

काकभुशुंडि का इतिहास

काकभुशुंडि ने गरुड़ से अपना इतिहास कहा। इस इतिहास में अनेक वस्तुएं आ जाती हैं। तुलसीदासजी की यह एक विशेषता है। यह हमारी परंपरा की ही बड़ी विशेषता है कि जो कुछ कहना होता है वह कथा के द्वारा कहा जाता है, जिससे मनुष्य उसका सार रसपूर्वक ग्रहण कर सके और सरलता से उसे पचा सके। शुष्क ज्ञान मनुष्य की बुद्धि में सरलता

से प्रवेश नहीं करता, इसलिए उसको अपेक्षित लाभ नहीं होता। काकभुशुंडि ने गरुड़ को जिस प्रकार ज्ञान दिया वह रीति अधिक प्रभावपूर्ण है।

काकभुशुंडि ने गरुड़ की शंका का समाधान किया, इसलिए उसे बहुत शांति मिली, क्योंकि जहां काकभुशुंडि-जैसे ज्ञानी हों वहां उनके ज्ञान का अधिक लाभ लेने की इच्छा पैदा होती है, यह स्वाभाविक है। गरुड़ ने काकभुशुंडि से पूछा, 'यदि आप आज्ञा दें तो मैं संत और असंत के लक्षण जानना चाहता हूं।' काकभुशुंडि ने संक्षेप में कहा, 'जो संत है, साधु पुरुष है, वह दूसरे के दुःख से दुःखी होता है। वह सबको सुख देने में ही अपना सुख मानता है। वह किसी की निंदा नहीं करता और सबके साथ अच्छा संबंध रखता है, सब पर प्रेम रखता है। वह केवल अपना विचार नहीं करता। जो असंत है उसमें इनसे उलटी बातें होती हैं। वह दूसरे के दुःख से सुखी होता है और उसमें ही आनंद प्राप्त करता है।'

भक्ति के बिना अनासक्ति नहीं

तुलसीदासजी ने जिस प्रकार संत-महिमा गायी है, उसे देखते हुए हम सबको ऐसा लगता है कि हमें बुराइयां शीघ्र से शीघ्र छोड़नी चाहिए और अच्छा बनना चाहिए। इसके बाद तुलसीदासजी एक और ऐसा ही रसपूर्ण प्रश्न खड़ा करते हैं। ज्ञान और भक्ति, इन दोनों में श्रेष्ठ कौन है ? तुलसीदासजी ने इस प्रश्न की संदर चर्चा की है। काकभुशुंडि की बात से मुझे भी कुछ बातें अधिक स्पष्ट हुईं। व्यक्तिगत रूप से मैं कर्म को माननेवाला हूं। अनासक्त भाव से कर्म किया जाए, इसके लिए सतत प्रयत्न करना चाहिए। काकभुशुंडि की बात पढ़ने से पहले मेरे मन में ऐसी श्रद्धा नहीं थी। मैं ज्ञान और कर्म के साथ भक्ति को एक साधन के रूप में मानता था। लेकिन काकभुशुंडि की बात से मैं समझा कि भक्ति के बिना अनासक्त कर्म भी नहीं हो सकता। अनासक्त भक्त की भक्ति, प्रभावपूर्ण, बलवान होती है। अनासक्ति सच्चे भक्त के लिए सहज है। भक्ति के बिना अनासक्त होना कठिन है। ज्ञान महान है यह बात ठीक है, लेकिन ज्ञानी मनुष्य भी कभी-कभी माया की चपेट में आ जाता है। जैसे माया ईश्वर की है, वैसे भक्ति भी ईश्वर की है। लेकिन माया की चपेट ज्ञानी को ठोकर खिलाती है। माया भक्ति के सामने ठहर नहीं सकती, क्योंकि भक्ति करनेवाला ईश्वर के अधिक निकट होता है, उसका ईश्वर के साथ संबंध अधिक मजबूत और प्राणवान होता है। भक्तिमय कर्म मनुष्य के लिए उपकारक है। इसका मतलब यह हुआ कि कोई ज्ञान की उपेक्षा भी कर सकता है। लेकिन ज्ञान के बिना एक प्रकार का अंधत्व आ जाता है। ज्ञान का मार्ग कुछ कठिन है, उसमें अधिक रुकावटें आने की संभावना है, जबकि भक्ति का मार्ग तुलना में अधिक सरल है। मनुष्य

लेखक

की प्रकृति को भी भक्ति अधिक अनुकूल आती है। ध्यान-ज्ञान में चित्त को स्थिर रखने का कार्य कठिन है। देहधारी मनुष्य निर्गुण और निराकार ईश्वर की कल्पना करे और उसको समझने के लिए प्रयत्न करे, यह प्रशंसनीय अवश्य है, परंतु इसमें खतरे भी बहुत हैं। भगवद्गीता में भी इतनी सुंदर रीति से नहीं बताया गया, जिस प्रकार तुलसीदासजी ने ज्ञान की तुलना में भक्ति की अधिक महिमा बतलायी है।

नारद को बोध

इस संदर्भ में नारद का दृष्टांत भी उल्लेखनीय है। वैसे तो नारद भक्त हैं, परंतु संयोगवश उनमें ज्ञान और भक्ति का घमंड आ जाता है। परमात्मा नारद को उचित बोध देते हैं। एक समय नारद विष्णु के पास जाते हैं। वे विष्णु के मुंह से यह कहलवाना चाहते हैं कि सबसे बड़ा भक्त कौन है। नारद के मन में पूर्ण विश्वास था कि विष्णु बड़े से बड़े भक्त के रूप में उन्हीं का नाम लेंगे। नारद तो सोचते थे कि भगवान तुरंत कहेंगे कि तुम्हीं सच्चे भक्त हो, परंतु विष्णु भगवान ने कहा, 'इस प्रदेश में अमुक जगह एक किसान है, वह मेरा सबसे बड़ा भक्त है।' नारद के मन में विचार आया, 'चलो, मैं उसकी परीक्षा तो करूं।' इस परीक्षा में भगवान की परीक्षा भी थी। नारद के अभिमान को चोट लगी हुई थी, इसलिए बिना सब बातों का विचार किये वे किसान के यहां पहुंच गये। वहां जाकर देखा कि किसान तो सुबह जल्दी उठता है, खूब ध्यान से ईश्वर की भक्ति करता है। इसके बाद दिन भर खेती का काम करता है और रात को भगवान का नाम लेकर सो जाता है। नारद के मन में विचार आया, 'जो मनुष्य दिन में दो बार भगवान को याद करता है, वह सबसे बड़ा भक्त है और मैं, जो निरंतर भगवान की भक्ति करता हूं, नहीं हूं!'

तुरंत वे भगवान विष्णु के पास गये और इस बात की शिकायत की। भगवान मुसकराये और नारद को एक पात्र में पानी देकर कहा, 'इस पात्र को लेकर तुम पूरी दुनिया का चक्कर लगाकर यहां आओ। पानी की एक बूंद भी बाहर नहीं गिरनी चाहिए।' भगवान की बात नारद की समझ में तो नहीं आयी, लेकिन उनकी आज्ञानुसार वे पानी का पात्र लेकर

चले गये। दुनिया का चक्कर लगाकर वापस आये और जलपात्र देते हुए कहा, 'लीजिए यह जल-पात्र, मैंने एक बूंद भी पानी बाहर नहीं गिरने दिया।' भगवान ने नारद से पूछा, 'जब तुम चक्कर लगा रहे थे उस बीच तुमने मुझे कितनी बार याद किया?' नारद ने कहा, 'भगवान! मैं आपको कैसे याद करता? जल-पात्र में से एक बूंद भी बाहर न गिरे, इसका ध्यान रखता या आपका?' भगवान् ने कहा, 'वह किसान तो पूरे दिन संसार में रचा-पचा रहता है, फिर भी मुझे नहीं भूलता। संसार में काम करते हुए भी उसका मन तो मुझी में लीन रहता है।' नारद को स्वीकार करना पड़ा कि वह किसान ही सर्वोत्तम भक्त है।

तुलसीदासजी ने अनेक कथाओं के द्वारा हमें बोध कराया है। हमारे जीवन के उत्थान के लिए उनकी बहुत-सी बातें उपयोगी हैं। उनकी बातें इतनी सुंदर हैं कि प्रत्येक व्यक्ति उनका पूरा लाभ ले, ऐसी मेरी इच्छा है।

जीवन-निर्माण के लिए महत्त्वपूर्ण

'रामचरितमानस' ग्रंथ की बातों का जितना अधिक चर्वण किया जाए उतना अधिक रस इसमें से प्राप्त होगा। इसमें पृष्ठ-पृष्ठ पर बहुत सीखने-समझने को है, जीवन में आचरण करने को है। राम ने लोगों को अपने आचरण द्वारा जिन आदर्शों का उपदेश दिया, उन्हें हमें ग्रहण करना चाहिए। उनके बहुत से प्रसंग हमारे दैनिक जीवन में आज भी उपयोगी हो सकते हैं। मैं तो जीवन-निर्माण की दृष्टि से ही 'रामचरितमानस' को महत्त्व देता हूं। वैसे काव्य के रूप में भी यह एक श्रेष्ठ ग्रंथ है।

राम की बात करते समय, रामराज्य की बात करते समय स्वराज्य द्वारा रामराज्य स्थापित करने के इच्छुक महात्मा गांधी को कैसे भुलाया जा सकता है? इस देश में आज हम क्या करें जिससे रामराज्य आये? रामराज्य में मुख्य वस्तु धर्म की है, सत्य की है। धर्म और सत्य एक-दूसरे से संकलित हैं। सत्य धर्म से निकलता है और धर्म का अर्थ वह है, जो राम बताते हैं—मानवता का धर्म। इसमें किसी वाद-विवाद की गुंजाइश नहीं है। जो धर्म कहे जाते हैं, वे सब हमें मानवता की ही सीख देते हैं। किसी को दुःखी करना या दुःखी देखना—इसमें बड़ा दुःख है। दुःखी व्यक्ति की मदद करने से बढ़कर कोई दूसरा सुख नहीं है। सब धर्म यही बात सिखाते हैं। इस मानव-धर्म से ही सत्य का प्रादुर्भाव होता है, इससे निर्भयता आती है। इस देश में धर्म का स्थान तो है ही, इसका प्रतिपादन तुलसीदासजी ने बहुत सुंदर रीति से किया है। 'रामचरितमानस' लिखने के बाद भी वे ४०–४५ वर्ष जीवित रहे। तुलसीदास १२६ वर्ष की आयु में विदेह हुए। मेरी ऐसी इच्छा है कि हम सबमें, हमारे सब कार्यों में, राम का निवास हो। राम तो हमारे साथ हैं ही, इसकी निरंतर प्रतीति करते हुए हमें अपना रोजमर्रा का व्यवहार चलाना चाहिए, तभी 'रामचरितमानस' की सच्ची अनुभूति होगी, साक्षात्कार होगा।●

तनाव से मुक्ति

अबस, चमोली : मैं २३ वर्षीय, अविवाहित एम. एस-सी. बैंक में कार्यरत हूं। जब मैं दसवीं में पढ़ता था, मुझे मेरे पालतू कुत्ते ने काट खाया, जिसके लिए मैंने चौदह एंटी-रेबीज इंजेक्शन लगवा लिये। दो साल बाद वह कुत्ता पागल होकर मर गया लेकिन मरने से दो दिन पूर्व उसने मेरी कोहनी पर दांत गड़ा दिये थे। यद्यपि दांत गहरे नहीं गड़े थे। यह बात मैंने घर पर किसी को नहीं बतायी, लेकिन मेरे मन में भय बैठ गया कि कहीं मैं पागल न हो जाऊं। भय से तंग आकर आठ महीने बाद मैंने फिर चौदह इंजेक्शन लगवा लिये। लेकिन भय से आज तक मुक्त नहीं हो पाया हूं और मुझमें पैथालॉजिकल आइडेंटिफिकेशन की, जिसके बारे में आपने गत अगस्त अंक में लिखा है, आदत पड़ गयी है। मुझे इस भय से मुक्ति दिलाने का कोई उपाय बताइए!

कुत्ते के काटने पर आपने इंजेक्शन लगवाकर अच्छा किया। अब रेबीज के कारण आपके पागल हो जाने का भय निर्मूल है। रेबीज के अतिरिक्त साइकोसिस भी पागलपन का कारण होता है, लेकिन आपमें ये दोनों ही नहीं हैं। आपको 'पागल होने का डर' की बीमारी है और इससे कभी कोई पागल होते मैंने नहीं देखा। इसलिए इतना निश्चित है कि आप पागल नहीं होंगे।

आपको चाहिए कि आप शारीरिक व मानसिक––इन दोनों रूपों से ही स्वस्थ व्यक्तियों के बीच रहें, और हरेक चीज को आशावादी व सकारात्मक दृष्टिकोण से देखने की आदत डालें। आपमें जो 'पैथालॉजिकल आइडेंटिफिकेशन' की प्रवृत्ति पैदा हो गयी है, वह कोई बुरी बात नहीं है। जब आपमें यह प्रवृत्ति आ ही गयी है तो आप इससे सकारात्मक चिंतन द्वारा 'हेल्दी आइडेंटिफिकेशन' ही करें।

अरुण, बंबई : मैं २३ वर्षीय, बी. ए. फर्स्ट क्लास फर्स्ट, अच्छे व्यापारी वर्ग का, जीवन के अनेक क्षेत्रों में बहुत सफल युवक हूं। चार महीने बाद मेरी शादी होनेवाली है। यद्यपि, मेरे दो सौ आदमियों के परिवार में कोई भी पागल नहीं है, लेकिन मैं जन्मजात पागल हूं और मैं पागल हूं, इस बात को मेरे परिवार में भी कोई नहीं जानता। अगर मैं यह बात घर में किसी से कहूं तो कोई मानेगा भी नहीं। शादी के बाद

यदि मेरे बच्चे भी पागल हुए तो क्या होगा ? अपनी पत्नी और पागल बच्चों को पैदा कर उनका जीवन बरबाद करने से अच्छा मैं यह समझता हूं कि जीवन-भर कुंवारा ही रहूं। बताइए, मैं क्या करूं ?

आपके पत्र से ऐसा तो नहीं लगता कि यह किसी पागल व्यक्ति का पत्र है। मुझे पता नहीं कि आप 'पागल' शब्द से क्या अर्थ लगाते हैं। पहली बात तो यह कि पागल व्यक्ति प्राय: अपने को कभी पागल नहीं समझता। दूसरे, पागलपन के दौरान कभी भी कोई व्यक्ति बी. ए. -जैसी परीक्षा फर्स्ट क्लास फर्स्ट में नहीं पास कर सकता और न अन्य क्षेत्रों में उतना सफल ही हो सकता है जितने कि आप हैं। निश्चय ही आप पागल नहीं हैं। जहां तक संतान में पागलपन के आने की बात है, संतान में पागलपन तब आने की संभावना होती है जबकि मां या बाप या उनके निकट-संबंधी (जिनका रक्त का संबंध हो) में पागलपन हो। आपके दो सौ व्यक्तियों के परिवार में जब कोई भी पागल नहीं है तो आपकी तरफ से संतान में पागलपन आने की संभावना नहीं के बराबर है।

फिर भी, शादी से पूर्व आप अपने पागलपन के भय या भ्रम को किसी योग्य मनोचिकित्सक से परामर्श लेकर दूर कर लें।

राजकिशोर रावलौत भारतीय, धूम (गाजियाबाद) : मुझे प्राय: बड़े अजीब और लंबे-लंबे सपने आते रहते हैं। कुछ सपनों के आधार पर मैंने कई कहानियां भी लिखी हैं। कभी-कभी मुझे सपने में एक परिचित-सी विधवा युवती दिखायी देती है। जब भी वह दिखायी देती है उसके कुछ दिनों बाद मेरे सगे-संबंधी या कुटुंब-परिवार में कोई युवती विधवा हो जाती है। ऐसा अब तक चार बार हो चुका है। इसलिए जब भी मैं सपने में उस विधवा युवती को देखता हूं, व्यथित हो उठता हूं। इस स्वप्न का मनोवैज्ञानिक कारण क्या हो सकता है और इससे छुटकारा कैसे पा सकता हूं ?'

स्वप्न कोई फिजूल का नाटक नहीं; बल्कि एक सोद्देश्य क्रिया होती है। स्वप्नों के मूल में कोई न कोई व्यक्तिगत समस्या रहती है जो अजीबो-गरीब रूप धारण कर लेती है। कभी-कभी कोई व्यक्ति या व्यक्तिगत समस्या अवचेतन मन की गहरी परत में, जिसे प्रख्यात मनोचिकित्सक कार्ल युंग 'रेशियल-अनकांशस' कहते हैं, चली जाती है। इससे स्वप्न

इस स्तंभ के अंतर्गत अपनी समस्याएं भेजते समय अपने व्यक्तिगत जीवन का पूरा परिचय, आयु, पद, आय एवं पते का उल्लेख कृपया अवश्य करें।

—संपादक

बहुत ही अजीब रूप धारण कर लेते हैं ।

कार्ल युंग ने ऐसे स्वप्नों के बारे में भी बताया है जो किसी भावी घटना का पहले ही आभास करा देती है । स्वयं कार्ल युंग को बचपन में ऐसे कई स्वप्न आये थे जो बाद में उनके जीवन में सत्य निकले । पहले से भी किसी की मृत्यु का आभास एक तनावपूर्ण स्थिति का कारण जरूर है, लेकिन इसे आप वैज्ञानिक दृष्टिकोण से लें और अपनी इस अद्‌भुत क्षमता को अभिशाप न समझकर वरदान के रूप में मानें, यही आपके लिए उचित रहेगा ।

अ ब स, मुजफ्फरपुर : मैं बीस वर्षीय छात्र हूं। कुसंगति के कारण मुझे हस्तमैथुन की आदत पड़ गयी है। मैं इसे छोड़ना चाहता हूं लेकिन पूरी तरह सफल नहीं हो पा रहा हूं। मेरे मन में सेक्स के प्रति कोई-न-कोई भावना जगती रहती है, जिसके कारण मैं अपना मन पूरी तरह अध्ययन में नहीं लगा पाता। मेरी स्मरण-शक्ति भी क्षीण हो गयी है।

इस प्रकार की समस्या के बहुत से पत्र हमारे पास आते हैं। आपकी यह समस्या हमारे लाखों किशोरों की आम समस्या है । वीर्य का बनना यानी सेक्स का जागरण किशोरावस्था का संकेत है और वीर्य का स्खलित होना—इसका चिह्न । दुख की बात यह है कि हमारे यहां किशोरों को यौन-शिक्षा या निर्देशन देने की व्यवस्था नहीं है, बल्कि यौन-संबंधी सभी बातें गुप्त रखी जाती हैं। मां-बाप या शिक्षक इस संबंध में कुछ बताते नहीं, इससे संबंधित जो सस्ता साहित्य उपलब्ध है वह या तो उनमें कामोत्तेजना पैदा करता है या फिर सेक्स के प्रति भय और अपराध-भाव ।

यह जो कहा जाता है कि वीर्य रक्त से बनता है और रक्त अच्छे संतुलित भोजन से, वीर्य क्षय से शरीर का क्षय होता है जिससे दृष्टि और स्मरण-शक्ति क्षीण हो जाती है, आदि-आदि—सब अवैज्ञानिक हैं । दरअसल वीर्य का बाहर निकलना एक प्राकृतिक जैविक-प्रक्रिया है जिसका होना बहुत स्वाभाविक और अनिवार्य है। लेकिन इसमें भी अति नहीं होनी चाहिए। सेक्स की इच्छा को लेकर संयम व अनुशासन की जरूरत होती है लेकिन सेक्स का गला घोंटने की बिलकुल नहीं।

शरीर, दृष्टि या स्मरण-शक्ति का क्षय –जिसे यौन-जन्य 'रोग' कहा जाता है, दरअसल, ये रोग यौन-जन्य न होकर चिंता-जन्य हैं ।

अठारह वर्ष की आयु में स्मरण-शक्ति का रोग नहीं होता । हां, वृद्धावस्था में मस्तिष्क की नसों में कोलेस्ट्रोल जमा हो जाने से स्मरण-शक्ति क्षीण होने लगती है । आपको जो स्मरण-शक्ति की क्षीणता महसूस होती है वह चिंता के कारण मन को एकाग्र न कर पाने के कारण है । अतः चिंता से बचें और हीन भावना मन में न आने दें। ●

दिल्लीवाले की दास्तान (६)

मरम्मत के बिना पढ़ाई अधूरी

● महेश्वर दयाल

दिल्ली में आजकल पढ़ने-लिखनेवालों की गिनती दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। लाखों लड़के-लड़कियां स्कूलों, कालेजों और विश्वविद्यालयों में पढ़ रहे हैं। अब वह पहली-सी बात नहीं रही कि गिने-चुने लड़के ही पढ़ते थे। अब तो चाहे कोई अमीर हो या गरीब हो, पिछड़े हुए वर्ग का हो या किसी भी जाति का हो, सब ही पढ़ने लगे हैं। पढ़ाई में इतनी रुचि देखकर यह कहा जा सकता है कि शायद कुछ ही वर्षों में दिल्ली में कोई अनपढ़ ढूंढ़े से भी दिखायी दे। यह नया दौर है, विज्ञान की रोशनी फैल रही है। लड़के भी पढ़ते हैं और लड़कियां भी। बीते दिनों में परदा बहुत था। बहुत-से घरों की लड़कियां घर से बाहर पैर नहीं रखती थीं, लेकिन आज तो लड़कियों ने पढ़ाई-लिखाई में लड़कों को भी मात कर दिया है। लड़कियां लड़कों से कंधे से कंधा मिलाकर मैदान में काम करती दिखायी देती हैं। छुटपन की याद है कि बच्चे स्कूल से घबराते थे। रोते, मचलते, शोर मचाते स्कूल जाते थे। उन्हें कोई बड़ा भाई या चाचा घसीटकर डंडा-डोली करके ले जाता था। जो बच्चे हठ करते, उनके कानों को बकरों की तरह पकड़कर ले जाया जाता था। लड़के ढऊ के ढऊ हो जाते, लेकिन बड़े होकर भी उनका पढ़ने को जी नहीं चाहता था। मगर अब तो बात ही कुछ और है! छोटे-छोटे, नन्हे-मुन्ने, बच्चे-बच्चियां मुंह-अंधेरे स्कूल जाने के लिए तैयार हो जाते हैं। उजले-उजले, साफ-सुथरे कपड़े पहने, बस्ते कंधे पर डाले, पैदल, रिक्शा या स्कूल की बस में सवार होने को ये घर से निकल आते हैं और हंसते-मुसकराते स्कूलों में जाते हैं। पहले तो बच्चे स्लेट, पेंसिल, तख्ती, दवात लेकर स्कूल जाते थे, लेकिन अब तो इनके बस्तों में इतनी कापियां और किताबें होती हैं कि गधे का बोझ लगती हैं।

यों तो आजकल की पढ़ाई विदेशी ढंग की है, लेकिन पिछले हजार वर्षों में दिल्ली में क्या, सारे भारत में शिक्षा के ढंग कई बार बदले। इतिहासकारों ने लिखा है कि दिल्ली में तोमर और चौहान

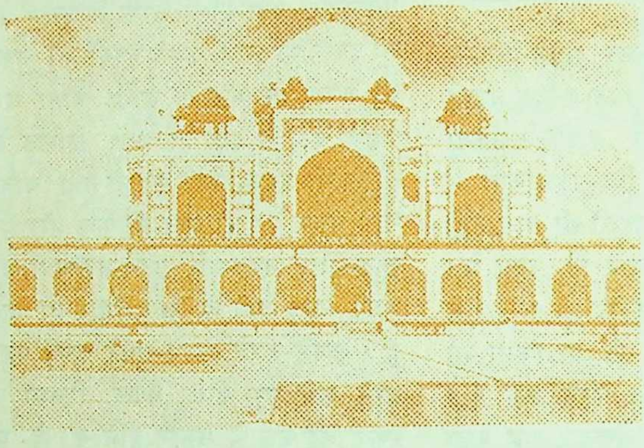

हुमायूं का मकबरा जहां कभी मदरसा लगता था

राजाओं के दरबारों में बहुत-से पंडित, ज्ञानी और विद्वान थे। साहित्यकारों और कवियों का बहुत आदर किया जाता था। संस्कृत का दौर-दौरा था। उन दिनों वेद-शास्त्रों के अलावा वेद मत की जानकारी पर बहुत बल दिया जाता था। गुरु-शिष्य परंपरा चली आ रही थी, लेकिन जनता के लिए कोई विशेष शिक्षा-केंद्र नहीं थे। परिवार के लोग मिलजुलकर रहते थे। जिस परिवार में जो काम पीढ़ियों से चला आता था, वही बच्चों को सिखा दिया जाता था। लोग जात-पांत में बंटे हुए थे। जो जिस जात का होता, वैसा ही काम करता था, लेकिन आज इन बंधनों को तोड़ा जा रहा है। व्यापारी का बेटा हवाईजहाज चलाता है। कायस्थ नौकरी की बजाय व्यापार करने लगा है। ब्राह्मण और पिछड़ी हुई जातियों के लोग दफ्तरों में काम करते हैं। फौज में सिपाही और अफसर सब जातियों के हैं। खेती करनेवाले किसान शिक्षा पाकर गांव छोड़कर शहरों में आकर बस गये हैं और सब तरह के काम जानते हैं। गांधीजी ने पिछड़ी हुई जातियों को गले लगाकर हरिजन कहकर पुकारा। उन्हें समाज में ऊंचा स्थान दिया। हजारों वर्षों से चले आ रहे अछूत अब अछूत नहीं रहे।

शिक्षा के बदलते ढंग

पृथ्वीराज चौहान के पराजित होने के बाद मुसलमानों ने दिल्ली जीत ली। मुसलमान सुलतानों के राज्य में शिक्षा के ढंग बदल गये, मस्जिदें बनीं, मदरसे बनाये गये। मुस्लिम शिक्षा केवल भाषा और उसके व्याकरण तक ही सीमित थी, जिसमें शब्दों की बनावट, उनका इतिहास, साहित्य, धर्म-प्रचार और धर्म-दर्शन की शिक्षा दी जाती थी। मुसलमानों के दीन की भाषा अरबी और दरबार का कामकाज फारसी में होता था। सुलतान अल्तमश और उसकी बेटी रजिया

सुलतान ने दिल्ली में मदरसे बनवाये और बलवन के बेटे खान शहीद ने साहित्य-केंद्र खोले। अमीर खुसरो जिला एटा के पटियाली गांव में पैदा हुए। मां हिंदू थीं। उन्होंने हिंदी भाषा में बहुत-सी कविताएं, पहेलियां, कवित्त, मुकरियां, दोहे लिखे हैं और फारसी शायरी में बहुत नाम पैदा किया। उन्होंने अपना लोहा हर दौर में ईरान से मनवाया। खुसरो को दिल्ली से बहुत प्रेम था। उन्होंने दिल्ली और हिंदुस्तान की इतनी प्रशंसा की है कि शायद ही किसी और ने की हो। वे हिंदुस्तानी संगीत के नायक माने जाते हैं। उन्होंने भाषा और फारसी में मिलेजुले शेर लिखे हैं। उन्हें बहुत-सी भाषाएं आती थीं, लेकिन संस्कृत को फारसी से बड़ा मानते थे।

खिलजियों के राज्य में भी बहुत से मदरसे बने और संस्कृत भाषा भी फलती-फूलती रही। लेकिन कहा जाता है कि तुगलकों के राज्य में दिल्ली में अनगिनत मदरसे बनाये गये। फीरोजशाह तुगलक ने अलाउद्दीन खिलजी के बनवाये हुए हौजखास पर एक मदरसा बनवाया। उसके आसपास विद्यार्थियों के लिए इतने बड़े कोठे-कोठरियां थीं जैसे आजकल के किसी बड़े स्कूल या कालेज में होती हैं। लोदियों के राज्य तक हिंदुओं ने फारसी भाषा में बहुत दिलचस्पी नहीं ली। जनता और बादशाहों के बीच एक बड़ी खाई और दूरी थी। सुलतान सिकंदर लोदी ने हिंदुओं की सब जातियों के लोगों को बुलाया और उन्हें दरबार की भाषा फारसी सीखने के लिए कहा। हिंदू फारसी, अरबी को 'मलेच्छ' विद्या कहते थे। उनमें एक भी ऐसा नहीं था जो फारसी जानता था।

बादशाह ने सबसे पहले ब्राह्मणों से फारसी पढ़ने के लिए कहा। उन्होंने कहा, "महाराज, हमको अपने धर्म-कर्म-विद्या से इतना समय कहां मिलता है कि फारसी पढ़ें। फिर क्षत्रियों को बुलाया गया। वे बोले कि हम तो तलवार के धनी हैं, कलम से क्या नाता! इसी तरह वैश्यों ने भी कह दिया कि हम व्यापारी हैं और व्यापारी रहेंगे। जब कायस्थों की बारी आयी तब जो पहले संस्कृत की पुस्तकों की कापियां लिखकर पेट पालते थे, उन्होंने सिकंदर लोदी की बात मान ली। फारसी सीखकर उन्हें शाही दरबारों में नौकरियां मिलने लगीं। तभी से कहावत चली आ रही है—'कायस्थ पढ़ा भला या मरा भला', 'कायस्थों का हथियार कलम है।' दशहरे के दिन कायस्थ कलम-दवात की पूजा करते हैं।

मुगलों के राज्य में मदरसे तो खुलते रहे, लेकिन कायस्थों के अलावा और हिंदुओं ने भी फारसी-अरबी पढ़नी शुरू कर दी।

उपनिषदों का फारसी अनुवाद

हुमायूं ने दिल्ली में एक मदरसा बनाया जहां शेख हसन की देख-रेख में गणित, नुजूम (ज्योतिष) और भूगोल

की शिक्षा दी जाने लगी। हुमायूं की बेगम ने अपने पति के मकबरे की छत पर एक मदरसा बनवाया जहां दूर-दूर से लोग शिक्षा लेने आते थे। ज्यों-ज्यों दिन बीतते गये मुसलमानों ने हिंदी साहित्य और कविता में नाम पैदा कर लिया और बहुत-से हिंदुओं का फारसी-अरबी में सिक्का बैठ गया। मुगल शहंशाह अकबर के राज्य में शायरी, कविता, साहित्य, कला बहुत ऊंचे दर्जे पर पहुंच गयी। अकबर की धाय मां ने दिल्ली में पुराने किले के सामने एक मदरसा बनवाया था जिसके खंडहर आज भी दिखायी देते हैं। शाहजहां आगरे से दिल्ली आये तो उन्होंने दिल्ली में जामा मस्जिद के पास एक शाही मदरसा बनवाया। इस बादशाह का बड़ा और लाड़ला बेटा दाराशिकोह बड़ा विद्वान था। उसने काशी से पंडितों को बुलवाकर जमुना के किनारे उपनिषदों का फारसी में अनुवाद कराया।

मुगलों के राज्य में हिंदू-मुसलमान मदरसों, मकतबों, पाठशालाओं और महाजनी स्कूलों में शिक्षा पाते रहे, लेकिन १८०३ में जब अंगरेजों ने मराठों को पटपड़गंज मैदान में हराकर दिल्ली जीत ली और मुगल बादशाह शाह आलम उनके हाथों की कठपुतली बन गया तब उन्होंने देशी ढंग की शिक्षा को मिटाने और अंगरेजी पढ़ाने की कोशिश की।

विलियम फ्रेजर पहला अंगरेज था जिसने अपनी जेब से पैसा लगाकर १८१२ में हिंदुस्तानियों को अंगरेजी पढ़ाने के लिए एक स्कूल खोला। लेकिन केवल पंद्रह या बीस लड़के इस स्कूल में भरती हो सके। हिंदुस्तानियों को अंगरेजी से चिढ़ थी। उन्हें अपनी सभ्यता, अपनी भाषा, अपनी पढ़ाई-लिखाई के ढंग पसंद थे, लेकिन अंगरेज इस बात पर तुले हुए थे कि जब तक हिंदुस्तानी उनकी भाषा और धर्म को नहीं समझेंगे, राज करना दूभर हो जाएगा। उन्होंने १८२६ में अजमेरी दरवाजे के बाहर १७१० में बने गाजीउद्दीन खां के मदरसे में दिल्ली कालेज खोला। दिल्ली कालेज अब डॉक्टर जाकिर हुसैन कालेज कहलाता है। यह पहला अंगरेजी कालेज था, जहां पूरब-पच्छिम का संगम हुआ। यों तो इस कालेज में अरबी, फारसी, विज्ञान, भूगोल, इतिहास, गणित सब कुछ ही पढ़ाया जाता और हिंदुस्तानी लड़कों के लिए बहुत-सी अंगरेजी पुस्तकों का उर्दू में अनुवाद भी कर दिया था, लेकिन दिल्लीवालों की आंखों में यह कालेज बहुत खटकने लगा था, इसलिए कि ईसाई मिशनरियों का यह बहुत बड़ा केंद्र बन गया था। इस कालेज के प्रिंसिपल टेलर ईसाई धर्म का प्रचार करते थे। उन्होंने रामचंद्र माथुर और चमनलाल-जैसे होशियार और नामी लड़कों को ईसाई बना लिया था।

१८४१ में दिल्ली कालेज अजमेरी दरवाजे से उठकर दाराशिकोह के पुस्तकालय, कश्मीरी दरवाजे (जहां आजकल

इंजीनियरिंग कालेज है) चला गया। लेकिन १८५६ तक दिल्ली कालेज में पढ़नेवालों की गिनती ३५६ से आगे नहीं बढ़ी।

दिल्ली कालेज और मिर्जा गालिब

दिल्ली कालेज के बारे में एक कहानी तो आपने सुनी होगी। कहा जाता है कि मिर्जा गालिब और प्रिंसिपल टेलर की बड़ी दोस्ती थी। मिर्जा पालकी में सवार होकर दिल्ली कॉलेज पहुंचे और बहुत देर तक प्रिंसिपल की बाट देखते रहे। प्रिंसिपल अपने दफ्तर में बैठे रहे, वे गालिब को लेने बाहर नहीं आये। मिर्जा बिगड़ गये और अपने घर लौट आये। जब किसी ने मिर्जा गालिब से कहा कि "जनाब, आप नौकरी के लिए गये थे, आपको प्रिंसिपल के दफ्तर में जाना चाहिए था", तो गालिब ने जवाब दिया, "ऐसी नौकरी भाड़ में जाए जिससे मिलनसारी और दोस्ती में कमी आये!"

१८५७ की आजादी की लड़ाई में दिल्लीवालों और देशी सिपाहियों ने दिल्ली कालेज में आग लगा दी और कालेज का पुस्तकालय जलकर राख हो गया, लेकिन जब मुगलों का राज हट गया, अंगरेज हिंदुस्तान के मालिक बन गये तब उन्होंने मिशन स्कूल और सरकारी स्कूल खोल दिये और ऐसे भी खोले गये जहां अरबी, फारसी और अंगरेजी पढ़ायी जाती और ऐसे भी जहां संस्कृत, हिंदी और अंगरेजी भी। यानी मुसलमानों के स्कूल अलग और हिंदुओं के अलग। यह हिंदू-मुसलमानों को एक-दूसरे से दूर करने का रास्ता था। १८८१ में सेंट स्टीफेंस मिशन कालेज खोला गया। १८९९ में हिंदू कालेज और फिर अरेबिक कालेज और रामजस कालेज खुल गये। इन स्कूलों के साथ-साथ

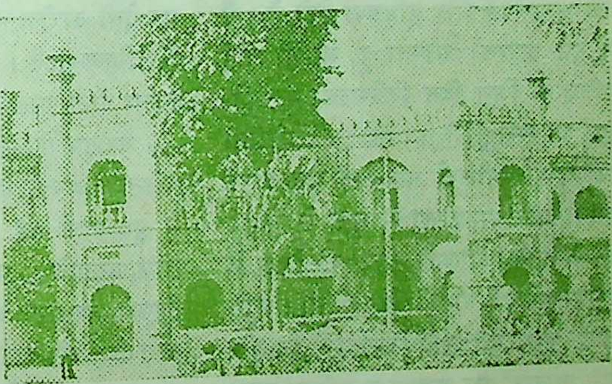

दिल्ली कालेज जहां गालिब ने पढ़ाने से इनकार किया

मकतबों, पाठशालाओं और महाजनी स्कूलों में भी पढ़ाई होती थी। मकतब में मुसलमान बच्चे अधिक होते। ये मकतब या तो किसी अमीर की हवेली के दालान या बैठक में होते थे या किसी मस्जिद में। पाठशालाएं भी बनियों और व्यापारियों की कोठियों में थीं। उनमें और महाजनी स्कूलों में सेठों और व्यापारियों के बच्चे पढ़ने आते थे।

खाल आपकी हड्डियां मेरी

हमारे घरवाले तो मिशन स्कूल और कालेज में पढ़े, लेकिन मकतब और पाठशाला में पढ़ाई के ढंग निराले थे। बड़ों से सुना है कि छोटे बच्चे तो घर पर ही पढ़ते थे, लेकिन जब कुछ बड़े हो जाते तब उन्हें मकतब और पाठशालाओं में भरती करा दिया जाता। कोई पिता जब अपने बच्चे को लेकर मकतब या पाठशाला में जाता तब मौलवी साहब या पंडितजी से कहता था, "इस लड़के की खाल आपकी है और हड्डियां मेरी हैं। मैं अब इसे आपको सौंपता हूं, जो भी चाहें कीजिए।" जिस दिन बिस्मिल्ला या पट्टी-पढ़ाई की रस्म होती, तब मकतब में शीरीनी बांटी जाती। मौलवी साहब को शुरू कराई मिलती और पाठशाला में बूरा के गिंदौड़े बांटे जाते थे। मौलवी साहब को वेतन के अलावा त्योहारियां भी मिलती थीं। पट्टी-पढ़ाई, जुमाराती, ईदी-लिखवाई, ईद और दूसरे त्योहारों पर कुछ-न-कुछ मिल जाता था। पंडितजी को भी दशहरा, दीपावली, होली और दूसरे त्योहारों पर फल-फलारी, मिठाई और पैसे मिल जाते थे।

मकतब और पाठशाला में बच्चे टाट पर बैठते थे और जब तक मौलवी साहब और पंडितजी नहीं आते, आपस में लड़ते-भिड़ते रहते थे। रद्दी कागज के टुकड़े और चनों के छिलके बिखरे पड़े होते। एक कोने में किसी का बस्ता पड़ा है, कहीं सरकंडे की कलम और दवात। बच्चे सरकंडों की कलम को मिटी की दवात में इस तरह डूबोते कि दवात में पड़ा फुसड़ा कलम में अटक कर बाहर आ जाता। बच्चों के हाथ, मुंह और पैर काले हो जाते। मकतब और पाठशाला की धरती और दीवारें भी गंदी हो जाती थीं। बच्चे तरह-तरह की शरारत करते और उनकी बहुत ठुकाई होती थी। बच्चों के कान पकड़कर घुटनों में सिर देकर मुर्गा बना देते। थप्पड़, मुक्कों, लातों और बेंतों से ऐसी मरम्मत की जाती कि नानी-दादी याद आ जाती। भूल-चूक पर ऐसी बारीक चुटकी ली जाती कि बच्चे बिलबिला उठते। बच्चों को कभी-कभी तो इतना पीटा जाता कि वे बेहोश हो जाते।

मकतब के मौलवी और पाठशाला के पंडितजी बच्चों से कभी-कभी उनके घरों से दूध लाने को कहते, कभी कोई और चीज मंगवाते। बाजार से पान मंगवाना, चिलम भरवाना और पंखा झलवाना तो आये-दिन की बातें थीं। बच्चे गला फाड़-फाड़कर और हिल-हिलकर पढ़ते थे। मकतब में उर्दू, फारसी और पाठशाला

में हिंदी, गणित, पहाड़ों पर बल दिया जाता था।

दिल्ली में सबसे पहला मिशन स्कूल १८६५ में चांदनी चौक के कटरा शहंशाही में खुला था। यों तो मिशन और सरकारी स्कूलों में पढ़ाई के ढंग मकतब और पाठशाला से अलग होते थे, लेकिन उनमें बच्चों को मारा-पीटा जाता था। अंगरेजी में कहावत है—'डंडे के बिना बच्चे विगड़ जाते हैं।' ईसाई हेडमास्टर जब बच्चों के हाथों पर बेंत लगाता था तब कहता था, "मैं ईसामसीह को हाजिर-नाजिर जानकर तुम्हें बिना किसी जानिबदारी (पक्षपात) के सजा देता हूं।" यों तो बच्चे शरारतें भी करते थे, पिटते भी थे, लेकिन गुरुओं का अदब करते थे।

जूते का उपहार

हम जब कालेज में पढ़ते थे तब एक बार किसी लड़के ने नये प्रोफेसर को सताने के लिए झाड़न में लपेटकर एक गंदा फटा जूता मेज पर रख दिया। वह नया प्रोफेसर क्लास में आते ही झाड़न से बोर्ड साफ किया करता था। न जाने क्यों उस दिन वह प्रोफेसर नहीं आया और जूता झाड़न में लिपटा मेज पर रखा रहा। कुछ देर बाद कालेज के एक बहुत पुराने प्रोफेसर आये। उनका सब बहुत आदर करते थे। ज्यों ही उन्होंने झाड़न उठाया, फटा-पुराना जूता झाड़न से बाहर निकल पड़ा। उन्होंने जूता उठाकर सिर पर रख लिया और चुपचाप कुरसी पर बैठ गये। लड़कों को भी सांप सूंघ गया। वे कुछ बोल न पाये।

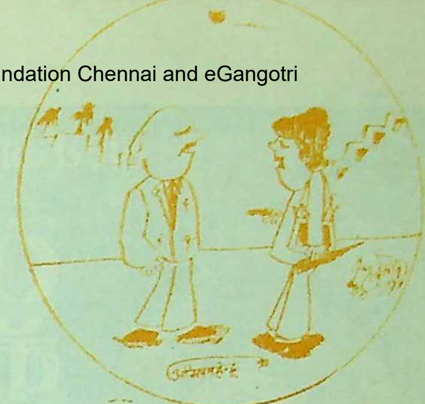

भाई साहब, कंघा ले ही लीजिए बाल
बने हैं बाल तो आ ही जायेंगे।

प्रोफेसर ने कहा, "मुझे इस कालेज में पढ़ाते पचीस वर्ष हो गये, लेकिन आज तक किसी ने मुझे इतना बढ़िया उपहार नहीं दिया!" प्रोफेसर साहब घंटे भर तक जूते को सिर पर रखे बैठे रहे।

एक बार किसी लड़के ने घबराकर कहना चाहा, "क्षमा कीजिए, यह आपके लिए नहीं था।" प्रोफेसर साहब ने उसे डांटकर चुप करा दिया। जब क्लास का समय पूरा हो गया तब सब लड़के प्रोफेसर के पास गये। हाथ-पैर जोड़े और फिर कभी ऐसी भूल न करने का विश्वास दिलाया। लेकिन आज जब यह सुनायी देता है कि लड़कों ने मास्टरों को पीट डाला, बसें जला दीं, कालेज, यूनीवर्सिटियां बंद हो गयी हैं, तब पुरानी बातें ध्यान में आ जाती हैं कि अब उलटी गंगा बह रही है!

—९६-बाबर रोड, नयी दिल्ली-१

सौंदर्य की दुनिया में एक नयी हलचल

लॅक्मे कॅलमाइन

इसके जैसा कुछ भी आपने पहले इस्तेमाल न किया होगा.

लॅक्मे कॅलमाइन. कितनी मुलायम, फैलने में कितनी आसान. केवल लॅक्मे कॅलमाइन ही मनपसंद शेड्स में आती है ताकि आपके रूप में एक नयी चमक आ जाय. दाग़ मुहासों का मुक़ाबला करने की दवायुक्त केवल लॅक्मे कॅलमाइन भीनी भीनी खुशबू से भरी है.

त्वचा के लिए कितनी गुणकारी—आपकी त्वचा, नन्हे मुन्ने की कोमल त्वचा और आदमी की त्वचा के लिए भी

रूपरंग की संपूर्ण देखभाल—लॅक्मे कॅलमाइन!

मुलायम और चमकती

तीन निराले शेड्स में

भीनी भीनी खुशबू वाली

लॅक्मे—
जिन्हें त्वचा की पहचान है

daCunha/LC/2 HM

Lakmé Calamine
लॅक्मे

सांप : दुश्मन ही नहीं, दोस्त भी

● **भगवतीप्रसाद डोभाल**

संपेरे की बीन पर सांप लट्टू होकर यह भूल जाता है कि वह अपने शत्रु नंबर एक की गिरफ्त में जा चुका है। संगीत की इस कमजोरी का फायदा उठाकर मनुष्य प्राचीनकाल से सर्पों के साथ मनमाना व्यवहार करता आ रहा है। कभी वह उसे देवता मानकर पूजता है तो कभी उसके विषैले दांत तोड़ उसे टोकरी में रखकर लोगों के मनोरंजन का साधन बनाता है। और अब तो बड़े-बड़े सर्प-गृहों में उन्हें पालकर उनके विष का व्यापार करने लगा है। इतना सब कुछ होते हुए भी बहुत कम लोग यह जानते हैं कि सर्प क्या है?

सर्प-वर्ग की उत्पत्ति

जीवों के विकास-क्रम की सीढ़ी पर सर्पों को 'रेप्टीलिया' श्रेणी में रखा जाता है। इस वर्ग की उत्पति उस अवस्था में हुई जब पृथ्वी पर पानी कम होने लगा और मत्स्य-समुदाय जल-संकट में जूझता रहा। इस विकट परिस्थिति का सामना करने के लिए ही कुछ जंतुओं ने अपने शारीरिक आकार-प्रकार की चिंता किये बगैर, बिना जल के रहने की हिम्मत की। फलस्वरूप सर्प-समुदाय का जन्म हुआ।

सर्प-परिवार

आज विश्व में सांपों को इन नौ परिवारों में विभाजित किया जाता है :

१. बोएडी : इसमें २५ जातियां हैं और १०० प्रजातियां। ये सभी गरम जलवायु वाले स्थानों में रहती हैं।

२. एनीलीडी : इसकी ३ जातियां और १० प्रजातियां हैं। ये उत्तरी व दक्षिणी अमरीका और दक्षिण-पूर्व एशिया में पायी जाती हैं।

३. जीनोपेल्टीडी : इसकी जाति और प्रजाति एक ही है जो दक्षिणी एशिया, जावा और सेलीबीज में पायी जाती है।

४. यूरोपोल्टिडी : इसकी ७ जातियां और ५० प्रजातियां हैं। ये सभी दक्षिण-एशिया में मिलती हैं।

५. लिप्टोटिफ्लोपिडी : जाति एक और प्रजातियां ५० हैं। ये अफरीका, दक्षिण एशिया और उत्तर-पश्चिम अमरीका में मिलती हैं।

६. टिफ्लोपिडी : इसकी ५ जातियां और २०० प्रजातियां हैं। ये विश्व के सभी गरम क्षेत्रों में रहती हैं।

७. कोलूब्रिडी : इसकी ३०० जातियां व २५०० प्रजातियां ध्रुवीय क्षेत्र को छोड़कर दुनियाभर में फैली हुई हैं ।

८. इलेपिडी : इस परिवार में समुद्री सर्पों की १५ जातियां और ५० प्रजातियां हैं। कोबरा व कोरल सर्प भी इसी परिवार में आते हैं। कोवरा व कोरल सर्पों की ३० जातियां व १५० प्रजातियां हैं । यह सारा परिवार आस्ट्रेलिया, इथोपिया और उत्तरी अमरीका के दक्षिणी क्षेत्रों में रहता है ।

९. वाइपरिडी : इसमें वाइपर की १० जातियां व ३० प्रजातियां यूरोप, एशिया और अफरीका में पायी जाती हैं । इसी परिवार में पिट वाइपर और रेटिल सर्प की ५ जातियां और ५० प्रजातियां हैं । सभी पूर्वी एशिया, उत्तरी और दक्षिणी अमरीका में रहती हैं ।

सांप खाते क्या हैं ?

सर्पों की यह एक विशेषता है कि वे महीनों कुछ भी खाये बिना जमीन के भीतर आराम से रहते हैं । अंडे खानेवाले सर्प अन्य आहार नहीं लेते । इसीलिए अफरीका के जंगलों में सांपों से अपने अंडों को बचाने के लिए पक्षी वड़ी मेहनत से लंबे-सुरंगाकार तथा हवा में लटकनेवाले घोंसले बनाते हैं ।

सर्प अपने शिकार को पानी व जमीन में से ही नहीं ढूंढ़ते वल्कि हवा में भी ताक लगाये बैठे रहते हैं । टेक्सॉस में कुछ ऐसे भी सर्प देखने को मिलते हैं, जो पेड़ व झाड़ियों पर चढ़कर चमगादड़ों का शिकार करते हैं।

सर्प-वि

अधिकांशत: सर्पों में विष होता है । विष सांपों के सलाइवा का एक परिवर्तित रूप है । इसकी रचना सलाइवा-ग्रंथि में जटिल रसायनों से बनी प्रोटीन व एंजाइम के यौगिक से होती है । इस विष की रचना पारिस्थितिकि (इकोलॉजी) के कारण हुई है । इससे सर्प अपने भोजन को आसानी से पचा लेता है।

इस विष को बाहर निकालने के लिए सांपों के मुंह में इंजेक्शन की सुई की भांति के दो फैंग होते हैं। ये फैंग किसी में अचल होते हैं और किसी में चलायमान। सबसे खतरनाक विषधारी कोवरा में अचल फैंग होते हैं।

विष का प्रकार

पहले सर्प-विष को दो ही प्रकार का मानते थे—एक न्यूरोटॉक्सिक और दूसरा, हीमो-टॉक्सिक । न्यूरो का संबंध स्नायु-तंत्र पर प्रभाव डालनेवाले से था और हीमो का रक्त को विषैला करनेवाले से। अब आस्ट्रेलिया के सर्प-विशेषज्ञ एन. एच. फेरली ने विस्तृत रूप से विष के शारीरिक प्रभावों का अध्ययन कर बताया है कि सर्प-विष मुख्यत: आठ प्रकार के होते हैं—

१. **न्यूरो-टॉक्सिन :** यह स्नायु-कोशाओं को प्रभावित करता है ।
२. **हिमोरिंस :** इससे रक्त-वाहिनियां प्रभावित होती हैं ।

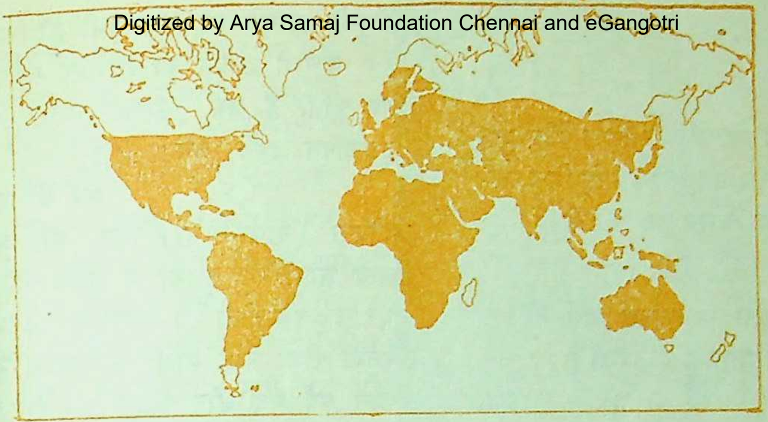

दुनिया में विषैले सांपों के क्षेत्र

३. **थ्रोंबेसी :** अधिक मात्रा में अंत: वाहिनी थ्रोंबोसिस का निर्माण करता है।
४. **हिमोलाइसिनस :** से रक्त कणिकाएं ध्वस्त होती हैं।
५. **साइटोलाइसिनस :** ल्यूकोसाइट और शरीर के उतक प्रभावित करता है।
६. **ऐटींकोमोलिस :** रक्त के जमने की प्रक्रिया को शिथिल कर देता है।
७. **एंटीबैक्टिरिडल :** जीवाणु विरोधी।
८. **फरमेंटस :** यह भोजन पचाने में अग्न्याशयिक रस पर प्रभाव डालता है।

अन्य जंतुओं से विशेषता

सर्पों के जीवन का सर्वाधिक समय स्थिर अवस्था में ही व्यतीत होता है। शिकार की काफी लंबे समय तक प्रतीक्षा करता है। और मिलने पर कम भोजन से ही संतुष्ट हो जाता है। ठंड के मौसम में पूरी तरह से सुषुप्त अवस्था में रहता है।

सांपों के पांव नहीं होते। बाहरी कान भी नहीं होते, सिर्फ अंत:कर्णों से ही सुनता है।

पिटवाइ पर और रेटिल सर्पों में शिकार को पहचाननेवाला अंग आंख और नासिका-द्वार के बीच एक गढ़ा होता है। यह गढ़ा प्रकाश की इनफ्रा-रेड किरणों को आसानी से महसूस करता है। इसीलिए वातावरण के तापमान को समझने में इसे कोई परेशानी नहीं होती। और इसके कारण अपने आसपास गरम रक्त के शिकार को अंधेरे में रेंगते हुए भी पकड़ने में वह नहीं चूकता।

सर्प वर्ष भर में अपनी केंचुली चौदह बार बदलता है और कुछ रेटिल सर्प साल में ४० बार तक केंचुली उतारते देखे गये हैं। केंचुली त्यागना वातावरण के तापक्रम पर निर्भर करता है। दस डिग्री फारेनहाइट तापक्रम के बढ़ने पर

केंचुली त्यागने की गति दूनी हो जाती है। केंचुली छोड़ने का आभास सर्प को तब होता है जब उसकी आंखों पर धुंधलापन छाने लगता है।

सर्प की आयु

कोबरा (नाजा-नाजा) सांप की आयु अन्य सांपों की तुलना में सबसे अधिक २९ वर्ष तक होती है। एनेकोंडा २८ वर्ष, रेनबो बोआ २७, बोआ कंस्ट्रिक्टर २३, कार्न सर्प २९ और रेटिल सर्प १८ वर्ष तक का जीवन जी पाते हैं।

प्रजनन–काल

सुषुप्तावस्था से निकलने के बाद ही सर्प प्रजनन योग्य होते हैं। सभी सांप अंडे देते हैं। और सेने के बाद ही ग्रीष्म के अंतिम दिनों में उनसे बच्चे पैदा होते हैं। कभी-कभी युग्मन शरद-ऋतु में होता है और बच्चों का जन्म वसंत में हो पाता है।

प्रजननकाल के निकट आने पर नर सर्प मादा की गंध से आकर्षित हो उसके पास आता है। और युग्मन १ से २ घंटे तक रहता है। कभी-कभी तो इनका युग्मन ६ से १२घंटे तक का होता है। एक रिकार्ड के अनुसार एक रेटिल सर्प का युग्मन २२ घंटे ४५ मिनट तक का रहा है।

सर्प का औषध में प्रयोग

सर्प की खाल से गठिया, गले के रोग, शरीर में ऐंठन, विषैले फोड़ों आदि का उपचार प्राचीन समय में होता था।

वचन-वीथी

कुमारियां पति के सिवा और कुछ नहीं चाहतीं, लेकिन पति मिल जाने के बाद वे सब कुछ चाहती हैं।

—शेक्सपियर

नैतिकता व्यवहारतः धर्म है और धर्म सिद्धांततः नैतिकता है।

—वार्डला

माता का हृदय बच्चे की पाठशाला है। —एच. डब्लू. बीचर

चरित्रहनन शारीरिक हत्या के समान ही अपराध है। बदनामी करनेवाले की जबान हत्यारे के खंजर से कम नहीं है। —टी. एडवर्ड्स

संगीत जीवन पर दिन-प्रतिदिन की जमी धूल को धो डालता है।

—आरबैक

मनुष्य को जीवन की हर घटना के लिए तैयार रहना चाहिए, क्योंकि यहां कुछ भी तो स्थायी नहीं है।

—मेनेंडर

मानवता के लिए दो बड़े खतरे हैं—एक तो किसी गुनाह को बहुत बढ़ाचढ़ाकर दिखाना और दूसरा, उसे बहुत छोटा करके दिखाना।

—मेरी बेकर एडी

मध्ययुगीन काल में शराब के साथ सर्प की खाल को उबालकर कर्ण-पीड़ा व पेट-दर्द का उपचार होता था।

पुराने प्राकृतिक चिकित्सक सर्प की खाल को बच्चे के जन्म के समय मां की कमर पर बांधते थे जिससे आसानी से बच्चा पैदा हो सके। मार्कोपोलो ने लिखा है कि सर्प-पित्त बहुत ऊंची कीमत पर भारत में खरीदा जाता था और बच्चा पैदा होते समय इसकी मात्रा दी जाती थी।

चीन में बाआ सर्प का मांस खाने से क्षय रोग ठीक होता देखा गया। समुद्री सर्पों के प्रयोग से ज्वर से पीड़ित व्यक्ति ठीक हो जाते थे। उन दिनों एशिया और यूरोप में विश्वास किया जाता था कि पागल कुत्ते के काटने का इलाज सर्प का पित्त है। कुष्ठ-रोग में भी सर्प से प्राप्त दवा दी जाती थी। कहीं-कहीं अभी भी रेटिल सर्प का पाउडर यौन-रोग के उपचार में किया जाता है। यूकेटन और ग्वाटेमाला में रेड इंडियन रेटिल-सर्प के विष को पीते हैं ताकि उनकी यौन-इच्छा तीव्र हो सके।

कोबरा के जहर से पेचिश, हैजा और कॉमा की दवा बनायी जाती है। रक्त-संचार को निरंतर चालू रखने व हृदय को गति प्रदान करने के लिए भी सर्प-विष का प्रयोग किया जाता है।

इतना ही नहीं, सभी प्रजाति के सर्प-विष से होम्योपैथिक औषधियां भी तैयार की जाती हैं।

विष शृंगार-प्रसाधन में

टोपसिल ने लिखा है कि सर्प के रक्त को होंठों पर मलने से वे सुर्ख-लाल दिखते हैं। यदि इसे चेहरे पर मला जाए तो सभी धब्बे साफ हो जाते हैं।

खेल तमाशे में सहयोगी सांप

वाइपर सर्प के गोश्त को खाने से त्वचा साफ हो जाती है। इटली की अधिकांश औरतें सुंदरता बनाये रखने के लिए वाइपर सर्प का गोश्त बड़ी चाव से लेती हैं। १७वीं शताब्दी की सर्वोत्तम सुंदरी सर किनलम डिगवाई की पत्नी वाइपर का गोश्त लेती थी।

कुछ आदिवासी जातियों की औरतें सर्प का तेल बालों को घुंघराला और लंबा करने के लिए प्रयोग करती हैं।

सर्प जहरीला होने पर भी आज हमसे इतना जुड़ा हुआ है कि उसके बिना न तो हमारी पूजा सफल होती है और न ही अपनी औषधियों को इनके विष से मुक्त रख सकते हैं।

—६।६८८ लोधी कालोनी, नयी दिल्ली

पीवणा: रेगिस्तान का चोर

• ब्रजमोहन गोयल

रात के अंधेरे में सोते हुए आदमी के सीने पर चुपचाप आकर बैठ जाता है वह और अपनी जहरीली सांसें छोड़ने लगता है। यह जहर सांसों द्वारा सोये हुए आदमी के तालु पर इकट्ठा हो फोड़े के रूप में उभर आता है। जब वह अपना सारा जहर उड़ेल चुकता है, तो सीने पर अपनी पूंछ पटक-चोटकर सोनेवाले को सचेतकर जाता है कि उठ, मैंने तेरे प्राणों को पी लिया है और अब जा रहा हूं। मौत से बच सकता है तो बचने की कोशिश कर ले।

आदमी के प्राणों को सांसों द्वारा पीनेवाला यह है सबसे घातक जहरीला सांप पीवणा, जो पश्चिम-राजस्थान के रेगिस्तानी क्षेत्रों में पाया जाता है। बरसात के मौसम की घनी अंधेरी रातों में चुपके से आने और अपने शिकार को मौत के घाट उतारकर रेत के टीलों में छिप जाने के कारण लोग इसे चोर सांप भी कहते हैं।

रेत के रंग का लगभग चार फुट लंबा, आधा किलो वजनी और अंगूठे जितना मोटा यह सांप, सांपों में सबसे अधिक तेज गति से रेंगता हुआ १५-१५ मील दूर तक जाकर घास-फूस या रेत के टीलों में छेदकर छिप जाता है। लेकिन उसकी आंखें और पूंछ ही उसके सबसे बड़े दुश्मन हैं। रोशनी तो वह सह भी नहीं सकता। सामान्य रोशनी डालते ही अंधा हो जाता है और पूंछ इतनी कठोर होती है कि जमीन पर गड़ती हुई ऐसा निशान छोड़ जाती है जिसके आधार पर लोग उसे ढूंढ़ निकालते हैं और रोशनी फेंक उसे अंधा कर मार डालते हैं। यह आसानी से मरता भी नहीं क्योंकि इसकी चमड़ी मोटी और हड्डियां कम होती हैं।

पीवणा द्वारा काटा गया आदमी जब सचेत होता है तब उसकी आंखों के आगे अंधेरा-सा छाने लगता है, जी मितलाने लगता है और सांस लेने में कठिनाई होने लगती है। यदि सूर्योदय से पूर्व उसकी आंखों पर पट्टी बांध, उसे उलटा लटकाकर तालु पर उभरे फोड़े को फोड़कर सावधानी से जहर बाहर नहीं निकाला जा सका, तो उसे किसी भी हालत में मौत से बचाया नहीं जा सकता। यह उपचार अंधेरे में ही किया जाता है, क्योंकि आंखों पर रोशनी पड़ते ही काटा हुआ व्यक्ति अंधा होकर तत्काल मर जाता है।

—९, भूपालपुरा, उदयपुर

फुट
अंगूठे
सबसे
१-१५
रित के
लेकिन
से बड़े
नहीं
अंधा
होती
निशान
ग उसे
क उसे
ासानी
चमड़ी

आदमी
खों के
मित-
ठिनाई
उसकी
लटका-
ोड़कर
नकाला
में मौत
उपचार
आंखों
व्यक्ति

उदयपुर
ाम्बनी

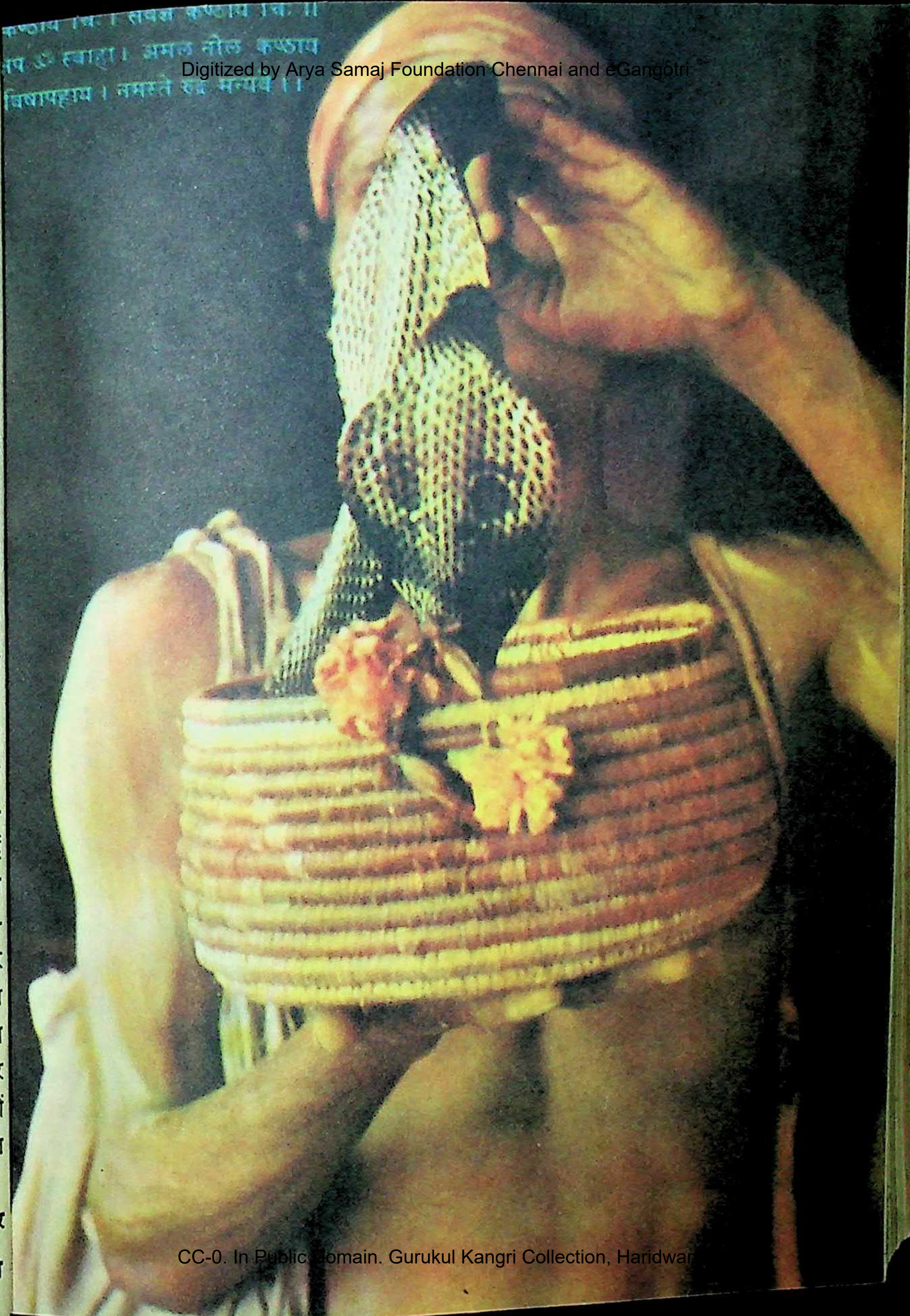
कण्ठाय चि. । सबल कण्ठाय चि. ॥
य ॐ स्वाहा। अमल नील कण्ठाय
विषापहाय। नमस्ते रुद्र मन्यवे ॥

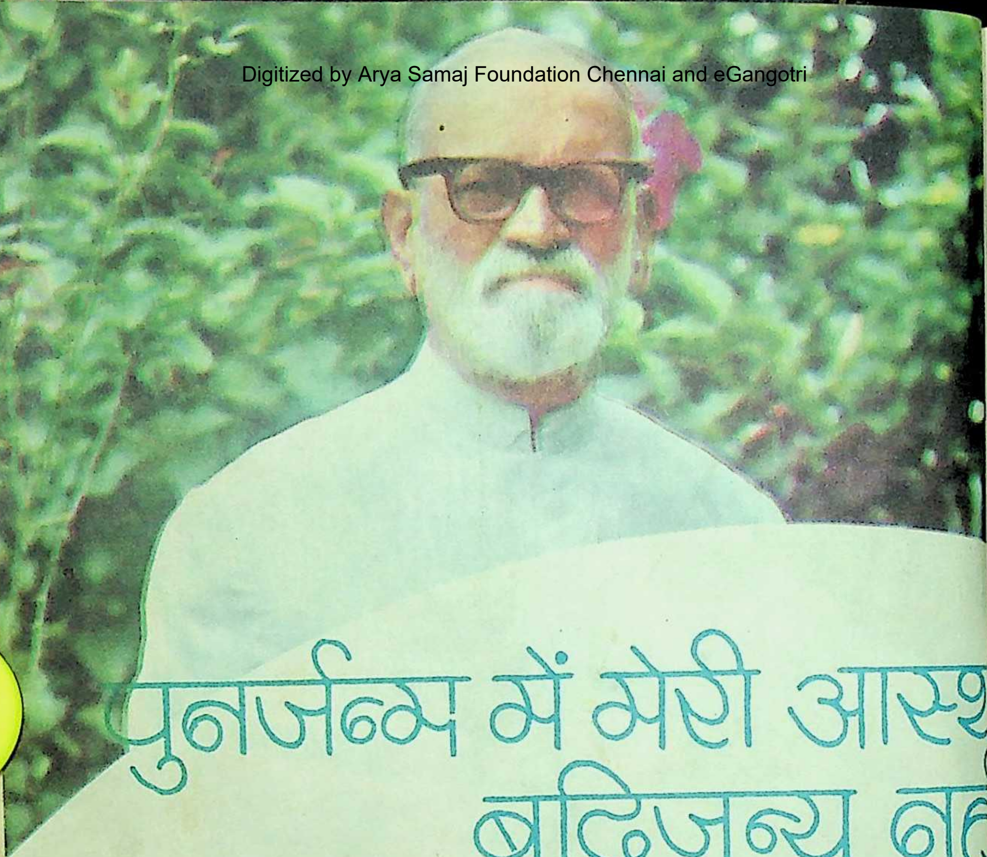

पुनर्जन्म में मेरी आस्थ बुद्धिजन्य नह

'कादम्बिनी' में कई मनीषियों के 'जिंदगी और मौत के दस्तावेज' प्रकाशित हो चुके हैं। संपादक महोदय का आग्रह है कि एक दस्तावेज मैं भी लिखूं। लेखनी उठायी। सहसा स्मरण हो आया कि जिंदगी और मौत का जो दस्तावेज महाभारत में महर्षि व्यास श्रीमद्भगवद्गीता के रूप में लिख चुके हैं, उसके बाद हम क्षुद्र व्यक्तियों का लिखा दस्तावेज जीवन-मरण की समस्या पर अधिक प्रकाश क्या डालेगा! कौरवों की ११ अक्षौहिणी और पांडवों की सात अक्षौहिणी सेनाएं जीवन-मरण का दस्तावेज लिखने के लिए आमने-सामने खड़ी हैं। मनुष्य ही नहीं, गज एवं अश्व भी इस लेख में योगदान करने के लिए दोनों ओर से प्रस्तुत हैं। व्यास के सिवा संसार का कौन-सा दूसरा कवि है, जिसने इस दस्तावेज के लिखने के लिए इससे बेहतर पृष्ठभूमि की रचना की है? और लेखक कौन? —लीला-पुरुषोत्तम कृष्ण, जिनके संबंध में कहा गया है कि "**कृष्णात् पर किमपि तदहं न जाने।**" जीना कैसे और मरना कैसे और मरने के उपरांत क्या आशा करना,

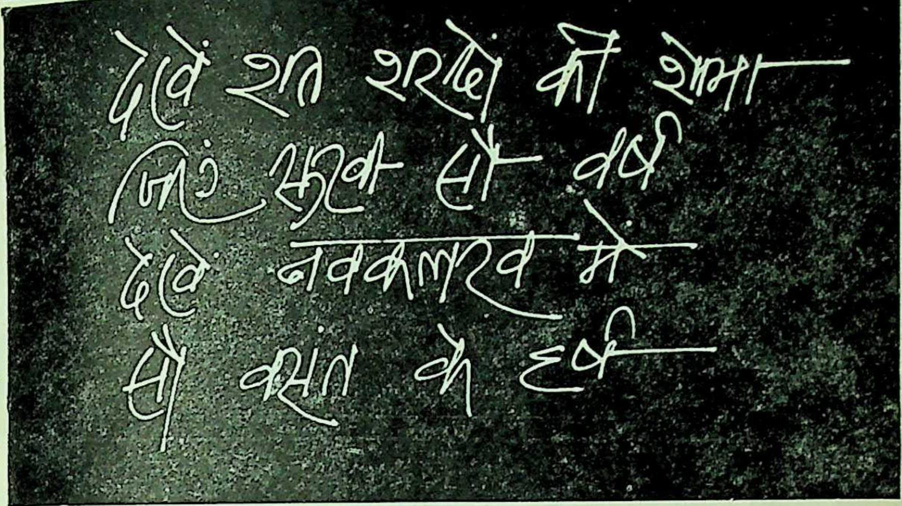

देखें शत शरदों की शोभा
जिएं सुखद सौ वर्ष
देखें नवकलरव में
सौ वसंत के हर्ष

गीता इनका पूरा दस्तावेज है।

जीवन और मरण का युग्म है। जिजीविषा का ही परिणाम मृत्यु-भय है। जीव मात्र में स्वाभाविक होते हुए भी यह भय विचार करने पर निरर्थक जान पड़ता है। यदि मृत्यु की तिथि निश्चित है तो हम उसे टाल नहीं सकेंगे और यदि वह अनिश्चित है तो हमें वह अपना ग्रास कब बनायेगी, यह हम जान नहीं सकते। फिर भी हम डरने से बाज नहीं आते। मैं जब बीमार पड़ता हूं तब चाहता हूं कि मेरे आसपास कोई न हो। इसके विपरीत मैंने अपने एक मित्र की आदत देखी कि रुग्ण होने पर वे अधिक से अधिक इष्ट-मित्रों से घिरे रहना पसंद करते हैं। फिर भी इतना निश्चित है कि जब मृत्यु लेने आयेगी तब घिरे इष्ट-मित्रों की सेना रक्षा न कर सकेगी।

डा॰ रामप्रसाद मिश्र

जिजीविषा इतनी प्रबल है कि देह-नाश स्वीकारने के बाद मनुष्य यशःकाय से जीवित रहना चाहता है। इस तथ्य को भुलाकर कि **जब हमीं न रहे तो रहेगा मजार क्या,** वह पिरामिड, मकबरे आदि अपने जीवन-काल में ही बनवा डालता है। अपने यहां दाह-कर्म होता है, परंतु बाप-दादों की जिजीविषा पिंडदान का कार्यक्रम बनवा गयी है। परंतु जिस तरह मकबरे काल-कवलित हो जाते हैं, उसी तरह अब काल-चक्र ऐसा घूमा है कि अपनी

उत्तरायण की एक संगोष्ठी में मिश्रजी

संतान से हमें पिंडदान की भी आशा नहीं करनी चाहिए।

यद्यपि वीर अर्जुन को मृत्यु-भीति छू भी नहीं गयी थी तब भी पिंड-दान की उसे चिंता थी। उसने कृष्ण से कहा था कि युद्ध में पुरुष मारे जाएंगे। और तब पुरुषों की कमी होने पर स्त्रियां व्यभिचारिणी हो जाएंगी! उनसे जो बच्चे पदा होंगे, वे पिंडदान के लिए अयोग्य सिद्ध होंगे। 'पिंडोदक-क्रिया' के लुप्त हो जाने पर पितरों की क्या दशा होगी। अतएव, मैं युद्ध नहीं करूंगा। समूची गीता में कृष्ण ने यदि उसे किसी बात पर डांटा है तो इसी 'लुप्तपिंडोदक-क्रिया' के कथन पर। उन्होंने कहा—क्या पंडिताई बघार रहा है—**'प्रज्ञावादांश्च भाषसे!'** यदि हम कृष्ण की डांट-फटकार को अपने मन पर अंकित कर लें तब फिर हमारे बेटे हमें पिंड-दान नहीं करेंगे, यह चिंता भी हमारा पीछा छोड़ देगी।

गीता पुनर्जन्म के सिद्धांत का प्रतिपादन करती है। विद्वानों का मत है कि वेद में पुनर्जन्म की बात नहीं कही गयी है। वहां तो पितृलोक है, जहां मरने के बाद मनुष्य पितरों के पास जाता है। युधिष्ठिर जब स्वर्ग में पहुंचे तब मार्ग में गले हुए अपने भाइयों एवं द्रौपदी से उनका मिलन हुआ। कुछ विद्वानों का मत है, पुनर्जन्म का सिद्धांत आर्यों ने आदिवासी मुंडारियों से अथवा द्रविड़ों से प्राप्त किया। यह संभव है, किंतु अनिवार्य नहीं। वेद का अंत वेदांत है माना जाता है और उपनिषद इस सिद्धांत

का प्रतिपादन करते हैं। गीता तो स्पष्ट ही कहती कि जिस प्रकार मनुष्य जीर्ण वस्त्र उतारकर नये पहनता है, उसी प्रकार देही अर्थात आत्मा पुराने शरीर को त्यागकर नया शरीर धारण कर लेता है।

यदि किसी में फटे-पुराने कपड़े त्यागकर नये कपड़े बनवाने की सामर्थ्य है, परंतु फटों को नहीं उतारता तो वह समाज में हास्यास्पद बन जाता है। अति-जिजीविषा का भी परिणाम यही होता है। शरीर जराजीर्ण हो गया, अनेक बीमारियां घेरे हैं, परंतु जिजीविषा बाध्य करती है कि इसी फटे-पुराने शरीर को चलाओ। परंतु यह जीना नहीं है, देहरूपी बोझ को ढोना मात्र है। अंत में चारपाई बोझ को ढोने लगती है और घर के लोग ढोते हैं। देहात में अधिक स्पष्टवादी कहावत है —**न मरै, न माचा छोड़ै !**

पहले मैं अपने एक ग्रंथ में लिख चुका हूं, "अनेक लोग मृत्यु को मनुष्य के लिए निकृष्ट दशा मानते हैं। मुझे वृद्धावस्था बदतर प्रतीत होती है। मृत्यु सर्वोत्तम मित्र है जो बुढ़ापारूपी शत्रु द्वारा जनित सभी कष्टों से उबारती है। किसी महामेधावी का जरा-जीर्ण होकर सठियाई बकवास करते देखा जाना, किसी देवोपम सौंदर्यशाली शरीर का घृणित होकर लकुटी के सहारे चलते देखा जाना और उस सदा उन्नत मस्तक का दैहिक एवं मानसिक दोनों दृष्टियों से झुका देखा जाना-ऐसी 'ट्रेजेडी' है जिसपर जितने ही आंसू बहाये जाएं, थोड़े ही होंगे। ऋषियों ने संन्यास का उपदेश युवा-वृद्धों के पारस्परिक संघर्ष रोकने के लिए ही नहीं दिया था। संभवतः उनका उद्देश्य यह भी था कि जिस व्यक्ति को हमने अपने शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक गौरव के उच्च शिखर पर देखा था, उसकी अब हम सर्वांगीण अवनति तथा दूसरों पर सर्वथा निर्भरता न देखें और वह सांसारिक जुए को उतारकर सर्वजन-हिताय कार्य करता हुआ किसी तीर्थस्थान में जाकर अपनी देह त्यागे, जहां न उसे कोई देखे, न रोये।

"परंतु पाश्चात्यों के जीवन-मूल्य अलग ही हैं। वे उनके प्रशंसक हैं जो कंधे पर सांसारिक कामों का जुआ अंत तक लादे हुए मरते हैं। इसे वे 'डाइंग इन हारनेस' कहते हैं। इस प्रकार की मृत्यु की बात जब मेरे सामने कोई कहता है तब मेरे मन में उस दयनीय दृश्य का चित्र उभर आता है जिसमें एक जरा-जीर्ण घोड़ा भीड़ से भरी हुई सड़क के बीचोंबीच तांगे एवं सवारियों के बोझ से चकनाचूर होकर मरा पड़ा है।

"हमने जंहां पाश्चात्यों से बहुत से जीवन-मूल्य उधार लिये हैं वहां जुआ लादे हुए मरने को भी उद्यत हो गये हैं, विशेषकर वे लोग जो राजनीति के क्षेत्र में कार्य करते हैं। एक बार नागपुर के एक महाराष्ट्रीय मित्र ने आग्रह किया कि

मैं उन्हें एक अति-वृद्ध राजनीतिज्ञ से मिला दूं, मैंने उन्हें मिला दिया । लौटते समय वे मेरी बगल में मोटर में बैठे ही थे कि कह उठे--मिश्रजी, मैंने तो एक शव देखा । मैं उनके कथन में किंचित परिवर्तन करते हुए बोला--'जीवित शव' कहिए । और फिर यह भी कह डाला–अपने यहां जीवित शव नहीं दफनाये जाते ।

"एक और घटना मुझे याद है । एक वयोवृद्ध राजनीतिज्ञ के पुत्र ने पिता से निवेदन किया कि उसे भी विधान सभा का टिकट दिला दें । पिता ने समझाया कि अब मैं ही कुछ वर्षों का मेहमान हूं, कुछ समय रुको । पुत्र के मुंह से निकल ही गया—कब तक ?"

मेरे पुत्र ब्रजेश भारत सरकार के वैदेशिक विभाग में हैं । एक बार वह चीन से छुट्टी पर दिल्ली आये तो मैंने देखा कि वह नितांत दुर्बल है । मैंने कारण पूछा तब मालूम हुआ कि वह चीन के साथ भारत के संबंध सुधारना चाहते थे, परंतु उसमें सफल नहीं हुए । मैंने कहा कि आज अच्छे संबंध नहीं हो पाना भारत के लिए बुरा ही है, यह तुम क्यों मानते हो ? मैंने अपने प्रश्न को स्पष्ट करते हुए कहा कि ईश्वर जो कुछ करता है, अच्छे के लिए करता है, जिसे हम अपने लिए बुरा समझते हैं, उसमें शायद हमारी भलाई निहित हो । मैंने एक उदाहरण दिया–एक उद्योगपति बंबई से दिल्ली जाना चाहता था । यदि वह समय पर वहां न पहुंचा तब लाखों से हाथ धोना पड़ेगा । जब विमान-तल पर पहुंचा तो विमान उड़ चुका था । रोता हुआ घर लौटा । रोदन समाप्त नहीं हुआ था कि आकाश-

मिश्रजी अपने निवास 'उत्तरायण' के उद्यान में

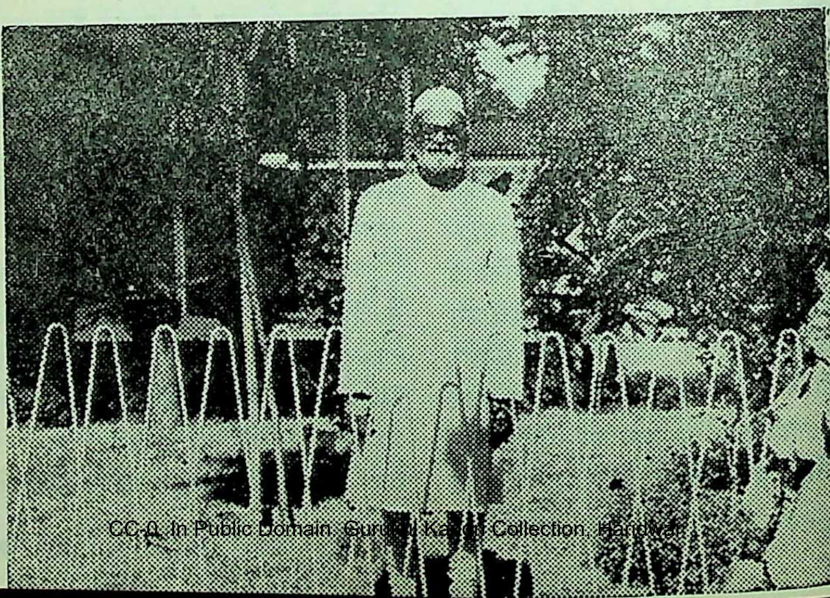

अध्ययन में रत 'कृष्णायन' के रचयिता : मिश्रजी

वाणी ने समाचार दिया कि वह विमान धराशायी हो गया है और यात्रियों में से कोई भी जीवित नहीं बचा। उसका रोदन प्रसन्नता एवं हास्य में परिणत हो गया।

ब्रजेश चीन चले गये। (आजकल इंडोनेशिया में राजदूत हैं)। साल-डेढ़ साल के बाद जब वह फिर दिल्ली आये तब मैंने उन्हें हृष्टपुष्ट देखा। पूछने पर मालूम हुआ कि उन्होंने भारतीय दर्शन के अनेक ग्रंथ पढ़ डाले हैं और वे ध्यान करने लगे हैं। उन्होंने मध्य-युग की लिखी हुई एक चीनी पुस्तक का अंगरेजी अनुवाद देते हुए कहा कि इसमें एक मेरे दिये हुए उदाहरण से मिलती-जुलती कथा है। एक चीनी कृषक था। एक बार उसका घोड़ा कहीं गायब हो गया। इष्ट-मित्र संवेदना प्रकट करने आये। किसान ने कहा कि ईश्वर जो कुछ करता है, अच्छे के लिए ही करता है। कुछ दिनों के बाद उसका घोड़ा वापस ही नहीं आया, बल्कि अपने साथ एक जंगली घोड़ा भी ले आया। मित्रों ने आकर उसे बधाई दी। किसान ने कहा, ईश्वर जो कुछ करता है भले के लिए ही करता है। एक दिन उस किसान के एकमात्र पुत्र ने उस जंगली घोड़े पर सवारी की तब वह गिर पड़ा और उसकी टांग टूट गयी। मित्र जब संवेदना प्रकट करने आये तब किसान ने फिर कहा कि ईश्वर सब कुछ भले के लिए ही करता है। कुछ ही दिन बीते थे कि चीन देश किसी युद्ध में फंस गया। नौजवानों की फौज में भरती की जाने लगी। उस किसान के एकमात्र पुत्र को भी सरकारी अफसरों ने पकड़ा, परंतु चूंकि उसे टूटी टांग का पाया, उसे छोड़ दिया। मित्र फिर बधाई देने पहुंचे तब किसान ने वही वाक्य चौथी बार कहा, ईश्वर जो कुछ करता है भले के लिए ही करता है।

जहां तक चीन के साथ भारत के संबंधों के सुधरने का प्रश्न है, आज उन्हें

सुधारने के लिए भारत से अधिक चीन प्रयत्नशील है। सत्य तो यह है कि मनुष्य की दृष्टि सीमित है और वह घटनाओं के दूरगामी परिणाम से अपरिचित होने के कारण उन्हें इष्ट या अनिष्ट मान बैठा है।

आज भारतीय जीवन पाश्चात्य जीवन-शैली का अनुवाद-मात्र रह गया है। जब परमात्मा से ही विश्वास लुप्त हो जाए तब आत्मा के अन्य शरीर धारण करने में कैसी आस्था हो सकती है? भौतिकतावादी चार्वाक के कथन पर ही विश्वास किया जाने लगा है—

भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः।

संभव है कि हमारी आस्था फिर लौटेगी, परंतु जान पड़ता है कि अब वह तभी लौटेगी जब पाश्चात्य विज्ञानवेत्ता पुनर्जन्म को सिद्ध कर सकेंगे। इस दिशा में बहुत प्रयत्न हो रहे हैं। हमारे शास्त्रों में मृत्यु के उपरांत सूक्ष्म (लिंग) शरीर का वर्णन है। अमरीका और रूस के विज्ञानवेत्ताओं ने इस दूसरे शरीर के फोटो लेने तक में सफलता प्राप्त की है। अमरीका के जीव-शास्त्र के सुप्रसिद्ध विद्वान ल्याल वाटसन ने अपने ग्रंथ 'रोमियोज एरर' में इसका उल्लेख किया। अपने यहां योग-शास्त्र में जिन सिद्धियों का वर्णन है उनमें से कई के प्रयोग सफल सिद्ध हुए हैं। पूर्वजन्म का स्मरण रखनेवाले बालक-बालिकाओं के कथन की सत्यता की वैज्ञानिक दृष्टिकोण से छानबीन की जा रही है और कुछ की यथार्थता पर विश्वास भी किया जाने लगा है।

मैंने भारतीय एवं पाश्चात्य दर्शन-शास्त्र का यथा-शक्ति अध्ययन किया है, परंतु पुनर्जन्म में मेरी आस्था बुद्धि-जन्य नहीं है। अपने यहां आप्त-पुरुषों के कथन को भी प्रमाण माना गया है। गीता एवं योगवासिष्ठ के प्रणेताओं को आप्त-पुरुष मानकर मैं उनके कथन पर विश्वास करता हूं। परंतु इसे यदि कोई मेरा अंध-विश्वास कहे तब भी मैं बुरा न मानूंगा। यदि यह विश्वास मुझे जीवन-यात्रा में साहस एवं शांति प्रदान करता है और मृत्यु की भीति से मुक्त करता है तब यह मेरे लिए वरदान है। इसे छीनकर कोई मुझे इसके बदले में क्या देगा?

जिंदगी और मौत-संबंधी आसाधरण अनुभवों की भी प्रायः लोग चर्चा करते हैं। मेरे इस कोटि के अनुभव अधिक नहीं है। जब मैं लगभग ८ वर्ष का था और उन्नाव जिले के पड़री ग्राम में बाल्य-काल व्यतीत कर रहा था तब एक बार मेरे पिता रायपुर (मध्यप्रदेश) से घर आये। भोजनोपरांत उनके इष्टमित्र चौपाल में एकत्रित हुए। उन सबका वार्तालाप सुनने की इच्छा लेकर मैं भी चुपचाप उनके पास जा बैठा। पिताजी ने अपने एक मित्र की चर्चा की। रात में जब मैं सोया तो स्वप्न में मुझे एक सड़क दिखायी दी। और उसी के एक ओर

पिताजी के मित्र का मकान। कुछ समय व्यतीत होने पर जब पिताजी पूरे परिवार को रायपुर ले गये तो मैंने देखा कि पिताजी के मित्र का मकान हूबहू वैसा ही है जैसा मैंने स्वप्न में देखा था । सड़क भी वैसी ही थी । यह घटना मैं कभी भूल नहीं सका । लगभग ३५ वर्ष के बाद नागपुर में जब मैं गृहमंत्री था तब मेरे एक महाराष्ट्रीय मित्र ने मुझे 'नथिंग डाइज' नाम की एक पुस्तक पढ़ने को दी । लेखक का नाम आज मुझे याद नहीं रहा । पुस्तक में यह प्रतिपादित किया गया था कि दिक् (स्पेस) जिस प्रकार फैला हुआ है उसी प्रकार काल (टाइम) भी । जाग्रत अवस्था में जिस प्रकार हम दिक् में एक स्थान से दूसरे स्थान को जा सकते हैं और लौट आ सकते हैं उसी प्रकार प्रसरित काल में भी स्वप्न में हमारा मन गत-आगत-अनागत काल में विचरण करता है। कभी वह भूतकाल में प्रवेश कर उसकी घटनाओं के दृश्य हमें दिखाता है और कभी अनागत काल में प्रवेश कर उसकी झांकी प्रस्तुत करता है । इस सिद्धांत के अनुसार अनागत काल में प्रवेश कर स्वप्न में मेरे मन ने पिताजी के मित्र के मकान को दिखा दिया था जिसे मैं आगे चलकर देखनेवाला था । सचाई कुछ भी हो, सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक आइंस्टीन का सापेक्षवाद (थ्योरी ऑव रिलेटिविटी) अब सर्वमान्य सिद्धांत बन गया है और इसके अनुसार दिक्-काल एक-दूसरे में गुथे हुए हैं ।

एक और असाधारण अनुभूति अभी दो वर्ष पहले की है। भोजनोपरांत लगभग १ बजे दिन में सोने का मेरा नियम है। एक दिन मैंने स्वप्न देखा कि मेरा शव भूमि पर पड़ा है और मैं उससे ऊपर अधर में स्थित उसकी ओर देख रहा हूं । मैं प्रसन्न हूं और उस शव में फिर प्रवेश करने की मेरी तनिक भी इच्छा नहीं है । जागने पर अनेक स्वप्न विस्मृत हो जाते हैं, परंतु मैं इस दिवा-स्वप्न को नहीं भूल सका । यह स्वप्न मुझे कल्याणकर प्रतीत हुआ। अतएव मैं अनेक बार यह निश्चय कर सोया कि फिर अपने शव के बाहर स्वयं को देखूं जिससे उसके प्रति मेरी विरक्ति धीरे-धीरे दृढ़ हो जाए। परंतु वह अथवा उसी से मिलता जुलता स्वप्न मैंने फिर से आज तक नहीं देखा । फिर भी मैं उसे इस आशा से संजोये हुए हूं कि मेरे मन ने मेरी भावी मृत्यु और उसके उपरांत शव के प्रति मेरी जिस विरक्ति का अनुभव कर लिया है शायद वह सत्य सिद्ध हो ।

—उत्तरायण पचपेढ़ी, जबलपुर

मानवता के लिए दो बड़े खतरे हैं—एक तो किसी गुनाह को बहुत बढ़ाचढ़ाकर दिखाना और दूसरा, उसे बहुत छोटा करके दिखाना।

—मेरी बेकर एडी

विधि-विधान

राकेशकुमार, दिल्ली : हमारे परिवार में पांच सदस्य हैं, जिनमें हम तीन बहन-भाई हैं। सभी स्नातक कक्षाओं में पढ़ रहे हैं। घर के दो कमरे किराये पर हैं। अब आवश्यकता बढ़ने के कारण हम ये कमरे खाली कराना चाहते हैं। क्या हम कानूनी सहायता से अपने मकान को खाली करा सकते हैं।

आपको दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा १४ (ई) के अंतर्गत मुक़दमा प्रारंभ करने का अधिकार है। यह वाद किराया नियंत्रण के न्यायालय में चलाया जा सकेगा और उक्त अधिनियम की धारा २५ (वी) के अंतर्गत उसकी सुनवाई होगी। अपनी आवश्यकतानुसार मकान खाली कराने के आवेदन पर विचार करने के लिए दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम में संशोधन द्वारा धारा २५ वी समाविष्ट करके प्रक्रिया को सुलभ बनाया गया है।

अशोककुमार शर्मा, जावद : २४ वर्षीय, बी. काम. फाइनल का छात्र हूं। हम तीन भाई हैं। मां के नाम पर स्थायी संपत्ति है। आप बतायें, क्या मां की इच्छा के विरुद्ध मैं संपत्ति का अपना हिस्सा ले सकता हूं।

आपकी मां को अपनी निजी संपत्ति को किसी भी लड़के को देने का अधिकार है। वह अपने जीवन-काल में अपनी संपत्ति एक लड़के को दे सकती है और आपको इसका प्रतिवाद करने का अधिकार नहीं है। आप अपनी मां की इच्छा के विरुद्ध कानूनन संपत्ति नहीं ले सकते।

करुणा बंसल, पलवल : मेरे एक नजदीकी रिश्तेदार का स्वर्गवास एक बस की टक्कर लग जाने से हो गया। वे अपनी साइकिल पर जा रहे थे। प्राइवेट बस ने आकर उन्हें टक्कर मारी। फलतः घटनास्थल पर ही उनकी मृत्यु हुई। उनकी विधवा पत्नी व एक लड़का अब निराश्रित हो गये हैं। क्या उनकी पत्नी व लड़का हरजाने की मांग कर सकते हैं?

मोटर वाहन एक्ट (Motor Vehicles Act) की धारा ११०-ए के अंतर्गत मृत

'विधि-विधान' स्तंभ के अंतर्गत कानून संबंधी विविध कठिनाइयों के बारे में पाठकों के प्रश्न आमंत्रित हैं। प्रश्नों का समाधान कर रहे हैं राजधानी के एक प्रसिद्ध कानून विशेषज्ञ श्री रामप्रकाश गुप्त

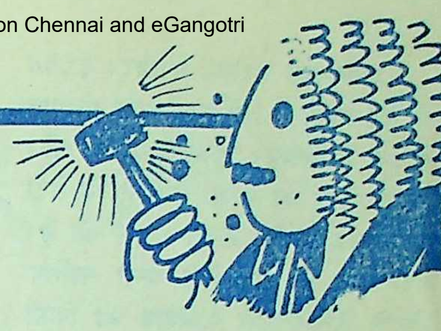

व्यक्ति की पत्नी व पुत्र आर्थिक क्षति-पूर्ति के लिए वाद प्रारंभ कर सकते हैं। इसके लिए उन्हें बस के मालिक, ड्राइवर तथा बस की बीमा (इंश्योरेंस) कंपनी के विरुद्ध आवेदन करना चाहिए। इस प्रकार के आवेदनों की सुनवाई के लिए विशेष न्यायालयों का गठन किया गया है, जिन्हें मोटर-दुर्घटना क्लेम न्यायाधिकरण कहा जाता है। इन आवेदनों पर न्याय-शुल्क क्लेम की राशि के आधार पर नहीं देना होता। उसके लिए न्याय-शुल्क की राशि निर्धारित की गयी है। मृत व्यक्ति की आयु, आय तथा भविष्य की संभावनाओं के आधार पर देय राशि का निर्धारण किया जाता है। इस प्रकार का वाद मृत्यु के कुछ माह के अंदर प्रारंभ किया जाना चाहिए।

अतुल कुमार : मेरी शादी हुए ११ वर्ष हो चुके हैं। एक व्यापारी का ससुराल में आना-जाना था। वह चचेरे ससुर का साथी है। धनी होने के कारण वह उनकी आर्थिक मदद करता रहता था और घरवालों को तरह-तरह के उपहार देता था। इस प्रभाव के कारण मेरी पत्नी उस पर आसक्त है। वह कह रही थी, "उससे मेरी बातचीत, पत्र-व्यवहार कोई नहीं छुड़ा सकता।" काफी दिनों तक वह मायके ही रही, वहीं उसकी लड़की हुई। अब भागकर वह उस व्यापारी के साथ कलकत्ता चली गयी है। मुकदमा दायर करने पर लड़ने के लिए तैयार है। मेरे पास भी प्रमाण हैं– १. उस व्यापारी का मेरी पत्नी के नाम प्रेम-पत्र। २. भागने से पूर्व व्यापारी को लिखा पत्र कि उसकी बरबादी का कारण यह पैदा हुई लड़की है। ३. मेरे छोटे भाई को बरगलाने का प्रमाण। कृपया बतायें कि मुझे उससे कैसे मुक्ति मिल सकती है।

आप अपनी पत्नी के विरुद्ध हिंदू-विवाह अधिनियम १९५५ की धारा १३ के अंतर्गत विवाह-विच्छेद के लिए कार्यवाही कर सकते हैं। आपकी पत्नी उक्त व्यापारी के साथ रह रही है तथा आपके कथनानुसार उससे उत्पन्न लड़की भी आपकी नहीं है। इन तथ्यों के प्रमाणित होने पर न्यायालय आपका विवाह-विच्छेद का आवेदन स्वीकार कर लेगा। व्यापारी का प्रेम-पत्र तथा अपनी पत्नी का पत्र आप न्यायालय में सबूत के रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं। इस प्रकार के वाद में व्यापारी को भी प्रतिवादी बनाया जाना चाहिए।

छगनलाल अरोड़ा, अजमेर : १९३८ में मेरे मौसा ने एक ट्रस्टीनामा पंचायत के हक में लिखकर रजिस्ट्री कर दी थी। ट्रस्टीनामे में यह लिखा हुआ है कि मेरी चल-अचल संपत्ति अपनी कमाई की है। मेरी मृत्यु के बाद मेरी पत्नी मालिक होगी। लेकिन उसे जायदाद को किसी प्रकार बेचने या किसी बच्चे को गोद लेने का हक नहीं होगा। परंतु जब मौसी की देखरेख करने वाला कोई न रहा, तब उन्होंने मुझे गोद लेकर मेरे नाम जायदाद की रजिस्ट्री करवा दी। मेरे मौसा ने ट्रस्टीशिप में यह शर्त भी रखी थी कि उनकी पत्नी का क्रियाकर्म पंचायत करेगी, लेकिन उसने शर्त पूरी नहीं की। जायदाद पर अभी तक मेरा कब्जा है, लेकिन पंचायत ने मुझे कानूनन नोटिस दे दिया है कि मुझे कोई अधिकार नहीं। कृपया कानूनी स्थिति क्या है, इसे स्पष्ट करें।

प्रत्येक व्यक्ति अपनी संपत्ति किसी भी दूसरे व्यक्ति को देने के लिए स्वतंत्र है। आपके मौसा की संपत्ति उनकी इच्छा के अनुरूप पंचायत की संपत्ति रहेगी। आपके मौसा ने अपनी पत्नी पर यह प्रतिबंध लगा दिया था कि वह किसी बालक को गोद नहीं ले सकती। आपकी मौसी द्वारा आपको गोद ले लेने से आप अपने मौसा की संपत्ति के उत्तराधिकारी नहीं बन सकते। यदि आपके मौसा संपत्ति का अधिकार पंचायत को न देते और अपनी पत्नी को बच्चा गोद लेने का अधिकार दे जाते तो आप अपने मौसा की संपत्ति के उत्तराधिकारी हो सकते थे।

जहां तक सवाल क्रिया-कर्म के खर्च का है, वह जिम्मेदारी पंचायत की है और उस पर आया खर्च आप पंचायत से वसूल कर सकते हैं।

ओमप्रकाश श्रीवास्तव, इलाहाबाद : मेरे तीन लड़के हैं। सबसे बड़े लड़के को पढ़ाने की बहुत कोशिश की गयी, परंतु वह नहीं पढ़ा। उसकी अच्छी संगत नहीं है। उसकी आदतें बिगड़ चुकी हैं। मैं अपनी संपत्ति में से उसे कुछ भी नहीं देना चाहता। कृपया मुझे बतायें, कानूनन मुझे क्या करना चाहिए?

आप अपनी संपत्ति अपने अन्य दोनों पुत्रों के नाम कर सकते हैं। यदि आप यह चाहें कि उनको भी यह संपत्ति आपके बाद मिले तो आप इसके लिए अपनी वसीयत लिख सकते हैं और उसमें आपकी संपत्ति किस प्रकार बांटी जाए, इसके लिए निर्देश भी दे सकते हैं। इस प्रकार का निर्देश आपके स्वर्गवास के बाद प्रभावी होगा। यह उल्लेखनीय है कि वसीयत कम से कम दो साक्षियों के समक्ष लिखी जानी चाहिए और आपको तथा साथियों को एक दूसरे के सामने हस्ताक्षर करने चाहिए। आपको अपने बड़े पुत्र से संबंध न रखने के बारे में सार्वजनिक सूचना प्रकाशित करवा देनी चाहिए, जिससे वह अन्य व्यक्तियों के समक्ष आपके नाम का दुरुपयोग न कर सके। ●

सितारों से आगे

● अशोक प्रभाकर मोटे
(स्क्वाड्रन लीडर)

युद्ध के दिन थे। कई मोर्चों पर लड़ाइयां जोरों पर थीं। अपने जवानों ने दुश्मन के हमलों का जबर्दस्त मुकाबला कर, उन्हें पीछे हटने पर मजबूर कर दिया था। फिर भी दुश्मन बार-बार आक्रमण कर रहा था।

हमारे सेना-प्रमुखों ने फैसला कर लिया था, “सब्र की हद हो चुकी, अब हम ईंट का जवाब, पत्थर से देंगे।” सेना ने अब आक्रमण के जवाब में, दुश्मन पर धावा बोल दिया था । भारतीय सेना के जवान आगे कूच करते जा रहे थे।

ब्रीफिंग-रूम की दीवारों पर, हर तरफ, नक्शे लगे हुए थे। नक्शों पर रंगीन ड्राइंग-पिनों तथा अलग-अलग रंगों के विविध निशानों से हमारे सब मोर्चों के मौजूदा हालात तथा पोजीशन अंकित की हुई थी।

हवाईअड्डों पर हमला

विंग-कमांडर जौहरी ब्रीफिंग-रूम में आये। भावे, शुक्ला, मिश्रा और मैं, चारों ने खड़े होकर उन्हें अभिवादन किया और हम उत्सुकता से उनकी ओर देखने लगे । “गुड मॉर्निंग जेंटिलमैन”, जौहरी बोले, “मैं जानता हूं, उड़ान के लिए आज का मौसम अच्छा नहीं है, लेकिन आज का काम बहुत ही जरूरी है। वैसे देखा जाए तो आज की यह उड़ान बहुत खतरनाक है, ऑलमोस्ट स्युसाय्डल ! तुम सबको इस उड़ान पर जाने के लिए कहना, खुदकुशी करने को कहने जैसा है । तुम सब इस उड़ान पर जाने के लिए फिजिकली और मेंटली तैयार हो या नहीं ?”

“यस सर”, मैंने जवाब दिया, “आइ एम रेडी।”

“मी टू सर”, भावे ने कहा।

“वी आर रेडी सर”, शुक्ला तथा मिश्रा दोनों बोले। “गुड-गुड—दैट्स वेरी गुड”, जौहरी बोले, फिर वे नक्शे के पास गये और हमें उड़ान की रूपरेखा समझाने लगे, “तुम सबको, दुश्मन के इलाके में सरहद से एकदम अंदर तक जाकर, इन हवाईअड्डों पर हमला करना है।”

दुश्मन के इलाके में बसे, वे दो हवाईअड्डे नक्शे पर उन्होंने हमें दिखाये। “हमारी सेना के जवान काफी आगे तक बढ़ गये हैं”, जौहरी आगे बोले, “लेकिन

काल से उनकी राह में कुछ नयी मुश्किलें पैदा हो गयी हैं। दुश्मन के जहाज अब हमारी सेना पर आकाश से अचानक आक्रमण करने लगे हैं। दुश्मन के ये जहाज इन दो हवाईअड्डों से उड़ानें भरते हैं, ऐसी जानकारी हमें अभी-अभी हासिल हुई है। इन हवाईअड्डों के लिए हमने गुप्त नाम रखे हैं—'सितारा-एक' और 'सितारा-दो'।

"सर, हमारी सेना पर आकाश से आक्रमण करने के पहले ही, हम उन जहाजों से टक्कर लेंगे," भावे ने जोश में आकर कहा।

"सर, हम उनके हवाई-जहाज, उड़ान करने से पहले जमीन पर ही, तहस-नहस क्यों न कर दें!" मैंने कहा—"और फिर 'सितारा-एक' तथा 'सितारा–दो' हवाईअड्डों पर बांबिंग करके ये हवाईअड्डे भी नष्ट कर दें, न रहेगा बांस..."

"दैट्स राइट मोटे", जौहरी बोले "बोथ ऑव यू आर राइट, आज की तुम सबकी उड़ान का उद्देश्य यही है। सवाल यह है, हमारी वायुसेना ने आज तक ऐसे काम कभी नहीं किये हैं, इसलिए तुम्हारा मार्ग-दर्शन करना बहुत कठिन है।"

"सर, सिचुएशन देखकर, सोच-समझकर, हम लड़ेंगे।" मैंने कहा—"आप फिक्र न करें।"

'सितारा-एक' और 'सितारा-दो'

उन्होंने 'सितारा-एक' और 'सितारा-दो' हवाईअड्डों के बारे में प्राप्त जानकारी हमें दी और कहा, "तुम्हारा सबसे पहला काम है, इन दोनों हवाईअड्डों पर खड़े दुश्मन के हवाईजहाज उड़ान करने से पहले, जमीन पर ही नष्ट कर देना। दूसरा काम, जहाज दुरुस्त करने के लिए बने बड़े-बड़े शेड्स तथा हैंगर्स और बाकी बिल्डिगें खत्म करना। तीसरा काम भी बहुत जरूरी है, हवाईअड्डों के पास ही पेट्रोल की बड़ी भारी टंकियां हैं। इन सबको तहस-नहस करना है। ये तीनों काम तुम चारों को, इस एक ही उड़ान में पूरे करने हैं। हवाईअड्डों की सीध में, बिलकुल नीचे जाकर, समांतर उड़ान कर, तुम्हें बांबिंग करनी है तथा बांबिंग करते वक्त शायद दुश्मन के जहाजों का और ऐंटी-एयरक्राफ्ट तोपों का मुकाबला करना पड़े, क्योंकि ऐंटी-एयरक्राफ्ट तोपें तो दोनों हवाईअड्डों पर तैनात हैं ही, फिर और किसी तीसरे हवाईअड्डे से दुश्मन के और जहाज भी तो उड़कर राह में आ सकते हैं! इसीलिए मैं कह रहा था, यह उड़ान बहुत ही जानलेवा है। पूरी तरह सोच लो और फिर कहो।"

"सर वी विल डू इट," हम बोल उठे।

"ऑल राइट देन", जौहरी बोले, "विश यू ऑल द लक ऐंड मे गॉड बी विद यू!"

"थैंक्यू सर!" हम सबने कहा।

आकाश-युद्ध की पूरी रूपरेखा की चर्चा करते हुए हम बाहर निकले।

हम सब अपने-अपने जहाजों में चढ़कर बैठे। एक के बाद एक उड़ानें भरीं।

जहाज लेकर हम सरहद की ओर उड़ रहे थे, सात सौ मील की रफ्तार से।

जमीन से सिर्फ दो सौ फुट की ऊंचाई पर उड़ रहे थे हम। सीमा-प्रदेश पास आता जा रहा था।

'सितारा-एक' और 'सितारा-दो' तक पहुंचने के लिए हमने सीधा रास्ता न चुनकर, दुश्मन के इलाके में स्थित निर्जन रेगिस्तान की ओर से घूमकर जाने की सोची थी। इसलिए हमारी उड़ान के बारे में दुश्मन को पता चलना असंभव था। सरहद के एकदम अंदर तक, उन दो हवाई-अड्डों के पास, हम बिना किसी उलझन के, बड़ी आसानी से पहुंच गये।

योजनानुसार ठीक पूर्व-निर्धारित समय पर हम अपने-अपने जहाज लेकर टारगेट्स के ऊपर पहुंच गये तथा उस क्षेत्र को ठीक से देखने के लिए, दो हजार फुट तक चढ़ गये।

दोनों हवाईअड्डों के बीच पंद्रह मील का फासला था। मैं और मेरे पीछे-पीछे शुक्ला, हम दोनों ने 'सितारा-दो' पर झुककर डाइव मारी।'

अब तक दुश्मन को हमारे आने की खबर लग ही गयी थी। उनके दो हवाई-जहाज, हवाईअड्डे के 'रनवे' पर उड़ान के लिए तैयार खड़े ही थे। हवाईअड्डे से हमारे जहाजों की ओर ऐंटी-एयरक्राफ्ट तोपों के गोले बरसने शुरू हो गये थे।

मैंने देखा, 'सितारा-दो' के करीब ही पेट्रोल की बड़ी भारी टंकियां थीं। "शुक्ला, तुम हवाईअड्डे पर खड़े जहाजों पर हमला करो, मैं 'रनवे' पर उड़ान के लिए तैयार जहाजों की खबर लेता हूं", मैंने रेडियो पर शुक्ला से कहा।

"ओके मोटे," उसने कहा।

पेट्रोल की टंकियों पर आग की लपटें!

तब तक दुश्मन का एक जहाज 'रनवे' से उड़ान कर चुका था। दूसरा उड़ान भरने के लिए 'रनवे' पर दौड़ लगा रहा था। मैंने फौरन उस ओर मुड़कर ऊपर से उस दौड़ते जहाज को निशाना बनाया, रॉकेट्स

छोड़े, उस पर और 'रनवे' से उड़ सकने के पहले ही उसे खत्म कर दिया । फिर मैं जहाज लेकर आकाश में ऊंचे उड़ गया ।

इतने में दुश्मन का वह जहाज, जो पहले उड़ चुका था, बड़ी चालाकी से मेरे पीछे आ गया ।

अचानक मेरा खयाल, उन पेट्रोल की बड़ी भारी टंकियों की ओर गया और मुझे एक चाल सूझी । ऊपर जाकर एक बम गिराया और फौरन आकाश में छह हजार फुट पर पहुंच गया ।

नीचे टंकियां प्रचंड विस्फोट के साथ धधक उठीं । मेरे पीछे-पीछे आनेवाला दुश्मन का वह जहाज उन लपटों में फंस जलकर खाक हो गया ।

इस धुएं की आड़ में छिपते-छिपाते, उड़ानकर, ऐंटी-एयरक्राफ्ट तोपों से बचना अब आसान हो गया था । ऊपर-नीचे, सब तरफ धुआं ही धुआं था ।

"शुक्ला, अब हमदोनों 'रनवे' पर सीधे उड़कर बमबारी करेंगे और फिर शेड्स, हैंगर्स और बिल्डिगों पर रॉकेट्स छोड़ेंगे, धुएं की तहों और स्तंभों के बीच उड़ान करना ताकि सब दिखता रहे ।"

वह कुछ पीछे रह गया । 'रनवे' पर आते ही उसने पहले छोर पर, मैंने बीचों-बीच, तथा उसने फिर आखिरी छोर पर बम गिराये और हम दोनों ने फौरन आकाश में ऊंची उड़ान भरी ।

उधर 'सितारा-एक' पर भावे तथा मिश्रा ने भी ऐसा ही तहलका मचाया हुआ था ।

और अचानक मुझ दुश्मन के वे चार जहाज आकाश में नजर आये । आसपास ही के, दुश्मन के किसी तीसरे हवाईअड्डे को, शायद हमारे हमले की सूचना प्राप्त हो गयी थी । वहीं से ये जहाज उनकी मदद के लिए आ पहुंचे थे । हमारे लिए एक और संकट आ खड़ा हुआ । "फोर एनिमी एयरक्राफ्ट ओवरहेड, लुक आउट ऐंड वॉच आउट"—भावे, मिश्रा तथा शुक्ला को मैंने सावधान किया ।

मिश्रा के पीछे लगा था दुश्मन का एक जहाज । भावे उस जहाज के पीछे गया और बिलकुल पास जाकर उसने दुश्मन के जहाज पर रॉकेट्स छोड़े । विस्फोट होकर वहीं विलीन हो गया वह जहाज । "वेल डन भावे", मैंने कहा ।

"थैंक्यू", उसने कहा और फिर एकदम चीखा, "वॉच आऊट, वन बिहाइंड यू ।"

मैंने फौरन जहाज पीछें घुमाकर देखा दुश्मन का दूसरा जहाज मेरे पीछे था ।

शुक्ला तुरंत मेरी मदद के लिए आया, लेकिन दुश्मन के तीसरे जहाज ने बीच में आकर उसे उलझा लिया ।

और, अब दुश्मन का चौथा जहाज भावे के पीछे लगा हुआ था । "वॉच आउट भावे, वन बिहाइंड यू"—मैंने उसे सतर्क किया ।

नीचे से ऐंटी-एयरक्राफ्ट तोपें जबर्दस्त गोलाबारी कर रही थीं, लेकिन अब दुश्मन के जहाजों ने भी हम पर रॉकेट्स

छोड़ने शुरू कर दिये थे। अब हम बुरी तरह फंस गये थे। अगर काले धुएं की ये मोटी-मोटी तहें तथा बड़े-बड़े स्तंभ न होते तो दुश्मनों ने हमें मार गिराया होता।

मेरे पीछे लगे दुश्मन के जहाज को मैंने चकमा देना शुरू किया। धुएं के एक बड़े भारी स्तंभ के इर्द-गिर्द मैं गोल-गोल घूमने लगा। वह मेरे पीछे-पीछे था। अचानक जहाज को पलटाकर मैंने उसे चकित कर दिया। अब हम आमने-सामने थे। मैंने तुरंत उस पर रॉकेट्स छोड़े। जहाज भड़क उठा और नीचे के काले धुएं में हमेशा-हमेशा के लिए खो गया।

अब मैं शुक्ला की मदद के लिए गया। उसके पीछे लगे दुश्मन के जहाज को मैंने अपने से उलझा लिया। उसे झांसा देकर शुक्ला से दूर ले गया।

दुश्मन के तीन जहाज खत्म हो चुके थे। लेकिन वह जहाज, काले धुएं का सहारा लेकर, मुझे ही झांसा दे गया था।

धुएं की मोटी तहों और बड़े स्तंभों की ओट में, न जाने कहां छिप गया था, छिपते-छिपाते उड़ता फिर रहा था। नजर नहीं आ रहा था।

काले धुएं की भूलभुलैयां-सी बन गयी थीं। उस पर दुश्मन के ऐंटी-एयर-क्राफ्ट तोपों की अंधाधुंध तूफानी गोलाबारी जारी थी। हम चारों इस तूफान में खो गये थे। दुश्मन का वह जहाज भी कहीं खो गया था।

"मोटे, व्हेयर आर यू ?" शुक्ला शायद मुझे ढूंढ़ते हुए मेरे पीछे-पीछे आ रहा था।

"चलो, 'सितारा-दो', पर चलकर हम दोनों अपना काम खत्म कर देते हैं, शेड्स, हैंगर्स और बिल्डिगें नष्ट कर देंगे, 'सितारा-एक' के करीब भी कुछ हैं, भावे तथा मिश्रा उनकी खबर लेंगे।"

हमने 'सितारा-दो' के शेड्स, हैंगर्स तथा बिल्डिगों पर हमला किया। सबको जमींदोज कर दिया।

'सितारा-एक' की ओर भी धुएं और

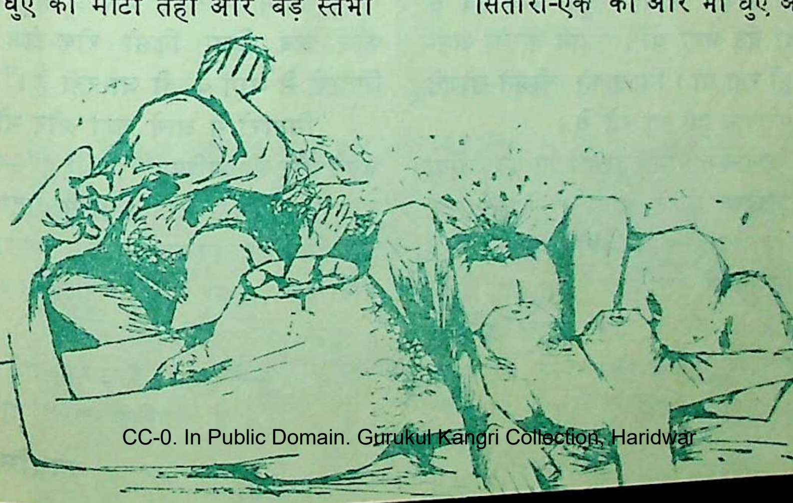

आग की लपटें उठ रहीं थीं। यानी भावे तथा मिश्रा दोनों अपना काम कर रहे थे।

ऐंटी-एयरक्राफ्ट तोपों से गोलों के विस्फोट जारी थे।

इतना बड़ा विध्वंस—हर चीज का तहस-नहस हो जाना, हिंसा, मौत का छिड़काव! क्या यह सब जरूरी था? मेरे अंतर्मन से ही मुझे जवाब मिला, "हां! बहुत जरूरी है यह सब। शत्रु का संहार करना ही सैनिकों का तथा वैमानिकों का कर्त्तव्य है। हम दुश्मन को न मारें तो वह हमको मार देगा।"

"मोटे,चलो लौट चलें,"शुक्ला ने कहा।

"ऑल राइट, चलो," मैंने जवाब दिया और कहा, "मिश्रा, भावे, चलो चलें।"

"सब काम खत्म हुआ, अब लौटने में हर्ज नहीं," भावे ने कहा।

मिश्रा का जवाब नहीं आया। हम तीनों ने बहुत खोजा उसे, पुकारते रहे उसे रेडियो पर, लेकिन न तो वह दिखा, न ही उसका जवाब आया। धुआं अब हद से ज्यादा बढ़ गया था। उड़ान करना असंभव हो रहा था। मिश्रा को खोजते-खोजते हम परेशान हुए जा रहे थे।

अचानक सामने दुश्मन का वह खोया हुआ जहाज नजर आया। मेरे दिमाग में बिजली-सी कौंध गयी। कहीं इसी ने तो मिश्रा को खत्म नहीं किया होगा?

मैं दुश्मन के उस जहाज पर टूट पड़ा और वह जलकर खाक हो गया।

"मिश्रा, मिश्रा... तुम कहां हो?" मैंने यूं ही रेडियो पर पुकारा लौटते-लौटते, जवाब की कोई उम्मीद नहीं थी!

... लेकिन ... अचानक रेडियो पर जवाब आया "मोटे आई एम विद यू ऑल!" आवाज मिश्रा की ही थी।

"... पहले तो मैं धुएं की इस भूलभुलैया में खो गया था और फिर रेडियो भी खराब हो गया था", उसने कहा।

"थैंक गॉड," शुक्ला और भावे की आवाज आयी।

"थैंक हेवंस," मैंने कहा और पूछा, "आर यू सेफ ऐंड साउंड?"

"ऐबसोल्यूटली ओके, मोटे", उसने जवाब दिया। हम सब लौट आये।

दूसरे दिन सुबह हम फिर अगली उड़ान की तैयारी में ब्रीफिंग-रूम में बैठे हुए थे। "मुझे कतई उम्मीद नहीं थी कि उड़ान ऐसी, पूरी तरह सफल होगी और तुम सब सकुशल वापस लौटोगे, बट गॉड इज ग्रेट," विंग कमांडर जौहरी ने कहा।

इतने में एक संदेश आया, "हिंदुस्तानी फौजें अब बिना किसी रोक-टोक के सितारों से आगे बढ़ती जा रही हैं।"

"सितारों से आगे जहां और भी हैं चमन और भी आशियां और भी हैं"—भावे बुदबुदाया। मैंने खिड़की में से बाहर की ओर देखा। सावन कब का बीत चुका था। भादों पूरे जोर पर होने की वजह से आसमान भर आया था।

—'रेनुका', वेस्ट हाईकोर्ट रोड
सिविल लाइंस, नागपु

काकेशस आ मिला हिमालय से

स्थान : बिलिशी (त्बिलिशी), जार्जिया गणराज्य
समय : मई का दूसरा सप्ताह
क्षेत्रफल : ६९,७०० वर्ग-किलोमीटर
जनसंख्या : ५० लाख, बिलिशी : ९० लाख

• राजेन्द्र अवस्थी

उस दिन हलके मेघ छाये थे और लेंनिनग्राद से लंबी हवाई-यात्रा के बाद जब हम जार्जिया गणराज्य की राजधानी बिलिशी (अंगरेजी में इसका आरंभ 'टी' से होता है, इसलिए कई लोग त्बिलिशी कहते हैं, वास्तविक उच्चारण बिलिशी है) पहुंचे तो पानी बरसने लगा था। रात हो गयी थी और होटल के कमरे में हम पहुंचे तो होटल का रसोईघर बंद हो चुका था, भूखे रहने के सिवा कोई चारा नहीं था। भूख जोरों की लगी थी। छठवीं मंजिल से खड़े होकर एक व्यर्थतता-सी चेतना के साथ हम बाहर देख रहे थे। एक नदी शहर को दो भागों में बांटते हुए बह रही थी—नदी का गंदा पानी और पक्के मजबूत बंधे हुए किनारे! दोनों ओर दूर-दूर तक फैला शहर; आबादी केवल १० लाख, लेकिन जार्जिया गणराज्य की राजधानी!

अचानक दरवाजे पर दस्तक हुई—एक वृद्ध ने दरवाजे से झांककर हमें देखा और फिर बेहिचक भीतर चला आया। वह रूसी में कुछ कहने लगा, हमारा दुभाषिया परेशान यहां-वहां शायद हमारे लिए कुछ खाना जुटाने की फिक्र में भाग रहा था। भाषा की

जार्जिया का एक विहंगम दृश्य

बिलशी का वृद्ध

कठिनाई आदमियों को कितना दूर रखती है, न मुझे रूसी आती, न उसे अंगरेजी या हिंदी। तब भी मुझे लगा दुभाषिये के आने तक उसे रोका जाए। सोच ही रहा था कि कुमुत्सिन मिशा ने प्रवेश किया, निराश मुड़ा—खाना नहीं मिला। न सही, इस व्यक्ति से बात तो हो जाए। वह जानबूझकर हमारे कमरे में आया था, उसे पता चला था कि भारतीय लेखक आये हैं। उत्साह के साथ उसने कहा, "स्वागत है, आप नेहरू के देश के हैं।" दुभाषिये के जरिए उसकी धाराप्रवाह बातों का अर्थ मैं सुन रहा था—नेहरूजी आये थे और सामने के मैदान में उनका भाषण हुआ था। उसे उनकी शेरवानी और लाल गुलाब का फूल आज भी याद है। इसी प्रसंग में उसने राजकपूर की चर्चा की और बताया कि बिलिशी की सड़कों में एक हाथ से टोपी उठाये और नाचते-गाते उसने राजकपूर को देखा है। 'मैं आवारा हूं' गीत अपने उच्चारण में दोहराते हुए उसने कहा, 'निहायत जिंदादिल आदमी हैं... कैसे हैं वह? अब कहां हैं? क्या करते हैं?' ढेर-से प्रश्न राजकपूर के बारे में पूछ डालें। फिर अचानक वह चला गया, हमारे हाथ खाली ही रह गये—जैसा आया था, वैसा ही वह चला भी गया। जाने के बाद पता चला वह उस होटल का इलेक्ट्रिकल इंजीनियर है। मिशा परेशान मुझे देख रहे थे।

"कोई बात नहीं," मैंने कहा, "सफर में कभी ऐसा भी होता है।" रूस में साढ़े दस बजे सारे होटल बंद हो जाते हैं। देर कर दी हमारे विमान ने, जिस पर किसी का वश नहीं। रूस की भीतरी विमान-सेवा अच्छी नहीं है। देर-सबेर कभी भी आप चलें, कितनी भी दूर चलें, खाना नहीं मिलेगा। रूस इतना बड़ा देश है कि मास्को से साइबेरिया के किनारे तक पहुंचने में विमान में ७ घंटे लगते हैं, जबकि भारत ४ घंटे में पहुंचा जा सकता है। एक ही देश में समय का भी अंतर है—मास्को और ताशकंद, बाकू, बिलिशी और साइबेरिया के शहरों में काफी बड़ा अंतर है। एक ही समय पूरे देश में नहीं है, इसलिए एक शहर से दूसरे शहर

बातें करने के पहले समय का ध्यान रखना होता है । हां, टेलीफोन सेवा बेहद अच्छी है। पब्लिक काल बूथ से भी देश के किसी भी भाग में टेलीफोन किया जा सकता है । टेलीफोन करने की कीमत भी बहुत कम है । प्रत्येक होटल के प्रत्येक कमरे में अलग नंबर का अपना अलग टेलीफोन होता है और कितने भी टेलीफोन कीजिये, चार्ज नहीं देना पड़ता ।

मिशा प्रयत्न कर रहे थे कि फोन पर स्थानीय दुभाषिया मिल जाए तो खाने का कुछ प्रबंध हो जाए । इसी बीच फिर अचानक दरवाजा खुला और उस बूढ़े आदमी ने जोश से अंदर प्रवेश किया । उसने हमारे टेबुल पर वोदका की एक बोतल रख दी, फिर अखबार खोलकर बिछा दिया—ढेर-से ब्रेड के टुकड़े, मक्खन, चीज, सूअर का गोश्त और कुछ चटनी की बंद पुड़ियां। मेरी ओर देखकर उसने दोनों हाथ हवा में हिलाये और कहा, "मुझे भारत से प्यार है। मैं नहीं चाहता था, मेरा भारतीय दोस्त भूखा रहे, लेकिन रसोईघर में यही कुछ बचा था ।" उसने मेरा चेहरा पकड़ लिया और मेरे गालों में लगातार चार-पांच बार चुंबन लिये । कह नहीं सकता मेरा मन कितने कृतार्थ से भरा था। थोड़ी देर तो खुशी के मारे मैं कुछ कह

बिलशी के पास तबित करेजी के उत्सव में बैठे दर्शक। सामने हैं लेखक की बायीं ओर जार्जिया के प्रख्यात कवि अवासिज्दे। इनके ठीक पीछे हैं सैनिक टोपी में रूस के प्रतिरक्षा मंत्री। उनके साथ ही सैनिक टोपी में हैं जार्जिया के प्रधानमंत्री।

ही नहीं सका, जब वह जाने लगा तो मैंने गले में पहनने की स्त्रियों की एक माला और एक कंगन उसे भेंट किया । मैं अब भी उसकी आंखें जैसे देख रहा हूं, उन्हें देखते हुए उसने कहा, "मेरी पत्नी बहुत सौभाग्यशाली है । उसे ये चीजें कभी नहीं मिल सकती थीं ।" उसने दूसरे दिन अपने घर आने का निमंत्रण भी दिया ।"

दूसरे दिन हम उसके यहां जा तो नहीं सके, परंतु अब भी कृतार्थ-भरी मुद्रा में हम यहां से उसकी शक्ल देख रहे हैं, 'ईश्वर उसे लंबी उमर दे ।'

●●

अगले दिन रविवार था और हमें एक लंबी यात्रा में जाना था—बिलिशी से सौ किलोमीटर दूर तवित करेजी । लगातार मोटरों का तांता उस ओर जा रहा था । रास्ता एकदम कच्चा और कई जगह तो काकेशियन पर्वत की परतों पर से गुजरता हुआ । ऊबड़-खाबड़ रास्ते से हमें कहां पहुंचना है ! सब पागलों की तरह कहां बढ़े जा रहे हैं । तीन घंटे के बाद कार रुकी तो पर्वत की चढ़ाई शुरू हुई । पगडंडी और चढ़ाई-भरा रास्ता—लगता था हम अनंत दिशाओंकी ओर बढ़े जा रहे हैं । मैं बार-बार पूछता था, 'और कितनी दूर जाना है, उत्तर मिलता था, 'बस, थोड़ा और ।' थोड़ा करते-करते पैर थककर चूर हो गये और हम खंडहरों में जाकर उतरे। बहुत सामान्य से खंडहर, भारत में ऐसे खंडहर कहीं भी देखे जा सकते हैं । क्या इन्हें देखने के लिए ही हम इस अनंत यात्रा में निकले थे ! मेरा आक्रोश बढ़ रहा था और मैंने अपने दोनों दुभाषियों से वह प्रकट भी किया । बाद में पता चला जार्जिया के लोगों के लिए यह महत्त्वपूर्ण दिन है और मैं भाग्यशाली हूं, यह देखने को मुझे मिल रहा है । सन १९०६ में तुर्कियों ने जार्जिया पर हमला किया था और इन दूर-दराज पहाड़ों की गुफाओं में रहने-वाले ६०० पादरियों को कत्ल कर दिया था । उन निर्दोष पादरियों के कत्ल किये जाने की स्मृति में यहां प्रतिवर्ष मई के दूसरे सप्ताह में पड़नेवाले रविवार को यह मेला लगता है । जार्जिया के लोग पागलों की तरह यहां भागे आते हैं । इस मेले को तवित करेजी कहते हैं ।

खंडहरों को देखकर हम नीचे उतरे, वहां लकड़ी का एक स्टेज बना था । बैठने के लिए कुरसियां थीं। सूरज थोड़ा नीचे उतरा तो समारोह शुरू हुआ । नीचे से ऊपर देखें तो नजारा ही और है—घोड़ों पर सवार भाले लिये रंग-बिरंगी पोशाक में लोग यहां-वहां खड़े थे । उनके हाथों में तलवारें थीं और ढालें भी । ढोल बज रहे थे, तुरही भी । रंग-बिरंगी पताकाएं उड़ रही थीं । स्टेज के नीचे कुरसी पर मैं बैठा तो मेरा परिचय कराया गया जार्जिया के प्रधानमंत्री श्री तातारिज से । उन्हीं के पास बैठे थे

लेखक के साथ रूसी लेखक संघ में अफरीकी और एशियाई देशों के लेखकों से संपर्क रखने वाली अधिकारी मीरा शैलगानिक

रूस के उप-प्रतिरक्षा मंत्री । दूसरी ओर श्री अवाशिज्दे। श्री अवाशिज्दे जार्जियन कम्युनिस्ट पार्टी के प्रथम सचिव हैं और बहुत बड़े कवि । मास्को में मुझे बताया गया था, मैं श्री आवाशिज्दे से जरूर मिलूं। उन्हें अंगरेजी नहीं आती, इसलिए दुभाषिये के जरिये सारी बातें हुईं । उनका गला बैठा था । वे हलके बीमार थे । वह भारत आ चुके हैं और 'रुस्तलेली के पदचिह्न' कविता-संग्रह पर उन्हें अपने देश में नेहरू पुरस्कार मिल चुका है । मेरा परिचय पाकर वह बेहद खुश हुए और रूसी मेहमाननवाजी के हौसलों को बरकरार रखते हुए उन्होंने दूसरे दिन अपने यहां भोजन के लिए आमंत्रित कर दिया । जार्जिया के प्रधान मंत्री श्री तातारिज बहुत मिलनसार थे। उन्होंने गले लगाया और मुझे निमंत्रण दिया कि मैं अगली बार जरूर आऊं और ज्यादा दिन जार्जिया में गुजारूं । उन्होंने यह भी कहा कि जब भी मैं आना चाहूं, उन्हें पत्र लिख दूं, वह सारा प्रबंध कर देंगे ।

सामने स्टेज पर रंग-बिरंगे नृत्य और अभिनय के कार्यक्रम शुरू हुए । जार्जिया गणराज्य नृत्यों के लिए प्रसिद्ध है । इन नृत्यों में युद्ध की वेशभूषा होती है और वे पौरुष से भरे होते हैं। वहीं ६०० वर्ष पहले की घटना के दर्दनाक दृश्य को दोहराया गया और शपथ ली गयी, ऐसा हम कभी नहीं होने देंगे ।

जार्जिया पहले ईसाई धर्मप्रवण राज्य

था। कहते हैं, पांचवीं सदी में विलिशी शहर को श्री बखतांग कोरगासा ने बसाया था। २५ फरवरी, १९२१ को जार्जिया महान रूसी गणराज्य का एक हिस्सा बना। इसके पीछे भी एक असहाय स्थिति है। मुझे बताया गया कि यहां के लोग ईसाई धर्म मानते थे। यह उनका अपना अलग राज्य था। उनकी चर्चें थीं और अपनी प्रशासनिक व्यवस्था। जार्जिया की सीमा ईरान और तुर्किस्तान से मिलती है। ईरान और तुर्क जब-तब जार्जिया पर हमला कर देते थे और जमीन हड़पकर अपने कब्जे में कर लेते थे। यहां के अधिकांश लोग चूंकि ईसाई धर्म को मानते थे, उन्हें भय हुआ कि धीरे-धीरे मुसलमान उन्हें धर दबाएंगे और वे सब धर्म-परिवर्तन के लिए मजबूर कर दिये जाएंगे। उस समय रूस की स्थिति भिन्न थी—वहां का धर्म ईसाई था। (अब रूस धर्मंहीन राज्य है) जार्जिया के प्रशासकों को लगा रूस के हाथों ही वे सुरक्षित रह सकते हैं। उन्होंने तत्कालीन रूसी सत्ता से समझौता किया, उस सत्ता ने विश्वास दिलाया कि जार्जिया के लोगों की रक्षा की जाएगी और ईसाई धर्म को पनपने का पूरा अवसर दिया जाएगा। उन्होंने टूटी चर्चों का उद्धार किया और जनता के विश्वास को मजबूत किया, लेकिन यह बहुत समय तक नहीं चल सका, निर्देश दिये गये कि महान रूसी राज्य के नियमों और व्यवस्थाओं के परे जार्जिया नहीं जा सकता। मुझे बताया गया कि जार्जिया की जनता दु:खी है, उसे अपना ईसाई धर्म सुरक्षित नहीं रखने दिया जा रहा है। चर्च अब मात्र सैलानियों के लिए रह गये हैं।

जो हो, सूरज डूबने के साथ ही जोर से तुरही बजी। सब खड़े हो गये—रूसी राज्य के शासकीय गीत की धुनें बैंड के साथ बजने लगीं और सब लोग उठकर खड़े हो गये। संगीत समाप्त होते ही सभी लोग भागने लगे—पहाड़ी रास्ता और उतरती शाम।

मेरे मन में अब भी पौरुषयुक्त जार्जिया के लोकगीतों की छवि शेष थी—उनकी संस्कृति वृहत्तर भारतीय धरती से बहुत कुछ मिलती-जुलती थी। भाषा के अज्ञान के बावजूद उनके माधुर्य और उनकी तेजस्विता को समझा जा सकता था। जंगली पोशाकें और शिकारगाहों की छवियां सहज ही अंकित हो जाती हैं।

शाम अभी उतरी है, लेकिन एक दूसरा चरण शुरू हुआ है—इस स्थान से २०–२२ मील दूर काकेशस पर्वत के एक शिखर मैदान में जंगली भोज का आयोजन। एक तंबू लगाकर पहले ही यह व्यवस्था की गयी थी। वहां जार्जिया के सभी लेखक उपस्थित थे। उन्हें मेरे आगमन की सूचना थी। एक लेखक ने खड़े होकर 'भारत के नाम' और 'मेरे नाम' शराब का जाम ढाला। 'नजदोरोविया' (चीयर्स)। जार्जिया तरह-तर

की अंगूरी शराब के लिए विख्यात है, यहां की शराब (वाइन) समूचे रूस में मजे के साथ स्वाद लेकर पी जाती है। सैकड़ों बोतलें वहां रखी थीं। तरह-तरह की हरी सलादें टेबलों पर सजी थीं–मास्को में हरी सलाद एक सपना है। कई तरह के ब्रेड और सब्जियां, गोश्त, कवाब !

शराब के दौर चल रहे थे और भाषण भी हो रहे थे —'भारत एक महान देश है और उस महान देश के मित्र-लेखक का हम स्वागत करते हैं।' जार्जियन भाषा में कहे गये इस वाक्य का दुभाषिये ने हिंदी में अनुवाद किया।

मैंने हिंदी में उनका आभार माना, उस शाम के नाम रूस और भारत की दोस्ती के पैगाम दिये, दोस्त-लेखकों को धन्यवाद दिया और ऐसा अवसर जो जिंदगी में कभी-कभी आता है, आज मिला है, अनभूला रहेगा, इन शब्दों के साथ मैंने कुछ पंक्तियां सुनायीं :

सूरज की रोशनी में उगा दिन
परेशान कर रहा था
तीतर-सा——
अलसाई शाम की छाया में
थकन, घुटन, दर्द और
दुख के आंसू——
सबने आकर एक साथ पी लिए,

दोस्तों की दुनिया
नहीं जानती भाषा के भेद,
वर्ण-व्यवस्थाएं
संकरी गलियां भी

आज
काकेशस सीधे जा मिला है——
हिमालय से !

तालियां......तालियां !

इसके बाद जार्जियन कवियों की कविताओं के दौर और सभी के संकेत भारत की ओर और मेरी ओर ! सांझ उतरकर रात में बदल गयी, फिर आधी रात हुई और किसी को खबर नहीं, कौन कहां है ? अंगूरी शराब सब पर हावी थी। हम जब अपने दुभाषिये के साथ चलने लगे तो जार्जिया की परंपरा के अनुसार उन्होंने दो बोतलें शराब की भेंट की और दो-दो हाथ लंबी, गोल—ढेर-सी रोटियां !

फिर
——द्रास्तोवित्ये (नमस्कार)
——उरा (जिंदाबाद)
——स्पेसीबा (धन्यवाद)
और
——दस्वीदानिया !
——दस्वीदानिया !

एक-दूसरे के हाथ में हाथ, अनगढ़ उचटन, बेतरतीब नृत्यों के कतरे और भाव भरी विदाई की वह रात, जो बिलिशी पहुंचते-पहुंचते फिर झपी पलकें खोलकर अंगड़ाई लेने लगी थी

—सबेरा उतर आया था। ●

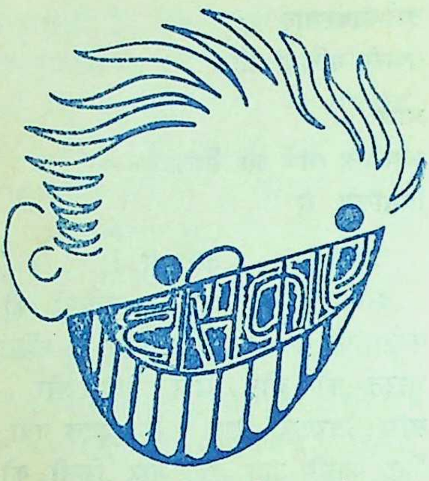

एक पैंसठ-वर्षीय पति अपनी जवान पत्नी के साथ हनीमून मनाकर लौटा। लौटते ही उसकी पत्नी भागती हुई डॉक्टर के पास गयी और पूछने लगी, "डॉक्टर-साहब, जब हमारा विवाह हुआ था तब आपने मेरे पति का आपरेशन किया था। मैं उसके बारे में जानना चाहती हूं।"

डॉक्टर ने कहा, "साधारण-सा आपरेशन था। हमने सिर्फ उसमें बंदर के नये ग्लैंड लगा दिये थे।"

नवविवाहिता ने उसांस भरकर कहा, "मुझे इसी का अंदेशा था, क्योंकि सारे ट्रिप में उन्होंने केवल उकड़ूं बैठकर मूंगफली चबाने और अपनी पीठ खुजलाने के सिवा कुछ नहीं किया।"

★

फौज का एक खानसामा मेस में रात का डिनर तैयार कर रहा था। उसी वक्त एक अफसर ने आकर उससे कहा, "तुम्हें बत्तीस आदमियों का खाना और तैयार करना है, क्योंकि नये रंगरूट आये हैं।"

खानसामा चिल्लाया, "अरे जवान, सूप में दो बाल्टी पानी और डाल दो !"

★

"तुमने इसके पूरे सौ रुपये दिये हैं", पति चिल्लाया, "और तुम इसे सिर्फ एक मामूली ओढ़नी कह रही हो। मैं कहता हूं इस पर इतने पैसे खर्च करना पाप है।"

पत्नी ने अपनी आवाज में शहद घोलते हुए कहा, "डार्लिंग, फिक्र न करो, यह पाप मेरे सिर रहेगा !"

★

एक व्यक्ति को आफिस में एक गुमनाम खत मिला जिसमें लिखा था कि उसके घर में रहनेवाला विद्यार्थी उसकी पत्नी का भाई नहीं है।

पति को इस बात का पहले से शक था। वह अपना कोट पहनकर घर भागा। जैसे ही पत्नी ने दरवाजा खोला, वह तुरंत चिल्लाया, "अब मैं सब कुछ जानता हूं।"

पत्नी ने शांतिपूर्वक उत्तर दिया, "बहुत अच्छा, तब मुझे बताओ कि पानीपत का युद्ध कब हुआ था, ताकि मेरा भाई अपना होमवर्क पूरा कर सके।"

★

फौजी अकादमी का एक शिक्षक क्लब में बीयर का घूंट भरता हुआ एक दोस्त के सामने अपना दुखड़ा रो रहा था, "यार, मेरी समझ में नहीं आता कि माजरा क्या है! जब मैं अकेला होता हूं तब मुझे कोई सैल्यूट नहीं करता।

जब पत्नी मेरे साथ होती है तब आधी अकादमी मुझे सैल्यूट करती है। लेकिन जब मेरी बेटी साथ होती है तब सभी कैडेट सैल्यूट मारने आ जाते हैं।"

एक विवाहिता महिला किसी पुस्तक-विक्रेता के पास गयी और सफल-गृहिणी पर एक पुस्तक खरीदी। दुकानदार ने अवसर का लाभ उठाते हुए रसोई-शिक्षा पर एक पुस्तक महिला को थमा दी। बिल देने के लिए जब उसने बटुआ खोला, तब दुकानदार ने बच्चे पालने पर एक नयी पुस्तक महिला के सामने रख दी।

★

"तुम्हारा गाने का अभ्यास कैसा चल रहा है ?"

"आजकल तो मुझे अपनी कार से ही फुरसत नहीं मिलती।"

"कार! कार कब ली तुमने ?"

'पिछले हफ्ते।"

"कितने में ?"

"रुपये नहीं देने पड़े। अपने हारमोनियम के बदले में ली है।"

★

कुछ बेल्जियन कहावतें

- जब दो जने शर्त बदते हैं, तो उनमें से एक मूर्ख होता है और दूसरा चोर।
- गृह-निर्माण करनेवाले के पास दो तिजोरियां होनी चाहिए।
- मूर्ख बेचनेवाले की तुलना में मूर्ख खरीदनेवाले ज्यादा होते हैं।
- जो उपदेश देता है, वह आर्थिक सहायता कभी नहीं देता।
- ईश्वर चंगा करता है, यश डॉक्टर को मिलता है।
- इतिहास केवल दुखी प्रजा का हुआ करता है, सुखी प्रजा का नहीं।

हंसिकाएं काव्य में

आजीविका

"आपका बेटा काम क्या करता है ?"
"बचपन में चंदा मांगा करता था अब
भी वही—चंदा मांगा करता है!"

भेद

नेता को बिठाकर
सिक्कों से तौला गया
उनके तुलने पर,
भेद यह खुल गया—
चंद सिक्कों में ही नेता तुल गया

शहरी सांप

दूध पीकर जहर उगलते हैं
शहरों के सांप
आस्तीन में पलते हैं

सच्चा मित्र

सच्चे मित्र की परख यही—
मंच पर पहुंचते ही गालियां बकते हैं
अन्यथा नहीं

पोस्टर

सुरक्षा-सप्ताह मनाएं
पास ही लिखा था—
'केवल महिलाएं'

बलि के बकरे

जाने दो—
जुलूस जाने दो
बलि के बकरे हैं—थोड़ी देर
इन्हें चिल्लाने दो

—डॉ. सरोजनी प्रीतम

सितारे चहचहाते हैं

व्यर्थ का आरोप

• मशकूर हुसैन 'याद'

हमारी एक क्लास-फेलो हैं। नाम है उनका, करीना बानो। वह २५ जनवरी से २४ फरवरी के मध्यवर्ती अवधि में किसी दिन पैदा हुई थीं। उनसे हमारी पहली मुलाकात की घटना सुन लीजिए। हम नये-नये लाहौर में आये थे। घर में सभी रिश्तेदार जमा थे। मौसी, मौसा, मामा, मामी, फूफा, फूफी, चाचा, चाची। और तो और उस दिन दादाजी भी कराची से तशरीफ ले आये थे। करीना बानो साहिबा हमारे पड़ोस में रहती थीं। वह भी पधारीं। अपना परिचय आप कराया। हमने जो उनकी ओर आंख उठाकर देखा तो एकदम कहने लगीं, "मैं सब समझती हूं। आप मेरी ओर क्यों देख रहे हैं।"

"आपने मुझसे कुछ कहा ?" हमने घबराकर पूछा।

"जी हां, आपसे।" वह बोलीं।

"क्षमा कीजिए। यूंही नजरें उठ गयीं।"

"नहीं, साहब, यह बात नहीं। आप मुझ पर आसक्त होनेवाले हैं।"

"हाय खुदा ! यह आप क्या कहे जा रही हैं।"

"मुझे यह भी अच्छी तरह पता है कि जो लोग इस प्रकार खुले तौर पर 'हाय खुदा' कहा करते हैं। वह जरूर दिलफेक किस्म के लोग होते हैं।" करीना बानो ने जब अपने पुरुष-पारखी और मनोवैज्ञानिक होने का प्रदर्शन इस प्रकार किया तो दादाजी ने हमारा पक्ष लेते हुए कहा, "अरे बेटा ! मेरा यह पोता तो बहुत भोला-भाला है।"

"मान्यवर ! आप चुप ही रहें तो अच्छा है। मैं आपकी नजरों को भी खूब समझती हूं। आप भी कुछ कम

दिलफेंक नहीं है ।

"इसका मतलब मैं आपको बुरी नजर से देख रहा हूं", दादाजी ने विस्मित होकर पूछा ।

"मैंने यह कब कहा । दिलफेंक लोग जरूरी नहीं कि बुरी नजर से देखते हों । यूं भी तो कहा जा सकता है कि आप मुझे प्रेम-भरी नजरों से देख रहे हैं ।" दादाजी इस उत्तर पर बौखला गये । बाद में पता चला कि जो लोग २५ जनवरी और २४ फरवरी के मध्यवर्ती अवधि में पैदा होते हैं, उनमें अन्य लोगों के दिलों का हाल मालूम करने की खूब विशेषता होती है ।

अति संवेदनशील

ये लोग हद से अधिक संवेदनशील होते हैं । फहीम चाचा बोले, "बेटा ! हद से अधिक संवेदनशील कौन नहीं होता । जो भी जरा आदमी का बच्चा है, वह संवेदनशील अवश्य होगा ।" हमने निवेदन किया, "आदरणीय, संवेदनशील होने में अंतर है । हमारी सहेली करीना बानो को ही देखिए । वह उस दिन से दादाजी से नाराज है। कहती है, 'मैंने मान्यवर दादा को अपना दिलफेंक प्रेमी समझा और वह प्रेमी बन भी रहे थे, पर साफ इंकार कर गये । बुजुर्गों का झूठ बोलना कहां तक क्षमा-योग्य हो सकता है । रहा यह कि बूढ़े आदमी में प्रेम करने की हिम्मत नहीं होती, बिलकुल गलत बात है । मैं इसे हरगिज स्वीकार नहीं कर सकती । मैं कसम खाकर कह सकती हूं कि दादाजी उस दिन मुझे भरी महफिल में एक प्रेमी की तरह ताड़ रहे थे, बल्कि सच पूछिए तो उनके पोते साहब उन भरपूर नजरों से नहीं देख रहे थे, जिन प्रेम-भरी नजरों से वे महाशय मेरी ओर दीदार-मग्न थे ।'

प्रेम यथासंभव गोपनीय

पर मजे की बात यह कि इस अवधि में पैदा होनेवाले महाशय दूसरों के दिलों के भेद तो खुले आम खोल देते हैं, अपने दिल का भेद किसी पर प्रकट नहीं होने देते । अपने प्रेमी को यथासंभव गोपनीय ही रखते हैं । करीना बानो किस से प्रेम करती है आज तक यह पता न चल सका। वैसे हमारे नानाजी

को संदेह ही नहीं, बल्कि पूर्ण विश्वास है कि वह उन पर मन-प्राण से आसक्त है। नानाजी का कहना है कि वह लड़की उन पर मोहित न होती तो उनकी घनी दाढ़ी की प्रशंसा इस प्रकार कभी न करती जिस प्रकार वह सामान्य रूप में करती है। यदि किसी युवती की दृष्टि किसी बूढ़े मर्द की दाढ़ी में उलझ जाए तो समझ लीजिए वह उसके प्रेम में फंस गयी है।

उसी तीव्रता से घृणा

ये लोग जिस तीव्रता के साथ प्रेम करते हैं, उसी तीव्रता से घृणा भी करने लगते हैं। हमारी एक मौसेरी वहन हैं, उनका नाम श से शुरू होता है। इनकी जन्म-तिथि चार फरवरी है। पहले अपने एक सहपाठी से प्रेम करती थीं। उसके लिए हर प्रकार की कुर्बानी देने को तैयार थीं। एक वार उससे किसी बात पर नाराज हो गयीं। अब उसका नाम सुनना भी सहन नहीं करतीं, बल्कि इस जलन में उन्होंने एक तोता पाल लिया है और उससे वह वेहद प्यार करने लगी हैं। कहती हैं, "लोग तोते को वेवफा बताते हैं, पर यह गलत है। इंसान से बढ़कर कौन जल्दी आंखें बदल सकता है।" यह तो खैर गुजरी कि महोदया श. खाते-पीते घराने से संबंध रखती हैं। यदि निम्न वर्ग से उनका संबंध होता तो यही घृणा दुश्मनी का रूप धारण कर सकती थी। हमारी एक धोबन इनकी हमउम्र है, वह जितना अपने पति से प्यार करती थी, आजकल उतनी ही उसकी दुश्मन बनी हुई है। एक दिन तो उसने पति के चेहरे पर जलती हुई इस्तरी फेर डालने की कोशिश की। वह तो ऐन समय पर उसकी आंख खुल गयी। धोबन खुले तौर पर कहती फिरती है कि अगर एक दिन उसने मियां का पटरा न कर दिया तो 'धोबन की जाई' न कहना।"

अशांत चित्त

इस समय में पैदा होनेवाले लोग अस्थिर स्वभाव के होते हैं। क्षणभर भी आराम से नहीं बैठते। इसी लिए सदा स्वयं को एक वोझ तले दबा हुआ पाते हैं। एक दिन करीना बानो हमारे साथ चली जा रही थीं। बड़ी निढाल-निढाल और उदास-सीं। हमने इस थकन का कारण पूछा। कहने लगीं, "कारण तो मालूम नहीं, बस ऐसा महसूस हो रहा है, जैसे मैं किसी तांगे की घोड़ी हूं या किसी बैलगाड़ी की गाय!" हमने कहा, "बैलगाड़ी में तो बैल ही जोता जाता है।" बोलीं, "वाह! मैंने बैलगाड़ी में गाय जुती देखी है।"

"फिर उसे बैलगाड़ी न कहिए, वह तो गाय-गाड़ी हुई!" हमने बात को खत्म करने के लिए कहा, "क्योंकि इस अवधि में पैदा होनेवाले महाशयगण बहस के बड़े शौकीन होते हैं। दूसरों को कायल करके उन्हें बहुत खुशी प्राप्त होती है, पर स्वयं कभी कायल नहीं होते।"

गुणों का उजागर जिम्मेदारी पर

इन व्यक्तियों की एक विशेषता है, जब तक इन पर कोई जिम्मेदारी न डाली जाए, तब तक अपने गुणों को उजागर नहीं कर सकते। एक बार बहुत बड़े आदमी हमारे महल्ले में आये। उन्होंने करीना बानो के जिम्मे यह काम सौंपा कि वह महल्ले के घरों से बेकार चीजें बाहर करवायें। बस फिर क्या था, इन महोदया ने सारे महल्ले की वह सफाई कर डाली कि रहे नाम खुदा का। हमने पूछा, "करीना बेगम! आपने अपने घर से बेकार चीज क्या निकाली?" कहने लगीं, "अपने घर की सबसे बेकार चीज तो मैं हूं।" मतलब यह कि ये लोग हजार चहल-पहल की जिंदगी बिताने के बावजूद अकेला अनुभव करते रहते हैं।

खोजी स्वभाव

इन लोगों में आविष्कार और खोज की बेहद योग्यता विद्यमान होती है। यदि हम बड़े-बड़े आविष्कार करनेवालों की आत्मकथाएं उठाकर देखें, तो हमें पता चलेगा कि उनमें से सभी व्यक्ति इसी समय पैदा हुए। कहते हैं कि बिजली के सामान के आविष्कार में विशेष रूप में ये लोग प्रमुख स्थान रखते हैं। नानाजी एकदम चमककर बोले, "करीना बेगम हाथ भी लगा दें, तो शरीर में बिजली का करेंट दौड़ने लगता है।" दादाजी भी पास बैठे थे, जल्दी से बोले "अमां भाई साहब! रहने भी दीजिए। करीना बेगम पर क्या निर्भर है। मैं समझता हूं हर औरत में बिजली की तरह करेंट मारने की विशेषता मौजूद होती है।"

"पर मेरी बीवी में तो यह विशेषता मौजूद नहीं।"

"वह तो मेरी बीवी में भी नहीं। औरत के जिक्र में आप बीवियों का जिक्र क्या ले बैठे। बीवियां तो केवल बीवियां होती हैं। औरत उनमें कहां

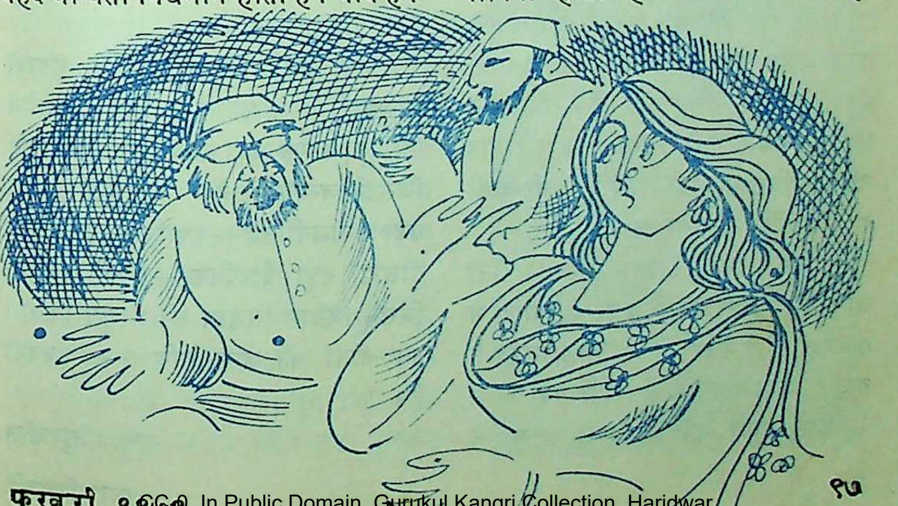

बाकी रहती है। एक तीसरे बुजुर्ग महाशय की ओर इस अंदाज में देखा कि यह बात ठीक नहीं है तो वह हमसे कहने लगे, "अरे बेटा! तुम हमारी बातें क्या सुन रहे हो। जवान आदमी का दृष्टिकोण ही भिन्न होता है। जाओ अपना काम करो। हम बूढ़ों को अपनी बातें करने दो।" नानाजी तिलमिलाकर बोले, "मैं यह किसी तरह मानने के लिए तैयार नहीं हूं कि मर्द बूढ़ा होता है। मुझे ही देख लीजिए। मैं आज भी उसी तरह जवान हूं जिस तरह आज से चालीस साल पहले था।" इस पर दादाजी ने कहा, "मियां क्यों गप हांक रहे हो, कुछ खुदा का भय भी करो।"

आंखों में खास चमक

उन लोगों की आंखों में दूसरों को प्रभावित करने की खास चमक होती है। नानाजी बोले, "अरे बेटा! किसकी आंखों में चमक नहीं होती। मुझे ही देख लो। मैंने एक बार ही करीना को अच्छी तरह देखा था। किस तरह उठते-बैठते मेरा जिक्र करती रहती है। क्या मैंने उसे प्रभावित नहीं किया? और अगर वह प्रभावित न होती तो मेरी घनी दाढ़ी की किसलिए प्रशंसा करती!"

"पर नानाजी क्षमा करें। करीना आपकी दाढ़ी से प्रभावित हुई है, आंखों से तो नहीं।" वे फिर बोले, "वाह साहब! वाह! आप समझते हैं दाढ़ी का आंखों से कोई संबंध नहीं। हमारी आंखों ने उसकी आंखों पर जादू किया। उस नतीजे में उसकी नजरें उठीं और हमारी दाढ़ी पर कुर्बान हो गयीं।"

दूसरों के लिए कमाते हैं!

कहते हैं, इस समय में पैदा होनेवाले, अपने मुकाबले में दूसरों के लिए अधिक दौलत कमा सकते हैं। दुनिया के मजदूर इसी समय में पैदा होते हैं। ऐसा न होता तो मालिकों के पास उनसे अधिक दौलत कैसे जमा हो सकती।

इन महाशयों को मटियाला और नीला रंग बहुत लाभ देता है। इसलिए हमारा परामर्श है कि ये महाशय आकाश को ताकते रहा करें और जब आकाश देखते-देखते जी भर जाए तो धरती को देखना शुरू कर दें।

हाल-ए-जिगर

स्वास्थ्य के लिए मसाने और जिगर का खास खयाल रखें। इसका यह मतलब हरगिज नहीं कि बाकी अन्य अंगों से लापरवाह हो जाएं।

इस अवधि में जहां तक हमारी जानकारी काम करती है, तीन बड़े लोग पैदा हुए। एक बड़ा कवि––लार्ड बायरन जिसकी जन्मतिथि है २२ जनवरी। दूसरा बड़ा राजनीतिज्ञ––इब्राहिम लिंकन। तीसरा बड़ा वैज्ञानिक––चार्ल्स डार्विन, जिसने विकास-सिद्धांत को प्रस्तुत किया। इन दोनों की जन्म-तिथि १२ फरवरी है।

––अनु.: सुरजीत

युग-युग में सुगंधियां

• मुकुलचंद पांडेय

इतिहास के आरंभिक काल से ही सुगंधियों के अनेक देशों में प्रयोग किये जाने के प्रमाण मिलते हैं। वेद, कुरान, बाइबिल इत्यादि धर्म-ग्रंथों में वर्णित सूक्तों से इस बात की पुष्टि होती है। देश-देश की अनेक धार्मिक व सामाजिक प्रथाएं इनके साथ जुड़ी हुई थीं। प्राचीन मिस्र में राज्याभिषेक के अवसर पर मुकुट धारण करने से पहले नये सम्राट को सुगंधित जल में डुबकी लगानी पड़ती थी। अपने राज्यकाल में सम्राट हेम्मूराबी ने बेबीलोन के प्रत्येक नागरिक के लिए सुगंधियुक्त जल से स्नान करना कानूनन अनिवार्य कर दिया था। बड़े दिन पर ईसाई-संप्रदाय के अनुयायियों में प्रियजनों को सुगंधियां भेंट करने का रिवाज है, क्योंकि सबसे पहले बड़े दिन के अवसर पर तीन बुद्धिमान व्यक्तियों ने बालक यीशू को सेंट ही भेंट किया था। लैटिन अमरीकी देशों में धार्मिक पर्वों जैसे मार्डीग्रास उत्सव में सुगंधियों का बहुतायत से प्रयोग किया जाता रहा है।

मिस्र, ग्रीस व रोमवासियों, हिब्रू भारतीयों तथा चीनियों द्वारा प्राचीनकाल में इस्तेमाल की जानेवाली सुगंधियां आज की सुगंधियों से भिन्न थीं। तब मूलरूप में सभी प्रकार की सुगंधियां पेड़-पौधों के सुगंधियुक्त भाग जैसे फूल, पत्तियां, तने, छाल व तने से निकलनेवाले गोंद को पीसकर चूर्ण रूप में या इन भागों को पानी, मदिरा अथवा तेल में डालकर द्रव-रूप में बनायी जाती थी। इनमें से भी सुगंधियों का सबसे साधारण रूप यानी चूर्ण रूप ही सर्वाधिक प्रयोग होता था

ये बेचते हैं इत्र

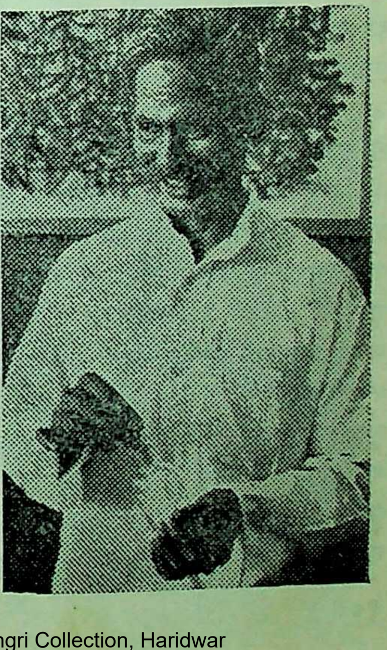

तथा आज भी धूप के नाम से काफी इस्तेमाल किया जाता है। इष्ट देवताओं के सम्मुख, पूजागृहों व देवालयों आदि में जलाकर वातावरण को सुगंधमय बनाने में धूप का प्रयोग आदिकाल से ही हो रहा है। भारत में यज्ञों तथा हवनों में इनका बाहुल्यता से उपयोग होता आया। जोरेस्टर के समय से आज तक पारसी लोग पवित्र अग्नि में धूप जलाने की प्रथा मानते आये हैं। चीन में मछेरे अच्छे शिकार के लिए प्रथास्वरूप धूप जलाया करते थे। बाइबिल में लिखा है कि प्रभु ने मोजेज को स्वर्ण-स्तंभ के ऊपर धूप जलाने का आदेश दिया था।

इत्र और गुलाबजल की माया

आजकल प्रचलित आसवन विधि द्वारा फूलों से सुगंधि या इत्र प्राप्त करने की खोज का श्रेय अरब के एक डॉक्टर ऐवीसीना को जाता है। दसवीं सदी में उन्होंने इस विधि द्वारा गुलाब के फूलों से गुलाब-जल का निर्माण किया था। यद्यपि गुलाब के तेल या 'गुलाब ओटो' की खोज व निर्माण-विधि का ताज मुगल रानी नूरजहां के ही सिर पर पहनाया जाता है। कहते हैं गुलाब-जल में नहाते समय अचानक उसकी नजर गुलाब-जल पर तैरती तेल की एक बूंद पर गयी। नूरजहां ने छनवाकर उस बूंद को अलग करवाया और उसकी अनुपम सुगंध से पुलकित होकर उसे 'इतर-ए-जहांगीरी' नाम दिया। संभवतः गुलाब के तेल की इसी बूंद ने नूरजहां को गुलाब का इत्र बनवाने के लिए प्रोत्साहित किया था।

प्रकृति में सुगंधियां तेल और रेजिन के रूप में पायी जाती हैं। सुगंधि-निर्माण में अधिकांशतः तेल ही इस्तेमाल होते हैं। यह तेल विशेष प्रकार के होते हैं, साधारण तेलों से बिलकुल अलग-थलग। असली तेलों के विपरीत यह विशेष सुगंध-तेल चिकनाईरहित होते हैं। कपड़ों पर दाग नहीं छोड़ते तथा खुला छोड़ने पर कुछ समय बाद उड़ जाते हैं। सुगंधियुक्त इन तेलों को वाष्पी अथवा सुगंध-तेल (एसेंसियल ऑयल) कहते हैं। यह जटिल रासायनिक फार्मूलेवाले पदार्थ होते हैं तथा पौधों में मेटाबॉलिज्म से बनते हैं। फूल, पत्तियों आदि का तेल ग्रंथियों से। इन्हें मुख्यतः आसवन (डिस्टिलेशन) विधि, मशीनी-दाब विधि अथवा अल्कोहल, ईथर आदि कुछ घोलकों की सहायता से निकाला जाता है। इनमें से सर्वाधिक प्रयोग में लायी जानेवाली विधि आसवन की है। इसमें फूलों को लकड़ी की एक छिद्रयुक्त ट्रे में डिस्टिलेशन चैंबर में रख दिया जाता है तथा नीचे से उसमें वाष्प प्रवाहित की जाती है। सुगंध-तेल और पानी की मिली-जुली भाप को कंडेसर (संघनित्र) की सहायता से ठंडा करके एक पात्र में एकत्रित कर लिया जाता है। शीतल होने पर सुगंध-तेल पानी की सतह पर जमा हो जाते हैं। इन्हें छानकर व पुन: आसवन करके

शुद्ध कर लिया जाता है ।

सुगंधियां भांति-भांति की

सुगंधियों की किस्में अनगिनत हैं । केवल द्वितीय विश्वयुद्ध के आरंभ तक ही पंजीकृत सुगंधियों की संख्या डेढ़ लाख से ऊपर पहुंच चुकी थी । वैसे पसंद की भी क्या कहिए ! आपकी पसंद खस है तो कुछ निकटवर्ती देशों में स्त्रियों को एक खास सुगंध पसंद है, पुरुषों की बगल से निकलनेवाले पसीने की गंध ! काम पर जाते समय वे अपने पति या पुरुष-मित्रों की बांहों के नीचे अपना रूमाल बांध देती हैं और उनकी वापसी पर रूमाल उतारकर घंटों पसीने की सुमधुर गंध में डूबी रहती हैं । दक्षिणी अमरीका के वैरो-इंडियन आदिवासी शौकीन हैं मरी हुई मछलियों की अनुपम गंध के और 'ईवनिंग इन पेरिस' या 'इतर ए-जहांगीरी' के स्थान पर वे मरी मछलियां रगड़कर अपनी देह को सुगंधित करना पसंद करते हैं ।

जिस दुर्गंधयुक्त पदार्थ के कंधों पर कृत्रिम सुगंधियां वनाने के विश्वव्यापी उद्योग का दारोमदार है, वह है कोलतार। सदियों तक वेकार समझे जानेवाले इसपदार्थ से जहां एक ओर चटकीले रंग, जानलेवा जहर, वहूपयोगी दवाएं और प्लास्टिक तथा खतरनाक विस्फोटक पदार्थ वनते हैं, वहीं कई नाजुक व लुभावनी सुगंधियों के निर्माण में भी यह प्रयुक्त होता है । आश्चर्य की वात यह है कि इनमें से अनेक कृत्रिम सुगंधियां, प्राकृतिक सुगंधियों से इतनी मिलती-जुलती होती हैं कि असली-नकली में पहचान करना मुश्किल हो जाता है। इनमें से अधिकांश कपड़ों व त्वचा को हानि भी पहुंचाती हैं ।

सुगंधि है क्या ?

सुगंधि असली हो या नकली, प्रकृतिवादियों में विखरी हो या सुंदर शीशियों में बंद, सुगंधि के संदर्भ में एक प्रश्न आदि से अब तक अनुत्तरित ही रहा है, वह है सुगंधि है क्या ? कलकत्ते की चौरंगी हो, वंबई का मेरीनड्राइव अथवा दिल्ली का

शीशियों में बंद विभिन्न सुगंधियां

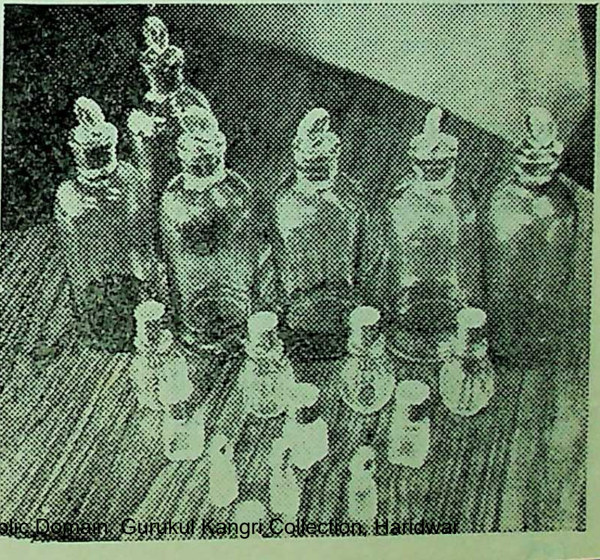

कनाट सरकस ! इत्र लगा, इतराती जा रही किसी भी महिला या पुरुष से पूछिए कि क्या है यह सुगंधि तो बगलें झांकते मिलेंगे । वास्तव में सुगंधि की कोई पूर्ण या संतोषप्रद परिभाषा है ही नहीं । दरअसल सुगंधियों के प्रयोग का प्रमुख उद्देश्य है, देह को सुगंधित बनाकर दूसरों को आकर्षित करना । वैसे सौंदर्य-वृद्धि में सुगंधियों के सहायक होने की पुष्टि अनेक व्यक्तियों ने की है । प्राचीनकाल में रानी-महारानियों के सुगंधियुक्त जल एवं केसर मिले दूध के प्रयोग से कमनीयता की रक्षा करने की बात किंवदंती मात्र नहीं है। काफी उमर बीत जाने पर भी अपनी सुंदर मुखश्री की लावण्यता बने रहने का राज हंगरी की साम्राज्ञी एलिजाबेथ ने गुलाब-जल का निरंतर प्रयोग बताया था । सौंदर्य-प्रसाधनों के अतिरिक्त आदिकाल में ही इनका प्रयोग दवाओं और पेयों में भी किया जा रहा है । सुगंधियुक्त पौधों को जलाकर उसके धुएं से रोम व ग्रीसवासी अनेक रोगों का इलाज करते थे, उदाहरणार्थ पुदीन से चालीस गुलाब से बत्तीस व लिलियों से इक्कीस रोगों का उपचार ! लैवेंडर, स्पिरिट ऑव अमोनिया आदि तो आज भी दवाओं में पड़ते हैं । वन्य पशुओं को पालतू बनाने के लिए भी सुगंधियों का आदिकाल से ही प्रयोग किया जा रहा है ।

जंगली जानवर पकड़नेवाले विभि सुगंधियों के सम्मिश्रण से बननेवाले अनेक फार्मूले जानते हैं, जो खूंख्वार खूंख्वार पशु को भी पालतू बना देते है यह एक तथ्य है कि लैवेंडर सुगंधि बिल्ल कुल के सभी पशुओं की बेहद पसंद है उनको काफी शांत प्रकृति का बना दे है ।

लैवंडर की सुगंध वनराज शेर भी बेहद पसंद है । जानवरों को भग के अतिरिक्त कीड़े-मकोड़ों को भगाने भी सुगंधियों का इस्तेमाल कि जाता है ।

और अब सुगंधित पेट्रोल अन्य वस्तुओं के अलावा अब फर्नीचर, प्लास्टिक व रबड़ की वस् भी सुगंधित आने लगी हैं । सोलह शताब्दी के बाद सुगंधियों का प्र जिस गति से बढ़ा है यदि उसी रफ् से बढ़ता रहा, तो क्या आश्चर्य कि २००० में किसी दिन सुगंधित रबड़ पहियों व सुगंधित प्लास्टिक की बॉडीवा अपनी कार में जब आप पेट्रोल भर किसी फिलिंग-स्टेशन पर रुकेंगे तो सा एक पंक्ति में कई पेट्रोल पंप होंगे — पर लिखा होगा—गुलाब, हिना, लैवें चमेली आदि बस । अपनी मनपसंद सुगं वाला पेट्रोल भरवाइए और आगे जाइए ।

—५३, छोटा चांद
लखनऊ-२२६

जो गला काटे उसी से प्यार

• राजशेखर

सड़ाप ... सड़ाप। फिर एक हलकी चीख। लगा जैसे कोई किसी को कोड़े से मार रहा हो। वह चौंककर उठ बैठा—कहीं उसने स्वप्न तो नहीं देखा है, पर फिर वही कोड़ा फटकारने की आवाज और महिला की चीख। उससे नहीं रहा गया। वह कमरे से बाहर आया। रात के घोर अंधकार में सारा घर डूबा हुआ था। वह धीरे-धीरे सीढ़ियां उतरा। श्रीमती बूची के कमरे की दरारों से प्रकाश छन-छनकर बाहर आ रहा था। कमरे के सामने आते ही पीटने तथा महिला की चीख की आवाजें एकदम स्पष्ट हो गयीं, यह और किसी की नहीं, श्रीमती बूची की आवाज थी। वे विधवा थीं, साथ था उनका प्रेमी।

वह श्रीमती बूची के घर एक पेइंग गेस्ट की हैसियत से रहता था। श्रीमती बूची चालीस-वर्षीय महिला थीं। उसकी इच्छा हुई कि वह उलटे पांव लौट जाए, लेकिन किसी अदृश्य शक्ति ने उसके पांव जकड़ लिये थे। इतनी रात गये श्रीमती बूची को कौन पीट रहा है? वह दरारों में से झांककर देखने लगा। अंदर का दृश्य देखकर वह चकित रह मया—श्रीमती बूची अर्द्धनग्न अवस्था में पड़ी हुई थीं। उनके भींचे हुए होंठों से खून बह रहा था। श्रीमती बूची का प्रेमी उन्हें पीटे जा रहा था।

वह चुपचाप वहां से हट गया। उसे लगा कि श्रीमती बूची जरूर उसे पुलिस के हवाले करेंगी। अगले दिन सुबह जब वह उठा तब उसका सिर रात की घटना से काफी भारी था। एकाएक उसे श्रीमती बूची की जलतरंग की तरह खनकती आवाज सुनायी पड़ी, "डार्लिंग कम आन, टी इज रेडी।" वे अपने प्रेमी को बुला रही थीं।

वह दंग रह गया। है न यह प्रेम का विचित्र किस्सा, किंतु सौ फीसदी सच्चा! श्रीमती बूची अपने प्रेमी के हाथों पिटकर संतोष का अनुभव करती थीं। उन्हें अपनी पिटाई में ही प्रेम के दर्शन होते थे। श्रीमती बूची के जैसे अनेक किस्से मिलेंगे, जहां

प्रेमी से पिटने में संतोष

स्त्रियां पुरुषों के क्रूर व्यवहार पर मुग्ध होती हैं।

ऐसी एक अन्य घटना है २२-वर्षीय जर्मन युवक फ्रैंज क्लोज एवं मिरैला के प्रेम की।

विवाहिता का प्रेम-कांड

मिरैला एक सत्ताइस-वर्षीय विवाहिता युवती थी। मिरैला की मुलाकात फ्रैंज क्लोज से एक पार्टी में हुई थी। फ्रैंज क्लोज मिरैला को देखते ही उस पर मर मिटा। मिरैला फ्रैंज क्लोज के साथ आकर रहने लगी। अठारह महीने तक अपने प्रेमी के साथ रहने के बाद मिरैला ऊब गयी।

उसने अपने पति एवं पुत्र के पास वापस जाने की इच्छा प्रकट की। यह वात सुनकर फ्रैंज क्लोज को वड़ा दुःख हुआ। उसके लाख समझाने के वावजूद जव मिरैला अपने निश्चय पर अडिग रही तो फ्रैंज के क्रोध का ठिकाना न रहा। फ्रैंज ने मिरैला को पीटना शुरू कर दिया, फिर एक बड़े चाकू से मिरैला के गले पर वार किया। मिरैला मृतप्राय-सी हो गयी।

उसे मृत समझकर फ्रैंज क्लोज घबरा गया। उसने मिरैला के शरीर को अपनी बांहों में उठाया और अपने घर से थोड़ी दूर पर स्थित रेलवे-लाइन की ओर चल पड़ा। वह मिरैला के शरीर को चूमते हुए बुरी तरह रो रहा था, फिर वह रेल की पटरियों पर जाकर बैठ गया। वह आत्महत्या करना चाहता था। काफी समय बीत गया, किंतु भाग्यवश कोई ट्रेन नहीं आयी।

प्रेमी की बांहों में जी उठी

उसी वक्त, जैसे कोई दैवी शक्ति कार्य कर रही हो, मिरैला को होश आने लगा। उसे जीवित पाकर फ्रैंज क्लोज की खुशी का ठिकाना न रहा।

"मैं कहां हूं?" मिरैला ने बड़ी कमजोर आवाज में पूछा। मिरैला को इस बात का आभास तक न था कि उसे आत्महत्या के एक अद्भुत अभियान पर लाया गया था। उसने कराहते हुए कहा, "मेरा सारा शरीर ठंड से अकड़ गया है, मुझे घर ले चलो।" फ्रैंज एक सच्चे प्रेमी की भांति मिरैला के शरीर को अपनी बांहों में उठाकर मृत्यु के द्वार से वापस ले आया।

घर पहुंचकर उसने मिरैला के घावों की मरहमपट्टी कर उसे अस्पताल पहुंचाया। वह फ्रैंज को हर हालत में कानून के पंजे से बचाना चाहती थी। अस्पताल में उसने एक कहानी बनायी। उसने कह कि उस पर कुछ अज्ञात व्यक्तियों ने हमला किया था; लेकिन पुलिस मामले की त तक पहुंच चुकी थी। अदालत में जब मुकदमा पेश हुआ तब दोनों के प्रेम का बड़ तूफानी रूप सामने आया। पुलिस ने यह सिद्ध कर दिया कि फ्रैंज क्लोज ने ईर्ष्या एवं दुःख से पागल होकर मिरैला को मा डालना चाहा था, क्योंकि वह अपने प के पास लौट जाना चाहती थी। फ्रैंज क्लो ने अदालत में कहा, "मैं जीना नहीं चाह था, क्योंकि मिरैला के बिना मेरा जीव

सूना था।" जब मिरैला की गवाही प्रारंभ हुई तब जज चकित रह गया। मिरैला ने कहा, "मैं फ्रैंज क्लोज से प्रेम करती हूं। अगर उसे जेल भेजा गया तो मैं उसका इंतजार करूंगी।"

पहला प्रेम: अविस्मरणीय रातें

मिरैला एवं फ्रैंज क्लोज बराबर एक-दूसरे के प्रति प्रेम से सनी भावनाओं को प्रकट करते रहे। फ्रैंज ने कहा, "मिरैला मेरा प्रथम एवं सच्चा प्रेम है। हमने भविष्य के लिए सपने बुने थे।"

मिरैला का कहना था, "हमारी बहुत-सारी अविस्मरणीय रातें हैं। लेकिन जब मैंने उससे कहा कि मेरा कर्त्तव्य अपने बच्चे एवं पति के प्रति है, तो वह क्रोध से पागल हो उठा। मैंने ही उसे उत्तेजित किया था। फ्रैंज ने जो कुछ भी किया है वह सब मेरे प्रेम में पागल होकर किया है। मैं उससे प्रेम करती हूं, सारी उम्र उसका इंतजार करूंगी।"

लेकिन, जज ने दोनों की अपील नामंजूर करके फ्रैंज क्लोज को हत्या के प्रयास में जेल भेज दिया है। मिरैला को दो वर्षों के लिए उसकी प्रतीक्षा करनी होगी। मिरैला अपने पति से तलाक लेकर फ्रैंज से विवाह करना चाहती है।

तमाचे का असर

एक और बहुत दिलचस्प किस्सा ब्रिटेन की श्रीमती एम. मर्सीसाइड का है। विवाह से पूर्व मर्सीसाइड टीचर ट्रेनिंग कालेज में प्रशिक्षण ले रही थी। प्रशिक्षण के समय वह बहुत बुरी संगत में पड़ गयी थी। 'पब' (शराबखाने) में किसी व्यक्ति से प्रथम मुलाकात होते ही उससे संबंध स्थापित करने में उसे देर नहीं लगती थी। लेकिन एक ही धक्के ने उसे धरती पर वापस पहुंचा दिया। उसे वास्तविकता के धरातल पर उतारनेवाला था एक युवक। मर्सीसाइड मिलते ही उस पर मोहित हो गयी थी। उसने उस युवक के साथ रात बिताने की इच्छा प्रकट की। उसका प्रस्ताव सुनकर उस युवक ने तुरंत उसे एक तमाचा मारकर कहा, 'मैं तुम्हारे प्रेम की गिरफ्त में हो सकता था, अगर तुमने ऐसा भद्दा प्रस्ताव न रखा होता!'

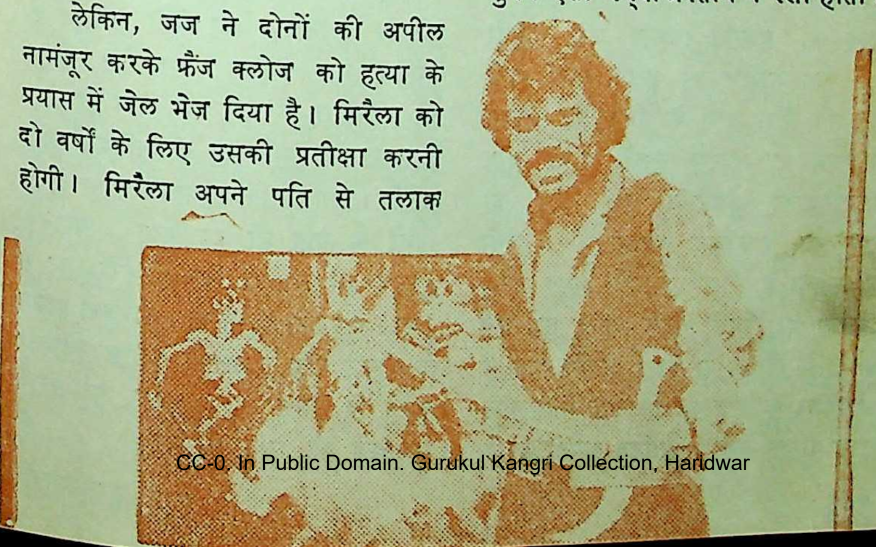

मर्सीसाइड बहुत शर्मिंदगी महसूस कर रही थी। तमाचे ने उसकी आंखें ही खोल दी थीं। वह जितना अधिक इस घटना के बारे में सोचती थी उतना ही महसूस करती थी कि वह उसके प्रेम में जकड़ गयी है। मर्सीसाइड ने उससे क्षमा मांगते हुए प्रार्थना की कि वह उसकी अब तक की शर्मनाक जिंदगी को भुलाकर एक प्रतिष्ठित जीवन बिताने में मदद करे। उस युवक ने मर्सीसाइड से विवाह कर लिया। उनके विवाह को छह वर्ष बीत चुके हैं। उनसे अधिक सुखी कोई दंपति हो सकता है, इस बात की वे कल्पना भी नहीं कर सकते।

पुरुषों का सौंदर्य भी दुःखदायी

हालीवुड फिल्म-अभिनेता डीन मार्टिन ने तीन विवाह किये, लेकिन तीनों महिलाओं से उसका तलाक हो चुका है। उसकी तीसरी तलाकशुदा पत्नी का कहना है कि स्त्रियां डीन मार्टिन से प्रभावित हुए बिना नहीं रहतीं। विश्व की हजारों स्त्रियां उसे चाहती हैं। डीन मार्टिन की दूसरी पत्नी जेनी ने अपने बीस वर्षों के विवाहित जीवन के टूटने का कारण उसके चारों ओर मंडरानेवाली युवतियां एवं डीन की नाक का आपरेशन बताया है। जेनी का कहना है, "मार्टिन पहले बहुत घरेलू इनसान था, जिसे केवल अपने घर एवं बच्चों में दिलचस्पी थी। अपनी नाक के आपरेशन के बाद वह एकाएक बेहद खूबसूरत दीखने लगा। मार्टिन अपना हालीवुड का घर छोड़कर 'बेवरली हिल्स' होटल में रहने लगा। अब वह रोमांस और 'स्कैंडल' से भरपूर जीवन बिताने लगा है।"

हिंसक और छली पति

कुछ व्यक्ति प्रेम के लिए विवाह करते हैं, कुछ व्यक्ति आराम के लिए और कुछ केवल धनी बनने के लिए। श्रीमती बारबरा हट्टन एक करोड़पति महिला हैं, जिन्हें पुरुषों ने बार-बार विवाह करके लूटा है। श्रीमती बारबरा का पहला विवाह प्रिंस एलेक्सिस म्डीविनी में हुआ था। सुहाग रात पर ही प्रिंस एलिक्स ने श्रीमती बारबरा के सामने १० लाख पौंड की मांग रखी। उसने कहा, "बारबरा, तुम बहुत मोटी हो।"

वे भयंकर रूप से 'डाइटिंग' करने लगीं, जिससे उनका स्वास्थ्य ही नष्ट होने लगा। श्रीमती बारबरा का दूसरा विवाह रुबेरोसा के साथ हुआ। रुबेरोसा बड़ा प्रेमी स्वभाव का व्यक्ति था, लेकिन साथ ही हिंसक भी। विवाह के चार दिन बाद ही उसने बारबरा के टखने की दो हड्डियां तोड़ डालीं। उनका विवाह-संबंध ठीक बावन दिनों के बाद ही टूट गया। बारबरा हट्टन का तीसरा विवाह कैरी ग्रांट से हुआ। वह बड़ा लोभी था। बारबरा हट्टन के तीसरे पति ने उसका तलाक स्वीकार करने के लिए ५०० डालर हर महीने मुआवजे की मांग की थी।

●

प्रसाद : एक नयी जीवन-दृष्टि

'प्रसाद' ने भी 'उर्वशी' लिखी थी

• रत्नशंकर प्रसाद

चंपू-काव्य 'उर्वशी' को पूज्य पिताजी की प्रथम काव्य-रचना होने का गौरव प्राप्त है। इसका प्रकाशन संवत १९६६ (सन १९०९) में हुआ। उसके बाद यह रचना अपने मूल रूप में अलभ्य रही। हिंदी-साहित्य में शोध-परंपरा के विकास को आज ऐसी सामग्री की अपेक्षा है जिससे हिंदी की युग-संध्या के नक्षत्र देखे जा सकें। युग-प्रणयन कृतिकार करते हैं, समीक्षक नहीं। सुतराम, भारतेन्दु एवं प्रसाद-युग की संध्या विलक्षण रही : उसकी उन्मुखता उन अनेक संभावनाओं से संकुल रही, जिनका रूपांतर आज की हिंदी का यथार्थ है। सन १९१८ में जब अनेक कृतियों का एक संग्रथन 'चित्राधार' नाम से प्रकाशित हुआ, तब उसमें भी अपने मार्जित रूप में यह 'उर्वशी' अग्रस्थानीय हुई। 'चित्राधार' प्रसाद-वाङ्मय के संपूर्ण चित्र का वस्तुतः आधार है। उसमें उनका प्रायः पांच वर्षों का कृतित्व रक्षित है, अर्थात संवत १९६३ से १९६७ तक की उनकी गद्य और पद्य की सभी विधाओं की प्रारंभिक कृतियां उसमें संकलित हैं। संवत १९६८ से एक नया मोड़ दीखता है— जहां से 'छाया' में संकलित कहानियों और 'कानन-कुसुम' के गीतों का दर्शन होता है और 'प्रेम-पथिक' के प्राण खड़ी बोली में नवकलेवर पाते हैं। ये प्रकाशन संवत १९६९ में हुए हैं। उसी वर्ष 'नागरी-प्रचारिणी-पत्रिका' में 'कल्याणी-परिणय' छपा। अभिव्यक्ति की सुकरता के लिए साहित्य की सभी विधाओं को मार्जित करती प्रसाद-भारती यहां से उस ओर अग्रसर होती है जिसे आचार्य उत्पलदेव के शब्दों में 'सुघट एष मार्गोनवः' कहा जा सकता है।

हिंदी के नवीन रूप-संगठन अथवा खड़ी-बोली एवं उसमें अभिव्यक्ति की नयी प्रयोजना की पार्श्वभूमि पर जिसमें आंतर-अर्थ-वैचित्र्य के उद्भास पर विशेष दृष्टि रखी जाने लगी, सामान्यतः, एवं प्रसाद-साहित्य पर, जो वैसे प्रोद्भास का अविच्छेद्य आधार शिल्प बना, विशेषतः व्यापक संभावनाओं से एक ऐतिहासिक अध्ययन की दिशा पाने के लिए 'उर्वशी' चंपू अवलोक्य है, जहां से आंतर-अर्थ-वैचित्र्य के अंकुर फूट चले हैं। अभिव्यक्ति की आगामी प्रयोजना के उपकरण अथवा प्रत्ययभूत उपादान इसमें मिलेंगे। ब्रजशैली में रचना प्रस्तुत रहने

से इसका विरोध नहीं मानना चाहिए। जब छायावाद का स्रोत अंगरेजी में ढूंढा जा सकता है, तब खड़ी बोली के अतिसमीपी सद्यःपूर्ववर्तिनी ब्रजशैली में उसकी छानबीन का प्रयास क्यों नहीं किया जाता, यह विस्मय की बात है। 'उर्वशी' चंपू में कुछ ऐसे सूत्र हैं जिनसे प्रसाद-साहित्य का विशाल पट-मंडप बुनातना है और अभिव्यक्ति की आगामी प्रयोजना के संकेत इतस्ततः आंतर-अर्थ-वैचित्र्य उद्भासित करते पाये जाते हैं।

'उर्वशी' की भूमिका में कहा गया है—**"यह 'उर्वशी' नामक चंपू तथा हमारा प्रथम परिश्रम साहित्य-सरोज मकरंदोन्मत्त मधुकरगण के समक्ष प्रथमोपहार-स्वरूप उपस्थित है जो कि वि. सं. १९६३ में लिखा जा चुका था, किंतु श्रीपरमेश्वर की कृपा से उसे प्रकाशित होने का अवसर अब मिला।"**

लेखन और प्रकाशन के मध्य तीन संवत्सरों के अंतराल में जाने का कुतूहल सहज है और शोधार्थी के लिए तो उपादेय भी। 'उर्वशी' लिखे जाने के कुछ मास बाद ही संवत १९६४ की भाद्र कृष्णाष्टमी को उनके अग्रज श्रीशंभुरत्न का तिरोधान हो गया, जिनकी पावन-स्मृति में 'प्रेम-पथिक' अंकित है तथा नागरी-प्रचारिणी सभा में शंभुरत्न स्मारक-निधि का न्यास भी उन्होंने किया। 'प्रेम-पथिक' मूलतः ब्रजशैली में लिखा गया। इसका लेखनकाल भी वही है जो 'उर्वशी' का है। खड़ी बोली में रूपांतरित 'प्रेम-पथिक' श्रीपंचमी (माघ शु. ५) सं. १९७० को प्रकाशित हुआ। उसके 'निवेदन' में लिखा मिलता है—

"इस छोटी-सी पुस्तक के लिए किसी बड़ी भूमिका की आवश्यकता नहीं। केवल इतना कह देना अधिक न होगा कि यह काव्य ब्रजभाषा में आठ वर्ष पूर्व मैंने लिखा था, जिसका कुछ अंश इंदु के प्रथम भाग में प्रकाशित भी हुआ था। यह उसी का परिवर्त्तित, परिवर्द्धित तुकांत-विहीन हिंदी रूप है।"

सुतराम, संवत १९६३ में 'उर्वशी' और 'प्रेम-पथिक' रचित हो गये थे। साथ ही प्रचुर मात्रा में ब्रजशैली की अन्य स्फुट रचनाएं, यथा सवैया, कवित्त आदि कुल मिलाकर प्रायः चार सौ प्रस्तुत हो चुकी थीं। वे सभी रचनाएं कुछ परिस्थिति-वश स्वयं उन्हीं के हाथों अग्निवैश्वानर की आहुति बन गयीं। जैसे, यजन से पर्जन्य और पर्जन्य से वृष्टि द्वारा शस्य-संपदा की संभूति कही गयी है वैसे ही संभवतः उन छंदों की आहुति ने भावाकाश में रस-पर्जन्य की सृष्टि की हो और 'आंसू' का कथन **'बरसात नयी होने दे, कलियों को खिल जाने दे'** के साथ ही 'कामायनी'-वाक्य **'सुमन के खेलो सुंदर खेल, विश्व भर सौरभ से भर जाए'** भी चरितार्थ हुआ हो, कौन जाने!

संवत १९५७ की गोपाष्टमी (कार्तिक शुक्ला अष्टमी) को मेरे शिव-कल्प पिता-

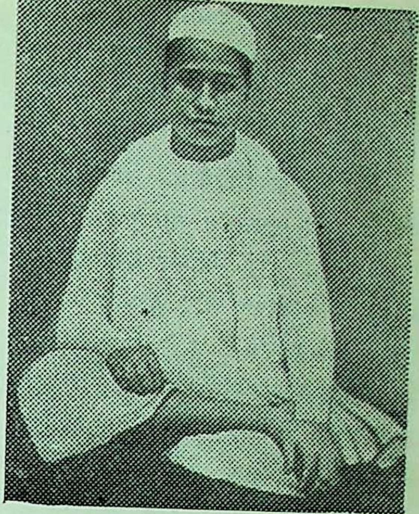

प्रसाद जब पंद्रह वर्ष के थे

मह श्री देवीप्रसाद का जब तिरोधान हो गया, तब कौटुंबिक शृंखला की कड़ियों में तनाव बढ़ने लगा और बरस भर भी नहीं बीता, परिवार के घटक विघटन के कगार पर पहुंच गये। व्यापार-जाह्नवी में उसके कगार से टूटकर ढाक गिरने लगे और वह सुरसरि आविल हो चली, जिसके तट प्रायः पांच सौ व्यक्ति आनंद-मंगल मनाते थे। अदालत में मिसिल मोटी होने लगी और घर में थैली दुबली। यह क्रम संवत १९६० तक चला, जो त्रिपक्षीय विभाजन में समाहित-प्राय हुआ। किंतु, उपसर्ग तो आगे भी रहे। ऐसी दशा में क्वींस कॉलिजिएट स्कूल की छठवीं कक्षा से पूज्य पिताजी का नाता टूट गया। सुनिश्चित 'एकेडेमिक कैरियर' की संभावना सदैव के लिए समाप्त हो गयी और कदाचित अनुभूति-संस्कार में वह खग्रास की भूमावाली भूमि उनके समक्ष आ गयी जिसकी अभिव्यक्ति मनु-मुख से होती है—**'बढ़ रहा तिमिर गर्भ में नित्य दीन जीवन का यह संगीत।'** किंतु, अपने पिताश्री के जीवनकाल में ही उन्हें संस्कृत और हिंदी का अच्छा परिचय मिल चुका था, सर्वोपरि शिवार्चनमयी निर्मातृ-शक्ति का जागरण हो चुका था। एकदा, अमरकोश के किसी श्लोक के अशुद्ध उच्चारण पर मेरी ताड़ना करते अपने आरंभिक शिक्षा-क्रम और समकालीन परिवेश की कतिपय बातें बताकर कहा, **'तोहें कल्ह क घोखल आज भुलाय गैल !" आठ बरिस पूरा होत-होत हमें समग्र देवकोश कंठस्थ हो गैल रहल और व्याकरण बदे अष्टाध्यायी अलग से।'** जहां अशुद्धि हुई थी वहीं से बीसों श्लोक धाराप्रवाह बोलकर कहा, **'कह त यस्यज्ञान से ज्ञेयं शिष्ट प्रयोगतः कुल देवकोश सुनाय देईं।'** वे अमरकोश को प्रायः देवकोश कहते थे। कारण, इस कोश की उनकी अभ्यास-पोथी श्री देवदत्त तिवारी द्वारा सन १९७५ में प्रस्तुत-व्याख्यात संस्करण की द्वितीयावृत्ति की है, जिसका मुद्रण लाजरस प्रिंटर्स (बनारस) द्वारा सन १९८३ में हुआ था। तिवारीजी ने अपनी पुस्तक का नाम 'देवकोश अर्थात अमरकोश' दिया है।

'उर्वशी' के निवेदन और उसकी भूमिका की कुछ पंक्तियों के अंतराल से उनके शिक्षाक्रम में कौटुंबिक दशा-वश

आये व्यवधान के मुझे ज्ञात कतिपय प्रसंग झांक रहे हैं, जिनकी यहां संक्षिप्त-सी चर्चा प्रसाद-अध्ययन की पार्श्वभूमि आलोकित करेगी।

मेरे शिवकल्प-पितामह अपने कनिष्ठ पुत्र के परम श्रद्धास्पद श्रीयुत् बाबू देवीप्रसाद सुंघनी साहु साहित्य और संस्कृति में गाढ़तः अनुरक्त और संस्कृत के प्रति एकांत निष्ठासंपन्न पुरुष थे। उनकी दृष्टि में साहित्य और संस्कृति का मूल एक और संस्कृत में निहित रहा। स्मृतियों का अध्ययन उनके निजी स्वाध्याय का विषय था। मनुस्मृति की नवीन मानव-धर्मशास्त्र के रूप में व्याख्या करने-करवाने की उनकी इच्छा थी, जिससे वर्णाश्रम और जातीयता युगानुकूल परिभाषित हो सके। कवि-समाज, विद्वत्समाज और साधु-समाज की सेवा करते मल्ल-विशारदों को प्रश्रय देते, वे सुखी थे। गोशाला और मल्लशाला अशून्य रहे--**'अपने पराये सभी दूध पियें, दंड करें और मुस्टंड बनें मन से, शरीर से'**--प्रायः कहा करते थे। शास्त्र एवं साहित्य के मर्मज्ञ 'ऋतुसंहार' आदि कतिपय ग्रंथों के उत्कृष्ट अनुवाद प्रस्तुत करनेवाले पं. नारायणपति त्रिपाठी एवं महामहोपाध्याय पंडित सुधाकर द्विवेदी -जैसे विद्वच्छिरोमणि पितामह के सुहृदों में थे।

तब काशी में एक कान्यकुब्ज कौलकुल साधना और विद्वत्ता में अनूठा था। उसमें कवींद्र श्री दुःखभंजनजी एक सिद्धवाक् कवि हुए। वे मेरे पितामह के समकालीन, किन्तु वय में अधिक थे। ऐसी बात कही जाती थी कि उन्होंने अपने आत्मज की जिह्वा पर जन्म-क्षण में ही मधुसिक्त स्वर्णशलाका से वाग्भव-बीज अंकित कर दिया था। नवजात का नाम देवीप्रसाद रखा। उन्हें सहज आशुकवित्व मिला और आगे चलकर कविचक्रवर्ती कहे गये। उस शाक्त-कुल का मेरे शैव-कुल से घनिष्ठ संबंध था। श्री दुःखभंजनजी का अन्यत्र जाना तो दुष्कर था, किंतु 'मौज' आने पर मेरे यहां जब पधारते, तब कोठी के मुनीमों की कलमें सो जातीं--वातावरण के काव्यमय हो जाने से। एकदा, महाराज हथुआ ने अपनी सवारी रोककर कवींद्र महोदय को बुलाकर अभ्यर्थना करनी चाही। जो पुरुष उनके समीप गया उसे सुनने को मिला--**'कश्मीरेन्द्रो झुलत्यत्र हथुआनांच का कथा।'** तब कवींद्र की ठंडई में केसर छानी जा रही थी, सुमेर गिरि के चबूतरे पर। उनके आत्मज कवि चक्रवर्तीजी भी मेरे पितामह के अनन्य स्नेहभाजन थे। यदा-कदा काशी की सड़कों पर प्रकांड-अश्व जुते खुले बनारसी इक्के पर दोनों ओर दो देवीप्रसाद काव्य-धारा बहाते, और उनके मध्य बैठे शिशु-रूप पूज्य पिताजी को अपना अधीत पाठ सुनाना पड़ता था। वय में ज्येष्ठ और अग्रजस्थानीय कवि चक्रवर्तीजी की पूज्य पिताजी से सौहार्द व्यक्त करनेवाली पंक्तियां उस 'प्रभात' के निवेदन में यों प्राप्त हैं

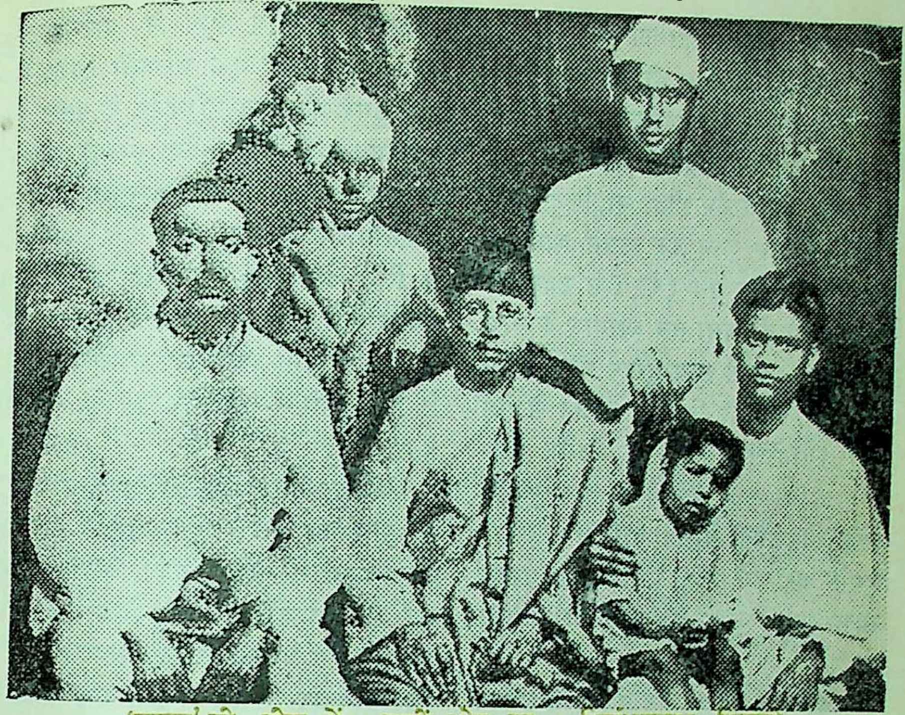

'प्रसाद' जी बीच में : दायीं ओर स्व. : विशंभरनाथ जिज्जा, बायीं ओर स्व. लालबिहारी बर्मन । गोद में इंद्रकुमार गुप्त, पीछे कोट और साफे में रत्नशंकर प्रसाद (पुत्र) तथा मुकंदीलाल गुप्त

जो 'शिशुपाल-वध' (माघ काव्य) के ग्यारहवें सर्ग का समछंदानुवाद है—**"अपने प्रिय मित्र काशी निवासी सुप्रसिद्ध सुंघनी साहु बाबू जयशंकर प्रसादजी के अनुरोध से 'माघकाव्य' के 'प्रभात-वर्णन' विषयक एकादश सर्ग का यह 'प्रभात' नामक अनुवाद मैंने किया है। इसमें विशेषता है कि मालिनी छंद में ही जैसा कि मूल में है उतने ही श्लोक संख्याओं में, बिना अलंकार इत्यादि कविता के गुण बिगाड़े ही, यह अनुवादित किया गया है। सहृदय कविता-रसिकों का यदि यह कुछ काल तक भी चित विनोद कर सकेगा, तो हम अपना परिश्रम सफल समझेंगे।"**

संस्कृत-साहित्य में महाकवि-माघ के प्रभात-वर्णन का (शिशुपाल-वध, ग्यारहवां सर्ग) अपना स्थान है, जो उन्हें रुचता था। प्रभात से उनका स्नेह केवल साहित्यिक ही नहीं, आंतरात्मिक भी कहने योग्य है। उनके साहित्य में तो औषस्-चित्रभूमि और जागरण की पुष्कल संवर्द्धना है ही, दैनंदिनी-चर्या भी ऐसी ही थी। कभी उदय-वेला में उन्हें सोते नहीं

पाया गया। यद्यपि रात का दूसरा-तीसरा पहर उनकी लेखन-बेला थी, तथापि किरण फूटने से पूर्व वह स्वभावतः उठ जाते। जीवन के आरंभिक दिनों में तो मल्लशाला में उनका दिवसारंभ होता था, किंतु अग्रज की छाया उठ जाने पर उसमें व्यवधान बढ़ता गया और सन १९२५ से उदरामय जब स्थायी हो चला तब व्यायाम के नाम पर पचीस-पचास हाथ मुग्दर भांज संतोष कर लेते, सो भी दिन के भोजन से पूर्व और स्नानोत्तर। फिर, किसी लघु-व्यायाम के साथ प्रभात से तादात्म्य के लिए निकटवर्ती बेनिया बाग में प्रहरभर घूमने का क्रम चला। तब वह उद्यान स्वच्छ-समृद्ध और शोभन जलाशयवाला था।

यह वृत्त देने का हेतु प्रभात से उनका लगाव बताना है। सृष्टि के आदिकाल से नागरी उषा का अनुगमन करनेवाले को और 'उषा की पहली लेखा कांत-माधुरी से 'भींगीभर मोद' को प्रत्यक्ष देखने का जिसे अभ्यास रहा, वह फिर माघीय प्रभात के छंदानुवाद के लिए कवि चक्रवर्तीजी को क्यों न 'उकसाता'?

जैसे, विवस्वान उषा को पाने में सफल नहीं होता, वैसे ही उनकी संतति वैवस्वत मनु इड़ा को नहीं पा सके। ज्ञानोन्मेष का प्रतीक अरुणोदय है। अरुण के सृष्टि-यज्ञ से उन्मिष्ट उषा और मनु के पाकयज्ञ से जन्म लेनेवाली इड़ा के रूप-भाव प्रायः समान हैं। श्रेयज्ञान का व्यक्तिगत स्थानीय केंद्रों में परिसीमन संभव नहीं। ज्ञान एक शाश्वती धारा है और उसके केंद्र 'सब परिवर्तन के पुतले'। सुतराम, अरुण के लिए उषा का और इड़ा का मनु के लिए पाना ऋतानुकूल नहीं। भारतीय परंपरा में (अन्यत्र नहीं) व्यक्ति से जिन वासनाओं का उदय होता है, उनका वहीं, उसी में अवसान भी। विवस्वान से वासना-रूप उषा का उदय होता है, फिर उसी में वह तिरोहित हो जाती है।

वैवस्वत मनु से वासना-रूप इड़ा उत्थित हो पुनः मनु द्वारा कैलास-दर्शन पाकर विश्वचेतना में अभिलीन हो जाती है—यह एक शाश्वत यथार्थ है। अस्तु, यहां प्रभात-प्रसंग में चले उनके चिंतन-आयाम की व्यवहार सरणि **'दुःख-दग्ध जगत और आनंदपूर्ण स्वर्ग का एकीकरण साहित्य है'** वाले सिद्धांत से नितराम आलोकित है।

उस शाश्वत यथार्थ की छाया-सा युग-यथार्थ भी वस्तुतः उनके सम्मुख था—अपने सोये राष्ट्र और उनींदी मानव-समष्टि के रूप में। फिर, कवि कैसे चुप रहे और क्यों न कहे—**"उषा सुनहले तीर बरसती जयलक्ष्मी-सी उदित हुई"**—साथ ही उसी विचार-वीथी में—उद्बोधन की अनुभूति में—एक सौंदर्यमयी काव्य श्री-संपन्न अभिव्यक्ति होती है **'बीती विभावरी जाग री'** शीर्षक गीत में।

(क्रमशः)

व्यंग्य

पांडवों का कहना है

• विनोद भट्ट

युधिष्ठिर ने पत्रकारों के समक्ष आज कहा था कि हम सब भाइयों (पांचों पांडवों) के बीच अंदर-अंदर कहीं गंभीर मतभेद है, यह बात सत्य नहीं है। पत्रकारों के एक प्रश्न के उत्तर में युधिष्ठर ने कहा था, "हमारी बात कोई ध्यान से नहीं सुनता, इसीलिए हमारी बैठक में भीम ने गदा पछाड़कर फ़र्श तोड़ दी थी, यह बात सही है, लेकिन अपनी आवाज प्रसारित करना यह कोई मतभेद नहीं माना जा सकता। इसे मैं अनुशासन-भंग नहीं मानता। इसलिए भीम के विरुद्ध अनुशासन-भंग की कार्यवाही करने का प्रश्न ही नहीं उठता।"

"आप सबके बीच किस बात पर मतभेद उठ खड़ा होता है ?"

इस प्रश्न के उत्तर में खिन्न स्वर में उन्होंने कहा था, "यह जानने के लिए ही आज हमने बैठक बुलायी थी।"

"आपसी मतभेदों के निवारणार्थ आप श्रीकृष्ण को अपना नेता क्यों नहीं वना लेते ?"

यह प्रश्न पूछे जाने पर युधिष्ठिर रोषपूर्वक बोले, "कृष्ण . . . कृष्ण . . .कृष्ण . . ., तुम लोगों को इसके सिवा कुछ दिखता ही नहीं क्या ? युद्ध के लिए आवश्यकता महसूस होने पर हमने उनकी सहायता ली थी, लेकिन यह हमारी आपसी बात है। इसमें किसी का भी दखल नहीं चाहिए। परिवार के मुखिया के रूप में तमाम निर्णय मुझे ही लेने होते हैं। योग्य-अयोग्य का मुझे खासा ज्ञान है।"

भीम : झगड़े का जनता से संबंध नहीं

भीम ने भी जनता से निवेदन किया है, "हमारे बीच कोई ठोस मतभेद नहीं

हैं । मात्र किस बात पर कितना भार रखना, इस बारे में हमारे विचार भिन्न-भिन्न हैं । मैं जिस बात पर भार रखने जाता हूं वह बात मेरे भार के कारण टूट जाएगी, ऐसा कहकर बड़े भाई साहब मेरी बात को हंसकर उड़ा देते हैं ।"

"आपके आंतरिक झगड़े कब समाप्त होंगे और जनता के कल्याण के लिए आप कब विचार करेंगे ?"

इस प्रश्न के पूछे जाने पर भीम कुछ नाराज होकर बोले, "हमारे आंतरिक झगड़ों के साथ जनता का कोई संबंध नहीं । दुर्योधन के साथ धर्म-युद्ध में हम जीते यही जनता का सबसे बड़ा कल्याण है । जनता को अधर्मी निरंकुश के पंजे से हमने छुड़ाया है . . . और प्रजा का कल्याण भी हो रहा है । दुर्योधन के समय में सब्जी-भाजी के जो भाव थे वह आज लगभग दो से तीन प्रतिशत घटे हैं । इसी तरह घी-तेल के भाव में भी पांच प्रतिशत की महत्त्वपूर्ण गिरावट आयी है । अनाज-जैसी जीवन की आवश्यक चीजों के भाव भी इसी तरह घटें, इस बात के लिए हम सदा चिंतित रहते हैं । हमारे बीच आर्थिक कार्यक्रमों के संबंध में कोई मतभेद नहीं है . . ."

अर्जुन : समझदारी आ रही है

रायफल शूटिंग-प्रतियोगिता के मुख्य निर्णायक के रूप में उपस्थित अर्जुन ने बताया, "हमारे बीच कोई गंभीर मतभेद नहीं है । मैंने मत्स्यवेध न किया होता तो द्रौपदी हमें न मिलती, ऐसा पहले मैंने कभी कहीं नहीं कहा है ।"

"आप पांचों भाई किसी बात का सर्वानुमति से निर्णय क्यों नहीं ले पाते ?"

इस प्रश्न के उत्तर में अर्जुन ने कहा, "हम पांच भाई हैं, लेकिन मत छह होते हैं । इसलिए सर्वानुमत से निर्णय नहीं ले पाते ।"

"द्रौपदी को कोई एक भाई जुए के दांव में नहीं लगा सकता, यह प्रस्ताव युधिष्ठिर के समक्ष आपने रखा था । यह बात सच है ?"

संवाददाता द्वारा किये गये इस प्रश्न के उत्तर में अर्जुन ने कहा, "द्रौपदी पर किसी एक पांडव का अधिकार नहीं है । इसलिए एक आदमी उसे दांव पर नहीं लगा सकता । लेकिन बड़े भाई ने मुझे घुड़ककर देखा तो मैंने वह प्रस्ताव वापस ले लिया । यद्यपि मैं ऐसा

मानता हूं कि अनुभव से बड़े भाई में समझदारी आने लगी है। अतः भूतकाल में की गयी भूल वह फिर से नहीं करेंगे।"

"कपड़ों की नीति के संबंध में आप क्या कहना चाहते हैं ?"

इस प्रश्न के उत्तर में अर्जुन ने कहा, "इसके लिए थोड़ी प्रतीक्षा करें... लेकिन जब से द्रौपदी के चीरहरण का किस्सा बना, तब से कपड़े की नीति में मैं उदार बन गया हूं..."

सहदेव: भविष्य की चिंता नहीं

"आपको आप सबका भविष्य कैसा लगता है ?" एक ज्योतिषी सम्मेलन में इस प्रश्न का उत्तर देते हुए सहदेव ने कहा, "भूतकाल में हुए अनुभवों को स्मरण कर मैंने भविष्य की चिंता करना छोड़ दिया है। समय अपना काम किया करता है।"

"जनता के कल्याण के लिए आपके पास कोई कार्यक्रम है क्या ?"

इस दूसरे प्रश्न के उत्तर में सहदेव ने गंभीरता से उत्तर दिया, "हां, कार्यक्रम के एक भाग के रूप में ही हम भाषण देते रहते हैं, ताकि हमारी तरफ जनता का सतत ध्यान रहे और अपने प्रश्न को वह भूल जाए इसलिए ही यह भाषण-कार्यक्रम हमने अपनाया है।"

"आप में एकता और मेल बना रहे इसके लिए ठोस उपाय सूचित करेंगे ?"

सहदेव ने कहा, "हां, किसी को एक दूसरे के विरुद्ध कोई बात नहीं बोलनी चाहिए और यदि भूल से बोल भी दे तो दूसरे दिन उस बात का सार्वजनिक तौर पर खंडन करना जरूरी है। बड़े भाई साहब को इसके लिए अपवाद मानना चाहिए क्योंकि उन्हें भाषण देने का शौक है।"

नकुल: भाषण एक मात्र इलाज

तबेला मालिकों की एक सभा को संबोधित करते हुए नकुल ने कहा, "हमारे बीच कोई मतभेद नहीं है। मैं अधिकतर मौन रहता हूं। इसलिए मेरे इस मौन का लोग मनचाहा अर्थ लगाते हैं और मेरे मौन के पीछे रहस्य खोजते हैं। लेकिन उन लोगों की खोज व्यर्थ जाएगी।"

"आप लोगों के बीच एकता बढ़े, इसके लिए आपके पास कोई प्लान है ?"

तबेला मालिक के इस प्रश्न के उत्तर में नकुल ने कहा, "हम सभी भाइयों को बराबर भाषण द्वारा जनता को बताते रहना चाहिए कि हम एक हैं और हमारे बीच कोई मतभेद नहीं है।"

—अनु.: गोपालदास नागर

नक्षत्र और आपका भविष्य

● पंडित पुनर्वसु

हमने लग्न की महत्ता पर पहले भी लिखा है। यहां हम पूर्व और पश्चिम दोनों पद्धतियों के आधार पर, लग्न के कारण पायी जानेवाली उन विशेषताओं की चर्चा करेंगे जिनके सहारे व्यक्ति पहचाना जा सकता है।

मेष

मेष लग्न : हार नहीं मानते !

मेष लग्नवाले व्यक्ति नियति-चक्र के अनुसार नयी श्रृंखला के प्रारंभ-बिंदु पर होते हैं। ऐसे व्यक्ति कुछ-कुछ आक्रामकता-भरे और स्पष्टवक्ता होते हैं। इनका मूल वाक्य होता है—'मैं हूं'। इनमें उत्साह बहुत होता है। ऊर्जा भी इनमें कम नहीं होती। मंगल और प्लूटो इनके विधायक ग्रह होते हैं, इसलिए कई कामों में पहल करना इनके स्वभाव का अंग होता है। मेष-प्रधान व्यक्ति शुद्ध मानसिक-वैचारिक विलास में विश्वास न करके अपने हर स्वप्न को चरितार्थ होते देखना चाहता है। अगर मेष लग्नवाले करने से पहले सोचना भी स्वीकार कर लें, तो उनकी उपलब्धियां द्विगुणित हो सकती हैं। इन लोगों में प्रतिस्पर्धा की भावना और चुनौती स्वीकार करने की प्रवृत्ति बहुत होती है। इनमें नेतृत्व करने की भी अपार क्षमता होती है, हालांकि इसके साथ यह भी सच है कि दूसरों पर शासन करने की लालसा के कारण ये क्रूर भी हो जाते हैं। ये लोग साधारणतः हार नहीं मानते। इनका एक गुण नियमितता भी है।

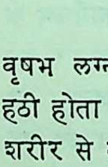

वृषभ

वृषभ लग्न : हठी व्यक्ति !

वृषभ लग्नवाले व्यक्तियों का स्वभाव हठी होता है। पृथ्वी तत्त्वयुक्त ऐसे लोग शरीर से बलिष्ठ होते हैं। ये कर्म में ही अध्यात्म ढूंढ़ते हैं। इन्हें विशिष्ट वस्तुओं से प्यार होता है। सांसारिक सुख-सुविधाएं ये खूब पाना और एकत्रित करना चाहते हैं। इनका मूल वाक्य होता है, 'मेरे पास हैं'। वृषभ लग्नवाले हर हालत में सुरक्षा चाहते हैं। कई बार इनमें संवेदना का अभाव भी देखा जाता है। उनकी ऐसी

प्रवृत्ति को देखते ही पश्चिम के ज्योतिर्विद इनका मनोनिवेश वृश्चिक लग्नवालों से बिठाते हैं। ऐसे लोग अच्छे कपड़ों के भी शौकीन होते हैं और सामान्यत: बड़े वफादार होते हैं। इन्हें संगीत, कला आदि में भी रुचि होती है, हालांकि यह भी सच है कि उपचेतन की गहरी परतों का एहसास इन्हें नहीं होता। इन्हें मित्र बनाने का शौक तब तक नहीं चढ़ता जब तक कि इन्हें यह न लगे कि व्यक्ति किसी काम आनेवाला है। ये लोग घोर ईर्ष्यालु होते हैं और संग्रह तथा अधिकार-भावना-ग्रस्त भी। इनकी मुख-छवि कई बार आकर्षक भी होती है। अधिकतर ऐसे लोग सफलता प्राप्त कर ही लेते हैं। चूंकि इनके लग्नचिह्न का मालिक शुक्र है, इसलिए सौंदर्य इन्हें प्रभावित करता है।

मिथुन

मिथुन लग्न : विरोध नहीं कर सकते !

मिथुन बुद्धि और व्यापार-प्रधान दोनों वृत्तियों का परिचायक है। ये तीव्रगामी होते हैं। इनका मूल वाक्य है, 'मैं सोचता हूं'। मिथुन का संबंध संचार-प्रसार है, पहचानना और वर्गीकरण करना इनका गुण है। कई बार ऐसे व्यक्ति वह सब कुछ, जिसकी इन्हें चाह होती है, प्राप्त नहीं कर पाते। इनकी वाणी में एक खास तरह का ध्वनन होता है। शब्दों के चुनाव के बारे में भी ये लोग सतर्क होते हैं। कई बार इनका बोलना इनके विपरीत जाता है। जानकारी की प्रवृत्ति इनमें बहुत होती है। ये हर क्षण कुछ नया सीखना चाहते हैं। लेखन के क्षेत्र में ये लोग सफल होते हैं। अगर इनकी शिक्षा-दीक्षा ठीक न हुई हो तो ये अपने साथ-साथ दूसरों के लिए भी दु:खदायी होते हैं। व्यापारी प्रवृत्ति के कारण तकनीकी कामों में इनका मन बहुत लगता है। ये लोग अगर प्रतिरोध भी करते हैं तो दबी जबान से। वैसे ये स्वयं भी मूर्तिभंजक होते हैं। इन्हें गत्यवरोध पसंद नहीं होता। डेन रुडयार के अनुसार बुढ़ापे में ये लोग प्रतिष्ठानबद्धता स्वीकार कर लेते हैं।

कर्क

कर्क लग्न : कभी बुरे नहीं !

कर्क लग्नवाले व्यक्ति संवेदनशील और भावुक होते हैं। इनका मूल वाक्य होता है, 'मैं महसूस करता हूं।' भावना में बहकर कई बार ये अव्यावहारिक निर्णय भी ले लेते हैं। कर्क लग्न स्त्रियों के स्वभाव के अनुरूप अधिक पड़ता है, इसलिए कि यह चिह्न गार्हस्थ्य और पारिवारिकता के घेरे में आता है। इन्हें अपमान से बड़ा डर लगता है। ऊपर से ये लोग एक सुदृढ़ किलेबंदी करते हैं ताकि इनका मर्म चोट न खाये। केकड़े की ही तरह ये ऊपर से कठोर मगर भीतर से

बेहद मुलायम होते हैं। ये कभी दांव नहीं लगाते जब तक कि जीतना निश्चित न हो। ये दूसरों के प्रति जिम्मेदारी भी खूब महसूस करते हैं। कर्क लग्नवाले दुरूह और उलझाव भी पैदा करते हैं। कभी वे महाकठोर, महासक्षम होने का आभास देते हैं और कई परिस्थितियों में बच्चों की तरह घबराये हुए, असहाय भी दीखते हैं। मगर हर हालत में इनका मंशा बुरा नहीं होता।

सिंह

सिंह लग्न : सतर्क होना चाहिए !

सिंह लग्नवाले अधिकार-भरे और उदार होते हैं। आत्माभिव्यक्ति इनकी सबसे बड़ी जरूरत होती है। इनका मूल वाक्य होता है, 'मैं करूंगा'। ऐसे व्यक्ति सदा आकर्षण का केंद्र बने रहना चाहते हैं। ये लोग स्वतंत्रता पसंद करते हैं, मगर उच्छृंखलता नहीं। इन्हें मानसिक एवं शारीरिक दोनों स्तरों पर प्रजनन अनिवार्य लगता है। ये यह मानकर चलते हैं कि दूसरे भी इन्हीं की तरह सम्यक और संपूर्ण हैं। इन्हें दोहराव पसंद नहीं। सिंह लग्नवालों से असहमत होनेवालों को सतर्क रहना चाहिए। सिंह लग्न स्त्रियों के लिए असुविधापूर्ण माना गया है। आत्मविश्वास से भरे सिंह लग्न-प्रधान व्यक्ति क्रुद्ध होकर फिर क्षमा भी कर देते हैं। इनमें अदम्य साहस होता है, मगर इनका लड़ना अनैतिक नहीं होता। विजयी होकर ये लोग और भी बड़प्पन दिखाते हैं।

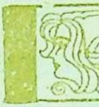

कन्या

कन्या लग्न : फूहड़पन नहीं भाता !

कन्या लग्न में जन्म लेनेवाले लोग ज्ञानपिपासु होते हैं। इनकी जिज्ञासा का कारण यह होता है कि ये पदार्थ को बुद्धि द्वारा शासित करना चाहते हैं। अपने काम में ये परिपूर्णता के पक्षपाती होते हैं, मगर साथ-साथ यह भी जानते हैं कि आदमी का मन एक अच्छा सेवक और घटिया मालिक है। ये लोग बहुत बुद्धिमान होते हैं, हालांकि कई बार इनमें संकीर्णता के भी दर्शन होते हैं। ये बाल की खाल निकालनेवाले होते हैं। इनमें श्रेष्ठ और निकृष्ट के विभाजन की अपूर्व क्षमता होती है। ये अच्छे आलोचक, संपादक होते हैं। इनका मूल वाक्य होता है, 'मैं विश्लेषण करता हूं'। इनमें आत्मनिषेध की अद्भुत क्षमता होती है। क्रोध में इनके लिए औषध तक जहर हो जाती है। इनके लिए धनसंग्रह संभव नहीं हो पाता। शब्द इन्हें बहुत प्रभावित करते हैं। फूहड़पन इन्हें नहीं भाता।

तुला

तुला लग्न : महात्यागी !

तुला लग्नवाले सहज ही सबका

मन मोह लेते हैं। ये अपने सिद्धांतों की बलि आसानी से नहीं होने देते। इनमें न्यायनिष्ठता भरपूर होती है। इनका ध्यान वर्तमान पर अधिक केंद्रित रहता है। इन्हें संगी-साथियों की विशेष जरूरत रहती है। नये विचार इन्हें बहुत आकर्षित करते हैं। अकसर ये लोग शांति स्थापना में मध्यस्थ होते हैं। इनका मूल वाक्य होता है, 'मैं संतुलन करता हूं'। ये क्रोध कम अभिव्यक्त करते हैं, मगर एक बार जब इनका पारा गरम होता है तो ये कुछ भी अनकहा नहीं छोड़ते। आलस्य इनके स्वभाव में नहीं होता, हालांकि कहा यही जाता है कि ये चुस्त नहीं। विवाह और साझेदारी इनके लिए जरूरी है। ये अच्छे सलाहकार व मनस्विद होते हैं। जनसंपर्क का कार्य ये बड़ी कुशलता से निभाते हैं। ये लोग अकसर महात्यागी भी देखे गये हैं।

वृश्चिक

वृश्चिक लग्न : ऊर्जायुक्त !

वृश्चिक को विषाक्त लग्न माना गया है। सब राशियों में वृश्चिक राशि अत्यधिक ऊर्जायुक्त है, इसलिए कि अकस्मात ऊर्जा विकीरित करनेवाला यूरेनस वृश्चिक राशि पर उच्च का होता है। तीव्र संवेदना, घनत्वपूर्णता आदि इसके गुण हैं। वृश्चिक का मूल वाक्य है 'मैं चाहता हूं'। आमूल परिवर्तन की अद्भुत क्षमता है इस चिह्न में। चूंकि वृश्चिक इच्छा-सिद्धांत से जुड़ी राशि है, इसलिए इन लोगों में काम भाव का आधिक्य होता है। प्रेम के बारे में ये भाग्यशाली भी होते हैं। विपरीत-योनि इनकी ओर सहज ही आकर्षित होती है। ये जिंदगी को काफी गंभीरता से लेते हैं, इसलिए जिस किसी समस्या से जूझते हैं उसके अप्रत्याशित परिणाम निकलते हैं। इन्हें रहस्य, अज्ञात, मृत्यु और पराशक्ति-जैसे विषय बहुत भाते हैं। अपनी कमजोरी से झुंझलाहट होती है, मगर दूसरों में कमजोरी देखकर ये जल्लाद का-सा व्यवहार करने में भी नहीं चूकते। इनमें घोर सहनशीलता होती है।

धनु

धनु लग्न : बहिर्मुखी !

धनु लग्न प्राकृतिक व्यवस्था का सबसे लाड़ला चिह्न है। ये बहिर्मुखी होते हैं। इनमें गुणात्मक विचार बड़ी तेजी से उठते हैं। इनकी चेतना नैतिकतायुक्त होती है। इन्हें अज्ञात सूत्रों से सहायता मिलती है। धार्मिकता का अंश इनमें औरों से अधिक होता है। ये समरसता और सदाशयता के पक्षपाती होते हैं। इनमें भविष्य को समझने-परखने की अनिर्वचनीय शक्ति होती है, फिर भी ये तत्काल नतीजों पर कूद पड़ते हैं। ये अप्रिय सत्य भी खूब बोलते हैं। परेशानियों में ये निराशाभरी बातें करने लग

जाते हैं। हिम्मत हार बैठते हैं।

ये तेज चलते हैं। इन्हें प्रशंसाभरे शब्द सुनने का शौक होता है। धनु लग्नवाली स्त्रियां अच्छी गृहिणियां नहीं होतीं, हालांकि अच्छी प्रियाएं हो सकती हैं। धनु लग्नवालों का मूल वाक्य है 'मैं देखता हूं'।

मकर

मकर लग्न : कंजूस स्वभाव !

मकर लग्नवाले हमेशा कमी देखते हैं। वे न अपने से संतुष्ट होते हैं, न परिवेश से। ऐसे लोग पाखंडी भी होते हैं, अर्थात वे जो कहते हैं, उससे कुछ अलग ही बरतते हैं। इनका रूखापन रहस्यपरक होता है।

इनमें दार्शनिकता की झलक भी मिलती है और साथ ही घोर पदार्थप्रियता भी। इनका मूल वाक्य है, 'मैं बरतता हूं या मैं झेलता हूं'। इनमें गजब की प्रमेय शक्ति होती है : ये योगी, संन्यासी, नेता कुछ भी हो सकते हैं। इन्हें अपने पर बड़ा गुमान होता है और भरोसा भी। ये शंकालु होते हैं।

ये कई वार कल पर टालनेवाले भी होते हैं मगर हर स्थिति में ये बड़े मेहनती होते हैं। समस्याएं सुलझाना इनके लिए बड़ा सरल होता है। ये कंजूस होते हैं और अकसर बासा भोजन इन्हें अच्छा लगता है।

कुंभ

कुंभ लग्न : अच्छी याददाश्त !

कुंभ लग्नवालों के मन की थाह पा लेना बड़ा कठिन है। ये अच्छे मित्र चाहते हैं। इनका मूल वाक्य है, 'मैं जानता हूं'।

इन्हें लगता है कि इन्हें कोई नहीं समझता। ये बहस अच्छी कर सकते हैं। इन्हें पाखंड से चिढ़ होती है। इस लग्न के व्यक्ति सब कुछ और कुछ नहीं, दोनों हो सकते हैं। इनके स्त्री-पुरुष दोनों तरह के मित्र हो सकते हैं। इन्हें खेलकूद बिलकुल पसंद नहीं। वे अतिशयोक्ति भी करते हैं।

इनकी चुप्पी खतरनाक हो सकती है। इन्हें स्नायविक रोगों का खतरा रहता है। ये स्वार्थी भी होते हैं। अपना काम निकल जाने पर ठंडा बरताव करते हैं, मगर मानवता के प्रति इनके मन में काफी छटपटाहट होती है। अकसर ये लोग बड़े संस्थानों से जुड़कर ज्यादा बढ़िया काम करते हैं।

इनका हर कार्य निर्वैयक्तिक भी हो सकता है। इनकी याददाश्त बहुत अच्छी होती है।

कुंभ लग्नवालों में गूढ़ विषयों को समझने और उनका विश्लेषण करने की क्षमता होती है।

मीन

मीन लग्न : कमजोर धारणा-शक्ति दूसरों की भावनाओं का ध्यान रखने में मीन लग्नवाले सबसे अधिक सतर्क होते हैं। ये बराबर यही चाहते हैं कि इनके द्वारा कुछ भी गलत न हो। इनमें धारणा-शक्ति कमजोर होती है, इसीलिए ये जल्दी प्रभावित हो जाते हैं। ये हमेशा दूसरों की कालिमा धोते हैं और अक्सर प्रताड़ित किये जाते हैं। ये हमेशा थके-थके लगते हैं। चोट खाकर भी ये वार नहीं करते। इनमें विनोदप्रियता भी होती है। इनमें आशावादी और निराशावादी दोनों तरह के लोग मिलते हैं। अधिकतर इन लोगों में महत्त्वाकांक्षा का अभाव होता है, विशेष रूप से सांसारिक संपदा को लेकर। इनसे अकेले भी नहीं रहा जाता और ये अपनी वैयक्तिकता भी बनाये रखने की कोशिश करते हैं। कई मीन लग्नवाले दिवास्वप्नों में भी खोये रहते हैं। इनकी कल्पनाशक्ति बड़ी तीव्र होती है। लगातार इनके मन में तरंगें उठती-गिरती रहती हैं। ये नियतिवाद को सहारे के लिए पकड़ते हैं, फिर घिसटते चले जाते हैं। जिस तरह मछली के साथ आदमी का व्यवहार है, प्रकृति, मीन लग्नवालों से उसी तरह कांटा निगलवाती है। इनका मूल वाक्य है, 'मैं मानता हूं'।

शाश्वत सत्य

देख रहा हूं
बदल चुकी है सृष्टि
और सब जीर्ण-पुरातन
महानाश की ज्वाला में जल
राख हो गये

उपवन भी अब उजड़ चुका है
और महायंत्रों के बल पर
ऋतु-परिवर्तन हुआ असंभव
कोयल किसको गीत सुनाये !

आसमान का चांद गिरा
भूखी छाती पर
समक्ष भुक्खड़ों ने रोटी का टुकड़ा उसको
नोच लिया है मांस बदन का
केवल हड्डी ही बिखरी है
उन मजदूरों की टोली में
पंछी कैसे जान जलाये !

कवि की वाणी सत्य हो गयी
'पावक-पग धर' आया नूतन
अब मनु के वंशज रहते हैं
एक बराबर, क्षुधा-तृप्त सब
पर होता आश्चर्य मुझे यह
क्यों अब भी मेरी मनोरमे
तुम वैसी की वैसी ही हो
स्नेहमयी, मादक, आकर्षक !

—सुरेन्द्र वर्मा

—द्वारा मृत्युंजयप्रसाद एम. पी.
२१, नार्थ एवेन्यू, नयी दिल्ली—१

ज़रा ग़ौर से देखिये

कुछ अजीब लगा न ? आपने ठीक सोचा। न स्क्रीन से झांकती हुई लड़कियां। न कोई दिखावा। न कोई ध्यान भटकाने वाली विधियां।

हम केवल आपको अपना टी वी दिखाना चाहते हैं। और यह बताना चाहते हैं कि टेक्स्ला की पसन्द आपके लिये क्यों बेमिसाल है।

सब से बड़ी बात, टेक्स्ला भारत का एकमात्र आल वॅल्व सेट है। खरीद के बाद यह आपके लिए सहज आनन्द का स्रोत बन जाता है... और हमेशा, हमेशा के लिए चलता है। न स्क्रीन पर टेढ़ी-मेढ़ी लकीरें, न कोई विकृतियां। और हर दृष्टि से भव्य, शानदार प्रसारण। यदि आपको टी वी खरीदना है, तो टेक्स्ला ही को पसन्द कीजिए। आपकी पसन्द सही रहेगी।

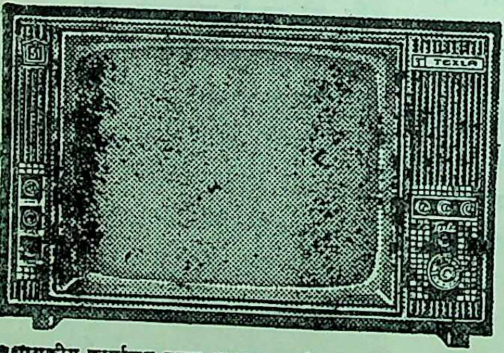

Texla TV

आपकी सही पसन्द

प्रशासकीय कार्यालय एवम् कारखाना सी-४६, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, फेस II, नई दिल्ली-११००२०
फोन ६३११६६, ६३२६७४
सेवा केन्द्र ३, मस्जिद रोड, जंगपुरा, नई दिल्ली-११००१४ फोन ६६४७५६

कहानी

मन्नत

• कृष्णा अग्निहोत्री

हलके वासंती फूल सागौन के वृक्ष पर भर-भरा उठे और बरसात की पहली धारा ने कुंवारी नर्मदा के जल को हलका मटमैला बना दिया।

ओंकारेश्वर रोड से नर्मदा तक पहुंचने के लिए पूरे ग्यारह मील भीतर जाना पड़ता है।

बूढ़ी कुसुम अपनी गठरी और लोटे को पकड़े तेज कदम से चलती जा रही है।

अंजन की पतली नयी-नयी पंक्तियों के बीच एक छोटा-सा चेहरा आंका और जैसे उसने पुकारा... 'दादी ऽ ऽ इ ऽ ऽ ई ऽ ऽ ऽ रुक जाओ न! ... मैं भी साथ चलूंगी।' पर वे रुकी नहीं ... सिकुड़ी आंखों के नीचे आ गये आंसूओं को अपनी जर्जरित धोती से उसने पोछ लिया।

पत्ते खड़खड़ाये ... फूल सड़कों पर गिरे और उस सूनी सुबह में वह पुनः आगे बढ़ गयी।

"जा रही हो तो जाओ। मैं तो जानती हूं, सब कोरी धमकी है। कहां जाओगी भला? इस बुढ़ापे में तुम्हारे कहां सींग समाएंगे। हमारे घर में रहकर हमारी ही छाती पर होला भूनो ... जा रही हो तो गांठ भी खाली करती जाओ ...।" शांति बहू ने बेहद उपेक्षा से सास से कहा था। गांठ में बीस पैसे थे ... सोच रही थी कि एकादशी पर सिंघाड़े के आटे का सत्तू घोलकर पी जाएगी ... उसने वे पैसे वहीं पटके और पीछे कोठरी में

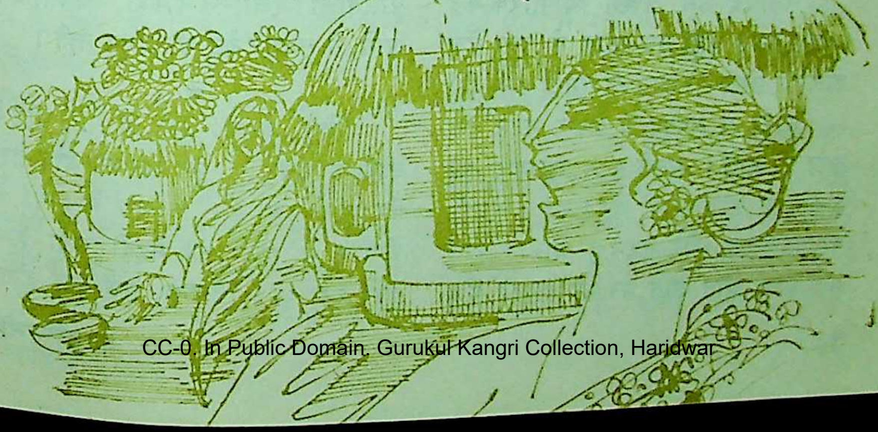

आकर चुपचाप सनाके में बैठ गयी। वहां चड़चड़ाती रस्सी पर एक फटी चेक की चादर टंगी थी। पास की सस्ती अलवान की रस्सी-खटिया के फटे गद्दे के नीचे शादी की पुरानी सिल्क की तार-तार साड़ी रखी थी, जिसमें छुपाकर उसने रुपये के आकार की एक चांदी की डिब्बी रख छोड़ी थी—लक्ष्मण की निशानी, उसने शादी की वर्षगांठ पर देकर कहा था, "देख, चांदी मैली हो सकती है, पर सफेदी उसकी नहीं खत्म होती ... मेरे प्यार की चमक भी कभी समाप्त नहीं होगी।"

अपनी आखिरी पूंजी, वही डिबिया वह पोती तारा को दे आयी थी।

लक्ष्मण तो अनाथ था। उसे जिन्होंने पाला-पोसा वे भी गुजर गये और उनके रिश्तेदारों को वे पति-पत्नी नही सुहाये।

गोरी-गोरी सुंदर कुसुम का तो लक्ष्मण दीवाना था, वह क्षुब्ध होकर कहता, "देख री, मुझे सजा देना है तो यहां मैं नहीं रहूंगा।" एक दिन जब घर की मालकिन कुसुम को दुत्कार रही थीं तब उसने वह घर छोड़ दिया।

सनावद उसे अच्छा व्यापारिक-केंद्र लगा। उसने वहीं बस-स्टाप के पास बेंच डालकर छोटी-सी चाय की गुमटी डाल दी।

वाड़ी में मक्का से लेकर मटर तक उगा ली गयी। अच्छे वस्त्र पहनकर अब कुसुम की खायी-पीयी देह मकई के दानों-सी चमकदार और नरम हो आयी। परंतु छह बरस बीत जाने पर भी उसकी गोद खाली की खाली रह गयी।

किसी ने कहा ओंकारेश्वर जाकर मन्नत मना लो, सब ठीक हो जाएगा। कुसुम भी जाने को तैयार हो गयी थी, परंतु लक्ष्मण ने उसके गालों पर हलकी थपकी देकर कहा था, "जब पैर भारी होगा तभी चलना, अभी तो यात्री भी बढ़ रहे हैं . . . तेरे हाथों की गरम मसाले की कचौड़ियां उन्हें बहुत भाती हैं।"

★

ताव . . . रोष में लिपटी बूढ़ी कुसुम ओंकारेश्वर के अंदर नर्मदा किनारे तक आ गयी और एक बेलपत्ते की दुकान पर बैठकर हांफने लगी।

"क्यों मांजी, कुछ लेना है चढ़ाने को?"

"नहीं। कुछ नहीं लेना।" कुसुम बूढ़ी उठ बैठी।

"सुबह-सुबह, बोहनी के समय न जाने कहां से आ गयी बुढ़िया। दुकान है, कोई धर्मशाला नहीं जो बैठी रहो।"

कुसुम शिकस्त देह से एक सीढ़ी पर बैठ गयी। सुस्ताती बुढ़िया को कोंचकर पासवाली भिखारिन ने कहा, "चलती बनो आगे, ये तुम्हारे बेटे की जगह नहीं।"

★

"देख कुसुम, धीरे से . . . धीरे से सीढ़ियां उतर . . . पूरे छह वर्ष बाद तेरा पैर भारी हुआ है।" लक्ष्मण के हाथों में रोमांच से कुसुम का मेंहदी लगा हाथ कांप रहा था। "देखना, तुझे बेटा होगा

...ठीक तेरे-जैसा गोरा-गोरा, प्यारा-सा। उसका नाम रखूंगा श्रवणकुमार, लक्ष्मण का श्रवण।"

श्रद्धालु मुक्त-मन से प्रसाद बांट रहे थे—यात्री श्रद्धापूर्वक उसे आंखों से लगा ग्रहण कर रहे थे।

लक्ष्मण ने पूजा के वाद सवा सेर शुद्ध घी के लड्डू मन्नत मना कुसुम के हाथों से बंटवाये।

बूढ़ी कुसुम सीढ़ियां उतरकर नीचे आ गयी। वो ही जगह है न . . . वो ही... एकदम वतख की चोंच-जैसी कटावदार पत्थर की उस खाली जगह पर ही तो लक्ष्मण और वह बैठे थे। नजर धुंधली होने पर भी वह पहचान रही थी उस लिखावट को—अंदर की ओर लक्ष्मण ने सफेद चाक से लिखा था—कुसुम, लक्ष्मण और श्रवण।

★

उस पार जाने के लिए उसके पास तो पैसे तो नहीं थे. . . फिर भी वह चुपचाप नाव में वैठ गयी थी कि कोई भी भला व्यक्ति उसके हिस्से के दस पैसे चुका देगा। परंतु पहले मंदिर तक पहुंचने के लिए आतुर भीड़ बढ़ गयी और नाविक उसे कोसने लगा, "बुढ़ापे में भी बुढ़िया धोखा-धड़ी से वाज नहीं आती अव क्या टुकुर-टुकुर ताकती है . . ., जा उतर जा।" कुसुम को याद आया कि उसकी मां कहा करती थी, "देख कुसुम, किसी को बुड्ढी . . . बुड्ढा कहकर नहीं बुलाया जाता ... तू क्या जिंदगी भर बच्ची या जवान बनी रहेगी? कहा कर . . . बूढ़ी चाचीजी. . .बूढ़े काकाजी, समझी न?"

सामने मंदिर तक पहुंचनेवाली प्रत्येक सीढ़ी पर कोई न कोई बूढ़ा . . . गेरुए वस्त्र के साथ रुद्राक्षमाला धारण किये बैठा था। वह भी उनकी पंक्ति की आखिरी सीढ़ी पर बैठकर सामने मटमैले पानी में नहाती स्त्रियों की नग्न देह देखती रही।

कुसुम ने अपनी उन बूढ़ी आंखों के कोर पोंछ लिये जिन्हें देख लक्ष्मण कहता था, "कुसुम, तू रोया मत कर . . . मैं तेरी आंखों में आंसू नहीं देख सकता।"

एक लावण्यमयी युवती सामने आ खड़ी हुई ... केश काले घने ... कमर तक। आंखें बड़ी-बड़ी गोल कांसे की कटोरी-जैसी।

पतली कमर ... और भरे-भरे नितंव . . . साथ तीन लड़के . . .।

दूसरे लड़के को प्यार से कुसुम पूनम कहती है और छोटे को शशि।

तीनों की शादियां भी हो गयी हैं। पूनम पॉलिटेकनिक का कोर्स पूरा कर दूसरे शहर में मोटर पार्ट्स की एक छोटी-सी दुकान खोलकर आनंद से रहता है, शशि सरकारी नौकर है।

श्रवण के जब वेटा हुआ तो लक्ष्मण की खुशी चौगुनी हो गयी, 'चलो अव तो अपनी स्वर्ग-नसेनी का भी ईश्वर ने बंदोवस्त कर ही दिया।' लेकिन पोते के चार वर्ष पूरे करते-करते लक्ष्मण

टायफायड बिगड़ जाने से जीवित न रह सका।

लक्ष्मण मरते-मरते उसे दिलासा देता रहा था, ‘तीन बेटों के लिए तू खटती रही है . . . व्रत उपवास किये हैं . . . कितने गरीब लड़कों को खाना खिलाकर इनके दीर्घायु होने की कामना है . . . अब तुझे क्या भय है ?’

कुसुम की मां कहा करती थी, “बेटी, जो बोओगी वही खाओगी।” इसीलिए कुसुम किसी बेटेवाली की मदद करने से कभी नहीं चूकती।

बरसी पर आये शशि से बड़े मन से कुसुम ने कहा था, “बेटा, अपने साथ शहर ले चल। कुछ दिनों को तो हवा-पानी बदल जाएगा।”

“. . . सो तो है . . . पर घर वहां बहुत छोटा है, उस पर तुम तो जानती हो कि सुधा के मां-बाप ने शादी ही इस विश्वास पर की थी कि वह अकेली मेरे ही साथ रहेगी।”

कुसुम चुप हो गयी।

कमजोर होने पर भी कुसुम सुबह नहाना नहीं बंद करती . . . इधर उसकी खांसी बढ़ती जा रही थी। शांति ने पति से कहा था, “लगता है इन्हें दमा हो गया है। अपना भरापूरा घर है . . . क्यों रोग फैलाते हो। न हो तो खेतवाले कमरे में रख दो।” श्रवण को भी अपने बेटे-बेटियों की चिंता हो आयी और उसने बूढ़ी मां को वनवास देने में तनिक संकोच नहीं किया।

बीमारी से अधिक कुसुम को खेत का सूनापन सताता। अपने बरसों से बसाये घर के टीन . . . और दीवारों से भी उसे ममता है . . . उसके शालिग्राम भी तो वहीं है।

राखी पर पड़ते मेह में खेत की मुंडेर पर बैठी वह आचार के मर्तबानों और पापड़ों के गीले होने की चिंता तक करती, पर बहू शांति ने उस दिन भी उसे वहीं टिफन में खाना भेज दिया था।

कुसुम की एक ही कमजोरी है सुबह और शाम को गरम-गरम चाय। लक्ष्मण तो स्टोव पर स्वयं ही इलायची डली चाय बनाकर उसे पिला देता था।

यहां सूखी लकड़ी तक नहीं।

उस पर दूध भी खाने के साथ ही भेजा जाता।

गीली टपटपाती बौछार में एक दिन कुसुम के पलंग के पास जब सांप बैठा फुफकारता रहा, तब वह सुबह ही बिलखती हुई पैदल ही श्रवण के पास जा पहुंची। हलके बुखार से त्रस्त कुसुम जब पोटली लेकर खांसती हुई आगे बढ़ रही थी तो पतोहू बोली, "ईश्वर कितनी लंबी उम्र दे देता है कि लोग दूसरों पर बोझा बन जाते हैं।"

"बहू, जीना-मरना अपने वश में कहां? पहले तो लोग बुजुर्गों की सेवा करना देवता की सेवा समान समझते थे। अब तुम मुझे देख भी नहीं पातीं।" पतोहू बेहद नाराजगी से चली गयी और शांति ने कह दिया था, "ठीक है, यहीं रहो. . . छाती पर होला भूनो! बहुत तीर्थ का शौक है, तो चली जाओ न . . . ओंकारेश्वर तो पास ही है।"

रात बहुत काली घनघोर थी।

बहू ने कुम्हड़े की सब्जी मेथी और राई से छोंककर गरम-गरम चने की भुनी दाल की कचोड़ियां बनायी थीं, उसे पता है कि कुसुम को ये पसंद हैं तब भी वह भूखी और रूठी सास को बुलाने नहीं गयी। सुगंध से बेचैन होने पर भी कुसुम मुंह घुमाकर टूटी खाट पर लेटी रही। तारा ने दो मीठी गोलियां दादी के मुंह में ठूंस दी थीं, बस उसी ठंडक को लिये चार बजे प्रातःकाल उन्होंने अपना भरा-पूरा घर मेहमान-जैसा छोड़ दिया था।

धूप तीखी पर ढली हुई थी और, भूख से कुसुम मुरझाने लगी। पता नहीं कैसे क्या उसे सूझा कि वो भी हतबुद्धि हो एक सीढ़ी पर बैठ मीरा का भजन गाने लगी।

अभी हलका स्वर गूंजा ही था कि ऊपर सीढ़ीवाली साधुनी ने उस पर हमला बोल दिया।

झपट्टा मारकर उसने कुसुम को नीचे धकेलकर कहा, "तेरे बाप की जायदाद है क्या . . . कहीं और जा? इस पर हमारी साथिन बैठकर पूजा करती है।"

कुसुम का घुटना फूट मया पर वह रो भी न सकी। चुपचाप दूर नीचे

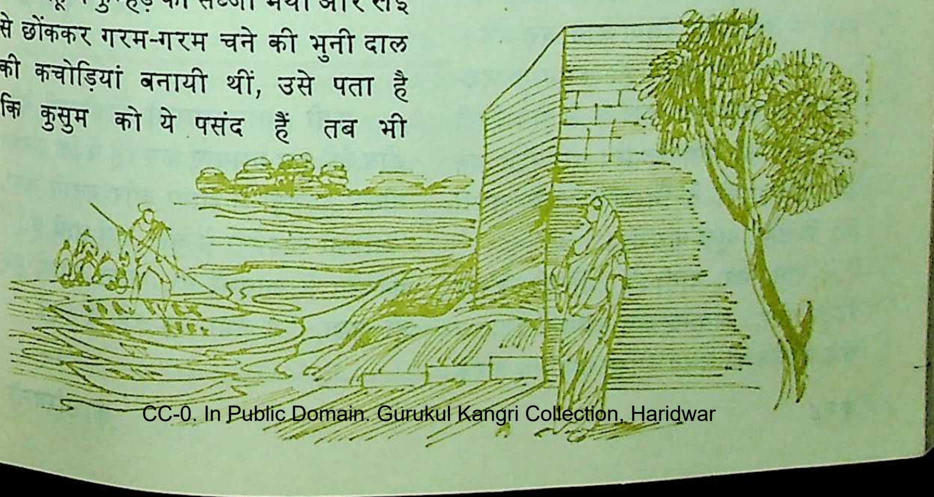

ही जाकर बैठ गयी। उसने देखा कुछ दूर पर व्यवसायी वर्ग के कुछ लोग दाल-वाटी बना रहे हैं। गरम राख में वाटियों की पीली-पीली रंगत सूर्य की किरणों में बहुत आकर्षण लग रही है।

कुसुम सब कुछ भूल वहां घसिटकर पहुंच तो गयी और मुंह फाड़कर बहुत ही नम्र स्वर से बोली, "भैया, मुझे भी खाने को दे दो . . . ब्राह्मणी हूं, तुम्हें आशीर्वाद दूंगी।"

"क्यों, क्या तुम्हारे घर में कोई नहीं?"

"हैं तो।"

"तब लड़झगड़कर आ गयी हो क्या?"

"जाओ, भीख मांगना बुरी बात है, घर लौट जाओ। हमें ऐसे आशीर्वाद नहीं चाहिए।" और उन सज्जन ने एक वाटी पास बैठे कुत्ते को डाल दी।

एक लावारिस कुत्ते-सी चीखती-चिल्लाती कुसुम मनुहार करने लगी, "भैया तुम्हारे दो काम कर दूंगी . . . पर खाने को दे दो . . . ।" परंतु वे सज्जन उस थकी-मांदी बुढ़िया की ओर से आंखे फेर हाथ में गंगाजली लिये आगे बढ़ गये।

लगभग बुद्धिहीन हो कुसुम ने मछलियों को डाले गये चनों में से शेष मिट्टी सने चनों को उठा लिया। दस-पंद्रह चने और ठंडे पानी ने मिलकर उसके खाली पेट में उमेठें शुरू कर दीं।

रात भर पानी में भीगती कुसुम ठिठुर गयी . . . अब वह अंत समय में देवालय तक पहुंचने की समग्र शक्ति एकत्रित करके घसीटती हुई सीढ़ियां तय करने का प्रयास करने लगी। इस बार तो वह ईश्वर से मन्नत मांगेगी कि बुढ़ापा कभी मत देना...।

*

तीर्थ के घाट पर ढलती रात के आंचल से झांककर सुबह ने देवालय के दरवाजों पर दस्तक दी . . . ।

दरवाजे खुले, दिनभर के बासी फूल और प्रसाद के टुकड़ों का ढेर बाहर आ गिरा।

ठंडी हवा ने लहरों को छेड़ा और वे मचलकर शोर करने लगी।

धर्मशाला में ठहरे श्रद्धालु भक्तजन नहा-धो अभ्यर्थना हेतु आने-जाने लगे।

देवालय के आस-पास बने प्रत्येक छोटे-छोटे मंदिरों में स्थापित हर मूर्ति के पास भक्त श्रद्धा से पैसे चढ़ाकर नतमस्तक हो रहे थे। और उधर बूढ़ी कुसुम दस-पैसे के लिए तरसकर लाचारी में ही देवालय की एक सीढ़ी पर पड़ी आखिरी दम तोड़ रही थी।

——गवर्नमेंट गर्ल्स डिग्री कॉलेज,
खंडवा (म. प्र.)

रूसी रसायनशास्त्री निकोलाई वेकेटोव बैठे कुछ गणनाएं कर रहे थे कि उनका नौकर हड़बड़ी में आया और बताने लगा, "आपकी लाइब्रेरी में चोर घुस आये हैं!" वेकेटोव ने कागजों पर ध्यान गड़ाये हुए ही पूछा, "वे क्या पढ़ रहे हैं वहां"

जब मुर्दे को बंदी बनाया गया

• दीनदयाल दिनेश

मुरदा और बंदी! बात सुनने में अटपटी लगती है, किंतु है बिलकुल सत्य! यह घटना किसी ऐसे-वैसे देश की नहीं अपितु संसार में उत्कृष्ट सभ्यता का दावा करने वाले और वैधानिक व्यवस्था के पूर्ण पोषक इंगलैंड की है। जिस व्यक्ति के शव को बंदी बनाया गया था वह इंगलैंड का ही नहीं वरन अपने समय का संसार का सर्वश्रेष्ठ स्वाधीन-चेता संसदीय वक्त था। उसका नाम था रिचर्ड ब्रिंसले शेरीडन।

शेरीडन का जन्म सन १७५१ में आयरलैंड के डबलिन नगर में हुआ था। उसका पिता नाटकों में भाग लेनेवाला पेशेवर अभिनेता था। उस युग में अभिनेताओं को वहां के समाज में अच्छी दृष्टि से नहीं देखा जाता था। हैरो के जिस विद्यालय में वह अध्ययन करने गया था, वहां कुलीन वर्ग के लड़के पढ़ते थे। अभिनेता का पुत्र होने के कारण शेरीडन पर वे कटाक्ष किया करते थे। एक बार जब एक प्रसिद्ध डॉक्टर के पुत्र ने इसी बात को लेकर उसे छेड़ दिया तो शेरीडन ने कहा था, "बात तो ठीक है, अंतर केवल इतना है कि मेरे पिता लोगों को हंसाकर अपना जीवनयापन करते हैं जब कि तुम्हारे पिता उनकी हत्या करके अपनी आजीविका कमाते हैं।"

सफल नाटककार : नाटक से दूर

ऐसे कटाक्षों का शेरीडन सदा मुंहतोड़ उत्तर तो दे देता था फिर भी इन बातों का उस पर इतना प्रभाव पड़ा कि वह एक सफल एवं प्रख्यात नाटककार होते हुए भी जीवन भर अभिनय के क्षेत्र से दूर रहा। उसने जिस युवती से प्रेम-विवाह किया था वह एक सुप्रसिद्ध गायिका थी। उसके कंठ में इतनी मिठास थी कि उसका गायन सुनने के लिए थियेटर-हाल खचाखच भर जाते थे, परंतु निर्धन और ऋणग्रस्त हो जाने पर भी शेरीडन ने अपनी पत्नी को मंच पर गाने की अनुमति नहीं दी। वह इस बात को सहन नहीं कर सकता था कि लोग उसे पेशेवर गायिका का पति कहकर पुकारें। उसे केवल एक ही धुन थी कि लोग उसे कुलीन समझें और इसके लिए वह आडंबर पर इतना रुपया व्यय करता था कि सदैव ऋण के

भार से दबा रहता था।

उस समय इंगलैंड की संसद में दो दल थे—टोरी तथा विग। टोरी राजा के समर्थक थे और विग उसके विरोधी। आगे जाकर विग दल में से ही लिबरल दल का विकास हुआ। शेरीडन विग की ओर से संसद का सदस्य चुना गया था। संसद के सभी सदस्य उसका प्रथम भाषण सुनने को अत्यधिक उत्सुक थे। शेरीडन ने पूरी तैयारी के साथ संसद में अपना प्रथम भाषण दिया। जब भाषण समाप्त करके उसने प्रेस-कक्ष में उपस्थित अपने एक पत्रकार मित्र से उसकी सम्मति पूछी तब उसने उत्तर दिया, "मुझे खेद है कि तुम गलत क्षेत्र में आ गये हो। अच्छा हो कि तुम लेखन-कार्य में लगे रहो।" परंतु इस टिप्पणी से वह निराश नहीं हुआ और कुछ ही समय में उसने उस युग में अपने आपको संसद का सर्वश्रेष्ठ वक्ता सिद्ध कर दिया, जिसमें विलियम पिट, बर्क और फॉक्स-जैसे धुरंधर संसदीय वक्ता विद्यमान थे।

हेस्टिंग्ज के विरुद्ध भाषण

जब भारत के तत्कालीन गवर्नर-जनरल वारेन हेस्टिंग्ज द्वारा अवध की बेगमों के प्रति किये गये दुर्व्यवहार की चर्चा इगलैंड की संसद में उठी तब शेरीडन ने हेस्टिंग्ज के विरुद्ध पांच घंटे तक ऐसा तर्कपूर्ण ओजस्वी भाषण दिया था कि संपूर्ण संसद मंत्र-मुग्ध-सी हो गयी थी और प्रधान मंत्री पिट ने यह कहकर संसद का अधिवेशन स्थगित कर दिया था कि इस समय सारी संसद एक जादूगर के प्रभाव में है। इतना सारगर्भित भाषण ब्रिटिश संसद में पहले कभी नहीं दिया गया था। मानव-मस्तिष्क को आंदोलित अथवा नियंत्रित करने के लिए प्रतिभा या कला जो कुछ भी कर सकती है, उस सबका समावेश इस भाषण में था। इस भाषण के विषय में लार्ड बायरन ने अपनी डायरी में लिखा था—'सर्वोत्कृष्ट भाषण, जो इस देश में न कभी दिया गया और न कभी सुना गया।'

शेरीडन ने दो संक्षिप्त अवधियों को छोड़कर अपना संपूर्ण संसदीय जीवन विरोधी सदस्य के ही रूप में व्यतीत किया। शासकीय दल के विरुद्ध रहते हुए भी इंगलैंड के युवराज से उसकी घनिष्ठ मैत्री थी। वे प्रायः साथ ही उठते-बैठते और खाते-पीते थे। अनेक बार तो शेरीडन युवराज पर भी सार्वजनिक रूप से कटाक्ष कर बैठता था।

ऋणग्रस्त : सहायता लेने से इनकार

युवराज से मैत्री होते हुए भी शेरीडन ने कभी इसका लाभ नहीं उठाया। सन १८०९ में जब उसकी सारी संपत्ति जलकर स्वाहा हो गयी और वह १८१२ ई. में संसदीय चुनावों में भी परास्त हो गया, तब वह ऋण में बुरी तरह ग्रस्त हो गया। उस समय भी युवराज ने उसे आर्थिक सहायता देनी चाही, लेकिन इस स्वाभिमानी व्यक्ति ने अस्वीकार कर दिया। युवराज

ने उसे लोकसभा में मनोनीत करने का प्रस्ताव रखा। इसे भी उसने अस्वीकार कर दिया, यद्यपि वह जानता था कि संसद का सदस्य होने के नाते उसे ऋण-दाताओं के विरुद्ध जो संरक्षण प्राप्त है, वह सदस्य न रहने पर जाता रहेगा और वे उसे केवल न्यायालय में ही नहीं घसीट सकेंगे, अपितु कारागार में भी बंद करा सकेंगे।

परिणाम यह हुआ कि ऋणदाताओं ने उसके विरुद्ध मुकदमे दायर किये और १८१५ ई. में उसे बंदी बना लिया गया। उसके कुछ मित्रों ने उसे तत्काल मुक्त करा लिया, किंतु इससे उसके मन को भारी आघात लगा। सन १८१६ में जब वह मृत्यु-शय्या पर पड़ा था तब एक अन्य 'शेरिफ' के अधिकारी ने उसे बंदी बनाकर ले जाना चाहा, परंतु शेरीडन के चिकित्सक ने यह कहकर रोक दिया कि यदि शेरीडन को ले जाया गया तो वह रास्ते में ही दम तोड़ देगा।

शव की गिरफ्तारी का वारंट

कुछ दिन बाद ७ जुलाई को शेरीडन ने अपने प्राण त्याग दिये। जब उसका शव वेस्टमिंस्टर एबे में दफनाये जाने से पूर्व, लोगों के दर्शनार्थ ग्रेट जार्ज स्ट्रीट में, रखा हुआ था तब एक कुर्क अमीन दर्शनार्थियों के वेश में वहां पहुंचा और पांच सौ पौंड के ऋण के मामले में राजा के नाम पर शव की गिरफ्तारी का वारंट उसके ऊपर रख दिया। अब बिना ऋण चुकाये शव नहीं दफनाया जा सकता था। अंत में, उसके दो मित्रों ने ढाई-ढाई सौ पौंड देकर शव को मुक्त कराया।

शेरीडन का शव 'कवि अनुभाग' (पोइट्स कार्नर) में दफनाया गया।

उसके अंतिम दिनों की निर्धनता और भव्य अंतिम संस्कार पर टिप्पणी करते हुए एक फ्रांसीसी समाचारपत्र ने लिखा था, "यदि किसी भी विद्वान के लिए रहने का कोई उपयुक्त स्थान हो सकता है तो वह फ्रांस है, और मरने के लिए उपयुक्त स्थान इंगलैंड।"

——सैलानी भवन, घोंडा, दिल्ली-११०१५३

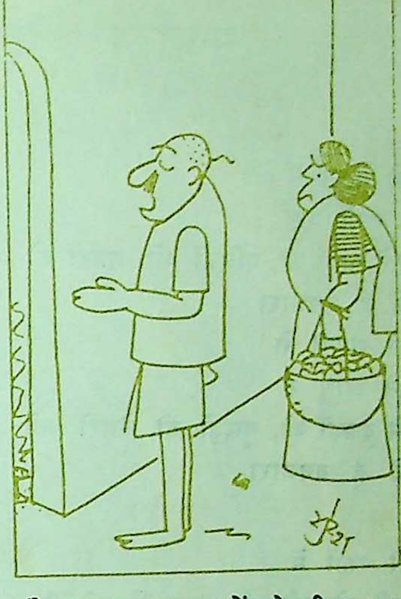

'हे भगवान, इस घर में जो भी फल आये उसे खट्टा कर देना, जिससे वह नौकरों को खाने को मिले।'

बनजारा : एक गीत-संदर्भ

रूखी यात्रा में
टूटे कंधों पर
कितने गांवों को, गलियों को, शहरों को
लादे है बनजारा
बुनते सपनों से
छनते आंसू से
जन्मे दुखड़ों को, मुखड़ों को, चेहरों को
लादे है बनजारा

सूनी राहों में
प्यासी दोपहरी की छाया मिलती है
वंदनवारों के
भारी-भारी मन से देहरी हिलती है

छत से जीने तक
आंसू पीते तक
चूल्हे की धुंधुआती ठहरी नज़रों को
लादे है बनजारा

सुख के मीतों ने
दुख की आहट पाकर कन्नी काटी है
पर्वत हंसता है
ताना दे-देकर मुसकाती घाटी है

पीकर छल का जल
बौराया काजल
जंगल-जैसे उलझे-उलझे गजरों को
लादे है बनजारा

उसकी आंखों में
धरती थोड़ी है ज्यादा तो पानी है
रेगिस्तानों में
उसने आंधी से लड़ने की ठानी है

बहरे सागर की
गहरी नदिया की
धारों की, ज्वारों की उठती लहरों को
लादे है बनजारा

नंगी पीठों पर
कोमल गांधारों ने कोड़े खाये हैं
हर सन्नाटे में
पूरी ताकत से वे ही तो गाये हैं

सहमे-सहमे-से
टूटे-टूटे-से
सहसा गूंगे होते छंदों अधरों को
लादे है बनजारा

— वीरेन्द्र मिश्र —

कृष्णकुंज, दादाभाई क्रास—३, बम्बई–४०००५६

योगी हों
या प्रेमी—
साथ रहेंगे—
हम दोनों!

छाया : प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया

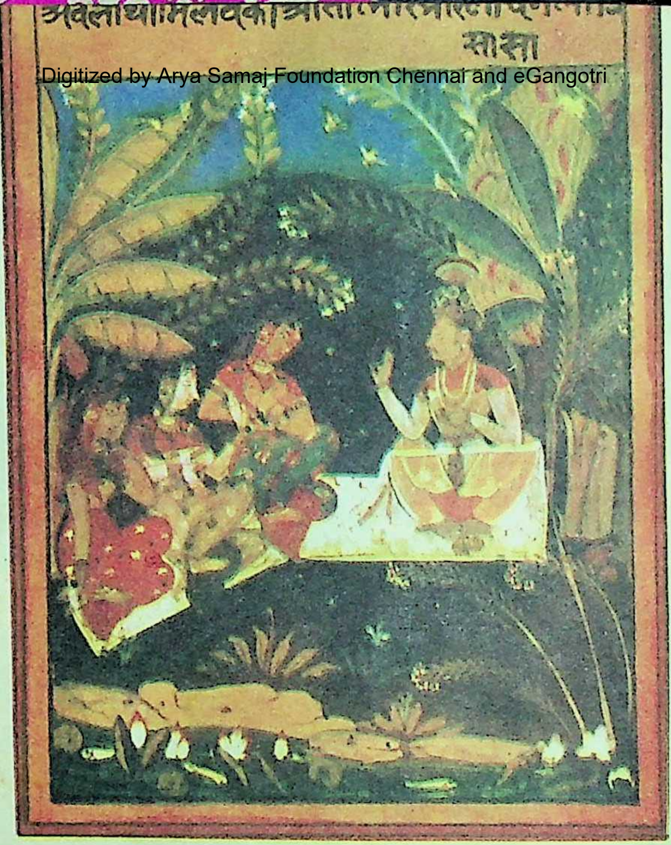

छाया : प्रेम कपूर

न रहे कृष्ण न रहीं वे गलि

जमाना भी कितना बदल गया है ! एक समय था कि दिल्ली और आगरा के बीच मथुरा और वृंदावन का समूचा इलाका इतना समृद्ध था कि कृष्ण-जैसा चरित्र वहां से उभरा और आज सोलह कलाओं में वही कृष्ण हमारी संस्कृति के प्रतीक बन गये हैं। कभी-कभी मोटर से कोसी के आगे नंदगांव, बरसाना होते हुए वृंदावन जाने का मौका मिलता है तो अचानक अतीत की लहरें वर्तमान को काटती-सी नजर आती हैं। ये गरीब किसान, धूल-भरे नंगे बच्चे, उजड़े हुए मकान, गंदी और गरीब औरतें और वैसे ही नंगे-अधनंगे पुरुष—क्या इन्ही के वंशज कृष्ण के समकालीन रहे हैं ? क्या आज का-सा ही माहौल तब रहा जब कृष्ण की विजय-पताका चारों ओर फहरा रही थी ? क्या हो गया है आज की यमुना को कि उसके कगारों में रेतीले मैदान पड़े हैं और पानी के नाम पर बीच में एक

पतली-सी धारा है। पर पानी तो डूबने के लिए काफी नहीं है। कैसे यहां कालिय-दमन की घटना हुई होगी, और कहां से सोचा होगा सूरदास ने कि यमुना कृष्ण की तरह काली है और गंगा राधा की तरह गोरी!

शायद्र कभी यहां समुद्र की तरह अथाह जल लहराता रहा होगा और उसकी भयानकता की केवल कल्पना की जा सकती है!

दिन बदलते देर नहीं लगती। कब कौन फकीर बन जाए और कौन रईस हो जाए, कोई नहीं जानता। बचपन और बुढ़ापे के बीच जिंदगी जितने रूप बदलती है, दृश्यमान जगत में सब-कुछ वैसा ही होता रहता है। तो आइए, हम अपनी यात्रा कोसी से शुरू करते हैं।

• ऋतुपर्ण शर्मा

वे अब भी प्रतीक्षा करती हैं कृष्ण की

कोसी से आगे बढ़ते ही बाएं हाथ की ओर एक सड़क जाती है। सड़क छोटी जरूर है, लेकिन मजबूत और तारकोल की है। काफी आगे जाने के बाद कई जगह यही सड़क धूल-धूसर और कच्ची भी हो गयी है। एक गोलाई में घूमते हुए नंदगांव और बरसाने होते हुए यह सड़क वृंदावन पहुंचती है। बरसाना कृष्ण की ससुराल थी और नंदगांव राधा की ससुराल थी। वृंदावन तक लेकर यही पूरी भूमि वृंदावन कहलाती है। सड़क के दोनों ओर करील के झाड़ हैं और संभवत: इन्हीं को देखकर रसखान ने लिखा होगा, **कोटिन हों कलधौत के धाम, करील के कुंजन ऊपर वारौं।** कृष्ण की यही लीला-भूमि थी और वहां से लेकर जमुना तक का पूरा क्षेत्र कभी गोपियों की रासलीला का केंद्र बनता था तो कभी कृष्ण और बलराम—इन दो भाइयों के खेल का मैदान। चीर-हरण की लीलाएं और वह सारा दृश्य जो विभिन्न पदों और कथाओं में वर्णित है, कभी इसी धरती पर पैदा हुए। इसके साथ यदि थोड़े अंतर पर गोकुल को जोड़ दिया जाए और उसके बाद मथुरा को शामिल कर लिया जाए तो कृष्ण का समूचा जीवन-दर्शन इस धरती की धूल में बिखरा हुआ मिलेगा, लेकिन यह सब व्यतीत की बातें हैं। बीसवीं सदी में यहां की यात्रा की जाए तो निश्चय ही दिलचस्प होगी।

उस शाम अचानक बरसाने में हमने अपनी कार रोक दी। टूटे और पुराने घर और धूल भरी धरती, छोटी-छोटी गलियां और आवारा घूमते हुए भैंसें। सड़क के किनारे एक गढ़ा बना

है। जिसके गंदे पानी में बेतरतीब जानवर लोटते हुए नजर आते हैं। गांव की कुछ लड़कियां सिर पर घड़ा रखे हुए गांव से बाहर पानी के लिए पनघट की ओर जा रही हैं। हमें याद आया कि कुछ दिनों पहले यहीं संवाद हुए होंगे, **बूझत श्याम कौन तू गोरी**। हमने भी हिमाकत की, आखिर राधा को समझना है, तो उसकी प्रतिच्छाया इन्हीं कन्याओं में तो देखनी होगी। हमने बहुत सहज ही बात पूछी, "ठाकुर रामप्रसाद का मकान कहां है?" लड़कियों ने एक-दूसरे की ओर देखा, कुछ ने अपने आंचल के छोर अपने मुंह में दबा लिये। कुछ ने एक दूसरे को तिरछी नजरों से देखा, एक मुसकरायी, बहुतों ने मुंह बना लिये। इसी समय घुटने तक धोती पहने और गंदे कुर्ते के ऊपर लाल गमछा डाले एक मुस्तैद अधेड़ आदमी वहां चला आ रहा था। हम थोड़ा घबराये, लेकिन हमें मालूम है हमारी कार देखकर वह कुछ नहीं बोलेगा। इसके बावजूद उसके रोबदार चेहरे ने हमारी हिम्मत पस्त कर दी और कृष्ण की तरह चीर-हरण करने की बात दूर रही हम आगे भी बात नहीं कर सके। उस आदमी ने रोबदार ढंग से पूछा, "क्या बात है साहब?"

बात कुछ हो तो बतायें। ठाकुर रामप्रसाद का नाम यूं ही ले लिया था। हमने कहा, "भाई यहां दूध मिलेगा?" उसने नितांत उपेक्षा से हमारी ओर देखा और बिना कुछ कहे वह चल दिया। सामने रह गयीं वही स्त्रियां जो पानी के लिए पनघट की ओर जा रही थीं। वे भी चुपचाप आगे खिसक गयीं। हम गांव के भीतर चले, देखा कि गांव लगभग खाली है। कुछ औरतें घूंघट डाले झांककर हमें देख रही हैं। स्वाभाविक अजनबियों को इसी नजर से देखा जा सकता है। हमारी हिम्मत नहीं हुई कि किसी घर के दरवाजे पर जाएं और वहां पूछें कि भाई यहां कहीं दूध मिलेगा। इस माहौल से कुछ क्षुब्ध होकर हम उसी पैर वापस लौट आये। फिर आगे बढ़ गये।

तारकोल की संकरी-सी सड़क के किनारे पानी का गढ़ा है। इस गंदे पानी में कुछ भैंसें लोट रही हैं। कुछ गायें जो पानी के किनारे खड़ी हैं, उनके पीछे दो कुत्ते लगे हुए हैं। सामने कुछ टूटे हुए ईंटों के मकान हैं, कुछ कच्ची झोपड़ियां जैसी हैं। एक-दो मकान उजले भी हैं। यही गांव है—नंदगांव यानि राधा की ससुराल। समूचे गांव में छोटी-छोटी पत्थर की गलियां हैं और सीढ़ीनुमा सीधे खड़े हुए गांव के ऊपर राधा-कृष्ण का मंदिर है। गांव खाली तो नहीं है, गलियों में बिजली भी लग गयी है लेकिन सफाई के नाम पर उसी तरह गंदगी भरे रास्ते हैं। ऊपर मंदिर तक पहुंचने के लिए बहुत-सी संकरी गलियों को पार करना पड़ता है। जगह-जगह कुछ पंडेनुमा लोग मिलते हैं। इनसे

बचना जरूरी है, क्योंकि आस्तिकता भरे विश्वास को लूटने में ये कमी नहीं करते। इन गलियों को पार करते हुए हम एक छोटे-से चौराहे पर पहुंचे । किनारे पर एक टूटी-सी बैलगाड़ी पड़ी है । एक सड़े हुए गंदे पानी का नाला उस रास्ते को पार कर रहा है । उसके बाद ही चढ़ाई शुरू हो जाती है । हमने चारों ओर एक बार घूमकर देखा । घरों के भीतर बंधे हुए दही के घड़े जिनको पाने के लिए कृष्ण किसी लड़के के कंधे पर चढ़कर खड़े हुआ करते थे । एक-दो घरों की हमने ताक-झांक की। कहीं कुछ नजर नहीं आया । चढ़ाई के नीचे धूल पर कुछ लड़के कबड्डी खेल रहे थे । गंदे और फटे हुए कपड़े, नंगे और अधनंगे-से धूल में सने लड़कों को देखकर हम अचानक सदियों पहले पहुंच गये ।

इन्हीं के पूर्वज तो कृष्ण रहे हैं । जहां दूध की नदियां बहती थीं। अब वहां लोग दूध को तरसते हैं और घी के नाम पर वहां डालडा पहुंच गया है। छाछ और मक्खन अब सपने रह गये, और छेड़छाड़ की बातें कभी हुई भी होंगी कल्पना भी नहीं होती । लोग अपढ़ और गरीब हैं । एक छोटी-सी पाठशाला है और उसका मास्टर गांव का सबसे पढ़ा-लिखा आदमी है। कुछ पुजारी और कुछ पंडे हैं, जो कृष्ण के नाम पर मनमानी लूट करते हैं। हां, एक बात जरूर है लोग अब भी नमस्कार के नाम पर 'राधे-राधे' करते हैं । वहां पहुंचकर ठहरने का मन नहीं होता । हमने होली के दिनों में भी बरसाने और नंदगांव की सैर की और दोनों जगह लट्ठमार होली के हाथ देखे हैं । छोटी-छोटी गलियों में नंदगांव

राधा-कृष्ण के नाम को स्वार्थी लोग मनमाना भुना रहे हैं

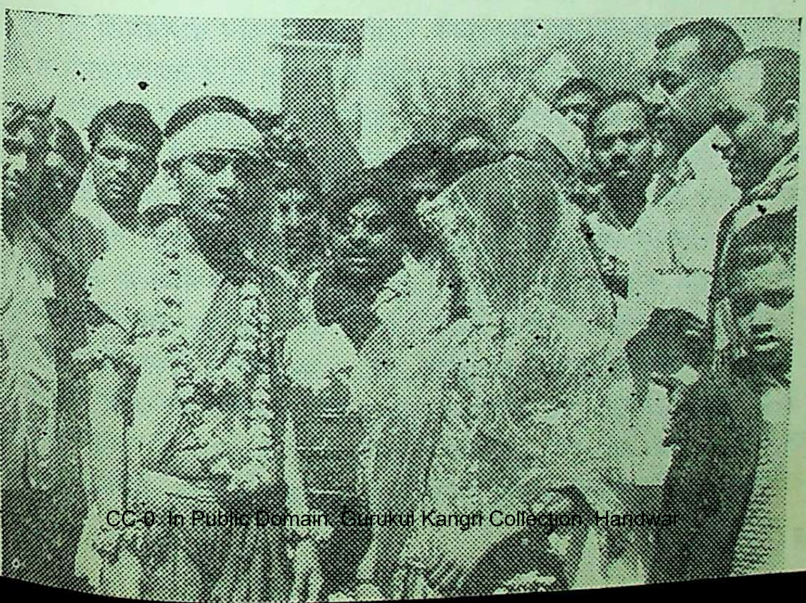

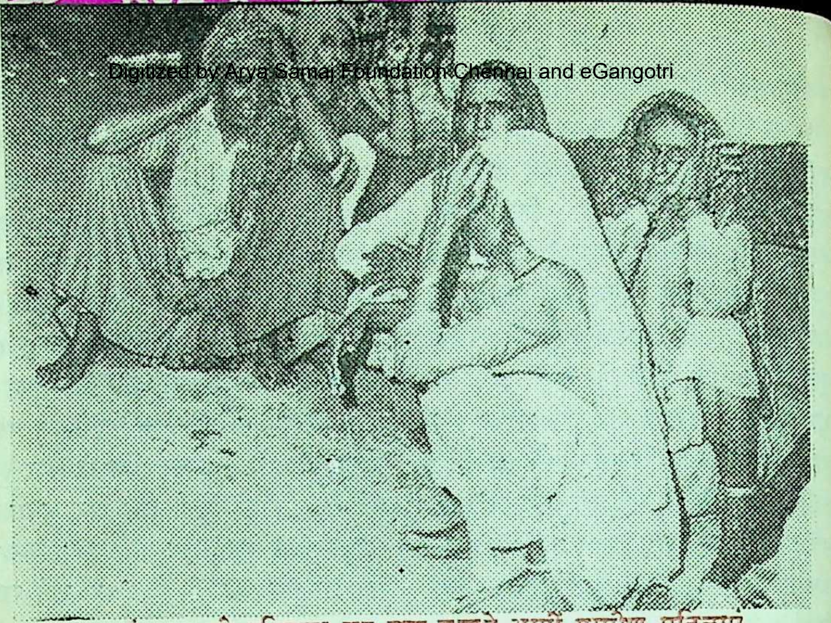

वृंदावन की परिक्रमा कर पुण्य कमाने आयीं ग्रामीण महिलाएं

के लड़के और बरसाने की लड़कियां घूंघट डालकर जिस तरह लट्ठमार होली खेलते हैं, लगता है कि कुछ परंपरा का प्रभाव है और कुछ मन बहलाने के मंसूबे।

वृंदावन की वात जितनी कम की जाए वेहतर है। बड़े-बड़े मठ और उनके मठाधीश, उनके पंडे-पुजारी, उनके ऐजेंट, शहरों का काला धन यहां मनमाना लुट रहा है। धन्य है भारत भूमि, जहां की जनता ईश्वर के नाम पर क्या नहीं कर सकती। राधा और कृष्ण के नाम को स्वार्थी लोग मनमाना भुना रहे हैं। कहीं डाली, कहीं कुंज, कहीं कुंजवन, कलियादह के बनावटी हाथ—क्या नहीं है। जो किसी सिनेमा के सेट की तरह यहां न देखे जा सकें। दिन-रात भंडारे चलते हैं और सैकड़ों आदमी खाना खाते हैं। यहां की गलियों में ईंटें समा गयी हैं। सड़क धूल और मिट्टी से बनी है। भक्तों के लाने, ले जाने के लिए तांगे और रिक्शे हैं। इनकी सेवा के लिए पंडे और पंडों के एजेंट। धर्मशालाएं भी हैं और अब तो बिजली भी आ गयी है। वृंदावन होते हुए आसानी से मथुरा पहुंचा जा सकता है। जहां कृष्ण का जन्म हुआ था उसके ऊपर भी आसपास आलीशान इमारतें वन गयी हैं। जिनमें धर्मशालाएं हैं, मंदिर हैं, दुकानें हैं। दर्शनार्थियों की भीड़ है और धूल-भरी गंदी सड़क को काटता हुआ गंदा नाला है। बरसात में दिन में पहुंच जाइये तो कमर तक पानी जमा मिलेगा और निकलना मुश्किल हो जाएगा। समूचा मथुरा उत्तर प्रदेश के गंदे शहरों में है

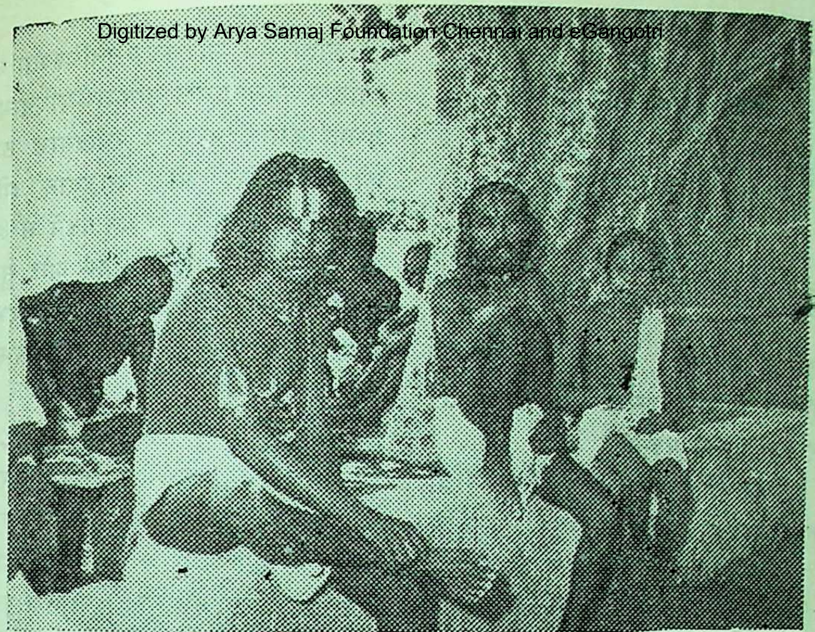

साधु-संतों की जमात हर जगह नजर आती है

एक है। लोगों में कितनी ईमानदारी है, बाजार में कितनी चीजें सही मिलती हैं, यह मथुरा का ही नहीं पूरे देश का इतिहास है। हां, यदि भरे बाजार में जमुना के घाट तक आप पहुंच जाएं तो शाम को कछुओं के झुंड दिखायी देंगे। पानी में तैरते कागज के दिये होंगे। मंदिर की घंटियों के स्वर होंगे। साधुओं की जमातें होंगी। वृक्षों पर उछलते हुए बंदर होंगे। भीख मांगते हुए भिखारी और भारत की भूमि में उपजे हुए दरिद्र नारायण गंदे पानी में बिलबिलाते हुए कीड़ों की तरह हर जगह नजर आ जाएंगे। इनके बावजूद इतने बड़े देश के कोने-कोने से जनता यहां आती है और सोलह कलाओं से युक्त महाप्रेमी और महायोगी कृष्ण की याद कर अपने जीवन को सार्थक करने की कोशिश करती है। जिस कृष्ण ने एक युग की रचना की है उसकी भूमि इतनी दरिद्र और अजनबी, अनचीन्ही-सी लगेगी, भरोसा नहीं होता। लोगों के धीरज की बात क्या कही जाए, गरीबी वहां तराजू के भारी पलड़े में बैठी इंतजार कर रही है कि कोई कृष्ण फिर यहां पैदा हो और दोनों पलड़ों को बराबर कर दे। सचमुच सदियों पहले का सपना हो सकता है। अब तो वृज-भूमि के नाम पर परिक्रमा करके पवित्र होने का विश्वास ही केवल दोनों हाथों से लूटा जा सकता है, वरना यहां की जिंदगी किसी परकटे परिंदे से कम नहीं है। ●

गोष्ठी

संतसिंह, अंबाला छावनी : नींद की गोलियों के साथ शराब पीने का शरीर पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

बहुत ही खतरनाक । शराब (या किसी भी अल्कोहलयुक्त पेय) के साथ नींद की गोलियां लेने से गोलियों का प्रभाव कई गुना बढ़ जाता है। परिणामस्वरूप, उन गोलियों से जितनी देर नींद आनी चाहिए, उससे कहीं ज्यादा देर के लिए नींद आती है । जांच से कुछ मामले तो ऐसे पाये गये कि शराब के साथ नींद की गोलियां लेकर कुछ लोग इतनी गहरी नींद सोये कि सदा के लिए सो गये । यदि किसी को नियमित रूप से दोनों चीजें साथ लेने की आदत पड़ जाए तो उस आदमी का निकम्मा हो जाना निश्चित है, क्योंकि इस दोहरे नशे से शरीर के स्नायु-तंत्र पर निरंतर मानसिक तनाव और शैथिल्य के दौरे पड़ते रहते हैं और इस जहर की जरूरत दिन-प्रतिदिन बढ़ती जाती है । इस के साथ ही व्यक्ति की सक्रियता और कार्यक्षमता तेजी से घटते-घटते एक दिन बिलकुल शून्य हो जाती है तथा वह अर्द्धविक्षिप्त या पूर्णतः विक्षिप्त हो जाता है। शारीरिक निष्क्रियता और बौद्धिक जड़ता इसके अनिवार्य परिणाम हैं।

प्रभात कुमार, पटना : रवींद्रनाथ ठाकुर की 'प्रायश्चित्त' और 'आह्वान' शीर्षक कविताओं के संबंध में यह पढ़ने में आया कि ये कविताएं गांधी, नेहरू और सुभाष द्वारा निंदित म्यूनिख-संधि के संदर्भ में लिखी गयी थीं। यह 'म्यूनिख-संधि' क्या थी ?

यह संधि २९ सितंबर, १९३८ को इटली के तानाशाह मुसोलिनी, जरमनी के तानाशाह हिटलर, ब्रिटेन के प्रधानमंत्री चेंबरलेन तथा फ्रांस के प्रधानमंत्री दालादियर के बीच जरमनी के म्यूनिख नामक नगर में हुई थी। इसके अनुसार चेकोस्लोवाकिया के प्रतिनिधि की अनुपस्थिति में ही चेकोस्लोवाकिया की सीमा के वे प्रदेश हिटलर के जरमनी को दे डालने का फैसला किया गया जिनमें चेक लोगों के साथ कुछ जरमन अल्पसंख्यक भी रहते थे। ब्रिटेन और फ्रांस यद्यपि चेकोस्लोवाकिया के साथ पारस्परिक सहायता की संधि में बंधे हुए थे, फिर भी उन्होंने यह विश्वासघातपूर्ण संधि कर डाली और आलोचना होने पर कहा कि इस प्रकार उन्होंने विश्व-शांति की रक्षा की है। उनका यह दावा जल्दी ही झूठा साबित हो गया जब हिटलर ने १५ मार्च १९३९ को पूरे चेकोस्लोवाकिया पर अधिकार कर लिया और दूसरा महायुद्ध छेड़ दिया। पं. नेहरू ने इस संधि की तीव्र

भर्त्सना करते हुए कहा था, "यदि किसी देश को अपनी स्वतंत्रता खोनी हो तो उसे ब्रिटेन आदि साम्राज्यवादी देशों से दोस्ती करनी चाहिए।" उन्होंने हिटलर का निमंत्रण ठुकराकर संकटग्रस्त चेकोस्लोवाकिया की यात्रा की। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने भी सुभाषचंद्र बोस की अध्यक्षता में 'म्यूनिख-संधि' की निंदा का प्रस्ताव पास किया। गांधीजी ने हिटलर को पत्र लिखकर उसके कुकृत्य की भर्त्सना की। इसी समय रवींद्रनाथ ठाकुर ने ये कविताएं लिखी थीं और चेकोस्लोवाक देशभक्तों ने इनका अनुवाद करके इन्हें अपनी जनता तक पहुंचाया था।

शारदा, गांतोक (सिक्किम) : 'आइसोमेट्रिक व्यायाम' क्या है? इससे क्या लाभ होता है?

सामान्य व्यायाम के लिए थोड़ी उछल-कूद और उछल-कूद के लिए थोड़ी खुली जगह चाहिए। साथ ही चाहिए कुछ नियमित समय। लेकिन आधुनिक महानगरों में, जहां जगह और समय की कमी रहती है, किसी ऐसे व्यायाम की आवश्यकता अनुभव की गयी जो कहीं भी, किसी भी समय, खड़े-खड़े या बैठे-बैठे ही किया जा सके। 'आइसोमेट्रिक' में 'आइसो' यूनानी शब्द है जिसका अर्थ होता है 'वहीं' और 'मेट्रिक' अंगरेजी शब्द का अर्थ है 'लंबाई'। इस प्रकार शरीर की लंबाई [illegible] बिना, अर्थात खड़े-खड़े या बैठे-बैठे किया जानेवाला व्यायाम 'आइसोमेट्रिक व्यायाम' हुआ। इस व्यायाम में शरीर को स्थिर रखकर मांसपेशियों को पूरी ताकत लगाकर खींचा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि मेज पर बैठकर काम करते समय आप दोनों हाथों से मेज को पूरी ताकत से भींचने की कोशिश करें तो बांहों की सारी मांसपेशियां तन जाएंगी। इस प्रकार तनने में मांसपेशियों को अपने सभी तंतुओं का उपयोग करना पड़ता है। इस क्रिया के फलस्वरूप तंतु रक्त में से आवश्यकतानुसार भरपूर पोषण और ऑक्सीजन प्राप्त कर लेते हैं, जिससे शरीर स्वस्थ रहता है। इस व्यायाम का सबसे बड़ा लाभ यही है कि इसे कभी भी और कहीं भी किया जा सकता है।

शिरीष कौशल, नयी दिल्ली : वायु की गतिज ऊर्जा का मूल कारण क्या है?

सौर ऊर्जा। सूर्य की किरणों से ऊष्मा पाकर हवा गरम होती है, गरम हवा हलकी होकर ऊपर उठती है और ठंडी हवा भारी होने के कारण उसका स्थान लेने के लिए नीचे आती है। इस प्रकार वायु में गति उत्पन्न होती है और वायुमंडल में संवहन-धाराएं पैदा होती हैं, जिनमें वायु प्रवाहित होती है। इस प्रकार वायु की गतिज ऊर्जा मूलतः सूर्य की ताप-ऊर्जा से उत्पन्न होती है।

अनुराधा, इंदौर : पीड़ा-निवारक दवाओं में 'एस्प्रीन' के साथ 'कैफीन' का नाम

भी सुनने में आता है। यह क्या है और इसका सेवन कैसे किया जाता है ?

कैफीन वस्तुत: पीड़ा-निवारक दवा नहीं है, लेकिन यह उत्तेजना बढ़ाती है और मानसिक थकावट को दूर करती है। इसके सेवन से शरीर के स्नायु उत्तेजित हो जाते हैं और पीड़ा का अनुभव कम हो जाता है। आजकल पीड़ा-निवारक गोलियों में एस्प्रीन के साथ कैफीन भी मिलायी जाने लगी है, लेकिन इसके लिए गोलियां खाने की जरूरत नहीं होनी चाहिए। यदि आप चाय-काफी पीती हों तो समझिए कि कैफीन पी रही हैं। चाय के एक प्याले में लगभग ६० और काफी के एक प्याले में १०० मिलीग्राम कैफीन मिल जाती है।

कमलकिशोर, हरिद्वार : अंतर्राष्ट्रीय पगवाश सम्मेलन क्या है ?

पगवाश विज्ञान और समाज के सही संबंधों के लिए चिंतित वैज्ञानिकों का अंतर्राष्ट्रीय संगठन है। यह चिंता परमाणु बम से हुए महाविनाश को देखकर अपने नैतिक कर्तव्य-बोध से प्रेरित वैज्ञानिकों तथा विचारकों में शुरू हुई। इस संगठन का जन्म ९ जुलाई, १९५५ को हुआ जब लंदन में बर्टेंड रसेल ने इसका घोषणा-पत्र जारी किया। जुलाई, १९५७ में इस संगठन का प्रथम सम्मेलन नोवा स्कोटिया (कनाडा) के एक छोटे-से गांव पगवाश में हुआ था, इसलिए इसका नाम पगवाश-सम्मेलन पड़ गया। विभिन्न देशों के २३ प्रतिनिधियों की एक पगवाश परिषद बनी, जिसके द्वारा इसके वार्षिक सम्मेलन आयोजित किये जाते हैं। विभिन्न देशों में इसके स्थानीय संगठन भी हैं, जिनके द्वारा क्षेत्रीय सम्मेलन, सेमीनार, वर्कशाप आदि आयोजित किये जाते हैं। जनवरी, १९७८ में एक वर्कशाप का आयोजन भारत में हरियाणा की बड़खल झील के पास हुआ था। पगवाश आंदोलन में भारतीय वैज्ञानिकों की प्रमुख भूमिका रही है। उन्होंने एक अंतर्राष्ट्रीय आचार-संहिता प्रस्तावित की, जो अब सर्व-स्वीकृत होकर 'पगवाश-संहिता' कहलाती है। पगवाश सम्मेलनों में ऐसे उत्कृष्ट वैज्ञानिक आमंत्रित किये जाते हैं जो विज्ञान के सामाजिक उपयोग और दुरुपयोग को समझते हैं तथा अपने देशों में घटनेवाली राजनीतिक घटनाओं को प्रभावित कर सकते हैं। पगवाश-आंदोलन विज्ञान को नैतिक मूल्यों से काटकर एक स्वतः संपूर्ण गतिविधि बना देने के प्रयासों का विरोध करता है और वैज्ञानिकों में यह नैतिक चेतना उत्पन्न करने पर जोर देता है कि वे विनाशकारी कार्यों के लिए विज्ञान का दुरुपयोग न होने दें।

चलते-चलते एक प्रश्न और...

रश्मिकांति, जयपुर : एक ज्योतिषी के अनुसार मेरी उम्र सौ वर्ष है लेकिन मेरी मृत्यु के समय यह दुनिया कैसी होगी ?

इसमें से ज्योतिषी गायब हो चुके होंगे ?

—बिंदु भास्कर

मातृ-मनोग्रंथि का प्रतीक अभागा ईडइपस

उसने मां से विवाह किया था

• योगेन्द्र किसलय

कहां उन्हें एक पुत्र की उत्कट चाह थी और कहां वे पुत्र के जन्म लेने से पूर्व ही उससे आतंकित हो गये। बहुत कम मां-बापों ने ऐसा क्रूर निर्णय लिया होगा और बहुत कम पुत्र ऐसे अभागे रहे होंगे। उसके दोनों पांव कसकर बांध दिये गये थे ताकि वह आसानी से किसी जंगली पशु का ग्रास बन जाए या स्वतः ही बिना विलंब के समाप्त हो जाए। पुत्र का नाम था ईडइपस और माता-पिता थे—लेयस तथा जोकास्टा। थीबिज के राजपरिवार का यह शिशु पैदा होने के तीन दिन बाद ही सिथेरन पर्वत पर फिकवा दिया गया।

जब घटना बदली

लेयस ने ईडइपस से मुक्ति पाने के लिए उसे सिथेरन पर्वत पर फिकवा दिया, लेकिन वहां ईडइपस की मृत्यु नहीं हुई। जिस चरवाहे को यह काम सौंपा गया था, वह उसे नहीं कर सका। उस अबोध शिशु को उसने पड़ोसी राज्य के एक दूसरे चरवाहे को दे दिया। वह उसे अपने स्वामी पोलिवस के पास ले गया जो कोरिंथ का राजा था। उनका कोई पुत्र नहीं था। उसका स्थान ईडइपस ने लिया। यह ईडइपस नाम भी दत्तक पिता पोलिवस ने ही दिया। रस्सी से पांव बांध देने के कारण शिशु के पांव कुछ टेढ़े हो गये थे। कुछ सूज भी गये थे। पोलिवस ने जब यह गौर किया तो उसके मुंह से निकल पड़ा 'ईडइपस' अर्थात 'सूजे पांवोंवाला'।

ईडइपस जवान हुआ। उसे अपने जन्म की हकीकत का कोई ज्ञान नहीं था। यह तो एक सांध्य-भोज में अचानक ही उसे उस समय शक हुआ जब किसी अतिथि ने शराब के नशे में उसकी यह कहकर खिल्ली उड़ायी कि यह कोई राजकुमार नहीं है। यह तो कहीं पड़ा मिला था। ईडइपस इस लांछन को सह नहीं सका।

ईडइपस के मन में संदेह घर कर गया था। सत्य जानने की इच्छा उसमें और भी प्रबल हो गयी। वह अपोलो के विश्वप्रसिद्ध भविष्यवक्ता के पास जाकर अपने जन्म की सच्चाई जानने निकल पड़ा। बिना मेरोपी तथा पोलिवस से पूछे वह चुपचाप कोरिंथ से चला

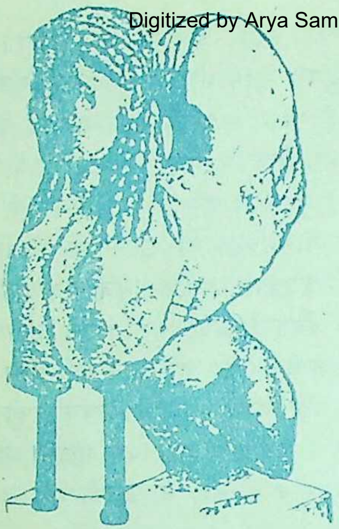

स्फिंक्स : थीबिज की राक्षसी

और पैदल ही सफर तय करता हुआ डेल्फी पहुंचा। वहीं पर अपोलो का विश्व-विख्यात मंदिर था।

मंदिर की पुजारिन ने उसे कोई स्पष्ट उत्तर नहीं दिया, बल्कि यह चेतावनी अवश्य दी, "अपशकुनी युवक, अपने पिता की खोज मत करो। यदि वह तुम्हें मिले तो वह तुम्हारे हाथों मारा जाएगा। उसके पश्चात तुम अपनी ही मां से विवाह करोगे और एक अभागे एवं अभिशप्त वंश के पिता बनोगे।"

जब उससे हत्या हुई

ईडइपस यह सुनकर बहुत भयभीत हुआ और वहां से चल पड़ा। तभी उसने निर्णय लिया कि वह लौटकर कोरिंथ नहीं जाएगा।

लेकिन ईडइपस के भाग्य में जो लिखा था वही होकर रहा। जीवन की नयी शुरूआत करने के लिए जब तनाव-मुक्त होकर लौट रहा था, तब वह एक ऐसे स्थान पर पहुंचा जहां तीन सड़कें आकर मिलती थीं।

लेयस अपने रथ में सवार होकर वहां से गुजर रहा था। रथ के आगे घोड़े पर एक सेवक मार्ग से सबको हट जाने का आदेश देता हुआ चल रहा था। ईडइपस निर्भीक चला जा रहा था। उसने मार्ग नहीं छोड़ा। इस पर उस घुड़सबार से उसकी तकरार हो गयी। क्रोध में स्वयं को अपमानित महसूस करते हुए ईडइपस ने उसकी हत्या कर दी। लेयस ने जब यह देखा तो उसने ईडइपस को निशाना बनाते हुए उस पर अपना भाला फेका। ईडइपस ने अपनी गदा से भाले को रोका, आगे बढ़कर लेयस को रथ से खींचकर धरती पर पटक दिया और एक ही प्रहार से उसकी भी हत्या कर दी।

अनजाने में ही ईडइपस ने अपने वृद्ध पिता लेयस को मार दिया था। उसके पश्चात वह पुनः आगे बढ़ गया। रथ हांकनेवाले ने अपनी कायरता को छिपाने के लिए झूठ का सहारा लिया और यह बतलाया कि लुटेरों के एक सशस्त्र दल ने हमला बोलकर राजा को मार दिया।

थीबिज में घोषणा

ईडइपस एक घुमंतू गड़रिये की तरह अनेक गांवों तथा शहरों में घूमता-भट-

कता थीबिज पहुंचा। थीबिज उस समय विपत्ति में फंसा हुआ था। वहां के नागरिक अपने राजा की असमय मृत्यु के कारण इतने शोक-संतप्त नहीं थे जितने कि एक विचित्र एवं भयावह जीव के कारण दुःखी थे। यह एक राक्षसी स्फिंक्स (नारी-सिंही जीव) थी। जो भी व्यक्ति वहां से गुजरता स्फिंक्स उससे एक पहेली पूछती। पहेली का सही हल न मिलने पर वह उसे लील जाती। जब तक थीबिज का कोई व्यक्ति उसकी पहेली का सही हल नहीं देगा तब तक वह नगर की सीमा को छोड़कर नहीं जाएगी। उसकी उपस्थिति का मतलब था मृत्यु, अकाल और सूखा। प्रति-दिन एक-दो व्यक्ति स्फिंक्स का ग्रास बन रहे थे। उसका शिकार रानी जोकास्टा के भाई क्रिओन का पुत्र भी हुआ। क्रिओन उस समय लेयस की मृत्यु के कारण थीबिज का प्रशासक था। उसने परेशान होकर राज्य में यह घोषणा करवायी कि जो भी व्यक्ति स्फिंक्स की पहेली का सही उत्तर देगा और नगर को उसके आतंक से मुक्ति दिलवायेगा उसे थीबिज का राज्य सौंप दिया जाएगा। इतना ही नहीं रस्म के अनुसार मृत राजा की विधवा से उसकी शादी भी कर दी जाएगी।

राज्य प्राप्त करने का अवसर

ईडइपस जब शहर में घूम रहा था तब उसने भी यह घोषणा सुनी। कोरिंथ तो उसे लौटना नहीं था, स्वतंत्र राज्य प्राप्त करने का यह अच्छा अवसर था। वह क्रिओन के सामने उपस्थित हुआ और बोला, "मैं उसकी पहेली का उत्तर देने के लिए तैयार हूं।"

ईडइपस को शहर की प्राचीर से दूर उस निर्जन पहाड़ी स्थान पर ले जाया गया जहां स्फिंक्स का आवास था। नगर के लोग ईडइपस को वहां अकेला छोड़कर भाग गये। ईडइपस ने कुछ आगे चलकर वहां एक पहाड़ी पर स्फिंक्स को बैठे हुए देखा। उसकी आकृति भयंकर थी। शेर का धड़, चील के पंख तथा औरत का सिर। स्फिंक्स की आंखें उसकी ओर घूर रही थीं, लेकिन वह किंचित भी विचलित नहीं हुआ। उसने बेखौफ होकर कहा, "अपनी पहेली पूछो।"

स्फिंक्स ने पूछा, "वह कौन-सा प्राणी है जो अपने पैरों की संख्या बदल लेता है? सुबह वह चार पांवों पर

ग्रीक नाटकों में प्रयुक्त एक मुखौटे की रेखाकृति

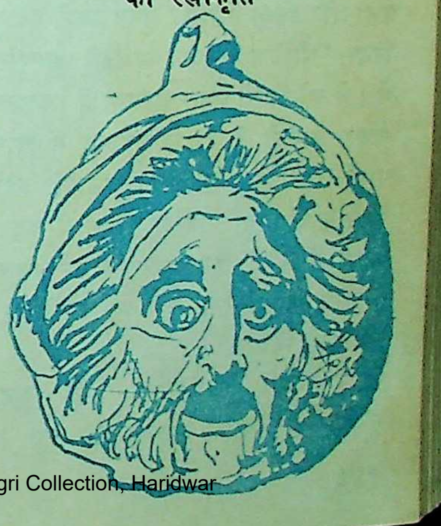

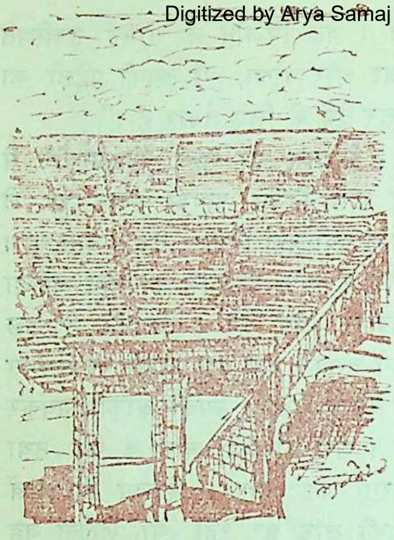

एक ग्रीक रंगशाला

चलता है और दोपहर में दो और शाम को तीन पांवों पर चलता है। सबसे कम पांवों के समय वह अधिक शक्तिशाली तथा फुर्तीला होता है।"

ईडइपस ने स्फिंक्स को गहरा घूरा। वह उसके पत्थरनुमा चेहरे को देखकर हंसा और बिना झिझके तुरंत उसने उत्तर दिया, "थीबिज के लोग व्यर्थ ही आक्रांत थे। ये पहेली तो बहुत आसान है। इसका उत्तर आदमी है जो शिशुवस्था में चार पांवों पर तथा उसके बाद मजबूती और फुर्ती से दो पांवों पर और अंत में वृद्धावस्था में लकड़ी का सहारा लेकर चलता है जो उसकी तीसरी टांग बन जाती है।"

मां से ही विवाह

उत्तर सुनकर स्फिंक्स ने पंख फड़फड़ाये और पलक झपकते ही वहां से गायब हो गया। थीबिज से मौत का साया दूर हो गया। क्रिओन की घोषणा के अनुसार ईडइपस को थीबिज का राजा बना दिया गया और जोकास्टा से उसका विवाह भी कर दिया गया।

कई वर्ष बीत गये। ईडइपस ने सफलतापूर्वक थीबिज पर राज्य किया। प्रजा खुशहाल थी और पूरे राज्य में शांति व समृद्धि का वातावरण था। अपनी पत्नी जोकास्टा से ईडइपस को अगाध प्रेम था यद्यपि उम्र में वह उससे काफी बड़ी थी। उनकी चार संतानें थीं। दो जुड़वां पुत्र एटेक्लीज और पोलिनाइसेज तथा दो पुत्रियां, एंटीगनी एवं इसेमीन। जब वे जवान हुए तो भाग्य ने विपरीत करवट बदली। राज्य भर में प्लेग फैला, सूखा पड़ा और लोग कीड़े-मकोड़ों की तरह मरने लगे। चारों ओर हाहाकार था। देववाणी हुई थी कि इस सबका कारण लेयस का हत्यारा है। जनता अपने राजा के पास सहायतार्थ पहुंची। ईडइपस ने लोगों को आश्वस्त किया कि वह अपने लोगों की खुशी के लिए हर संभव प्रयास करेगा। ईडइपस ने जनता को विश्वास दिलाया कि वह शीघ्र ही लेयस के हत्यारे को खोजेगा। उसने नगर के प्रसिद्ध दृष्टा व भविष्यवक्ता टाइरसीज को विचार-विमर्श के लिए आमंत्रित किया। टाइरसीज के पास भविष्य के ज्ञान की विलक्षण प्रतिभा थी। उनसे पूछा गया।

"राजन! कुछ चीजों को न मालूम

करना ही अच्छा है। इस रहस्य को कृपया मुझ तक ही सीमित रहने दीजिए। इसी में आपका हित है।"

"टाइरसीज! मुझे अपना नहीं, लोगों का हित देखना है। मैंने उन्हें वचन दिया है।"

"राजन! आपको जानकर बहुत कष्ट होगा। आप सह नहीं पायेंगे।"

"मेरे कष्ट की तुम चिंता मत करो। प्रजा के कष्ट के सम्मुख यह गौण है।"

टाइरसीज फिर भी चुप रहा। ईडिपस के सभी निवेदन व्यर्थ गये। अंत में ईडिपस ने झुंझलाकर कहा, "टाइरसीज! थीबिज को तुम पर गर्व था, लेकिन आज पता चला कि तुम कुछ नहीं जानते। तुम सत्य इसलिए प्रकट नहीं करना चाहते कि तुम डरते हो। लगता है लेयस के बध में तुम्हारा हाथ था। तभी तुम मौन हो।"

यह लांछन सुनकर टाइरसीज भी आवेश में आ गया।

"तो सुनो, राजन! आप स्वयं लेयस के हत्यारे हैं। डेल्फी की घाटी में जहां तीन सड़कें आकर मिलती हैं वहां आपने उसका बध किया। आप ही के कारण इस नगर पर शाप लगा है।"

अब ईडिपस को सब कुछ स्मरण हो आया। चिंतित होकर उसने जोकास्टा से पूछ-ताछ की। जोकास्टा ने अपने पहले पति के संबंध में विस्तृत जानकारी दी। साथ ही जोकास्टा ने ईडिपस से निवेदन किया कि बेकार में चिंता न करे, क्योंकि लेयस की मृत्यु लुटेरों के हाथों हुई थी। टाइरसीज झूठ बोलता है। उसके अनुसार लेयस की मृत्यु हमारे पुत्र के हाथों होनी थी जो आगे चलकर अपनी मां से ही विवाह करेगा। हमारा तो बस एक ही पुत्र था जिसे हमने पैदा होते ही मरवा दिया था।

मां से कटु सत्य सहा न गया

जोकास्टा ने ईडिपस को और आश्वस्त करने के लिए उस गड़रिये को बुलाया जिसके हाथों शिशु को सिथेरन पर्वत पर फिकवाया गया था। गड़रिये से इस बार झूठ नहीं बोला गया। उसने बताया कि शिशु को उसने एक दूसरे व्यक्ति को सौंप दिया था और उसने उसे कोरिंथ के

अपोलो

राजा के हवाले कर दिया था।

यह सुनकर जोकास्टा भय के मारे चीख पड़ी। वह अब जान गयी थी कि उसका पति ईडिपस ही उसका वह पुत्र है जिसे वह मृत समझ रही थी। पाप और शर्म की भावना से ग्रस्त जोकास्टा ने अपने कक्ष में जाकर शहतीर से लटककर आत्महत्या कर ली।

मेरी सजा के लिए मृत्यु भी कम

जोकास्टा के शव पर वह देर तक यह कहकर रोता रहा, "तुम्हारे दु:खों का तो अंत हो गया, लेकिन मेरी सजा के लिए मृत्यु भी कम है।" ईडिपस ने जोकास्टा की कमर-पेटी के कुंदों से अपनी आंखें फोड़ डालीं।

ईडिपस महल से उसी लकड़ी के सहारे निकल पड़ा, जिससे उसने अपने पिता लेयस का बध किया था।

कुछ ही वर्षों में उसका पूरा परिवार नष्ट हो गया। उसकी संतति भी उस पाप की उत्पत्ति थी, जो भाग्यवश अनजाने में उससे हो गया था।

ईडिपस की इस अमर कथा को महान यूनानी नाटककार सोफोक्लीज ने अपनी सर्वोत्कृष्ट कृति 'किंग ईडिपस' में चित्रित किया है। सोफोक्लीज के तीन नाटकों का आधार ईडिपस तथा उसका परिवार है। ये तीनों नाटक हैं: 'किंग ईडिपस', 'ईडिपस एट कोलोनोस' तथा 'एंटीगनी'। ईडिपस एक ऐसा पात्र है जो साहित्य में मातृरति का प्रतीक बन गया है। व्यक्ति के रूप में वह स्वाभिमानी, वीर तथा गुणसंपन्न है, लेकिन भाग्य के हाथों वह एक कठपुतली है। उसका पाप-ग्रहण स्वयं की इच्छानुसार अथवा दुराग्रह के कारण नहीं, बल्कि परिस्थितियों एवं प्रबल भाग्य के कारण है। जीवन के नाटक में वह तो एक पात्र है जिसका निर्देशन अन्य किसी शक्ति के हाथों में है। मनुष्य के रूप में अक्षम्य पाप करने के बावजूद भी कहीं भी हम उससे घृणा नहीं कर पाते। उसके प्रति सहानुभूति बनी रहती है और उसकी प्रशंसा भी करते हैं। प्रजाहित के लिए वह अपने जीवन और राज-पाट की भी चिंता नहीं करता। सत्य कितना भी कटु और कष्टदायक क्यों न हो, वह उसे जानकर ही रहता है। जोकास्टा की भांति वह जीवन से पलायन भी नहीं करता, बल्कि जीवन का सामना करता है ताकि शेष दिनों में वह अपनी आत्म-शुद्धि तथा पश्चाताप कर सके। उसकी यह अदम्य इच्छा उसे प्रशंसा का पात्र तथा एक महान इनसान बनाती है। —"मैं यह जानकर रहूंगा कि मैं कौन हूं?" ईडिपस की इस कथा को पढ़ने के बाद सोफोक्लीज के ये शब्द हमारे सामने एक दार्शनिक सच्चाई के साथ आते हैं—

मुझे कोई आदमी बताओ जिसकी खुशी भ्रम के अतिरिक्त कुछ और थी।

—पुरानी गिनानी, बीकानेर (राज.)

कहानी

नाटकपन

● देवकी अग्रवाल

उसके पैरों की चंचलता से अनुमान लगाया जा सकता था कि वह बेहद जल्दी में है या किसी उखड़े प्रेम से बेचैन कर देनेवाली अजीब स्थिति में है। अभी-अभी प्रकाशक के आफिस में दो व्यक्तियों के साथ बैठी वह बतिया रही थी और मुझे वहां आया देखकर वह मेरी बांह पकड़ बाहर ले आयी थी—सीधी-सपाट चमचमाती धूप से भरी सड़क पर। मैं जरा हटकर, एक बिल्डिंग की छांव में खड़ी, उसके पैरों के सौंदर्य को निहार रही थी। मेंहदी लगे पतले पैर, पैरों की उंगलियों में बिछुए जिनमें घुंघरुओं की आवाज—उसकी चपलता के साथ ही रह-रहकर खनक उठ रही थी। पैर जमीन पर पटकने से आवाज—छमक, छल . . .।

"अजी चलो न . . . उधर किसी रेस्तरां में चलकर बैठें . . . या फिर उधर ... जहां भी तुम कहो . . . मेरे पास ज्यादा वक्त नहीं है।"

वक्त नहीं तो, 'बात' ऐसी कौन-सी है जो जरूरी करने की है—बात कुछ समझ नहीं आयी। मैंने उसे बताया, "मेरे पास तो आज ही वक्त था और इन प्रकाशनवालों से अपनी पुस्तक छपने के संबंध में बात करने आयी थी . . .।"

"अरे छोड़ो . . . तुम तो यहीं हो दिल्ली में। जब चाहो इनसे मिलती रहना। मैं चली जाऊंगी, तो न जाने तुमसे फिर कब मुलाकात होगी।"

अजीब है, एकाएक मुझसे इतना सान्निध्य, जबकि मैं उसे व्यक्तिगत रूप से बिलकुल भी नहीं जानती। सिर्फ किसी कहानी के ऊपर नाम पढ़ा था—अनिंद्या शास्त्री। और अब भी जो एक पुस्तक का कवर उसके हाथ में था—उस पर भी यही नाम था।

तीखी धूप माथे पर लगी तो फिर पूछा, "अब चलना कहां चाहती हो?"

"किसी रेस्तरां में चलकर बात करेंगे और चाय पियेंगे। . . . देहरादून से आयी थी न . . . आज ही सुबह . . . और अभी वक्त मिला था . . . पति कहीं गये . . . और मैं इधर चली आयी।"

"कहां ठहरी हो?"

"गोलचा के सामने—जहां हमेशा

ठहरती हूं। वह कमरा मेरे लिए विशेष रूप से रखा गया है।"

"तो चलो मेरे घर . . . तुम्हें खाना खिलायें और चाय भी पिलायें।"

"तुम्हारे घर में खाना कौन पकायेगा ?"

"मैं खुद।"

"तुम अकेली रहती हो . . . या कोई साथ में है ?"

"नहीं, साथ में कोई नहीं।"

"यह बहुत अजीब-सी बात है। अकेले तो बहुत ही मुश्किल है।"

"है तो, लेकिन कोई चारा नहीं।"

"तुम ढूंढ़ो . . . किसी को ढूंढ़ो . . . अकेली लड़की को तो बहुत मिल जाते हैं।"

"क्या मतलब ?"

"मतलब यही कि अकेले रहना और लिखना बहुत ही मुश्किल है।"

"फिर क्या करूं ?"

"हम तुम एक गुट बना लें।"

"ओ हो ! मैं गुटबंदी से बहुत परेशान हूं . . . हर तरह के गुट से हटकर रहना चाहती हूं।"

मेरी बात को अनसुना कर वह फिर सड़क के बीचोंबीच चल पड़ी। मैंने एक स्कूटर रोका और उसमें बैठ गयी।

"कहां?" स्कूटरवाले ने पूछा।

"गोलचा की तरफ," अनिंद्या ने मेरे बराबर बैठकर उत्तर दिया। हम दोनों बेहद जल्दी में थीं। वह कुछ और तरह से, मैं कुछ और तरह से। "कितनी दूर है तुम्हारा निवास?" मैंने झुंझलाकर पूछा।

वह मेरे समीप बैठकर मुझे समझाने लगी, "जहां मैं ठहरी हूं वहां चलेंगे। सिर्फ अपने पति के लिए एक संदेशा देना है कि मैं तुम्हारे साथ हूं। वै मेरे पति कुछ नहीं कहते।"

मेरा सिर भन्ना गया। मैं सुबह सात बजे के स्कूल से निकलकर दोपहर को सीधे उधर चली आयी थी। अब जल्दी से अपने निवास पर जाना चाह रही हूं।

स्कूटर गोलचा के पास रुका तो उसने मेरी पीठ थपथपा दी, जैसे कोई शाबाशी दे रही हो। वही खिंची हुई लजीली मुसकराहट और मुंह में चबाये हुए पान की लाली जो मैंने प्रकाशक के आफिस में देखी थी, जिसमें वह उन दोनों व्यक्तियों से आंखें मिलाकर कह रही थी, "तुम आना जरूर, एक दूसरे को लेकर। तुम इनको लेकर आना . . . और तुम इनको।"

दोनों व्यक्ति हंस रहे थे . . . एक गरिमापूर्ण हंसी। और उसके पहले वही संभ्रांत लेखक मेरे ही सामने तो एक बड़ी काली कार से उतरा था . . . परदा लगी लगी कार से और फिर सीढ़ियों में लगे पुस्तकों के बड़े अंबार को ठुकराकर आगे उतर गया था—तहखाने के आफिस में प्रकाशक के पास। स्कूटर सड़क पार कर मेन रोड पर आया तो अनिंद्या शास्त्री

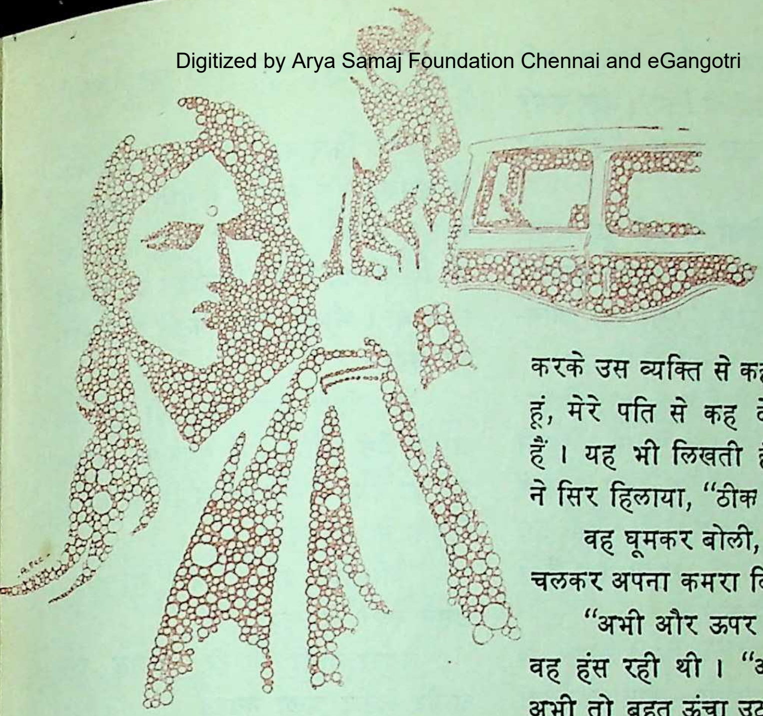

ने अंगड़ाई ली और कहा, "अजी, इन लोगों को बस में करना बहुत मुश्किल है।"

"तुम इनको बुलाना क्यों चाहती हो?"

"इसी तरह से तो संबंध बनते हैं। हम लोग किसी से मिल नहीं पातीं तभी तो पीछे रह गयी हैं। पुरुष लोग आपस में मिलते हैं, एक दूसरे का काम करते हैं।"

मैं सोचती रह गयी कौन-सा काम?

वह स्कूटर से उतरकर खड़ी हो गयी।

"आओ उतरो न!" उसने आग्रह से कहा।

"मैं बहुत थकी हुई हूं।"

"अजी आओ न, बस चलती आओ मेरे पीछे।" धड़ाधड़ सीढ़ियां चढ़कर वह अंधेरे-से एक कमरे में घुसी और दूर एक कोने में कुरसी पर बैठे एक व्यक्ति से बातें करने लगी। मेरी तरफ इशारा करके उस व्यक्ति से कहा, "मैं इनके साथ हूं, मेरे पति से कह देना। ये सुनंदाजी हैं। यह भी लिखती हैं।" उस आदमी ने सिर हिलाया, "ठीक है।"

वह घूमकर बोली, "चलो, अब ऊपर चलकर अपना कमरा दिखाऊं।"

"अभी और ऊपर चलना है क्या?" वह हंस रही थी। "अरे चलो भी न, अभी तो बहुत ऊंचा उठना है हमें। अभी से थक गयी तो क्या होगा!"

"तुम कितने साल की हो।" अगली सीढ़ी पर कदम रखकर मैंने पूछा।

"यह मत पूछो, बस इतना बता देती हूं कि मेरे दो बच्चे हैं और दोनों कालेज में हैं।"

"लेकिन तुम्हारी उम्र इतनी नहीं लगती।" ऊपर की मंजिल पर पहुंचकर मैंने उससे कहा।

वह ठुमककर आगे बढ़ी, "अजी बहुत छोटी उम्र में शादी हो गयी थी और अब मैं शादी की हर ड्यूटी से करीब-करीब मुक्त हूं। आओ, तुम्हें अपना कमरा दिखाऊं," कहकर वह आगे बढ़ी। सामने दरवाजे पर लटका ताला खोलने

के लिए वह अपना बैग टटोल रही थी . . . शायद चाभी के लिए। और कमरे का लॉक खोलते हुए बोली, "और यह मेरा कमरा है।"

सामने मैंने देखा दो जुड़े हुए अस्त-व्यस्त बिस्तर। बिस्तर की चादर उठाकर वह कुछ ढूंढ रही थी। "ऐसी क्या आवश्यक चीज है जो ढूंढ रही हो।"

"अजी, वह भी है कुछ, तुम्हें दिखाऊंगी। वह एक लिस्ट है जिसमें मैं अपने कालेज की लायब्रेरी के लिए पुस्तकें 'टिक मार्क' करके लायी थी। वह इन लोगों से खरीदनी हैं, आर्डर देना है। वह मिल ही नहीं रही।"

खुले बड़े कमरे में किसी होटल के कमरे-जैसी भव्यता थी––और जहां-तहां फेंके हुए वस्त्रों में किसी बेपरवाह जिंदगी की झलक। बिस्तर को उठाकर झाड़ने से अचानक एक नीले कवर की पुस्तक दिखायी दी। उसने पुस्तक को झट से उठाकर कहा, "अब चलो जहां चलना है।"

और फिर वह मुझे लेकर एक नये-से चमकते हुए रेस्तरां में घुसी, जो बाहर से एक अच्छी दुकान की तरह था। शीशे की खिड़कियों में नये डिजाइन की क्राकरी सजी थी। भीतर प्रवेश करते ही अंधेरा-सा लगा।

हम दोनों एक कोने की सीट पर जाकर बैठ गयीं। मेरी गर्दन पर तनाव-सा आ गया, जैसे अनचाहे ही किसी ऐसी स्थिति में आ गयी हूं।

"आमलेट दो . . . और दो चाय," उसने बेयरे से कहा।

बेयरा पानी के दो गिलास रख, आर्डर लेकर चला गया।

मैंने गिलास उठाकर घूंट भरा। पानी कसैला-सा लगा–या शायद मेरी जबान ही कसैली थी––गरमी और भूख के कारण।

"तुम मेरे घर चलती तो अच्छा रहता," मैंने नीम बेहोशी की-सी हालत में उससे कहा।

"अजी अकेली औरत का क्या घर होता है। तुम मेरे घर आना देहरादून में।"

"ठीक है, जरूर . . . कभी मौका लगा तो।"

बेयरा चाय रखकर चला गया। वह सिके हुए टोस्ट पर मक्खन लगाते हुए बोली, "अब तुमसे पूछूं ?"

"क्या ?"

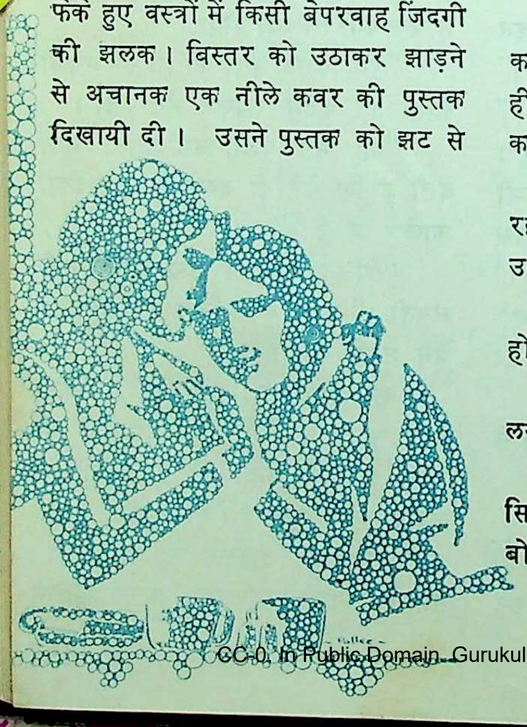

"यही कि तुम अकेली क्यों हो? तुमने शादी क्यों नहीं की?"

"शादी की नहीं जाती, हो जाती है और मेरी हुई नहीं, ऐसा ही समझो।"

"अजी नहीं, आजकल के जमाने में ऐसा नहीं . . .।"

"मैं पुराने जमाने की हूं और तुमसे बड़ी हूं।"

"लेकिन मुझसे बड़ी नहीं," उसने मेरी पीठ थपथपायी और प्लेट मेरी तरफ सरका दी।

अंडा-टोस्ट, छुरी-कांटा, मक्खन और सॉस की बोतल——मुझे सब चीजें अलग-अलग टुकड़ों में दिखायी दे रही थीं। उसने तो आमलेट का आर्डर दिया था ... फिर शायद बदल दिया होगा ... या शायद मैंने ही गलत सुना होगा। यह झनझनाहट-सी क्या है, जो मैं अपने कानों के गिर्द महसूस कर रही हूं। मैंने अपने कान को सहलाया। वह मेरी प्रशंसा कर रही थी, "तुमने बहुत देर से लिखना शुरू किया और दो-चार कहानियां लिखने के बाद चुप हो गयीं . . . लेकिन जो लिखा वह बहुत भयानक था।"

"जो नहीं लिख पा रही हूं, वह उसने भी अधिक भयानक है, उसी कारण चुप हूं।"

उसने मेरा हाथ पकड़कर प्लेट की तरफ बढ़ाया, "खाओ भी और बातें भी करो।"

"तुम भी खाओ।"

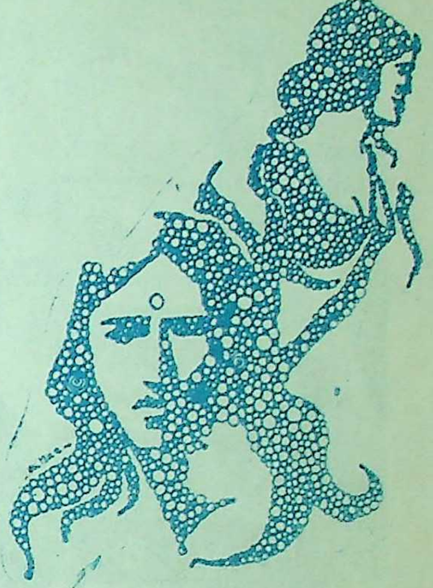

"मैं तो खा ही रही हूं।" उसने चाय पीते हुए पूछा, "यह सब क्या तुम्हारा भुगता हुआ था जो तुमने लिखा है?"

"भुगतना पड़ता है जब लिखना होता है तो . . . उससे पहले चाहे वह दूसरे का भुगता हुआ हो या अपना . . .उसमें कोई अंतर नहीं।"

"अंतर है . . . क्यों नहीं? . . . अपना भुगता इनसान अधिक गहराई से लिखता है और वह अधिक संवेदनापूर्ण होता है।"

"तो बात सिर्फ संवेदना की है, दूसरे के या अपने भुगते हुए की नहीं।"

"अजी छोड़ो . . . तुम तो रुला देनेवाली बातें करती हो . . . आज का लेखन सुखदायी होना चाहिए—'रिलेक्स'।"

"ठीक है, रिलेक्स," उसने कुछ ऐसे

woolmark
ये
शुद्ध ऊन है
ये
शायद नहीं

आप कौन सी खरीदती रही हैं?

दरअसल, आजकल बहुत से बुनाई के धागे ऊनी न होते हुए भी ऊनी का लेबल लगाकर, ऊनी के रूप में बेचे जा रहे हैं. अगर आप बुनाई के लिए शुद्ध, मिलावट रहित पक्के रंगवाली रंगबिरंगी ऊन खरीदना चाहें तो उस पर वूलमार्क अवश्य देख लें. वूलमार्क शुद्ध, नयी ऊन का विश्वास दिलाता है.

Woolmark
(वूलमार्क)
PURE NEW WOOL

*वूलमार्क, बुनाई की ऊन पर इन गुणों का विश्वास दिलाता है:
- शुद्ध, मिलावटरहित ऊन
- पक्का रंग
- आकर्षक रंग छटाएं
- अधिक टिकाऊ

वूलमार्क.
शुद्ध, मिलावटरहित ऊन का विश्वास.

नाटकीय ढंग से कहा कि मुझे हंसी आ गयी और मैंने पानी का पूरा गिलास पी लिया फिर चाय का कप उठाया। लेकिन चाय तो ठंडी हो चुकी थी। मैंने प्याला हटाकर रख दिया, "मैं घर जाकर चाय पीऊंगी।"

"तुम मेरे घर आना," उसने चाय खत्म की और बेयरे की प्लेट से बिल उठाया। मैंने देखा—तेरह रुपये साठ पैसे। और मैंने दस-दस के दो नोट रख दिये।

"यह क्या? पैसे तुम पहले ही हाथ में लिये हुए थी क्या?"

"तुम दिल्ली में आयी हो न, इसलिए मेरी मेहमान हो।"

"तो आज से हम तुम बहनें हुईं।" उसने दोनों हाथों से मुझे आलिंगनबद्ध कर लिया। मैं पीछे हटी,..."यह रेस्टरां है बुरा लगता है।"

"आज दुनिया में कुछ बुरा नहीं", उसने बड़ी संजीदगी से मुझे समझाया, "तुम अकेली हो न, बड़ी मौज में हो।"

"क्या मतलब? कैसी मौज?"

"फेमलीवालों को बहुत झंझट है... पति के डर से कोई पुरुष पास नहीं आता।"

"पति पुरुष नहीं है क्या?"

वह हंसी, "वह तो है लेकिन जिंदगी में ऊंचा उठने के लिए भी तो पुरुष की जरूरत है।"

"जितना पति के साथ ऊंचा उठी हो, वह काफी नहीं?"

वह खीझ उठी, "अजी लिखने के लिए भी तो पुरुष की जरूरत है।"

"ओ हो, तुम कैसी बातें कर रही हो! तुम्हारे अपने पति जो हैं।"

"पति तो हैं... लेकिन पुरुष!" उसकी आंखों में जैसे कोई चमक लपलपाकर कुछ कह रही थी।

"मैंने तो सुना था कि पुरुष को उठाने के पीछे औरत का हाथ होता है।"

"वह तो है! यह भी है!"

"तो तुम मुझसे क्या चाहती हो?"

"हम-तुम एक गुट बन जाएं... तुम्हारी वजह से पुरुष समीप आयेंगे।"

"नहीं नहीं, यह नहीं हो सकता।"

बेयरे ने प्लेट मेज पर रखी तो मैं उसमें से पांच का नोट उठाकर खड़ी हो गयी।

"तो तुम चल रही हो?"

"और तुम?"

"मैं अभी बैठूंगी," कहकर वह एक कोने में सरक गयी।

"ठीक है," कहकर मैं चल पड़ी। रेस्तरां के दरवाजे को खोला तो देखा, बाहर वही परदे लगी काली कार पेड़ के नीचे आकर रुकी थी और वही संभ्रांत लेखक किसी डाइरेक्टर की तरह तनावदार चेहरे से बाहर कदम रख रहा था जिसके पांवों की ठोकर से नयी छपी हुई पुस्तकों का ढेर सीढ़ियों में बिखर गया था।

—ए-५०३, कर्जन रोड
अपार्टमेंट्स, नयी दिल्ली-११०००१

सही रुद्राक्ष की पहचान आसान नहीं है!

• जनार्दनसिंह

सभ्यता के क्रमिक विकास के साथ-साथ मनुष्य के खान-पान, रहन-सहन व परिधान में क्रमशः परिवर्तन होता गया। आदिकाल में मनुष्य का निवास जंगलों में एवं परिधान मुख्यतः वल्कल ही था। आभूषण के रूप में पेड़-पौधों के फल, फूल, बीज एवं विशेष तौर पर तैयार की गयी लकड़ियों की मालाएं ही प्रयोग की जाती थीं। वनस्पतियों का उपयोग रोग निवारणार्थ भी होता था, जिनका वर्णन हमें संसार के पुरातन ग्रंथ ऋग्वेद (रचनाकाल ३५०० ई. पूर्व से १८०० ई. पूर्व तक) में मिलता है। अथर्ववेद में वनस्पतियों का उपयोग रोग निवारण के अतिरिक्त जादू-टोने (उस समय की परंपरा के अनुसार) के रूप में भी किया जाता था और इस प्रकार आर्य चिकित्सा-पद्धति 'आयुर्वेद' जो अथर्ववेद की ही एक शाखा मानी जाती है, का प्रादुर्भाव हुआ। इसके बाद आयुर्वेद शास्त्र की मुख्य संहिता 'चरक संहिता' एवं 'सुश्रुत-संहिता' की रचना हुई। तदंतर वाणभट्ट ने दोनों संहिताओं के मूल भावों को संग्रह कर तथा नवीन प्राप्त ज्ञान को समाविष्ट कर एक नये ग्रंथ 'अष्टांग संग्रह' की रचना की, जिसमें उस समय के प्रचलित द्रव्यों एवं रोगों के विषय में ज्ञान सन्निहित था।

रोग निवारण के लिए, इन संहिताओं में, प्राकृतिक, खनिज, समुद्रज, प्राणिज तथा उद्भिज्ज (वनस्पति) द्रव्यों का औषधि रूप में प्रयोग मिलता है। वैदिक वांग्मय के अध्ययन से पता चलता है कि उस समय लगभग २०० प्रकार की वनस्पति औषधि के रूप में प्रयोग में लायी जाती थी। चरक-संहिता में ११००, सुश्रुत-संहिता में १२७० और अष्टांग हृदय में (जो अष्टांग-संग्रह का पद्यमय संक्षिप्त रूप है) ११५० वनस्पतियों का विवरण मिलता है। आधुनिक वनस्पति-शास्त्रियों का मत है कि १६,००० से भी अधिक वनस्पति भारत में पायी जाती हैं।

इनके इतिहास से पता चलता है कि उस समय आर्य चिकित्सा-पद्धति कितनी विकसित थी ।

विदेशी शासन के समय इस चिकित्सा पद्धति का प्रचलन निरंतर कम होता गया ।

इतना सौभाग्य अवश्य मिला कि स्वतंत्रा प्राप्ति के वाद हमारी केंद्रीय एवं प्रांतीय सरकारों का भारतीय औषधि एवं चिकित्सा पद्धतियों के विकास एवं अनुसंधान की ओर ध्यान दिया गया । इनमें की एक औषधि 'रुद्राक्ष' भी है, जिसका वर्णन प्राचीन ग्रंथों में भी खूब मिलता है । इसके भेषजीय गुणों की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित हुआ है । देश में इसके उत्पादन एवं खपत की चर्चा 'संसद' तक में हुई है । माना जाता है कि व्यावसायिक स्तर पर 'रुद्राक्ष' नेपाल और इंडोनेशिया में पैदा होता है ।

रुद्राक्ष के भेषजीय गुण

रुद्राक्ष के विभिन्न पदार्थ एवं भेषजीय गुणों की चर्चा 'राज निघंटु' में की गयी है—

रुद्राक्षश्च शिवाक्षश्च, शर्वाक्षो भूतनाशनः।
पावनो नीलकंठाक्षो हराक्षश्च शिवप्रियः ॥८६॥
रुद्राक्षमम्लमुष्णञ्च वातघ्नं कफनाशनम् ।
शिरोऽर्तिशमनं रुच्यं भूतग्रह विनाशनम् ॥८७॥

संस्कृत-रुद्राक्ष, शिवाक्ष, शर्वाक्ष, भूतनाशन, पावन, नीलकंठाक्ष, हराक्ष, शिवप्रिय, तृण मेरु, अमर, एवं पुष्प-चामर । **हिंदी**–रुद्राक्ष, रुद्रक । **बंगाली**-रुद्राक्य-रुद्राक्ष । **गुजराती**-रुद्राक्ष । **मराठी**–रुद्राक्ष । **तमिल** – अक्कम । **तेलुगु**-रुद्रचलम । **लैटिन**–ऐलियोकारप्स **जेनिट्रस** एवं **लियोकारप्स टूवरकुलेट्स** ।

रुद्राक्ष के गुण

आयुर्वेद की दृष्टि से रुद्राक्ष खट्टा, गरम, वायु को नष्ट करनेवाला, कफ निवारक, सिर दर्द से मुक्त करनेवाला,

रुद्राक्ष : असली या नकली ?

भूतबाधा एवं ग्रहबाधा को दूर करनेवाला माना जाता है। रुद्राक्ष का शाब्दिक अर्थ 'शिव की आंख' है। तमाम शिवभक्त इसकी माला 'शिवलोक' प्राप्ति के उद्देश्य से पहनते हैं। साधु-संन्यासियों का कथन है कि रुद्राक्ष की माला धारण करने से मनुष्य के शरीर का प्राणत्व (विद्युत शक्ति) नियंत्रित होता है।

परख की विधि

आयुर्वेदिक साहित्य में द्रव्यों का विवरण पहचान की दृष्टि से वहुत कम मिलता है, जिससे अनेक आशुफलकारी औषधियां संदिग्ध हो गयी हैं। एक ही वनस्पति का भिन्न-भिन्न नाम से विभिन्न औषधियों का प्रयोग इनकी संदिग्धता निवारण में काफी कठिनाइयां उत्पन्न करती हैं। रुद्राक्ष को ही लीजिए, इसके दूसरे नाम (संस्कृत नाम) 'भूतनाशन' से भिलावा, काली मिर्च, काली सरसों एवं हिंगू का बोध होता है।

आधुनिक वनस्पति-शास्त्रियों ने **एलियोकारपस** वर्ग के दो प्रजातियों, **जेनिट्रस** एवं **ट्यूबरकुलेट्स** को रुद्राक्ष बतलाया है।

रुद्राक्ष की मांग अधिक होने से आजकल विभिन्न प्रकार के वनस्पतियों के फल, फूल एवं बीज तथा विशेष तौर पर लकड़ी की तैयार की गयी मालाएं रुद्राक्ष के नाम से बाजारों में बिकते हैं। के 'एकमुखी' 'द्विमुखी', 'पंचमुखी' आदि कई प्रकार होते हैं। और इनकी कीमतों का मूल्यांकन मु के आधार पर ही होता है। औ के प्रकृति-विज्ञानीय अध्ययन न से इनकी पहिचान सही-सही कर पा असंभव है।

यह समझना कि रुद्राक्ष का केवल नेपाल, इंडोनेशिया, सुमात्रा जावा में ही होता है, एकदम ग धारणा है। भारत में भी रुद्राक्ष (एलीयोकारपस) की भिन्न प्रजाति पायी जाती हैं:

१. ऐलियो कारपस जेनिट्रस

इस प्रजाति के वृक्ष न तो अधिक लंबे न ही छोटे होते हैं, ये मध्यम श्रेणी भीतर आते हैं। विशेषकर बिहार, बंग असम, मध्यप्रदेश और बंबई में पाये ज हैं। देहरादून में भी इसके वृक्ष हैं। वैज्ञानि विधि से इसकी अभिवृद्धि सफलतापू की गयी है। इसका फल करीब एक व्यास का गोल एवं अंडाकार होता इसके ऊपर का छिलका, नीला तथा बैं रंग का व स्वाद में कसैला होता है। इ अंदर, पांच खड़ी धारियों को लिये (पंचमुखी) सख्त बीज होता है। इ बीज को साफ एवं पालिश कर, माल बनायी जाती हैं। औषधि के रूप में इ बीज का उपयोग सिर रोग एवं मिर्गी किया जाता है।

२. ऐलियोकारपस ट्यूबरकुलेट्स

इसका वृक्ष करीब ८० फुट ऊं ९ फुट मोटा होता है; अधिकां

मैसूर में उगते हैं। नील-गिरि एवं अन्नामल्लई पर्वतमालाओं पर भी पाये जाते हैं। इसका फल गोलाकार चिकना एवं अंदर का हिस्सा (स्टोन) धारीदार होता है। इसका फल संधिवात, मोती ज्वर (टाइफायड फीवर) और मिर्गी रोग में लाभदायक सिद्ध हुआ है।

३. एलियोकारपस लैंसीफोलियस

यह मध्यम कद का वृक्ष होता है। मुख्य रूप से असम के जंगलों में पैदा होता है। असमी में इसे साकिआंग कहते हैं। इसका फल गोल, हरे रंग का स्टोनधारी होता है। इसके फल को लोग बड़ी चाव से खाते हैं। औषधि के रूप में इसका उपयोग एलिकारपस जेनिट्रस की तरह करते हैं।

४. एलियोकारपस सीरेटस : यह भी मध्यम कद का वृक्ष होता है। पूर्वी हिमालय में ३००० फुट तक पाया जाता है। बंगाली में इसे **जलपाई**, तमिल में **उलंकारी** कन्नड़ में **पारीकंरा** कहते हैं। इसका फल गोल, हरा एवं धारीदार होता है। इसके ऊपर का कुछ हिस्सा थोड़ा खट्टा होता है। इसकी पत्तियों में विटामिन सी पाया जाता है। आंव, वात एवं विष कम करने के लिए इसका उपयोग किया जाता है। इसका फल अतिसार में भी काफी लाभदायक पाया गया है।

५. एलियोकारपस ओवलोगस

इस प्रजाति का वृक्ष पश्चिमी किनारों में ६००० फुट तक पाया जाता है। इसे मलयालम में मलंकारा एवं मराठी में खस कहते हैं।

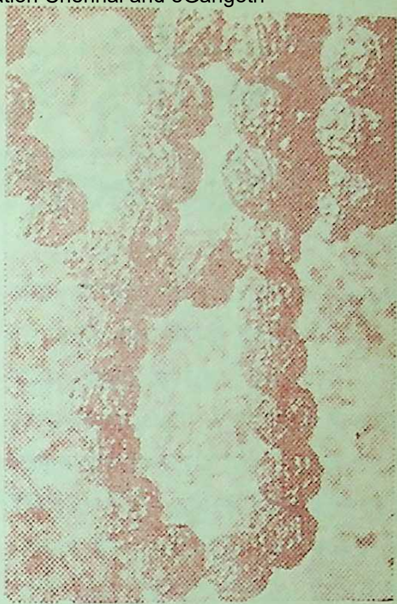

स्वास्थ्य का प्रतीक रुद्राक्ष

इसके फल का उपयोग संधिवात, वमन, नासूर, कोढ़, भगंदर आदि रोगों में करते हैं।

६. एलियोकारपस वरून्ना : उत्तर से पूर्व तक की हिमालय की सारी पट्टी पर यह प्रजाति खूब उगती है। इसका फल अन्य प्रजातियों की भांति खाने एवं औषधि-रूप में प्रयोग किया जाता है।

इस प्रकार यदि रुद्राक्ष की इन प्रजातियों का और गहन अध्ययन किया जाए तो भविष्य में वहुत सारी बीमारियों से मुक्त हो सकेंगे।

—स्प्रिग-फील्ड, रानीखेत-२६३६४५

साहित्य में अस्मिता का प्रश्न

• सुरेन्द्रनाथ त्रिपाठी

'अहं ब्रह्मास्मि' को सुनकर यदि किसी को अहम्मन्यता की ध्वनि मिले तो यह असंभव नहीं, और 'अस्मिता' से अगर कुछ ऐसा ही भाव प्रकट हो, तो वह भी बात समझ में आ सकती है, हालांकि अपने विशुद्ध अर्थ में दोनों ही अहं के द्योतक नहीं हैं; बल्कि एक आध्यात्मिक तथा तात्त्विक स्थिति की ओर संकेत करते हैं। हिंदी में अस्मिता शब्द का प्रयोग तुलना में नया है और मूल संस्कृत से निकलने के बावजूद उसके कलेवर से पाश्चात्य परिवेश, जिसमें इसके लिए प्रचलित शब्द 'आइडेंटिटी' है, की महक आती है। सौभाग्य से इस महक में चंदन का-सा स्पंदन और उसकी कोमलता परिव्याप्त है, चंदन के वृक्ष से लिपटे हुए सर्प का विष अथवा हलाहल की कड़वाहट नहीं।

आत्मिक-तत्त्व के दर्शन

समता में 'अस्मिता' हमारी संस्कृति और देव-भाषा से घनिष्ट रूप में जुड़े होने के कारण अपने अस्तित्व में अध्यात्म से वेष्ठित और दूरगामी तथा शालीन अर्थों की सूचक है; 'आइडेंटिटी' एक व्यक्ति या किन्हीं राष्ट्रीय तत्त्वों की पहचान या वैयक्तिक गुण जताने के भाव में अर्थ-रोपण-जैसा लगता है। फिर भी इस सुंदर अंगरेजी शब्द की अवहेलना न हो, इससे स्पष्ट कर दूं कि इसके पीछे झांककर देखने पर भी एक संपूर्ण परिवेश के आत्मिक-तत्त्व के दर्शन हो सकते हैं, जिनसे आत्मीयता स्थापित करने पर 'अस्मिता' के समान वातावरण का सान्निध्य संभव है।

अपने को पहचानने की आवश्यकता पर जोर, अपने अंदर स्थित ब्रह्म के दर्शन की परंपरा ("अयं आत्मा ब्रह्म"—अथर्ववेद, मुण्डकोपनिषद्), अपने व्यक्तित्व के सूक्ष्म रूप को समझने का प्रयास तथा व्यष्टि और समष्टि, व्यक्ति और समाज या राष्ट्र के सम्मिलित सौष्ठव की वैयक्तिकता को जानने की चेतना, भारतीय-चिंतन तथा संस्कृति का प्राण है। संपूर्ण भारतीय-दर्शन तथा वाङ्मय इसी रहस्योद्घाटन की ओर प्रवृत्त दिखायी पड़ता है। 'अस्मिता' शब्द इसी परंपरा की ओर संकेत करते हुए, हमें यह एहसास करने पर बाध्य

करता है कि हम निजी तौर पर या सामूहिक दृष्टि से चिंतन के प्रतीक हैं, उसके प्रति हमें सचेष्ट और जागरूक रहना है।

यह यथेष्ट नहीं कि दार्शनिक तथा नैतिक-मूल्यों के आधार पर हमारी प्रतिष्ठा की दुंदुभी देश-देशांतर में गूंजती रहे। जिन स्थायी मूल्यों ने सभ्यता के आदिकाल से हमारे चित्त को झकझोरा है, उनसे हमारा संपर्क या साक्षात्कार यदि छूटता गया और वे केवल मंजूषा में संजोने की वस्तु बन गये, तो निश्चय ही इसका अर्थ यह होगा कि हम अपनी अस्मिता की अनुभूति से वंचित होते जा रहे हैं, या जान-बूझकर उसके प्रति उदासीन हैं, अतएव उसे पीछे छोड़ रहे हैं।

अस्मिता को पहचानने का अर्थ यह है कि हम अपने सोचने की प्रक्रिया में अपने अस्तित्व तथा अपनी साधना का प्रमुख स्थान मानकर चलें। हमारे व्यक्तित्व की सृजनशीलता तथा चिंतन-पद्धति कहां तक राष्ट्र की अर्जित परंपराओं को सुरक्षित रखते हुए, देश के जन-मानस को सही मूल्यांकन का अवसर प्रदान करती है और विकास की नयी दिशाओं का पथ-प्रदर्शन करती है, यही अस्मिता के परख की कसौटी हमारे सामने उभरती है। इस विचार-प्रणाली के अंतर्गत रूढ़ियों की गिरती दीवारों को सहारा देने का भार अस्मिता के अर्थ-विस्तार के बाहर है। अस्मिता का संबंध सही मूल्यों के सम्यक उत्थान, संवर्धन एवं दिशा-दर्शन है।

इस अभिप्रेत अर्थ में या तो राष्ट्रीय-अस्मिता और वैयक्तिक-अस्मिता आपस में सुलह करके एक ही दिशा में चलतीं हैं या जब कुछ सच्चा असामंजस्य दिखायी पड़े, वे जहां तक साथ जा सकती हैं, जाती हैं और बिना किसी शत्रुता-भाव के, अलग-अलग भी चलती दिखायी पड़ती हैं।

तब वैयक्तिक-अस्मिता अपने अस्तित्त्व की एकाग्रता को उजागर करती हुई, राष्ट्रीय-अस्मिता के हित को न भूलते हुए, एक नियंत्रित, अनुशासन-अनुमोदित स्वतंत्र-धारा का अनुसरण करती दिखायी पड़ेगी। ऐसी अस्मिता को राष्ट्र और समाज के लिए चुनौती के रूप में नहीं मानना चाहिए, पर इसके जन-जीवन तथा चिंतन पर संभावित प्रभावों को, जो क्रांतिकारी परिवर्तनों के सूचक हो सकते हैं, नहीं भूलना चाहिए।

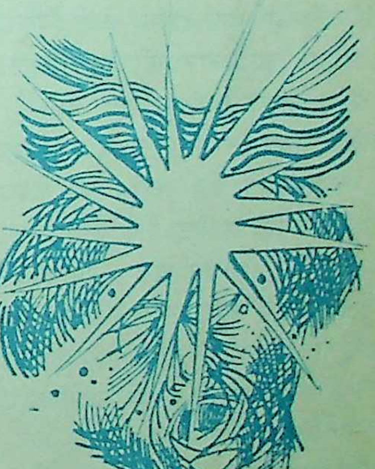

मैं यहां ऐसी अस्मिता की बात नहीं सोच रहा हूं, जो वैयक्तिक दंभ और प्रमाद के आवेश में ऐसी तथाकथित मौलिक मान्यताएं प्रस्तुत करती हैं, जिससे न कोई वास्तविक लोक-कल्याण की भावना जुड़ी होती है और न क्रियाशील चिंतन के क्षेत्र में ही किसी स्थायी प्रगति का आश्वासन लक्षित होता है । दर्पांधता के वशीभूत हो, अस्मिता-प्रकाश के नाम पर उद्घोषित चिंतन के नये दायरे या आयाम थोड़ी देर के लिए समाज के चिंतन-वर्ग को चमत्कृत भले ही कर पायें, पर अंततः उनकी गणना सारहीन प्रगल्भ प्रयासों में होकर रह जाएगी ।

इतना कहने के बाद जब मैं इस निबंध के प्रथम वाक्य पर फिर से दृष्टिपात करता हूं, तब मैं पूर्ण विश्वास से कह पाता हूं कि अस्मिता-ज्ञापन अपने विशुद्ध रूप में 'अहं' का प्रचार नहीं है । अस्मिता का प्रबुद्ध होना अहंकारोक्ति नहीं है; उसकी सजीवता का सशक्त प्रमाण अवश्य है । अहम्मन्यता की ध्वनि को केवल ध्वनि ही मानना चाहिए, ठीक उसी प्रकार जैसे यजुर्वेद (वृहदारण्यक उपनिषद) के महावाक्य, 'अहं वह्मास्मि' को सुनकर सोचना चाहिए । ब्रह्म-भावना यदि अपने में न दिखायी दी, तो आत्मोलब्धि की बात निरर्थक जान पड़ेगी ।

साहित्यकार और अस्मिता

अब आइए; साहित्य के क्षेत्र में इस सवाल को देख । एक साहित्य-कलाका के समक्ष अस्मिता का प्रश्न किस में आता है ? साहित्य का अनुरागी, सृ या उपासक, एक सीमित अर्थ में, अ अंदर एक आनंद-लोक की अनुभूति विभोर और तल्लीन रहता है । साहि की यह साधना अपने अंतिम निष्क में, ज्ञानोपलब्धि के गुरुत्व के कार विनम्रतावर्धक होती है, और साधक अप आंतरिक-ज्ञान प्रकाश से जितना ही अधि ओत-प्रोत होगा, उसी मात्रा में उस मार्दक्य एवं विनम्र भाव में भी उत्तेज दर्शनीय होगी । यह तो हुई साधना स्वाभाविक स्थिति ।

इस परिप्रेक्ष्य में जब अस्मिता का प्रश्न सामने आता है, तो ऐसा नहीं लगता न इसकी अपेक्षा ही करनी चाहिए कि अस्मिता, विनम्रता में समा जाएगी और साधक को अपने स्वत्व से निरपेक्ष कर देगी । अच्छे से अच्छे, गंभीर गंभीर साहित्यान्वेषी में भी अस्मित का भाव विद्यमान मिलेगा, पर व साथ-साथ विनम्र भी होगा । साहित्य साधना और अस्मिता के बीच यह सुख सामंजस्य और समीकरण ही वैचारि उदात्तता की चरम-स्थिति है ।

पर साहित्य और कला की साधना के क्षेत्र में अस्मिता की विकृति या उस विकारपूर्ण होने के उदाहरण अकस सामने आते हैं । इसका क्या कारण है ? विश्लेषणात्मक दृष्टि से सोचें और प्र

को गहराई से देखें, तो जो स्थिति सामने आती है, वह कुछ इस प्रकार है—शुद्ध अस्मिता कलाकार में कभी अहंकार को जन्म नहीं देगी, ठीक उसी प्रकार जैसे विशुद्ध साहित्य-चिंतन से अहम्मन्यता का नहीं, अपितु विनम्रता, स्वभाव-मृदुलता, सरलता आदि प्रभृति गुणों का प्रादुर्भाव होगा। अतएव, यदि विकसित साहित्य-साधना के होते हुए कहीं दंभ अथवा आत्म-श्लाघा की प्रवृत्ति नजर आये, तो यही सोचना चाहिए कि कला की आराधना में कहीं खोट है और कलाकार की पैठ उसके अन्वेषण की पूरी गहराई तक नहीं हो पायी है, जहां ज्ञान-मंदाकिनी की कल-कल शीतल धारा प्रवाहित होती है जो अहंकार तथा सांसारिक बुद्धि को अपने कूलों के बीच समेट लेती है।

अस्मिता से जीवन निखरता है

ज्ञान और अहंकार आपस में विरोधी तथा प्रतिस्पर्धी हैं, पर यह दोनों ही तत्त्व अथवा विकार अस्मिता से संघर्ष नहीं लेते। दंभ के संसर्ग से अस्मिता के मंतव्य संदेहास्पद हो उठते हैं और जब उसे ज्ञान का साहचर्य सुलभ होता है, तब वह अपनी स्वाभाविक अथवा नैसर्गिक दिव्यता से ओत-प्रोत हो उठती है। दोष अस्मिता का नहीं, उसके बुरे संगी-साथियों का हो सकता है, जो उसे अपने आदर्श से डिगाने में लगे रहते हैं। यदि अस्मिता कुसंगति में न पड़े, ज्ञान और अन्वेषण को साथी-संगी बनायें, तो वह अस्तित्व के पहचान की सर्वोत्कृष्ट साधन बन जाएगी।

अस्मिता जीवन के सौंदर्य को निखार और प्रांजलता प्रदान करती है। पर अपने विकृत रूप में, 'अहं' के समावेश से, वह कुरूप और अस्पृहणीय बन जाती है (यहां 'अहं' को उसके दूषित या पथ-भ्रष्ट अर्थ में देखा गया है।) साहित्य-साधना के बीच में आने से अस्मिता के कुरूप होने की संभावना नगण्य हो जाती है। बुद्धि-विलास, ज्ञान-गंगा और मनोभावों के हृदय-तत्त्व के सामूहिक प्रभाव में अस्मिता अपने स्वस्थ, निःस्पृह तथा प्रांजल रूप में सामने आती है, जिससे देश, समाज और व्यक्ति के शाश्वत तथा सनातन मूल्यों को पहचानने-जानने में सहायता मिलती है।

अस्मिता का यह स्वरूप चिंतन और विकास को प्रश्रय देता है, जिसका जन-मानस के उत्कर्ष, अभ्युदय तथा सौंदर्यबोध से सीधा संबंध है। अस्मिता को हम गुण के रूप में ही अंगीकार करते हैं और एक साहित्य-कलाकार के जीवन में उसका स्वाभाविक स्थान मानते हैं। उसके अभाव में, जीवन-तत्त्व के समस्त उपकरणों तथा उपादानों के उपस्थित होने के बावजूद कलाकार की जिंदगी निस्तेज और प्रभावहीन रह जाएगी। इसलिए, एक श्रेष्ठ कलावंत या साहित्य-विदग्ध के जीवन में अस्मिता का, आत्मिक एवं आध्यात्मिक अर्थ में, महत्वपूर्ण स्थान है। मेरे चिंतन में अस्मिता का यही सही रूप उतरता है।

—भारतीय दूतावास, मास्को

वह एक पदयात्री

• कमलेश चतुर्वेदी

विश्व के [illegible] ऐसा एक भी व्यक्ति नहीं होता, जिसके जीवन में तारतम्य न हो, जिसे उदय और अनुदय का अनुभव न हो, जिसने सुख और दुःख का स्पर्श न किया हो, जिसमें प्रकाश और अंधकार सत और असत, जीवन और मरण, पराक्रम और मंदता का मिलन न हो।

मुनि नथमल इन सभी अवस्थाओं से गुजरनेवाले एक व्यक्ति हैं, जिन्होंने इन विरोधी अवस्थाओं को समझाव से छुआ और अपनी गतिशीलता को बनाये रखा है। वे अपनी आत्म-कथा में लिखते हैं, 'मैं ग्यारह वर्ष की अवस्था में मुनि बना और तब से ही पदयात्री हूं। मेरी जीवन-यात्रा बाहर और भीतर—दोनों को स्पर्श करती है। मैं मुनि हूं, इसलिए मैंने बाह्य जगत से अस्पृष्ट रहने का प्रयत्न किया है। फिर भी वस्तु-जगत में जीनेवाला कोई भी देहधारी बाह्य का स्पर्श किये विना नहीं रहता। अंतश्चेतना घटना से जुड़े या नहीं, किंतु मन उसका स्पर्श और उसके फलितों का विश्लेषण भी करता है। प्रतिक्रिया से लिप्त होना या न होना अलग प्रश्न है, किंतु उसका साक्षात होता ही है। मैंने अंतर-यात्रा की है, अंतश्चेतना के आलोक में बाह्य-जगत को समझने का प्रयत्न किया है। मैं सिद्ध होने का दावा नहीं करता, इसलिए इस वास्तविकता को स्वीकार करता हूं कि बाह्य-जगत में घटित होनेवाली घटनाओं से प्रभावित भी हुआ हूं, उनके आघातों से आहत और प्रतिक्रियाओं से प्रताड़ित भी हुआ हूं। फिर भी मैंने अपने संतुलन को कभी नहीं खोया। मैंने सदा घटना को विस्मृत कर उससे मिलनेवाले अर्थबोध को संजोये रखा है और मैं इससे बहुत लाभान्वित भी हुआ हूं।'

मुनि नथमल दृश्य जगत में विद्वान और प्रखर दार्शनिक हैं। वे आशुकवि, मधुर वक्ता और उच्चकोटि के लेखक हैं।

आशुकवि

सन् १९५९ में बनारस के संस्कृत महाविद्यालय के विशाल प्रांगण में प्रवचन आयोजित हुआ। डा. मंगलदेव शास्त्री का सान्निध्य था। पंडितों, प्राध्यापकों तथा विद्यार्थियों ने 'स्याद्‌वाद' विषय पर सुनना चाहा। मुनिश्री ने एक घंटा तक संस्कृत में प्रवचन किया। उपस्थि

पंडितों में से अधिकांश प्रसन्न हुए, किंतु कुछ अप्रसन्न भी हुए । उन्होंने मुनिश्री को प्रश्नों के कटघरे में खड़ा कर दिया । संस्कृत में ही प्रश्न और संस्कृत में ही उत्तर का क्रम चलता रहा । उसी समय आशुकवित्व के लिए विषय दिये जाते रहे। किसी ने 'राष्ट्रसंघ' पर आशुकवित्व चाहा तो किसी ने और अन्य विषयों पर । परीक्षा चालू रही । अब समस्या-पूर्ति का दौर प्रारंभ हुआ । 'कदंत्यमी मानवा:', 'सरस्यामा लस्यादिव पतति पाटीरपवन :, 'न रजनी न दिवा न दिवाकर:' आदि समस्याएं दी गयीं और अविलंब उनकी पूर्ति करने के लिए कहा गया । मुनिश्री अविचल भाव से कविता करते रहे। आपकी संस्कृत रचनाएं हैं—संबोधि, मुकुल, अक्षुवीणा आदि।

प्राकृत भासा के प्रवक्ता

बंबई में पेनस्लेविया यूनिवर्सिटी के संस्कृत विभागाध्यक्ष डा. नार्मन ब्राउन आये, वहां मुनिश्री से संपर्क हुआ । उन्होंने कहा, "मेरे जीवन की एक कामना है कि मैं भगवान महावीर की मूलवाणी प्राकृत में वक्तव्य सुनूं । आज तक मुझे वह सुनने को नहीं मिला ।" मुनिश्री ने बीस मिनट तक प्राकृत में वक्तव्य देकर उन्हें मंत्रमुग्ध कर डाला । वक्तव्य सुनकर डॉ. ब्राउन गदगद हो गये । तब उन्होंने कहा, "मेरी भारत-यात्रा सफल हुई ।" मुनिश्री ने 'तुलसी मंजरी' के नाम से प्राकृत व्याकरण का निर्माण किया है, जो शीघ्र ही प्रकाशित होनेवाली है ।

चिंतक

आज के साहित्य में मौलिक चिंतन बहुत कम मिलता है । मुनिश्री मौलिक चिंतकों की श्रेणी में अग्रणी हैं । आपने बहुत लिखा, किंतु किसी से लेकर नहीं। प्रत्येक ग्रंथ में आपका मौलिक चिंतन प्रस्फुटित हुआ है ।

आपने हिंदी साहित्य को समृद्ध करने का अथक प्रयास किया है।

मुनिश्री की शैली सूत्रात्मक है । शब्द अल्प, वाच्य अधिक । भावों की गहराई पग-पग पर परिलक्षित होती है। 'जैन दर्शन: मनन और मीमांसा', 'जैन न्याय का विकास', 'अहिंसा तत्व दर्शन' आदि ग्रंथ जैन दर्शन के प्रतिनिधि ग्रंथ हैं।

विवेकानंद

मुनिश्री दिल्ली में थे । राष्ट्रकवि रामधारीसिंह 'दिनकर' सहित अन्य साहित्यकार सभा में उपस्थित हुए। तब दिनकरजी ने कहा, "हम विवेकानंद के समय में नहीं थे । हमने उनको नहीं देखा, केवल उनके विषय में पढ़ा मात्र है। आप हमारे समक्ष हैं । आप आज के विवेकानंद हैं । आपको पाकर हम गौरवान्वित हैं । आपकी तीक्ष्ण और ठेठ तक पहुंचनेवाली बुद्धि से हम परिचित हैं।"

योग साधना

समता मुनिश्री का आत्म-धर्म है । अनेक प्रवृत्तियों में संलग्न रहकर भी

"नीरकमलवत' उनकी क्रियाओं और प्रतिक्रियाओं से मुक्त हैं। एक दशक से आप विशिष्ट ध्यान साधना में लगे हैं। ध्यान आपके जीवन का अभिन्न अंग बन चुका है।

आप द्वारा लिखित योग के ये ग्रंथ 'मन के जीते जीत', 'महावीर की साधना का रहस्य', 'जैन योग', 'चेतना का ऊर्ध्वारोहण', 'मैं: मेरा मन : मेरी शांति' आदि। इन रचनाओं में शाश्वत सत्य भरा है। अध्यात्म और जीवन-दर्शन का समन्वय उसका एक बिंदु है। यह बिंदु एक बिंदु होकर भी सिंधु-सा गहरा और विशाल है।

राजस्थान में एक छोटा-सा गांव है टमकोर। वहां आपका जन्म हुआ। दस वर्ष की अवस्था में मुनिश्री अपनी मां के साथ तेरापंथ के आठवें आचार्य कालूगणी के पास दीक्षित हुए। मुनि तुलसी (वर्तमान में आचार्य) आपके अध्यापक बने।

तेरापंथ धर्म-संघ के प्रत्येक उन्मेष में आपका अविरल योगदान रहा है। आपकी नुकीली मनीषा ने अनेक नये आयाम खोले हैं, जो आज भी गुणगाथा गा रहे हैं। आप आचार्य तुलसी की वाणी के प्रशस्त भाष्यकार हैं। तेरापंथ के बाह्य और आंतरिक विकास में आपका योगदान अपूर्व है।

प्रबंधक--आदर्श साहित्य संघ,
पो. चुरू (राजस्थान)

ज्ञान-गंगा

यथा-यथा हि पुरुषः कल्याणे कुरुते मनः।
तथा तथास्य सर्वार्थाः सिध्यंते नात्र संशयः।

—मनुष्य जैसे-जैसे कल्याणकारी कामों में मन लगाता है वैसे-वैसे उसके सब प्रयोजन सिद्ध होते जाते हैं, इसमें कुछ संदेह नहीं।

मानाग्निहोत्र मुत मान मौनं मानेनाधीत-
मुत मान यज्ञः।
एतानि चत्वार्यभयंकराणि भयं प्रपच्छं-
त्यषयाकृतानि।।

—अग्निहोत्र, यथोचित मौनव्रत, अध्ययन और यज्ञ--ये चार काम विधिपूर्वक करने से अभय देते हैं और यदि ये ही लोगों पर मात्र प्रभाव डालने के लिए आडंबर रूप में किये जाएं तो भयप्रद होते हैं।

श्रीमंगलात्प्रभवति प्रागल्भ्यात्संप्रवर्धते।
दाक्ष्यात्तु कुरुते मूलं संयमात्प्रतितिष्ठति।।

—मांगलिक कर्मों से लक्ष्मी की उत्पत्ति होती है, प्रगल्भता से बढ़ती है, चतुरत से लक्ष्मी का टिकाव होता है और सद् व्यय से वह स्थिर होती है।

अर्थनाशं मनस्तापं गृहिणीचरितानि च।
नीचवाक्यं चाडपमानं च मतिमान्
प्रकाशयेत।।

—धन का नाश, मन का संताप, भार्य का चरित्र, नीचों के वाक्य और अपमा इनको बुद्धिमान लोग प्रकट न करें।

—प्रस्तोता : महर्षिकुमार पाण्डेय

बुद्धि-विलास

१. **इस** समय पिता की उम्र अपने पुत्र की उम्र से ५ गुनी है। पांच वर्ष बाद पिता की उम्र पुत्र की उम्र की केवल तीन गुनी होगी। अब बताइए, दस वर्ष बाद पिता तथा पुत्र की उम्रें कितनी होंगी?

२. **दक्षिण** के किस प्रसिद्ध राजा ने उत्तर-भारत के महान सम्राट हर्षवर्धन की सेना को परास्त कर उसको दक्षिण की ओर बढ़ने से रोक दिया था ?

३. क. **दुनिया** का सबसे बड़ा तथा सबसे गहरा समुद्र कौन-सा है ?

ख. उसकी अधिकतम गहराई बताएं।

४. **वह** कौन-सा खनिज है जिसकी चमक से सोने का भ्रम हो जाता है, किंतु सोने की तरह उपयोगी तथा कीमती न होने से उसे 'मूर्खों का सोना' कहते है ?

५. **भारतीय** विचारधारा में भौतिक सृष्टि की उत्पत्ति पांच मूल तत्त्वों—पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश—से मानी गयी है। दार्शनिक शब्दावली में इन्हें किस एक शब्द की संज्ञा दी गयी है ?

६. **गत** वर्ष फरवरी में भारत की राजधानी में एक मूर्ति का अनावरण किया गया था, जिसमें नारी और बच्चे की आकृति के माध्यम से भारतमाता को भारतीय गणतंत्र पर अपने आंचल की छाया करते हुए दिखाया गया है। बताइए, यह मूर्ति कहां स्थापित है ?

७. **नेताजी** सुभाषचंद्र बोस के अस्थि-अवशेष कहां रखे हुए हैं ?

८. **इस** समय देश के किस राज्य या क्षेत्र में राष्ट्रपति शासन लागू है ?

९. **सन** १९७८ में अक्तूबर तथा दिसंबर में भारत के दो महान व्यक्तियों की जन्म-शताब्दी मनायी गयी थी। इनके नाम बताइए।

१०. **एवरेस्ट** शिखर के, हवाईजहाज से, सबसे पहले किसने और कब फोटो लिये थे ?

११. **भारत** में संस्कृत की सबसे अधिक पांडुलिपियां कहां सुरक्षित हैं ?

१२. **हमारे** देश में जल-आपूर्ति के लिए सबसे बड़ी भूमिगत पाइपलाइन का निर्माण कहां हो रहा है ?

अपनी बुद्धि पर जोर डालिए और यहां दिये प्रश्नों के उत्तर खोजिए। उत्तर इसी अंक में कहीं मिल जाएंगे। यदि आप सारे प्रश्नों के उत्तर दे सकें तो अपने सामान्य ज्ञान को श्रेष्ठ समझिए। आधे से अधिक में साधारण और आधे से कम में अल्प।

—संपादक

क्षणिकाएं

मित्र

यह युग है
एक अंधा युग
यहां खून से सींची गयी
पसीने से रोपी गयी
विषबेल पनपती है

सत्य

सत्य
आज दब चुका है
भीनी-भीनी सेंट की
खुशबुओं में

अहिंसा

अहिंसा
अब सो रही है
गांधीवादी कोठरी में
एक मजबूत
ताला लगाकर

——भुवनेश 'भुवन'

ऐलान

देखिए
राष्ट्रीय स्तर पर विशाल दंगल
नये-नये दांव-पेंच
उठा-पटक, जोश
प्रवेश निःशुल्क
पांच साल अफसोस !

——सूर्यकुमार पांडेय

बड़े

भीड़ में नहीं
जो मंच पर खड़े हैं
वे बड़े हैं

——गिरीमोहन 'गुरु'

बचाव

एक कवि श्रोताओं को
कविता सुनने के लिए
नंगे पैर बुलाते हैं
क्योंकि——
जूते-चप्पलों से
बहुत घबराते हैं

——राजपाल राजे

निष्कर्ष

नव-विवाहिता
पत्नी की
जेब टटोलने की आदत से
परेशान होकर
एक दिन बोले——
"बाप रे बाप
क्या किसी जेबकट की
शिष्या थीं आप ?"

——उमेशकुमार पाराशर 'अंशुल'

प्रवेश

"दिल्ली विश्वविद्यालय से हिंदी में एम. ए. किया है। बचपन से ही साहित्य में रुचि व छोटी-छोटी कहानियां और कविताएं लिखने का शौक रहा। जीवन में अनेक कटु और मधुर अनुभव होते रहे हैं। उन्हीं की प्रतिक्रियास्वरूप कुछ मन में उमड़ता रहता है। यही अनुभूति मुझे अभिव्यक्ति के लिए प्रेरित करती है।"

इस पार और उस पार
व्याप्त आंधियों की भरमार
जो थी दीप्त ज्योति
अस्थिर होने लगी
हवा के झोंकों से
बढ़ता गया धीरे-धीरे बल
उस वायु का
और लगी थिरकने लौ
उस दीप्ति की
क्षण-क्षण, पल-पल झुक रही
मिटने को
पर थी अड़ी अपनी आन पर
इक पल झुकती
खड़ी होती दूसरे ही पल
संकल्प था किया दीप्त होने का
न मिटने का

——प्रोमिला

एस-८/७२९, रामाकृष्णपुरम,
नयी दिल्ली-११००२२

ताज़गी महसूस कीजिये
सुबूत अपनी आँखों से देखिये

पानी से भरी तश्तरी में थोड़ा सा कोयले का चूरा छिड़किये। अब थोड़ा सा बिनाका टॉप पानी में मिला लीजिये और इस घोल की एक बूँद तश्तरी के बीचों-बीच टपकाइये। अब देखिये बिनाका टॉप कितनी तेज़ी से चारों तरफ फैलता है.... मैल को दूर करता है और पानी की सतह को बिल्कुल साफ़ कर देता है।

बिल्कुल इसी तरह बिनाका टॉप का विशेष फैलने वाला तत्व आपके मुँह के हर कोने में फैल कर दातों में सड़न पैदा करनेवाले कीटाणुओं का नाश करता है और साँस की दुर्गन्ध को रोकता है। बिनाका टॉप आपके मुँह की पूरी रक्षा करते हुए उसे ताज़गी से भर देता है।

Binaca
top
toothpaste

बिनाका टॉप
टूथपेस्ट

मुँह की पूरी रक्षा के लिए

लेखक और परिवेश : अंतःसंबधों की तलाश

लेखक और परिवेश : सोलह विचारोत्तेजक निबंधों का संग्रह है। लेखक और परिवेश के घनिष्ठ अंतःसंबंधों को समुद्घाटित करने के उद्देश्य से रांची विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में एक संगोष्ठी का आयोजन किया गया था। उसी का प्रतिफल है प्रस्तुत पुस्तक।

इस पुस्तक में उक्त अवसर पर पठित सोलह निबंध संकलित हैं। इसमें आठ निबंध रचनाकारों के तथा आठ निबंध आलोचकों के हैं। रचनाकारों में शिवसागर मिश्र, राजेन्द्र अवस्थी, मन्नू भंडारी, श्याम नंदन किशोर, सरोजिनी प्रीतम, सिद्धनाथ कुमार तथा उषा सक्सेना इत्यादि के 'परिवेश और मूल्य बोध', 'आज का परिवेश और रचना का संसार', 'परिवेश और अस्मिता का संकट', 'परिवेश में परिवर्तन की प्रक्रिया और लेखक का दायित्व', 'परिवेश और काव्य-सृजन', 'परिवेश की असंगतियां और व्यंग्य', 'परिवेश और नाट्यलेखन' तथा 'नागर परिवेश और उपन्यास' शीर्षक निबंध हैं।

आलोचकों में नंदकिशोर नवल, दिनेश्वर प्रसाद, नागेश्वर लाल, विजेन्द्र नारायण सिंह, जयनारायण मंडल, रामवृक्ष सिंह, भूपेंद्र कलसी तथा श्रवण कुमार गोस्वामी के क्रमशः 'लेखक का परिवेश और रचना का संसार', 'परिवेश और भाषा', 'परिवेश और रचना के उपादान' 'परिवेश और आलोचना', 'परिवेश और हिंदी उपन्यास', 'परिवेश और कहानी', 'आंचलिक परिवेश और लेखन' तथा 'लेखक : परिवेश की दृष्टि में' शीर्षक निबंध हैं।

देश के अनेक विश्वविद्यालयों में संगोष्ठियां आयोजित होती रही हैं और वे विचार-विमर्श वहीं के वातावरण में कपूर की तरह उड़कर समाप्त हो जाते हैं। अधुनातन चिंतन प्रणाली से समुद्भूत इन निबंधों को सुसंपादित कर साहित्य-जगत के समक्ष प्रस्तुत करने का श्रेय रांची विश्वविद्यालय के हिंदी विभागाध्यक्ष डॉ. वचनदेव कुमार को है। विश्वविद्यालय के छात्रों और साहित्य के विद्यार्थियों के लिए पुस्तक अत्यंत उपयोगी है।

लेखक और परिवेश
संपादक——डॉ. वचनदेव कुमार, प्रकाशक——राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृ.——१४२, मूल्य——१२ रु.

भक्ति-चिंतन की भूमिका : वैदिक युग से लेकर मध्यकाल तक की भारतीय भक्ति-चिंतन की यात्रा का अच्छा लेखा-जोखा

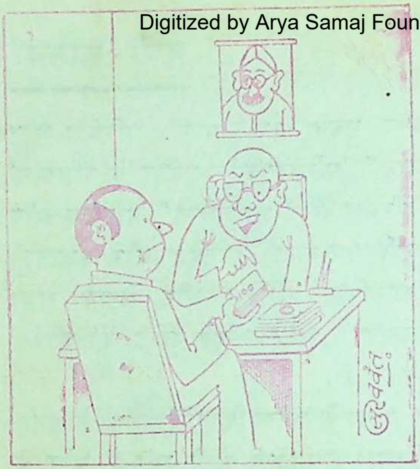

'जरा ठहरो, यह रकम मेज के ऊपर से नहीं, नीचे से दो। जानते हो, ऊपरी कमाई करना पाप है।'

प्रस्तुत करनेवाली कृति है। दो खंडों में विभाजित इस पुस्तक के पहले खंड में देव-वाद के उदय के साथ-साथ विष्णु के क्रमिक विकास एवं कालांतर में राम और कृष्ण के रूप में उनकी पृथक-पृथक प्रतिष्ठा की समीक्षा की गयी है। 'भक्ति की आरंभिक यात्रा' शीर्षक दूसरे खंड में लेखक ने 'भक्ति' शब्द के अर्थ एवं उसके विविध स्वरूपों की सारगर्भित चर्चा की है। लेखक का मत है कि भक्ति ने भागवत में एक सामाजिक पूर्णता प्राप्त की है और यही उसका सर्वाधिक मांगलिक पक्ष है।

कृष्ण-काव्य और सूर : महाकवि सूरदास की रचनाओं को एक नये दृष्टिकोण से देखने का सफल प्रयास है। हिंदी में कृष्ण-काव्य कई कारणों से विवाद का विषय रहा है। या तो उसमें एक विशिष्ट रस की खोज की जाती है या फिर उसे एक सांप्रदायिक बाना पहना दिया जाता है। लेखक के अनुसार सूर के काव्य को लोक-जीवन से जोड़कर देखने पर ही उनका सही चित्र मिल सकता है। लेखक ने सूर को किसान-चरागाही संस्कृति से जोड़ा है। दो खंडों में विभाजित इस पुस्तक में लेखक ने पहले कृष्ण-काव्य, उसके रचनाकारों, एवं उन पर पड़े विभिन्न प्रभावों का विश्लेषण किया है तथा दूसरे खंड 'सूरदास : सांस्कृतिक संदर्भ' में कवि के व्यक्तित्त्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला है।

प्रसाद-काव्य का नया मूल्यांकन : छायावाद के श्रेष्ठ कवि प्रसाद के समग्र काव्य का भारतीय राष्ट्रीय पुनर्जागरण की दृष्टि से विश्लेषण है। लेखक के अनुसार प्रसाद सच्चे अर्थों में राष्ट्रीय कवि हैं तथा उनमें गांधी का भारत मुखरित है। वे भक्ति-चेतना की आधुनिक अभिव्यक्ति भी हैं। तीस अध्यायों में बंटी इस पुस्तक में लेखक ने छायावाद की चर्चा करने के बाद प्रसाद की विभिन्न रचनाओं का अध्ययन प्रस्तुत किया है। स्वर्गीय मुक्तिबोध ने प्रसाद की 'कामायनी' को मार्क्सीय दृष्टिकोण से देखा था। डॉ. युगेश्वर ने इस अमर-कृति में गांधीजी के प्रभावों की खोज की है। जैसा कि आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है, डॉ. युगेश्वर का 'प्रसाद-काव्य' संबंधी विश्लेषण एवं मूल्यांकन तो महत्त्वपूर्ण है ही, साथ ही उनके निष्कर्ष

भी विशिष्ट महत्त्व रखते हैं। प्रसाद-काव्य के परंपरागत अध्यापकीय अध्ययन, विश्लेषण से यह पुस्तक अलग हटकर है।

गिरधर कविराय ग्रंथावली, सुजान शतक, हजारा : तीन महत्त्वपूर्ण शोध-ग्रंथ हैं। प्रथम पुस्तक में गिरधर कविराय की जीवनी एवं उनकी ५१८ कुंडलियों के अतिरिक्त प्रत्याकानुभव शतक, सप्त भय निवारण मंत्र एवं नल दमयंती नामक प्रेमाख्यान काव्य का एक अंश संकलित है।

सुजान शतक : कवि घनानंद की रचनाओं का संकलन है। इस पुस्तक की शोधपूर्ण भूमिका में विद्वान संपादक ने सांख्यिकी के सहारे नवीन तथ्यों को प्रस्तुत किया है। प्रत्येक कवित्त की सारगर्भित टीका इस पुस्तक की एक अन्य विशेषता है।

हजारा : 'शिवसिंह सरोज' में उल्लिखित तथाकथित कालिदास 'हजारा' का उपलब्ध अंश है। यह भी एक शोधपूर्ण ग्रंथ है, जिससे 'सरोज' में दिये गये अनेक कवियों का समय सौ वर्ष इधर खिसक आता है तथा अनेक तथाकथित प्राचीन कवियों का अस्तित्व समाप्त हो जाता है। ये तीनों संग्रहणीय ग्रंथ न केवल हिंदी के पठन-पाठन में लगे विद्यार्थियों एवं विद्वानों के लिए वरन प्राचीन हिंदी काव्य में रस लेनेवाले सामान्य पाठक के लिए उपयोगी सिद्ध होंगे।

ये नये हुक्मरान : वर्तमान शासक दल—जनता पार्टी के चुने हुए नेताओं के अतीत का लेखाजोखा है। क्योंकि लेखक के अनुसार इन नेताओं के वर्तमान या भविष्य को तब तक नहीं समझा जा सकता जब तक कि उनके अतीत को अच्छी तरह न समझ लिया जाए। इन नेताओं को समझने के लिए लेखक ने जो दृष्टि अपनायी है, वह निष्पक्ष होने की बजाय पूर्वाग्रहयुक्त अधिक है।

—दुर्गाप्रसाद शुक्ल

भक्ति-चिंतन की भूमिका

लेखक—डॉ. प्रेमशंकर, प्रकाशक—साहित्य-भवन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, पृ.—११६, मूल्य—१५ रु.

कृष्ण-काव्य और सूर

लेखक—डॉ. प्रेमशंकर, प्रकाशक—स्मृति प्रकाशन, १२४, शाहदराबाग, इलाहाबाद, पृ.—१३३, मूल्य—१५ रु.

क्रिकेट और राजनीति में कितनी समानता है!

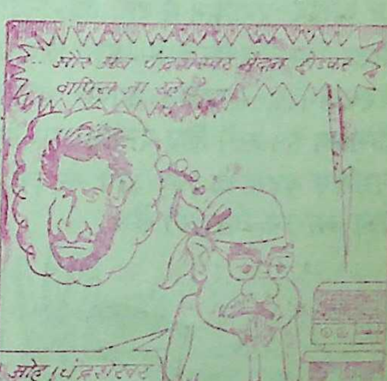
और अब चंद्रशेखर बैटिंग छोड़कर वापिस जा रहे हैं
अरे! चंद्रशेखर ने इस्तीफा दे दिया?

"क्रिकेट कमेंटरी और राजनरायन"

"आज मैं फ़ाइनल इन्टरव्यू
दूँ तो कैसे !
सर बुरी तरह दुख रहा है।"
"मेरी मानो तो
एनासिन ले लो।"

जल्द आराम पाने के लिए तेज़ असर और विश्वसनीय एनासिन लीजिए

तेज़ असर—एनासिन में वह दर्द-निवारक दवा ज़्यादा है, जिस की दुनिया-भर के डॉक्टर सिफ़ारिश करते हैं। इसी लिए एनासिन दर्द से जल्द आराम दिलाती है।

विश्वसनीय—एनासिन आपके डॉक्टर की दवाई की तरह दवाओं का नपा-तुला सम्मिश्रण है। इसी लिए एनासिन पर लाखों लोगों को पूरा भरोसा है।

एनासिन बदन के दर्द, दाँत के दर्द, सर्दी-जुकाम और फ़्लू की पीड़ा से भी जल्द आराम दिलाती है।

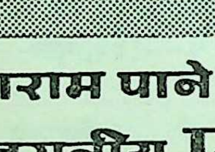

तेज़ असर और विश्वसनीय
मॅनर्स
एनासिन*

भारत की सब से लोकप्रिय दर्द-निवारक दवा
जेफ़्री मॅनर्स के एनासिन विभाग की ओर से।

*Regd. TM

A 22-7/

प्रसाद-काव्य का नया मूल्यांकन
लेखक--डॉ. युगेश्वर, प्रकाशक--हिंदी प्रचारक संस्थान, पो. बा. १०६, पिशाचमोचन, वाराणसी, पृ.---२१०, मूल्य --१५ रु.

गिरधर कविराय ग्रंथावली, सुजान शतक,
संपादक--डॉ. किशोरीलाल गुप्त, प्रकाशक --मधु प्रकाशन, ४२, ताशकंद मार्ग, इलाहाबाद, पृ.---क्रमशः २०८, ९६, मूल्य --२८, १८, रु.

हजारा
संपादक : वही, प्रकाशक--स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.---२५६, मूल्य---२५ रु.

ये नये हुक्मरान
लेखक---जनार्दन ठाकुर, अनु.---आनंदस्वरूप वर्मा, प्रकाशक---राधाकृष्ण प्रकाशन, २-अंसारी रोड, दरियागंज, नयी दिल्ली, पृ.---१७६, मूल्य---१८ रु.

धमनियों के देश में : युवा कवि भगवानस्वरूप चैतन्य की ७१ रचनाएं संग्रहीत हैं । वक्त की बात करनेवाली ये रचनाएं मानवीय मूल्यों की जांच भी करती हैं और चिंताओं के कारणों को टटोलती हैं। वे सामाजिक यथार्थ, नैतिक दायित्व और चरित्र की पुनर्स्थापना परिवेश और स्थितियों के परिप्रेक्ष्य में करती हैं। इन गीतों और कविताओं का फार्म नया है। उनमें तरोताजापन भी है। भाषा इकहरी, शब्द-विन्यास कलापूर्ण तथा प्रतीक और बिंब संतुलित हैं । नारों और आंदोलनों से बची ये कविताएं फैंतेसी के रास्ते से भी नहीं गुजरी हैं।

एक तरह से ये रचनाएं समाज की सार्वजनिक चिंताओं की रचनाएं हैं। जहां तकलीफ की गांठें हैं, उन्हें ये रचनाएं उकेरकर आंतरिक और बाह्य अभिजात्य संवेदनाओं के संसार की सृष्टि करती हैं। कहीं-कहीं कवि की भावाभिव्यक्ति मन को छू लेती है जैसे—

धमनियों के देश में
हो गयी अंधी दिशाएं
रोशनी को पी गया तम
आज सूरज की किरण के
पांव भारी हो गये
खंडहर हो गये
भावना के शहर
विषधरों के घरों में
बसेरे हुए

रात का अंतिम पहर है
एक मैं हूं
एक तुम हो
और धुएं का शहर है

आदमी
उठकर सवेरे
रोज बांग देता है
वक्त
अपनी खूंटियों पर
हमें टांग लेता है

इन रचनाओं की भाषा सहज एवं संगीतात्मक है। उनमें आनंदानुभूति भी है व

तुम्हें देख यों मौन

तुम्हें देख यों मौन कोकिले
लौटा फिर मधुमास चमन से
धूप-चीर पर धब्बों-से ये
पतझर-लुटे पेड़ रोते हैं
किरणों से हिल फटे गगन-सर,
तरल-गरल बादल बोते हैं
अपनी पीर बनाने तुम यों
टूटीं क्यों अपने ही मन से!
सूरज खिलता कमल, किरण के--
दल बिखरा मुरझाता जाता
हंसों-से उड़ते मेघों में
अंधियारा रिसता-सा आता
क्यों तुम सपनों के नीड़ों में
छल करतीं अपने ही तन से
खिलते-खिलते कली रुक गयी
भर आया आंखों में पानी
आते-आते पवन-द्वार तक
गंध हुई कितनी अनजानी
आमों की कोपलें बौर को
सजा न पायीं नवजीवन से
एक यही मौसम था जिसमें
तुम पीड़ा को गीत बनातीं
भटकी राहों के निर्जन में
हर आंसू को मीत बनातीं
ऐसी बेसुध हुई उम्र का
सौदा कर बैठी लघु क्षण से
तुम्हें देख यों मौन कोकिले!
लौटा फिर मधुमास चमन से

--डॉ. रामगोपाल शर्मा 'दिनेश'

४३, सुंदरवास उत्तर, उदयपुर-३१३००१

धुन-बोध भी। --राधेलाल बिजवावने

धमनियों के देश में

कवि--भगवानस्वरूप चैतन्य, प्रकाशक--परमाणु प्रकाशक, ग्वालियर-१, पृ.--९४, मूल्य--१० रु.

एक नया त्रैमासिक

संवेद : हिंदी का नया त्रैमासिक है। इसका प्रवेशांक अपने दृष्टिकोण से समुचित आश्वस्ति देता है। वस्तुतः समकालीन स्थिति में व्यापक सामाजिक सरोकार और रचनात्मकता ही किसी कृति के मूल्यांकन के सही निकष हो सकते हैं।

कविताओं में शमशेर की 'ताज' और त्रिलोचन का 'सॉनेट' काव्यात्मकता के अप्रतिम उदाहरण हैं। व्यक्तिगत और समसामयिक भाव-संवेगों के काव्यात्मक समन्वय से शमशेर कविता को सार्वजनीन धरातल पर स्थापित कर सके हैं। त्रिलोचन के यहां समसामयिक मानव संबंध कविता के ही अंदर झांकते हैं। शमशेर के अनुक्रम ने उनके सॉनेट को अद्‌भुत रूप-सौंदर्य से स्पर्शित कर दिया है। इनके अतिरिक्त गोपालकृष्ण कौल, नरेन्द्र वशिष्ठ, ओमप्रकाश निर्मल, बलदेव वंशी, दिविक रमेश, राजेश जोशी और विक्रम पांडे की कविताएं भी अपनी प्रासंगिक-सोच से प्रभावित करती हैं। **--सुमन**

संवेद--(त्रैमसिक) प्रवेशांक

संपादिका--मनोरमा पांडेय, ८५, ओखला औद्योगिक क्षेत्र, नयी दिल्ली-११००२०, मूल्य--४ रु.

जवावने

शक—
पृ.—

क है।
समुचित
कालीन
ार और
मूल्यांकन

'ताज'
ात्मकता
ात और
व्यात्मक
र्वजनीन
त्रिलोचन
कविता
अनुक्रम
सौंदर्य से
तिरिक्त
5, ओम-
क रमेश,
कविताएं
प्रभावित
—सुमन

ओखला
००२०,

हीम्नी

सार-संक्षेप

छह हजार साल पुराना कर्ज

• योहान्न पीटर हेबल

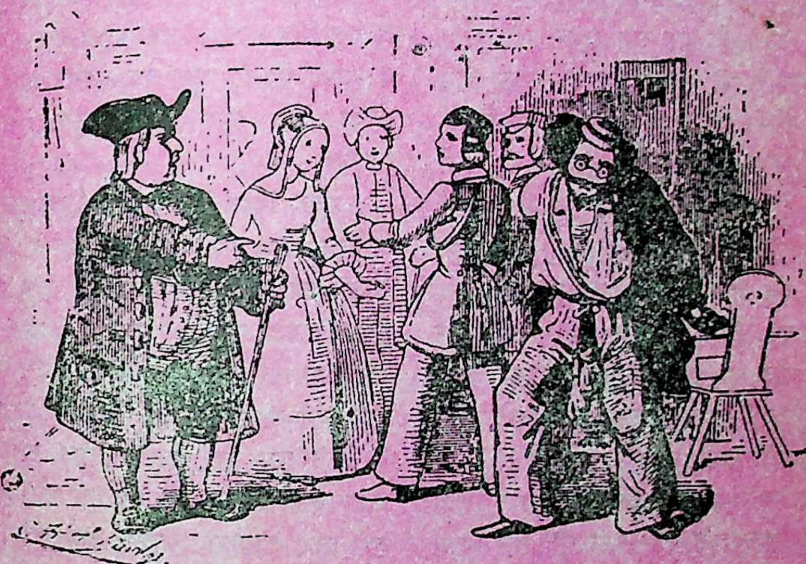

योहान्न पीटर हेबल (१७६०-१८२६ ई.) की गणना जरमनी के अत्यंत लोकप्रिय साहित्यकारों में की जाती है। उनका जन्म एक किसान परिवार में हुआ था। उन्होंने एक शिक्षक के रूप में अपना कार्य शुरू किया। वे एक गिरजाघर के पादरी भी रहे। बाद में उन्हें बाडान-संसद के उच्च सदन का सदस्य बनाया गया। उनकी कविताओं एवं कहानियों में मनुष्य मात्र के प्रति अतिशय सहानुभूति प्रकट की गयी है। यहां उनकी कुछ कहानियां प्रस्तुत हैं जिनमें हास्य और समाज में विद्यमान पाखंड एवं खोखलेपन पर तीक्ष्ण व्यंग्य है।

तीन विनोदी विद्यार्थियों के पास यात्रा करते-करते जेब में एक पैसा भी नहीं बचा। फिर भी उन्होंने हिम्मत नहीं हारी। वे एक होटल में घुस गये। उन्होंने सोचा कि हम उठाईगीरों की तरह वहां से खिसके बिना, बाहर निकलने की कोई तरकीब निकाल ही लेंगे। यह बात उन्हें इसलिए भी सूझी, क्योंकि होटलवाली अपनी कोठरी में बिलकुल अकेली थी। साथ ही वह कम उमर की थी। स्वभाव से भी वह भली मालूम पड़ती थी।

तीनों विद्यार्थियों ने मौज से खाया-पिया और आपस में ज्ञान-विज्ञान की चर्चा छेड़ दी। एक विद्यार्थी ने कहा कि धरती पहले ही कई हजार वर्षों की है। इतने ही वर्ष वह आगे भी मौजूद रहनेवाली है। हर वर्ष, हर दिन और हर दिन के हर घंटे सब कुछ इसी तरह दोहराया जाता है जैसा कि छह हजार वर्ष पहले उसी दिन और उसी घंटे हो चुका है।

होटलवाली बुनने का सामान लिये, एक खिड़की के पास बैठी थी। वह ध्यान से उनकी बातें सुन रही थी। तभी उसकी ओर मुड़ते हुए एक विद्यार्थी ने कहा, “हां, होटलवाली महिला, यह सब हमें अपनी ज्ञान की पुस्तकों से मालूम हुआ है।”

उनमें से एक विद्यार्थी काफी ढीठ निकला। उसने जोर देकर कहा, “मुझे अभी भी कुछ-कुछ याद आ रहा है। हां, हम छह हजार वर्ष पहले भी एक बार यहां मौजूद थे। मुझे होटलवाली महिला के सुंदर और भले चेहरे की अच्छी तरह याद है।”

यह चर्चा और आगे चलायी गयी। उनकी बातों पर होटलवाली जितना अधिक विश्वास करती दिखायी दी, उतना ही उन विद्यार्थियों को शराब, तले हुए भोजन और बिस्कुटों में स्वाद आने लगा। यहां तक कि हिसाब पांच गिलडर और सोलह फार्दिंग तक पहुंच गया। जब वे काफी खा-पी चुके तब अपनी पहले से सोची हुई योजना के अनुसार बाहर निकले।

एक विद्यार्थी बोला, “होटलवाली महिला, सड़क पर बहुत-से होटल हैं। इसलिए उनमें खर्च करते-करते इस बार पैसे की कुछ कमी हो गयी है। आप हमें बड़ी समझदार महिला लगती हैं। इसलिए हम उम्मीद करते हैं कि पुराने मित्र के नाते हमें यहां उधार मिल जाएगा। अगर आप सहमत हों तो हम छह हजार वर्ष बाद दोबारा मिलेंगे, तब नये बिल के साथ-साथ, पुराने बिल का भी भुगतान कर देंगे।”

होटलवाली समझदार थी। उसने इसका जरा भी बुरा नहीं माना और इसके लिए बिलकुल तैयार हो गयी। उसने इस बात पर भी खुशी जाहिर की कि उन भले लोगों को उसके होटल का खाना इतना जायकेदार लगा। लेकिन साथ ही उसने होटल के दरवाजे के सामने

खड़े होकर उनसे यह भी प्रार्थना की कि वे भले लोग एक मेहरवानी तो करते ही जाएं। उसने कहा कि वे लोग उसके पहले के पांच गिलडर और सोलह फार्दिंग के देनदार हैं। यह छह हजार वर्ष पहले की वात है। वे कृपा करके अव तो यह राशि अदा कर दें, क्योंकि वे पहले एक वार और ऐसा ही उधार कर चुके हैं।

दुर्भाग्य से उसी समय उस जगह का मुखिया कुछ नेक आदमियों के साथ होटल की कोठरी में घुसा। उन सवका इरादा मिलजुलकर एक गिलास शराव पीने का था। कोठरी में उनका आना तो उन पकड़े हुए पक्षियों को विलकुल नहीं भाया। मुखिया ने विद्यार्थियों की चालवाजी समझ ली। उसने उसी समय सरकारी फैसला सुना दिया और उस पर तुरंत अमल भी करवा दिया। फैसला यूं था—"छह हजार वर्षों का उधार देना वड़े कमाल की वात है। उन भले विद्यार्थियों को इस समय या तो पुराना कर्ज चुकाना चाहिए या अपने कोट जो अभी भी कुछ-कुछ नये ही हैं, गिरवी रख देने चाहिए।" विवश होकर तीनों विद्यार्थियों को यही करना पड़ा।

वाद में होटलवाली ने उन्हें वचन दिया, "अगर आप छह हजार वर्ष वाद दोवारा आयेंगे और आपकी माली हालत इस वार से अच्छी होगी तो एक-एक करके आपका सभी कुछ लौटा दूंगी।"

यह घटना १८०५ में जेंगरिगन के होटल में १७ अप्रैल को घटी थी।

चालाक घुड़सवार सैनिक

पिछली लड़ाई की बात है। एक घुड़सवार सैनिक रास्ते पर चला जा रहा था। उसके आगे-आगे एक किसान भी चल रहा था। किसान ने वाजार में अपनी सूखी घास सौ गिलडर में वेची थी और विक्री की रकम लेकर वह घर लौट रहा था। घुड़सवार सैनिक को किसी तरह यह बात मालूम पड़ गयी थी। उसने अपने घोड़े की चाल जरा तेज की और किसान के पास जा पहुंचा। उसके पास पहुंचकर सिपाही ने कहा, "भाई, थोड़ी-सी ब्रांडी और तंवाकू के लिए कुछ पैसे दे दो तो वड़ी कृपा होगी।"

किसान कुछ कंजूस था। उसने पैसों की वात सुनते ही कसमें खानी शुरू कर दीं और स्वर्ग-नरक की दुहाई देते हुए सैनिक को विश्वास दिलाने लगा—"मैं पिछले गांव में ही अपना सारा रुपया खर्च कर चुका हूं। सच मानो, मेरा आखिरी पैसा तक जा चुका है। अव मेरे पास कुछ भी नहीं है।"

इस पर सिपाही वोला, "मेरी वैरक पास होती तो चिंता की कोई वात नहीं थी। वहां पहुंचकर हम दोनों का काम चल जाता। लेकिन वैरक दूर है और अव जवकि मेरे और तुम्हारे पास कुछ नहीं है, हमें पवित्र आलफांस के पास चलना चाहिए। वे आज हमें जो भी देंगे उसे हम

भाइयों की तरह उपहार में बांट लेंगे।"

यह आलफांस खेत के रास्ते पर एक पुराने गिरजाघर में पत्थर से गड़े हुए थे। उनके बारे में बहुत कम लोग जानते थे।

शुरू-शुरू में तो किसान को इस तीर्थ-यात्रा की कोई इच्छा नहीं थी और गिरजाघर तक न जाने के लिए उसने कई बहाने भी बनाये, लेकिन सिपाही ने उसकी एक नहीं चलने दी। रास्ते में उसने किसान को भरोसा दिलाया कि पवित्र आलफांस ने उसे किसी भी मुसीबत में लटकाये नहीं रखा। यह बात उसने इतना जोर देकर कही कि किसान को भी कुछ फायदे की उम्मीद होने लगी।

सिपाही झूठ नहीं बोल रहा था। गिरजे में सचमुच ही पवित्र आलफांस की मूर्ति थी। गिरजे पहुंचने पर सिपाही आलफांस की मूर्ति के सामने घुटने टेककर बैठ गया। किसान को भी ऐसा ही करना पड़ा। उसे सिपाही भक्तिभाव से प्रार्थना करता हुआ जान पड़ा। उसने कुछ ही देर बाद किसान के कान में कहा, "अभी-अभी पवित्र देवता ने मुझे पास आने का इशारा किया है।" फिर वह उठा और देवता के पास जाकर अपने कान मूर्ति के ओठों के पास कर दिये। कुछ क्षण बाद वह खुशी-खुशी अपने साथी के पास लौट आया। उसने उससे कहा—"पवित्र आलफांस ने मुझे एक गिलडर दिया है। वह मेरी जेब में जरूर पड़ा होगा।" उसने जेब में हाथ डाला तो सचमुच उसमें से एक गिलडर निकला। इससे किसान को बड़ा अचंभा

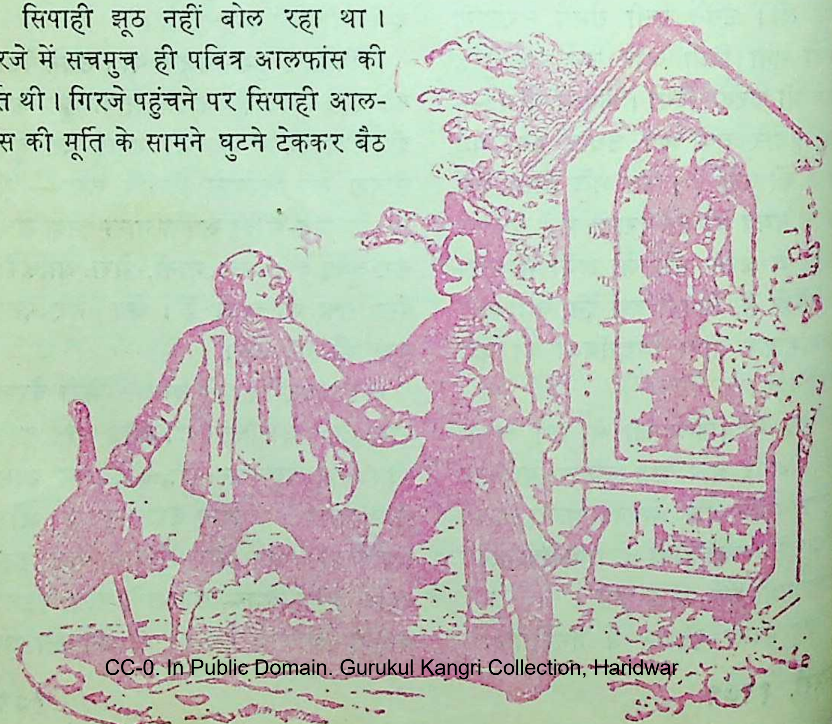

हुआ। पर सिपाही बड़ा चालाक था। यह गिलडर तो पहले से ही उसकी जेब में पड़ा हुआ था। अपने वायदे के अनुसार उसने आधा गिलडर किसान को दे दिया। यह बात किसान को बहुत अच्छी लगी। उसने सिपाही की यह बात भी खुशी से मान ली कि एक बार और जांच करके देखना चाहिए।

सब कुछ पहले की तरह ही हुआ। लेकिन इस बार सिपाही पहले से भी अधिक खुश होकर पवित्र देवता के पास से लौटा। उसने पुलकते हुए कहा, "इस बार भले आलफांस ने हमें इकट्ठे सौ गिलडर दिये हैं। वे तुम्हारी जेब में जरूर पड़े होंगे।"

किसान ने जब यह सुना तो बिलकुल पीला पड़ गया। उसने सिपाही से अपनी पुरानी बात दोहरायी कि उसके पास एक भी पैसा नहीं है, पर सिपाही ने उसे दिलासा दिलाते हुए कहा, "तुम्हें पवित्र आलफांस पर भरोसा करना ही चाहिए और अपने जेबों की जांच कर लेनी चाहिए। आलफांस ने आज तक मुझे कभी धोखा नहीं दिया।"

अब क्या था। किसान को अपनी जेबें उलटकर खाली करनी पड़ीं। उसके सौ गिलडर सही-सही सामने आ गये। किसान पहले ही चालाक सिपाही से उस के गिलडर का आधा हिस्सा ले चुका था। अतः उसे इस बार अपने सौ गिलडर भी उसके साथ बांटने पड़े। मिन्नत-खुशामद से कुछ नहीं बना।

वैसे तो सिपाही का यह काम सफाई और होशयारी का था, लेकिन किसी को इस तरह ठगना अच्छा नहीं है, खास तौर से एक गिरजे में।

योहान्न पीटर हेबल

सीमा का पत्थर

बालस्टाल का रहनेवाला एक स्विस युवक स्पेन में नौकरी पर लगा। वह किफायत से चला। इससे उसके पास कुछ रुपया जमा हो गया। जब वह सुख से रहने लगा तो उसके मन में विचार आया—'मैं शादी करूं या न करूं?' अंत में उसका मन विवाह को हो ही आया और उसने स्पेन में रहनेवाली एक सुंदर धनी स्त्री से विवाह कर लिया। पर विवाह के साथ उसने अपने सुख के दिनों का अंत कर डाला, क्योंकि

स्पेन की गृहस्थी में स्त्री होती है स्वामिनी, कोई अच्छा मित्र होता है पति, और पति होता है नौकर। स्विस युवक इस गुलामी और चिंता से जल्दी ही ऊब गया, पर उसने ऐसा दर्शाया मानो उसे कुछ न हुआ हो। उसने अपनी पत्नी से स्विटजरलैंड के सुखी जीवन और सुनहरे पर्वतों की बड़ाई करनी शुरू कर दी। उसने कहा कि उसके देश में बर्फीले पर्वत धूप में सोने की तरह झिलमिलाया करते हैं। उसने यह भी कहा कि लोग वहां मौज से आइंजीडल्न की तीर्थयात्रा कर सकते हैं और जासत्न में संत निकलास फान डेयर फ्लूस की समाधि पर अच्छी तरह से प्रार्थना कर सकते हैं। उसने यह भी बताया कि वहां वह कितनी बड़ी जायदाद का मालिक है। लेकिन मुसीबत यह है कि उसकी जायदाद का रुपया देश से बाहर नहीं भेजा जाएगा।

सुंदर देश और जायदाद पर पत्नी के मुंह में पानी भर आया। उसने अपनी जायदाद बेचकर उसके साथ सुनहरे देश में जाना मंजूर कर लिया। एक दिन वे पैरेनीज की लंबी-चौड़ी पर्वतमाला को पार कर सीमा के पत्थर पर जा पहुंचे। वह पत्थर स्पेन राज्य को फ्रांस से अलग करता था। उसकी पत्नी रुपयें समेत एक गधे पर सवार थी और उसका पति साथ-साथ पैदल चल रहा था। जब वे सीमा के पत्थर को पारकर दूसरी ओर पहुंचे, तब स्विस युवक अपनी पत्नी से बोला, "अब तक हम स्पेन की रीति के अनुसार चले हैं। अब से हम जरमन रीति के अनुसार चलेंगे। तुम मैड्रिड से सीमा के पत्थर तक गधे पर सवार होकर आयी हो और मैं तुम्हारे पीछे मरता-गिरता पूरी पर्वतमाला पर चढ़ा हूं। पर अब मैं यहां से वाल्श्टाल, जिला जोलोटुर्न तक सवार होकर चलूंगा और तुम्हें पैदल चलना पड़ेगा।" इस पर उसकी पत्नी ने चिढ़कर उसे बुरा-भला कहना और धमकाना शुरू किया। वह गधे से उतरी भी नहीं।

युवक ने यह कहते हुए कि "यह बात तुम्हारी समझ में नहीं आ रही है और मैं इस पर बुरा भी नहीं मानता," एक पेड़ से एक अच्छी-सी कमची काट ली और फिर उसे अपने देश के विवाह और पति के कानून के बारे में बतलाया। वह सब कुछ अच्छी तरह समझ गयी तो उसने पूछा, "परदेसी चुड़ैल! अब बता तू साथ चलना और ढंग से रहना चाहती है या जहां से आयी है वहां लौट जाना चाहती है?" स्पेनवाली घबरायी। वह सिसकती हुई बोली, "मैं तो जहां से आयी हूं, वहीं जाना चाहती हूं।"

पति को भी यह बात भायी। उसने उसके साथ रुपया बांट लिया, फिर अपनी भूतपूर्व पत्नी से विदा लेते हुए उसने कहा, "अपने जिस देशवासी यानी गधे पर सवार होकर तू आयी है, उसे तू साथ ले जा सकती है।"

क्या खोया—क्या पाया ?

गर्मी की एक सुहावनी सांझ। धीरे-धीरे प्रकाश सिमटने लगा था। उसकी जगह रात का अंधकार पसरता जा रहा था।

ऐसे वातावरण में एक व्यक्ति अपनी घोड़ागाड़ी पर चला जा रहा था। वह व्यक्ति टूडनवाख नगरपालिका का चेयरमैन था और ब्रासनहाइम नामक स्थान की फलों की मंडी से घर वापस आ रहा था। आज उसके घोड़े को दो-दो का बोझा ढोना पड़ रहा था। इनमें से एक तो स्वयं चैयरमैन का था और दूसरा उस पर भी सवार शराब के नशे का था।

चलते-चलते चेयरमैन एक होटल के पास से गुजरा। सहसा दो मनमौजी लोगों ने होटल की खिड़की से उसे पुकारा—"ऐ चेयरमैन! आज तो चांदनी रात है। ऐसे में क्या पीने में हमारा साथ नहीं दोगे?"

चेयरमैन और अधिक शराब पीने से नहीं डरता था। पर उसे ऐसी हालत में अपनी गाड़ी से उतरने और चढ़ने में बड़ा डर लगता था। नशे के कारण सबेरे उसे गाड़ी पर चढ़ना बहुत भारी पड़ जाता था। शाम को तो ऐसा करना उसके लिए असंभव बात ही थी।

चेयरमैन को अपने दरवाजे पर देखकर होटल के मालिक ने सोचा, क्यों न गाड़ी को सड़क के किनारे खड़ा कर हम लोग उसे उतार लायें? किंतु किसी ने उससे भी आसान एक और उपाय सुझा दिया। उसने कहा—"हम लोग गाड़ी में ही बोतल लिये चलते हैं।"

इसी उपाय पर अमल किया गया और बढ़ते-बढ़ते एक बोतल से चार बोतल तक नौबत जा पहुंची। अब तो चेयरमैन के लिए एक शब्द भी बोलना भारी हो गया। अंत में नींद ने उसे धर दबोचा। चेयरमैन को नशे में बेहोश-सा देखकर मनमौजी लोगों ने उसकी गाड़ी से घोड़ा खोल दिया और उसे एक अस्तबल में ले जाकर बांध दिया।

दूसरे दिन सुबह हुई। होटल की खिड़की में टंगा बटेर शोर कर चेयरमैन को जगाने लगा। बहुत देर बाद जब उसकी नींद टूटी तो अपने को उस हालत में पाकर चेयरमैन को बड़ा अचंभा हुआ। बहुत देर तो उसकी समझ में नहीं आया कि वह कौन है और कहां है?

वह बहुत देर तक अपनी आंख मलता रहा। अंत में वह बुदबुदाकर स्वयं से ही कहने लगा, 'बस—अब अपनी पहचान का एक ही रास्ता है। और वह भी इस बात पर निर्भर करता है कि मैं टूडनवाख नगरपालिका का चेयरमैन हूं या नहीं। यदि मैं चेयरमैन हूं तब तो मैंने एक कीमती घोड़ा खो दिया और यदि मैं चेयरमैन नहीं हूं तो मैंने मुफ्त में एक गाड़ी पा ली है।'

रानी जिंदाबाद

फ्रांस में शाही जमाने की बात है। एक फ्रांसीसी सराय में एक अंगरेज

एक कोने में गुमसुम बैठा था। वह एक घंटे से दांतों के डॉक्टर की राह देख रहा था। उसका एक दांत खोखला था और उसमें रह-रहकर दर्द होता रहता था। इस समय भी उसे भयंकर दर्द हो रहा था।

तभी अचानक एक फ्रांसीसी उसके पास आया। वह नकली बाल बनाने का धंधा करता था। कुछ शेखीखोर भी था। वह अपने साथियों के सामने अंगरेज की खिल्ली उड़ाना चाहता था। उसे विश्वास-सा हो गया था कि अंगरेज या तो मूर्ख है या नये देश में शरमा रहा है।

बस, यही सोचकर उसने उसके साथ चर्चा छेड़ दी। वह उसके सामने अपने देश की बड़ाई हांकने लगा। उसने कहा कि फ्रांस भरा-पूरा देश है। अगर कोई नौ महीनों में इस देश को पार करना चाहे तो उसे सवारी के लिए बढ़िया घोड़ा रखना होगा। उसने यह भी बताया कि सम्राट कितने न्यायकारी हैं और महारानी कितनी भली हैं। इन सब बातों के जवाब में अंगरेज बेमन से 'हूं-हां' करता रहा।

अचानक फ्रांसीसी पूछ बैठा, "रानी की तंदुरुस्ती के लिए तो आप दो-एक गिलास शराब पियेंगे ही?" अंगरेज को उसकी बात माननी पड़ी। शराब पी लेने के बाद फ्रांसीसी ने अपनी सड़ी-गली कमीज का पल्ला फाड़ते हुए कहा, "महारानी जिंदाबाद! भले आदमी, अब आपको भी रानी की तंदुरुस्ती के लिए अपनी कमीज फाड़नी पड़ेगी?"

फ्रांसीसी की कमीज पुरानी थी। उसी की ओर लक्ष्य कर अंगरेज बोला, "तेरी कमीज तो कूड़ेदान के लायक हो रही है। मेरी कमीज तो दर्जिन के पास से बिलकुल नयी चली आ रही है। अभी भी उसमें सुई के घुसने से पैदा होनेवाली गरमाहट मौजूद है।"

इस पर नकली बाल बनानेवाला फ्रांसीसी बोला, "जनाब, मैं आपका मजाक नहीं समझता। या तो आप अपनी कमीज फाड़ें या फिर मेरे साथ तलवार चलायें। और भगवान की कसम, वह लड़ाई जिंदगी और मौत की लड़ाई होगी।"

परदेसी अंगरेज झगड़ा नहीं करना चाहता था। उसे फ्रांसीसी की तरह अपनी कमीज का पल्ला फाड़ना पड़ा। पर अब वह अचानक भला और बातूनी बन गया। वह नकली बाल बनानेवाले से इंगलैंड और लंदन के बारे में बड़ी-बड़ी बातें करने लगा। उसने उसे यह भी बताया कि तेज आंखोंवाला ही मीनार पर चढ़कर नीचे बसा शहर देख सकता है। बातों का यह सिलसिला दांतों के डॉक्टर के आने तक चलता रहा।

डॉक्टर ने आते ही अंगरेज से पूछा, "आप क्या चाहते हैं?" अंगरेज ने कहा, "इंगलैंड की महारानी की तंदुरुस्ती के लिए मेरा एक दांत उखाड़ दीजिए।" साथ ही उसने नकली बाल बनानेवाले

से कहा, "बस जनाब, अब वहीं बैठे रहना। अपनी जगह से हिलना मत।"

दांत 'राजी-खुशी' निकल आया तब वह अंगरेज दांतों के डॉक्टर से बोला, "और अब मेहरबानी करके इंगलैंड की महारानी की तंदुरुस्ती के लिए इसी तरह इन महाशय का भी एक दांत उखाड़ दीजिए।"

फिर उसने नकली बाल बनानेवाले से कहा, "भले दोस्त, अब तुम्हें भी एक दांत उखड़वाना पड़ेगा, मैंने तो अपना दांत उखड़वा दिया है।"

अब तो मजाक करनेवाले फ्रांसीसी के गालों की लाली उड़ गयी। उसने तुरंत इसका विरोध किया और कहा कि दोनों बातें एक-सी नहीं हैं। उसने व्यंग्य से कहा, "तुम्हारा वह दांत तो इतना खोखला है कि उसमें खरगोशनी बच्चे दे सकती है। मेरे सब दांत इतने मजबूत हैं कि मैं उनसे शीशे की गोली दबाकर चपटी कर सकता हूं। अगर मेरे दांतों पर लिली के तीन फूल बने होते तब तो मैं उनसे सिक्के ढाला करता।" (उन दिनों फ्रांस के सिक्कों पर लिली के तीन फूल बने होते थे।)

पर अंगरेज ने यह सब अनसुना कर दिया और बोला, "जनाब, मैं मजाक नहीं समझता। या तो अभी अपना दांत उखड़वाओ या फिर मेरे साथ तलवार चलाओ। यह जिंदगी और मौत की लड़ाई होगी।"

अब नकली बाल बनानेवाला डरा। वह नफे-नुकसान की तुलना करते हुए सोचने लगा—'एक दांत बनाम एक जान! और घर पर नौ बच्चे हैं। एक दांत देना ही ठीक है।'

सो, ज्यों-त्यों करके उसने भी एक दांत उखड़वा लिया और इसके बाद वे मेल-मिलाप से विदा हुए। बाद में वह फ्रांसीसी अपने साथियों से कहने लगा, "इस बार तो मैंने एक अनजान परदेसी के साथ मक्कारी की, लेकिन...। अरे भाई, मेरी बात समझे भी कि नहीं?"

बटेर की बातें

दो नेक पड़ोसी थे। वैसे तो वे सदा शांति और मित्रतापूर्वक रहा करते थे, पर एक बार दोनों में कुछ मनमुटाव-

तेज बॉलिंग देखकर बैल-जैसा भड़कते क्यों हो ?

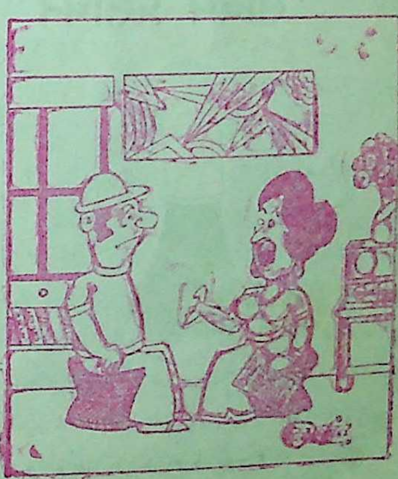

सा होते-होते बच गया। उनमें से एक पड़ोसी ने एक बटेर रख लिया था। यह बटेर बड़ा वाचाल था और दिन भर शोर मचाया करता था। आखिर एक दिन पड़ोसी मजबूर होकर उसके पास आया और बोला, "दोस्त, मैं सुबह एक घंटा और सोना चाहता हूं, लेकिन मुझे तुम्हारा यह शोर मचानेवाला 'गवैया' बहुत परेशान करता है। तुम नहीं जानते कि अपने उस गवैये के कारण तुम स्वयं को सारे पड़ोस में बुरा बना रहे हो!"

जवाब में दूसरे पड़ोसी ने उत्तर दिया, "मैं तो इससे ठीक उलटा सोचता हूं। यह क्या कम एहसान की बात है कि मेरा बटेर सारे पड़ोस को मुफ्त में ही सुबह होने की खबर देता है और नौसिखिये कारीगरों को जगाता है? साथ ही वह लोगों का खूब मनबहलाव भी करता है। एक ओर जहां बटेर के कारण सारे महल्ले को लाभ है, वहां इसके खाने का सारा खर्च अकेला मैं ही उठाता हूं। पड़ोसियों से तो मुझे शिकायत होनी चाहिए।"

इस तरह शिकायतों से कुछ नहीं बना। उलटे बटेर सवेरे और भी जोर-जोर-से बोलने लगा। आखिर एक दिन वह पड़ोसी दोबारा आकर बोला, "दोस्त, तुम अपना बटेर बेचोगे?"

दोस्त ने कहा, "क्या तुम इसे मार डालोगे?"

"नहीं, नहीं," पड़ोसी ने जवाब दिया।

आयटेक्स
सौंदर्य प्रसाधन
EYETEX BINDI
EYETEX
BINDI DELUXE MATT FINISH
EYETEX BINDI DELUXE
EYETEX REGD.
KAJAL
AL-H35
ARAVIND LABORATORIES MADRAS-600 033

"या उड़ा दोगे ?"

"नहीं, यह भी नहीं।"

"या किसी और महल्ले में किसी को भेंट कर दोगे ?"

"ऐसा भी नहीं, बल्कि मैं उसे यहां अपनी खिड़की के सामने बिठाऊंगा ताकि तुम भी हर सुबह इसकी बोली सुन सको", दूसरे पड़ोसी ने कहा।

पहले पड़ोसी की समझ में कुछ नहीं आया। आता भी कैसे! वह अपने पड़ोसी की अपेक्षा अधिक चतुर तो था नहीं। वह सोचने लगा, "अगर मैं अपने पड़ोसी की खिड़की में बैठे इस बटेर की मुफ्त आवाज सुन सकूं और मुझे ऊपर से कुछ रुपया भी मिले तो इससे अच्छी बात क्या हो सकती है! यह सोचकर उसने बटेर के दाम बतलाते हुए पूछा, "क्या तुम्ह यह दो गिलडर लायक जंचता है ?"

दूसरे पड़ोसी को यह रकम बहुत ज्यादा लगी, पर उसने सोचा कि कुछ भी हो, वह बेकार नहीं जाएगी। और उसी घड़ी बटेर का घर बदल दिया गया। दूसरे दिन की बात है, जब बटेर ने शोर करके अपने पहले मालिक को नींद से जगाया तो पहले उसे खयाल आया कि अहा, मेरा प्यारा बटेर पहले-सी उमंगों से भरा हुआ है। तभी उसे ध्यान आया—नहीं, अब यह मेरा नहीं, पड़ोसी का बटेर है।

तीसरे दिन ही वह कहने लगा, "यह पंछी कितना कृतघ्न है! एक साल उसने मेरे पास रहकर अच्छे दिन बिताये और अब यह दूसरे के साथ रहकर मेरी हंसी उड़ा रहा है।" फिर अपने पड़ोसी पर क्रोध उतारते हुए उसने सोचा—कम से कम उसे यह सोचना चाहिए था कि दुनिया में या कम से कम इस शहर में वही तो अकेला नहीं रहता है। धीरे-धीरे उसे बटेर की आवाज जलाने लगी।

कई दिनों तक वह मन ही मन घुटता रहा। जब वह घुटन को और अधिक नहीं सहन कर सका तब उसने पड़ोसी से बात की। वह बोला, "दोस्त, लगता है बटेर को पिछले रात भी थोड़ी ही नींद आयी।"

पड़ोसी ने इस बात का जरा भी ख्याल नहीं किया। उसने उत्तर दिया, "यह बहुत अच्छा पंछी है। तुमसे उसका सौदा बुरा नहीं रहा।"

दूसरे पड़ोसी ने कहा, "यह तुम्हारा दाना चुगकर बहुत अच्छा हो गया है।" फिर उसने कहा, "क्या तुम इसे बेचना चाहते हो ?"

इस पर दूसरा पड़ोसी मुसकराते हुए बोला, "क्या तुम इसे मार डालोगे ?"

"नहीं।"

"या उड़ा दोगे ?"

"ऐसा भी नहीं ?"

"या दूसरे महल्ले में दे दोगे ?"

"ऐसा भी नहीं। मैं तो इसे इसकी पुरानी जगह पर बिठाऊंगा। वहां तुम इसकी आवाज उतनी ही अच्छी तरह से सुन सकोगे जितनी कि इस जगह से

सुनते हो।"

इस पर पड़ोसी ने जवाब दिया, "दोस्त, तुम्हारी खिड़की के सामने बटेर अब कभी नहीं आएगा। हां, अगर तुम मुझे मेरे दो गिलडर वापस कर दो तो मैं उसे उड़ा दूंगा।"

पड़ोसी ने सोचा—यह सौदा घाटे का नहीं है। मुझे तो बस इसके पैसे लौटाने होंगे। इससे अधिक सस्ते में तो मैं बटेर से छुटकारा पा नहीं सकता। सो उसने उसे दो गिलडर लौटा दिये, और बटेर उड़ गया।

किसी ने ठीक ही कहा है कि अपने घर में, अपनी खिड़की के सामने होनेवाली बात दूसरे घर में होते ही, उसमें कितना बड़ा फर्क आ जाता है।

सात मुंहवाला अजगर

बहुत दिनों पहले की बात है। अम्सटर्डम में एक बहुत अमीर आदमी रहता था। वह पूरे पहले पहर आराम-कुरसी पर बैठा रहता और आलस्य न होने पर तंबाकू पीता। कभी-कभी वह खिड़की से मुंह बाये बाहर ताकता रहता। दोपहर को वह गाय-बैल की तरह चरता। जब कभी वह हांफता तब पड़ोसी कहा करते, "मालूम नहीं, बाहर हवा चल रही है या अपना पड़ोसी हांफ रहा है!"

पूरे तीसरे पहर वह इसी तरह कभी ठंडी, कभी गरम चीज बिना भूख और चाह के, बस अकुलाहट मिटाने के लिए शाम होने तक खाता-पीता रहता। इसलिए कोई आदमी यह ठीक-ठीक नहीं बता सकता था कि उसका दोपहर का खाना कब खत्म हुआ और शाम का खाना कब शुरू हुआ।

शाम के खाने के बाद वह बिस्तर पर लेट जाता। इस समय वह इतना थक गया होता मानो उसने सारे दिन पत्थर ढोए हों या लकड़ी फाड़ी हो। इससे उसका बदन इतना मोटा और भोंडा हो गया जैसे अनाज का बोरा। अगर कोई उसकी ही बात सुनता तो उसे लगता कि अमीर को तो तीन सौ पैंसठ बीमारियां लगी रहती है—यानी हर रोज एक नयी बीमारी। अम्सटर्डम में रहनेवाले सभी डॉक्टरों को उसे सलाह देनी पड़ती थी। वह पीने की दवा की बाल्टियां की बाल्टियां, चूरन के बेलचे के बेलचे, और बत्तखों के अंडे-जैसी बड़ी-बड़ी गोलियां चढ़ा जाता था। इस कारण लोग उसे 'दो टांगोंवाला दवाखाना' ही कहने लगे थे। पर इस सब डॉक्टरी से उसे कोई फायदा नहीं हुआ। इसका एक कारण था। डॉक्टर लोग उसे जैसा करने को कहते थे, वह वैसा नहीं करता था। वह कहता था, "भाड़ में जाएं दवाएं। अगर मुझे कुत्ते की तरह रहना पड़े और डॉक्टर मेरा पैसा लेकर भी मुझे ठीक न कर सकें तो मेरा अमीर होना किस काम का!" एक बार उसने एक डॉक्टर की बड़ी तारीफ सुनी कि अगर वह रोगियों को केवल एक बार निगाह

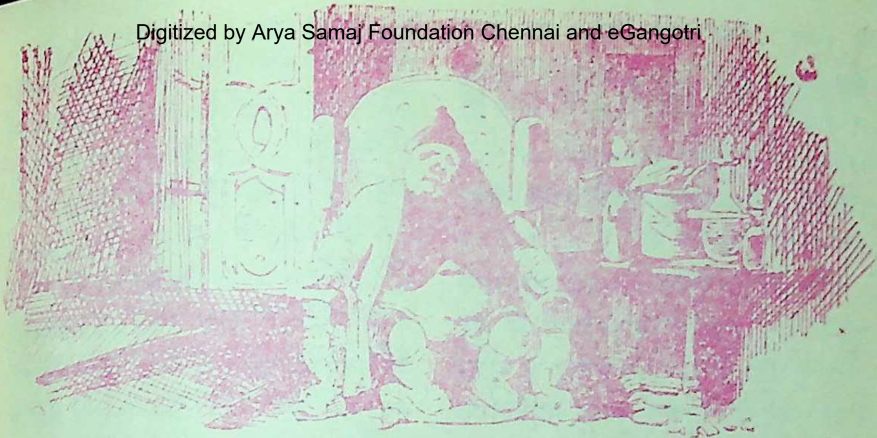

भरकर ही देख लेता है तो वे ठीक हो जाते हैं। उसकी तो सूरत देखकर मौत भी रास्ता छोड़कर हट जाती है। पर यह डॉक्टर उसके घर से वहुत दूर रहता था—इतनी दूर कि पैदल चलने पर उसके यहां पहुंचने में सौ घंटे लगें। अमीर को इस डॉक्टर पर भरोसा हो गया था और उसने उसे अपना हाल लिख दिया। अमीर की चिट्ठी पढ़ते ही डॉक्टर को पता चल गया कि उसे क्या करना चाहिए यानी खाने-पीने की दवा की जगह उसे हिसाव से रहना और हिलना-डुलना चाहिए। उसने मन ही मन कहा, 'ठहरो, मैं तुम्हें जल्दी ही ठीक कर दूंगा।'

उसने अमीर को एक चिट्ठी लिखी—'प्यारे मित्र, आपकी हालत बहुत खराब है, फिर भी अगर आप मेरी सलाह पर चलने को तैयार हों तब आपका इलाज किया जा सकता है। मित्र, आपके पेट में एक खतरनाक जानवर है—यानी सात मुंहवाला अजगर। इस अजगर से मैं स्वयं ही निबटूंगा। पर इसके लिए आपको मेरे पास आना पड़ेगा। लेकिन, एक बात है—आप किसी घोड़े या गाड़ी पर सवार होकर नहीं आ सकते। आपको केवल जूते पहनकर ही आना पड़ेगा। नहीं तो आप अजगर को हिला देंगे और वह आपकी आंतों को बीच से फाड़ देगा। अजगर भयानक है और वह एक बार में सात आंतें काट डालेगा। दूसरे, आप दिन में दो बार, एक-एक प्लेट सब्जी, दोपहर को उसके साथ एक टुकड़ा सासेज और शाम को एक अंडा ले सकते हैं। सुबह मांस का सूप, जिसमें कटा हुआ हरा धनिया पड़ा हो, आप ले सकते हैं। इसके सिवा, आप और कुछ नहीं खा सकते। अगर और कुछ खायेंगे तो उससे अजगर ही बड़ा होगा और वह आपके जिगर को दबा देगा। तब दर्जी को आपका नाप लेने की कोई जरूरत न होगी। तब बढ़ई ही ताबूत

के लिए आ[illegible] [illegible] [illegible]। यह मेरी नेक सलाह है और अगर आप मेरी बात न मानेंगे तब आनेवाले साल के शुरू में आपको कोयल की कूक सुनने को नहीं मिलेगी। अब आप जैसा चाहें वैसा करें।"

जब रोगी ने यह पत्र पढ़ा तो उसने दूसरे दिन सुबह ही अपने पैरों में बूट चढ़वाये और डॉक्टर की सलाह के मुताबिक रास्ते पर निकल गया। पहले दिन वह इतना धीरे-धीरे चला कि एक घोंघा भी आगे चलने में उसे मात दे सकता था। राह में जो उसे नमस्ते करता, उसे वह जवाब तक न देता और जहां वह धरती पर कोई कीड़ा रेंगता हुआ देखता, फौरन उसे कुचल देता। पर दूसरे और तीसरे दिन उसे सब कुछ बदला-बदला नजर आने लगा। उसे लगा, मानो बहुत दिनों से चिड़ियों ने आज-जैसा सुंदर गीत नहीं गाया था। ओस उसे बड़ी लुभावनी लग रही थी। खेत में लगे गुलाब भी बड़े-बड़े और लाल-लाल मालूम पड़ रहे थे। राह में जो लोग उसे मिले, वे भी उसे भले लगे। वह स्वयं भी पहले से भला लग रहा था। अब उसे हर नया दिन पिछले दिन से ज्यादा हलका महसूस होता। वह अठारहवें दिन डॉक्टर के शहर में पहुंचा। दूसरे दिन सुबह वह सोकर उठा तो उसका मन बहुत प्रसन्न था। वह कहने लगा, "मैं तो भला-चंगा हूं। डॉक्टर के पास जाने के लिए

सफेद दाग से दुखी क्यों?

सफल तेज आयुर्वेदिक इलाज की खोज

यदि आप सफेद दाग के कारण दुखी हैं तो अब निराश न हों। सफेद दाग असाध्य नहीं है। सही इलाज कराने से यह भी दूसरे रोगों की तरह मिट जाता है। हमने सफेद दाग के हजारों रोगियों को रोग से मुक्ति दिलाकर उनके प्रशंसापत्र प्राप्त किया है। कई वर्षों के लगातार मेहनत एवम् खोज के बाद सफेद दाग की चिकित्सा में पूर्ण सफलता प्राप्त की है। यह इतना तेज एवम् प्रभावी है कि इलाज शुरू होते ही दाग का रंग बदलने लगता है और शीघ्र ही रोग के सभी विकारों को खत्मकर दागको चमड़ी के प्राकृतिक रंग में मिला देता है। वैसे मरीज जो कई प्रकार का इलाज करा कर निराश हो गए थे, वे भी हमारे इलाज से अच्छे हुए है। यदि आप भी इन दागों के कारण दुखी हैं, और सभी प्रकार का इलाज कराकर निराश हो गए हों, तो भी एक बार अवश्य आजमा कर देखें। रोग विवरण लिखें। अभी प्रचार हेतु एक पैकेट दवा मुफ्त दी जा रही है। चाहें तो स्वयम् आकर मिलें।

हमारा इलाज हजारों रोगियों पर परिक्षित है। अतः विश्वसनीय है।

श्री आयुर्वेदिक फार्मेसी (एल) पो० कतरी सराय (गया)

इससे बुरी घड़ी और कौन-सी हो सकती है। मैं तो पूरी तरह स्वस्थ हूं। अब अगर डॉक्टर के पास जा ही रहा हूं तो और कुछ नहीं तो कम-से-कम मेरे कानों में सायं-सायं ही होती या मेरा दिल ही बैठता। इसी तरह सोचता-सोचता वह डॉक्टर के पास पहुंचा। डॉक्टर ने उसका हाथ थामकर पूछा, "मुझे एक बार फिर पूरी तरह से बता जाइए कि आपको क्या होता है?"

इस पर वह अमीर बोला, "डॉक्टर साहब, भगवान की कृपा से मुझे कुछ नहीं होता, अगर आप मुझ-जैसे तंदुरुस्त हों तो इससे मुझे खुशी होगी।" डॉक्टर बोला, "आप पर किसी देवता की कृपा हुई है। तभी आपने मेरी सलाह मान ली है। अजगर मर चुका है। पर अभी आपके शरीर में उसके अंडे मौजूद हैं। इसलिए आपको फिर पैदल ही घर जाना होगा और वहां मेहनत से लकड़ी चीरनी होगी। एक बात और। आपकी भूख जितना मांगे, उससे अधिक आप न खायें। इससे अजगर के अंडों से बच्चे नहीं निकलेंगे। तब आपकी उम्र भी लंबी हो सकेगी।" यह कहते-कहते वह मुसकरा दिया।

इस पर अमीर ने कहा, "डॉक्टर साहब, आप मंजे हुए उस्ताद हैं और मैं आपको अच्छी तरह समझ गया हूं।"

वह डॉक्टर की सलाह पर चलता रहा और सत्तासी वर्ष, चार माह, दस दिन जिया। पानी की मछली-जैसा तंदुरुस्त रहा। जब तक वह जीवित रहा, डाक्टर

बुद्धि-विलास के उत्तर

१. पिता—३५, पुत्र—१५ वर्ष, २. पुलकेशिन द्वितीय (राज्यकाल : ६१०-६४२ ई.), ३. क. प्रशांत महासागर (६,३८,५५,००० वर्गमील), ख. चैलंजर डीप—१०,९९३ मीटर (३६,११७ फुट), ४. पाइराइट (लौह और गंधक का यौगिक), ५. पंचभूत, ६. उच्चतम न्यायालय के प्रांगण में, ७. तोकियो के उपनगर रनकोजी के एक बौद्ध मंदिर में, ८. मिजोरम तथा पांडिचेरी, ९. अक्तूबर—मलयालम कवि महाकवि वल्लतोल, दिसंबर—प्रसिद्ध राजनेता चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, १०. भारतीय विमान-सेना के ९-सदस्यीय दल ने (नेता : सीतू मलिक) ६, ७ जून, १९५३ को—सर्वप्रथम 'टाइम्स' (लंदन) में चित्र प्रकाशित, ११. रायल एशियाटिक सोसाइटी, कलकत्ता, १२. मुरादनगर (जिला गाजियाबाद) से शाहदरा (दिल्ली) तक २५.३५ किलोमीटर लंबी, पाइप का व्यास २.८ मीटर, लागत अनुमानतः १२.३ करोड़ रु.—जून १९८० तक पूर्ति की आशा ●

"यार! आज मेरी कक्षा की एक छात्रा ने मुझसे बात की।"

"क्या कहा उसने?"

"उसने कहा, आज के बाद मेरे घर के चक्कर लगाये तो टांगें तुड़वा दूंगी!"

को नये साल की खुशी में सोने की बीस मोहरें भेंट-स्वरूप भेजता रहा।

फौजी की दाढ़ी

पतझड़ के दिन। जेगरिंगंन का होटल। एक घनी दाढ़ीवाला परदेसी फौजी आया और होटल के नाई से बोला, "मुझे हजामत बनवानी है। पर एक बात ध्यान रहे। मेरी खाल नाजुक है। अगर उस्तरे से मेरी खाल नहीं कटी तो मैं तुम्हें चार डालर दूंगा। और यदि जरा भी खरोंच लगी तो मैं छुरा घोंपकर तुम्हारा काम तमाम कर दूंगा। और इस तरह मरनेवाले तुम पहले आदमी नहीं होगे।"

यह सुनकर नाई बेहद घबरा उठा। उसने तुरंत अपने नौकर से कहा, "मुझे एक जरूरी काम या आ गया है। तुम इनकी दाढ़ी ब दो।"

नौकर ने उस्तरा संभाला तो फौ ने फिर वही बात दोहरायी। नौकर भी हाथ-पैर फूल गये और वह भी वहान बनाकर चलता बना। पर जाते-जा एक किशोर-नौकर को उस्तरा थमाक बोला, "मुझे एक जरूरी काम याद गया है। तुम इनकी दाढ़ी बना दो।" उ किशोर-नौकर के उस्तरा थामते ही फौ ने फिर वही बात दोहरायी।

उसकी विचित्र शर्त सुनकर किशो पहले तो घबराया। फिर उसने हिम्म कर फौजी की दाढ़ी बनानी शुरू क दी।

थोड़ी देर बाद दाढ़ी बन गयी त

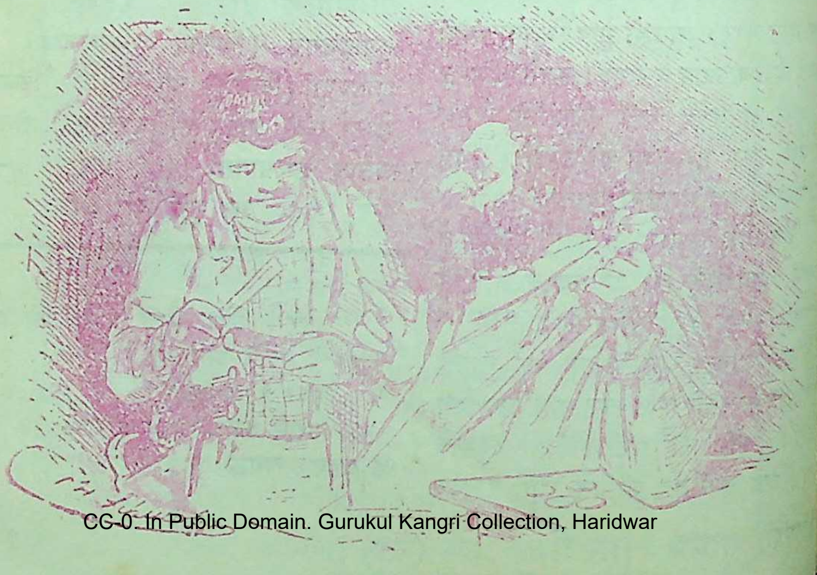

बोध-कथा

दांत क्यों गिरे?

पुरानी बात है। चीनी दार्शनिक कनफ्यूशियस ने अपने शिष्यों से पूछा, "मेरा मुंह देख रहे हो! इसमें पहले दांत थे। क्या अब भी दांत दिखायी दे रहे हैं?"

शिष्यों ने गुरु की बात को व्यर्थ नहीं समझा, बोले, "आचार्य, दांत तो नहीं दिखायी दे रहे हैं।"

"और जीभ?" अगला प्रश्न था।

"जीभ तो दिखायी दे रही है," इस बार शिष्यों ने उत्साह से उत्तर दिया।

"क्यों, मुंह में जीभ भी थी और दांत भी! क्या हुआ जो अब सिर्फ जीभ है, पर दांत नहीं?"

जब शिष्य उत्तर नहीं ढूंढ़ पाये तब बोले, "प्रभु, आप ही बतायें कि जीभ क्यों बची रह गयी और दांत क्यों नहीं रहे?"

कनफ्यूशियस

कनफ्यूशियस बोले, "दांत कठोर थे। इसलिए या तो वे सब गिर गये या उखाड़ दिये गये। जीभ कोमल थी, इसलिए बची रही। अतः तुम्हें भी कोमल बनना चाहिए। कठोर बनकर रहोगे तो उखाड़ दिये जाओगे। विनम्रता, कोमलता मनुष्य को उदात्तीकरण की ओर ले जाती है। यह जीवंतता का एक सहज गुण भी है।"

—करुणा भारद्वाज

फौजी ने शीशे में शक्ल देखी और प्रसन्न होकर किशोर को चार डालर इनाम में दिये।

फिर फौजी ने बड़े प्यार से उससे पूछा, "जरा एक बात तो बताओ जो काम तुमसे बड़े पूरा न कर सके, उसे तुमने कैसे पूरा कर दिया। तुम्हें अपनी जान का डर नहीं लगा।"

किशोर मुसकराकर बोला, "डर कैसा? अगर आपको मेरा छुरा जरा भी लग जाता तो मैं आपसे आगे रहता। मैं तुरंत आपका गला काटकर यहां से चंपत हो जाता। आपको अपना छुरा उठाने का मौका भी नहीं मिलता।"

इसीलिए किसी ने ठीक ही कहा है—'भगवान की बात छोड़ किसी बच्चे की भी आजमाइश नहीं करनी चाहिए।'

●

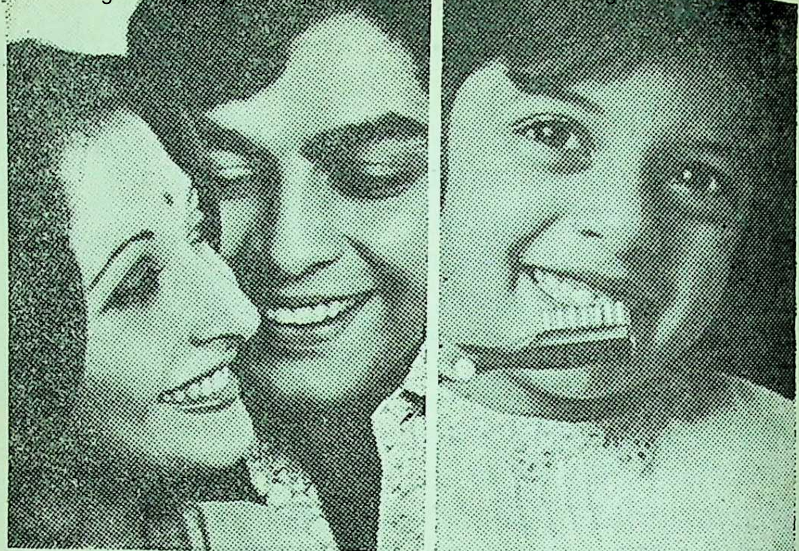

कोलगेट डेन्टल क्रीम से सांस की बदबू रोकिये... दंतक्षय का प्रतिकार कीजिये

हर भोजन के बाद अपने दांत कोलगेट से साफ कीजिये। यह ठीक उसी तरह दांतों की रक्षा करता है, जैसे दुनियाभर के दंत विशेषज्ञ कहते हैं।

दांतों में छुपे हुए अन्नकणों में कीटाणु बढ़ते हैं। इनसे सांस में बदबू पैदा होती है, और बाद में दांतों में सड़न।

इसीलिए, हमेशा भोजन के फ़ौरन बाद कोलगेट डेन्टल क्रीम से दांत साफ़ कीजिये। यह सांस को ताज़ा, दांतों को सफ़ेद और दांतों की सड़न रोकने में असरदार साबित हो चुका है।

देखिये, कोलगेट के भरोसेमंद फ़ॉर्मूले का काम:

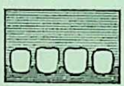

दांतों में छिपे हुए अन्नकणों में सांस में बदबू और दांत में सड़न पैदा करने वाले कीटाणु बढ़ते हैं।

कोलगेट का अनोखा, असरदार झाग दांतों के कोने में छिपे हुए अन्नकणों को और कीटाणुओं को निकाल देता है।

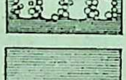

नतीज़ा: आपके दांत आकर्षक सफ़ेद, आपकी सांस तरोताज़ा और दंतक्षय की रोकथाम।

अधिक तरोताज़ा सांस और अधिक सफ़ेद दांतो के लिये दुनियाभर में ज़्यादा से ज़्यादा लोग दूसरे टूथपेस्टों के बजाय कोलगेट टूथपेस्ट ही खरीदते हैं।

Colgate
DENTAL CREAM
Colgate
STOPS BAD BR
COLGATE

दांतों की पूरी सुरक्षा के लिए कोलगेट ट्राइगार्ड टूथब्रश। ये दांतों के एनैमल व मसूढ़ों की रक्षा करके दांतों पर जमी परत को हटाते हैं। ८ विभिन्न किस्मों में, परिवार में हरएक के लिए अनुकूल।

सिर्फ़ एक दांतोंका डॉक्टर ही इससे बेहतर देखभाल कर सकता है।

DC.G.64 HN

रु. 6650 में लंदन बस पर सैर का मज़ा.

रु. 5850 में मज़ेदार इटालियन खाने का लुत्फ़.

रु. 6590 में स्विट्ज़रलैंड के शीतल प्राकृतिक सौंदर्य का आनन्द.

रु. 6600 में मोनालिसा की मोहक मुस्कान का रहस्य.

रोम, जिनेवा, पेरिस, लंदन. साथही हमारे वापसी ट्रिपवाले एक्सकर्शन फ़ेयर पर और भी कई शहर.

मिलान—रु. 6099. ब्रुसेल्स या प्राग या वार्सा—रु. 6600.

यूरोप के लिए सभी एक्सकर्शन फ़ेयर 14 से 90 दिनों तक के लिए मान्य हैं, तथा रास्ते में किसी एक जगह रुकने की सुविधा भी है. भारत—यू.के. फ़ेयर 21 से 90 दिनों के लिए मान्य हैं और रु. 7350 देने पर रास्ते में किसी एक जगह रुकने की सुविधा भी मिलती है.

सभी एक्सकर्शन फ़ेयर बम्बई/दिल्ली से ही यात्रा प्रारंभ करने के लिए हैं. दूसरी जानकारी के लिए अपने ट्रैवेल एजेंट या एयर-इंडिया से संपर्क कीजिए.

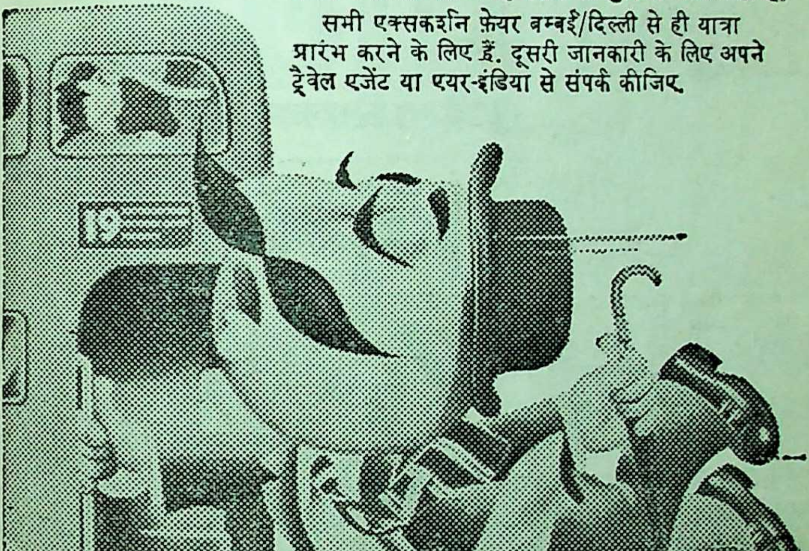

एयर-इंडिया

शुभ यात्रा...शुभ संदेश

AI-3908 A

है कोई ऐसा तेल
जो स्वादिष्ट भोजन पकाए
और अच्छा स्वास्थ्य
भी बनाए ?

जीहां, मार्वो
गुडहेल्थ रिफ़ाइन्ड तेल

ठोस बचत !
२ किलो सिर्फ़
रुपए २२·५७
(टैक्स अलग)

कैसे ? मार्वो पूर्णतया शुद्ध है—
इसमें पके खाने में सही स्वाद है—
यानी ज़ायकेदार !
सिर्फ़ यही नहीं, इसमें प्राकृतिक तत्व
पॉलिअनसेचुरेट्स है—
जो नसों में चर्बी का जमाव घटाता
है; खून के प्रवाह को बनाए रखता है.
याद रखिए : रोज़ाना कसरत और
मार्वो गुडहेल्थ रिफ़ाइन्ड तेल में
पका खाना पूरे परिवार को स्वस्थ
और चुस्त रखता है.

मार्वो
गुडहेल्थ रिफ़ाइन्ड तेल

विश्वसनीय हिन्दुस्तान लीवर की गारंटी के साथ.

लिंटास-MGO. 8-1511 HI (RR)

Shilpi dm 15 A/78 Hin

सुपर ७७७

मैल की शामत, सफ़ेदी की ताक़त

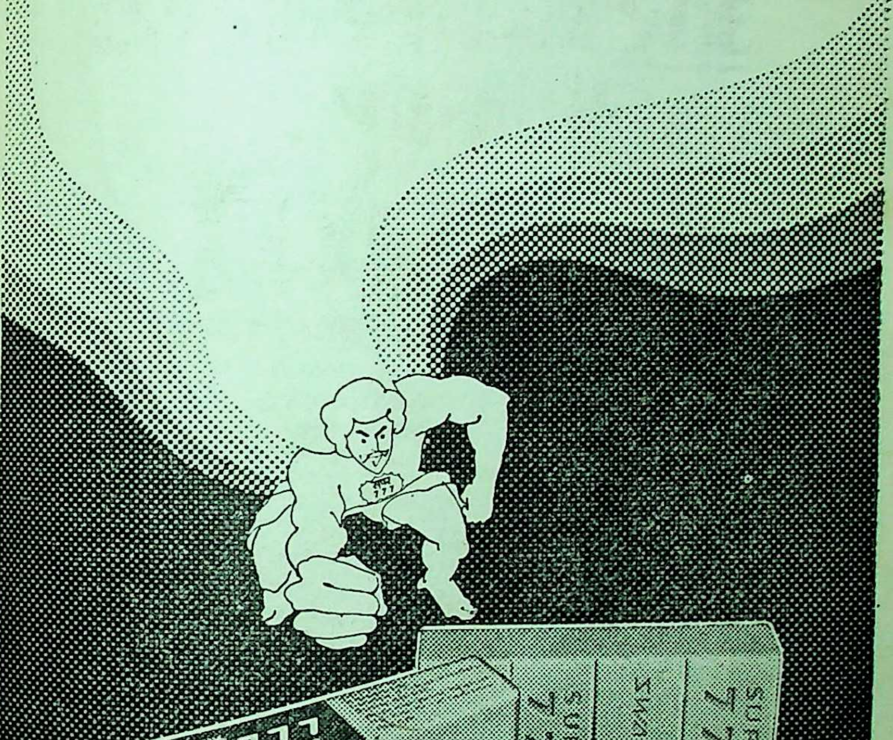
सुपर 777
SUPER 777
Detergent Washing Bar
स्वस्तिक
सुपर
777
SUPER 777
डिटर्जेंट धुलाई की बार
SUPER 777
SWASTIK

भारत की लाखों गृहणियों की पसन्द
सुपर ७७७ डिटर्जेण्ट धुलाई की बार
पैसा बचाओ, सफ़ेदी बढ़ाओ

Shilpi dm 15 A/78 Hin

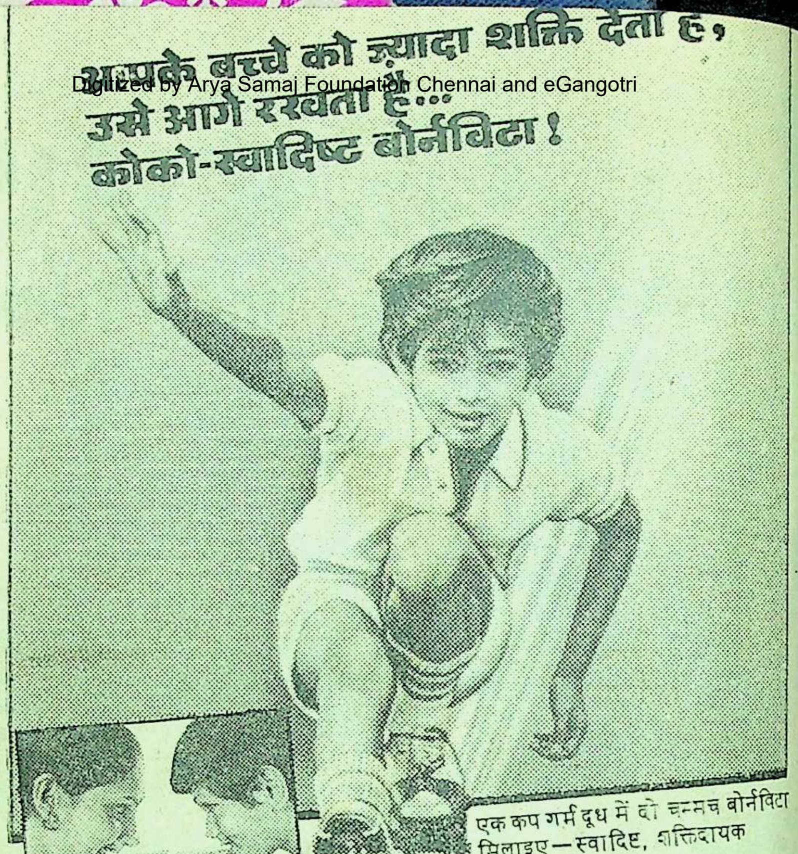
Cadbury's
Bournvita
The ideal health drink for strength, vigour and taste
With More Cocoa tastier healthier
500 g net

आपके बच्चे को ज़्यादा शक्ति देता है, उसे आगे रखता है... कोको-स्वादिष्ट बोर्नविटा !

अब बोर्नविटा में ज़्यादा स्वाद और ज़्यादा शक्ति के लिए ज़्यादा कोको है. इसके अलावा बोर्नविटा माल्ट, दूध और शक्कर के पौष्टिक तत्वों से भरपूर है.

एक कप गर्म दूध में दो चम्मच बोर्नविटा मिलाइए—स्वादिष्ट, शक्तिदायक पेय तैयार.
बोर्नविटा अपने बच्चे को दूध के साथ हर रोज़ दिन में दो बार दीजिए. इससे उसे ज़्यादा शक्ति मिलती है, जो उसके बढ़ते शरीर के लिए ज़रूरी है... और आपके लिए भी ज़रूरी... उसका साथ देने के लिए !

७५ पैसे बचाइए

पैसा बचाने वाला ५०० ग्राम का रीफिल पैक लाइए.
खास बात:
ये पैक खोलते ही इसे फौरन बोर्नविटा के टिन में उलट दीजिए, ताकि इसकी फैक्टरी वाली ताज़गी बनी रहे.

कॅडबरिज़
बोर्नविटा
ज़्यादा कोको, ज़्यादा स्वाद, ज़्यादा शक्ति !

OBM/8376 B/HN

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से सन्तोष नाथ द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

कादम्बिनी

भारतीय भाषाओं की [illegible] पत्रिका

होली अंक

मार्च १९७९

२५० रु.

बोर्नविटा
यक
के साथ
ए.
ी है, जो
रूरी है...
...
6 B/HN
न्दुस्तान

Mmm....marvellous
qualitywise
shadewise
Lady touch
NAIL ENAMEL
DAFFODILS
लेडी टच
लिपस्टिक्स और नेल इनैमल
MAYUR
COSMETICS INDIA PVT. LTD.
VISHAL

रुचिकर और स्वादिष्ट
मुखशुद्धि के लिए

CHAMAN
SWEET. DELICIOUS AND FRAGRANT.
STAR COMPANY.
36. Kapileshwar.
BELGAUM.
चमन

चमन अति स्वादिष्ट, रुचिकर, सुगंधित चूर्ण है। इसके सेवन से जायका सुधरता है और मुंह सुगंधिक होता है

चमन में क्या-क्या हैं!

चमन में मुलेठी. केसर. इलायची लौंग. जायपत्री सौंफ. मेंथॉल जैसी अनेक प्रकार की सुगंधित एवं रुचिकर वस्तुएं मिलायी जाती हैं। इसका बच्चों से बूढ़ों तक सभी रुचि से सेवन करते हैं।

स्टार कंपनी, बेलगांव.

क्या आप हर साल जाड़े में त्वचा और ओठों के फटने से परेशान हैं?

तो, त्वचा की सुरक्षा के लिये ये हैं चार उपाय!

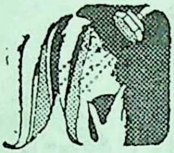

१ जाड़े में ज्यादा गर्म पानी में नहाने से आपकी त्वचा को नुक्सान पहुँच सकता है। इससे त्वचा की प्राकृतिक नमी नष्ट होगी और त्वचा शुष्क व खुरदरी हो जायेगी। यदि ठंडा पानी बर्दाश्त न हो तो मामूली गर्म पानी में स्नान कीजिये।

२ यदि बदन में तेल की मालिश करने का आपको वक्त न मिले तो उसके बदले यह सीधा-सादा फौरी उपाय अपनाइये। नहाने के बाद एक मग गर्म पानी में कुछ बूँद नारियल तेल डालिये—और इसे बदन पर छिड़क लीजिये। अब एक तौलिया से थपथपा कर बदन सुखाइये, बस।

३ आमतौर पर जाड़े में शरीर पर बहुत मैल जमता है जिसकी वजह त्वचा जल्दी फटने लगती है। इसका एक घरेलू उपचार है मैदा और दूध का उबटन त्वचा पर मलना। इससे त्वचा का मैल निकल जाता है और आपकी त्वचा कान्तिमान हो उठती है।

GD 9910

४ जाड़े के दिनों में बोरोलीन हर घर के लिये एक निहायत ज़रूरी चीज़ है।
अपने चेहरे, ओंठ, गर्दन, हाथ, कुहनी, कमर और पैरों पर इस मृदु, पोषक क्रीम की मालिश कीजिये। बोरोलीन का आरामदेह स्पर्श त्वचा के फटने, पपड़ी पड़ने और चकत्ते आदि को रोकने में मदद करता है।
छोटे-मोटे घावों के लिये तो बोरोलीन एक कारगर ऐन्टिसेप्टिक का काम करती है और फटी हुई त्वचा को संक्रमण से बचाती है।

आपकी त्वचा की सुरक्षा के लिये
सुगन्धित ऐन्टिसेप्टिक क्रीम

बोरोलीन

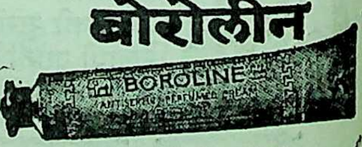

जी डी फार्मास्युटिकल्स लिमिटेड
बोरोलीन हाउस कलकत्ता ७०० ००१

इनके भविष्य की सुख-सुविधा के लिए
बैंक ऑफ़ बड़ौदा की रेग्युलर इनकम-कम-रिकरिंग डिपॉज़िट योजना

सुखदेव ने बैंक ऑफ़ बड़ौदा की आर. आई. आर. डी. योजना में अपने दोनों बच्चों के नाम खाता खोल दिया है.

बच्चों के बड़े होने तक वह रकम काफी बढ़ जाएगी; जिस से उनकी पढ़ाई, शादी और छोटू का कारोबार...सब आसान हो जाएगा.

आप भी इस योजना से सहायता लीजिए.

500/-रु. या अधिक (100/-रु. के गुणकों में) से, 12 महीने से 120 महीनों तक के लिए, यह खाता खोल दीजिए. ब्याज जमा होता रहेगा और रकम बढ़ती ही जाएगी.

अधिक जानकारी के लिए बैंक ऑफ़ बड़ौदा की निकटतम शाखा में पधारिए.

बैंक ऑफ़ बड़ौदा
(भारत सरकार उपक्रम)
भारत और विदेशों में 1300 से
अधिक शाखाओं का विस्तृत जाल.
70 वर्ष से बैंकिंग सुविधा.
25 वर्ष से विदेशों में प्रसार.

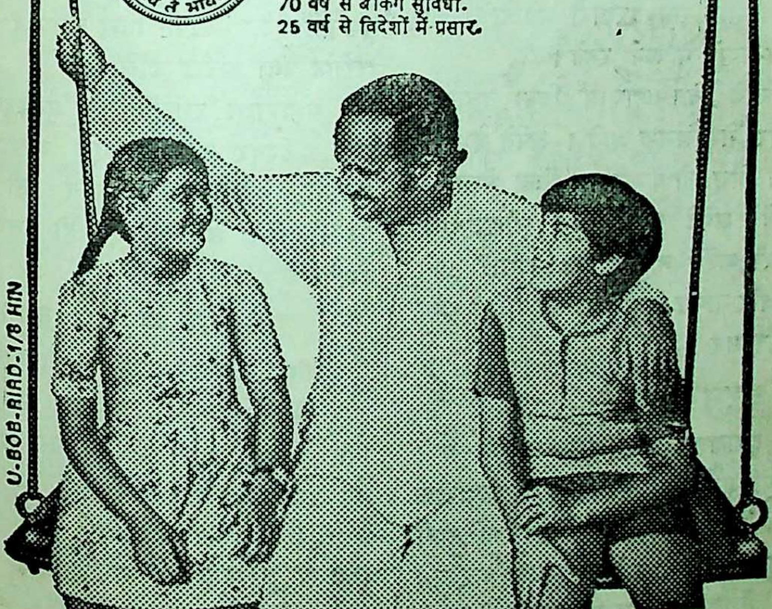

आस्था के आयाम

चीथड़े और चने

आचार्य रामचंद्र शुक्ल काशी नागरी प्रचारिणी सभा में पचीस रुपये मासिक पर काम करते थे। किसी प्रभावशाली मित्र ने उन्हें एक महाराजा के यहां चौदह सौ रुपये माहवार पर नियुक्त करा दिया। उन्हें एक शानदार बंगला और सवारी भी दे दी गयी। आचार्य ने तीन दिन तक दरबार का वातावरण देखा। सब दरबारी महाराजा की लल्लो-चप्पो में लगे रहते।

चौथे दिन आचार्य बिना बतलाये अलवर से खिसक आये। अपने प्रभावशाली मित्र को केवल यह लिख भेजा—

चीथड़े लपेटे चने चाबेंगे चौखट पर
चाकरी करेंगे नहीं चौपट चमार की

और वापस काशी आ गये पचीस रुपये मासिक पर।

हर धरम मेरा है

एक खुशखतनवीस (सुलेखक) ने वर्षों के परिश्रम के पश्चात कुरानशरीफ पूरा किया। अपने परिश्रम का सही मूल्य पाने की आशा में जगह-जगह भटका। अंत में वह महाराजा रणजीतसिंह के दरबार में उनके मंत्री फकीर अजीजुद्दीन के पास आया। अजीजुद्दीन ने उसके काम की बहुत प्रशसा की, परंतु उसका मुंहमांगा मूल्य चुकाने में असमर्थता प्रकट की। उन दोनों की बातचीत महाराजा रणजीतसिंह ने सुन ली। उन्होंने उस सुलेखक को अपने पास बुलाया और उससे कुरानशरीफ को लेकर अपने सर से लगाया। फिर उसके काम को अपनी एक आंख से गौर से देखा। उसे मुंहमांगा मूल्य देकर आदरपूर्वक विदा किया। कुछ दिन बाद फकीर अजीजुद्दीन से नहीं रहा गया तो वे पूछ ही बैठे, "आपने सिख होकर कुरानशरीफ क्यों खरीद डाला ?"

महाराजा रणजीतसिंह मुसकराकर बोले, "ईश्वर नें मेरी एक आंख की रोशनी इस लिए छीन ली है कि मैं हरेक धर्म को एक ही नजर से देख सकूं।"

दिल्ली में गधे बहुत हैं

मिर्जा गालिब उन दिनों गली कासिम जान में रहते थे। रामपुर से दो तीन शायर दोस्त उनके पास ठहरे। एक रात को करीब दो-ढाई बजे सब मुशायरे से लौट रहे थे। लौटते वक्त गली के मुहाने पर दो गधे आड़े खड़े थे। रामपुर के शायर ने फब्ती कसी, "मिर्जा

दिल्ली में गधे बहुत हैं ।"

मिर्जा ने उत्तर दिया, "भैया, ये दिल्ली के नहीं हैं । बाहर से आ जाते हैं ।"

छोटे तो हम सब हैं

सर हेनरी, एक अंगरेज गवर्नर—बेहद सख्त। सब उनसे आतंकित। एक दिन उन्हें पता चला कि आई. सी. एस. परीक्षा में उनके स्टाफ का एक युवा टाइपिस्ट उत्तीर्ण हो गया है। उन्होंने उस युवक को बुलवाया। पूछा, "क्या तुम आई. सी. एस. की परीक्षा में बैठे थे ?" युवक ने कुछ झिझकते हुए कहा, "यस सर, आपकी कृपा से मुझ-जैसा छोटा आदमी भी उत्तीर्ण हो गया।"

गंभीर सर हेनरी हंसते हुए बोले, "तुम्हें देखकर मुझे अपने पिता की एक बात याद आ गयी है--'एडवर्सिटी रिवील्स जीनियस, प्रासपर्टी कंसील्स इट।' (विपदा प्रतिभा को उजागर करती है और समृद्धि उस पर आवरण डालती है।) आदमी मेहनत से ही बड़ा होता है वरना छोटे तो हम सब हैं।"

जेल की दीवार में विज्ञान

मेरियन (इलिनायस—अमरीका) के जेल के पहरेदारों के चेहरों पर हवाइयां और जेल-अधिकारी क्रोध से आग-बबूला। कारण—जार्ज ब्रिग्स नाम का एक कैदी तमाम पहरेदारों के जेल से भाग निकला।

कुछ दिनों बाद जार्ज ब्रिग्स कारागार के दरवाजे पर स्वयं पहुंचा। यह देख एक जेल अधिकारी ने उससे पूछा, "जार्ज माजरा क्या है ! पहले तो तुम जेल से भाग गये और अब स्वयं आ गये।"

जार्ज ने उत्तर दिया, "जनाब, मैं हूं विज्ञान का विद्यार्थी। जेल की कोठरी में ही मैंने समुद्र के खारे जल को पीने योग्य बनाने के लिए एक विधि खोज निकाली। आपने मुझे प्रयोगशाला में परीक्षण की अनुमति नहीं दी तो मैं जेल की दीवार फांदकर सीधे मिसौरी विश्वविद्यालय गया। वहां के वैज्ञानिक मेरी योजना के परीक्षण पर राजी हो गये तो मैं फिर जेल लौट आया हूं।"

और सफर में

'बाइबिल का अब नया संस्करण होने जा रहा है।' सफर के एक सहयात्री ने बताया, 'अमरीका में न्यू-टेस्टामेंट को फिर से लिखा जा रहा है।'

हमने आशंका की, 'पहले रोमन कैथोलिक और प्रोस्टेंट आपस में लड़ते थे, अब ये दोनों मिलकर नयी बाइबिल लिखनेवालों से संघर्ष करेंगे।'

'क्यों नहीं, लड़ाई-झगड़े तो चलते रहने चाहिए। इससे ताजगी और चुस्ती बनी रहती है।'--उत्तर मिला।

अब ! लोगों की मांग पर

Lasona

लहसुन की कैपस्यूल
३० गोलियों का
सुविधाजनक पॅकेट

नया
बिना बू वाला
लहसुन

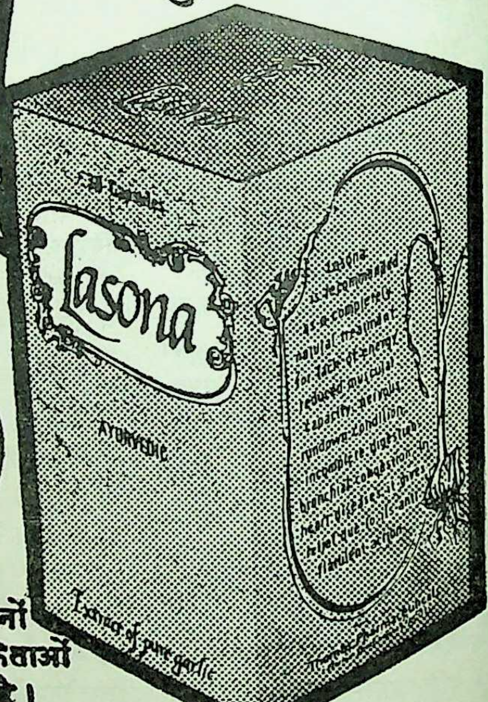
Lasona
Ayurvedic
Extract of pure garlic

विक्रय मूल्य
रु. ८.५५ पै.
कर अतिरिक्त

आपके शहर में
सभी अच्छी दूकानों
और औषधि विक्रेताओं
के पास मिलती है।

टॉमस फ़ार्मेस्यूटिकल्स, ७ इमाम स्ट्रीट, बम्बई-४०० ०२१

LA-H-23

द-सामर्थ्य बढ़ाइए

निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों, उन पर चिह्न लगाइए और इसी पृष्ठ से आरंभ उत्तरों से मिलाइए।

१. **अनुर्वर**—क. व्यर्थ, ख. कल्पित, ग. अनुपजाऊ, घ. कमजोर।

२. **आंकना**—क. अनुमान लगाना, ख. मोलभाव करना, ग. तोलना, घ. परखना।

३. **कटाक्ष**—क. गुस्सा, ख. टेढ़ी नजर, ग. आक्षेप, घ. हमला।

४. **हड़काना**—क. उभारना, ख. खदेड़ना, ग. धोखा देना, घ. तंग करने के लिए किसी को उकसाना।

५. **गरिमा**—क. गौरव, ख. लाभ, ग. अनुकूलता, घ. परिणाम।

६. **संकोच**—क. रुकावट, ख. हिचक, ग. डर, घ. शर्म।

७. **चमत्कार**—क. उत्सव, ख. अनहोनी बात, ग. अद्‌भुत बात, घ. नाटक।

८. **धीरोदात्त**—क. सदाचारी, ख. धैर्यवान एवं उदार, ग. पराक्रमी, घ. विजयी।

९. **वन्य**—क. अनाज, ख. वनस्पति, ग. वन में पैदा होने अथवा रहनेवाला, घ. जंगली आग।

१०. **छरहरा**—क. अकेला, ख. सुंदर, ग. इकहरे बदन का, घ. प्रसन्न।

११. **शतशः**—क. एक सौ, ख. सौ वर्ष का, ग. सौ बार, घ. [illegible]।

● **ज्ञानेन्दु**

१२. **लोलुप**—क. व्यसनी, ख. लालची, ग. इच्छुक, घ. कंजूस।

१३. **छलावा**—क. दिखावट, ख. धोखा, ग. विश्वासघात, घ. भूल।

१४. **खेलवाड़**—क. खेलकूद, ख. खिलाड़ी, ग. खेल-जैसी बात, घ. खुशी की बात।

उत्तर

१. ग. अनुपजाऊ, बंजर। देश की लाखों एकड़ भूमि अभी **अनुर्वर** पड़ी है। **अनुर्वर** मस्तिष्क—जो किसी प्रकार की कल्पना न कर सके। (विलोम—**उर्वर**)

२. क. अनुमान लगाना, अंदाजा लगाना। इसका मूल्य **आंकना** कठिन है। तुमने इसका सही महत्त्व नहीं **आंका**।

३. ख. टेढ़ी नजर, ग. आक्षेप। बात-बात में **कटाक्ष** क्यों करते हो?

४. घ. तंग करने के लिए किसी को उकसाना। तुम्हारे बार-बार **हड़काने** से

इलाहाबाद बैंक की डबल डिपॉजिट योजना से मुझे होता है—दोहरा फायदा ।

जिसका मतलब है मेरा धन
दो तरह से बढ़ रहा है ।

जी हाँ, इलाहाबाद बैंक की डबल डिपॉजिट योजना से दुगुना फायदा होता है : मुझे मिलता है एक अच्छा-खासा ब्याज—और ब्याज की रकम हर तिमाही मेरे मूलधन में जोड़ दी जाती है जिससे अगली तिमाही में मुझे और ज्यादा रकम पर ब्याज मिलता है ।

और यदि मैं अपनी रकम ८ वर्ष के लिये जमा करूँ तो मेरा मूलधन दुगुने से भी ज्यादा हो जायेगा ।

- ★ जमा की अधिकतम अवधि १० वर्ष—१,००० रुपये के गुणितों में ।
- ★ बैंक जमा पर प्राप्य ३,००० रुपये तक का वार्षिक ब्याज आयकर से मुक्त है ।
- ★ इसके साथ ही बैंक में जमा १,५०,००० रुपये तक की राशि सम्पत्ति कर से मुक्त है ।
- ★ अर्जित ब्याज का प्रमाणपत्र हर वर्ष दिया जाता है ।

आइये, अपनी बचत से इलाहाबाद बैंक में दोहरा फायदा उठाइये । अधिक जानकारी के लिये किसी भी निकटतम शाखा में पधारिये ।

U-AB-4 Hi

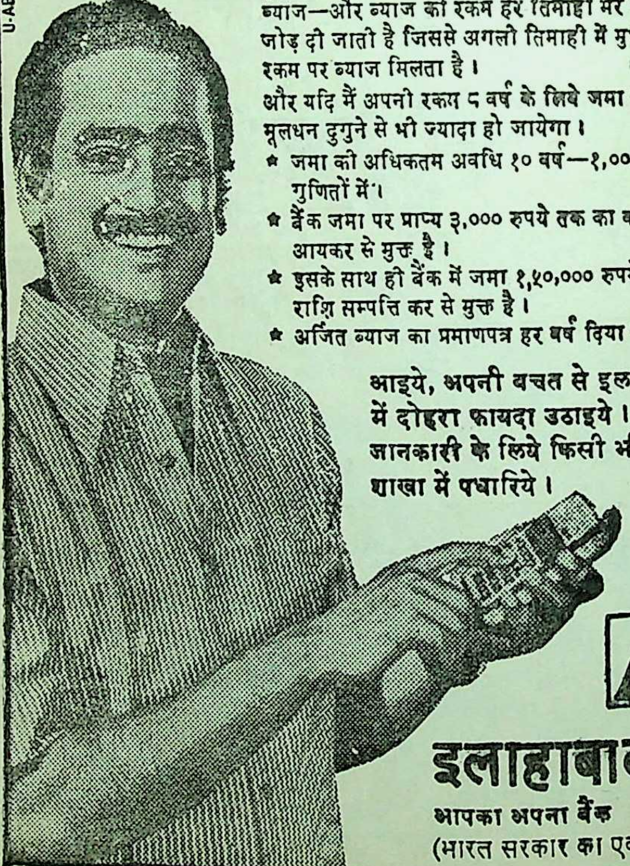

इलाहाबाद बैंक
आपका अपना बैंक
(भारत सरकार का एक प्रतिष्ठान)

ही उसने मेरा [illegible] छिपाया है।

५. क. गौरव, महत्त्व। नेता ने अपनी **गरिमा** के अनुकूल कार्य किया। इस कार्य की **गरिमा** को मत भूलो।

६. ख. हिचक, असमंजस। सच बात कहने में इतना **संकोच**! (निःसंकोच—बिना संकोच के)

७. ग. अद्भुत बात। यह कोई दैवी **चमत्कार** नहीं, हाथ की सफाई भर है।

८. ख. धैर्यवान एवं उदार, क्षमाशील तथा श्रेष्ठ। राम-जैसे **धीरोदात्त** चरित्र वंदनीय होते हैं।

९. ग. वन में पैदा होने अथवा रहनेवाला (वनस्पति तथा जीव)। दुर्लभ **वन्य** जीवों के संरक्षण पर ध्यान देना अत्यावश्यक है।

१०. ग. इकहरे बदन का। उस **छरहरे** पहलवान ने बड़ी फुरती से कुश्ती मार ली।

११. ग. सौ बार, सौ तरह से। इस उपकार के लिए मैं आपका **शतशः** आभारी हूं।

१२. ख. लालची, लोभी। धन अर्जित करो, किंतु **लोलुप** होकर नहीं।

१३. ख. धोखा, ठगने या बहकाने की क्रिया। यह सेवा नहीं, **छलावा** मात्र है।

१४. ग. खेल-जैसी बात, जिसे अधिक गंभीरता से न लिया जाए। चुनाव लड़ना कोई **खेलवाड़** नहीं है। (**'खिलवाड़'** का प्रयोग भी होता है।)

कादम्बिनी

अप्रैल अंक में पढ़िए हिंदी एवं अन्य भाषाओं के विशिष्ट लेखकों की नवीनतम कहानियां—ज्ञानपीठ-पुरस्कार-विजेता शिवराम एस. कारंत से 'कादम्बिनी' के लिए एक विशेष इंटरव्यू

रामनवमी के अवसर पर विशिष्ट सामग्री एवं विशिष्ट विषयों पर विद्वानों के विचारोत्तेजक लेख

'कादम्बिनी' का अप्रैल अंक पिछले अंकों से बिलकुल अलग। पठनीय ही नहीं, संग्रहणीय भी।

पारिभाषिक शब्द

बजट=आय-व्ययक

रेवेन्यू=राजस्व, आयगत

एक्सपेंडिचर=व्यय

कैपिटल=पूंजी

(कैपिटल एक्सपेंडिचर=पूंजीगत व्यय)

रिटायरमेंट=सेवा-निवृत्ति

कांटेजस=संक्रामक

कोरोजन=संक्षारण

सेंटेनरी=शतवार्षिकी

सेंचुरी=शताब्दी, शतक

वर्ष १९ : अंक १
मार्च, १९७९

कादम्बिनी

आकल्पं कविनूतनांबुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

हास्य-व्यंग्य एवं कहानियां

सेवकराम ओखाड़ू
इंटरव्यू एक राजनेता से २३
डॉ. गौरीशंकर राजहंस
आंटी २९
गोपालप्रसाद व्यास
राजन सों खेलें रंक ३५
रामेश्वरदयाल
बीस सूत्री कार्यक्रम ५१
महेश्वर दयाल
मुगलई दस्तरख्वान के रंग . . . ५५
पंडित विष्णुकांत शुक्ल
बूटी ऐसी छानिए ६१
नारायण भक्त
होली आज खेलब हो ६५
आइजेक बेश्विस सिंगर
चोट खाकर वह भविष्यवक्ता बना . . ७१
अजीज ने सिन
पुलिस थाने का मामला नहीं है ७५
राजेन्द्र मेहता
आकस्मिक अवकाश ७९
भक्त सियारामशरणदास
घंट का इतिहास ९६
शंकर पुणतांबेकर
राग तरकारी १०१
रोमेश जोशी
बचत का लायसेंस १०३
रवीन्द्रनाथ त्यागी
नैनीताल को बचाओ १०७
कन्हैयालाल कपूर
बुढ़ापा ११०
अंजुम भानपुरी
मीर कल्लू की गवाही ११४
विनोद भट्ट
सांप और नेवला सह-अस्तित्व . . १२१
कृष्णचन्द्र शर्मा
मातमे-दाढ़ी १२३
उपेन्द्र मेहता
बाबू बेचारा बघारता है दाल . . १४०
मशकूर हुसैन 'याद'
कुछ खास किस्म की हिचकियां . . १४४
डॉ. सुमन मेहरोत्रा
एक अदना बटन की करतूत . . १५७

स्थायी स्तंभ

आस्था के आयाम—६, शब्द-सामर्थ्य—९, काल-चिंतन—१४, प्रतिक्रियाएं—१८, हंसिकाएं—९२, हंसिकाएं काव्य में (डॉ. सरोजनी प्रीतम)—९३, ज्ञान-गंगा—१००, बुद्धि-विलास—११९, विधि-विधान—१५४, तनाव से मुक्ति—१७४, नयी कृतियां—१८३, गोष्ठी—१९१

मुखपृष्ठ : नर्तकी—एम.एस. अग्रवाल, पृष्ठभूमि—आर.एन. प्रसा

सुरेश 'सरल'
मुरगे की बांग १६२
रिफअत सरोश
मुगियां पालो, पर अंडे न हों . . १६७

कुछ विशिष्ट रचनाएं

रत्नशंकर प्रसाद
वे अद्भुत शैवसाधक थे ४१
राजेन्द्र अवस्थी
वहां मात्र लेखक के रूप में . . . ४६
डॉ. प्रभाकर माचवे
हिंदी का विरोध क्यों ८३
जयकृष्ण गौड़
गांव के दरवाजे पर १३४
शांतिलाल छाजेड़
समस्या झूठे गवाहों की . . . १४९
पंडित पुनर्वसु
नक्षत्र और आपका भविष्य . . १७८

होली पर विशेष

नहीं भूलती वह होली : अटलबिहारी वाजपेयी, जैनेन्द्र कुमार, भवानीप्रसाद मिश्र, डॉ. वचनदेव कुमार, नारायणदत्त—१९, इन्हें हम दूर से पहचान लेते हैं—९४, होते हैं चेहरे आदतों के आइने—१२०

कविताएं

गोपालकृष्ण कौल—१६, काका हाथरसी/भारत भूषण—१७, रामावतार अरुण/कुमार अनुपम—४४, नजीर बनारसी—४५, महादेवी वर्मा—६८, राजकुमारी 'रश्मि'/मधुर शास्त्री—८८, अल्हड़ बीकानेरी/माणिक वर्मा—८९, जैमिनी हरियाणवी/सुरेश 'नीरव'/सईद सुहरावर्दी—९०, हुल्लड़ मुरादाबादी/मधुप पांडेय—९१, योगेन्द्रदत्त शर्मा/कैलाश वाजपेयी—१३२

संपादक
राजेन्द्र अवस्थी

संयुक्त संपादक
शीला झुनझुनवाला
सह-संपादक : दुर्गाप्रसाद शुक्ल
उप-संपादक : कृष्णचंद्र शर्मा, प्रभा भारद्वाज, डॉ. जगदीश चंद्रिकेश, [illegible]; प्रूफरीडर : स्वामी शरण,
चित्रकार : सुकुमार चटर्जी

काल-चिंतन

--संजीवनी !

--"जीवन की जटिलताओं से मुक्ति के द्वार तक पहुंचने के लिए जो क्रियाशील चेतनशक्ति काम करती है, क्या वही संजीवनी है ?"

●

--निरर्थक है वह जीवन जो सपाट सड़क की तरह फैला है; अपनी हथेलियों को सीधा पसारकर कितनी देर रखा जा सकता है; सिर के बाल जब झड़कर एक सपाट चौकोर छोड़ जाते हैं तो मौसमों से रक्षा के लिए 'सुरक्षा-कवच' बनाकर धारण करना आवश्यक हो जाता है।

--पर्वत-श्रृंखलाओं की ऊबड़-खाबड़ श्रेणियां, हरीतिमा से आच्छादित वन-वृक्षों का असंबद्ध संगीत, कांटों से से भरी पगडंडियां और हरे-सूखे पत्तों की आत्माओं के वे बेखबर बोल, जो निश्चित जीवन की सतह पर केंद्रित भावावेगों के पौधे रोप जाते हैं और मन को उस विचलन से बचा लेते हैं जो किसी मंदिर में पहुंचकर भक्त को मिलती है--इच्छा प्रतिमा के दर्शन की है, परंतु मन-मंदिर के बाहर उतारे गये जूतों पर केंद्रित है, कोई उन्हें उठा न ले जाए !

--विचलित और विभक्त मन न तो संयमित रह सकता और न स्थिर होकर आस्था के केंद्र-बिंदु तक पहुंच सकता !

--संघर्षहीन जीवन सपाट तलहटी-सा हवा के हर झोंके के साथ वृक्ष की बूढ़ी पत्ती-सा कांपता रहेगा।

--वनचारी जीवन की आकांक्षाएं सफलता के उद्दाम द्वारों पर ऐसे दस्तक देंगी जैसे उजाड़-एकाकी कोने में बने किसी मकान के द्वार को कोई अतिथि थपथपाता है और दरवाजा खुलते ही हलके संगीत के स्वर तैर जाते हैं।

--मृत्यु-जैसी एकाकी विवशता के क्षण में अतिथि महाबोधि बनता है, इसीलिए कहा है--'अतिथि देवो भव।'

--संघर्ष के बिना कुछ भी उपलब्ध नहीं होता और जो होता है वह हथेलियों में तैरता हुआ पानी है।

--मुट्ठियों में पानी को कैद करने की जिजीविषा किसी विपन्न मस्तिष्क की ही उपज हो सकती है।

●

--अतः जीवन का तत्त्व है संघर्ष, वन-

प्रांतर की अचेत समृद्ध घाटियां, सुई की नोक की तरह कांटे और उन कांटों की शिराओं पर उगते हुए लाल फूल!

--लाल फूल--यानी सौंदर्य, रस, प्रेम और संघर्षमय जीवन के 'अतिथि क्षण'।

--मनुष्य-जीवन की निष्पत्ति प्रेम से हुई है और संघर्ष उसके साध्य हैं और इन दोनों से उद्भूत रस जीवन को अमरत्व तक पहुंचाने के सबल आयाम हैं।

●

--हमारी समझ ने प्रेम और रस को शताब्दियों से श्रृंगार और स्वरूप दिया है!

--अंगार से जलते हुए टेसुओं को नैसर्गिक उबलते हुए जल-स्रोतों में डालकर एक अमिट रंग की सृष्टि की है। उससे खेलकर 'मित्रता' के बीज बोये हैं।

--उन्हीं बीजों ने बढ़कर पौधों और वृक्षों का रूप ग्रहण किया, फिर फूलों से श्रृंगार मिला और फूलों ने घूमते हुए चक्र की धुरी में नये प्राणों को जन्म दिया ताकि आबद्ध-क्रम अवरुद्ध होकर प्रेम-सूत्रों को शाश्वत बनाये रखे!

--विकास एक आधार है कुम्हार के चाक का-- वह तो हुआ और नये घड़ों और बरतनों का निर्माण भी, परंतु उन्हें मजबूत बनाने के लिए पकाते वक्त वही गलती की गयी जो रसोइया बिना तरल पदार्थ के सब्जी बनाने में कभी कर जाता है और अनाड़ी सिद्ध होता है!

--दुकानों पर अब किसी ने गुलालों के कफन बिछा दिये हैं और श्मशान की सूखी राख मिलाकर नकली रंगों को कुरुपता और कालेपन से भर दिया है!

--कोई अर्थ नहीं रह गया प्रेम का--प्रेम-रंग में सराबोर होने का; बल्कि दर्द मिला है मिटे हुए मनुष्य के अवशेषों से मिश्रित अबीर-गुलाल को गालों पर लगाकर!

--धोखा देना और नकली चेहरा ओढ़कर मनुष्यता के ढोल पीटना कब से सीख लिया है हमने? कौन आया था चुपचाप जो हमारे भीतर के सार्थक तत्त्वों को छीनकर ले गया और हमें परंपराओं के खोखले खुनखुने थमाकर तड़पने के लिए छोड़ गया?

--हम नाटक करने लगे हैं अब: रंग, अबीर और गुलाल को प्यार की संज्ञा देकर अपने मन का मैल दूसरे के ऊपर डाल देते हैं!

--परंपरा के हाथों हम पहले होली जलाते हैं, फिर अग्नि की भीषणता से प्रताड़ित होकर तुरंत पानी की पिचकारियां छोड़ने लगते हैं, क्योंकि अग्नि की जलन असह्य हो जाती है।

--इस समूची प्रक्रिया में न कहीं वास्तविक प्रेम है और न सुरभिमय इसके स्रोत: ये आवरण हैं आसान बलि के लिए, छलना के द्वार सहज खोल देते हैं!

--एक दिन का नाटक वर्ष भर की कड़-

वाहट को मिटा नहीं सकता।

--तब भी हम नाटक खेलते रहेंगे; और अभिनय के लिए जिस पात्र की संज्ञा हमें दे दी गयी है, हम करते रहेंगे जब लेखक वह भूमिका देता रहेगा! फिर वही अनावृत शून्य और स्टेज पर उतरनेवाला काला परदा!

●

--मौसमी उपहार ऐसे ही तो होते हैं!

—उपहार देने का अर्थ प्रेम देना नहीं है।

--प्रेम के बिना जिंदगी की जटिलताएं कम नहीं होंगी।

--प्रेम के बिना रस–निष्पत्ति की कामना रेत से तेल निकालने-जैसी है, या लोहे को गलाकर पानी बनाने का सोच है।

--मौसमों को अपनी जगह चक्कर खाने दिया जाए और अपने ही बनाये क्रमों में तड़पने दिया जाए, इसी में आदमी की सफलता है।

●

--तो आइए, आज हम नशे में धुत्त मौसम को उसके आगमन पर छोड़ दें औ अपनी क्रियाशील चेतना से बनावटी चेहरों और आवरणों को उखाड़क सहज मनुष्यता के द्वार खोलें!

—यही सहज मनुष्यता संजीवनी है।

--संजीवनी यानी अमरता!

—अमरता देह ही नहीं, देह-धर्म को, उसके आस्था भरे उन उद्घोषों को जो विदेह शताब्दियों तक जीते हु अमर बन जाते हैं।

मौसम : तीन चित्र

माना यह खिलने का मौसम
फूलों से मिलने का मौसम
लेकिन उन फूलों को है गम
जो मौसम की पाबंदी पर
अपने खिलने की आजादी
नहीं बेचते, नहीं छोड़ते--
जो अपनी इच्छा से खिलकर
मौसम की भी राह मोड़ते

माना यह रंगों का मौसम
है पोशाक बदलने का क्रम
सिर से बर्फ उतार फेकना
चाह रही हर चोटी पुरनम
लेकिन उनका क्या होगा
जो रंग बदलकर भी दे पाते--
नहीं समय का साथ
काल सर्प की केंचुल रहती
केवल जिनके हाथ?

माना यह गीतों का मौसम
अमराई की फुनगी पर जम
कोयल शुरू कर रही अपने
फागों के रागों का सरगम
लेकिन भृंगों की शहनाई
कोयल के स्वर की मधुराई
क्या कौओं के असंतोष का
हाहाकार दबा सकती है?
नागफनी के कांटों में
फूलों का प्यार जगा सकती है?

—गोपालकृष्ण कौ
कल्पना नगर, गाजिया

काका की कथनी

किस्सा कुर्सी का

किस्सा कुर्सी का बहुत, है दिलचस्प हजूर
तोता-मैना से अधिक, यह किस्सा मशहूर
यह किस्सा मशहूर, रात को बोली काकी
हमको भी कुछ बात बता दो, इस किस्सा की
'इंदिरा जी की कुर्सी पर थी घिस्सम-घिस्सा
मोरारजी पर पहुंच गई, बस ये है किस्सा'

जय श्रीराजनारायण

नाटक में ज्यों विदूषक, जोकर सर्कस मांहि
कवि सम्मेलन का मजा, बिना हास्यकवि नांहि
बिना हास्यकवि नांहि, हास्य का भारी पल्ला
अकबर के दरबार, बीरबल का था हल्ला
यह उदाहरण देते हैं काका इस कारण
आवश्यक हैं संसद में श्री राजनारायण

बदले की बंदूक

चरणसिंह मंत्री बने, 'मिली भयंकर न्यूज
'नारायण' के हृदय का, बल्ब हो गया फ्यूज
बल्ब हो गया फ्यूज, न यह करना था उनको
कुर्सी की खातिर, तलाक दे बैठे इनको
राजनारायण बदले की बंदूक चलाओ
आप इंदिरा गांधी के दल में मिल जाओ

—काका हाथरसी
संगीत कार्यालय, हाथरस

गीत

मेरी चूनर ऊजरी रे
क्यूं रंग डाल दिया

बहुत मोल की मैंने लीन्हीं
तूने रंग दीन्हीं
ऐसा रंग जो धुलें न छूटै
ये क्या कर दीन्हीं
प्रीत कुआंरी के गालों पर
लगा गुलाल दिया

कभी न तुझसे भांवर डालीं
कभी न सेज जगी
हंसी-हंसी में तूने छलिया
भोली जान ठगी
मुझको अंधा कर प्राणों में
दीपक बाल दिया

तन का रंग धो भी डालूं पर
मन का कैसे जाय
कसकै तेरी याद हिया में
पल भर चैन न आय
मेरी सारी नींद चुरा ली
दरद सम्हाल दिया
मेरी चूनर ऊजरी रे
क्यूं रंग डाल दिया

—भारत भूषण
ब्रह्मपुरी, मेरठ

प्रतिक्रियाएं

कवित्वपूर्ण काल चिंतन

कभी-कभी सोचती हूं कि आप प्रतिमास इतना प्रेरक, इतना विचारोत्तेजक इतना कवित्वपूर्ण 'काल-चिंतन' कैसे लिख पाते हैं। वसंत के लिए समर्पित मैंने नये-पुराने कवियों की अनेक कविताएं पढ़ी। उनमें से अधिकांश या तो रूमानी थीं या फिर कोमल-कांत पदावलि की मात्र पठनीय रचनाएं। फरवरी अंक के 'काल-चितन' में काव्य तो था ही, साथ ही उसमें एक आस्थापूर्ण जीवन-दर्शन भी।

—निवेदिता अग्रवाल, वर्धा

फरवरी अंक में काव्यमय 'काल-चिंतन' पढ़कर लगा कि आप मूलत: कवि हैं। वसंत के स्वागत में लिखा गया यह 'काल-चिंतन' भी दार्शनिकता से ओतप्रोत था।

—राजकुमार शर्मा, भोपाल

फरवरी अंक में सार-संक्षेप के अंतर्गत योहान्न पीटर हेबल की कथाएं पढ़कर मजा आ गया। आगामी अंकों में भी हेबल की कुछ कहानियां प्रकाशित कीजिए।

—श्यामसुंदर वर्मा, आगरा

'समय के हस्ताक्षर' में आपने बाल-वर्ष के प्रति समाज और सरकार के दायित्व के प्रति सही सचेत किया है।

'कादम्बिनी' के माध्यम से मैं शिक्षा-मंत्रालय एवं साहित्य अकादमी के अधिकारियों से अनुरोध करूंगी कि वे बाल-वर्ष में बच्चों के लिए श्रेष्ठ साहित्य लिखनेवाले लेखकों को प्रतिवर्ष अकादमी पुरस्कार देने की परंपरा शुरू करें।

—सुनयना भंडारे, चंद्रपुर

नया स्तंभ 'आस्था के आयाम' रोचक होने के साथ-साथ प्रेरक भी लगा। फरवरी अंक में 'नजीर और ताजमहल' शीर्षक प्रसंग ने मन मोह लिया। काश, हम सबके मन में अपने देश के प्रति वही प्रेम हो, जो आगरा के प्रति नजीर का था।

—चंद्रभूषण प्र. सिंह चंद्र, ग्राम-पोस्ट कुशी

भांग-प्रेमी पाठकों के लिए

प्रिय संपादक जी,

आपके भांग-प्रेमी पाठकों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि भारत सरकार ने मुझे सूचित किया है कि उनकी नशाबंदी नीति भांग पर लागू नहीं होती। इस समझदारी के निर्णय और होली के अवसर पर जनता को नशाबंदी युक्त भांग का उपहार भेंट करने के लिए सरकार को बधाई।

ऐसा लगता है कि विभिन्न राज्य सरकारें केंद्र की इस नीति के विरुद्ध अब भी भांग पर नशाबंदी लागू कर रही हैं। ऐसा क्यों? भांग की दुकानों को भी अन्य साधारण दुकानों की तरह सप्ताह में केवल एक दिन ही बंद क्यों न रखा जाए!

—देवकीनन्दन 'भंगेड़ी', नयी दिल्ली

नहीं भूलती वह होली

विद्वानों की भीड़ में एक दिन अचानक हमारे विदेशमंत्री श्री अटलबिहारी वाजपेयी मिल गये। वाजपेयीजी मिलनसार और दिलचस्प व्यक्ति तो हैं ही, हम जा धमके उनके पास और उनसे टेलीफोन पर दो-तीन दिन पहले हुई बात का जिक्र करते हुए सबके सामने ही पूछ लिया, "वाजपेयीजी, 'कादम्बिनी' में 'नहीं भूलती वह होली' संस्मरणों के संबंध में आपसे हमने फोन पर बात की थी. . . ।" वाजपेयीजी ने बात काटते हुए कहा, "हां, हां, फोन मिला था और आपके संपादकजी से बात भी हुई थी, लेकिन भाई, हमें तो ऐसी कोई होली याद नहीं आती जो हमारे लिए अविस्मरणीय रही हो . . .।" फिर अपनी विशेष मुद्रा में हाथ फैलाते हुए उन्होंने कहा, "हां, एक बार हमें किसी ने भंग पिला दी थी और भंग की तरंग में क्या-क्या हुआ, आज भी नहीं भूलता। वह किस्सा कभी बता तो दूंगा, परंतु मैं उसे छपाना नहीं चाहता।"

"कोई छपाने योग्य बात भी तो हो सकती है!"

"बहुत हुई हैं, हो रही हैं, होती रहेंगी, लेकिन . . ." आगे बढ़ते हुए वाजपेयीजी ने कहा, "चलिए, होली के दिन ही मिलेंगे।"

अटलबिहारी वाजपेयी

मुझे वह होली भुलाये नहीं भूलती जिस होली पर कहानी-सम्राट प्रेमचंदजी मेरे अतिथि थे। बात सन '३६ की है, जब मैं १५ नंबर दरियागंज में रहता था, काफी बड़ी जगह थी, आठ-दस कमरे थे उसमें।

होली के दिन प्रेमचंदजी और मैं बाहर खुले में बैठे धूप का आनंद ले रहे थे कि तभी कुछ लड़के रंग-गुलाल लिये आये, लेकिन उन पर डालते हिचकिचाने लगे तो प्रेमचंदजी ने कहा, "आओ, रंग

डालो।" बच्चों की हिम्मत बंधी और उन्होंने उन पर तबियत से रंग डाला, फिर क्या था, प्रेमचंदजी ने भी उन पर दिल खोलकर रंग डाला। हम सब रंग से सराबोर हो गये।

मेरे लिए तो यही ऐसी होली थी जिसकी मुझे याद भुलाये नहीं भूलती और विशेषकर इसलिए कि यह प्रेमचंदजी के जीवन की अंतिम होली थी।

मुझे तो वही होली भुलाये नहीं भूलती जो मैंने कभी नहीं मनायी। सन' ३६ की बात है। मैं बी. ए. के अंतिम वर्ष में था। जबलपुर के राबर्टसन कालेज में पढ़ता था और होस्टल में रहता था। उस साल मेरे एक सहपाठी को होस्टल में जगह नहीं मिली। लिहाजा पास के गांव गोकुलपुर में एक बगलिया किराये पर ली और होस्टल से उस साथी का सामान तांगे पर लदवाया। जब तांगा चलने को हुआ तब उसकी आंखों में आंसू भर आये। मुझसे नहीं देखा गया। मैंने कहा, 'रोते क्यों हो, अकेले रहना पड़ेगा

इसलिए? अच्छा चलो, मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूं, रहने के लिए।'

यह कहकर मैंने अपना सामान भी तांगे पर लदवा दिया और वहीं जाकर रहने लगा। होली के त्योहार पर वह साथी अपने घर चला गया। होस्टल के साथी आपस में होली खेलने में इतने मशगूल रहे कि उन्हें मेरी याद ही नहीं आयी। मेरी बगलिया पर कोई नहीं आया, मैं भी कहीं नहीं गया। इस तरह मैं उस साल होली मनाने से रह गया। लेकिन यह भी अच्छा हुआ, मैंने अकेले बैठे-बैठे एक कविता लिख डाली। यह मेरी एक मात्र कविता है जो मैंने होली को लेकर लिखी है। कविता इस तरह है—

आज मैं अपने घर से अलग
आज मैं अपने घर से दूर
और फिर मेरे चारों ओर
हर्ष की धूम, हर्ष का पूर

किसी ने हंसते-हंसते कहीं
किसी पर पिचकारी मारी

किसी आंगन से स्वर आया
बस करो, जीते मैं हारी

और फिर पिचकारी का छर्र्र
और फिर हंसी सुनायी पड़ी
अभी कैसे ? संभालो फिर से
और फिर पिचकारी की झड़ी

अरे फागुन के रंगे दिवस
सभी के आंगन रंग से लाल
किराये का मेरा आंगन
निपट अनुरागहीन बेहाल

वहां मेरे आंगन में खड़ी
एक बिल्ली टेसू से रंगी
कहीं से उड़ती हुई गुलाल
हाथ पर मेरे आकर लगी

आज भी मेरी छोटी नदी
उमड़कर बहती होगी वहां
और वह कल-कल करती हुई
कथा-सी कहती होगी वहां

वहां उस चौराहे के पास
आज होली जलती होगी
आज भी वह पहले की तरह
धधकते ही बलती होगी

आज मां ने की होगी याद
बनाये होंगे जब पकवान
पिताजी का था मुझ पर मोह
उन्हें जब आया होगा ध्यान

कहा होगा मंझले के बिना
आज सूना-सा लगता है
इन्हीं सब बातों से मुझको
दुःख दूना-सा लगता है

आज हैं उज्ज्वल मेरे वस्त्र
रंग मेरे हिस्से में नहीं

धूप तपती है चारों ओर
और मैं धूप तापता हूं
आप खेलें होली खेलें
जरा मैं दुःख मापता हूं

भरी आंखों, रीते दिल से
देख लूं यह रंगरेली और
जिंदगी हो लेगी पूरी
एक-दो ऐसी होली और

भवानीप्रसाद मिश्र

होली ! जी, आप मानें या न मानें, यह शरारत का त्योहार है। होली के अवसर पर मेरा बेटा शरारत करता है, तब मेरी श्रीमतीजी बहुत नाराज होती हैं। लेकिन सच मानिए, मुझे भीतर-भीतर मजा आता है।

बात है सन १९४७ की। तब मैं दसवीं श्रेणी का छात्र था। होली के चार-पांच दिन पहले ही स्कूल बंद हो गया था। मैंने अपने एक सहपाठी के साथ एक योजना बनायी। सोचा, होली के मौके पर किसी को उल्लू बनाया जाए। इस पर्व में ऐसी सेपटी है कि चाहे कुछ भी [illegible] करो, कोई बुरा न मानेगा।

हम लोगों ने कुम्हार के यहां से एक घड़ा खरीदा। उस घड़े को गांव के वाहर अपने डेरे की निकटवाली केलवाड़ी में छिपाकर रख दिया। तीन-चार दिनों तक हम दोनों मित्र उसी घड़े में पाखाना-पेशाब करते रहे। जब घड़ा लगभग भर गया तो उसके मुंह को ढक्कन से आटा साटकर बंद कर दिया। फिर अपने सोनू नामक नौकर से कहा, 'बाबूजी ने तुम्हें गन्ने का रस बेगूसराय के पुरंदर बाबू वकील के यहां अभी पहुंचा देने को कहा है' मित्र ने कहा, 'सिर पर घड़ा रखने में तुम सोनू की मदद कर देना। जब तुम कुछ दूर हट जाओगे तो मैं लाठी से घड़ा फोड़ दूंगा।'

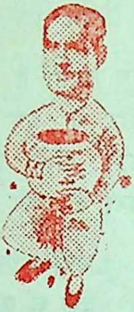

मैं अपने हाथों का सहारा देकर उस मल-मूत्र-पूरित घड़े को सोनू के सिर पर रख ही रहा था कि मेरे मित्र ने लाठी चला दी। घड़ा फूट गया और मेरे सारे कपड़े खराब हो गये। शरीर और कपड़ों पर मल के लोंदे बिखर गये। सोनू किधर भागा, मुझे स्मरण नहीं है, किंतु मैं उस सांझ की टंडक में गांव के पोखर के गंदले पानी में देर तक शरीर और कपड़े साफ करता रहा। उस दिन मुझे अपने मित्र की शीघ्रता और अपनी मूर्खता पर खीझ आयी थी, किंतु आज तो हंसी आती है। कितने साल बीत गये, किंतु अब भी नहीं भूलती वह होली!

वचनदेवकुमार

होली (हो-ली) असल में मेरे हिस्से में कभी हुई ही नहीं—और मुझे इसका विशेष रंज भी नहीं। कर्नाटक के जिस हिस्से में और जिस वर्ग में मैं जनमा, उसमें होली को 'कामन हब्ब' (कामदेव का त्योहार) कहा जाता है; शिवजी ने कामदेव को जो जला डाला था, उससे इसका संबंध जोड़ा जाता है और यह माना जाता है कि यह 'निम्न' लोगों का त्योहार है। ये संस्कार लेकर मैं हिंदी-प्रदेश के आर्यसमाजी गुरुकुलों में पढ़ने गया, जिनमें होली सर्वथा वर्जित थी। फिर मैं आकर रहने लगा बंबई के ऐसे महल्ले में जो पश्चिमी सभ्यता से आक्रांत है। सो मेरे हिस्से में होली कभी हुई ही नहीं। मेरे लिए वह अविस्मरणीय के बजाय अ-स्मरणीय रही है।

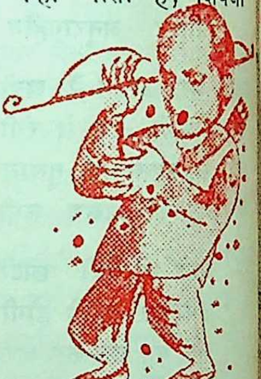

—प्रस्तोता: डॉ. जगदीश चंद्रिकेश

इंटरव्यू एक राजनेता से

• सेवकराम ओलाढ़

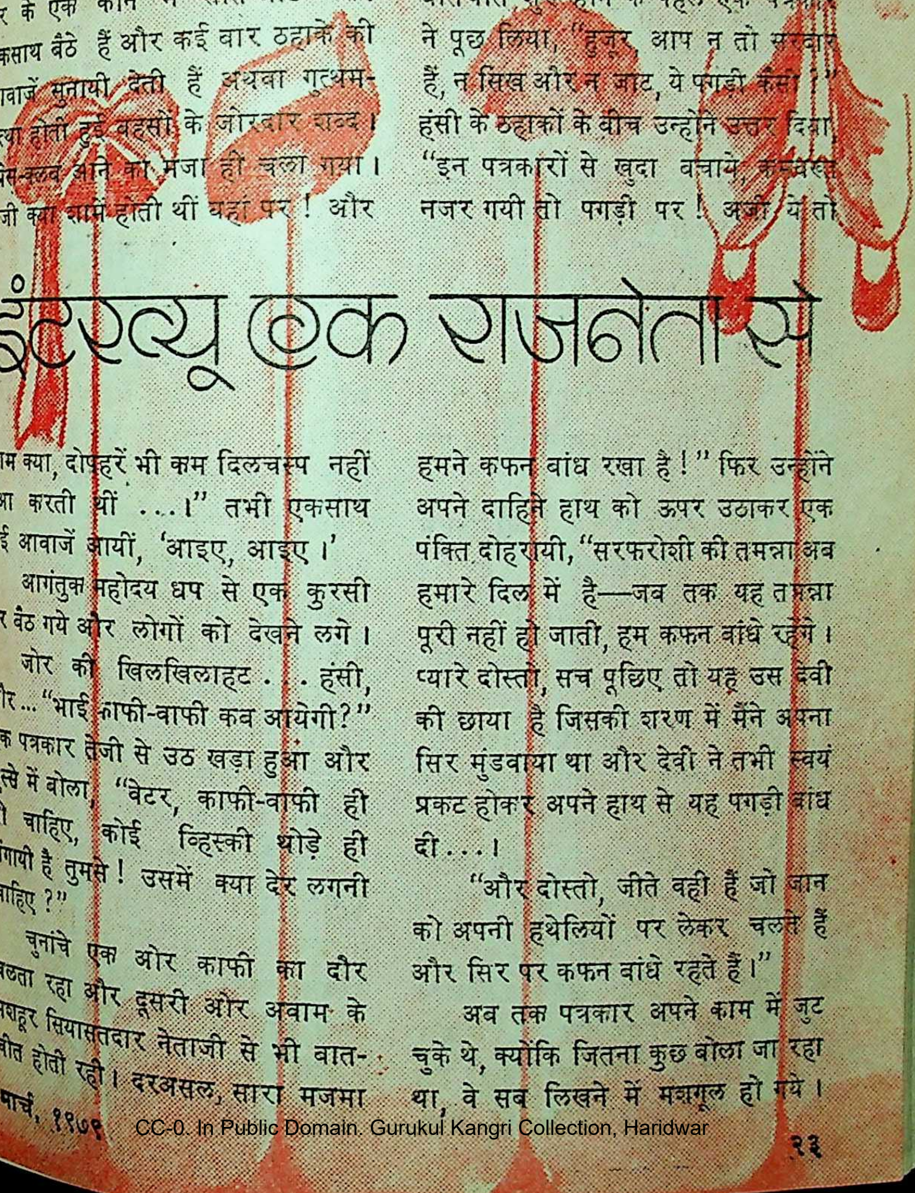

ठंड सेकती हुई धूप और प्रेस-क्लब का एक कोना। सारे कमरे की कुरसियां कुछ ऐसे घेरों में लगी हैं जैसे अलग-अलग बैठकें लगी हैं और वहसें हो रही हैं। दूर के एक कोने में सात-आठ लोग एकसाथ बैठे हैं और कई बार ठहाकों की आवाजें सुनायी देती हैं अथवा गुत्थम-गुत्था होती हुई वहसों के जोरदार शब्द। "प्रेस-क्लब आने का मजा ही चला गया। अजी क्या शामें होती थीं वहां पर! और शाम क्या, दोपहरें भी कम दिलचस्प नहीं हुआ करती थीं ...।" तभी एकसाथ कई आवाजें आयीं, 'आइए, आइए।'

आगंतुक महोदय धप से एक कुरसी पर बैठ गये और लोगों को देखने लगे।

जोर की खिलखिलाहट . . . हंसी, और... "भाई काफी-वाफी कव आयेगी?" एक पत्रकार तेजी से उठ खड़ा हुआ और गुस्से में बोला, "वेटर, काफी-वाफी ही तो चाहिए, कोई व्हिस्की थोड़े ही मंगायी है तुमसे! उसमें क्या देर लगनी चाहिए?"

चुनांचे एक ओर काफी का दौर चलता रहा और दूसरी ओर अवाम के मशहूर सियासतदार नेताजी से भी बात-चीत होती रही। दरअसल, सारा मजमा एक इंटरव्यू के लिए जमा था और नेताजी को कोई शाही बयान जारी करना था। बातचीत शुरू होने के पहले एक पत्रकार ने पूछ लिया, "हुजूर, आप न तो सरदार हैं, न सिख और न जाट, ये पगड़ी कैसी?" हंसी के ठहाकों के बीच उन्होंने उत्तर दिया, "इन पत्रकारों से खुदा बचाये, कम्बख्त नजर गयी तो पगड़ी पर! अजी ये तो हमने कफन बांध रखा है!" फिर उन्होंने अपने दाहिने हाथ को ऊपर उठाकर एक पंक्ति दोहरायी, "सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है—जब तक यह तमन्ना पूरी नहीं हो जाती, हम कफन बांधे रहेंगे। प्यारे दोस्तो, सच पूछिए तो यह उस देवी की छाया है जिसकी शरण में मैंने अपना सिर मुंडवाया था और देवी ने तभी स्वयं प्रकट होकर अपने हाथ से यह पगड़ी बांध दी...।

"और दोस्तो, जीते वही हैं जो जान को अपनी हथेलियों पर लेकर चलते हैं और सिर पर कफन बांधे रहते हैं।"

अब तक पत्रकार अपने काम में जुट चुके थे, क्योंकि जितना कुछ बोला जा रहा था, वे सब लिखने में मशगूल हो गये।

हमें तो पत्रकारों से डर लगे है!

इसी बीच एक पत्रकार की आंखें ऊपर उठीं। जैसे उसे बिजली का शाक लगा हो, वैसे उठकर खड़ा हो गया। उसके उठकर खड़े होते ही सभी उठकर खड़े हो गये।

"लीजिए, आ गये! आ गये!"

उनके आते ही घोर शांति छा गयी। उन्होंने बहुत बारीक और नाजुक शब्दों में कहा, "भइया रे, मैं तो यहां से गुजर रहा था। सोचा, चलूं इधर का भी मजा देख लूं। पत्रकारों से अपनी गहरी दोस्ती रही है।"

"आपने आकर बड़ी कृपा की हमारे बीच। लगे हाथ आपसे हम एक प्रश्न पूछ लें।"

उन्होंने अपनी दोनों हथेलियां हवा में घुमायीं, "भई, हमें तो पत्रकारों से डर लगे है। हम कहते कुछ हैं, वे छापते कुछ हैं। प्रश्न तो पूछो, लेकिन उत्तर ठेठ वही छापना, भइया रे, जो हम कहें।"

पत्रकारों के उत्साह पर पानी फिर गया। उनमें एक दबंग साहब भी थे। खड़े हो गये बिल्ली के गले में घंटी बांधने—"सर, एक ही बात बताइए, आप लोगों के ये लड़ाई-झगड़े कब खत्म होंगे?"

दबे स्वरों में, "भइया रे, देखो कोई बात हुई ये भी, लड़ाई-झगड़े कब खत्म होंगे ... लड़ाई-झगड़े कब नहीं हुए और कहां नहीं हुए ...? हम तो एक ही बात जानते हैं, झगड़े की जड़ तीन—जर, जोरू, जमीन। भइया, यहां तीनों का झगड़ा ...।"

एक पत्रकार महोदय ने तत्काल प्र किया, "सर, आपने तो बड़े पते की बा कही है, इन्हें विस्तार से समझाएंगे?"

"अब लो इत्ती-सी बात, वह भी सम झाना पड़े है। भइया, हमारी जित्ती सम में आयी, कह दी।" इसके बाद वे चु होकर बैठ गये। पत्रकारों में फुसफुसाह हुई। एक ने कहा, "डरते क्यों हो?"

मैंने प्रेस क्लब नहीं उजाड़ा

तीसरे पत्रकार सज्जन प्रश्न पूछनेवा ही थे कि सब एकसाथ उठ खड़े हु और बोले, "लीजिए, यह भी आ गये! आइए ... आइए।" जब वे आये त दूसरे नेताजी गायब थे। कुछ लोग भागते हुए प्रेस-क्लब तक बाहर गये। लेकिन त उन्हें सिर्फ भागती हुई एक एमबेसेडर का दिखायी दी, जिसमें झंडा फहरा रहा थ और लगता था कि किसी देवी का पू मंदिर किसी तूफान के सहारे आगे घिसक जा रहा है।

तीसरे नेता ठहरे निहायत दिलचस व्यक्ति। आते ही एक कुरसी पर पाल मारकर बैठ गये और प्रेस-क्लब के कम के चारों तरफ देखकर बोले, "अरे, यह त सचमुच उजाड़ हो गया है!" नेता ने अपने चारों ओर देखने के बाद अगल बगलें झांकीं और फिर एक-एक पत्रका से आंखें मिलाकर सबके अलग-अलग हाल चाल पूछे। हर क्षण लगनेवाला जोर क

ठहाका पूरे प्रेस-क्लब को जानदार बना रहा था। एक पत्रकार ने तभी पूछा, "आप यहां रास्ता कहां से भूल गये ?"

"मैं रास्ता नहीं भूला, मित्र ! मेरा रास्ता ही यही रहा है।" इसके बाद अपनी चिर-परिचित अदा में पूरा भाषण दे डाला, "देखिए, विश्व-यात्राओं के पश्चात यह विदित हो चुका है कि हमारा विराट देश ही इतना सक्षम है कि वह समूचे विश्व को नेतृत्व दे सकता है। हां, अत्यंत विषाद से सुनता हूं . . . वर्तमान राजनीति मतभेदों से परिपूर्ण है . . . और (अपने सिर को झटका दे दिया) हां, है तो सही पर बताये कोई मतभेद कहां नहीं है। विश्व का प्रत्येक देश मतभेद से पीड़ित है . . . एकाकार के लिए और एकरूपता के लिए मनुष्येत्तर जीवन की आकांक्षा ही सटीक हो सकती है। मसलन हम पशु बन जाएं . . . पर नहीं। पशु भी सींग मारते हैं। जहां झुंड होगा, गुत्थम-गुत्था होगी। यह तो नवीन वस्तु नहीं है। हम आपस में लड़ते हैं, लड़ते रहेंगे . . . लेकिन हमारी महान सांस्कृतिक विरासत और विराट भारतीयता का शाश्वत मूल्य हमें मिटने नहीं देंगे। मित्रो, इस मध्याह्न वेला में अपने अति व्यस्त कार्यक्रम को छोड़कर मैं इसलिए यहां चला आया कि कुछ क्षण अपने व्यतीत के रस में डूबकर क्यों न बिता लिये जाएं ! . . . लेकिन भाग्य देखिए, आप सब यहां उपस्थित मिल गये।"

इसी बीच टेबल पर काफी आ गयी। अपनी-अपनी काफी का कप उठाते हुए एक ने वेटर को आवाज दी, "कुछ स्वीट है ?"

दूसरे ने कहा, "सचमुच मिष्ठान्न के बिना काम नहीं चलेगा।" वेटर ने कुछ पेस्ट्रीज लाकर सामने रख दीं। नेताजी ने कहा, "देखिए इस देश का दुर्भाग्य ! यह कहीं मिष्ठान्न होता है ! इसमें अंडा पड़ता है और एक विदेशी वस्तु है यह। वास्तव में मिष्ठान्न का अर्थ है रसमलाई, बरफी, राज-भोग इत्यादि, इत्यादि। प्रेस-क्लब में यह सब रखे जाने चाहिए, बल्कि मैं तो यह कहूंगा कि भारतीय मिष्ठान्न की एक पूरी दूकान होनी चाहिए। मिष्ठान्न देवताओं का प्रिय भोजन है और भारत देवताओं की महान भूमि है।"

प्रेस-क्लब में मिष्ठान्न रखने के प्रश्न पर बहस शुरू हो गयी। कुछ लोग नेताजी के प्रस्ताव से सहमत थे और कुछ ने घोर आपत्ति की—"यदि आपने सारे क्लबों को ड्राई कर दिया है तो बेहतर है कि ये उजड़ जाएं !"

"मैंने ड्राई नहीं किया मित्र, करनेवाले और हैं। मुझे बदनाम मत कीजिए।"

नेताजी ने अपनी दोनों हथेलियां पहले मिलायीं, फिर उन्हें इस तरह अलग किया जैसे कोई खरबूजा काटकर दो टुकड़े कर देता है।

बहुत बेलाग ढंग से वे बोले, "मैं हर प्रसंग पर वार्ता करने को तैयार हूं।"

"आप विदेश कब जा रहे हैं ?"

"कल सुबह के विमान से।"

"इस बार [illegible] ?"

"तेहरान और उसके बाद कंबोडिया।"

पत्रकारों ने बहुत दिलचस्पी के साथ इस प्रसंग को लिखा, क्योंकि दोनों ही देशों में भारी उथल-पुथल मची है। एक ने पूछा, "ईरान के प्रति भारत का दृष्टिकोण क्या होगा ?"

नेताजी बहुत जोर से हंसे, बोले—"मित्रो, मैं किसी प्रेस-कांफ्रेंस के लिए यहां नहीं आया हूं।"

एकसाथ आवाजें आयीं, "ठीक है ... ठीक है। लेकिन, आप काफी तो पूरी पी लीजिए।" अब तक आधा कप काफी ही खत्म हुई थी। उन्होंने कहा, "काफी पीने का मजा तो विदेशों में है। मैंने बहुत-से पब देखे हैं और जिस तरह हमारे देश में काफीहाउस की राजनीति है, वहां पबों की राजनीति होती है। लेकिन उन पबों में कुछ प्रेम की बातें होती हैं, जिंदगी के कुछ किस्से सुने-सुनाये जाते हैं। सुबह-शाम रफ्ता-रफ्ता कैसे मिलते हैं, उसकी बातें होती हैं। आदमी महसूस करता है कि आदमी आदमी से बातें कर रहा है। इस तरह राजनीति की बातें वहां कोई नहीं करता और न किसी नेता को आड़े हाथों लिया जाता है। कभी पता ही नहीं लगता कि उस पब में देश का मंत्री भी बैठा है। तो मित्रो, मैं अपने भारत में भी ऐसी स्थितियां बना दूंगा कि मंत्री और पत्रकार में अंतर नहीं रहेगा।"

तालियों की गड़गड़ाहट से पूरा प्रेस-क्लब गूंज उठा और सभी पत्रकारों ने काफी के प्यालों को ऊपर उठाकर 'चीयर्स' की आवाजें उठायीं और एक ही घूंट में सारी ठंडी काफी पी गये।

"मजा तो इसी जिंदगी में है प्यारे!" नेताजी उठकर प्रेस-क्लब के बाहर चले गये और पत्रकारों का पूरा हुजूम उनके पीछे हो लिया। बायें दरवाजे से नेताजी गये, दाहिने दरवाजे से दूसरे नेताजी आ गये। पत्रकारों की घिग्घी बंध गयी।

मैं इंटरव्यू लेने आया हूं !

सबने हाथ जोड़कर नमस्कार किया और उनके इस तरह अचानक प्रेस-क्लब में आ धमकने से सभी चकित रह गये। प्रेस-क्लब का मैनेजर भागा हुआ वहां आया और अपने साथ एक ऊंची कुरसी भी ले आया। प्रेस-क्लब के सारे बेटर उन सारी बोतलों को जिनमें शराब के लेबल लगे थे, पर पानी भरा था, जल्दी-जल्दी भीतर के कमरे में ले जाकर रखने लगे। नेताजी हल्के-हल्के कदमों से आकर उस विशिष्ट कुरसी पर बैठ गये। सभी शांत थे और किसी के मुंह से कोई बात नहीं निकल रही थी। दरअसल, उन्होंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि आदरणीय नेताजी यहां आ सकते हैं। कुछ देर तक चुप्पी बनी रही तब उन्होंने ही हंसते हुए कहा, "आप लोग बैठ जाइए न ! आज मैं आपका इंटरव्यू लूंगा।" एक हंसी की खासी लहर पूरे वातावरण में तैर गयी।

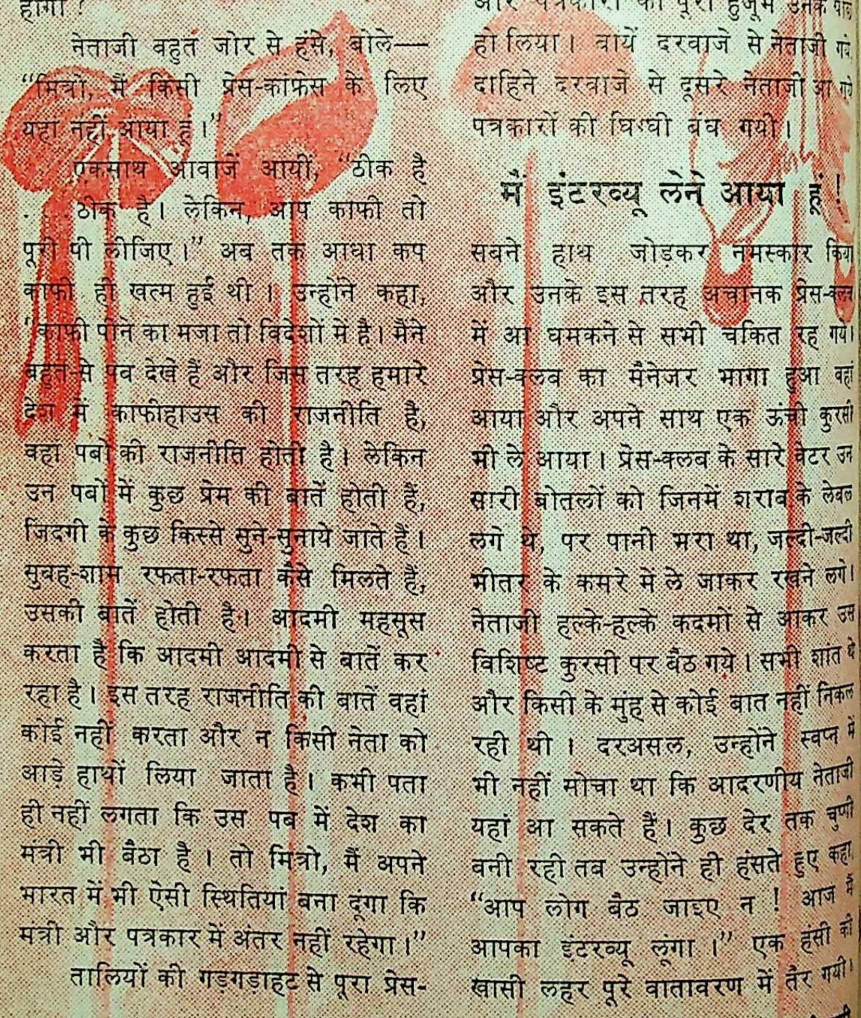

ऐसा लगा जैसे सबकी सांसें वापस लौट आयी हैं। सारे पत्रकार कागज-कलम लेकर तैयार हो गये।

नेताजी ने मुसकराकर कहा, "आप लोग अपनी आदत नहीं छोड़ेगें ?"

एक ने साहस करके पूछा, "आप किस आदत की बात कर रहे है ?"

आदत के विपरीत नेताजी ने जोर से ठहाका लगाया, "भाई, तुम लोगों से तो जरा-सी बात करो तो कागज-कलम लेकर बैठ जाते हो। आज मैं आप सबका इंटरव्यू लेने आया हूं, कागज-कलम तो मुझे साथ लाना चाहिए, लेकिन मेरा दिमाग अभी इतना खोखला नहीं हुआ कि आप लोगों की तरह हर बात लिखूं।"

एक अंगरेजी के पत्रकार ने कहा, "यस प्लीज यस, आस्क द क्वैश्चन ?"

नेताजी ने मुसकराकर कहा, "आप किस अखबार में काम करते है ?"

"आई एम ए सीनियर कॉरसपोंडेंट आव द 'इंडियन लैंड'।"

नेताजी ने उसी तरह मुसकराते हुए कहा, "अच्छा, इसीलिए आप अंगरेजी बोल रहे हैं। हमारे देश की राष्ट्रभाषा हिंदी है और जब आप लोग ही इसे स्वीकार नहीं करेंगे तब काम कैसे चलेगा ?" फिर उन्होंने पूछा, "आप रहते कहां हैं ?"

उत्तर मिला, "इन करौलबाग।"

नेताजी ने फिर एक जोर का ठहाका लगाया—"ओफ-फो, मुझसे गलती हो गयी ! मैं तो सोच रहा था आप मैनचेस्टर या बरमिंघम में रहते होंगे !" सुनकर सारे पत्रकार हंसे। जब हंसी का दौर शांत हुआ तब नेताजी ने पूछा, "आज का मौसम कैसा है ?"

एक गहरा सन्नाटा ! कौन बिल्ली के गले में घंटी बांधे ? धीरे से किसी एक का मुंह फूटा और बोला, "सर, अब आप मौसम की बात न करें तो अच्छा है।"

"नहीं, मेरे पूछने का मतलब था कि दफतरों में आप सब मजे में तो हैं ?"

कोई जवाब नहीं।

"हमने आपको आजादी दे दी है। हम चाहते हैं कि आप निर्भय बनें। आप अब भी डरते हैं, तो भला हम क्या कर सकते हैं !"

पत्रकारों ने आपस में कानाफूसी की और किसी की समझ में नहीं आया कि आखिर वे क्या उत्तर दें। नेताजी उठ खड़े हुए। उन्होंने हंसते हुए प्रत्येक पत्रकार से हाथ मिलाया, कुछ छिटपुट मजाक किये और बोले, "आप मुझसे प्रश्न पूछते हैं, तब देखते नहीं मैं आपसे कैसे प्रश्न करता हूं। अरे भाई, भय त्यागो, थोडे साहसी तो बनो।"

पत्रकार क्या जवाब देते ! नेताजी यूं आये और यूं गये। सब हाथ मलते रह गये। सारे पत्रकार अपनी बेवकूफी पर मातमपुरसी कर रहे थे। तभी साफा बांधे हुए नेताजी प्रकट हुए, दरअसल वे इस बीच विटठलभाई पटेल हाउस

में चले गये थे, क्योंकि वहां उन्हें एक छोटी-सी मीटिंग 'ऐड्रस' करनी थी। आते ही यहां के हालात देखकर वे बोले, "अरे भई, क्या हो गया, सब लोगों के मुंह पर हवाइयां-सी उड़ रही हैं!"

पत्रकारों ने खड़े-खड़े ही दो मिनट पहले जो किस्सा गुजर गया था, सुनाया। नेताजी ने सारे पत्रकारों की भर्त्सना की। उन्होंने कहा, "यदि मैं हाजिर होता तो छक्के छुड़ा देता।" उसके बाद कोई बैठा नहीं। सभी खड़े रहे और नेताजी ने अपना लंबा भाषण शुरू कर दिया––

"जब मैं विद्यार्थी था तब से मैंने लड़ना शुरू किया था। बचपन में अखाड़े में जाया करता था। वहां मैंने पहलवानों से बहुत-सारे दांव सीख लिये हैं। ऐसे-एसे दांव सीखे हैं कि क्या कराटे होगा और क्या जूडो! मैं कड़वे तेल से अपनी देह की मालिश भी करता हूं। हर मंगलवार को हनुमानजी के दर्शन करना मेरा धर्म है, क्योंकि––

मिसाले याद है एक गुर हमें
हमसे मिले बगैर मिलोगे उनसे कैसे

हमें याद है 'बजरंग अखाड़े' के हमारे उस्ताद बार-बार समझाया करते थे–– बेटा हथियाना तो सबसे बड़ी कुरसी और वह न मिले तो बेकार चक्कर में नहीं पड़ना। बस, उसका पाया थामे रहना। जिंदगी भर सुख पाओगे।"

उनकी रौबदार बातों को सारे पत्रकार बड़े मजे से सुन रहे थे। एक ठो हिंदीभाषी पत्रकार ने पूछ लिया, "गुरुदेव! यह हमारा प्रेस-क्लब फिर कब से आबाद होगा?"

उन्होंने ऊपर छत की ओर देखना आरंभ कर दिया, क्योंकि उनके कान में शब्द गूंज रहे थे और उन शब्दों को यदि दोहरा देंगे तो प्रेस-क्लब की जो आज हालत है, कल उससे भी बदतर हो जाएगी। उनकी चुप्पी देखकर पत्रकारों को ऐसा लगा कि जैसे छत में दही का कोई घड़ा लटक रहा है और कन्हैयाजी उसे तोड़ने के लिए उसकी तरफ ताक रहे हैं।

वे उठकर खड़े हुए। उन्होंने सारे पत्रकारों के बीच जो रास्ता बनाना शुरू किया मानो भीड़ छांट रहे हों या किसी नदी में नाव खे रहे हों। तपाक से बाहर निकलकर प्रेस-क्लब के दरवाजे तक वे पहुंच गये। वहां से मुड़कर उन्होंने पत्रकारों को देखा और बोले, "बहरहाल किसी समाचार की जरूरत हो तो जब चाहे प्यार, घर खुला है। खुदा हाफिज।"

पुनश्च: संपादकजी, होली के मूड में कितना आएं-बाएं हमने लिख भेजा है। सेवकराम ओखाड़ू की गलतियां माफ करना और कोई मुसीबत आ जाए तो मुझे अवश्य बचा लेना। हम जिंदगी भर आपकी सेवा करते रहेंगे। **आपका, सेवकराम ओखाड़ू**

द्वारा 'कादम्बिनी'

आंटी

● **डॉ. गौरीशंकर राजहंस**

दरवाजे पर हल्की-सी दस्तक हुई। "कम इन प्लीज।" रीता ने कहा और बेफिक्री से रजाई के नीचे दुबक गयी। होस्टल का बेयरा चाय लाया होगा शायद, उसने सोचा।

दरवाजा हलके से खुला और रीता की आंखें फटी की फटी रह गयीं।

"आंटी आप!" रीता ने आश्चर्य से पूछा।

"हां बेटी। मैं जल्दी में आयी, इसलिए तुम्हें पहले से खबर नहीं कर पायी। अभी हवाई-अड्डे से सीधे तुम्हारे पास आ रही हूं। होटल में केवल सामान पटक दिया है।" सरोज ने पास में पड़ी हुई कुरसी पर बैठते हुए कहा।

कुछ देर तक दोनों गुमसुम रहीं। उन्हें यह नहीं सूझ रहा था कि बात कहां से शुरू की जाए।

फिर सरोज ने ही मौन तोड़ा और कहा, "किसी जरूरी काम से लंदन गयी थी। सोचा, जाते समय दिल्ली होते हुए ईरान लौटूं, क्योंकि बार-बार भारत आने का मौका नहीं मिलता है, फिर जिंदगी का क्या भरोसा?"

रीता को आंटी की बातें बड़ी उखड़ी-उखड़ी-सी लगीं। देखने से लगा, आंटी काफी बुझी हुई-सी थीं। शायद मन पर कोई गहरा बोझ हो। शायद कोई और कारण हो। तीन साल पहले आंटी जब उससे मिलने आयी थीं तो कितना चहकती थीं। तीन साल के दौरान लगता था, मानो वह तीस साल बूढ़ी हो गयी हों।

"पापा कैसे हैं?" रीता ने पूछा।

"ठीक हैं।" सरोज का छोटा-सा उत्तर था।

"आप टायलेट जाएंगी?" यह कहते हुए रीता ने आंटी के उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना कमरे से लगे टायलेट का दरवाजा खोल दिया और इंतजार करने लगी आंटी का।

रीता को कुछ समझ नहीं आ रहा था कि आंटी एकाएक उससे मिलने कैसे चली आयीं। आंटी को देखकर रीता को सारी पुरानी बातें याद हो आयीं। पापा और आंटी साथ-साथ लखनऊ मेडिकल कालेज में पढ़ते थे। बाद में आंटी दिल्ली में नौकरी करने लगीं और पापा देहरादून में प्रैक्टिस। आंटी दिल्ली में एक अस्पताल में डॉक्टर थीं। परंतु 'वीक-एंड' में पापा से 'सलाह' लेने देहरादून आया करती थीं। मम्मी ने शुरू में आंटी के आने का विरोध नहीं किया, परंतु जब आंटी हर 'वीक-एंड' पर आने लगीं, घर में तनाव का वातावरण उत्पन्न होने लगा, पर उसके बावजूद आंटी उसे बहुत

प्यार करती थीं और उसे ऐसा लगता कि उसकी असली मम्मी आंटी ही हों।

पापा ने भी आंटी के आने का विरोध नहीं किया, परंतु उनके आने पर वे बहुत उत्साहित भी नहीं होते थे, क्योंकि मम्मी के प्रति वे पूर्ण वफादार रहना चाहते थे।

धीरे-धीरे आंटी को जब यह महसूस होने लगा कि उनके कारण एक सुखी दंपत्ति के घरेलू जीवन में तनाव बढ़ रहा है, उन्होंने आना कम कर दिया। बाद में कई-कई महीने बीत जाते थे, आंटी नहीं आतीं।

"आंटी कब आएंगी ?" रीता बराबर पापा से पूछा करती थी। पापा चुप हो जाते। मम्मी भी कोई जवाब नहीं देती।

कई साल तक आंटी का कुछ पता नहीं चला। अचानक एक दिन पापा ने बताया कि आंटी ईरान में एक अस्पताल में डॉक्टर हो गयी हैं। इस पर मम्मी ने कोई प्रतिक्रिया नहीं दिखायी।

तभी एक अजीब संयोग हुआ। मम्मी कलकत्ते से अपने माता-पिता के साथ दिल्ली आ रही थीं, जहां से उन्हें देहरादून आना था। अचानक उनका प्लेन 'क्रैश' हो गया और देखते ही देखते पापा की दुनिया उजड़ गयी। मम्मी की उंगली में लगी अंगूठी से ही, जिस पर पापा का नाम लिखा था, मम्मी की लाश की पहचान हो सकी। मम्मी के जाने के बाद पापा बिलकुल गुमसुम रहने लगे। रीता को उन्होंने दिल्ली के एक होस्टल में डाल दिया और खु विक्षिप्त-सा जीवन व्यतीत करने लगे। कई-कई महीनों के बाद वह रीता से मिलने जाते थे, शायद औपचारिकता निभाने।

अचानक एक दिन होस्टल में रीता ने देखा कि आंटी उससे मिलने आयी हैं।

"इतने दिनों तक कहां रहीं आप?" रीता ने उलाहना देते हुए पूछा।

"बेटी, मैंने ईरान में नौकरी कर ली है, लेकिन वहां भी तुम्हें नहीं भूल पायी और इसी कारण जब भारत आयी तो तुमसे मिलने की बड़ी इच्छा हुई। तुम्हारी मम्मी और तुम्हारे नाना-नानी के बारे में सुनकर बहुत सदमा लगा।"

"पापा कैसे हैं?" रीता ने आंटी से इस अंदाज से पूछा था कि आंटी पापा से देहरादून में जरूर मिली होंगी।

सरोज झूठ नहीं बोल सकी। कुछ क्षण चुप रहकर फिर बोली, "मुकेश ने अपना बुरा हाल कर लिया है। तुम्हारी मम्मी के मरने के बाद उसे बहुत सदमा लगा है। प्रैक्टिस भी प्रायः चौपट हो गयी है। मैंने उसे सलाह दी है कि वह मेरे साथ ईरान चला चले। वहां भारतीय डॉक्टरों की बड़ी जरूरत है।"

रीता को याद है कि आंटी के इस प्रस्ताव पर वह गुमसुम हो शून्य में देखती रही—शायद यह सोच रही थी कि मम्मी के बिना पापा का जीवन कितना अधूरा हो गया है।

उस बार जब आंटी उससे मिलने

होस्टल आयी थीं, तो आंटी के आग्रह पर वह उनके साथ देहरादून गयी थी पापा को मनाने कि वे ईरान में नौकरी कर लें और हर साल आकर उसे एक बार दिल्ली देख जाएं। पापा शुरू में तो तैयार नहीं हुए, परंतु बाद में वे आंटी के साथ ईरान जाने को तैयार हो गये।

ईरान के अहवाज़ शहर में पापा ने एक सरकारी अस्पताल में नौकरी कर ली। आंटी भी वहीं नौकरी करती थीं। आंटी और पापा के ईरान चले जाने के बाद पापा हर सप्ताह अपनी लाड़ली बेटी रीता को पत्र लिखा करते थे। फिर महीने में एक पत्र आने लगा। बाद में कई-कई महीनों तक पत्र नहीं आता। हां, एक बात जरूर हुई कि आंटी एक पत्र तभी से हर सप्ताह रीता को भेजती थीं। यह सिलसिला कभी खत्म नहीं हुआ। रीता को एकाएक याद हो आया कि पिछले एक साल से पापा का कोई पत्र नहीं आया था। शायद व्यस्त हों, रीता ने मन में सोचा। परंतु पापा के बदले आंटी हर सप्ताह उसे अवश्य पत्र लिखा करती थीं।

पिछले एक साल से आंटी हर पत्र में रीता को लिखा करतीं कि वह अपने मनपसंद के लड़के से शादी कर घर बसा ले। कभी-कभी आंटी के इस आग्रह पर रीता को बहुत गुस्सा आता था, परंतु आंटी से उसे बेहद लगाव था। अतः आंटी के हाल के पत्रों के जवाब में वह शादी की कोई बात लिखती ही नहीं थी।

रीता पुरानी बातों में खोयी थी कि अचानक आंटी ने टायलेट का दरवाजा खोला। वह अब पहले से ज्यादा ताजी दीख रहीं थीं। फिर भी उनके चेहरे पर एक अजीब-सी थकान थी। आंटी ने बताया कि वे 'अशोका होटल' में ठहरी हैं। अभी जरूरी काम से किसी से मिलने जा रही हैं, लेकिन उन्होंने आग्रह किया कि रीता उनके ईरान लौटने तक उनके साथ 'अशोका' में ठहरे। दो दिन के बाद आंटी वापस ईरान जाने वाली थीं।

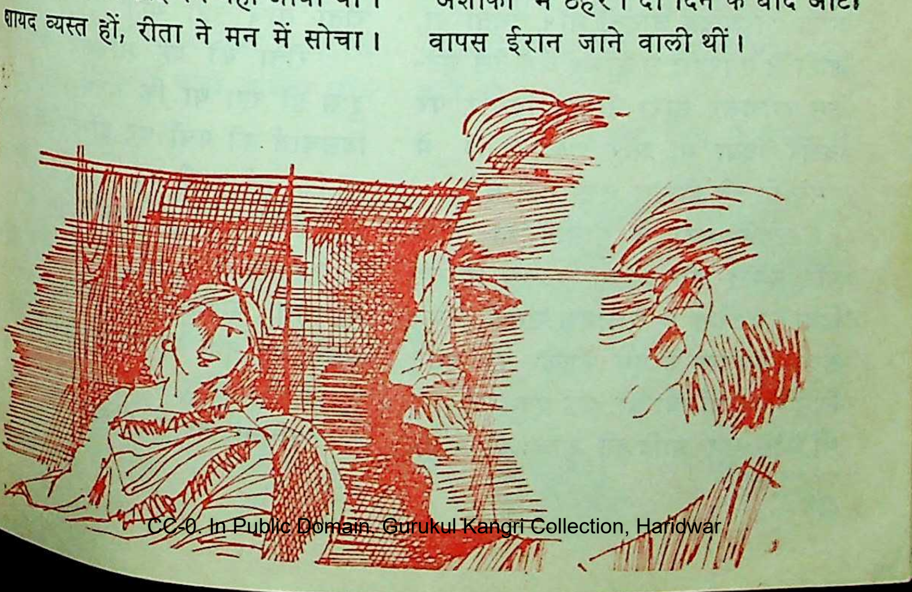

आंटी ने रीता को 'अशोका' के अपने कमरे की चाबी देते हुए कहा, "तुम वहीं मेरा इंतजार करना। मुझे आने में देर हो तब ब्रेकफास्ट, लंच कमरे में ही मंगवा लेना।" अचानक जाते-जाते आंटी ने रुककर कहा, "एक बात पूछूं बेटी?"

"हां।" रीता ने उत्सुकता से कहा।

"क्या कोई लड़का तेरे मन नहीं भाता?"

"आंटी, इसकी भी क्या जल्दी है। थोड़ा-सा निश्चिंत होकर सोच-विचार करूंगी।" रीता ने कुछ शरमाकर और कुछ तुनककर कहा।

"निश्चितता के लिए अब समय कहां है ..." आंटी ने बुदबुदाते हुए कहा मानो वह रीता से नहीं, अपने आप से कह रही हो।

●●

रीता ने जल्दी-जल्दी अपने को तैयार किया और 'अशोका' चली गयी। वह आंटी की आदतें जानती थी। लगता था, आंटी ने एयरपोर्ट से आकर जैसे-तैसे सूटकेस खोलकर सारा सामान बिस्तर पर बिखेर दिया था और जल्दी-जल्दी में उससे मिलने होस्टल चली गयी थीं।

उसने आंटी के सामान को धीरे-धीरे समेटा और वापस सूटकेस में रख दिया। सूटकेस में अचानक उसकी नजर लंदन-अस्पताल के एक फोल्डर पर पड़ी, जिसमें कई पर्चियां थीं, कई एक्सरेज प्लेट थीं और खून आदि की जांच की अनेक रिपोर्टें थीं। रीता ने गौर से उन पर्चियों को देखना शुरू किया। सारी पर्चियां पढ़ने के बाद उसे लगा, जैसे उसके पैरों के नीचे से धरती खिसक गयी हो।

आंटी को ब्रेस्ट कैंसर है और इसके इलाज के लिए ही वह लंदन गयी थीं, परंतु आंटी ने उससे यह सब छिपाया क्यों, रीता सोच रही थी।

रीता को यह सोचकर और भी दुःख हो रहा था कि लंदन-अस्पताल के डिसचार्ज की पर्ची पर डॉक्टर ने लिखा था कि मर्ज काफी बढ़ गया है। रोगी के बहुत दिनों बचने की उम्मीद नहीं है।

शायद आंटी मेरे मन को ठेस नहीं पहुंचाना चाहती हो इसलिए उन्होंने मुझसे यह नहीं बताना चाहा हो, रीता ने सोचा।

पर्चियां वापस फोल्डर में रखकर

उसे सूटकेस की सबसे निचली तह में रीता ने इस प्रकार डाल दिया मानो उसने उन्हें देखा ही न हो। सूटकेस को बंद करने के बाद वह बिस्तर पर लुढ़क गयी और सिसक-सिसककर रोने लगी।

बिस्तर पर लेटे-लेटे अचानक रीता ने सोचा कि वह आंटी के मन को ठेस नहीं पहुंचने देगी। उन्हें नहीं बताएगी कि उसने लंदन-अस्पताल के सारे पर्चे देख लिये हैं। उसने मन को कड़ा किया और नार्मल होने की कोशिश करने लगी।

'आंटी आती ही होंगी, रीता ने मन में सोचा। एकाएक उसे सूझा कि लंदन अस्पताल के एक-दो पर्चे वह उस फोल्डर से निकाल ले और दिल्ली के किसी बड़े डॉक्टर से उन्हें दिखाये। इससे उसे पता चल जाएगा कि आंटी की जिंदगी और मौत के बीच कितना फासला है। और कौन जानता है आंटी बच ही जाए! उसे पहली बार ऐसा लगा कि उसे जीवन में केवल आंटी चाहिए और कुछ नहीं।

आंटी जब बाहर से लौटीं तो काफी थकी और बुझी-सी थीं।

"तुमने कुछ खाया?" आंटी ने पूछा।

"अभी नहीं।"

आंटी ने तुरंत खाने का आर्डर दिया और रीता को बताती रहीं कि उसके पापा और वह ईरान में मजे से हैं। थोड़े-बहुत दंगे वहां हो रहे हैं। परंतु वे अमेरीकनों के खिलाफ हैं। भारतीयों को वे अभी भी बहुत प्यार करते हैं।

रीता दिन भर आंटी के साथ रही। परंतु शाम को उसे होस्टल लौटना जरूरी था। क्योंकि, होस्टल का नियम ऐसा था कि कोई भी लड़की रात में बाहर नहीं रह सकती थी।

●●

दूसरे दिन सवेरे जब रीता 'अशोका' पहुची। आंटी किसी डॉक्टर से मिलने बाहर गयी हुयी थीं लेकिन कमरे की चाबी वे उसके लिए रिशेप्शनिस्ट के पास छोड़ गयी थीं।

कमरे में जाकर रीता ने देखा कि

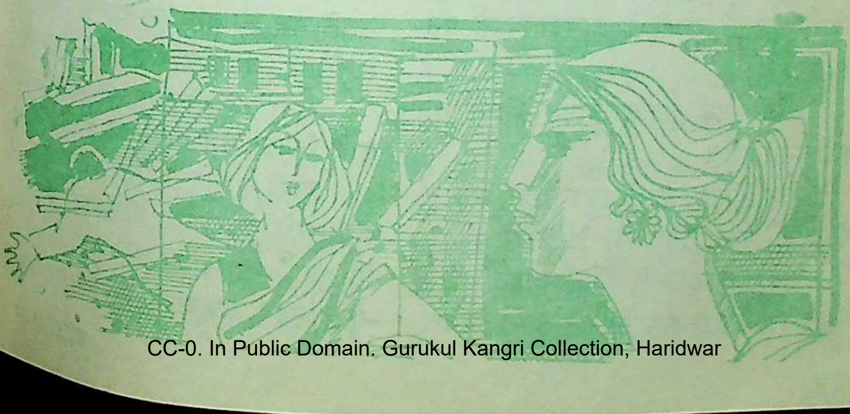

आंटी ने कल की तरह ही सारी चीजें बिस्तर पर बिखेर दी हैं। उसने सब कुछ दुबारा समेटकर सूटकेस में रखा। अचानक साड़ियों के बीच उसे आंटी की एक डायरी मिल गयी। आंटी ने कल रात भी डायरी लिखी थी जो अधूरी-सी थी।

डायरी पढ़कर रीता सन्न-सी रह गयी। लिखा था, . . 'आज रीता से मुलाकात हुई। पुरानी सारी यादें सिमटकर आ गयीं। रीता के होस्टल लौटने के बाद मैं सारी रात रोती रही। उस बेचारी को क्या पता कि उसके पापा अब इस दुनिया में नहीं रहे। वह पिछले साल भूकंप में ही अहवाज में मकानों के मलबों के नीचे दबकर मर चुके हैं। रीता कहती है कि पांच-सात दिन रुक जाऊं। वह यह भी कहती है कि ईरान में दगे हो रहे हैं और ऐसी हालत में मुझे नहीं जाना चाहिए, परंतु चार दिन के बाद मुकेश की बरसी है। यदि मैं वहां नहीं गयी तो मुकेश की आत्मा मुझे माफ नहीं करेगी और अब मेरे लिये जिंदगी में बचा ही क्या है . . .'

रीता को लगा, वह गश खाकर गिर पड़ेगी। उसने जल्दी से डायरी अपने पर्स में डाल ली।

आंटी जब होटल वापस आयीं तो हताश-सी थीं।

दिन किस तरह गुजर गया, यह न रीता को पता लगा और न आंटी को।

सवेरे चार बजे की 'फ्लाइट' थी। रीता ने आंटी से कहा कि वह अपने होस्टल से सीधे एयरपोर्ट पहुच जाएगी।

●●

सुबह होस्टल के पास टैक्सी मिलने में देर हो गयी। रीता एयरपोर्ट पहुंची, उसने सुना आंटी के लिए आवाज दी जा रही थी—'लॉस्ट काल फार मिस सरोज सक्सैना, पैसजर फॉर तेहरान।'

आंटी कस्टम के बाहर बेसब्री से रीता का इंतजार कर रही थीं। रीता दौड़ते हुए आंटी के पास पहुंची और दोनों बिलख-बिलखकर रोने लगीं। रीता ने धीरे-से अपने पर्स से आंटी की डायरी और लंदन हास्पिटल के पर्चे निकाले।

"तुम्हें आखिर सब पता लग ही गया, बेटी।" आंटी की आवाज में दर्द था

रीता ने कोई जवाब नहीं दिया।

"बेटी, मेरा बुलावा आ गया है।"

रीता समझ नहीं पायी कि यह बुलावा हवाई जहाजवालों का है या भगवान का। जब उसने उत्तर नहीं दिया तो आंटी ने उसे झकझोरते हुए कहा, "बेटी, मन को कड़ा करना चाहिए। नियति पर किसी का बस नहीं।"

रीता को अचानक ऐसा लगा कि उसके मन का बांध टूट रहा है। वह आंटी से लिपट, चीत्कार कर उठी—"मम्मी।"

रीता की चीत्कार सुन आस-पास के सारे पैसेंजर उन दोनों को देखने लगे।

आंटी ने धीरे से रीता की पकड़ ढीली की। उसे चूमा और धीरे-धीरे असहाय-सी हवाई जहाज की ओर बढ़ चली।

—ए-१/२७६, सफदरजंग एन्क्लेव, नयी दिल्ली

राजन सों खेलें रंक, रंकन सों राजा राव

• गोपालप्रसाद व्यास

क्षमा कीजिए, होली के लेख को मनहूसियत से आरंभ नहीं करूंगा। आप मानें या न मानें, अपने पुस्तकीय यानी उधार लिये हुए ज्ञान को पाठकों पर उड़ेलना मनहूसियत नहीं तो क्या है? आप पढ़े-लिखे आदमी हैं। अधिक नहीं तो ज्ञानवर्द्धक पत्रिकाओं के मोटे-मोटे लेखों के शीर्षक तो पढ़ ही लेते होंगे। शीर्षक चमकदार हुआ तो जहां-तहां से उसे पढ़ भी डालते होंगे। कम-से-कम होली-दीवाली के विशेषांकों को देखने का अवसर तो आपको मिला ही होगा। इसलिए यदि मैं यह कहूं कि होली वैदिकत्योहार नहीं है और वात्स्यायनके कामसूत्र से पहले इसका कहीं जमकर वर्णन नहीं हुआ है तो इससे आपकी कोई खास ज्ञान-वृद्धि नहीं होगी।

मैं बहुत पढ़ा-लिखा आदमी नहीं हूं परंतु इससे क्या? नाम तो मेरा व्यास है, इसलिए वंश-परंपरा की दुहाई देकर यह तो कह ही सकता हूं कि होलिकोत्सव पुराणों में उल्लिखित मदनोत्सवों का ही विकसित अथवा विकृत रूप है। मन्मथ-मित्र वसंत के शुभागम पर आयोजित होनेवाले ये समारोह ही कालांतर में होली हो गये। पुराणों में वसंत कामदेव का प्रमुख सेनापति या सहायक माना गया है। मत्स्य-पुराण में चैत्र शुक्ला द्वादशी को मदन-द्वादशी कहा गया है। उस दिन सौभाग्य-प्राप्ति के लिए व्रत का विधान है। गरुड़-पुराण में यह व्रत मदन त्रयोदशी के नाम से अग्रहायण की अनंग त्रयोदशी से कार्तिक की अनंग चतुर्दशी तक रखने को कहा गया है। भविष्य-पुराण का मदनोत्सव, जिसे चैत्रोत्सव कहा गया है, मधुमास अर्थात चैत्रमास की त्रयोदशी को मानने का विधान है। इस अवसर पर कामदेव और रति की सिंदूर द्वारा आकृतियों का आलेखन करके, उनका पूजन करने को कहा गया है। ब्रह्मवैवर्त-पुराण में कदाचित सबसे पहले गुलाल का तो नहीं, अबीर का उल्लेख अवश्य आया है। जिसे हम होली का प्रतीक मान सकते हैं—

चंदनागरु कस्तूरी कुंकुम द्रव संयुतम्
अबीर चूर्ण रुचिरं गृह्यतां परमेश्वरे।

किंतु इन सूचनाओं से आपका कोई कल्याण होनेवाला नहीं है, यह मैं अच्छी तरह जानता हूं। कोई चीज कहीं से तो शुरू होती ही है। वह कहां से शुरू हुई, किस तरह हुई और क्यों हुई, यह चंद शोधार्थियों का विषय हो सकता है, सहृदय पाठकों का नहीं। मैं ऐसा लेखक नहीं हूं जो इने-गिने शोधार्थियों के लिए

आपका और अपना समय व्यर्थ ही बरबाद करूं। मैं आपकी रुचि को अच्छी तरह जानता हूं। वसंत ऋतु में बौरायी आम्र-मंजरियों के फलों में ही आपकी आसक्ति है, आप पेड़ गिननेवाले जीवों में नहीं हैं।

फिर हमारे परम-नैतिक प्रधानमंत्री मोरारजी भाई के शासन में आपको मैं वात्स्यायन के कामसूत्र की याद क्यों दिलाऊं ? कैसे कहूं कि प्राचीन ग्रंथकारों ने मदनोत्सव के बहाने किस प्रकार के उत्तेजक आयोजनों का विधान वसंतागम के रूप में किया है ? मैं भास के नाटक 'चारुदत्त' के 'कामदेवानुमान' नामक प्रसंग के बहाने क्यों आपके सोये हुए रागों को असमय उद्दीप्त करूं ? क्योंकि मेरे कहने के बावजूद आप कामदेव के चित्र को सिर पर उठाकर आज नाचते-गाते नगर की परिक्रमा करने को तैयार नहीं होंगे। 'चारुदत्त' की तरह ही 'दशकुमारचरित' में भी वसंतोत्सव पर मदन-पूजा और कामोत्सव का रसमय वर्णन है। पर छोड़िए इसे भी। आपको होली खेलनी है, मदन-पूजा नहीं करनी। प्राचीन लेखकों में यह एक बड़ा दोष था कि वे लिखते समय इस बात का कतई विचार नहीं रखते थे कि उनकी कृतियों के पाठक 'ओनली एडल्ट्स' यानी 'केवल वयस्क ही' नहीं हो सकते। उन्हें इसका अनुमान नहीं था कि बीसवीं शताब्दी में प्रौढ़ोत्तर वृद्ध और वृद्धाएं भी आगे चलकर, चश्मा चढ़ा-चढ़ाकर उनकी कृतियों को पढ़ सकती हैं।

वर्तमान होली का पूर्वरूप

'वर्षक्रिया-कौमदी' नामक पुस्तक में सबसे पहले हमें होली के वर्तमान स्वरूप का पूर्वरूप देखने को मिला है।

इसी प्रकार का वर्णन हर्ष के 'रत्नावली' नाटक में भी मिलता है। इसे पढ़ने पर ज्ञात होता है कि उस समय समस्त पुरजन मस्ती के आलम में झूमते-नाचते, गाते-बजाते सड़कों पर निकल आते थे और राजा भी प्रजा के इस हर्षोल्लास में निकट से न सही, अपने प्रासाद की चंद्रशाला में बैठकर इस अनूठे आमोद-प्रमोद का आनंद लिया करते थे। उधर नागरिकाएं भी उस दिन मदमत्त हो जाती थीं। जो भी उनके दृष्टि-पथ में आता, उनकी सुरंग पिचकारियों और नयन-कटारियों की मार से बचकर नहीं जा सकता था। नगर के चौराहे, गीत-वाद्यों से मुखरित हो उठते थे। गलियां रंग-बिरंगे व सुवासित अबीर-गुलालों से महक उठती थीं। जिसे देखो वह नृत्य-गीत, हर्ष-उल्लास या जोमे-जवानी के रंग से सरोबोर नजर आता था। भूल जाता था कि 'मैं कहां हूं ?'

कहिए, वर्णन रंगीन है न ? निस्संदेह आप भी इस समय कहीं खो गये होंगे।

होली अब या तो पत्र-पत्रिकाओं में रह गयी है या आकाशवाणी और

दूरदर्शन के कुछ कार्यक्रमों में। कुछ पेशेवर संस्थाएं और चंदा-चाटू संयोजक भी सांस्कृतिक कार्यक्रमों के नाम पर जहां-तहां होली का हुड़दंग कर लिया करते हैं। नहीं तो होली के नाम पर शेष रह गयी है मूर्खता और उसको उजागर करनेवाले मूर्ख-महासम्मेलन। लेकिन हमारे ऐसा लिखने से क्या होता है, होली तो आप जलाएंगे भी और खेलेंगे भी।

विभिन्न प्रदेश : विभिन्न प्रथाएं

बंगाल में होली के जलने से पहले वहां एक आदमी का पुतला जलाया जाता है। पहले कहीं-कहीं भेड़ जलायी जाती थी परंतु बलि-प्रथा के विरोधी जब हावी हुए तो उसका भी पुतला जलाया जाने लगा।

यह बात उड़ीसा की है। गुजरात में बलि-प्रथा गांधीजी के जन्म लेने से पहले ही अहिंसक हो गयी। वहां होली में हरे नारियल की बलि दी जाती है और फिर सब मिलकर उसका प्रसाद भक्षण करते हैं। बंगाल में जहां मनुष्य का पुतला जलाया जाता है, वहां गुजरात में जलता तो पुतला ही है परंतु उसे प्रह्लाद की बुआ कहा जाता है और होली के मतवाले उसके साथ तरह-तरह की छेड़छाड़ भी करते हैं।

ब्रज में एक-दो स्थान ऐसे भी हैं जहां जीवित मनुष्य जलती हुई होली में हजारों दर्शकों के सामने घुस जाता है और उसमें घुसकर भी बचकर साफ निकल आता है। प्रह्लाद भी तो होली में घुसकर साफ निकल आये थे न! उत्तर-भारत में जहां होलिका-दहन की कथा प्रह्लाद और उसकी बुआ के साथ जुड़ी हुई है, वहां दक्षिण-भारत में यह अभी भी अपने पूर्वरूप में कायम है। वहां होली नहीं जलायी जाती, कामदेव जलाया जाता है।

उत्तर-भारतवाले जहां होली के बहाने कामदेव को चेतन्य करते हैं, वहां दक्षिण के हमारे भाई उसे उस दिन भस्म कर देते हैं। होली का त्योहार वहां मदन-दहन के रूप में मनाया जाता है। भारत के पहाड़ी प्रदेशों में पांडवी होली होती है। उस दिन पांडव वहां के पांच पुरुषों के शरीर में प्रवेश करते हैं। द्रौपदी भी पीछे नहीं रहती। वह भी एक महिला के शरीर में आ जाती है। ये अभिनव

पांडव और द्रौपदी उस दिन अपने-अपने विचित्र विक्रम का परिचय दर्शकों को कराते हैं। उदाहरण के लिए, जो व्यक्ति वृकोदर भीम बनता है वह बीस-बीस किलो खाद्य-पदार्थ सबके देखते-देखते चट कर जाता है और उस दिन की द्रौपदी जब कड़ाही में पकौड़ियां तलने लगती है तब उन्हें उबलते हुए तेल से बिना पौने या झरने के एक-एक करके, उंगलियों के सहारे निकालती जाती है और पांडवों को खिलाती जाती है। मैं जानता हूं कि आपमें से अनेक इन बातों पर विश्वास नहीं करेंगे।

माफ कीजिए, गलती हो गयी। हमें क्या पता था कि आप इतने संजीदा किस्म के (क्लिष्ट हिंदी में गंभीर-प्रकृति के) व्यक्ति हैं और पवित्र पर्वों और राष्ट्रीय त्योहारों पर भी इस प्रकार की, हलकी-फुलकी दिल्लगी आपको पसंद नहीं।

तो, साहित्य किस दिन के लिए है? बावजूद भारी उपेक्षा के अभी भी कुछ प्राचीन साहित्य सार्वजनिक पुस्तकालयों और निठल्ले साहित्यकारों की अलमारी में कैद है। आज्ञा हो तो कुछ सेवा की जाए। लेकिन, एक शर्त है कि इस साहित्य के नायिका-नायक केवल राधा-कृष्ण ही हैं, कृपया, इनकी जगह पर अपने आपको या अपनी प्रतिभा को मत फिट कर दीजिए, नहीं तो बड़ी गड़बड़ हो जाएगी।

नीचे लिखे कुछ छंद ग्वालकवि के हैं। हमारी ही तरह ग्वालकवि भी कभी मथुरावासी रहे थे। ये कवित्त हमें अपने गुरुभाई मथुरावासी स्वर्गीय श्री पुरुषोत्तमदास सैयां की हस्तलिखित पुरानी पोथी से प्राप्त हुए हैं। उनमें राधा से श्रीकृष्ण का होली खेलने का प्रस्ताव है, उत्तर-प्रत्युत्तर है, मौज है, मजा है, ठसका है, चसक है और होली की गमक है—

सखी-बचन—कौन-से गरीब कौ तू बालक
है बिगरैल?
गैल रोकि लीनी, फेरि पाछें
पछिताइ है।

कृष्ण-बचन—गैया नौ लाख बाबा नंद
कै सुनी कै नाहि?
ताकौ मैं कन्हैया कहा हमकौं
बताई है।

सखी-बचन—ग्वालकवि जौ पै तू लड़ा-
इतौ है नंदजू कौ
तौ पै का बेटी बृषभानु की
भिजाइ है?

कृष्ण-बचन—कै तौ इतै आओ नाहि,
आई तौ बबा की सौंह
खेले बिन होरी आज कैसें जान
पाई है?

सखी-बचन—जानौ हम जानौ तोंहि
बांधि कें नचायौ हतौ
पांइ परि आयो बचि सूधौ हौं
नसीब कौ।
गैया नौ लाख की दिखावै कहा
तालेबरी?

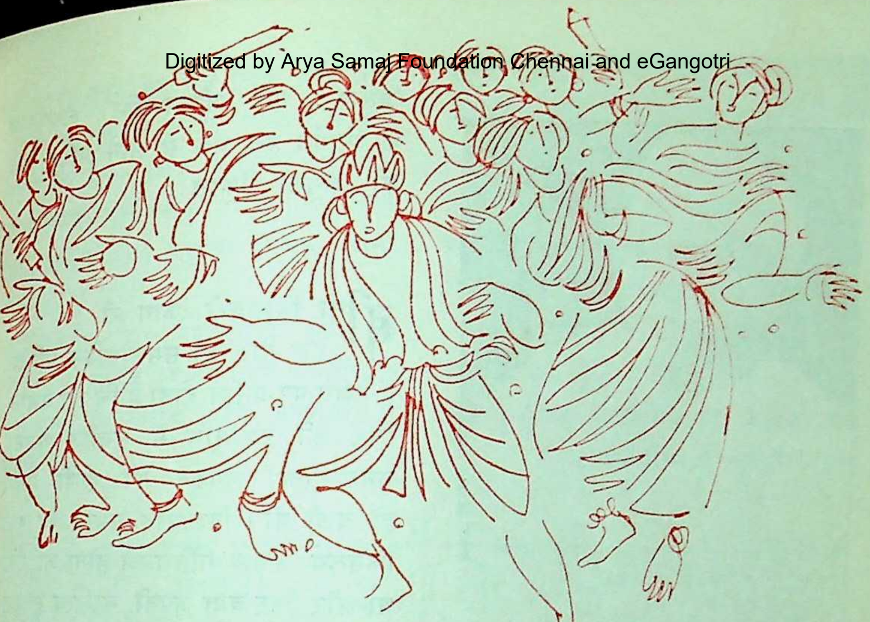

ऐसे कितनेन के जिवावत है जीव कौ।
ग्वालकवि जौ पै होरी खेलन ही चाहत अब,
तौ पै खेल हमसों सब साथ की सरीब कौ।
खेल में बराबरी कौ दावौ होत आयौ सदा,
बेटी ये भूप की, तू बालक गरीब कौ ।

कृष्ण-बचन,—तालेबरी रावरी न छीन लैहें कछू हम,
लागैगी न उड़िकै गरीबी तुम्हें खोरी सौं।
राजन सों खेलें रंक, रंकन सों राजा राव,
है कें निसंक अंक भरें सराबोरी सौं।
ग्वालकवि केती कला खैलौ पै न मानों एक,
जानों घर कठिन परैगौ या मरोरी सौं।
चोरी सौं, के जोरी सौं, के तेरी सौंह ओ री आज,
खेलेंगे जरूर होरी गोरी सौं, किसोरी सौं।

तो हमने भी होली की मूंठ तानी कहीं है और मारी कहीं है। जो समझे उसका भी भला, जो नसमझे उसका भी भला। लेकिन फिलहाल इतना समझ अवश्य लीजिए कि गरीब-अमीर का झगड़ा कृष्ण के समय में भी था। पर वह झगड़ा और आज का झगड़ा !

—बी/५२, गुलमोहर पार्क,
नयी दिल्ली

'प्रसाद : एक जीवन-दृष्टि' लेखमाल के अंतर्गत गत अंक से आगे पढ़िए ले की अगली किश्त : २

बीती विभावरी जाग री !

इस गीत को समसामयिक परिवे में देखने पर प्रतीत होता है कि इस प्रभात- चित्र की पृष्ठभूमि में समष्टि चेतना जनसामान्य, खगकुल की वाणी मुख हो चली थी। नित्यप्रति समाज का प किसलय अंचल गतिशाली होता जा र था और फिर बात अपनी, साहित्य हृत की आती है, जो 'लतिका' की भूमिका प्रस्तुत है। वह हार्द-चैतन्य जो 'अनुभू की अभिव्यक्ति में समर्थ हों', 'दुःख-द जगत् और आनंदपूर्ण स्वर्ग के एकीकरण किंवा समन्वित सहितत्व में साहित्य रूपे आराध्य है—'वह रसमयी लत्तिका ब 'मधुमुकुल नवल रस-गागरी, लिये उ स्थित है, वह 'लतिका' जो काव्य श्री सं न्नता की, 'हृदय की 'अनुकृति बाह्य उदार की अन्यत्र, (कामायनी में) भी रसमूर्ति (श्रद्धा) बनी है 'लतिका घूंघट से चित वन की वह कुसुम दुग्ध-सी मधुधारा प्लावित करती मन अजिर रही,' जिसने था तुच्छ विश्व वैभव सारा।' फिर, ' अब तक सोई है आली, आंखों भरे विहाग री' जबकि उषा की ज्योति ताराघट, देवाहंकारवाले मिथ्या संस्कार शाली उच्चवर्ग के घट, डुबोती जा र

है। तारा डूबने का यह चित्र और नव-ज्योति का उत्कर्ष प्रसाद वांग्मय में कुछ लाक्षणिक है—'नक्षत्र ताराग्रह संकुलापि ज्योतिष्मती चन्द्रमसैव रात्रिः' के अनंत नये अरुणोदय की आस्था में कहा जाता है।"

उनकी 'नवल रसगागरी' और श्री भारतेंदु के 'भरित नेह नव नीर' की विवृत्ति का मार्ग, यथार्थवाद और छायावाद में संकेत है—

"श्री हरिश्चंद्र ने राष्ट्रीय-वेदना के साथ ही जीवन के यथार्थ रूप का भी चित्रण आरंभ किया था।"

"श्री हरिश्चंद्र का आरंभ किया हुआ यथार्थवाद पल्लवित होता रहा।"

"जब सामूहिक चेतना छिन्नभिन्न होकर पीड़ित होने लगती है तब वेदना की विवृत्ति आवश्यक हो जाती है।"

जैसे भाषा के रूप बदलते रहते हैं उसी प्रकार अनुभूति के स्तर, अभिव्यक्ति की विधा और प्रतीक-विधान में यथाकाल परिवर्तन हुआ करते हैं। आंतर-स्पर्शवाले नये भाव लेकर उनका —वस्तुतः' (यथार्थ वाद और छायावाद)

महाकवि माघ ने मयूखों के सहारे दिशाओं द्वारा जलधि से उस अर्क का उद्धार होते देखा जो विवस्वान रूप में रात भर बाड़वाग्नि से संतप्त, वेदना में असहाय रहा। खादिरकाष्ठांगारवत् वैवस्वती वेदना की युगानुकूलित अभिव्यक्ति माघ में हुई है—

विततपृथुवरत्रातुल्यरुपैमयूखैः कलश इव
गरीयान्दिग्मिरा कृष्यमाणाः।
कृतचपलविहंगालापकोलाहलाभिर्जलनि-
धिजलमध्यादेष उत्तार्यतेर्कः।
पयसि सलिलराशेर्नक्तमन्तनिर्मग्नः स्फुट-
मनिशमतापि ज्वालया बाड़वाग्नेः।
यदयमिदमिदानीमंगमुद्यन्दधाति ज्वलितख-
दरिकाष्ठांगारगौरं विवस्वान्।

वे अद्भुत शैवसाधक थे

रत्नशंकर प्रसाद

यहां माघ और प्रसाद के प्रभात की तुलना कथमपि अभीष्ट नहीं: प्रत्युत, काव्योन्मेष के चैतन्य-विकास एवं समसामयिक अनुभूति-अभिव्यक्ति का समन्वय मात्र इंगनीय है। प्रभाती अकाश में तारा का अस्त और सूर्य का उदय युगपत् घटित एक ही सत्य के दो रूप हैं (सचैको द्विमयः-

. . . . प्रत्यभिज्ञा)। आत्मा की संकल्पात्मिका अनुभूति यथारुचि तादात्म्यपूर्वक जो अभिव्यक्ति देती है वही नवरसरुचिरा, ह्लादैकमयी और अनन्यपरतंत्री कवि-भारती होती है, जिससे मुखरित वाङ्मय के इंगित में महामाहेश्वर अभिनव गुप्त की पंक्ति—**पीयूषासवसारसुन्दरमहासाहित्यसौहित्यभाक्** आराध्य है और वह **पूर्णव्याकरणावगाहन शुचिः सतर्क मलोन्मिषत्प्रज्ञा कल्पलताविवेक कुसुमैरभ्यर्च्यहृद्देवताम्** द्वारा प्रापणीय है।

कवि चक्रवर्ती की एक और कृति है—'लक्ष्मीनारायण काव्य।' यह काव्य कोई नारायणी-स्तुति नहीं अपितु एक कवि का जीवनचरित है जो—

सर्वलोकप्रियो धीरःश्रीलः शीलनिधिः सुधीः
अजातशत्रुरद्वेषी जेता जगति पण्डितान्।

वे अल्प-विज्ञापित किंतु प्रतिभा-संपन्न रहे। राजकुल उच्चंकुल के धीरोदात्त नायकों के आधार पर की जानेवाली रचनाओं का युग केवल हिंदी में ही नहीं अपितु संस्कृत में भी समाप्त हो रहा था और सामान्यों ने उनका स्थान लेना आरंभ कर दिया था, इस काव्य से ऐसा लक्षित होता है। यह सांस्कृतिक आंदोलन समकालीन सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तनों के समानांतर—भारतीय महाजाति की बृहत्तर क्रांति का वाङ्मय अंग था। अपना परिचय देते '**सुश्लिष्टाष्टक**' में कवि चक्रवर्ती कहते हैं—

श्री दुःख भंजन कवीन्द्र तनू जनुश्श्री
देवी प्रसाद सुकवेः कवितामवेक्ष्य।
नन्दन्ति चेत्सुकृतिनः कृतिनः कृतिज्ञा
निन्दन्तु तत्कुमतयो नहि कापि हानिः।

सुश्लिष्टाष्टक के प्रत्येक श्लोक में राम और सीता की युगपत वंदना है, यथा—

जयति जनकजा माता
सुखदाता पापहृत्सुतराम्
कल्याणि नीरदाभोल्लसित-
शरीरो दितापयितः

कवि चक्रवर्ती का वह अजस्र साधुवाद एक दिन पराकाष्ठा पर आ पहुंचा। बात यों है कि काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा हिंदी शब्दकोश प्रस्तुत हुआ और इस उपलक्ष्य में वहां एक साहित्यिक उत्सव—'कोशोत्सव' मनाया गया और तदंगभूत एक विराट् कवि-सम्मेलन भी हुआ। उसकी अध्यक्षता कवि चक्रवर्ती ने की। उसमें प्रसाद-काव्यपाठ की समस्या आयी। सहजसंकोच एवं आत्मगोपन के वृत्तिवश किसी सार्वजनिक काव्यपाठ से वे दूर रहा करते थे। ऐसे ही किसी प्रसंग में उनके अंतरंग ईशजी ने एक बार कहा, 'साहु तूं सभाभीरु हउअ' उत्तर था, 'उहे सही, केतनो ताल द चंग पर न चढ़ब।' किंतु, इस अनूठे सारस्वत-यज्ञ में उनका उद्गीथ-रम्य-पदपाठ कैसे हो सकता है, उन्हें कैसे विवश किया जा सकता है, यह गुर, जिन महानुभाव को ज्ञात रहा, उन्होंने अध्यक्ष के कान में भुनुक दिया। फिर, अध्यक्ष-पीठ से घोषित हुआ, 'अब श्रीमान् जयशंकर प्रसाद काव्य-पाठ करेंगे।' यह घोषणा उनके समीप

एक अग्रज-कल्प के अनुल्लघनीय आदेश-तुल्य रही। सुतराम् लज्जासर्ग (कामायनी) उस निःशब्द सभा ने सुना। कामायनी का लेखनारंभ श्रीपंचमी, १९८४ को हुआ और यह उत्सव श्रीपंचमी, १९८५ को संपन्न हुआ। स्तब्ध सभा सुन रही थी, कवि चक्रवर्ती अपने स्नेहास्पद के प्रतिपद-पाठ पर उसकी भाव-संयोजना के अवधान में झूम रहे थे। गंभीर साधुवाद से सभा का विसर्जन करते अध्यक्ष ने उनकी पीठ पर हाथ रख सानंद कहा, "महाकवित्वं च महाकवि त्वम्!" **सुश्लिष्टाष्टक** लिखनेवाले की सामान्य-गिरा भी श्लेषमयी ही हुआ करती थी।

इसी प्रसंग में बाबा शैवध्वज का उल्लेख आवश्यक हो उठा है। वे मेरे पितामह के दीक्षा-गुरु और मेरे अक्षर-गुरु न्यायाचार्य श्रीगिरीश शुक्ल के पिता थे। सतत शिवार्चनमय उस आजानुबाहु दीर्घ तपस्वी का असाधारण व्यक्तित्व समकालीन समाज की दृष्टि से विस्मयतः क्रांतिकारी था। धर्म और समाज की घिसी-पिटी लीकों और पर्यूषित मान्यताओं—रूढ़ियों के विपरीत धर्म के कलानुसारी देशोपादेय एक नये रूप की वे कल्पना करते थे। अपनी विधवा हुई कन्या को उन्होंने श्रुतियों का अध्ययन कराया। तब नारी वेदाध्ययन की अधिकारिणी नहीं थी।

सुतराम् पंडित समाज ने इसका घोर विरोध किया। उन्होंने स्वहस्तेन जीर्ण प्राचीन पोथियों से आदि-वाङ्मय-कल्प संहिताओं का लिपि-शोध किया। उनका यह कृतित्व अधुनापि सरस्वती भवन में रक्षित है। भस्मावगुंठित रुद्राक्ष के उष्णीश और भुज-बंधों, मालाओं से विभूषित विशाल आरक्तिम नेत्रोंवाले उस दीर्घ तपस्वी की भाव-छाया अग्निमित्र इरावती के पतंजलि-चरित में उभरकर आयी हो तो क्या विस्मय! अति शैशव में उनकी झांकी पा चुका हूं। उनका गुरु-गंभीर त्रिशूल बड़ा चमकीला था, जिसे लेने का उद्योग करते ही वे मुझे गोद में ले लेते थे।

वे अद्भुत शैवसाधक थे। कभी तीन दिन निराहार, कभी कुछ दिन गंगोदक तो कभी कुछ दिन बिल्वपत्र पर रह जाते और फिर कभी कच्छपमांस से तो कभी मीन से पारण करते। आयुपर्यंत मेरे टेढ़ीनीम के शिवालय में उन्होंने मेरे परप्रपितामह द्वारा स्थापित गणपतेश्वर-लिंग की अर्चना की।

(क्रमशः)

मृत्यु-शय्या पर पड़े एक वृद्ध धनी अपनी वसीयत लिखा रहे थे। अंत में उन्होंने अपनी इच्छा प्रकट की—"मेरी मृत्यु बाद वियेना का फिलहार्मोनिक आर्केस्ट्रा ही शोक-धुन बजाये।"

"आप कौन-सी धुन सुनना पसंद करेंगे?" एटर्नी ने तुरंत उत्सुकता से पूछा।

वसंत-गीत

नयन खुले आज अंधकार में
चिड़ियों की कविताएं कानों से प्राणों तक
भीतर ही नहीं, व्याप्त विस्तृत मैदानों तक
कंठ-लहर कमला की धार में

पौ अभी फटी नहीं कि स्वर से दिन-अभिनंदन
गेहूं की बाली पर विचर रहा गीत-पवन
कुहुक रही कोकिला कछार में

खड़ा डाकबंगले के प्रांगण में मैं विभोर
सांसों को छू देती नव वसंत की हिलोर
मादकता मंजरित पुकार में

जो करता मित्र को जगा दूं मैं इसी समय
किंतु अभी बहुत देर होने में सूर्योदय
संभव है दोनों हों प्यार में
नयन खुले आज अंधकार में

--पोद्दार रामावतार अरुण
कवि निवास, समस्तीपुर (विहार)

फागुनी गीत

बहुत दिन के बाद आये
यार फागुन गांव में
खैर अब,
रुकना यहां कुछ दिन
कहीं कल मत चले जाना
तुम वहां शहरा रहे हो
और यहां सरसों सयानी हो गयी है
लाड़ला टेसू उपेक्षित घूमता है
गांव भर को, एक कहानी हो गयी
हंस दिये बस
तुम बड़े ही गैर जिम्मेदार हो फागुन
खैर अब, सीधे चलो घर
शाम को चौपाल पर आना

तीन में के तेरह में

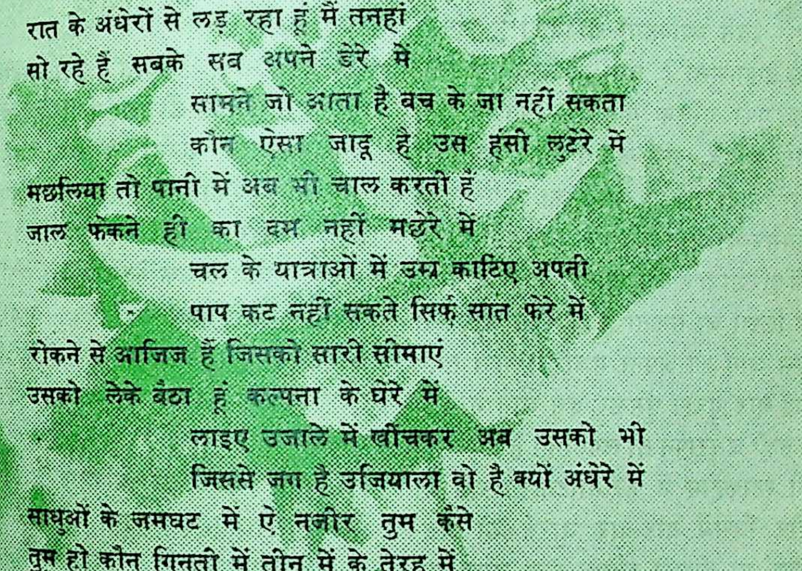

रात दिन का अंतर है चित्र और चितेरे में
चित्र रोशनी में है चित्रकार अंधेरे में
एक दिवाना उलझा है काले-काले केस की लट से
जंग अब भी जारी है सांप और संपेरे में

रात के अंधेरों से लड़ रहा हूं मैं तनहां
सो रहे हैं सबके सब अपने डेरे में
सामने जो आता है बच के जा नहीं सकता
कौन ऐसा जादू है उस हंसी लुटेरे में

मछलिया तो पानी में अब भी चाल करती हैं
जाल फेंकने ही का दम नहीं मछेरे में
चल के यात्राओं में उम्र काटिए अपनी
पाप कट नहीं सकते सिर्फ़ सात फेरे में

रोकने से आजिज हैं जिसको सारी सीमाएं
उसको लेके बैठा हूं कल्पना के घेरे में
लाइए उजाले में खींचकर अब उसको भी
जिससे जग है उजियाला वो है क्यों अंधेरे में

साधुओं के जमघट में ऐ नजीर तुम कैसे
तुम हो कौन गिनती में तीन में के तेरह में

——नजीर बनारसी

पाण्डेय हवेली, वाराणसी

सच बताना
याद आते हैं कभी वे
चांदनी पी, खूब मस्ताये हुए ठुमके
भाभियों की छेड़ सुन
ठिठके कुंआरे पांव शरमाये हुए ठुमके
हंस दिये बस
तुम बहुत मक्कार हो फागुन

यार प्यारे
तुम वहां भरमा रहे हो
रंग मन के ही टिकाऊ हैं
शहर अब लौट मत जाना

——कुमार अनुपम

६४/२ पंचशील, गली नं. १, गढ़ रोड, मेरठ

ऊपर : मास्को में अंतरिक्ष-प्रदर्शनी के प्रवेश-द्वार पर निर्मित प्रतीक

वहां मात्र लेखक के रूप में जिया जा सकता है!

• राजेन्द्र अवस्थी

रूस और रूस में इक्कीस दिन !

इतने व्यक्तियों से मिला हूं, इतना कुछ देखा-सुना है, घूमा हूं, लिखने के लिए एक पूरी पुस्तक कम है—अनुभव कुछ मीठे भी हैं, कुछ कड़ुए भी। किसी भी साम्यवादी देश में जाने का मेरा पहला अवसर था और यदि एक स्वतंत्र नागरिक की परिभाषा में कहा जाए तो बहुत आसानी से लिखा जा सकता है कि सीधे भारत से रूस जाने का अपना मजा है; मेरी तरह कई बार यूरोप घूमकर रूस जाने में कहीं न कहीं अधूरापन तो लगता ही है। यूनेस्को की स्टाकहोम में जो मीटिंग हो रही थी और जिसमें बार-बार भारत को 'थर्ड-वर्ल्ड' या तीसरी दुनिया कहा जाता था, वहां मैंने एक मूल प्रश्न उठाया था कि फर्स्ट-वर्ल्ड या पहली दुनिया कौन-सी है ? जब तक आप 'फर्स्ट-वर्ल्ड' और 'सेकेंड-वर्ल्ड' का फैसला नहीं कर लेते 'थर्ड-वर्ल्ड' का भी फैसला नहीं हो सकता, लेकिन राजनीति हर जगह हावी है। भारत-जैसे विशाल और महान देश को राजनीति की दीमक ने जिस तरह कुतरना शुरू कर दिया है, उसमें इसे 'थर्ड' क्या 'फोर्थ-वर्ल्ड' भी आसानी से कहा था जा सकता है और इस तीसरी और चौथी श्रेणी का दर्द झेलना हमारी नियति बनी रहेगी।

रूस में बहुत-सी ऐसी चीजें हैं, जिनका अनुकरण हमें करना चाहिए। मसलन साम्यवादी एकाधिकार सत्ता के बावजूद लेखकों और सर्जकों का सम्मान। रूस के हर महान लेखक के नाम को सुरक्षित रखने के लिए वह सब किया गया है, जो संभव है। आज के लेखकों के लिए एक विशाल लेखक सम्मेलन 'राइटर्स यूनियन' है।

सन १९३४ में मेक्सिम गोर्की ने इस संगठन को जन्म दिया था। अब रूस के १५ गणराज्यों में १५ शाखाएं हैं और मास्को में समूचे रूस के लेखक संगठन का मुख्य कार्यालय है। यह संगठन एक स्वतंत्र स्वायत्त संस्था है। देश और विदेश से इसके संबंध हैं। संगठन की ओर से समूचे रूस में ६० पत्र और पत्रिकाएं, जिनमें दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्र सम्मिलित हैं, प्रकाशित होते हैं। संगठन प्रकाशन संस्थाओं का भी संचालन करता है और यदि यह कहा जाए कि जो लेखक 'रूसी लेखक संगठन' का सदस्य नहीं है उसकी पुस्तकें छपना कठिन होगा तो

अत्युक्ति नहीं होगी। लेखक संगठन अपने सदस्यों की मौलिक कृतियों के प्रकाशन और उनके अनुवाद में पूरी तरह मदद करता है। लेखकों के लिए एकांत स्थानों में ऐसे निवासों की व्यवस्था की जाती है, जहां जाकर वे आराम से ठहर सकते हैं और बहुत कम व्यय में खा-पी सकते हैं। रहने और खाने-पीने के लिए लेखक को ऐसे स्थानों में महीने भर के लिए केवल १२० रूबल देने पड़ते हैं। रूसी जीवन-प्रतिमान की दृष्टि से यह राशि बहुत कम है। ग्रीष्म के दिनों में लेखक अपने परिवार के साथ-जाकर एक महीने तक इन घरों में ठहर सकते हैं। यह एक ऐसी व्यवस्था है, जिसके लिए कम से कम भारत का हर लेखक तड़पता है।

लेखन अपने आप में व्यवसाय

लेखन सामान्य तौर से रूस में अपने आप में एक व्यवसाय है—यानी लेखक स्वतंत्र लेखन के सहारे जी सकता है। बातचीत के दौरान जब मैंने 'लेखक संगठन' के सदस्यों को बताया कि मेरी १५-२० पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं और उनमें से तीन-चार विश्वविद्यालयों में पाठ्य-पुस्तकों के रूप में पढ़ायी जाती हैं, तो उनका तत्काल उत्तर था, 'यू आर ए ग्रेट मैन'!

उनकी दृष्टि सही थी। एक पुस्तक की जहां ५० हजार प्रतियां पहले संस्करण में छापी जाएं और लेखक को अच्छी-खासी और ईमानदारी से रायल्टी दी जाए, वहां उनका सोचना गलत नहीं है। इतनी पुस्तकें लिखने के बाद तो कोई भी रूसी लेखक नौकरी की तलाश नहीं करेगा। भारत में किसी से कहिए आप लेखक हैं, तो वह तत्काल प्रश्न पूछेगा, 'यह तो ठीक है, लेकिन आप करते क्या हैं?' यानी लेखक

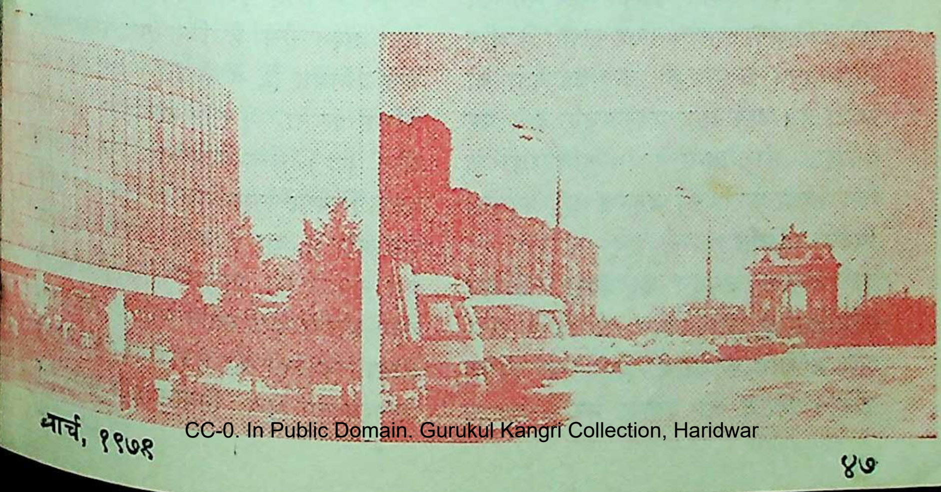

बायें: फ्रेंच चित्रकार द्वारा निर्मित मास्को का बेजोड़ पेनोरमा। दायें: इसी के पास है सड़क पर इंडिया गेट की तरह बना प्रवेश-द्वार जिसका संबंध नेपोलियन से है

होना यहां व्यवसाय नहीं है ! लेखकों को वैसी सुविधाएं भी इस देश में नहीं दी जातीं। मेरे मन में रह-रहकर यह प्रश्न उठा है कि एक साम्यवादी एकाधिकार सत्ता के देश में भी लेखक को इतनी सुविधाएं उपलब्ध हैं। यही स्थिति अन्य कलाओं की है—एक-एक बैले महीनों प्रदर्शित होता रहता है। नाटकों, कठपुतली के तमाशों, कवि सम्मेलनों और ओपेरा या लोक-नृत्यों की कमी यूरोप के 'नाइट-क्लबों' ने बहुत सार्थक ढंग से पूरी की है।

रूसी लेखक संगठन नये और उभरते लेखकों को प्रोत्साहन देता है, कर्ज भी और असमय अवसान हो जाए तो लेखक के परिवार की देखभाल भी पूरी तरह की जाती है। रूसी लेखक संगठन में आठ हजार से अधिक सदस्य हैं। संगठन का सदस्य होना आसान नहीं हैं—तीन सदस्यों द्वारा सिफारिश किये जाने के बाद १८ सदस्यों की एक समिति उस लेखक के समूचे लेखन और उसकी सर्जनशीलता की भली प्रकार जांच-परख करती है और संतुष्ट होने के बाद ही उन्हें सदस्यता दी जाती है। एक बार सदस्य बन जाने पर प्रकाशन और अन्य सभी सुविधाओं के लिए चिंता करने की जरूरत नहीं पड़ती।

विदेश समिति

रूसी लेखक संगठन की जहां क्षेत्रीय समितियां हैं, जो केंद्रीय समिति के संरक्षण में काम करती हैं, वहीं एक 'विदेश समिति' भी है, जो दुनिया भर के लेखकों से संपर्क रखती है, वहां की साहित्यिक गतिविधियों की जानकारी एकत्रित करती रहती है, विदेशी पुस्तकों का प्रकाशन, विदेशी लेखकों को आमंत्रण और रूसी लेखकों को विदेशी भाषाओं में रूपांतर आदि का कार्य इसी समिति के जिम्मे है। सुविधा के लिए 'विदेश समिति' ने अपने-अपने क्षेत्र बांट लिये हैं, उदाहरण के लिए मीरा शैलगानिक एशियाई और अफरीकी देशों के लेखकों से निरंतर संपर्क रखती हैं। मीरा कई बार भारत आ चुकी हैं और वे बहुत अच्छी हिंदी बोल लेती हैं। उनके आधीन १० विशेष अधिकारी हैं। मृदुभाषी, शिष्टाचार से परिचित और लेखकों के प्रति सहृदय मीरा शैलगानिक किस सीमा तक भारतीय हैं और किस सीमा तक रूसी, इसके बीच इतनी बारीक विभाजन रेखा है कि आसानी से उसका पता नहीं लगाया जा सकता। मीरा जी ने ही मुझे बताया कि रूसी लेखकों को लेखन के लिए पूरी स्वतंत्रता है—केवल तीन प्रश्न ऐसे हैं जिन पर संवैधानिक रूस प्रतिबंध हैं, वे हैं (१) युद्ध के लिए प्रेरित करना (२) मानविक भेदभाव और (३) सैन्य-व्यवस्थाओं का प्रगटन। इनके सिवाय सामाजिक रूप से एक प्रतिबंध और है, वह है अति यौन संबंधों और प्रेम संबंधों का प्रकाशन। प्रोर्नोग्राफी के लिए रूस में कोई स्थान नहीं है। यह बहुत सीमा तक सही भी है। आदमी की पहली आवश्यकता भूख, निवास और कपड़े की

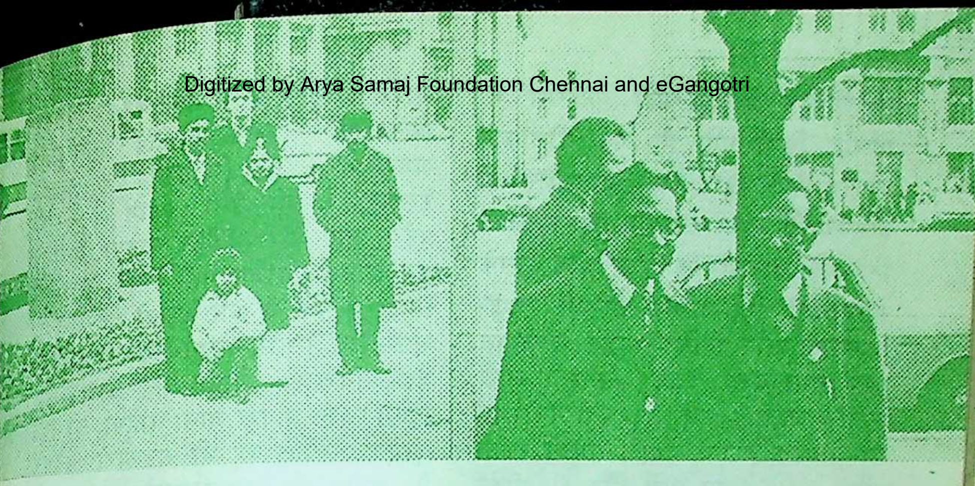

बायें : मास्को में एक भारतीय परिवार। दायें : रेड स्क्वायर के सामने गोर्की स्ट्रीट में पोदार्की (उपहारगृह) के पास लेखक अपने मित्र और प्रसिद्ध कवि डॉ. मधु के साथ

है; उसके बाद यौन दृष्टियों को देखा-परखा जा सकता है। वैसे भी यह ऐसा प्रश्न नहीं है, जिसकी सार्वजनिक चर्चा आवश्यक है। इनके बाद लेखक स्वतंत्र और अपने को पूरी तरह अभिव्यक्त कर सकता है; इस बात में यद्यपि कई प्रश्न चिन्ह लगाये जा सकते हैं; उनकी चर्चा यहां समीचीन नहीं होगी।

समूचे लेखक संगठन के सचिव हैं, रूस के लोकप्रिय लेखक रोस्देसवेन्सकी। प्रथम सचिव हैं श्री मारकोव और फिर ४२ और सचिव हैं, जो पूरा काम देखते हैं। इनमें विदेशी मामलों के सचिव अमरीका में रूस के भूतपूर्व राजदूत श्री फेडोरेन्को हैं। सचिवों का चुनाव प्रत्येक चार वर्ष में होता है।

रूस में इंडिया गेट

रूस में मास्को स्थित दो और ऐसे उपादान हैं, जिनके बिना सारी बात अधूरी रह जाएगी—(१) पेनोरमा और (२) अंतरिक्ष सफलताओं की प्रदर्शिनी। पेनोरमा शायद तीन चौथाई दुनिया की अपनी यात्रा में देखी ऐसी चीज है, जिसकी तुलना नहीं की जा सकती। दिल्ली की तरह मास्को में भी एक 'इंडिया गेट'-जैसा बना हुआ स्मारक है। इस स्मारक का संबंध नैपोलियन से है, उसने रूस को जीता था, लेकिन सिर्फ साढ़े चार महीने मैं वहां ठहर सका। उस समय रूसी कमांडर जनरल थे मार्शल कुतुजुब। ६८ वर्ष की आयु में सन् १८१३ में उनका अवसान हो गया। ७ सितंबर १८१२ में मास्को के पास बोरोजिनिमो का युद्ध हुआ था। तब बोरोज़िनिमो एक गांव था, अब वह वृहत्त मास्को शहर का एक हिस्सा है। इस युद्ध में ६० हजार फ्रांसीसी और ४५ हजार रूसी सैनिक मारे गये थे। अनेक संघर्षों के बाद अंततः रूसी सेना

विजयी हुई थी और यहां 'पेनोरमा' का निर्माण किया गया है। एक गोलाकार इमारत के भीतर 'थ्री डायमेंशन'-सा दीखनेवाला एक फ्रांसीसी चित्रकार की निहायत बारीक चित्रकला और उसके साथ लगे नदी-नालों, सैनिकों, युद्ध-उपकरणों और विभिन्न युद्धों के जीवंत चित्र तथा दृश्य देखकर सचमुच आंखें फटी रह जाती हैं। सन १९१२ में 'पेनोरमा' का निर्माण कराया गया। समूची रंगीन पेंटिंग ११५ मीटर लंबी और १५ मीटर चौड़ी है। इसका वजन ५ टन है। सचमुच इस महान् उपलब्धि का अनुभव देखकर ही किया जा सकता है।

दूसरी चीज है 'अंतरिक्ष में विजय।' ठोस फौलाद के बने एक लंबे प्रतीक के भीतर यह एक स्थायी प्रदर्शनी है। जिसमें चंद्रमा की ओर भेजे गये सभी रूसी माडलों को उनके सही आकार में देखा जा सकता है। यहीं ठीक उसी आकार में सोयुज—४ भी है, जो अमरीका के-से अंतरिक्ष में मिला था। समूची अंतरिक्ष यात्रा के माडल, उसके सही आकार में और अंतरिक्ष यात्राओं की समूची प्रबंध-विधियों को एक साथदेखने का अपना अनुभव है। मैं मानता हूं कि रूस के बच्चे भी भाग्यशाली हैं जो एक ओर अंतरिक्ष-विज्ञान को देखते हैं तो दूसरी ओर पेनोरमा को देखकर 'युद्ध से घृणा' के पाठ को सही संदर्भों में सीख सकते हैं।

चमक-दमक नहीं

यह तो रहीं रूसी गणराज्य की महान उपलब्धियां, मैंने कहा था, कुछ ऐसी बातें भी हैं जो चुभती हैं, मसलन, भारत की तरह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता; किसी भी रेस्तारां में जाकर मनचाही जगह में बैठना (आपको एक खाली रेस्तारां में भी उसी स्थान में बैठना पड़ेगा जहां वहां का बेटर चाहेगा, अन्यथा वह आपको भोजन नहीं देगा), लंच या डिनर में कम से कम डेढ़-दो घंटे लगना, अफसरशाही और सरकारी-तंत्र से उभरती हुई अनिच्छा; यानी यदि टैक्सीवाला किसी स्थान में नहीं जाना चाहेगा, तो नहीं जाएगा, क्योंकि वह भी सरकारी नौकर है; यूरोप की तरह बाजारों में न चमक-दमक है और न 'कंज्यून्यूमर सोसाइटी' की प्रतिद्वंद्विता, परिणाम-स्वरूप रद्दी टूथपेस्ट, बेकार ब्लेड, वैसा ही कास्मेटिक्स, होटलवालों का उद्दंड व्यवहार, और जहां न दिखाने की इच्छा हो वहां 'इट इज अंडर रिनोवेशन' का आसान मलहम! बहुत कुछ खामियां हैं यूरोपीय देशों की तुलना में, लेकिन भारत की तुलना में रूस सौ फीसदी आगे है और अब धीरे-धीरे अपने द्वार पश्चिम की ओर खोल रहा है। शायद पांच बरस बाद ही रूस का एक बदला हुआ नक्शा सामने होगा, शायद यह वह रूस होगा जो पश्चिम से मुकाबला करेगा, क्योंकि संघर्ष के कदम उसी ओर हैं और जिस दिन ऐसा होगा रूसवासियों को 'डालर शॉप' के लालीपाप नहीं चाटने पड़ेंगे, वे स्वच्छंद होकर शापिंग कर सकेंगे।

अंत में एक बात कह देना मैं जरूरी समझता हूं—रूसियों के मन में भारत के प्रति अगाध प्रेम है और हर भारतीय को वे अपना भाई समझते हैं, हमारे भाई-चारे के रिश्ते बने रहना चाहिए—दस्वीदानियां! ●

जवाब चाहिए बीस सूत्री कार्यक्रमों का

● रामेश्वरदयाल

राष्ट्र-निर्माण के लिए चाचा नेहरू ने नारा दिया—'आराम हराम है', लेकिन काहिलों ने इस नारे में समुचित सुधार करके कहा—'आराम ही राम है'। और आराम का साम्रज्य बढ़ता गया जीवन के हर क्षत्र में और साथ ही घुसती गयी काहिली और कामचोरी।

लेकिन बकरे की मां कब तक खैर मनायेगी! बीस या पचीस-सूत्री नये कार्यक्रमों में सुस्ती, कामचोरी, नालायकी के खिलाफ जिहाद बोल दिया गया है। अगर आपकी कामचोरी ने बीस वर्ष पूरे कर लिये हैं तो खतरे की घंटी कभी भी बज सकती है। अब खतरे से मुक्त वही समझे जाएंगे जो योग्य होंगे। योग्यता की जांच के लिए निम्नलिखित प्रश्न-पत्र तैयार किया गया है। इसमें उत्तीर्ण व्यक्तियों को ही भविष्य में सेवारत रखा जाएगा—

प्रश्न–१ : बाबा तुलसीदास ने लिखा है—

आपु गये अरु घालहिं आनहिं
जे कछु सत मारग प्रतिपालहिं

अगर आप रामायण पाठ नहीं करते हैं तो संदर्भ के लिए नीचे की शायरी देखिए—

'हम तो डूबे हैं सनम तुमको भी ले डूबेंगे।'

कार्यालय में कुछ व्यक्ति ऐसे भी होते हैं जो खुद तो काम करते ही नहीं, दूसरे के काम में सक्रिय बाधाएं डालते हैं। उदाहरणार्थ, आपका इकलौता पेन मांगकर (धर्म) पत्नी को पत्र लिखना या पेन छिपाकर आपको लेखन-कार्य से मुक्ति दिलाना, फाइल छिपा देना, आपके पास आकर या आपके ही सिंहासन पर बैठकर बातचीत करना, आदि। आप इनसे किस प्रकार छुटकारा पाकर काम करेंगे ?

(क) पेन देने से मना करके।

(ख) झगड़ा करके या प्रेम करके।

(ग) उदासीन बरु रहिय गोसाईं, खल परिहरिय श्वान की नाईं, का अनुसरण करके।

(घ) भुस में आग लगाय जमालो दूर खड़ी—का अनुसरण करके।

प्रश्न–२ : उपर्युक्त प्रकार के व्यक्ति ऋणात्मक होते हैं, अर्थात कार्य की गति को घटा देते हैं। क्या आप भी उनमें से हैं या होना चाहते हैं?

प्रश्न–३ : आप पानी पीना चाहते हैं और कूलर दूर है तो—

(क) आप पानी लानेवाले को ढूंढ़ना पसंद करेंगे या स्वयं गिलास लेकर कूलर तक जाना?

(ख) क्या आपको पानी पीकर आने पर कुरसी यथास्थान मिल जाएगी?

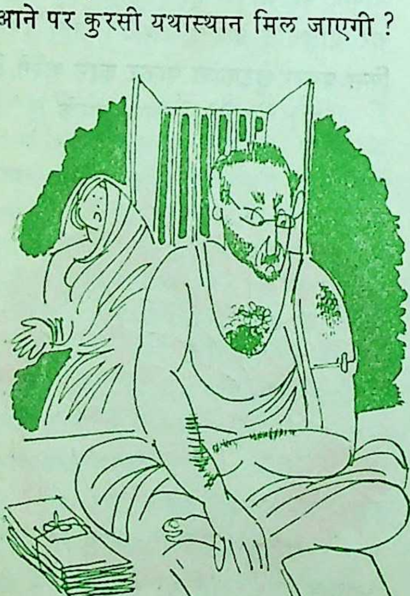

(ग) यदि कुरसी यथास्थान नहीं मिलेगी तो कितनी दूर मिलेगी?

टिप्पण—ध्यान रखिए कि कुरसी तभी गायब हो सकती है जब आप उसे छोड़कर मटरगश्ती करने चल दें। कुरसी आपको अमानत के रूप में सौंपी गयी है और उसका गायब होना आपकी लापरवाही व्यक्त करता है। बॉस से शिकायत करने पर आपकी इन पोलों के खुलने का खतरा है। यह भी हो सकता कि आप शिकायत के लिए जाएं और कुरसी किसी दूसरे लोक (कार्यालय) में पहुंच जाए। न मर्ज रहे, न मरीज!

प्रश्न—४ : कवि नजीर अकबरावादी ने कहा है—

मन तो चाहे हरि भजे तन-चाहे आराम
दुविधा में दोनों गये माया मिली न राम

कार्यालय में भी कभी-कभी ऐसी स्थिति आती रहती है। बॉस की मिजाज-पुरसी करने पर यार लोग 'चमचे' की उपाधि देते हैं और न करने पर कंपनी का घाटे में जाने का खतरा रहता है।

कुछ व्यक्ति काम न करके मौज करते हैं और आप काम में दबे जा रहे हैं।

उपर्युक्त परिस्थितियों में आप किस मार्ग का अनुसरण करेंगे और क्यों?

प्रश्न—५ : बाबा तुलसीदास ने लिखा है—

घर राखे घर जात है घर छांड़े घर जाए

बाबा का तात्पर्य इससे कुछ भी रहा हो, किंतु इस प्रश्न के लिए पहले नंबरवाला

घर तो वह है जो आपकी श्रीमतीजी के कब्जे में है और दूसरे नंबरवाला घर वह है जो आपके बॉस के चार्ज में है। तीसरे और चौथे नंबर के घर भी यही हैं, किंतु क्रम आप अपनी सुविधानुसार बदल सकते हैं।

यदि दफ्तर के पुर्जे बनकर रह गये तो श्रीमतीजीवाले घर का बंटाढार हो जाएगा और अगर आप श्रीमतीजी के ही अर्दली बनकर रह गये तो घर नंबर दो से छुट्टी अनिवार्य है।

अतः ऐसी दशा में आप दोनों घरों का तालमेल कैसे बैठायेंगे ?

प्रश्न--६ : क्या आप दफ्तर को घर ले जाते हैं और घर को दफ्तर ? क्या आपमें ऐसा न करने की क्षमता है ?

टिप्पण--१ : दफ्तर को घर लाने के दो अर्थ हैं। दफ्तर का काम घर पर लाकर करना। ऐसा करना आपकी नालायकी का परिचायक है कि आप दफ्तर में गप्पे हांकते हैं और (श्रीमतीजी सहित) दुनिया को दिखाने हेतु व्यस्तता का ढोंग रचाने के लिए गधे बनकर फाइलें लादते हैं।

दूसरा अर्थ यह है कि दफ्तर में डांट पड़ने पर आपका मूड बिगड़ जाता है और उस खीज को उतारने के लिए श्रीमतीजी ऐंड कंपनी से झगड़ा कर लेते हैं। अगर आप ऐसा करते हैं तो यह आपकी सुपर-नालायकी का परिचायक है। इससे घर नरक नहीं तो उसका लघु संस्करण जरूर बन जाएगा।

टिप्पण--२ : घर को दफ्तर ले जाने का मतलब है कि घर की चिंताएं दफ्तर में करना। वस्तुतः दफ्तर तो दफ्तर के काम के लिए है, घर की चिंता के लिए नहीं। हो सकता है, आपके ध्यान में तेल, नमक की लिस्ट हो और वही फाइलों पर भी लिख मारें। ऐसा करना आपकी नौकरी के लिए स्वास्थ्यप्रद नहीं है।

प्रश्न--७ : क्या आप विवाह करने पर या संतान होने पर खर्चा बढ़ जाने के कारण वेतन-वृद्धि की मांग करते हैं अथवा सामान्य वेतन-वृद्धि से ही निर्वाह करने की व्यवस्था करते हैं ? उत्तर कारण सहित लिखिए।

टिप्पण—दफ्तर के बाहर की दुर्घटनाओं (जैसे विवाह, संतति-रत्न की प्राप्ति, आदि) के लिए दफ्तर उत्तरदायी

नहीं है। अतः आपको यह सिद्ध करना ही होगा कि आप क्षतिपूर्ति के हकदार हैं।

प्रश्न ८ (क) : आपके अपत्य कोष में कितने संतति-रत्न हैं। इनसे किस खेल और सभा की टीम बन सकती है या वनने की संभावना है।

(ख) अपत्य-कोष की वृद्धि में आपका आदर्श कौन-सा है? देवी-वाहन, हाथी, भैंरों-वाहन, सनातन धर्म का अवतार नं. ३, धृतराष्ट्र।

प्रश्न--९ : क्या आप अपनी मेज पर १ सें. मी. से ५ सें. मी. नाप के प्लास्टिक या लकड़ी के साबित या टूटे खिलौने व पुरानी चित्रयुक्त पत्रिकाएं रखना पसंद करेंगे?

टिप्पण---१ : यद्यपि स्वामी विवेकानन्द के अमरीकी चेले---श्रीरामचरकदास ने लिखा है कि अनावश्यक अंग-संचालन या हाथापाई हितकर नहीं, किंतु लोग इस उपदेश का पालन नहीं करते। अंत में एक लघु-कथा और :

एक वादशाह था। वह दिन भर अपनी दाढ़ी के बाल उखाड़ा करता था। जब उसकी दाढ़ी साफ होते देखी तो चतुर वजीर ने ताश का आविष्कार किया। बादशाह को यह खेल बहुत पसंद आया और उसके हाथ में पत्ते ही रहने लगे। बेचारी दाढ़ी की रक्षा हो गयी और लोगों को भी एक उपयोगी या अनुपयोगी खेल मिल गया।

टिप्पण--२ : उपर्युक्त कथा की तुलना में यहां मामले में थोड़ा अंतर है। दाढ़ी आपकी है और हाथ आगंतुकों के।

प्रश्न--१० (क) : आप उक्त खिलौनों आदि का व्यय स्वयं करना चाहेंगे या दफ्तर से रिइंबर्स कराना? उत्तर कारण सहित लिखिए।

साधारणत : परीक्षा का समय तीन घंटे होता है, किंतु आपकी टांग को कुरसी पर टिकने की आदत हो तो आप ७-८ घंटे भी परीक्षा दे सकते हैं।

उत्तीर्ण होने पर पदोन्नति की संभावना मात्र ही है, किंतु अनुत्तीर्ण व्यक्तियों की छुट्टी निश्चित है। अगर दुविधा में हों तो निम्नलिखित मंत्र का जाप कीजिए:
चढ़ जा बेटा सूली पर भली करेंगे राम
अंत में एक परामर्श और---

अंगरेजी में एक कहावत है---लुक बिफोर यू लीव।

--सी-६४, रामनगर, नाहरी का नाका
जयपुर

डॉक्टर, "पेशेंट नं. ४०२ कैसा है?"
नर्स, "बुरी तरह से वह घेर रहा है।"
डॉक्टर, "उसे क्या तकलीफ है?"
नर्स, "वह कमरे में मेरे पीछे बुरी तरह से दौड़ रहा था।"

★

किरायेदार, "मुझे यह कमरा पसंद आया है, लेकिन इसकी खिड़की से बड़े उदास दृश्य दिखते हैं।"
मकान-मालिक, "श्रीमन ! यह बोर्डिंग हाउस है, टूरिस्ट बस नहीं।"

दिल्ली वाले की दास्तान

मुगलई दस्तरख्वान के रंग

• महेश्वर दयाल

आजादी से पहले दिल्ली में होटलों और क्लबों में खाना खाने का रिवाज नहीं था। अंगरेजी राज्य में होटल, क्लब गिनती के थे। इनमें अंगरेज जाते या उनकी रीस करनेवाले हिंदुस्तानी कभी-कभार चले जाते थे। होटलों में खाना खाना या बाजार में खड़े होकर खाना बहुत बुरा समझा जाता था। यों तो घर की बहू-बेटियां हर प्रकार के भोजन बना लेती थीं। छुटपन से ही लड़कियों को घर की बड़ी-बूढ़ियां हर तरह के खाने पकाने के गुर सिखा देती थीं। उन्हें अचार, मुरब्बे, पूरी, पकवान सब कुछ बनाना आता था, लेकिन दिल्ली में रसोइयों, हलवाइयों, बावर्चियों और रकाबदारों की भी कमी न थी। दिल्ली की पराठेवाली गली सारे देश में मशहूर थी। बीते दिनों में महंगाई नाम को नहीं थी। किसी के पल्ले चार पैसे होते या न होते, खाना-पीना धड़ल्ले से उड़ाते थे। जो कमाते, मजे से खाते और आनंद के तार बजाते। जो चीज बाजार से लाते, ढेर सारी लाते। सारा कुनबा मिल-बांटकर खाता। कोई कंजूस-मक्खीचूस खाने-पीने में कमी करता तो उसकी हंसी उड़ाकर कहते, "जोड़-जोड़ मर जाएंगे, माल जंवाई खाएंगे," "अरे यार खाओ घी से, नहीं तो जाओ जी से।"

मीर साहब हमारे दादा के जिगरी दोस्त थे। उन दोनों की आपस में बहुत दिल्लगी रहती। कोई किसी के कहने का बुरा नहीं मानता था। मीर साहब कहते, "मास बिना सब घास रसोई।" दादाजी फरमाते, "खांड बिना सब रांड रसोई।" वे कहते, "चांदनी चौक में फतहपुरी मसजिद के नीचे शाहजहांपुरी होटल और जामा मसजिद की सीढ़ियों पर बैठनेवाले मसीता और हां याद आया दिल्ली की निहारी —भई क्या बात है! जिसने इनके खाने नहीं खाये, उसने कुछ न खाया!"

मुगली खानों की बात करते-करते मीर साहब हमारे दादाजी से कहने लगते, "अरे भाई वकील साहब, आपने दिल्ली के लाल किले के जश्न और रोशनआरा बेगम के दस्तरख्वान के बारे में भी कुछ सुना है?" इतना कहा और कहानी शुरू—"जब औरंगजेब अपने भाइयों को मारकर और बाप शाहजहां को बंदी बनाकर दिल्ली की गद्दी पर बैठा तब उसकी लाड़ली बहन रोशनआरा की मौज आ गयी। आये दिन लाल किले में जश्न मनाये जाने लगे। हयातबख्शबाग और महताबबाग में बहार आ जाती। बागों की रंग-बिरंग फुलकारी पड़ी मुंह से बोलती। कनातें लगाकर परदा हो जाता। क्या मजाल जो किसी आदमी की परछाईं भी पड़ सके। शामियाने तन जाते। इनमें किरन के बड़े तुर्रे, झालरें झिलमिल-झिलमिल कर रही हैं। छत में सुनहरे-रूपहले तारों का जाल बुना हुआ है। कहीं गंगा-जमुनी लेस का चारखाना है, जिसमें सलमे-सितारे के फूल तारोंभरे आकाश की तरह जगमगा रहे हैं।

जश्न में किले की बेगमें, शहजादियां, सलातीनजादियां (भाईबंदों की बहू-बेटियां) भी आती थीं और नवाबों और अमीरों की बहू-बेटियां भी बुलायी जाती थीं। ये सब सोलहसिंगार किये और छत्तीस जेवरों से सजी, एक-से-एक बढ़िया दुपट्टे, पेश्वाजें, महरम कुरतियां पहने होतीं। कमख्वाब, जरबफ्त, मशरू और गुलबदन के पाजामे हैं। डोलों, पालकियों, चंडूलों और सुखपालों में चली आ रही हैं। सवारियों से उतरीं और अपनी-अपनी जगह ईरानी कालीनों पर जरी के मखमली गावतकिये लगाकर बैठ गयीं। मेहमानों के पीछे लौंडियां, बांदियां मोरछल हिला रही हैं। सबसे पहले मेहमानों को शरबत पिलाकर खातिर की।

मुगल बेगमें पान और हुक्के की शौकीन थीं। उनके सामने साथिनों ने चांदी के नफीस हुक्के रख दिये। खासदान में पान की गिलौरियां हैं। पानदान, हुस्नदान, आरामदान रखे हैं। यों तो बाग फूलों से महक रहा है। चांदी के फव्वारे उछल रहे हैं, लेकिन अगर, लोबान, गुलाब, खस और दूसरे इत्र भी छिड़के जा रहे हैं और मेहमानों के कपड़ों पर भी इत्र मला जा रहा है। ये लीजिए, वह सामने से रोशनआरा बेगम इठलाती, इतराती खवासों (निजी लौंडी-बांदियों) के घेरे में चली आ रही हैं। जश्न में तुर्कानियां, साथिनें हथियारों से लैस कदम-कदम पर 'बिस्मिल्ला-बिस्मिल्ला' कहती चली आ रही हैं। रोशनआरा ठस्से-से मखमली मसनद पर विराजमान हो रही हैं। जरी के गावतकिये का सहारा लेकर पांव मसनद के नीचे धरी चौकी पर रख दिये हैं। मसनद के ऊपर हीरे, लाल, जवाहरात-जड़ी छतरी के चारों तरफ ठोस सोने के अनार मोतियों की लड़ियों के बीच लटके बड़े भले दिखायी दे रहे हैं। रोशनआरा बेगम की मसनद के दायीं तरफ चांदी की चौकी पर महीन उभरवां काम

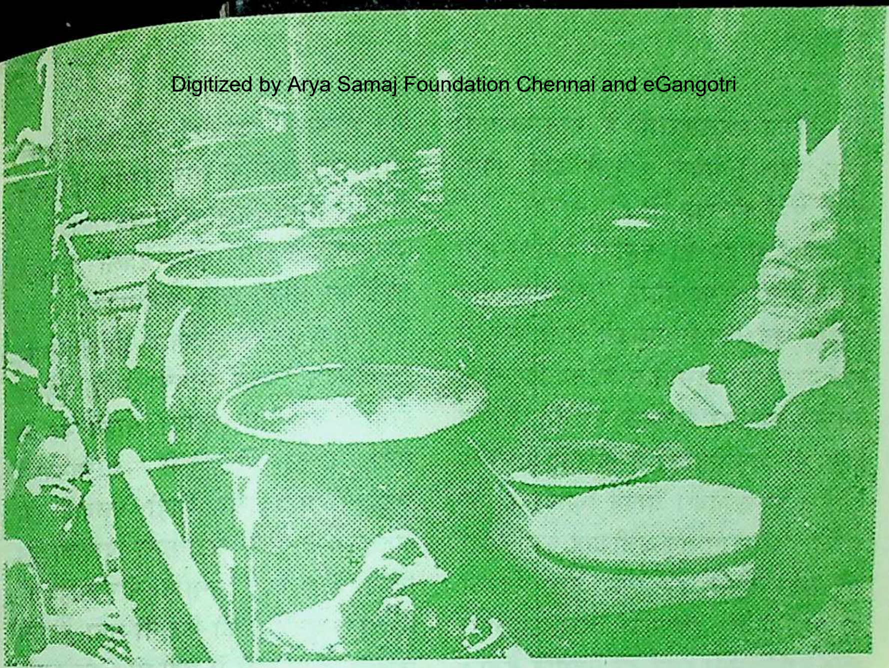

का बड़ा-सा प्याला रखा है। उसमें चांदी-सोने के हलके-फुलके चमकते सितारे रखे हैं। अब बेगमें, शहजादियां, अमीरों की बहू-बेटियां अपनी-अपनी जगह से उठकर एक-एक करके रोशनआरा बेगम के सामने आती हैं। सलामें झुका रही हैं, नजरें पेश करती हैं। रोशनआरा बेगम प्याले में रखे चांदी-सोने के सितारे मेहमानों पर उछालकर उनकी आवभगत कर रही हैं। दस्तरख्वान बिछाया जा रहा है। खाना चुने जाने से पहले हर चीज का एक टुकड़ा कुत्ते-बिल्लियों को खिलाया जाता था। इससे पता चल जाता था कि खाने में जहर (विष) तो नहीं मिला दिया गया है। संगे-यश्ब की प्यालियों में खाना रखा जाता तो उसमें बाल पड़ने से जान लिया जाता कि खाने में विष मिला दिया गया है। दस्तरख्वान पर सैकड़ों तरह के खाने होते। कहां तक नाम गिनाये जाएं! खाना हाथ से खाया जाता, लेकिन निहायत सफाई और सलीके से। क्या मजाल जो उंगली के ऊपर पोरों से नीचे हाथ सन जाएं।

खाना खाने के बाद बरतनों में खली, बेसन, उबटन, आटा रखा हुआ आया। सबने हाथ धोये। रूमाल से हाथ-मुंह साफ किया। गिलौरियां मुंह में रखीं, हुक्के का दम लगाया और गावतकियों का सहारा लगाकर बैठ गयीं। थोड़ी देर बाद डोमनियां आ गयीं। मीठे मधुर स्वरों में गाना होता रहा। (यह उन दिनों की बात है जब औरंगजेब को संगीत में बहुत रुचि थी।) कहा जाता है कि नौ साल बाद बादशाह ने गाना सुनना बंद कर दिया

था, लेकिन महलसराओं में गाना-बजाना होता रहा।) सवेरा होने के बाद अपने-अपने घरों की राह ली।"

मीर साहब की कहानी समाप्त होने पर दादाजी ने फरमाया, "अरे भाई मीर साहब, जब दिल्ली उजड़ने लगी, मुगलों का चिराग टिमटिमाने लगा, तब दिल्ली के बड़े-बड़े कारीगर लखनऊ जा बसे, लेकिन फिर भी दिल्लीवालों ने लखनऊवालों के दांत खट्टे कर दिये। आपने दिल्ली के एक शहजादे और वाजिद अलीशाह का किस्सा तो सुना होगा ? एक बार दिल्ली से एक मुगल शहजादा लखनऊ गया और वाजिदअली शाह का मेहमान हुआ। वाजिदअली शाह के दस्तरख्वान पर एक मुरब्बा लाकर रखा गया जो देखने में बहुत अच्छा लगता था, लेकिन मुगल शहजादे ने उसे खाया तो चकरा गया। इसलिए कि वह मुरब्बा न था बल्कि नमकीन कोरमा था, जिसकी शक्ल मुरब्बे की-सी थी। यों धोखा खा जाने से मुगल शहजादे को बहुत शर्म आयी और उसने भी वाजिदअली शाह की दावत की। लखनऊ के शाह यह सोचकर आये थे कि आज धोखा खिलाने के लिए दिल्ली के शहजादे ने मुझे बुलाया है। वे चौकन्ने रहने पर भी धोखा खा गये। मुगल शहजादे के दस्तरख्वान पर तरह-तरह के खाने चुने थे, मगर जिस चीज को चखा वह मीठी थी, शकर की बनी हुई। सालन था तो शकर का। चावल थे तो शकर के। आचार, चटनियां, रोटियां सब शकर की। यहां तक कि सारे बरतन भी शकर के थे। वाजिदअली शाह घबरा-घबराकर एक-एक चीज पर हाथ डालते थे और धोखे पर धोखा खाते चले गये।"

मीर साहब हंसकर बोले, "खाना पकानेवाला कोई बावर्ची नहीं, हलवाई होगा। और हां, लाला साहब यह तो सुनाइए, आपकी हवेली के पासवाला हलवाई घंटावाला शाही हलवाई क्यों कहलाता है ?" घंटावाला दादाजी का किरायेदार था। उन्होंने मीर साहब को घंटेवाले हलवाई की कहानी सुना दी, जो उन्होंने अपने बड़ों से सुनी थी। कहने लगे, "१७९२ में लाला सुखलाल नाम के एक हलवाई दिल्ली में जयपुर से आये। पहले पटरी पर सौदा लगाया, फिर दुकान किराये पर ले ली। दुकान की छत पर बहुत-सी घंटियां लटकायीं। ये घंटियां मंदिरों में लटकी हुई घंटियों की तरह थीं। थोड़ी-थोड़ी देर बाद मकान के नौकर इन घंटियों को बजाते रहते थे। यह भी कहा जाता है कि शाहआलम की मदद के लिए जब सिंधिया महाराज दिल्ली आये तो उन्होंने चांदनी चौक में बादशाह का दरबार सजाया। सवारी आयी तो इसी हलवाई ने घंटे बजा-बजाकर स्वागत किया। मकान के पास राजा जुगलकिशोर की हवेली के दरवाजे पर भी एक घंटा लटका रहता था। हलवाई घंटेवाले के नाम से मशहूर हुआ

और हवेली में आने-जानेवालियों की डोलियों के कहार इस जगह को 'घंटे-नीचे' कहते थे। यों तो घंटेवाला पिस्ते की लौज, मोतीपाग, तिरखूंट, बूंट बादाम, खोया और नुकती के लड्डू, मक्खन-बड़े, अमिरतियां, फेनी और अंदरसे की गोलियां और बहुत-सी मिठाइयां बनाता था, लेकिन यहां का कलाकंद, हलवा सोहन पपड़ी, नानखताई किलेवालों को बहुत पसंद थीं। बादशाहों, बेगमों और शहजादियों के यहां मिठाई के थाल जाते थे। दिल्लीवाले हलवाई का तो नाम भूल गये, लेकिन दुकान घंटेवाले शाही हलवाई के नाम से दिल्ली ही नहीं, सारे हिंदुस्तान में मशहूर हो गयी। लंदन में नुमाइश हुई थी तो अंगरेजों ने उसे वहां बुलवाया था।

छुटपन की एक बात याद आ गयी। अमन-चैन के दिन थे। सस्ता समय था। एक दिन कोई हंसमुख गाहक जिसका घंटेवाले हलवाई से दोस्ताना भी था, दुकान पर आया और एक पैसा जेब से निकालकर लाला की तरफ फेंका और बोला, "लाला यह पैसा ले लो और ढेर सारी पिस्ते की लौज दे दो और जो रेजगारी बचे वापस दे दो।" लाला ने पैसा उठाकर अपने नौकर को देकर कहा, "इसे ट्राम की पटरी पर रख दो।" थोड़ी देर में ट्राम आयी। पैसे के दो टुकड़े हो गये। नौकर ने दोनों टुकड़े लाकर लाला को दे दिये। लाला ने एक दोने में पिस्ते की लौज रखकर और पैसे का आधा टुकड़ा गाहक को देकर कहा, "यह लो लौज और यह रही रेजगारी।" जितने और गाहक दुकान पर खड़े यह तमाशा देख रहे थे, बोल उठे, "वाह-वाह क्या नहले पर दहला मारा है!" शाही हलवाइयों में कुंजन हलवाई (इसके नाम की गली दरीबे में आज तक है) ने मुगल बादशाह बहादुरशाह और उसके पिता अकबरशाह के दौर में बड़ा नाम कमाया। हलवा बनाने में माहिर था। बादामी हलवा, सिंघाड़े का हलवा, रवे, मूंग, अदरक, बादाम, गाजर वगैरा के हलवे बनाता था।

बैदवाड़े और घंटाघर के पास भाना-बब्बर की दुकानें थीं। बारीक मिठाई बनाने में माहिर था। पिस्ते की बर्फी, खोपड़े का पेड़ा बहुत अच्छा बनाता था। जौहरियों के यहां की बनी मिठाइयों की बड़ी मांग थी। बड़शाहबोला पर सरन हलवाई (आनंदीमल सरनमल) और छोटे दरीबे या पराठेवाली गली में बहुत-सी दुकानों पर सवेरे हलवा-पूरी, खस्ता कचौरी, मठरियां, नमकपारों की बिक्री थी। शाम को जलेबियां और रात को औटे हुए दूध को कढ़ाई से एक चौड़ी लुटिया में भरकर ऊंची लंबी धार से मटकनों में डालकर गाहकों को देते। एक परदेसी ने यह देखकर कहा था, "लालाजी, एक गज दूध हमें दे दो।"

मटियामहल में लाला झब्बरमल और चांदनी चौक में कूचा काबिल अत्तार के

पास हब्शी हलवा सोहनवाले की दुकान थी। मुसलमानों के यहां यह हलवा बहुत खाया जाता था। फतहपुरी मसजिद के नीचे शाहजहांपुरी होटल और जामा मसजिद की सीढ़ियों पर मसीता के यहां के पके खाने लेने के लिए दूर-दूर से लोग आते थे।

हीरा दिल्ली का एक मशहूर कारीगर था। पेठे के अंगूर तैयार करता और छोटी-सी पिटारी में रोटी लगाकर उस पर अंगूरों के गुच्छे लगाता। पेठे के अंगूरों पर असली अंगूर का शुबहा होता। अंगूर के गुच्छे कुछ मुरझाये हुए, कुछ लाली लिये और कुछ गहरे हरे होते। जब तक अंगूरों को हाथ से छुआ न जाता, अच्छे-अच्छे धोखा खा जाते। मिठाई, नमकीन के थाल सजोने में कल्लूसिंह बांके दिल्ली में मशहूर थे। राजाओं के महलों में उनकी बड़ी मांग थी।

मीर साहब ने दिल्ली के एक नामी बावर्ची का हाल सुनाते हुए कहा, "लखनऊ के नवाब सआदत अली खां के यहां दिल्ली का एक बावर्ची नौकरी के लिए आया, पूछा, क्या पकाते हो? कहा, माश की दाल पकाता हूं। पूछा, तनख्वाह क्या लोगे? कहा, पांच सौ रुपये। नवाब ने नौकर रख लिया। मगर उसने कहा, मैं एक शर्त पर काम करूंगा। जब हुजूर को मेरे हाथ की दाल का शौक हो, एक दिन पहले हुक्म हो जाए और जब खबर दूं कि दाल तैयार है, तो उसी समय खा लें। नवाब ने बावर्ची की बात मान ली। कुछ दिन बाद बावर्ची को को दाल पकाने का हुक्म हुआ। उसने तैयार की और खबर कर दी, लेकिन बार-बार कहने पर भी नवाब साहब दाल खाने नहीं आये। बावर्ची परेशान हो गया। उसने दाल की हांडी उठाकर एक सूखे पेड़ की जड़ में डाल दी और नौकरी छोड़कर चला गया। नवाब को उसके चले जाने का अफसोस हुआ। कुछ दिन बाद देखा तो जिस पेड़ के नीचे दाल फेंकी गयी थी, वह हरा हो गया।"

दिल्ली का एक रसोइया ऐसे अच्छे करेले पकाता था कि देखने से यह मालूम होता कि उन्हें भाप भी नहीं लगी है, वैसे ही हरे और कच्चे रखे हैं। मगर काटकर खाने के बाद पता चलता कि बहुत स्वाद-वाले और मजेदार हैं। दिल्लीवालों को पराठे खाने का भी बहुत शौक था। दिल्ली की पराठेवाली गली सारे हिंदुस्तान में मशहूर थी। गली अब भी है, मगर वह बात नहीं। यहां पराठे सादे, बलदार, रवे के, मैदे के, कई-कई परतवाले खस्ता और कठोर होते थे। आलू और गोभी के पराठे धनिये की चटनी के साथ बड़ा मजा देते। पुराना दौर, पुरानी बातें मिट गयीं। आजकल होटलों, क्लबों, रेस्तराओं में खाने का रिवाज है। यहां देशी खानों के अलावा चीनी, फ्रांसीसी, रूसी, यूरोपियन हर देश के खाने खाये जाते हैं। मेज-कुरसी या बूफे, जिसे एक शायर ने खड़े 'डिनर' का नाम दिया है, खाना खाया जाता है। यों तो दिल्लीवाले और बाहरवाले एक ही रंग में रंगे हैं, लेकिन अब भी बहुत से घरों में उजली-उजली कटोरियों और थालियों में खाना खाया जाता है। सवेरे कच्ची रसोई, शाम को पक्की रसोई। बड़े-बूढ़े पुरानी कहावत याद दिलाकर कहते हैं, "सिर्फ दाल-रोटी, और सब बात खोटी।" ●

बूटी ऐसी छानिए

• पंडित विष्णुकांत शुक्ल

विजया अनेक अर्थों में प्रयुक्त श्रुति-मधुर शब्द है। तिथि विशेष के अर्थ में प्रयुक्त होने पर इसका अर्थ विजयादशमी (दशहरा) हो जाता है। आठ महाद्वादशी के अंतर्गत एक द्वादशी भी विजया कहलाती है। 'वामन-पुराण' और 'कालिका-पुराण' के अनुसार जगदंबा पार्वती की एक सखी का नाम भी विजया है, जो गौतम-कन्या है। 'महिकाव्य' के अनुसार ऋषि विश्वामित्र द्वारा उपासित विद्या विशेष का नाम विजया है। 'देवी-पुराण' के अनुसार पद्म नामक राक्षस पर विजय पाने के कारण दुर्गा देवी विजया मानी गयी हैं। यमराज की भार्या को भी विजया कहा गया है। जटाधर के अनुसार 'हरड़' को भी विजया नाम दिया गया है। 'रत्नमाला' में 'वच' या 'वचा' ही विजया है।

विजया का विस्तार तिथि से लेकर 'भांग' तक देखा गया है। भांग एक विशेष मादक द्रव्य माना जाता है। त्रैलोक्य के ऊपर विजय करानेवाला मानकर इसे 'त्रैलोक्यविजया' भी कहा जाता है। किसी जमाने में यह इंद्र का प्रिय पेय रही है, तभी तो इसे 'शक्राशन' या 'इंद्राशन' कहा है। इसके पत्ते सूखने पर भी अपनी ताकत अंत तक दिखाते हैं, इसलिए इसका एक नाम 'वीरपत्र' भी कोषों में मिलता है। इसे 'हर्षदा' और 'आनंदा' भी कहते हैं। संस्कृत में जया, अजया, भंग, गंजा नाम भी इसके लिए प्रयुक्त किये जाते हैं।

देवाधिदेव महादेव का विजया के प्रति प्रेम प्रसिद्ध है। जया और विजया उमा देवी की अच्छी खासी सखी रही हैं।

भांग का रिवाज काशी में खूब है और ब्रजमंडल में भी। ब्रजमंडल में हाथरस और मथुरा तो इसके गढ़ ही हैं। यों पैदा यह सब जगह होती है। किसी जमाने में 'हापुड़ के पापड़ और जलेसर की भंग' बहुत प्रसिद्ध थी। 'भंग' भांग का ही रूप है। भांग पीनेवालों को भंगड़ या भंगेड़ी कहते हैं। निर्भय हाथरसी ने **'भंग पियै सो होवै भंगी, हम भी भंगी तुम भी 'भंगी' फिर काहे की दंगा दंगी'** कहकर भंगी कहने पर 'नो ऑब्जेक्शन' किया है। संस्कृत में 'भंगी' अदा को कहते हैं। शायद मेहतरानी की भंगिमा या भंगी से प्रसन्न होकर किसी

ने शुरू-शुरू में भंगिन कहा होगा। भंगिन का पुल्लिग भंगी बना दिया गया।

भांग खायी भी जाती है और पीयी भी जाती है। खाने में इसे चूर्ण के रूप में प्रयुक्त करते हैं और पीने में ठंडाई के रूप में है। यह बारहमासी पेय है। गर्मियों में लू चलने पर इसमें बादाम, बेल, गुलकंद आदि पड़ते हैं। वर्षा के मौसम में इसमें नीबू का पुट दिया जाता है। कड़ाके की सर्दी में केसर, कस्तूरी के साथ-साथ पिश्तों की घुटाई होती है और इस तरह ठंडाई गर्मियों में सर्दी देती है। बरसात में हाजमा ठीक रखती है और सर्दियों में गर्मी देती है।

गंगा या यमुना के किनारों पर, अखाड़ों में, बगीचियों में दोपहर ढलते ही सिलबट्ट धोकर तैयार कर दिये जाते हैं। इन जगहों पर आपको कंधे पर लाल अंगोछ में विजया व अन्य सामान लटकाये हुए विजया-विलासी आते हुए मिल जाएंगे। बादाम, सौंफ, कालीमिर्च, मुनक्का, अदरक, गुलाब, धनिया, खसखस, मगज, केवड़ा, खांड,केसर, कस्तूरी, इलायची, दूध, रवड़ी—इतना परिवार है विजया का। ठंडा या बर्फ का पानी इसका पक्का साथी है।

आइये, गंगा घाट की सैर कर आयें। दोपहर ढल चुकी है। एक ओर पहलवान से दीखनेवाले सज्जन बठ हैं। इनके बायें हाथ पर बादामों का ढेर है। दाहिने हाथ में एक 'मल्टी-परपज' हथौड़ी है। बायें हाथ के अगूंठे और तर्जनी से एक-एक बादाम पकड़कर सधे हुए दाहिने हाथ की हथौड़ी की चोट से बादाम फोड़ रहे हैं। मजाल कि एक भी चोट गलत बैठ जाए। भांग पीसनेवाले भांग पीस रहे हैं।

अब तीन और सज्जन आये। ये पीस रहे हैं—खसखस, सौंफ, इलायची, धनिया, गुलाब की पत्तियां वगैरा। इनका जमीन पर बैठने का ढंग शिष्टजनोचित है। पलथी लगायी हुई है। संस्कृत में इस पोज को 'पर्यंकग्रंथि वंध' कहते हैं। पीसते-पीसते इनके हाथों की मछलियां उभर आयी हैं। अब आये बादाम, मुनक्का और कालीमिर्च। बादाम पानी में पहले ही भिगोये जा चुके थे। उनको छील दिया गया है। मुनक्का के बीज अलग कर दिये गये हैं। इस अंतिम माल की पिसाई और घुटाई चल रही है। पीसनेवाले सज्जन ने दाहिने हाथ की तर्जनी से ही सिल पर एक रगड़ा मारकर निष्कर्ष निकाला। शायद अभी कुछ कसर बाकी है। फिर थोड़ी मेहनत और यह बादाम की चटनी अंगूठे की सहायता से बाट और फिर सिल से उतारी गयी। बड़ा 'टिपिकल' ढंग है। अब नंबर आया बूटी छानने का। यह है लाल अंगोछा। बाल्टी के ऊपर इसे तानकर इधर से एक सहायक ने पकड़ा, दूसरी-ओर से छाननेवाले उस्ताद ने। पहले नंबर पर छना मसाला, फिर उसमें बादाम की चटनी

पानी की सहायता से मिली। अब पड़ी बूटी, फिर अंदाज से मीठा। गंगा का जल काफी ठंडा है, फिर भी हलकी बर्फ डाल दी गयी। ऊपर से दूध। ठंडाई तैयार है। सबसे पहले 'बम भोला' कहकर सिल-बट्टे को पिलायी गयी और फिर सब साथियों ने गिलास चढ़ाये। उस्ताद तली का माल ले रहे हैं। इसमें बहुत गुण हैं।

भांग की कुछ और जानकारी दी जाए। इसका पेड़ चार-पांच फुट तक ऊंचा होता है। पत्तियां हरी और कुछ-कुछ गेंदे की पत्तियों से मिलती हैं। अप्रैल के अंत में यह पक जाती है। तब इसे अपने-अपने ढंग से सुरक्षित करके भर लेते हैं। गर्म पानी में हल्दी और तांबा डालकर पकाने का इसका ढंग शुद्ध माना जाता है। इसकी टहनियों, पत्तियों को दोनों हाथों से मलकर इसके मैला या सत को हाथों से छुटाकर चिलम या सिगरेट में भरकर पीया जाता है। तब यही गांजा कहलाता है। शायद 'गंजा' नाम की यही सार्थकता है। कायदे में एक वर्ष से अधिक सूखी हुई भांग बेकार हो जाती है।

'भाव-प्रकाश' में इसके गुणों के साथ-साथ मोदमद-वर्धक के रूप में इसके दोष पर भी दृष्टि रखी है।

राजवल्लभ ने इसकी उत्पत्ति समुद्र-मंथन से ही स्वीकार की है।

प्रयोग की दृष्टि से विजया विविध-

जय भंग भवानी की

भंग की महिमा अपरंपार है। बकौल श्री अमृतालल नागर के, जब राम, सीता और लक्ष्मण वनवास की अवधि में थे तब वे भी भंग पिया करते थे। भंग न पीते तो इतने लंबे, बेकारी-भरे दिन कैसे पार कर लेते! भंग का सीधा संबंध शिव के साथ तो जोड़ा ही जाता है, रावण भी भंगप्रेमी था। बेहतर है भंग पीना—चरस, गांजा और अफीम की जगह। किसी भंगेड़ी शायर ने तो भंग के नशे की रंगीनी में यहां तक लिख दिया—

बूटी ऐसी छानिए भर भादों के बीच
घर के जानो मर गये आप नशे के बीच

सरकार की ताजा विज्ञप्ति के अनुसार शराबबंदी तो होगी, लेकिन भंग पर प्रतिबंध नहीं लगाया जाएगा।

रूपा है। हाजमे के लिए सोंठ, नमक, जीरा, कालीमिर्च, अनारदाना, बड़ी इलायची के साथ सूखी हुई भांग का चूर्ण तैयार किया जाता है। औषध-रूप में यह सादा या कालीमिर्च के योग से पानी में पीसकर गोली के रूप में ली जाती है। अधिक मादक रूप में इसे तांबे के साथ पकाकर, पीसकर काम में लाते हैं। गुलाबी नशे के लिए यही बादाम की ठंडाई के साथ ली जाती है। तंत्र के रूप में विजया के विविध प्रयोग किये जाते हैं।

आश्चर्य यह है कि शराब भी समु मंथन में ही मिली थी, भांग भी त आयी, पर कलयुग में शराब बरा तरक्की करती गयी। भारत और भार के बाहर के सभी नगरों में, कस्बों पैसेवालों में शराब खूब चलती है। इसक खूब प्रचार है। शराब के देशी औ अंगरेजी दो रूप तो प्रसिद्ध हैं, पर भां आजकल क्या, आजतक देशी है, शु देशी। इसका प्रचार भारत में ही है भारत श्रम प्रधान देश है। विदेशों नजाकती इसके साथ इतनी मेहनत नहीं कर सकते। जिस तरह मथुरा की बें और गोकुल की गाय करम फूटने प ही बाहर जाती है, उसी प्रकार कर फूटने पर ही भांग बाहर जा सकेगी। इसका साम्राज्य पवित्र भारत देश है। शराब पुरानी होकर और तेज होती है। सड़न से पैदा होती है। 'पैग' में चलने वाली शराब क्या बेचती है इसके आगे! पर दोनों में लड़ाई नहीं है। दोनों ही देवता पर चढ़ती हैं। शराब किसी-किसी दुर्गा मंदिर में चरणामृत में मिलायी जाती है। भांग धड़ल्ले से शिवजी को पिलायी जाती है। भांग लोक में 'शिव-प्रिय' है और शास्त्र में 'श्री देवराज-प्रिया' है। इसके अन्य प्रेमियों की चर्चा फिर कभी।

—अध्यक्ष : हिंदी विभा
के. वी. जैन कालेज, सहारनपु

होली आज खेलब हो

• नारायण भक्त

वसंत के आते ही वन-उपवन, सभी जगह बहार आ गयी। हर जगह—जंगलों एवं बगीचों में फूल खिल रहे हैं—रंगबिरंगे फूल। अत्यंत लुभावने। वृक्षों की डालियों पर नये पत्ते उगने लगे हैं। कहना चाहिए—भागा पतझड़, आया वसंत! खेतों में सरसों अपनी निराली आभा लिये हुए है। हर तरफ पीला-ही-पीला नजर आता है। वसंत के स्वागत में होली खेलने का विधान हमारे देश में प्राचीन-काल से रहा है। हां, प्राचीन-काल में इसका रूप कुछ भिन्न अवश्य था। महाकवि कालिदास ने 'अभिज्ञान शाकुंतलम' में, हर्षवर्धन ने 'रत्नावली' में तथा भवभूति ने 'मालती-माधव' में 'मदन-महोत्सव' यानी होली का

ब्रज की लट्ठमार होली खेलती हुई एक महिला

बड़ा ही सजीव वर्णन किया है। इस महोत्सव का प्रधान-अंग था—कामदेव का पूजन। आम की नयी मंजरी से कामदेव का पूजन होता था । और फिर लोग एक-दूसरे के कपोलों पर लाल रंग मला करते थे, और कुंकुम का चूर्ण भी उड़ाया करते थे। हर्षोल्लास का यह मदन मत्होसव एक जनप्रिय उत्सव था।

संत कवियों ने भी होली का वर्णन अपने-अपने ढंग से किया है। महाकवि-सूरदास ने श्रीकृष्ण व राधा के साथ होली खेलने का वर्णन इस प्रकार किया है——

होरी खेलत जमुना के तट
कुंजनि तर बनवारी
इत सखियन को मंडल तोरे
श्री वृषभानु दुलारी
होड़ा-होड़ी होत परस्पर
देत है आनंद गारी
भरे गुलाल, कुमकुम, केसरि
कर कंचन पिचकारी

ब्रज की होली अपनेआप में अनोखी है। यहां पर बहुत पहले से होली की तैयारियां प्रारंभ हो जाती हैं। स्त्री-पुरुष एक-दूसरे के घर, पास-पड़ोस के गांवों तक होली खेलने जाते हैं। इस दिन ब्रज की शोभा ही न्यारी होती है —

चालौ गुइयां आज खेले होरी कन्हैया-संग
अपने-अपने मंदिर सों निकसीं कोउ सांवरी कोउ गोरी
एक सौ एक जोवन मदमातीं सबै बैस की थोरी
एक चटकत, एक मटकत आवत, गा अंग मरोरी
थेई थेई करत धरैं सिर मटकी, च नचत दृग मोरी।

लोकसाहित्य में कृष्ण के हो खेलने संबंधी लीलाओं के अनेक चि मिलते हैं। ढोल, मजीरे और डफली के थाप पर ये गीत जब मुखरित हो उठ हैं, तब होली का सजीव-चित्र उपस्थि हो जाता है। कहीं-कहीं 'फाग' औ 'कबीर' भी गाये जाते हैं। 'ढप' का स्व भी सुनायी देता है। होली भजन के रू में भी गायी जाती है—

ऐसी होरी मचाई दीनानाथ,
बिरज आनंद भये
उड़त गुलाल, लाल भये, बादर,
सब रंग होत नये
सगरी सखी रंग में बोरी,
भूखन भीज गये

होली के समय कुछ आपसी संबं बड़े परिहासपूर्ण हो जाते हैं। इनमें देव भाभी का संबंध भी एक है। देवर-भाभि के बिना होली जैसे अधूरी रह जा है। भाभी कहती है——

होली कैसे खेलूं देवरियाजी के संग
कोरे-कोरे कलस मगाये उसमें घोला रं
भर पिचकारी माथे पै मारी
झूमर हो गया तंग
होली कैसे खेलूंजी देवरिया के संग

इस होली का खेल, रास-रंग और उल्लास का सबसे प्रिय कारण है, वसंत की मदमाती ऋतु।

इस ऋतु में प्रकृति स्वर्ण-सी जान पड़ती है। सर्वत्र आनंद एवं मस्ती थिरकने लगती है। आम के वृक्षों पर मंजरी आने लगी। कोयल की आवाज कानों में मिसरी घोल रही है। मंजर की भीनी-भीनी सुगंध सर्वत्र फैल रही है। गांवों में वसंत का स्वागत, गांव की किशोरियां पीले-पीले गुलाबी वस्त्र धारण करती हैं और स्वभावतः उनके कोकिल कंठों से यह गीत फूट पड़ता है :

होली आज खेलन को आएल
बसंत बहार
आए ऋतु मधुमास सुहावन
फुलन लागे केतुआ
बसन रंगीली पहिरन लागे खेत
लता नर-नार
बन-बन फूलत फूल, कोयलिया बोलल
अमवां की डरिया
रंग अबीर के बादल उमड़ल
गावत फाग धमार

ओ विषपायी!

• महादेवी वर्मा

ओ विषपायी!
यदि तो वह विष नहीं
मिला जो तुम्हें क्षीरसागर-मन्थन से,
दाहकता हो गई शान्त
जिसकी शीतल गंगा-जल-कण से
मधुर शरीर की लहरों में पल
विधु की विमल चांदनी से मिल
विष होकर जिसने अमृत की
सहज सहोदरता पी पाई।

पान किया पर जिसको तुमने
शिरा-शिरा में नहीं उतारा,
कम्बुकण्ठ में अब तक है जो
नील लाञ्छन बना तुम्हारा,
इसीलिए नयन की चितवन में छल,
नहीं सहज हो बना रसायन,
हे मृत्युञ्जय! महामृत्यु ही
रही सदा जिसकी परछाईं।
यह जीवन-सागर-मन्थन से
निकला है जो घोर हलाहल
यह विष का नवनीत महाविष
इससे दग्ध काल के युग-पल,
पर आंखों के सम्पुट में भर
कुछ आंसू की बूंद मिलाकर
विष को अमृत किया मनुज ने
अपने लिए मृत्यु अपनाई।

तब से दोनों साथ चले हैं
जहां आदि है वहां अन्त है,
शिशिर आलोक वसन बुनती है
पतझर में पलता वसन्त है,
किसलय के छिटे फूल झरे हैं
छोटे छोटे मेघ भरे हैं,
जिसमें जगत न रोता-हंसता
वह तो प्रकृति की तरुणाई है।

बन्धु! तुम्हारा मधुशाला का नवीन आयु
आज विश्व के लिए हुआ नूतन सन्दे
अब न हमें अमरता का वर दो,
केवल निज से अंजलि भर दो,
नहीं मृत्यु पर विजय मनुज ने
जिसका चिर नूतनता पाई
श्री विजया

महादेव

सन ७८ में नोबेल पुरस्कार-विजेता की एक हास्य-कथा

चोट खाकर वह भविष्यवक्ता बना

• आइजेक बेश्विस सिंगर

चोटें तो लगती ही रहती हैं, पर सिर पर चोट लगना कोई मजाक नहीं। मस्तिष्क नाजुक होता है। आत्मा का वास मस्तिष्क, जिगर या आंतों में क्यों नहीं है? केवल नेत्रों से आत्मा की झलक मिलती है। आत्मा के बाहर झांकने के लिए नेत्र दो खिड़कियों का कार्य करते हैं।

हमारे नगर में एक चिमनी साफ करनेवाला था। उसे 'काला यश' के उपनाम से पुकारा जाता था। सभी चिमनी साफ करने वाले काले रंग के होते हैं। वे किसी और रंग के हो भी कैसे सकते हैं? पर यश तो ऐसा लगता था मानो काला ही पैदा हुआ हो। उसके कील-जैसे बाल तारकोल की तरह काले थे। उसकी आंखें भी काली थीं। रगड़ने पर भी उसके शरीर से राख छूट नही सकती थी। साधारण लोगों की तरह वह हर रविवार को नहा-धोकर चर्च जाता। नहाने के बाद वह पहले से भी अधिक काला लगने लगता। शायद इसीलिए उसे कोई पत्नी नहीं मिली थी।

सोमवार की बात मुझे कल की तरह याद है। पानी ढोनेवाले फीतल ने आकर बताया कि चौकवाले दुमंजिले मकान की चिमनी साफ करते हुए यश गिर पड़ा। वह गिरा भी तो नगर की सबसे ऊंची इमारत से। फीतल ने बताया कि केवल उसके सिर पर चोट लगी, कोई अंग नहीं टूटा। कोई उसे उठाकर उसके घर ले गया।

वह शहर के एक छोर पर जंगल के पास ही एक टूटी-फूटी झुग्गी में रहता था। कुछ समय तक यश की किसी को कोई खबर न मिली।

एक दिन फीतल मेरी मां से आकर बोला, "आपने एक नयी बात सुनी या नहीं? यश तो अब सबके मन की बात जान लेता है!"

मेरी मां हंसकर बोली, "क्या मजाक करते हो?"

वह बोला, "नहीं-नहीं, यह मजाक नहीं। वह सिर पर पट्टी बांधे चारपाई पर लेटा सबके रहस्य खोल रहा है।"

"तुम पागल तो नहीं हो गये?" मां ने उसे डांटा।

पर सारा शहर यही बात कह रहा था, चोट लगने से उसके मस्तिष्क का कोई पुर्जा ढीला हो गया है। इसी के कारण वह देवदूत बन चुका है।

जब नगर के डॉक्टरों और अधिकारियों ने सुना तो भागे हुए उसके पास आये। यश की झुग्गी इतनी तंग और छत इतनी झुकी हुई थी कि उससे मिलने के लिए आनेवालों की टोपियां छत को छूती थीं। ये उससे जो भी प्रश्न करते वह झट उनके सही उत्तर दे देता। यह पादरी के लिए चुनौती थी। किसान यश को साधु कहने लगे। वे तो उसे पवित्र मूर्ति की तरह तीर्थ-यात्रा पर ले जाने को तैयार थे, पर डॉक्टर ने उसे चारपाई से उठने तक की अनुमति नहीं दी। एक रविवार के सिवा यश को चर्च में किसी ने नहीं देखा।

जब यश की मां ने भेंट करनेवालों की भीड़ देखी तो उसने प्रत्येक मिलनेवाले से एक कोपक लेना शुरू कर दिया। लोगों ने दिया भी। डॉक्टर ने यश का हाल लुबलिन लिखकर भेजा। नगर-अध्यक्ष ने भी एक रिपोर्ट लिखकर भेजी, तब वहां से बड़े-बड़े प्रतिष्ठित लोग उसे देखने आये। राज्यपाल ने भी अपना प्रतिनिधि भेजने की बात कही।

सारे लोग यश की झोपड़ी में आये और उससे प्रश्न पूछने लगे। उसके उत्तर सुनकर राज्य-अधिकारियों के हृदय आतंक से कांप उठे। न जाने लोगों ने ऐसा कौन-सा अपराध किया हो! सभी घूस लेते थे और यश ने उन सबकी पोल-पट्टी खोलनी शुरू की।

भला एक चिमनी साफ करनेवाले को इन बातों का क्या ज्ञान था!

धीरे-धीरे यश की चोट का घाव भरा और वह फिर से अपने काम पर जाने लगा, पर दूसरों के रहस्य जानने की शक्ति अब भी उसमें वैसी ही थी।

और वह हर बात का ठीक उत्तर देता। लोग पूछते, "यश, तुम्हें इन बातों का कैसे पता लगता है?" वह कंधे हिलाकर कहता, "मैं सब जान जाता हूं, सिर पर चोट लगने से ऐसा हो गया हूं।" यह कहते हुए वह अपने मस्तिष्क की ओर संकेत करता।

लोग धन, आभूषण या कोई और

वस्तु रखकर भूल जाते तो यश ही उन्हें बताता। कोई बच्चा गुम होता तो उसकी मां भागी-भागी यश के पास आती। वह उसे बच्चे के पास ही पहुंचा देता। चोरों ने कहना शुरू कर दिया कि वह स्वयं ही बच्चों को चुराता है; पर उनकी बात पर किसी ने विश्वास नहीं किया।

चोरों की यश पर नजर लगी हुई थी। उन्होंने उसे खुलेआम चेतावनी भी दी, पर यश को उनकी योजनाओं का पहले से ही पता लग जाता था। एक रात वे उसे मारने आये, पर यश पड़ोस के खलिहान में जा छिपा था।

यश की बात वारसा और दूसरे स्थानों पर भी पहुंच गयी। समाचारपत्रों में उसके विषय में लिखा गया। एक अधिकारी-दल वारसा से भेजा गया। नगर-अध्यक्ष ने फिर से बाजार और घरों की सफाई करने के लिए आदमी दौड़ाये। बाजार पहले की तरह चमकाये गये। वह सदा की तरह चिमनी साफ करने के काम में जुटा रहा। उसके मन में आनेवाले अधिकारियों से भय बिलकुल नहीं उपजा।

अधिकारी-दल के आने से एक दिन पूर्व सहसा हिमपात होने लगा। धुंध छा गयी। बेकर की चिमनी से पिछली रात आग के शोले फूटते दिखायी दिये। आग लग जाने के भय से यश को चिमनी साफ करने के लिए बुलाया गया। यश अपना ब्रुश उठाये हुए आया और चिमनी साफ करने लगा। भट्टी में निरंतर कई घंटे आग जलने के कारण चिमनी में कालिख जमी हुई थी। चिमनी से उतरते हुए यश का पांव फिसला और वह फिर गिरपड़ा। उसके सिर में वहीं चोट लगी, पर पहले जैसी गंभीर चोट न थी। खून भी नहीं निकला। वह उठा और घर चला गया।

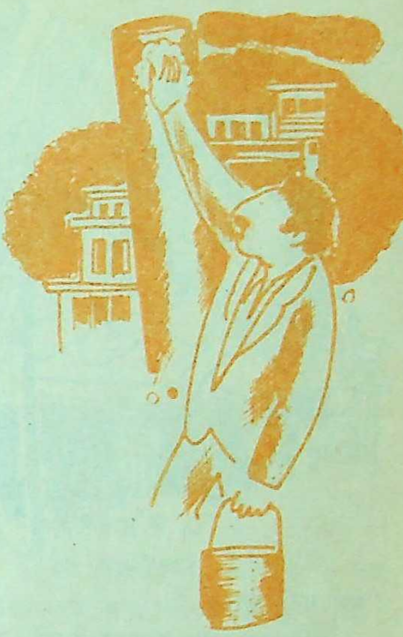

मेरे प्यारे मित्रो, दूसरे दिन वह अधिकारी-दल आ पहुंचा और यश पर प्रश्नों की बौछार शुरू हुई।

पर यश को किसी बात का पता नही था। प्रथम बार गिरने पर जिस चोट ने कुछ खोला था वहीं दूसरी बार की चोट से वह बंद हो गया। उनके हर प्रश्न का उत्तर वह मूर्खों की तरह दांत निपोर कर देता,

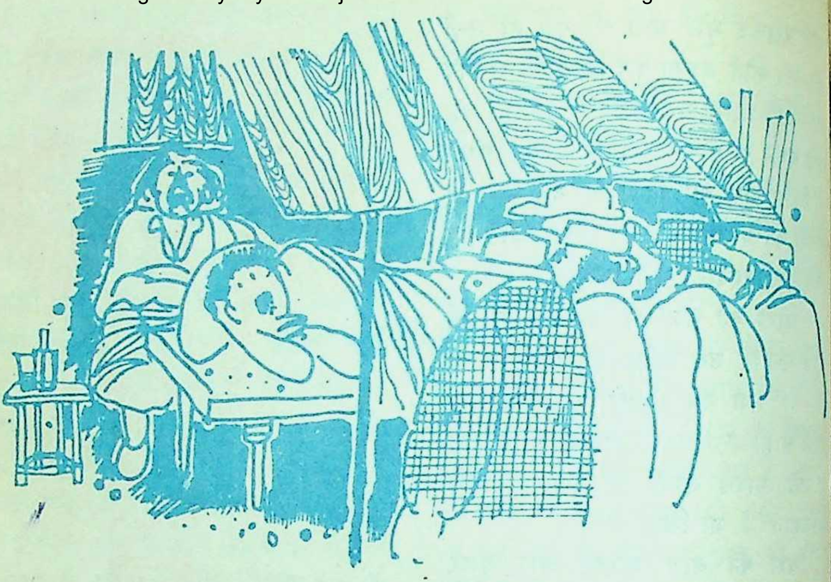

"मुझे नहीं पता।"

अधिकारी क्रोध से फुफकार उठे। नये डॉक्टर और पुलिस अधीक्षक को कोसने लगे।

पुलिस अधीक्षक ने यश के सिर पर मुक्के बरसाने शुरू कर दिये। शायद वही पुर्जा फिर से ढीला हो जाए, पर मस्तिष्क का छोटा द्वार एक बार जब बंद होता है तब फिर खुलता नहीं।

अधिकारी-दल लौटकर वारसा गया तो उसने यश की कहानी को आरंभ से लेकर अंत तक असत्य कहा। यश एक-दो वर्ष तक चिमनी साफ करने का काम करता रहा, फिर नगर में महामारी फैली और वह उसकी चपेट में आ गया।

मस्तिष्क कई प्रकार के छोटे द्वारों और कंदराओं से भरा पड़ा है। कई बार सिर की चोट सारा संतुलन ही गड़बड़ कर देती है। हमारा संबंध तो आत्मा से है। आत्मा के बिना मस्तिष्क का महत्त्व एक पैर से अधिक नही।

—अनु. : कैलाश नलि

वर्माजी अपने पांच वर्षीय नाती को जो सड़क में एक कुत्ते पर पत्थर फेंककर गाली दे रहा था, समझा रहे थे "टिन्नू, गाली नहीं देते !"

"आपको थोड़े ही दे रहे हैं !" टिन्नू ने थोड़ा सहमकर कहा, तो वर्माजी उसके सिर पर हाथ फिराते हुए बोले, "बेटे, गाली देना बुरी बात है, गाली नहीं देते।"

"अरे वाह !" टिन्नू में थोड़ा साहस आ गया। बोला, "आप बड़े भइया को गुस्से में गाली देते हैं तब कोई बात नहीं, हम कुत्ते को भी गाली न दें !"

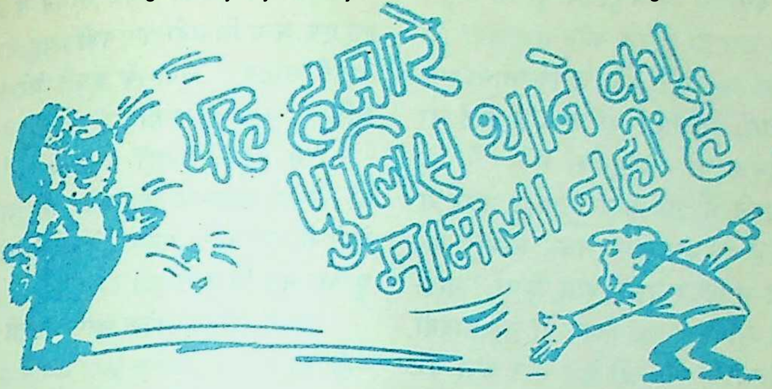

यह हमारे पुलिस थाने का मामला नहीं है

• अजीज ने सिन

"पुलिस ! पुलिस ! भागो ... मदद ।" हर आने-जानेवाला रुक गया। लोग उस व्यक्ति के इर्द-गिर्द जमा होना शुरू हो गये। भीड़ में पुलिस के सिपाही भी मौजूद थे, पर वह इस गरीब की चीख-पुकार की परवाह किये बिना लोगों को धक्के देते हुए आगे निकल गये ।

"पुलिस ! पुलिस !"

बड़ी अजीब बात थी। वह पुलिस को पुकार रहा था और पुलिस के सिपाही वहां मौजूद होते हुए भी उसकी मदद को नहीं आ रहे थे। एक सिपाही तो बिलकुल सामने फुटपाथ पर खड़ा था । निश्चय ही उसके कानों तक भी आवाज जा रही थी, वह बेचारा मुंह के आगे दोनों हाथों की कुप्पी बनाकर चिल्ला रहा था।

"पुलिस ! . . . मदद . . . पुलिस !"

आखिर उसने हिम्मत की, और सामने की भीड़ को चीरता हुआ फुटपाथ पर खड़े हुए सिपाही के पास पहुंचा और कहने लगा, "माईसाहब ! कृपया जरा मेरे साथ चलिए ।"

"क्या बात है ?"

"उस सामनेवाली बिल्डिग में एक आदमी की हत्या की जा रही है ।"

"मैं इस मामले में हस्तक्षेप नहीं कर सकता ।"

"वह क्यों ?"

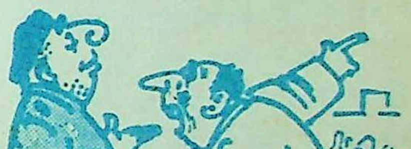

"इसलिए कि मैं ट्रैफिक पुलिस में हूं। यहां से हटा तो ट्रैफिक कौन संभालेगा ?"

उस व्यक्ति ने दोबारा चिल्लाना शुरू कर दिया, "पुलिस ! पुलिस ! है कोई जो एक इंसान की जान बचा सके ?"

इतने में एक अन्य सिपाही उधर से तेज-तेज गुजरता हुआ नजर आया। वह व्यक्ति भागकर उसके पास पहुंचा, "भाई-साहब, सुनिए ! यहां निकट ही एक आदमी की हत्या की जा रही है। आप जरा मेरे साथ चलिए।"

"मैं इसमें दखल नहीं दे सकता ! यह अपराध-विभाग का काम है। मैं आज-कल पासपोर्ट-विभाग में ड्यूटी दे रहा हूं।"

उस बेचारे ने घबराकर इधर-उधर भागना शुरू कर दिया। भागता जाता था और गला फाड़-फाड़कर चिल्लाता जाता था, "पुलिस ! हत्या . . . हत्या . . . मदद।"

इतने में उसकी नजर सामने से आते हुए एक अन्य सिपाही पर पड़ी। वह भागा, "भाई साहब ! खुदा के वास्ते मेरे साथ चलिए। वहां हत्या हो रही है।"

"मैं हस्तक्षेप नहीं कर सकता ! मैं तो विदेश-मंत्रालय की ओर से बाहरी देशों से आनेवाले मेहमानों की व्यक्तिगत सुरक्षा पर नियुक्त हूं।"

उधर भीड़ प्रत्येक क्षण बढ़ती जा रही थी।

कितने खेद की बात है कि इर्द-गिर्द पुलिस के इतने सिपाही मौजूद होते हुए भी कोई इस वारदात में दखल देने को तैयार नहीं। वह फिर चिल्लाया, "पुलिस ! पुलिस ! बचाओ। हत्या हो रही है। बचाओ।"

भगवान का धन्यवाद है कि एक अन्य सिपाही नजर आ गया। इस बार उस-ने निराशा से बचने के लिए स्वयं ही सिपाही से पूछा, "श्रीमानजी ! आपका संबंध पुलिस के किस विभाग से है ?"

"मैं अपराध-विभाग से संबंध रखता हूं।"

"हे ईश्वर ! तेरा कोटि-कोटि धन्यवाद ! भाईसाहब ! यहां निकट ही एक आदमी की हत्या की जा रही है। जल्दी चलिए मेरे साथ !"

"जनाब ! मैं हस्तक्षेप करने में असमर्थ हूं। यद्यपि मैं अपराध-विभाग में हूं, पर मेरा काम केवल चोरी की घटनाओं की जांच करना है।"

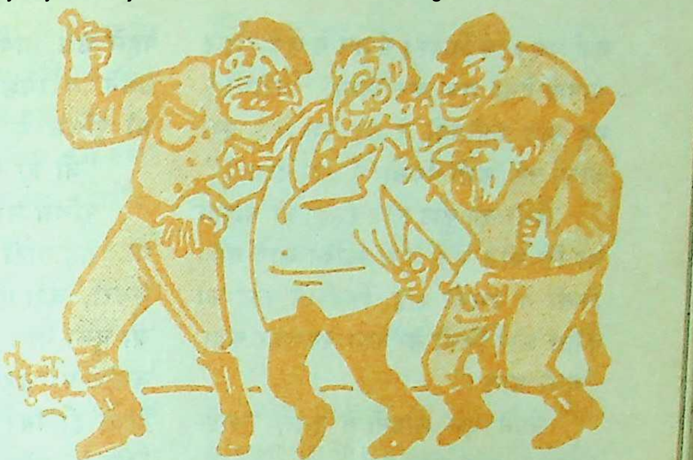

वह व्यक्ति निराश होकर और आगे भागा। रास्ते में एक अन्य सिपाही मिला। उसने सिपाही से मदद की फरियाद की, "भाईसाहब! एक आदमी की हत्या की जा रही है। मेरे साथ चलिए। यह करीब ही है।"

"जनाब! मैं दखल नहीं दे सकता!"

"क्यों, आप अपराध-विभाग में नहीं हैं क्या?"

"हूं तो उसी विभाग में, पर मैं स्मगलिंग की रोक-थाम पर नियुक्त हूं।"

वह फिर वापस भागा। बाजार लोगों की भीड़ से भर चुका था। उसे एक सिपाही और दिखायी दिया। उसने पूछा, "जनाब! क्या आप अपराध-विभाग में हैं?"

"जी हां!"

"क्या आप हत्या की घटनाओं की रोक-थाम पर नियुक्त हैं?"

"जी हां।"

"ओह ईश्वर! तेरा लाख-लाख धन्यवाद। भाईसाहब! जरा भागकर मेरे साथ चलिए। वहां एक व्यक्ति की हत्या की जा रही है।"

"कहां?"

"वह सामने गली में, तीसरी बिल्डिंग के अंदर।"

"जी, मैं इस केस में दखल नहीं दे सकता, क्योंकि वह मेरा इलाका नहीं है। वह गली 'बी' डिवीजन थाने की सीमा में है और मैं 'सी' डिवीजन में हूं।"

उसकी आशा का टिमटिमाता हुआ दिया फिर बुझ गया। वह घबराकर वापस पलटा।

इतने में एक आदमी उस व्यक्ति के निकट आया और उसके कान में बोला, "मेरे भाई, यह सब कुछ मुझ पर भी बीत चुकी है। यों तलाश करने से भी कभी पुलिस मिली है? यदि सचमुच पुलिस की जरूरत है, तो उस सामनेवाले मैदान में चले जाओ। एक खाली खोखे पर खड़े हो जाओ और जोर-जोर से भाषण देना शुरू कर दो। भाषण की भी कोई जरूरत नहीं। बस यही कह दो, 'यह क्या कमीनगी है?"

उसने तत्काल इस उपकारी के परा-

मर्श पर कार्य किया। मैदान में खड़े होकर भाषण देना शुरू कर दिया, "भाइयो! यह क्या कमीनगी है इस देश में! क्या आज तक कभी किसी ने ऐसा देखा?"

अभी वह कुछ और कहना ही चाहता था कि भीड़ में से कुछ व्यक्ति आगे बढ़े। किसी ने उसकी बांह, किसी ने कोट का कोना और किसी ने कान पकड़कर कहा, "चलो थाने।"

उसने एक आदमी से पूछा, "भाई-साहब! आप कौन हैं?"

"मैं राजनीतिक-पुलिस का इंसपेक्टर हूं। ये लोग राजनीतिक-पुलिस के सिपाही हैं, जो इस समय यहां ड्यूटी पर हैं।"

इतने में सीटियां बजनी शुरू हो गयीं। सीटी की आवाज सुनते ही सबसे पहला सिपाही जो वहां पहुंचा, वही था जो उस दिन छुट्टी पर होने के कारण हत्या की घटना में हस्तक्षेप करने में असमर्थता प्रकट कर चुका था। फिर वह सिपाही पहुंच गया, जिसका इलाका 'सी' डिवीजन तक सीमित था। कुछ देर बाद नगर-निगम के मूल्यों की जांच-पड़ताल करनेवाला, फिर पासपोर्ट आफिसवाला, विदेश-मंत्रालय के विदेशी मेहमानों की सुरक्षा का जिम्मेदार और कई अन्य सिपाही आ पहुंचे। सब उस व्यक्ति को गौर से देख रहे थे, जो थोड़ी देर पहले उनसे मदद की प्रार्थना कर चुका था।

जन-समूह में उसकी नजर अपने उस उपकारी पर भी पड़ी, जिसने कुछ मिनट पहले उसे भाषण का परामर्श दिया था। उसने परामर्श देनेवाले से पूछा, "आप भी पुलिस में हैं?"

"जी हां! मैं थानेदार हूं।"

पुलिस उसे पकड़कर थाने ले जा रही थी। यह पार्टी उसी बिल्डिग के सामने से गुजरी, जहां एक इनसान का खून बहाया जा चुका था। एक व्यक्ति जख्मी हालत में जमीन पर तड़पता हुआ नजर आया। उसे देखते ही गिरफ्तार हुए आदमी ने कहा, "खेद! अति खेद! बेचारा!"

ट्रैफिक-पुलिस के सिपाही ने उससे पूछा, "वह तुम्हारा क्या लगता था?"

"कुछ भी नहीं! मैं तो उसे पहचानता भी नहीं। केवल मानवता के नाम पर उसके प्राण बचाने के लिए पुलिस को बुलाने का प्रयत्न कर रहा था।"

नगर-निगम पुलिस के सिपाही ने उसे पीछे से धक्का देते हुए कहा, "जल्दी चलो। उस कमबख्त का खून गली में बहकर सारी गली को गंदा कर रहा है। तुम्हें थाने पहुंचाकर मुझे वापस आना होगा, ताकि महल्ले में गंदगी फैलाने के अपराध में उस मरदूद का चालान कर सकूं।"

—अनु. : सुरजीत

सुनीता—मेरे पति भी अजीब हैं! दिन में मेरी किसी बात पर झल्लाते तक नहीं, पर रात में नींद में बहुत बड़बड़ाते हैं!

रंजनी—अरे, वे बहुत भले आदमी हैं। क्या तुम चाहती हो कि कि वे नींद में भी तुम्हारी बातें सुनते रहें!

आकस्मिक अवकाश

• राजेन्द्र मेहता

आकस्मिक अवकाश भी क्या चीज़ है ! सरकारी कार्यालय या यूं कहिए कि सरकारी कर्मचारी और आकस्मिक अवकाश का जैसे चोली-दामन का साथ है। इसके विस्तृत विवेचन के लिए हमें दोनों शब्दों पर अधिक प्रकाश डालना होगा।

'आकस्मिक' यानी वह घटना जो अकस्मात घटे—मसलन सौ बार टालने पर भी पत्नी जिद करे कि आज शाम तो आप परिवार को पिक्चर दिखा ही दें। साढ़े तीन रुपये प्रति-व्यक्ति की दर से परिवार की पूरी हॉकी इलेवन पर होनेवाले व्यय के अनुमान मात्र से आपको झुरझुरी छूट जाती है और तब आपको अकस्मात यह ध्यान आता है कि आज तो ऑफिस में ढेर-सारा काम है और आपको काफी देर तक रुकना होगा। या यह कि ऑफिस में कोई चैरिटी-शो के टिकट खरीदने के लिए साधिकार आग्रह करता है और अकस्मात ही आपको यह ध्यान आता है कि आज तो आपको चाचाजी को देखने अस्पताल जाना है। अकस्मात घटनेवाली ऐसी घटनाओं की सूची लंबी है, मगर मैं यह मानता हूं कि विज्ञ पाठकों को इन्हीं से आकस्मिक शब्द का अर्थ समझ में आ गया होगा।

केवल अवकाश ही एक ऐसी स्थिति है जिसमें व्यक्ति ऑफिस के रोजमर्रा के आराम से बोर होकर एकाध दिन किसी ऐडवेंचर में गुजारना चाहता है। यह क्या कि रोज-रोज वही ग्यारह बजे दफ्तर पहुंचे, बड़े बाबू से दीन-दुनिया के बारे में गपशप की, गंभीरतापूर्वक इस बारे में विचार किया कि अमरीका को वियतनाम के बाद अब कहां नया पैंतरा लड़ाना चाहिए या अगले आम चुनाव के लिए अमुक पार्टी की क्या नीति हो, आदि। चाय का एक दौर कहकहों के साथ पूरा किया। फाइलों के अथाह ढेर में से एकाध

फाइल छांटी, जिस पर कुछ ऐक्शन लिया जाए। फिर, लंच के लिए चल दिये। डेढ़ घंटे बाद वापस आये, उक्त फाइल पर अड़ंगा लगानेवाले स्टाइल में छोटी-सी टिप्पणी लिखी। साथी बाबू के साथ विश्वनाथ की बल्लेबाजी की संभावनाओं पर विचारों का आदान-प्रदान किया। पान और चाय के एक दौर में हिस्सा लिया। खर्राटे भरे...और वापस घर चल दिये।

रोज की इस एकरसता से ऊब जाना लाजिमी है। ऐसी ऊबवाली जिंदगी में एक खुशगवार सुबह आदमी यह सोचे कि चलो आज का दिन कुछ 'थ्रिलिंग' से मनाया जाए, जैसे क्यों न राशन की दुकान से शकर और किरॉसीन लाने की कसरत कर ली जाए या क्यों न बुखार, सिरदर्द के नाम पर दिन भर घर पर रहकर पत्नी से वाक्-युद्ध में संलग्न हुआ जाए?

अब हमारे लिए आकस्मिक अवकाश नामक इस प्रक्रिया के उपयोग पर कुछ प्रकाश डाल लेना उचित होगा। यह अजीब जरूर लगेगा, मगर जानकारों द्वारा इसे सत्य पाया गया है कि इसका उपयोग सुविधा के रूप में कम, हथियार के रूप में अधिक किया जाता है। बाबू सीट पर से कुछ समय गायब रहा और अधिकारी जरा अनुशासनप्रिय हुआ तो सम्मन जारी कर दिया उसके नाम और हाजिर होते ही जारी कर दिया यह फरमान कि "मिस्टर, लगता है आप कार्यालय और घर में भेद करना भूल गये हैं! आप फौरन आज का आकस्मिक अवकाश प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत कीजिए और चलते-फिरते नजर आइए।"

दूसरी ओर, बाबू को अफसर ने कुछ काम दिया, उसकी प्रगति के बारे में जवाब तलब करते वक्त उसे संतोष नहीं हुआ और यदि उसने डांटने-डपटने का उपक्रम किया तो तेज बाबू फौरन बोला, "श्रीमानजी, यह तो आपका लिहाज करके और यह सोचकर कि यह काम कितना महत्त्वपूर्ण है, मैं कार्यालय चला आया था, वरना मैं तो आज आकस्मिक अवकाश पर रहनेवाला था। खैर...यह लीजिए मेरे आज के आकस्मिक अवकाश का प्रार्थना-पत्र और इजाजत दीजिए। कल सवेरे आपसे फिर भेंट होगी।"

ऐसा नहीं है कि हथियार के रूप में इसके प्रयोग की परंपरा सिर्फ कार्यालय-परिसर तक ही लागू हो। काफी वक्त इसे घर की चहारदीवारी में प्रयुक्त होते भी पाया गया है। बिना किसी बात पत्नी के तेवर चढ़ते दिखायी दिये तो पति महाशय ने निशाना साधकर हथियार चलाया—"होश में रहो और संभल जाओ, वरना मैं कल से ही आकस्मिक अवकाश लेकर कार्यालय जाना बंद कर दूंगा। पड़ोसियों से दुनिया भर की गपशप का सिलसिला बंद होते ही अक्ल ठिकाने आ जाएगी।" फौरन वह घुटने टेक देती है और बात बन जाती है।

कभी-कभी पत्नी इसे पति के विरुद्ध

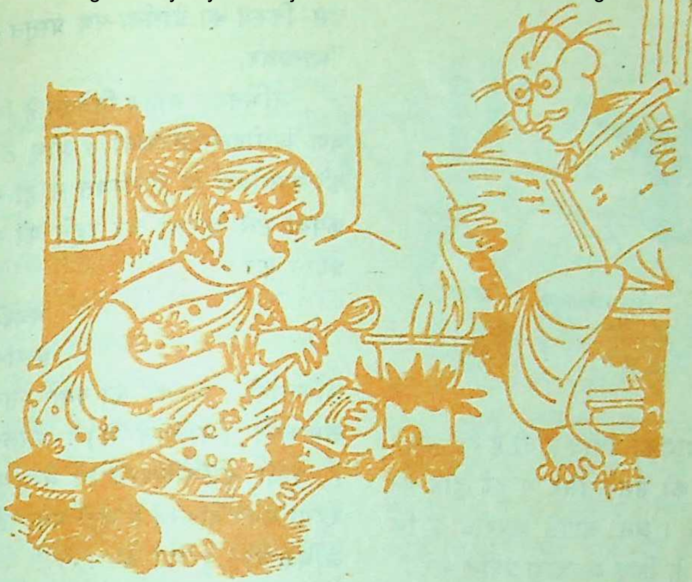

काम में ले लेती है। घर पर शाम को मेहमान आनेवाले हैं और पति महोदय दिन भर के काम के भय से समय पर दफ्तर जाने के लिए जल्दी-जल्दी तैयार हो रहे हैं। ठीक 'काउंट डाउन' के अवसर पर पत्नी की घोषणा सुनायी पड़ती है—"अजी, मैंने कहा, आज घर के काम से बचने के लिए दफ्तर की शरण लेना संभव नहीं है। सीधी तरह से आकस्मिक अवकाश का प्रार्थना-पत्र भिजवाइए और मेरे साथ काम में जुट जाइए।"

खैर, गनीमत यह है कि हथियारों की बेतहाशा दौड़ में व्यस्त देशों को इस हथियार का खयाल नहीं आया, वरना पेट्रोल के बाद इसी का नंबर आ जाता।

हमारा देश एक शांतिप्रिय देश है। तदनुसार देश में हथियारों के आम इस्तेमाल पर पाबंदी लगी हुई है (बेलन-जैसे कुछ घरेलू हथियारों को अपवाद-स्वरूप छोड़ दिया गया है।) इसी से प्रेरित होकर एक अनुशासनप्रिय अफसर द्वारा आकस्मिक अवकाश-रूपी हथियार पर भी नियंत्रण लगाने की बात सोची गयी। तत्काल यह आदेश जारी किया गया कि आकस्मिक अवकाश कोई जन्मसिद्ध अधिकार नहीं है। इसका प्रयोग अधिकारी की अग्रिम स्वीकृति के बिना नहीं किया जा सकता। नतीजा यह हुआ कि कार्यालय में कुछ दिलचस्प किस्म के प्रार्थना-पत्र आने लगे, जैसे—

"महोदयजी,

सेवा में नम्र निवेदन है कि प्रार्थी

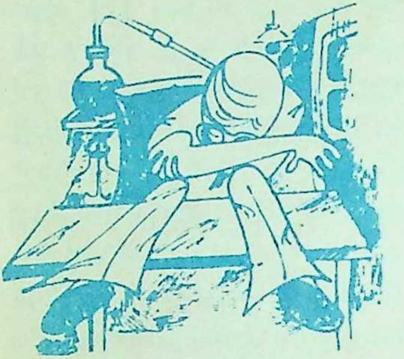

को ऐसी आशंका प्रतीत होती है कि अगले मंगलवार को उसके सिर में दर्द होने की संभावना है। अतः आपसे अनुरोध है कि उक्त दिन के लिए अवकाश प्रदान करें।

सधन्यवाद,

आपका आज्ञाकारी आदि, आदि"

अधिकारी ने गुस्से में घंटी बजायी और फौरन प्रार्थी को तलब किया।

"इस प्रार्थना-पत्र का क्या मतलब ?"

"श्रीमन, बात ऐसी है कि सिर में दर्द न हुआ तब तो कोई बात नहीं, ऑफिस आ जाऊंगा और इस प्रार्थना-पत्र को रद्द करवा लूंगा। मगर, मान लीजिए कि सिरदर्द हो ही गया तो यह स्वीकृत किया हुआ प्रार्थना-पत्र कितना काम आयेगा। मैं तो सावधानी बरत रहा हूं ताकि कानून भी न टूटे और आवश्यकता पड़ने पर मुझे परेशानी भी न हो।"

"गेट आउट," अफसर दहाड़ा।

एक अन्य स्थिति में अधिकारी के पास इस किस्म का प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत हुआ—

"मान्यवर,

अभिनंदन सहित निवेदन है कि कार्यवश अधोहस्ताक्षरकर्ता ७ और ८ तारीख को कार्यालय में उपस्थित न हो सकेगा। कृपया उसे 'फरलो' पर रहने की स्वीकृति प्रदान करें।

भवदीय,

फलां-फलां"

अधिकारी : 'फरलो' का क्या मतलब ?

कर्मचारी (भोलेपन से) : मतलब साफ है, यानी ऑफिशियली तो मैं ड्यूटी पर रहूंगा मगर वास्तव में छुट्टी मना रहा हूंगा।

अधिकारी : यू शट अप।

कर्मचारी : थैंक्यू सर।

आये दिन होनेवाली इस प्रकार की स्थितियों से परेशान होकर अफसर ने अपने आदेश को ढीला छोड़ दिया और कार्यालय में इस हथियार का फिर से स्वच्छंद प्रयोग किया जाने लगा।

जिज्ञासा होती है—क्या इस हथियार पर नियंत्रण लगाना संभव नहीं है? आखिर हर हथियार की काट बन गयी। तलवार के लिए कवच, भाले के लिए ढाल, यहां तक कि मिसाइल के लिए ऐंटी-मिसाइल बन गयी तो फिर सिर्फ इस आकस्मिक अवकाश नामक हथियार की ही कोई काट क्यों न बनी ? यदि कोई बनाये तो आवश्य नोबल-प्राइज पाये।

—६३, मेड़तिया सिलावटों का बास,
जोधपुर-३४२००१

हिंदी का विरोध क्यों?

• डॉ. प्रभाकर माचवे

भाषा के विकास को सरकारी तंत्र से मुक्त रखने की बात करने के बाद का. ना. सुब्रह्मण्यम कहते हैं कि केंद्र-सरकार ने और विभिन्न प्रदेशों में कई केंद्रों ने हिंदी के विकास के लिए धनराशियां दान के रूप में देकर, हिंदी के स्वीकार्य के प्रश्न को कुछ कमजोर बना दिया है, क्योंकि एक बार हिंदी सारे देश ने स्वीकार कर ली तो ये प्रचुर दानराशियां मिलनेवाली नहीं हैं। इसलिए अकादेमिक और नौकरशाही न्यस्त स्वार्थ बराबर इसी बात में लगे रहते हैं कि यह काम पूरा न हो पाये और निरंतर निलंबित होता रहे। ये न्यस्त स्वार्थ उन डाक्टरों की तरह होते हैं, जो न मरीज को अच्छा होने देते हैं, न मर्ज को खत्म होने देते हैं। अगर मरीज या मर्ज में से एक भी मर गया तो डाक्टर को फीस कौन देगा? दूसरे शब्दों में हिंदी अपनी स्वाभाविक गति से विकसित हो जाती, यदि सरकार ने नौकरशाही को, शिक्षालयों को और संस्थाओं को दान की पूंजी न दी होती। और अब तो वह मौका भी निकल गया कि हिंदी को राष्ट्रभाषा के नाते विकसित किया जाता। इसके लिए १९४७ सबसे अच्छा साल था, पर वह वर्ष निकल गया। अब देश की एक ही भाषा बनना मुश्किल काम है। अंगरेजी, कितनी ही उपेक्षित हो, अब भी देश में बढ़ती जाती है। और शायद बहुत वर्षों बाद वही हमारी लासानी राष्ट्र-भाषा बन जाए। अभी तो यह भी असंभव लगता है। उसके रास्ते में कई रोड़े हैं।

पिछले अंक में आपने 'हिंदी का विरोध क्यों?' प्रश्न पर सर्वश्री उमाशंकर जोशी, महाकवि पुट्टप्पा, शिवराम कारंत एवं का. ना. सुब्रह्मण्यम के विचार पढ़े। इस अंक में पढ़िए श्री सुब्रह्मण्यम के अतिरिक्त अन्य अहिंदी-भाषी लेखकों के विचार।

इस भूमिका के साथ सुब्रह्मण्यम ने कहा है कि हिंदी का विरोध सच है और राजनीतिक भी। भारत में कोई भी नयी बात, कितनी ही अच्छी हो, हमेशा कुछ रूढ़िवादियों की आलोचना का शिकार बनती है। अंगरेजी का भी ऐसा ही विरोध हुआ था, पर वह जीवित रही, क्योंकि –

उपयोगी थीं। उसके द्वारा नौकरियां मिलती गयीं। अब हिंदी भी वही काम करना चाहती है। यहां भी वही बात है। हिंदीतर क्षेत्रों में कुछ न्यस्त स्वार्थ हैं, जो समस्याओं का समाधान नहीं चाहते, पर उन्हें जिलाये रखना चाहते हैं। तीस वर्षों में भाषा, जाति, हरिजनोद्धार सब राजनीति से भरे प्रश्न हो गये हैं।

त्रि-भाषा का विकास इसलिए नहीं होता कि एक तो लोग और भाषाएं सीखने से सकुचाते हैं, आलसी भी हैं और हीनभावना भी है। हिंदी-भाषी डरते हैं कि हिंदीतर-भाषी कहीं उन पर मात न कर दें। इसलिए वे हिंदीतर लोगों के साहित्य की या हिंदी सीखने की जरूरत से ज्यादा प्रशंसा करते हैं। हिंदी साहित्य-संसार स्वयं और भी संकुचित होता जाता है और आशा यह करता है कि तमिलभाषी या बंगाली अपनी संकीर्णता छोड़ें। यह होने का नहीं। एक संकीर्णता से दूसरी संकीर्णता बढ़ती जाती है। हिंदी राज्यों में त्रि-भाषा-सूत्र का अर्थ हो गया केवल दो भाषा। इससे हिंदीतर भाषी चिढ़ते हैं और कहते हैं—"त्रि-भाषा क्या सिर्फ हमारे लिए है?"

"मैं अपनी पुस्तकों के हिंदी अनुवाद के बारे में उदासीन हूं," का. ना. सुब्रह्मण्यम कहते हैं, "साहित्य की दशा क्या तमिल और क्या हिंदी में दिन-ब-दिन गिरती जा रही है। भारत में अच्छे साहित्य के पाठक कहां हैं! इसलिए मैं अपनी रचनाओं के अनुवाद भारतीय भाषाओं से भिन्न अन्य भाषाओं में चाहूंगा। अगर कोई मेरी रचना अपनी मर्जी से चुनकर हिंदी में अनुवाद करना चाहे तो मुझे कोई आपत्ति नहीं, पर यदि हिंदी संसार चाहे कि मेरी सारी रचनाओं के बारे में कुछ भी जाने बिना, मैं ही उन्हें अपनी सर्वोत्तम कृति चुनकर बताऊं तो मेरी उसमें कोई रुचि नहीं।"

अब शेष सात उत्तर हिंदी में हैं। वे हैं मलयालमभाषी डॉ. विश्वनाथ ऐयर, कन्नड़भाषिणी कु. बी. वै. ललितांबा, तेलुगुभाषी श्री रमेश चौधरी 'आरिगपूडि', श्री बालशौरि रेड्डी, श्रीमती हेमलता आंजनेयुलु, तमिलभाषी श्री शौरिराजन और सिंधीभाषी डॉ. मोतीलाल जोतवाणी के। उनके उत्तरों में से कुछ प्रमुख नये मुद्दे मैं यहां देना चाहता हूं। पहले डॉ. विश्वनाथ ऐयर के उत्तरों से :

१. हिंदी का विरोध करनेवालों में तीन श्रेणियों के लोग हैं: अ—सरकारी कर्मचारी; आ—प्राध्यापक, अध्यापक, वैज्ञानिक; इ—राजनीतिक नेता, जो अभी तक अंगरेजी में ही अपना सारा धंधा करते आये हैं और सफलता पायी है, उन्हें सत्ता छूटने का डर है। दूसरे, उन्हें भारतीय भाषा-माध्यम पर भरोसा नहीं। भारत के स्वतंत्र होने के बाद भी उनके हृदय में पूर्ण

भारतीयता की लगन नहीं समा पायी। कुछ राजनीतिक नेता हिंदी-विरोधियों को खुश करने के लिए कहते हैं कि दक्षिण के लोग उत्तरवालों के गुलाम हो जाएंगे। दिल ही दिल में सभी स्वीकार करते हैं कि हिंदी ही संपर्क-भाषा होने लायक है। अंगरेजी हमेशा के लिए रखनेवालों का तर्क वही है लोमड़ीवाला कि 'मेरी भी पूंछ कटे, तुम्हारी भी, सबको एक-सी असुविधा हो!'

२. त्रि-भाषा सिद्धांत केवल शिक्षा तक सीमित है। सबसे नयी समिति है ईश्वरभाई पटेल समिति। इसकी नयी सिफारिश चालू हो तो जिन राज्यों में अपर मिडिल स्कूलों में हिंदी पढ़ायी जाती है वहां भी उस स्तर की हिंदी पढ़ाना बंद हो जाएगा।

३. अनेक हिंदी कार्यकर्ता भी जब सरकारी होते हैं, तब उनमें सरकार का तत्त्व प्रवेश करता है। वे सेवा और कष्ट सहना भूल जाते हैं। शिक्षामंत्रिगण राज्यों के हिंदी-प्रचार की समस्या पर विशेष जानकारी प्राप्त करते तो और लाभ होता।

दूसरे, आकाशवाणी के उपमहानिदेशक, उपन्यासकार 'आरिगपूडि' के पत्र से :

१. हिंदी-विरोध वास्तविक है। यह सोचना गलत है कि जो राजनीति-उत्तेजित है, वह वास्तविक नहीं है।

२. संपर्क-भाषा के रूप में हिंदी 'सिवा तमिलनाडु के सभी अन्य प्रांतों में स्वीकार्य है। समस्या तब पैदा होगी, जब सर्वत्र इसका उपयोग होगा।'

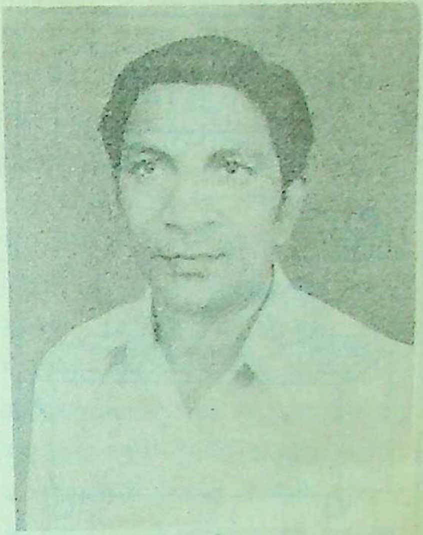

बाल शौरि रेड्डी

३. त्रिभाषा-सूत्र ठीक है, पर विद्यार्थी को इस तरह भाषाएं सीखने में इतनी शक्ति और इतना समय लगाना पड़ेगा कि वह और विषयों पर अपेक्षाकृत कम ध्यान देगा।

४. सरकार ने हिंदी के प्रचार की चेष्टा तो बहुत की है, पर वह 'ठीक तरह' से किया गया है, यह संशयात्मक है। यह भी सच है कि खर्च के अनुपात में इसे असफल अधिक कहा जा सकता है, बजाय सफल के।

तीसरे, श्री. शौरिराजन के अनुसार :

१. समूचे हिंदीतर प्रदेशों में हिंदी-विरोध अंगरेजीपरस्तों का स्वार्थसाधक

'जागो' साप्ताहिक
संपादक

अनिवार्य संस्कार-सा हो गया है। हिंदी-भाषी राज्यों में प्रच्छन्न हिंदी-विरोधी लोग उस संस्कार को बढ़ावा दे रहे हैं। हिंदी-विरोध एक राजनीतिक एवं सामाजिक भ्रष्टाचार की सूरत में मजबूत होता जा रहा है, जैसा कि हरिजनों पर अत्याचार, मुनाफाखोरी, घूसखोरी, जाति-प्रांतवाद, पद का दुरुपयोग आदि।

२. तीन भाषाएं अनिवार्य रूप से सिखानी चाहिए। विदेशी में अंगरेजी ही क्यों, रूसी, जरमन, अरबी, फारसी, फ्रांसीसी, जापानी क्यों नहीं ?

३. हिंदीभाषियों में राष्ट्रीय मानसिकता, जातीय चेतना, भारतीय साहित्यिक चिंतन और स्वस्थ साहित्य-प्रेम बहुत कम मात्रा में है। कमोबेश यही स्थिति सभी भारतीय भाषा-भाषियों में पायी जाती है।

४. सरकार शोभा के लिए, अप सत्ता-चमक के लिए कभी हिंदी समर्थन, कभी उसका अवमूल्यन कर रहती है। हिंदी-विरोध के तमाम सा सरकारीतंत्रों से ही वितरित होते है ऐसी कौन-सी पार्टी है जो हिंदी के प्र पर डटी रहे और सत्ता-छवि त्यागक भी हिंदी के लिए लड़ती हो ? हिंदी नाम पर हर साल लाखों रुपये फूंक 'केंद्रीय बिरादरी संस्थान' चलाते र में ही स्वजन-सुख पलता रहता है।

श्री बाल शौरि रेड्डी 'चंदामाम के संपादक ही नहीं, बड़े अच्छे मौलि हिंदी उपन्यास-लेखक और तेलुगु से हि में और हिंदी से तेलुगु में अनुवादक है उनका मत है—

१. शिक्षित वर्ग में भी हिंदी राजभाषा और संपर्क-भाषा के पद प प्रतिष्ठित करने में संदेह और भय व्याप है। उसके कई कारण हैं, उनमें ए यह है कि संशोधित संविधान की भाषा-संबंधी नीति में 'जब तक हिंदीतर क्षेत्रों के तीन-चौथाई सदस्य एकमत से हिं को स्वीकार नहीं करते, तब तक अंगरे चलती रहेगी।'

२. यदि हर प्रदेश के लोग दक्षि की कोई भाषा न सीखें, तो उनकी को आवश्यकता न होने से समय व्यर्थ कर में कोई तुक नहीं। हां, एकाध पड़ो भाषा का अध्ययन करने से उनका ज

हित होगा।

प्रो. ललितांबा और श्रीमती हेमलता आंजनेयुलू बंगलोर और मद्रास में हिंदी-अध्ययन और हिंदी-लेखन में व्यस्त हैं। उनके मत से "कर्नाटक में जनता हिंदी का विरोध नहीं करती। यहां का हर आटोरिक्शावाला, तांगावाला भी हिंदी समझता है। गांवों में भी यही हाल है। केवल दक्षिण कन्नड़ प्रदेश में थोड़ी दिक्कत है। हैदराबाद और महाराष्ट्र के निकट के कन्नड़भाषी हिंदी का खूब प्रयोग करते हैं, पर अब तो कन्नड़ के प्रोफेसर मान्य चिदंबरमूर्ति-जैसे विद्वान भी 'कन्नड़ बचाओ' आंदोलन में सक्रिय हैं। दिल्ली के साहित्य-सम्मेलन में भी 'भाषा प्रभुत्व' की बड़ी चर्चा रही... मैंने स्वयं 'अस्तित्ववाद' पर एक पुस्तक हिंदी में लिखी। उसके अंश 'ऋतम्भरा,' 'स्रोतस्विनी' पत्रिकाओं में छपे; पर पुस्तकाकार छापनेवाला हिंदी प्रकाशक नहीं मिलता।" हेमलता तो हिंदी-विरोध का सारा दायित्व द्रविड़ कषगम और 'द्रविड़ मुन्नेत्र कषगम' और अब 'अन्ना द्रमुक' जैसी राजनीतिक अलगाववादी पार्टियों पर डालती हैं। इन पार्टियों के सदस्यों के परिवारवाले बच्चे हिंदी सीखते हैं। सब लोग हिंदी चलचित्रों के शौकीन हैं; पर सार्वजनिक रूप में विरोधी हैं! ... जब तक अंगरेजी का प्रभुत्व रहेगा, हिंदी का जमना मुश्किल है। स्वतंत्रता के पूर्व दक्षिण ने हिंदी-प्रचार में अग्रगामित्व किया, अब वह जोड़-भाषा के रूप में भी उसका विरोध करती है।"

प्रो. डॉ. मोतीलाल जोतवाणी ने कहा कि यह हिंदी-विरोध विशुद्ध राजनीतिक कारणों से बढ़ाया जा रहा है। "पंजाब का हिंदू, राजनीतिक शक्तियों के हाथों में खेलकर अपनी मातृभाषा पंजाबी नहीं बताता, न वह घर में पंजाबी बोलेगा, बाहर जनसंख्या-विवरण आदि के लिए हिंदीभाषी बन जाएगा ... अंगरेजी अखबार 'हिंदी साम्राज्यवाद' का भूत खड़ा करते हैं। दो प्रतिशत अंगरेजी जाननेवालों के लिए ये अंगरेजी अखबार हैं, पर सरकारी कामकाज पर उन अखबारों का प्रभाव अट्ठानवे प्रतिशत है। ये अंगरेजी अखबार संत में राष्ट्रीय दैनिक बने बैठे हैं। हिंदी संपर्क-भाषा न हो, इसके मूल में कुछ राजनीतिक लोगों और अंगरेजी अखबारों का गलत प्रचार है ... हम अहिंदीभाषी हिंदी-लेखकों की क्या समस्याएं हैं, उनका जिक्र मैंने अपने लघु-उपन्यास 'पीली बत्ती पर' की भूमिका में किया है।"

(क्रमशः)

चित्रकार विंसेंट वान गॉग सारे जीवन में केवल एक ही चित्र बेच सका वह भी केवल ५८० रुपये में। गरीबी से तंग आकर ३७ वर्ष की अल्प आयु में ही उस ने आत्महत्या कर ली थी। १९७२ में उसका एक चित्र ९५ लाख रुपये में बिका है।

गजल

कुछ रोज से उदास हैं, मेरी गली के लोग
रंजिश के आसपास हैं, मेरी गली के लोग
कल तक न पूछता था कोई, नाम को जिन्हें
हो बैठे आज खास हैं, मेरी गली के लोग
हफ्तों के बाद आयीं हैं चेहरों पे रौनकें
बदले हुए लिबास हैं, मेरी गली के लोग
ईमान बदल देते हैं, तारीख की तरह
आये न कभी रास हैं, मेरी गली के लोग
दो-चार दिन गुजर गये, समझो बहुत हुआ
गंधक मिली पुटास हैं, मेरी गली के लोग
गिनने में उंगलियों पे भले पांच वे लोग
पर एक में पचास हैं, मेरी गली के लोग
सुर्खी किसी अखबार की फिर से नयी बने
इतिहास पे इतिहास हैं, मेरी गली के लोग

——राजकुमारी 'रश्मि'

सुरेश टेलर्स, नयी सड़क, चंपा बाग,
लश्कर, ग्वालियर-१

आओ वसंत त्योहा

ऐसा मन रंग दिया समय के आंसू
अब कोई रंगे शरीर
नहीं अंतर इतना
सूरज पिचकारी भरे हुए
बौछार बसंती डाल रहा
सरसों का आंचल भीग गया—
धरती सोने में ढाल रहा
ऐसा तन गल गया निरर्थ पसीने
भसमी बने अबीर, नहीं अंतर इतन
कोकिल ने मृदु-स्वर छेड़ दिया
सारा पलाश-वन महक गया
होली का धूल-भरा आंगन
मादक-गीतों से चहक गया
जीवन-वन जल गया भूख के पावक से-
कैसा भी बहे समीर, नहीं अंतर इतना!
आओ वसंत-त्योहार, हंसो
यह हंसने का ही मौसम है
हाथों में नया गुलाल भरो
इन होठों पर सरगम है
सारा कुछ भर गया हृदय की पीड़ा से
अब कोई करे अधीर
नहीं अंतर इतना

——मधुर शास्त्री

३२३३, जटवाड़ा, दरियागंज, दिल्ली-

किस
दुलहिन
बन बै
चल दे
पति-प
कभी
देवर
डसती
अनपढ़
भानुमत
बेचारा
इसकी
नटखट
यह नि
हो न
उल्टे

उल्टे बांस

किस डायन की नजर लग गयी
दुलहिन नयी-नवेली को
बन बैरागिन, जाने कब यह--
चल दे छोड़, हवेली को
पति-परमेश्वर, हठ के पूरे
कभी न घूंघट-पट खोला
देवर देस-बिदेश भटकता
डसती रैन, अकेली को
अनपढ़ बाप, झोंक दी कन्या
भानुमती के कुनबे में
बेचारा अब क्या उत्तर दे
इसकी सखी-सहेली को
नटखट ननद ताक में बैठी
यह निकले, फिर राज करूं
हो न जाए चरितार्थ कहावत–
उल्टे बांस बरेली को,

--अल्हड़ बीकानेरी

डी-५८, मोतीबाग-१,
नयी दिल्ली-११००२१

दुमदार दोहे

अपना-अपना देखकर सभी डालते रंग
जग के इस बर्ताव पर सो गये पीकर भंग
किसी ने घास न डाली
उनके दर्शन क्या हुए, हुआ गुलमुहर दिन
अपनी होली हो गयी रंग गुलाल के बिन
कलर के पैसे बच गये
होली अपने हाल पर हुए हया से लाल
सिर्फ तौलिया शेष है उसका भी ये हाल
कि वह भी ट्रांसपेरेंट है
काव्य-रसिक हज्जाम ने दिया उस्तरा मार
लहू देख कहने लगा, क्या कहने सरकार
कविता बह निकली है
मुझे न ऐसे देखिए चित्त न कीजे भंग
नहीं चढ़ेगा आपका मुझपर पक्का रंग
बाल बच्चेवाला हूं
बच्चों की पिचकारियां खींचे लाल लकीर
रक्त सभी का एक है कह गये दास कबीर
रंग के भेद मिटा दो
सत्ता, रंग न खेलियो; तुम गरीब के संग
तुम्हरी पिचकारी सदा उगले खूनी रंग
जो सदियों छूटत नाहीं है

--माणिक वर्मा

हरदा (म. प्र.)

हमारा क्या ?

हमारा नगर—बड़े-बड़ों का है
हमारा क्या ? हमारे बाप का क्या ?

हमारा घर—है ही नहीं
उजड़ना क्या ? ढहना क्या ?

हमारी डगर—हमें मालूम नहीं
नपाई क्या ? सफाई क्या ?

हमारा सफर—अंगरेजी का (शब्द) है
देश क्या ? विदेश क्या ?

हमारा सिर—दर्द कर रहा है
हिलाना क्या ? उठाना क्या ?

हमारी कमर—टूट चुकी है
लचकना क्या ? भटकना क्या ?

हमारा स्वर—भंग है
मिलाना क्या ? उभारना क्या ?

हमारा असर—नहीं के बराबर है
समाज क्या ? सरकार क्या ?

हमारा मिनस्टर—हमारा ही है
रोना क्या ? धोना क्या ?

हमारा कनस्तर—खाली है
होली क्या ? दीवाली क्या ?

—जैमिनी हरियाणवी

८७२, गुलाबी बाग, दिल्ली-७

कमाल

कवि ने मूड में कहा—
"अहा ! !
आज सूरज कितना लाल है ?"
नेता बोला—
"सब हमारी पार्टी का कमाल है"

राजनीति

कवि ने कहा—
"लक्ष्मी तू बड़ी है
गरीब, अमीर सभी के सपनों में आती है"
नेता बोला—
"राजनीति उस से भी बड़ी है
जो बासठ करोड़ को सपने दिखाती है!!"

—सुरेश 'नीरव'

९/ए-अशोक कॉलोनी, ग्वालियर-१ (म.प्र.)

रास्ता बंद है

मैं विवाहित, तुम कुमारी
तुमसे जब परिचय हुआ था
तब तुम्हारा हंसके मिलना
मुझ पे जादू कर गया था
मुझको कुछ ऐसा लगा था
फूल इक ऐसा मिला है
जो कभी देखा नहीं है
यह मधुर संगीत मैंने
इससे पहले कब सुना था ?

क्या हो गया है ?

तेरे बंदों को क्या हो गया है
जिसको देखो खुदा हो गया है
मुल्क में सब मयस्सर है लेकिन
सिर्फ ईमां हवा हो गया है
अस्पतालों की हालत न पूछो
सारा पानी दवा हो गया है
पहले इनसान बंदर था यारो
अब मुकम्मिल गधा हो गया है
जानवर से शिकायत नहीं है
आदमी मरखना हो गया है
जब से शादी हुई है हमारी
सारा घर आगरा हो गया है
सिर्फ रोटी जुटाने में हुल्लड़
आदमी बावला हो गया है

—हुल्लड़ मुरादाबादी

स्टेशन रोड, मुरादाबाद (उ. प्र.)

डूबना

वे जो काम हाथ में लेते
उसी में डूब जाते थे
इसीलिए
उनके पास
हजारों लोग आते थे
एक दिन
उनके पास
एक ऐसा व्यक्ति आया
जिसने उनसे
कुआं खुदवाया

—मधुप पांडेय

३१७, अभ्यंकर नगर, नागपुर-१०

यह सजा कमरा तुम्हारा
साफ-सुथरा ख्वाब-जैसा
स्वर्ग-सा मुझको लगा था
चाय जो तुमने पिलायी
इक नशा-सा लेके आयी
तब मुझे अनुभव हुआ था
मुझको वह सपना मिला है
जो कहीं पर खो गया था
जिस्म की राहों पे मेरे
एक दीपक जल गया था
तुममें पायी थी वह नारी
जो कि कवि की कल्पना है
जो कला की कामना है

यह तो मैं भी जानता था
मैं न तुमको पा सकूंगा
तुमसे मेरा खुल के मिलना
एक अफसाना बनेगा
फिर भी यह कविता लिखी थी
मेज पर जो रह गयी थी
उसको पढ़ के मेरी पत्नी
मायके को जा चुकी है

—सईद सुहरावर्दी

ऐवान-ए-गालिब, नयी दिल्ली-२

हंसिकाएं

स्त्री-पुरुष समानता के समर्थक एक सज्जन बड़े भाव-विभोर होकर कह रहे थे, "स्त्री के घरेलू कामों में पुरुष को भरसक हाथ बटाना चाहिए। . . . मैं खुद रसोई के काम में अपनी पत्नी की मदद करता हूं।"

"आप क्या मदद करते हैं ?" एक महिला पूछ बैठीं। वे सज्जन बड़े गर्व से बोले, "महोदया, साग-सब्जी मैं अपने हाथ से काटता हूं। मसाला खुद कूटता हूं। चटनी मैं पीसता हूं। रोटी मैं बेलता हूं। तवे पर से रोटी मैं उतारता हूं और करछुल या चमचे से चीजें भी मैं खुद ही परोसता हूं . . ."

"आपने यही सब काम अपने लिए क्यों चुने हैं ?"

"क्योंकि, आप खुद समझ सकती हैं, चाकू, मूसली, बटनी, बेलन, चिमटा, करछुल और चमचा पत्नी के हाथ में रहने से उसका पलड़ा जो भारी हो जाएगा !"

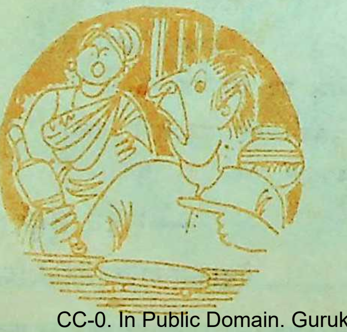

एक महाशय ने अपने मित्र से कुछ रुपये उधार लिया। बरसों गुजर गये, सैकड़ों तकाजों के बावजूद मित्र ने रुपया वापस करने का नाम ही नहीं लिया। एक दिन महाशय ने कहा, "अब तो मेरा इनसानियत पर से विश्वास ही उठ गया !"

मित्र ने तत्परता से कहा, "भाई इनसानियत पर से विश्वास उठ जाए तो कोई बात नहीं, मित्रता पर से विश्वास नहीं उठना चाहिए।"

ट्रेन में, रसीद हाथ में लिये हुए, एक नेत्रहीन व्यक्ति ने कहा, "भाइयो और बहनो, आपमें से जो कोई हमारे अंध-विद्यालय के लिए एक रुपया दान देगा, उसके नाम की मैं रसीद काट दूंगा और जो कोई इससे कम पैसा देगा उसे मैं गुप्तदान के रूप में स्वीकार कर लूंगा।"

एक महिला ने उसे चुपके-से एक अठन्नी थमा दी। इस पर उस नेत्रहीन ने कहा, "भाइयो, अभी एक बहन ने मुझे आठ आने गुप्तदान में दिये हैं। मैं इन्हें . . . बहनजी आपका नाम . . . धन्यवाद देता हूं।"

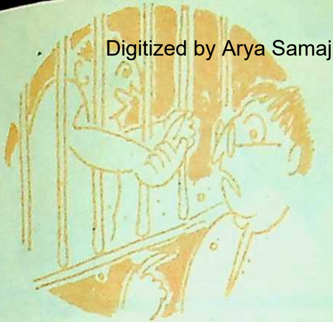

पागलखाने में एक दर्शक को रोककर एक पागल बोला, "शायद आप यह जानना चाहेंगे कि मैं यहां क्यों आया !"

दर्शक ने बड़े सकुचाते हुए कहा, "फरमाइए !"

पागल बोला, "भाई, बदकिस्मती से मैं लोकतंत्र का शिकार हुआ हूं !"

"वह कैसे ?" दर्शक ने उत्सुकता से पूछा।

"सुनिए, जब मैं बाहर था तब चारों ओर पागलों से घिरा हुआ था, क्योंकि दुनिया में मुझे छोड़कर बाकी सब पागल थे ..."

"लेकिन, तब आप यहां कैसे आ गये ?" उन्होंने पूछा।

"क्योंकि उनका बहुमत था, उन्होंने मुझे यहां बंद करा दिया," पागल ने बड़े इत्मीनान से कहा।

★

दो परस्पर-विरोधी देशों के दो नागरिकों के बीच हुई बातचीत : "हम लोगों में एक बुनियादी फर्क है। तुम लोग पैसों को संभालकर रखते हो और हम लोगों को।"

"बजा फरमाया आपने ! हम पैसों को ताले में बंद करके रखते हैं और आप लोगों को।"

—राजेश शर्मा

हंसिकाएं काव्य में

ड्राई डे

सदा शराब छलकती आंखों में
अब बेरुखी देखकर बोले वे—
—आज यहां भी ड्राई डे !

पहचान

संसद में नयी भीड़ देखकर
उनका था कहना
अपनी पहचान बनाये रखने के लिए
चुनाव-चिह्न लगाये रखना

प्रत्याशी

चुनाव के प्रत्याशी पति-पत्नी ने
जनता से कहा—
हम अपने भाषण में इतना ही कहेंगे :
घर से लेकर चुनाव क्षेत्र तक—आपके लिए
लड़ते रहे हैं... लड़ते रहेंगे

अबला

अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी
अब-ला, सब-ला ... कह-कह मांग करे
मनमानी

—डॉ. सरोजनी प्रीतम

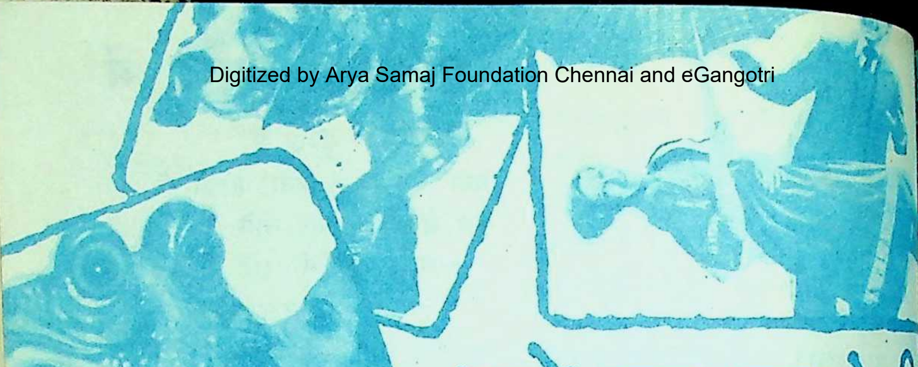

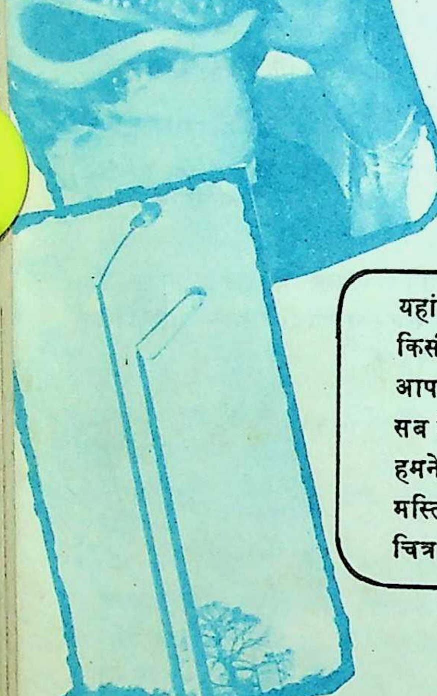

इन्हे हम दूर से भी पहचान लेते हैं

यहां बने हुए चित्र व्यर्थ नहीं हैं। ये सब जुड़े हुए हैं किसी न किसी लेखक के नाम के साथ। पहचान करना आपका काम है। गलती न कीजिएगा वरना हमारी सब मेहनत व्यर्थ जाएगी। एक बात और, जो तिगड़ी हमने जोड़ी हैं, उनके भी अर्थ हैं अपने-अपने। अपने मस्तिष्क पर जरा जोर दीजिए और खोजिए कौन-सा चित्र किसके लिए है ?

—संपादक

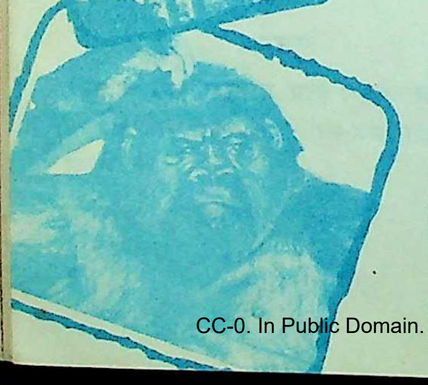

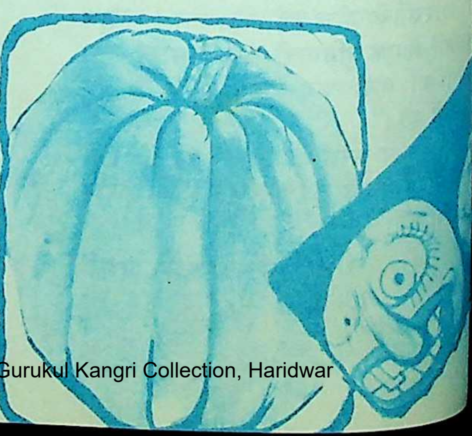

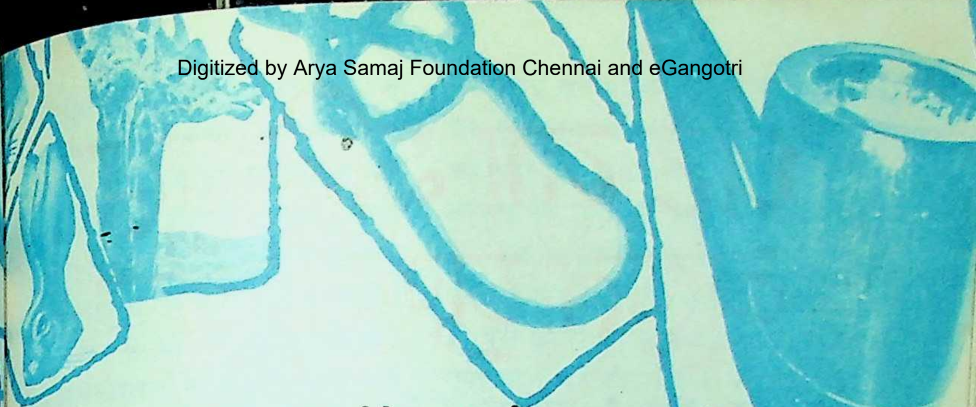

हुए हैं
करना
मारी
तिगड़ी
अपने
न-सा
पादक

अज्ञेय । माया गोविंद । धर्मवीर भारती ।
नामवरसिंह । भवानीप्रसाद मिश्र । राजेन्द्र अवस्थी ।
अमृतलाल नागर । हरिशंकर परसाई । श्यामनंदन किशोर ।
उपेन्द्रनाथ अश्क । कृष्णा अग्निहोत्री । कन्हैयालाल नंदन ।
रमानाथ अवस्थी । गोपालकृष्ण कौल । महीपसिंह ।
अमृता प्रीतम । चंदूलाल चंद्राकर । सुरेन्द्र तिवारी ।
जसवंतसिंह विरदी । कृष्णा सोबती । वीरेन्द्र मिश्र ।
कैलाश वाजपेयी । मनोहरश्याम जोशी । शरद देवड़ा ।
रामरिख मनहर । जयप्रकाश भारती । योगराज थानी ।
सुरेन्द्रप्रताप सिंह । श्रवणकुमार । बालस्वरूप राही ।
सुरेन्द्र शर्मा । बालकवि बैरागी । उमाकांत मालवीय ।
राही मासूम रजा । शरद जोशी । शीला झुनझुनवाला ।
शमशेर बहादुर सिंह । कुंअर नारायण । नीरज ।
अजितकुमार । मन्नू भंडारी । जगदीश गुप्त ।
गंगाप्रसाद विमल । नरेन्द्र कोहली । रामदरश मिश्र ।

घंटे का इतिहास बहुत पुराना है

● भक्त सियारामशरणदास

हमारे एक दोस्त हैं—परमात्माशरण 'परमात्मा', पर इस नाम से उन्हें कोई नहीं जानता। वे अपने महल्ले और दोस्त-अहबाब में ही नहीं, बड़े-बड़े आला अफसरों में भी केवल एक नाम से जाने जाते हैं और वह नाम है—घंटेवाला। यह नाम जो उन पर मजाक-मजाक में थोपा गया था, आज उनकी अच्छी-खासी 'गुडविल' बन गया है और उनकी रेवड़ियों की दुकान इसी नाम के कारण बिना कोई विज्ञापन किये ही सारे शहर में मशहूर हो गयी है। और चूंकि इस नाम का उन्होंने कोई कापीराइट नहीं करवाया, इसलिए शहर की गली-गली में इस नाम की दुकानें खुल गयीं लिहाजा परमात्माशरण को अपनी दुकान के साइनबोर्ड पर 'असली घंटेवाला' लिखवाना पड़ा।

बकौल परमात्माशरण के, उन्हें यह नाम जन्म के समय से ही मिल गया था, यानी हुआ यह था कि जब उन्होंने जन्म लिया तो उनकी शिवभक्त दादी ने परात या थाली झनझनाने की बजाय पूजाघर में रखा घंटा ही टनटना दिया था। परमात्माशरण के जन्म पर घंटे ने जो उनका साथ पकड़ा तो बस अब बकौल खुद उनके, वह उनके दोबारा जन्म लेने की तैयारी करते वक्त तक साथ ही देगा।

परमात्माशरण को पहले 'घंटा' शब्द से बेहद नफरत थी। बेचारे घंटों रोते रहते थे अपने नाम पर। पर भला हो उनके एक पत्रकार चचा चोंच का, जिन्होंने उन्हें 'घंटा' शब्द के महत्त्व से परिचित कराया, उन्हें जहांगीर के घंटे की कहानी सुनायी और बताया कि यदि घंटा न होता तो न तो धोबिन को न्याय मिलता और न जहांगीर एक इंसाफपसंद बादशाह के बतौर मशहूर होता। चचा चोंच की बात परमात्माशरण के जहन में बखूबी धंस गयी। फिर तो जैसे-जैसे वे बड़े होते गये, उन्हें घंटे का महत्त्व समझ में आने लगा। उन्हें लगा, क्या मंदिर, क्या गिरजाघर, क्या स्कूल और क्या रेलवे-स्टेशन, सभी जगह घंटे का एक अहम 'रोल' है।

अब मंदिर को ही लें। यदि घंटा

बजाये बिना प्रवेश कर गये तो लगता है कि भगवान कोई तवज्जह ही नहीं देंगे। आधी रात को गिरजाघर का घंटा न बजे तो नया साल आ ही नहीं पायेगा। स्कूल में तो घंटा बिना काम ही नहीं चल सकता। स्कूल की बात से एक बात याद आ गयी। स्कूली जीवन में घंटे का महत्त्व समझाते हुए परमात्माशरण ने ही यह बात मुझे बतलायी थी। उनका कहना था कि स्कूल में घंटा तो एक ही होता है, पर उसकी आवाज के हर घड़ी अर्थ बदलते रहते हैं। वे ठीक कह रहे थे। मुझे भी याद आया कि वाकई स्कूल में घंटा तो एक ही था, पर सुबह वह यानी उसकी आवाज जानलेवा लगती थी। अमूमन पहला घंटा यानी 'पीरियड' अंगरेजी का ही होता था। दूसरे 'पीरियड' का घंटा तो हम लोगों की हथेलियों पर पसीना ही ले आता था। यह 'पीरियड' गणित का होता था। जब दूसरे 'पीरियड' की समाप्ति का घंटा बजता था तो मन करता था कि वह बजता ही रहे। बड़ा ही सुकून मिलता था उसे सुनने में। इसीलिए दूसरा 'पीरियड' शुरू होते ही हम मनाने लगते, 'हे भगवान, महादेव को जल्दी घंटा बजाने की सुबुद्धि दे। घड़ी आगे कर दे।'

महादेव हमारे स्कूल का चपरासी था—महाभंगेड़ी! उसके घंटा बजाने का अंदाज ही निराला था। या फिर यह हो सकता है कि हमें अपने मन के मूड के अनुसार उसकी आवाज समय-समय पर अलग-अलग लगा करती थी। पर एक बात जरूर है, महादेव छुट्टी का घंटा कुछ इस अंदाज से देर तक बजाता कि मुरझाये चेहरे खिल उठते।

एक बार की बात है कि जाने किस झोंक में महादेव ने दो बजे की छुट्टी में ही पूरी छुट्टी का घंटा बजा दिया। अब क्या था! घंटे की आवाज सुनते ही पूरा स्कूल आनन-फानन में स्कूल से बाहर था। यहां तक कि शिक्षकों के साथ-

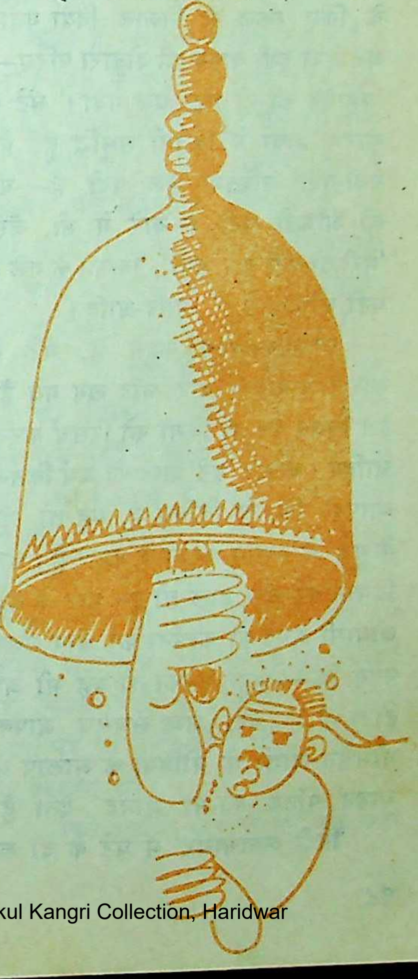

साथ हमारे इंगलैंड-रिटर्न, समय के पाबंद हेडमास्टर साहब तक, जो सबके 'सर' थे, स्कूल के फाटक की ओर चल पड़े। वह तो अचानक अपना छाता खोलते वक्त 'सर' की नजर अपनी घड़ी पर पड़ गयी और वे तुरंत आफिस की ओर लौट पड़े। पर तब क्या हो सकता था! आधा स्कूल तो घर की आधी सड़क नाप चुका था।

इस घटना के दूसरे दिन महादेव का ही घंटा बज गया। यानी उसे एक सप्ताह के लिए स्कूल से निकाल दिया गया। अब जरा इसी वाक्य को दोबारा पढ़िए—'महादेव का ही घंटा बज गया।' घंटे के कारण भाषा में कितनी समृद्धि हुई है। नयी-नयी उक्तियां चल पड़ी हैं—घंटे की श्रीमती घंटी के बारे में भी, जैसे, 'मेरी तो घंटी बज गयी', 'बिल्ली के गले में घंटी कौन बांधे?' आदि-आदि।

परमात्माशरण कहते हैं, घंटे के कारण भाषा को चार चांद लग गये हैं। इस विषय पर तो किसी को रिसर्च करना चाहिए! वाकई 'घंटे' शब्द का अर्थ कितना व्यापक, कितना विविध है, यह तो 'गूंगे के गुड़' के समान बयान के बाहर है। जरा दिमाग पर जोर डालें तो इस शब्द के बहुआयामी अर्थों की कल्पना कर आप उछल पड़ेंगे कि—'अहा, इसका तो यह भी अर्थ होता है!' घंटा शब्द सचमुच आपको भीमसेन जोशी के जोगिया के आलाप या माडर्न पेंटिंग का-सा आनंद देता है।

'हिंदी शब्दसागर' में घंटे के दो रूप बतलाये गये हैं। एक घंटा वह जो ब बरतन के आकार का होता है और जिस लटकते लंगर को हिलाकर आवाज की जाती है और दूसरा घंटा वह थाली के आकार का होता है और मुगरी बजाया जाता है। इसे घड़ियाल कहते हैं।

एक दिन की बात है। एक छुट नेता ने परमात्माशरण को घंटा सु दिया तो वे चिढ़कर बोले, 'है यह घं कर्ण का वंशज!'

घंटाकर्ण नाम के बारे में हमने जिज्ञा की तो वे बोले, 'कैसे भक्त हो तुम? घंटा कर्ण को नहीं जानते?'

हमने हार मान ली तो वे बोले 'सुनो, घंटाकर्ण नाम का एक परम शिव उपासक था। शिव के सिवा किसी और के नाम को सुनना ही नहीं चाहता था इसलिए उसने अपने दोनों कानों में घं लटका रखे थे। जब भी कोई विष्णु राम का नाम लेता तब वह अपने कानों लटके घंटे बजा देता। घंटे की आवाज में ये दोनों नाम खोजाते।'

परमात्माशरण ने आगे कहा—'आ के हमारे समाज में सभी घंटाकर्ण हैं खासकर नेता, जो मतलब की बात होने पर अपने कानों में लटके अदृश्य घंटे बजा देते हैं। और नेता ही क्यों, अ सर, हम-तुम सभी कभी न कभी घंटाकर्ण बन ही जाते हैं।'

अब हमारी समझ में आया कि क्यों जब परमात्माशरण का कोई काम पूरा नहीं

होता है तब निराश होनेवाले व्यक्ति को बजाय देशज गाली देने के बस यही कहते हैं, 'हो यार तुम पूरे घंटाकर्ण !'

परमात्माशरण बतलाते हैं, और ठीक ही बतलाते हैं, कि सैकड़ों वर्ष पूर्व जब आचार्यों के बीच साहित्य में रस-निष्पत्ति का विवाद चला तब घंटा ही काम आया था। हिंदी-साहित्य के विद्यार्थी इस बात की ताईद कर सकते हैं। एक आचार्य हुए हैं अभिनव गुप्त। उन्होंने ही घंटे का उदाहरण देकर समझाया था कि रस कहां है। उनका कहना था कि जब घंटा बजता है तब आनंद उसकी पहली आवाज से नहीं आता। आता तो आनंद पहली आवाज के बाद होनेवाली गूंज में है, जो कानों में रस घोलती रहती है। यही बात किसी रचना में है। रचना का अभिधार्थ उतना आनंद नहीं दे पाता जितना उसकी व्यंजना में भरा अर्थ। उदाहरण के लिए, इसी 'घंटे' शब्द को ले लीजिए। अब इसके अभिधार्थ और व्यंजनार्थ में बड़ा फर्क है। अभिनव गुप्त कोई नादान नहीं थे जो उन्होंने 'घंटे' का उदाहरण यों ही दिया।

अब घंटे-घंटे में भी फर्क है। अंगरेजी में तो घंटे के लिए—चाहे विशाल घंटा हो या छोटी घंटी—एक ही शब्द है : 'बेल'। अंगरेजी में 'सब धान बाइस पसेरी' हैं। अंगरेजी अभिव्यक्ति के मामले में कितनी दरिद्र है, यह अंगरेजी-भक्तों को घंटे का उदाहरण देकर समझाया जा सकता है।

घंटे का इतिहास बहुत पुराना है—कोई तीन-चार हजार वर्ष पुराना। 'इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका' के अनुसार बेबीलोन में तीन हजार वर्ष पुराना एक घंटा मिला है। भारत, चीन, जापान, बर्मा और अन्य देशों में प्राचीनकाल से घंटे का उपयोग होता रहा है। पहले घंटा तांबे का बनता था, अब सोने-चांदी के घंटे भी बनने लगे हैं। राजा सोलोमन ने अपने मंदिर की छत पर सोने के घंटे लगवाये थे, जिन्हें बजाकर पक्षियों को भगाया जाता था।

कहते हैं, सबसे बड़ा घंटा रूस में है। सन १७३३ में बना यह घंटा १९३ टन का है। २७८ फुट ऊंचे इस घंटे की शान ही निराली थी। रूस के अलावा चीन में बड़े-बड़े घंटे बनाने का रिवाज है, पर वहां सबसे बड़ा घंटा केवल ५३ टन का है। कहीं रूस और चीन के मध्य विवाद का यह घंटा तो कारण नहीं है?

घंटा सिकंदर की अर्थी पर

घंटे के विविध उपयोग हैं। पुराने जमाने में अर्थी ले जाते समय घंटा बजाया जाता था। कहते हैं, सिकंदर की अर्थी पर भी एक घंटा रखा गया था। प्रसिद्ध इतिहासकार हेरोडोटस के अनुसार स्पार्टा में जब राजा की अर्थी निकलती थी तब स्त्रियां छोटे-छोटे घंटे बजाते हुए सड़कों पर निकल पड़ी थीं। इसी तरह कभी वस्त्रों पर भी छोटी-छोटी घंटियां लटकाने का रिवाज था।

आपने रेल के स्टेशनों पर भी घंटा

ज्ञान-गंगा

बलीयसां प्रशमतां काले विक्रमतामपि।
सम्पदो नापसर्पन्ति प्रतीपमिव निम्नगाः॥

—समय पर पराक्रम करनेवाले तथा विनम्र होनेवाले बलवान पुरुष की संपत्ति कभी नहीं जाती, जैसे नीचे की ओर बहनेवाली नदियां नीचे की ओर आना नहीं छोड़ती।

न जातु गच्छेद्विश्वासं सन्धितोऽपि हि बुद्धिमान्।
अद्रोहसमयं कृत्वा वृत्रमिन्द्रः पुरावधीत्॥

—संधि करके भी बुद्धिमान किसी का विश्वास न करे। फिर बैर न करने की बात कहने पर भी वृत्त असुर को इंद्र ने मार डाला।

न स्वल्पस्य कृते भूरि नाशयेन्मतिमान्नरः।
एतदेवात्र पांडित्यं यत्स्वल्पाद्भूरिरक्षणम्॥

—बुद्धिमान मनुष्य को चाहिए कि थोड़े के लिए अधिक का नाश न करें। इसी में बुद्धिमानी है कि थोड़े से अधिक की रक्षा करें।

दीपो भक्षयते ध्वांतं कज्जलं च प्रसूयते।
यदन्नं भक्ष्यते नित्यं जायते तादृशी प्रजा॥

—दीप अंधकार को खा जाता है और काजल को पैदा करता है। सत्य यह है कि जो जैसा अन्न खाता है उसको वैसी ही संतति होती है।

—प्रस्तोता : महर्षिकुमार पाण्डेय

देखा होगा। जब यह बजता है तब त तरह की प्रतिक्रियाएं होती हैं। कुछ ज वाले खुश होते हैं कि 'चलो, आखिर म तो आयी।' कुछ दुखी भी होते हैं 'अब के बिछड़े न जाने कब मिलें

मौत की हु

एक घंटा फायर-ब्रिगेड का भी होता आम तौर पर फायर-ब्रिगेड का घंटा में आतंक पैदा करता है। उसकी आ सुनते ही सड़क ऐसी साफ हो जात मानो कर्फ्यू लग गया हो, या फिर म हुंकारती चली आ रही हो। पर कु लोग फायर-ब्रिगेड के घंटे को भी अ मुहब्बत का पैगाम ले जानेवाला नाम बना लेते हैं।

घंटाघर और घंटेवा

सुना है कि दिल्ली के चांदनी-चं में कभी दो ही चीजें मशहूर थीं। एक घंटाघर और दूसरा घंटेवाला। घंटेवा दिल्ली की एक प्रसिद्ध मिठाई की दु है, जहां से कभी लाल किले के बादश को मिठाई भेजी जाती थीं। यह मश दुकान आज भी है। हां, घंटाघर अलब ढह चुका है। दिल्ली के पुराने बुजुर्गों इस घंटेघर के किस्से सुने जा सकते

बहरहाल, मेरा खयाल है कि भी घंटे की महत्ता से परिचित हो होंगे। इसलिए अब भाई परमात्माश के नाम के आगे 'घंटेवाला' शब्द पढ़ या सुनकर मुझे हंसी नहीं आती, ब ज्ञान के दरवाजे खुल पड़ते हैं।

राग तरकारी

• शंकर पुणतांबेकर

मैं उस किताब को देखता ही रह गया। वास्तव में मैंने समझा कि वह 'राग दरबारी' है। मेरा कौतूहल जागा कि शायद यह कोई उपन्यास है राग दरबारी की तर्ज का। मेहमानी में कैद था, इसलिए पैरोल की दृष्टि से अच्छी-सी किताब खोज रहा था। अनेक किताबों में से यह हाथ पड़ गयी—'राग तरकारी।' कौतूहलवश उसी को पढ़ने लगा। जिस लेखक ने किताब लिखी थी उसे मैं जानता था। वह एक जाना-माना व्यंग्य-लेखक था। किताब तरकारी यानी आलू, बैंगन, मटर, मेथी आदि की बागवानी पर थी। मैं सोचता रहा कि इस लेखक ने कब हल चलाया जो ऐसे विषय पर कलम चला दी!

किसानी का काम कलम से

वास्तव में यह काम तो हल के ग्रेज्युएटों का है। अब हल का ग्रेज्युएट कलम लेकर खेती में जुट गया है, तो उधर बेचारे कलम के ग्रेज्युएटों पर बुरी बीत रही है। उन पर हल लेकर खेतों में जाने की नौबत आ गयी है।

अब इस जाने-माने व्यंग्य-लेखक पर तरकारी जैसे विषय पर लिखने की नौबत क्यों आ गयी? हो सकता है उसका घर न चल रहा हो, या घर चल रहा हो तो दिमाग न चल रहा हो। या उसने सोचा हो, जिंदगी में कम-से-कम एक पुस्तक तो ऐसी लिख ही जाऊं जो आलू-बैंगन तो न हो, पर आलू-बैंगन की तरह बिक सके। इसलिए उसने सोचा यदि तरकारी में बिक गया, तो जरुर ही उसका अगला कदम फलों की ओर बढ़ेगा। तरकारी तो सिर्फ उसका पेट ही भर सकती है जबकि फल की किताब उसे और ज्यादा

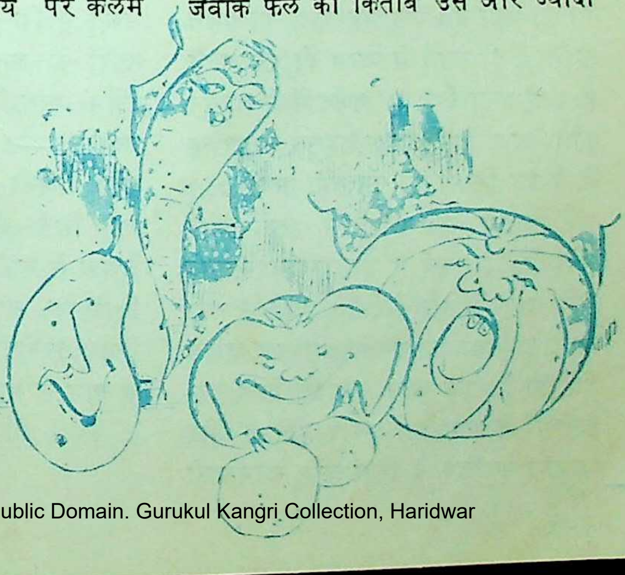

फल दे जाएगी। वह गली में से सड़क पर आ विराजेगा। संभव है वह फिर स्वास्थ्य और ज्योतिष-जैसे विषयों की ओर बढ़े। स्वास्थ्य की किताब उसके स्वास्थ्य को और ज्योतिष की किताब उसके भविष्य को बना देगी।

तरकारी रूपी दुल्हन बहुत कुछ लाती है

हम अब तक जानते ही नहीं थे कि तरकारियों का हमारे जीवन में इतना महत्त्व हो सकता है। लेखक ने कहा है कि खाने में तरकारी न हो, तो वह खाना नायिका-विहीन उपन्यास या फिल्म-जैसा बन जाता है। लेखक के विचार में दाल ऐसी औरत है जो दहेज में सिर्फ प्रोटीन लाती है, जबकि तरकारी प्रोटीन के साथ-साथ नाना प्रकार के जीवन सत्त्व, खनिज, क्लोरोफिल आदि कितने ही पोषक तत्त्व लाती है।

आलू के वर्णन में प्याज की गंध

लेखक की शैली कहीं-कहीं बड़ी अजीब-सी हो गयी है। जब वह आलू का वर्णन करता है तो उसमें से प्याज की गंध आती है, इसी तरह बैंगन के वर्णन में से लहसुन की। अतः जिन्हें प्याज-लहसुन से परहेज है, वे इन हिस्सों को पढ़ नहीं पायेंगे।

किताब खूब बिकेगी इसमें कोई संदेह नहीं। संभव है जो तरकारी खरीद नहीं सकते वे भी खरीद। इसलिए नहीं कि वे उन्हें अपने आंगन में उगा सक, बल्कि इसलिए कि यह जान सक कि किन तरकारियों के क्या-क्या स्वाद होते हैं और स्वास्थ्य के लिए वे किस तरह लाभकारी होती हैं। वे बेचारे इस तरह की पुस्तकों के अभाव में तरकारियों के स्वाद और उनसे होनेवाले लाभ से पूरी तरह वंचित रह जाते हैं। सरकार इसीलिए ऐसी पुस्तकों के लेखन, प्रकाशन के लिए काफी प्रोत्साहन और पुरस्कार देती है।

अच्छा खासा टॉनिक

और जो तरकारी खरीद सकते हैं, उनका तो कहना ही क्या? वे तो खरीदेंगे ही। ये भी इसीलिए नहीं कि अपने आंगन में उगा सकें, बल्कि इसलिए कि हम तरकारी खाते हैं यानी क्या खाते हैं? राग तरकारी के रूप में इन्हें किताब क्या मिल गयी जैसे अच्छा-खासा टॉनिक ही मिल गया। पढ़े-लिखे घरों में ऐसी किताबें इसीलिए टॉनिकों-जैसी देखी जाती हैं और इनका रसास्वादन साहित्य की पुस्तकों से भी अधिक रूचि के साथ किया जाता है।

अब कुछ निठल्ले लोग ऐसे भी हो सकते हैं कि वे पुस्तक में विवेचित सूचनाओं के अनुसार तरकारी उपजाने ही लगें। तरकारियां उग भी सकती हैं, न उगें ऐसी बात नहीं। पर संभव है वे लगायें आलू, भिंडी या बैगन और पैदाइश हो जाए मिर्च की। ऐसा इसलिए कि इस लेखक ने कभी व्यंग्य नहीं लिखा, निबंध, रिपोर्ताज, संस्मरण ही लिखे, लेकिन वे निबंध, रिपोर्ताज, संस्मरण न बनकर व्यंग्य के नाम से बाजार में ठाट से चला दिये।

—१६३, निल्हा पेठ,
जलगांव-४२५००१

बचत का लायसेंस

• रोमेश जोशी

रुपयों से, रुपयों के लिए, रुपयों के द्वारा बनाये गये उस भवननुमा भवन के दरवाजे पर पहुंचने तक मैं पूरी तरह रुआब से भरा था। जेब में रखे पैसों से बैंक में बचत का खाता खुलवाना था। जिंदगी में पहली बार पूरे एक सौ सत्ताइस रुपये बचा पाने के धन घमंड से मन गरजत घोरा था। लेकिन बैंक का दरवाजा पार करते-करते फूला हुआ सीना, चमकता चेहरा न जाने कैसे संकोच से भर गया था। शायद बैंक के रुपयों की दीवारें देख मेरे एक सौ सत्ताइस रुपयों को उनके बौनेपन का अहसास हो गया था। लाखों-करोड़ों के नोट। खाली करने के लिए न जाने कितने नागरवाला लग जाएं। क्या बात है!

इसलिए दरवाजे तक मैं जो कंधे के ढाई फुट ऊपर तने छाते के समान था, फूला हुआ, उभरा हुआ, आकाश से लोहा लेता। दरवाजा पार करते-करते बांह पर लटकी बेमतलब छतरी हो गया। मुंह आकर्षक मगर नीचे झुका हुआ। सीना और पेट सलवटों से भरे, ताड़ियों की कमजोरी से सलसलाते। पैर छतरी की कील की तरह भोंथरे, अनावश्यक ठक-ठक बजनेवाले, जमीन पर निशान छोड़ने में असमर्थ, लेकिन मंहगे कालीन में छेद करने को तत्पर। बैंक के बेहद शुष्क वातावरण में मेरा छतरी-सा व्यक्तित्व बंद और स्वयं के लिए बोझ होने लगा था।

जैसे-तैसे मैं काउंटर रूपी बेदिकेड्स और क्लर्क नामी अफसरों की कतारें पार कर स्टेडियम के पिच के समान बीच में रखी एक टेबल के सम्मुख जा खड़ा हुआ। टेबुल पर कुछ अंगुलियां किसी अज्ञात राग की संगत कर रही थीं। अंगुलियों को बजानेवाला आदमी इस समय खाली बैठा था। मेरा अनुमान ठीक निकला, वही बैंक का एजेंट था। मैंने निःशब्द खंखारकर गला साफ किया, "जी, मुझे खाता खुलवाना है।"

वह मुझे घूरने लगा। वह मेरी बात को मजाक समझकर हंसेगा या डांटकर पूछेगा, "कैसी बातें करते हैं, आप? आपके पास पैसे बचाने का लायसेंस है?"

मैं भी पूरी तैयारी से गया था। लायसेंस के सवाल पर मैं उसे दिखाता बड़े-बड़े नेताओं की बचत करने की अपीलों की कतरनें। लेकिन वह मुसकराया, "जरूर

खुलवाइए साहब, कौन रोक सकता है आपको खाता खुलवाने से ।"

मुझे लगा कि वह ताना मार रहा है । लेकिन वह सतत मुसकरा रहा था । मुझे याद आया अपने दोस्त का कथन, 'बैंक परसंस आर पेड फॉर स्माइल' अर्थात बैंक कर्मचारियों को मुसकराने के लिए ही वेतन दिया जाता है । मैंने भी 'स्माइलने' की कोशिश की ।

"कौन-सा खाता खोलना है ?"

"बचत का ।"

"सेविंग्स ?" उसने मुझे करेक्ट किया

"जी ।"

"कितना अमाउंट है ?"

"एक सौ सत्ताइस रुपये ।"

वह फिर मुझे घूरने लगा । उसने मुझे तौला । मेरे कपड़ों का औसत भाव निकाला । मेरे चश्मे और उसने अपने चश्मे का कॉमन फोकल पॉइंट निकालने की असफल कोशिश की । फिर कुछ कागज निकाले, 'आपका नाम ?' जैसे 'ऑब्जेक्टिव, टाइप' के सवाल पूछे। कागजों को भरकर उसने मुझे तीन-चार जगह दस्तखत करने के लिए कहा। एक जगह लिखा था--'यूअर्स फेथफुली' यानी आपका विश्वसनीय, कैसी विडंबना है पैसे भी मैं ही जमा करवाऊं और आय के प्रति ईमानदार भी मैं ही रहूं। फेथफुल के नीचे तो बैंकवालों को दस्तखत करने थे लेकिन मुझे करने पड़े ।

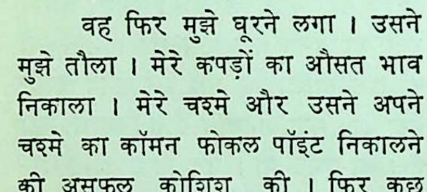

"अपनी कोई पहचान बतायेंगे ?"

उसके सवाल का गलत अर्थ लगाते हुए मैंने उसे पहचान बतायी, 'मेरे नाक कान जड़ से उखड़े हुए हैं।' बाद में उसने समझाया कि पैसे जमा करानेवाले की विश्वसनीयता के लिए बैंक किसी की पहचान या जमानत चाहता है।

जवाब में मैंने उसके सामने अपना राशनकार्ड, बिजली का बिल, मित्रों की चिट्ठियों के बैरंग लिफाफे दिखाये। एक पत्रिका में छपा अपना लेख दिखाया। उसने चीजों को उलट-पलटा, लेख की कुछ लाइनें पढ़कर वह फिर मुसकराया। फिर उसने सब चीजें खिसका दीं, "नहीं इनसे काम नहीं चलेगा। पहचान चाहिए पहचान। किसी खातेदार की या किसी बैंक कर्मचारी की।"

मैंने आसपास देखा। कोई खातेदार परिचित नजर नहीं आया। पैसेवाले कब अपने परिचित हुए हैं । बैंक के बाबू लोग भी निरे बाबू बने बैठे थे। "नहीं

इनमें तो मुझे कोई भी नहीं जानता।"

"फिर क्या किया जा सकता है ? बाहर से किसी खातेदार को ले आइए।"

"मेडीकल सर्टीफिकेट से काम चल जाएगा !"

"नहीं जी।"

"पटवारी, ग्राम-सरपंच, समिति, सेवक या थानेदार के प्रमाण-पत्र से ?"

"बैंक के बाहर खड़े ठेलेवाले की पहचान ?"

"नहीं जी, कहा न आपसे, किसी खातेदार या बैंक कर्मचारी की पहचान ही चलेगी।"

मुझे याद आया, मेरा एक दोस्त बैंक में नौकरी पा गया था, "वो कालूजी अंबाराम आपके बैंक में ही क्लर्क है ना ? वह मुझे जानता है।"

"लेकिन अब वह यहां नहीं है। उसका काम ठीक नहीं था, इसलिए उसे हेड ऑफिस में बुला लिया गया है।"

कोई रास्ता न देख मैं विरोध पर उतर आया, "मुझे समझ में नहीं आता, पैसे भी मैं ही जमा करवाऊं और ईमानदार होने का प्रमाण-पत्र भी मैं ही दूं ?"

"आदेश हैं, पालन कर रहे हैं, आदेशों के मारे दो-कौड़ी के लोगों की बातें सुन रहे हैं।"

शायद उसने मुझ पर फिर चोट की थी। लेकिन मैंने बात नहीं बढ़ायी।

"तो मैं चलूं, कोई पहचान का खातेदार मिलेगा तो लेकर आऊंगा।"

जवाब में उसने दूसरी तरफ देखना शुरू कर दिया।

मैं फिर भी कुछ देर वहां खड़ा रहा। शायद, कोई रास्ता निकल आये। लेकिन क्रिकेट का नियम-पिच पर डटे रहो, खाता अपनेआप खुल जाएगा—बैंक में लागू नहीं होता। मैं स्टेडियम से बाहर निकल आया। रास्ते में भी कोई परिचित खातेदार नहीं मिला।

याने, मेरे पास बचत का लायसेंस नहीं है, क्योंकि किसी खातेदार से पहचान नहीं है। अब यार लोग सलाह दे रहे हैं, एक सौ सत्ताइस काफी अच्छा आंकड़ा है। क्या हर्ज है, बचत तो यों भी नहीं हुई। यों भी नहीं होनी है। क्या ख्याल है ? खेल जाऊं ?

—३२, पटेल कालोनी, अंकपात मार्ग, उज्जैन

टेक्सला.
इसकी सर्वोत्तमता ही
इसकी सफलता है.

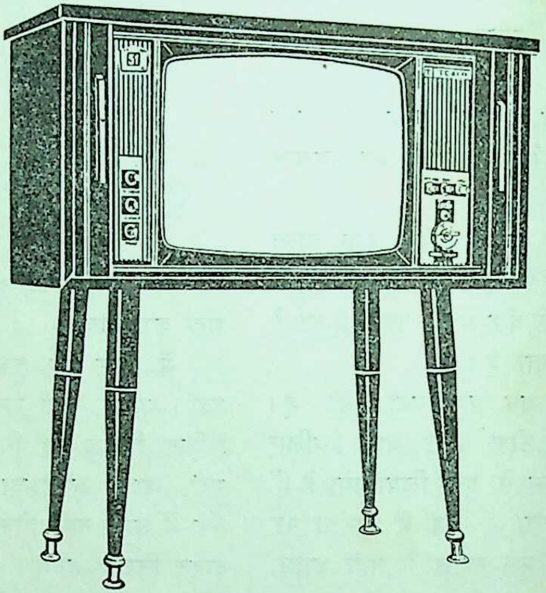

टेक्सला टीवी की टेक्नालॉजी भरोसेमंद है।

ऐसी टेक्नालॉजी जिसे भारतीय परिस्थितियों में आजमाया, परखा और सही सिद्ध किया गया है।

यही वजह है कि टेक्सला टीवी ले कर अधिक से अधिक लोग खुश हैं।

यह ऐसा टी वी है जो अधिक से अधिक समय तक उत्तम सेवाएं देता है।

क्योंकि इसे महज 'सफल' घोषित करने के लिए नहीं बनाया गया है।

यह सर्वोत्तम बना रहने के लिए बनाया गया है।

Texla TV

क्योंकि यह सर्वोत्तम है.

T-90

नैनीताल को बचाओ

• रवीन्द्रनाथ त्यागी

हमारे देश में किसी न किसी को बचाने के लिए कोई न कोई आंदोलन चलता ही रहता है। कुछ वर्ष पहले जनता को मलेरिया से बचाने का आंदोलन चला था। इस आंदोलन का मूलमंत्र था, 'मच्छर तो रहेगा पर मलेरिया जो है वह नहीं रहेगा।' इस अभियान के दौरान लाखों रुपये सरकारी अमले की जेब में गये, जबकि हालत यह रही कि मच्छर तो नहीं रहा पर मलेरिया फिर भी रहा। इसके बाद--'घड़ियाल-बचाओ, 'शेर-बचाओ' और 'वृक्ष-बचाओ'-जैसे अंदोलन आये। कृष्ण चंदर ने 'गधा-बचाओ' आंदोलन का सूत्रपात किया और यह आंदोलन काफी हद तक कामयाब भी रहा। स्थिति यह है कि जिधर देखो उधर गधे ही गधे नजर आते हैं।

विधवा या पति

इस सबके बाद मैं सोचता था कि अब कोई 'पतियों को परायी पत्नियों से बचाओ' या 'विधवाओं को विधवाश्रमों से बचाओ'-जैसा कोई सार्थक अभियान प्रारंभ करेंगे। मगर मैं गलत था। अब नया अंदोलन जो चला वह नैनीताल को बचाने से संबंध रखता है। लोगों का खयाल है कि नैनीताल खतरे में है और उसको बचाना जरूरी है। विधवा या पति को बचाने के लिये बाद में भी मिलते रहेंगे, पहले तो 'नैनीताल-बचाओ' अभियान है। यदि यह अवसर हाथ से निकल गया तो फिर वापस नहीं आयेगा।

रहस्य का पता तब चला

सयानों का मत है कि नैनीताल की दो समस्याएं हैं। पहली आबादी बढ़ती जा रही है और उसके दबाव के कारण शहर परेशानी में है। दूसरी वहां जो झील है, उसका पानी गंदा होता जा रहा है। यदि वक्त पर सही और ठोस कदम नहीं उठाये गये, तो उस बढ़ती हुई आबादी के लिए खतरा उत्पन्न हो सकता है। झील-विशेषज्ञ समिति केवल इसी कारण बैठायी गयी थी। सयानों की सिफारिश पर सरकार ने काफी बड़ी धनराशि नैनीताल बचाने के लिए स्वीकृत भी की। मगर इससे समस्या का समाधान नहीं हो पाया। इसका परिणाम यह रहा कि तीस जुलाई सन उन्नीस सौ

अठहत्तर को नागरिकों ने नैनीताल को बचाने के मुद्दे को लेकर एक सम्मेलन भी आयोजित किया। सरकार ने वही किया जो करना चाहिए था। उसने सयानों की एक समिति और गठित कर दी जिसकी रिपोर्ट आने में अभी कुछ देर लगेगी। मुझे इस प्रकार की समितियों और आयोगों से बड़ा स्नेह है। ये या तो अपनी रिपोर्ट देते ही नहीं और यदि देते हैं तो तब, जब समस्या अपने आप ही सुलझ जाती है या जनता उसे भूल जाती है। इस रहस्य का पता मुझे तब लगा जब मुझे कुछ समितियों का सदस्य बनाया गया।

मैं इतना गया-बीता नहीं

नैनीताल को बचाना जरूरी है। इस खयाल के पीछे कई कारण हैं। पहला पहाड़ों की रानी होने के कारण नैनीताल की नगरी स्त्रीलिंग ठहरती है, इस कारण किसी भी स्त्रीलिंग के प्रति आकृष्ट होना मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है। मैं तो खैर आदमी हूं, वैज्ञानिकों की ताजी खोज के अनुसार मच्छर तक स्त्री के पास ज्यादा जाते हैं और पुरूषों के पास कम। अब आप ही बताइए कि क्या मैं मच्छर से भी गया-बीता हो गया? दूसरा, नैनीताल न रहेगा तो अपनी उदासी उतारने के लिए देश के युवक और युवतियां कहां जाएंगे? वे वहां जाते हैं, कुत्तों की नुमाइश लगायी जाती है और जब उससे मन भर जाता है तब बजाय कुत्तों के लड़कियों की नुमाइश यानी कि सौंदर्य-प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है। कुछ लोग इश्क भी करने लगते हैं जो काफी ऊंची किस्म का होता है। समुद्रतल से पांच हजार फुट ऊंची जगह पर किये गये इश्क को ऊंचे किस्म का नहीं कहेंगे तो और क्या कहेंगे?

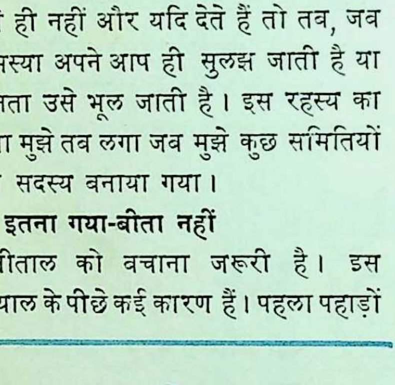

अमीर बनाने का क्या हक

कुछ भावुक किस्म के इनसान कह सकते हैं कि जिस देश में हरिजन जलाये जा रहे हों, खुलेआम लड़कियों को वेश्यावृत्ति के लिए विवश किया जाता हो, निरीह बच्चों को अपंग बनाकर भीख मंगवायी जाती हो, वहां भला नैनीताल को बचाने का क्या तुक है? जिस मुल्क में लाखों लोग सिर्फ एक वक्त का खाना जुटा पाते हैं उस मुल्क में एक पर्वतीय स्थल को लेकर इतनी चिंता? मेरे खयाल में ये सारे प्रश्न

बेकार हैं। अब नैनीताल को बचाइए और हिंदुस्तान को भूल जाइए, अगर लोगों को रोटी नहीं मिलती, तो वह उनके कर्मों का फल है। जिसे भगवान ने ही गरीब और बेसहारा बनाया हो उसे अमीर बनाने का भला हमको क्या हक है ?

मुंशी प्रेमचंद कहां से पैदा होंगे ?

मेरी सलाह है कि हम सब लोग देश की चिंता छोड़ दें और नैनीताल को बचाने में जुट जाएं। नार्वे में अदालतों ने तय कर दिया है कि टेलीफोन पर भी शादी की जा सकती है।

फ्रांस में एक कृषि-शास्त्री ने ऐसा पौधा तैयार किया है जो टमाटर के साथ-साथ आलू भी देता है। इन मिसालों से पता चलता है कि और लोग कहां से कहां पहुंच गये, पर हम हैं कि गरीबों की ही चिंता किये जा रहे हैं। यह गलत है। वैसे भी यदि गरीबी नहीं रही तो कथा-लेखकों, उपन्यासकारों और कलाकारों को प्रेरणा कहां से मिलेगी ? गरीब न होंगे तो मुंशी प्रेमचंद जैसे लेखक कहां से पैदा होंगे ?

इन सब बातों को मद्देनजर रखते हुए मैं फिर कहूंगा कि हिंदुस्तान को भूल जाइए और नैनीताल को बचाइए। हां, अलबत्ता चाहें तो देश की स्थिति को लेकर कोई कसीदा कह सकते हैं। इतना किया और आपका फर्ज पूरा हो गया।

इस संदर्भ में एक शायर का कलाम हाजिर है :

इन गुड़ियों की कई कठपुतलियों में जान है
आज शायर यह तमाशा देखकर हैरान है,

खास सड़कें बंद हैं तबसे मरम्मत के लिए
ये हमारे वक्त की सबसे बड़ी पहिचान है,

एक बूढ़ा आदमी है मुल्क में या यह कहो
एक अंधेरी कोठरी में एक रौशनदान है,

इस कदर पाबंदी-ए-मजहब कि सदके आपके
जबसे आजादी मिली है मुल्क में रमजान है,

कल नुमाइश में मिला था चीथड़े पहिने हुए
मैंने पूछा नाम तो बोला कि हिंदुस्तान है।

—ज्वाइंट कंट्रोलर, सी. डी. ए.,
मेरठ छावनी

बुढ़ापा

• कन्हैयालाल कपूर

जो आ के न जाए वह बुढ़ापा देखा
जो जा के न आये, वह जवानी देखी

बचपन में जब यह शेर पहली बार सुना था, तो हंसकर कहा था, भला इसमें क्या तर्कसंगत है कि बुढ़ापा एक बार आने के बाद फिर कभी नहीं जाता। बुढ़ापा तो बुजुर्गी की निशानी है और बुजुर्गी के फायदे हर व्यक्ति जानता है। यही तो उम्र का वह हिस्सा होता है, जब इनसान की कुछ कद्र होती है, यानी जब डांटने और सख्त-सुस्त कहनेवाला कोई नहीं होता। अब जब कोई ऐसी बात भी की जाए, जिसका कुछ मतलब न हो, तो सुननेवाले समझ लेते हैं कि बात तो पते की होगी, हमारी ही समझ में नहीं आयी। घर में जब किसी बुजुर्ग को देखते थे तो उनकी बुजुर्गी पर रश्क आता था। खांसने और घूमने के सिवा उन्हें कोई काम नहीं और रौब इतना कि हर व्यक्ति उनके सामने चुप रहने में कुशलता समझता। यूंही अपने कोई बात की और बुजुर्ग ने खांसकर डांटा, 'चुप रहो। छोटा मुंह बड़ी बात! यथावसर देखकर बात किया करो!' उस समय यही महसूस होता था कि जब तक बुजुर्ग सलामत हैं, बात करने का कभी अवसर नहीं मिलेगा। यकीन जानिए, उस समय चोरी-छुपे प्रार्थना करते थे कि वह कौन-सा शुभ-दिन होगा, जब हमारी गणना भी बुजुर्गों में होगी। जब हम भले-चंगे नवयुवक को डांटकर कहा करेंगे, 'बच्चों! हमने बाल धूप में सफेद नहीं किये। तजुर्बा बड़ी चीज है। बुजुर्गों को मुंह चिढ़ाओगे तो सदा मुंह की खाओगे।'

फिर एक दिन ऐसा आया कि उम्र की मंजिलें तय करने के बाद हम बूढ़े हो गये और लोग हमें भी बुजुर्ग समझने लगे। पांच वर्ष तक बुजुर्ग रहने के बाद मालूम हुआ कि बुजुर्गी से बड़ी मुसीबत इस दुनिया में हो ही नहीं सकती। बुजुर्ग होने का सबसे बड़ा नुकसान यह नहीं कि आप चने नहीं चबा सकते या बारीक अक्षरों में लिखी हुई किताब नहीं पढ़ सकते, बल्कि आप किसी मनोविनोद में शामिल नहीं हो सकते। अब हमारा उदाहरण ही लीजिए। जवानी में गाना सुनने या नाच देखने का इतना शौक था कि ज्योंही पता चला कि अमुक जगह कोई प्रोग्राम है, बस सब काम छोड़कर वहां पहुंच जाते।

अब यह हाल है कि किसी सभा में जाने की हिम्मत नहीं पड़ती। अभी पिछले

महीने बंबई की प्रसिद्ध गाने-नाचनेवाली, भला-सा नाम था, हमारे शहर आयी। नवयुवकों की खुशी का यह हाल था, जैसे उन्हें वह सब कुछ मिल गया हो, जिसकी वे आकांक्षा किया करते थे और अपनी यह हालत कि शायर के इस शेर को बार-बार पढ़ते थे—

कल हम आईने में रुख की झुर्रियां देखा किये
कारवाने-उम्रे-रफ्ता के निशां देखा किये

इतना अच्छा गाना, ऐसा बढ़िया नाच, लेकिन हम उनसे इसलिए वंचित हैं कि कोई देख लेगा, तो क्या कहेगा ! खैर, बाकी लोग तो बाद में कुछ कहेंगे—पहले भाग्यवान (बीबी) ही क्या कहेंगी। यही न कि दिमाग खराब हो गया है। सींग कटाकर बछड़ों में शामिल होना चाहते हो। अब तो पिछला पहर है। कभी तो अक्ल की बात किया करो। कब्र में पांव लटकाये बैठे हो, और चोंचलों से जी नहीं भरा ! यह दुनिया तो बिगाड़ी है। परलोक ही संवार लो ! मंगलवार से मंदिर में कथा हो रही है। वहां तो गये नहीं और नाच देखने जाओगे।

होली के दिनों में क्या-क्या धूम मचाते थे। वातावरण में अबीर और गुलाल उड़ रहा है। कपड़े रंग-बिरंगे हो रहे हैं। रंग से भरी पिचकारियां, एक-दूसरे का पीछा, हंसी-मजाक, कहकहे, रंग डाल रहे हैं, डलवा रहे हैं। रंगीन, मौसम, रंगीन फिजाएं, लेकिन वह सब बातें जवानी के साथ विदा हो गयीं। अब क्या मजाल, जो होली के दिनों में घर से बाहर कदम भी रखें। पत्थर का बुत बने नवयुवकों को रंगरेलियां मनाते देख रहे हैं। कई बार जी चाहा कि उठकर उनमें शामिल हो जाएं। जोर से नारा लगायें, आज रंग है। देखना कोई बच कर न जाने पाये, लेकिन फिर खयाल आता है कि अगर ऐसा किया तो देखनेवाले यही कहेंगे, 'सठिया गया है !' या संभव है कि कोई 'बूढ़ी घोड़ी और लाल लगामवाली' फब्ती कस दे।

कई बार नहाते समय जी चाहता है कि कोई फड़कती हुई ठुमरी या चलता हुआ दादरा गायें और नहीं तो किसी भूले-बिसरे फिल्मी गीत ही की याद ताजा कर लें, लेकिन यह सोचते हुए, किसी ने सुन लिया तो दांतों तले उंगलियां दाब लेगा, चुप रहते हैं। जवानी की उम्र के हजारों

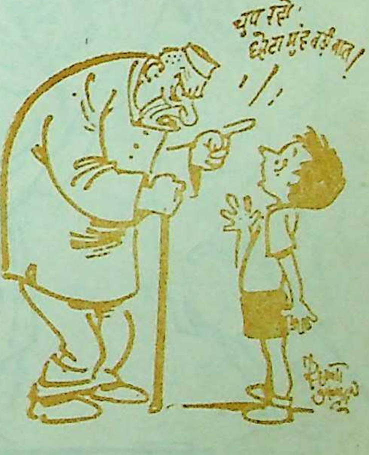
चुप रहो।
छोटा मुंह बड़ी बात!

रोमांटिक शेर हैं, जिन्हें गुनगुनाने को बेसाख्ता जी चाहता है, लेकिन यह डर सदा हव्वा बनकर डराता है कि लोग कहेंगे कि बड़े मियां आखिरी उम्र में रोमांटिक होते जा रहे हैं। कल शाम एक अजीब घटना हुई। शहर के सर्वोत्तम सिनेमा-हाल में शेक्सपियर के प्रसिद्ध नाटक 'रोमियो-जूलियट' की फिल्म दिखायी जा रही थी। लाख कोशिश करने के बावजूद हमसे सब्र न हो सका, अतः नौजवानों की आंखें बचाते हुए सिनेमा-हाल में दाखिल हो गये। अभी फिल्म शुरू होने में कुछ देर थी। अब देखते क्या हैं कि हर नौजवान हमारी तरफ घूरकर देख रहा है, जैसे हमसे अक्षम्य अपराध या पाप हो गया हो। पीछे से आवाज आयी, 'बाल सफेद हो गये हैं, लेकिन दम-खम अभी बाकी हैं!' हमने यह सुना और जलभुन कर रह गये। इतने में किसी और ने कहा, 'अजी, उम्र ही क्या है! अभी दूध के दांत भी नहीं टूटे!' दांतों का जिक्र सुनते ही हमें अपने कृत्रिम दांत याद आ गये। खुदा जाने, अभी और क्या कुछ सुनते कि फिल्म शुरू हो गयी। इंटरवल में जब प्रकाश हुआ तो तीन-चार नौजवान, जिन्हें हम जानते थे, हमारे आस-पास बैठे हुए पाये गये। वे हैरान होकर पूछने लगे, 'श्रीमान जी! आप यहां कैसे?' हमने लज्जित होकर उत्तर दिया, 'यूंही बैठे-बैठे तबीयत घबरा गयी थी। यहां चला आया!' वे हमें बनाने लगे, 'कहिए, जूलियट पसंद आयी। दरअसल आप जैसे बुजुर्गों के लिए ही बनायी जाती हैं। हम छोकरे तो यूं ही आ धमकते हैं।' वह दिन और आज का दिन हम कभी फिल्म देखने नहीं गये।

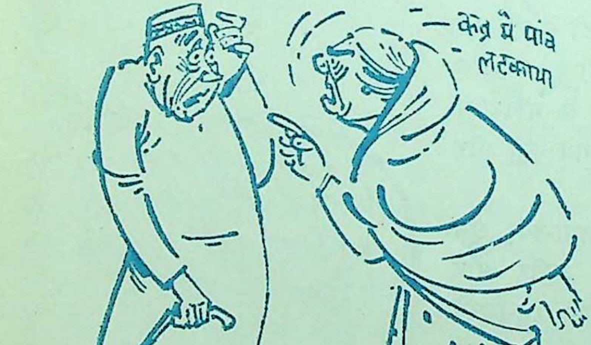

तो साहब, अब पता चला है कि बुजुर्गी किस भाव पड़ती है। हमारे खयाल में तो बुजुर्गी का दूसरा नाम महज कैद है। चूंकि आप बुजुर्ग हैं, इसलिए आप किसी महफिल में शामिल नहीं हो सकते। जहां हंसी-मजाक की बातें हो रही हों,

कहिए. ज्यूलिट पसंद आयी!

बुजुर्गी का अहसास साये की तरह आपके साथ लगा रहता है। औरत, शराब, हुस्न का जिक्र अगर गलती से कहीं कर बैठे तो तूफान बरपा हो जाता है। लोग आप को 'रंगे सियार' आदि की उपाधियों से सम्मानित करने लगते हैं, अर्थात अजीब विवशता की स्थिति होती है। बुजुर्गी में चाट आप नहीं खा सकते, क्योंकि आप बुजुर्ग हैं। शेर आप नहीं गुनगुना सकते, क्योंकि आपके बाल सफेद हो गये हैं। सर्कस-थियेटर देखने आप इसलिए नहीं जा सकते कि यह नौजवानों के लिए है। सिर्फ एक बात आप कर सकते हैं, और वह यह कि जोश मलीहाबादी की मशहूर नज्म 'मुझे बेसाख्ता अपनी जवानी याद आती है' बार-बार पढ़कर अपना दिल खुश किया करें। लीजिए, हम भी इसी नज्म का एक बंद (पद्य) पढ़कर जवानी की यादों को ताजा करते हैं—

मिरे खलक-कदे में कांपने लगते हैं जब साये
हवा आती है मुरझाये हुए लमहों को महकाये
चमक उठते हैं, जितने चांद थे यादों के गहनाये
तसव्वर में निगार आते हैं जब जुल्फों को बिखराये
तमन्ना जब अंधेरे में बुझी बाती जलाती है
मुझे बेसाख्ता अपनी जवानी याद आती है

—अनु. : सुरजीत

मीर कल्लू की गवाही

● अंजुम भानपुरी

एहसान अपने गवाहों के न आने की वजह से मुकदमे की तारीख बढ़ाने की अरजी देकर 'वार' लायब्रेरी में इत्मीनान से बैठा अपने वकील से बातें कर रहा था कि उसका कारिंदा घबराया हुआ पहुंचा और बोला कि गवाहों की पुकार हो चुकी है। हाकिम ने तारीख बढ़ाने की अरजी नामंजूर कर दी है। गवाह हाजिर नहीं हुए तो मुकदमा खारिज कर दिया जाएगा।

और एहसान की घबराहट देखकर उसके वकील ने कहा, "घबराने की क्या बात है। गवाही देनेवालों की यहां कमी नहीं है।"

और गवाही देने के लिए मशहूर, माहिर तथा पेशेवर गवाहों के उस्ताद मीर कल्लू साहब बुलाये गये। वकील साहब ने एहसान से पांच रुपये लेकर उनके हवाले किये और उन्हें साथ लिये कचहरी पहुंच गये। मीर साहब हाकिम को सलाम करके कटघरे में जाकर खड़े हो गये। एहसान हैरत में था कि मुकदमा के हालात तक से मीर साहब परिचित नहीं—वादी-प्रतिवादी कौन है, क्या नाम है, कितनी रकम का दावा है, न कुछ बताया गया और न ही कुछ समझाया गया। आखिर यह गवाही देंगे तो क्या? बेचारे ने समझा कि मुकदमा हुआ चौपट।

विरोधी पार्टी के वकील को पहले से ही मालूम था कि एहसान का कोई असली गवाह नहीं आया है। मीर साहब को कटघरे में देखकर वह और भी खुश हुआ कि भाड़े का टट्टू कहां तक चलेगा? हालांकि, हाकिम के प्रश्नों से मुकदमों के मामले का अंदाजा कुछ मीर साहब ने अपनी जहानत से लगा लिया था और यह भी समझ गये थे कि असली कर्जदार अहसान अली खान की मौत हो चुकी है और वारिस की हैसियत से मुकदमा उनके बेटे शाहिदअली खान पर दायर

किया गया है। [illegible] खान जिन्होंने दस्तावेज लिखा था, उनकी सूरत-शक्ल और उम्र न जानने की वजह से मीर साहब दिल में कुछ सोचने लगे कि विरोध के वकील ने जिरह शुरू कर दी। मीर साहब दरोगहलफी (झूठीशपथ) के जुर्म में एक बार सजा पा चुके थे, इसलिए पहला प्रश्न उनसे इसी संबंध में किया गया।

वकील—मीर कल्लू साहब ! आप कभी जेल की भी सैर कर आये हैं ?

मीर साहब—आजकल मुल्क का ऐसा कौन खादिम है, जो जेल न हो आया हो।

वकील—आपको मुल्क की किस खिदमत के [illegible] हासिल करने का मौका मिला ?

मीर साहब—वही कानून-शिकनी।

वकील—किस कानून तोड़ने की खिदमत आपने अपने जिम्मे ली थी ?

मीर साहब—गांधीजी ने नमक का कानून तोड़ने का बीड़ा उठाया था और कुछ लीडरों ने जंगलात के कानून के खिलाफवरजी को अपना जिम्मा माना, मेरे खयाल में सबसे ज्यादा जरूरत शहादत (गवाही) कानून में सुधार की है। इसीलिए मैंने इसी को चुना।

वकील— (हाकिम को मुखातिब करके) हुजूर, यह दरोगहलफी

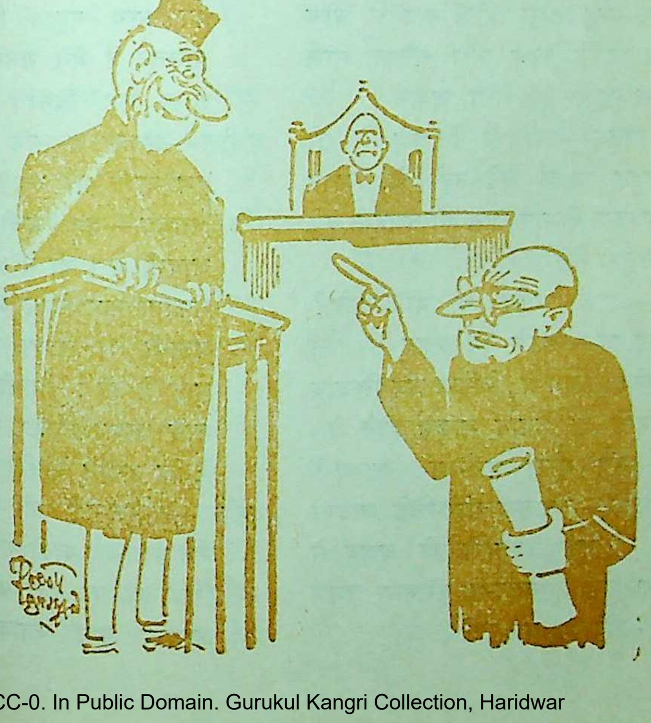

के जुर्म में सजा पा चुके हैं, मगर साफ इकरार नहीं करना चाहते।

हाकिम—तो आप उस फैसले की नकल दाखिल कर सकते हैं, दूसरा सवाल कीजिए।

वकील—क्यों, मीर साहब मरहूम अहसान अली खान को आप जानते थे?

मीर साहब—हुजूर, खुदा मरहूम को जन्नत नसीब करे, हम दोनों एक जान दो कालिब (दिल) थे, न मुझे उनके बिना आराम न उनको मुझे देखे बिना चैन।

वकील—उनकी उम्र क्या थी ?

मीर साहब—यही, तीस और साठ के बीच थी।

वकील—यह तीस और साठ के बीच कहने से काम नहीं चलेगा, साफ कहिए वह बूढ़े थे या जवान ?

मीर साहब—उम्र के लिहाज से तो बहुत ज्यादा बूढ़े नहीं थे, मगर अकसर बीमार रहने की वजह से बूढ़े मालूम होते थे।

वकील—बाल सफेद थे या काले?

मीर साहब—नजले की वजह से बाल सफेद हो गये थे, लेकिन जब खिजाब लगाते तो जवान मालूम होते थे।

वकील—रंग गोरा था या काला?

मीर साहब—बिलकुल गोरे-चिट्टे आदमी थे, लेकिन बीमारी की वजह से रंग कुछ सांवला-सा हो गया था।

वकील—लंबे थे या नाटे?

मीर साहब—कद तो लंबा था, मगर कमर झुक जाने की वजह से नाटे मालूम होते थे।

वकील (चिल्लाकर)—आप सवाल का साफ-साफ जवाब क्यों नहीं देते? यह क्या कि लंबे भी थे और नाटे भी, गोरे भी थे और सांवले भी, बाल सफेद भी थे और काले भी। इससे कहीं सूरत का अंदाजा मिल सकता है।

मीर साहब—जनाब, खफा होने की तो कोई बात नहीं। एक-दो बार की मुलाकात होती तो उस वक्त की खास वजा (वेषभूषा) और सूरत को बयान करता। बरसों रात-दिन का साथ रहा। जिन मुखतलिफ हालतों में मैंने उनको देखा, साफ-साफ कह दिया।

वकील—अच्छा, अहसान अली खान मरहूम दाढ़ी भी रखते थे या नहीं?

मीर साहब—वह अजीब तबीयत के आदमी थे। जी में आया तो एकदम सफाया कर दिया और कभी दाढ़ी बढ़ायी तो खाजा खिजर को भी मात दे दी। (पानी के पैगंबर का नाम खाजा खिजर है। कहा जाता है कि उनकी दाढ़ी बहुत लंबी है।)

वकील—फजूलगोई की जरूरत नहीं। मैंने पूछा था दाढ़ी रखते थे या नहीं, सिर्फ हां या नहीं कह देते। इसके अलावा कुछ ज्यादा बोलने की

जरूरत नहीं थी। दुनिया भर के किस्से-कहानियों से हमें मतलब नहीं।

मीर साहब—ठीक है, अब इन्हीं दो शब्दों में जवाब दूंगा।

वकील—अहसान अली मरहूम बराबर रहते कहां थे?

मीर साहब—जी हां।

वकील—यह जी हां क्या? मैं पूछता हूं कहां रहते थे, तो आप कहते हैं जी हां। यह इस सवाल का जवाब हुआ?

मीर साहब—आपने कहा था कि जवाब में सिर्फ 'हां' या 'नहीं' कहो।

वकील—मैंने हर सवाल के लिए थोड़े ही यह जवाब बताया था। अच्छा अब कहिए वह कहां रहते थे?

मीर साहब—अपने घर में।

वकील—लाहौलवलाकूवत! अजीब समझ है। मेरा मतलब यह कि वह शहर में रहते थे या गांव में?

मीर साहब—दोनों जगह, कभी शहर में कभी गांव में।

वकील—गांव में उनका मकान किस रुख का है। आप तो वहां भी साथ जाते होंगे?

मीर साहब—जी हां, बराबर साथ गांव भी जाया करता था।

वकील—असली सवाल को आप खा गये। गांव में साथ रहने को मैं नहीं पूछता। इसका जवाब दीजिए कि उनका मकान किस रुख का है।

मीर साहब (इतनी देर में जवाब सूझ गया था)—शहर में रहनेवालों को गांव में अकसर दिशा-भ्रम हो जाता है। वहां जब-जब गया, दिशा का मुझे ठीक पता ही नहीं लगा।

वकील—ये रुपये किस काम के लिए उन्होंने लिये थे?

मीर साहब—अपनी जरूरत के लिए।

वकील—कौन-सी जरूरत, क्या कोई खास जरूरत आ पड़ी थी, जो बिना कर्ज लिये काम नहीं चलता?

मीर साहब—वह अजीब आदमी थे। खास और आम जरूरतें उनके लिए एक थीं। अपने पास दो-चार हजार रखना जरूरी समझते थे।

वकील—कब रुपये उन्होंने लिये?

मीर साहब—जब जरूरत पड़ी।

वकील—कितने दिन हुए।

मीर साहब—तीन सौ पैंसठ दिनों का एक साल होता है। अब हिसाब करना और जोड़कर बताना कि सब मिलाकर कितने दिन हुए थोड़ा मुश्किल है।

वकील—दिनों को जोड़कर बताने को मैं नहीं कहता, यह बताइये कि कितने साल हुए।

मीर साहब—दस्तावेज में लिखे तारीख को देखकर आप भी जोड़ सकते हैं कि कितने साल हुए।

वकील—साफ-साफ कहिये कि याद नहीं।

मीर साहब—जी हां, अब हिसाब सच

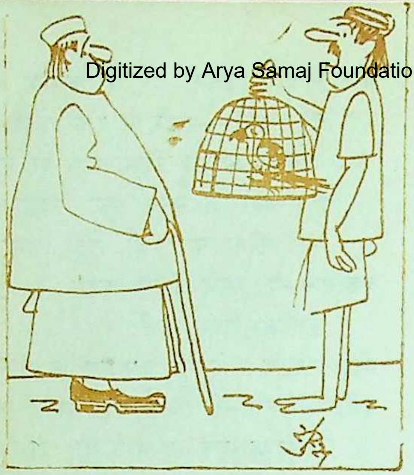

"...यह तोता 'टेप-रिकॉर्डर' का बाप है, विरोधी के दरवाजे पर टांग दीजिएगा दिन भर आलोचना करता रहेगा।"

में याद नहीं।

वकील—हिसाब के भूलने या याद रखने का सवाल नहीं, दस्तावेज कब लिखा गया।

मीर साहब—जमाने के बारे में जो आप पूछते हैं तो जहां तक मुझे याद आता है, उन्होंने अपनी जिंदगी के जमाने में ही कर्ज लिया था।

वकील साहब इस ऊटपटांग जवाब से समझ गये कि मुकदमे के संबंध में मीर साहब कुछ नहीं जानते। बहुत सोचकर एक ऐसा सवाल किया, जिससे वकील साहब को यकीन था कि उनके संबंध और दोस्ती का सारा भांडा फूट जाएगा।

वकील—मीर साहब ! अहसान अली साहब मरहूम से आपकी दोस्ती बरसों की थी, उनके अक्षर तो आप पहचानते ही होंगे।

मीर साहब—यही तो एक कमाल मरहूम में था, जिस पर वह बराबर फख्र किया करते थे, वह खुशनवीस (सुलेखक) हफ्तकलम (तरह-तरह से लिखनेवाले) थे। हमेशा अलग-अलग शान से लिखा करते थे। कलम पर उन्हें इतना जोर था कि उनकी एक भी लिखावट कभी दूसरे से मिली ही नहीं।

इस जवाब के बाद वकील साहब ने हथियार रख दिया। दो बजे से मुकदमा शुरू हुआ था। चार बजने को कुछ ही मिनट बाकी रह गये थे। पर फिर कुछ सोचकर सवाल किया।

वकील—यह तो बताइये, अहसान अली खां मरहूम मरे किस बीमारी से?

मीर साहब—(रोनी सूरत बनाकर) हाय, रोना तो इसी का है कि उनके इलाज में कोई कसर नहीं उठा रखी गयी। हकीम, वैद्य, डॉक्टर से इलाज करवाया गया, मगर किसी को असली बीमारी का पता ही नहीं लगा। वकील साहब सच्ची बात तो यह है कि उन्हें मौत की बीमारी थी।

चार बज चुके थे। इजलास बर्खास्त हो गया। उस दिन से हर आदमी को यकीन हो गया कि गवाहों के सच्चे होने से ज्यादा जिहन और हाजिर-जवाब होने की जरूरत है।

—अनु. : जाहिद इकबाल

बुद्धि विलास

१. **बराबर** मोटाई की चादरों से बनी दो थालियां हैं। एक थाली में दूसरी से ८ गुना अधिक पानी भरा जा सकता है। बताइए, बड़ी थाली का वजन छोटी थाली का कितने गुना है?

२. **भारत** के किस नगर को 'पूर्व का वेनिस' कहते हैं?

३. **निम्नलिखित** किन राज्यों में हैं--

क. चंद्रनगर, ख. चौबीस परगना, ग. बीरभूमि, घ. सिंहभूमि, च. छत्तीसगढ़।

४. **भारत** की पहली महिला मेजर-जनरल कुमारी जी. ए. राम (डाइरेक्टर नर्सिंग सर्विसेज) रहीं, जो अवकाश प्राप्त कर चुकी हैं। बताइए, दूसरी महिला मेजर-जनरल कौन हैं?

५. **देश** में संस्कृत का एकमात्र दैनिक पत्र कौन-सा है और कहां से प्रकाशित होता है?

६. **पिछले** वर्ष दुनिया के एक प्रसिद्ध राजनेता का अपहरण तथा बाद में निर्मम हत्या कर दी गयी थी। उनका क्या नाम था और वे कहां के थे?

७. **बिलियर्ड्स** खेल में किस भारतीय ने विश्वविजेता (चैंपियन) पद प्राप्त किया और कब?

८. **शरीर** के अंदर किस चीज के द्वारा फेफड़ों से ऑक्सीजन सभी तंतुओं तक पहुंचायी जाती है?

९. **पौधों** की पत्तियां हरी लेकिन उसकी जड़ें सफेद होती हैं। जड़ में किस चीज की कमी के कारण ऐसा होता है?

१०. **भारत** के किस राज्य में प्रति-व्यक्ति आय सबसे अधिक है और कितनी?

११. **गत** वर्ष दिसंबर में किस देश को संयुक्त राष्ट्रसंघ के १५१वें सदस्य के रूप में स्वीकार किया गया?

१२. **हमारे** देश में हिंदी के बाद सबसे अधिक बोली जानेवाली प्रादेशिक भाषा कौन-सी है?

१३. **नीचे** दिये गये चित्र को ध्यान से देखिए और बताइए यह क्या है—

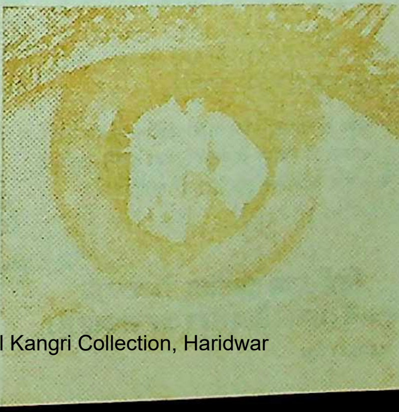

Colgate
DENTAL CREAM
STOPS BAD BR
SHORT HEAD
Colgate

कोलगेट डेन्टल क्रीम से सांस की बदबू रोकिये... दंतक्षय का प्रतिकार कीजिये

हर भोजन के बाद अपने दांत कोलगेट से साफ़ कीजिये। यह ठीक उसी तरह दांतों की रक्षा करता है, जैसे दुनियाभर के दंत विशेषज्ञ कहते हैं।

दांतों में छुपे हुए अन्नकणों में कीटाणु बढ़ते हैं। इनसे सांस में बदबू पैदा होती है, और बाद में दांतों में सड़न।

इसीलिए, हमेशा भोजन के फ़ौरन बाद कोलगेट डेन्टल क्रीम से दांत साफ़ कीजिये। यह सांस को ताज़ा, दांतों को सफ़ेद और दांतों की सड़न रोकने में असरदार साबित हो चुका हैं।

देखिये, कोलगेट के भरोसेमंद फ़ॉर्मूले का काम:

दांतों में छिपे हुए अन्नकणों में सांस में बदबू और दांत में सड़न पैदा करने वाले कीटाणु बढ़ते हैं।

कोलगेट का अनोखा, असरदार झाग दांतों के कोने में छिपे हुए अन्नकणों को और कीटाणुओं को निकाल देता है।

नतीज़ा: आपके दांत आकर्षक सफ़ेद, आपकी सांस तरोताज़ा और दंतक्षय की रोकथाम।

अधिक तरोताज़ा सांस और अधिक सफ़ेद दांतो के लिये दुनियाभर में ज़्यादा से ज़्यादा लोग दूसरे टूथपेस्टों के बजाय कोलगेट टूथपेस्ट ही खरीदते हैं।

दांतों की पूरी सुरक्षा के लिए कोलगेट ट्राइगार्ड टूथब्रश। ये दांतों के एनैमल व मसूढ़ों की रक्षा करके दांतों पर जमी परत को हटाते हैं। ८ विभिन्न किस्मों में, परिवार में हरएक के लिए अनुकूल।

सिर्फ़ एक दांतोंका डॉक्टर ही इससे बेहतर देखभाल कर सकता है।

DC.G.64 HN

सांप और नेवला सह-अस्तित्व

• विनोद भट्ट

और एक जंगल में सांप और नेवला एक दूसरे से मिले। एक दूसरे को नमस्कार-प्रणाम किया। फिर सांप ने नेवले से कहा, "हमारे पूर्वज मूर्ख थे . . .।"

"हूं . . .।" नेवला बोला, "तुम्हारा कहना सच है, सांप भाई।"

"अब हम एक दूसरे की हिंसा करने की आदत को छोड़ नहीं सकते?"

"मैं शांतिमय सह-अस्तित्व में विश्वास करता हूं।"

"तो फिर हम एक दूसरे पर आक्रमण करना आज से ही बंद कर दें . . .।"

"देखना फिर . . . वचन का पालन करना भूल मत जाना!" सांप बोला।

"नहीं-नहीं, भूलूंगा नहीं।"

"तो हम एक शांति-समझौता कर लें।"

"हमें आपत्ति नहीं, सांप भाई।"

"समझौते के अनुसार तुम मुझ पर हमला कभी नहीं करोगे, ऐसा मान लेता हूं, लेकिन कभी भूल में भी ऐसा न हो जाए इसलिए हम ठोस कदम उठायें . . .।"

"तुम ही सुझाव दो, सांप भाई ...।"

"हमें ज्यादा भय तुम्हारे दांतों का लगता है, तुम्हारे दांत तोड़ दिये जाएं तो . . . ठीक रहेगा?"

"ठीक है सांप भाई! . . . और तुम अपने गले की जहर की थैली निकलवा दो, . . . मंजूर है?"

"भाई, तुम तो मूर्खों जैसी बात करते हो . . . विष के बिना तो हम जी कैसे सकेंगे? . . . इसकी अपेक्षा तुम यही कहो न कि समाधान तुम्हें स्वीकार ही नहीं है। शांतिमय सह-अस्तित्व में तुम्हें विश्वास ही नहीं है . . . तुम आक्रमणकारी हो।" यह कहता हुआ सांप पास की झाड़ी में सरक गया।

—अनु.: गोपालदास नागर

मातमे-दाढ़ी

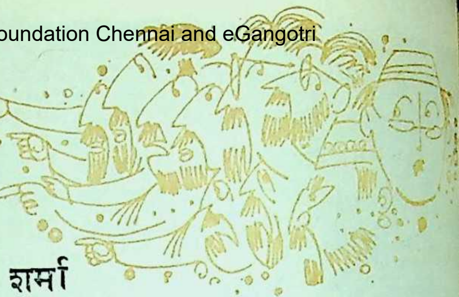

• कृष्णचन्द्र शर्मा

हम इत्तफाकन अंगरेजी जमाने में पैदा हुए थे, इसलिए सियासी गुलामी का जुआ अपने कंधे से उतार फेंकने की कोशिशों के बावजूद फैशन की गुलामी में जरूर अंगरेजों को मात देने की कोशिश करते थे। लिहाजा, हमारा चेहरा-मोहरा काला सही, लेकिन हमने अपने गालों पर मक्खियां फसाने का जाल कभी नहीं फैलने दिया। यानी, हजामती पैमाने पर हमने अब तक अपनी सवा उनसठ साल की जिंदगी सफाचटी में गुजार दी। इन हालात में हम अपने साहबजादे बरकत मियां के हुस्नी दरवाजे पर झाड़ियां देखकर दिल मसोस-कर रह जाते। जब हमसे नहीं रहा गया तो एक दिन बायें हाथ से हमने उनका कान पकड़ा और सीधे हज्जाम की दुकान पर ले गये। फिर सवा रुपया देकर उन्हें हैवानी इनसान से निहायत शरीफ गधा बनवाकर घर ले आये—गधा इसलिए कि उन्होंने बिना चूं-चपड़ किये अपने सिर के भालूनुमा बालों पर कैंची और अपनी बेतरतीबी से बढ़ती दाढ़ी पर उस्तरा फिरवा लिया। हां, मूंछें हमने जरूर करीने से बनवा दीं, क्योंकि बकौल हमारे हिंदू दोस्तों के बाप को कुछ दिन की ज़िंद बख्शने के लिए बेटे को मूंछों का सर्टी केट चिपकाये रखना चाहिए।

घर आकर बरकत मियां आईने रूबरू हुए, फिर बड़ी शर्मिंदगी के सा रुआंसे लहजे में फरमाने लगे, "जरा देखि तो अब्बाजान, मैं एक दिन में ही कित दुबला हो गया! अब तो आपको तसल्ल हुई!"

हमें उनकी अक्ल पर तरस आ ग और हमने मीठी झिड़की के साथ उ समझाते हुए कहा, "बरखुरदार, इन आ छटांक बालों से कहीं जिस्म का व घटता-बढ़ता है! वजन बढ़ाने के लि अंडा, गोश्त, जर्दा, पुलाव, दूध, मेवा औ मक्खन की गिजा जरूरी है, और खुदा फज्ल से मेरे यहां तुम्हें इन चीजों की क कमी नहीं है, भले ही मुल्क में अकाल प हो!"

उस दिन दो मुस्टंडों से हमने बरक मियां के जिस्म की तेल-मालिश करा और फिर एक पूरी बट्टी साबुन से रग रगड़कर नहलवा दिया। बरकत मियां उस दिन बड़ी मस्ती से आईने के साम

चक्कर लगाते रहे और हम उनकी उस नयी भोली शक्ल में अपनी बीती जवानी का आईना देख-देखकर बेहद खुश हो रहे थे।

मगर, बरकत मियां की दाढ़ी क्या मुंड़ी, शहर में ढोल पिट गया! दूसरे ही दिन से ड्योढ़ी पर अजब-अजब-सी शक्लें नजर आने लगीं। ताज्जुब है कि सभी एक ही मर्ज में मुब्तिला थे—यानी सभी अपनी झोलियों में ये 'इल्तिजाएं डालकर लाये थे कि हम बरकत मियां से उनके साले के साले की नूरचश्मी या दूर के रिश्ते की भतीजी या नवासी के साथ शादी का पैगाम उनके पास भिजवाएं। एक तरह से वे हमारी भलाई के लिए चोर-रास्ते से हमारी रहनुमाई करने आये थे।

हमें अपनी हैसियत पर बड़ा फख्र हुआ, साथ ही बड़ी चीज भी कि बरकत मियां ने कई साल में बमुश्किल-तमाम बी. ए. की ड्योढ़ी पर पांव रखा है, गधापचीसी की उमर तक लांघ नहीं पाये हैं और शादी के पैगाम मांगनेवालों के ढेर लगने शुरू हो गये। एक साहब आये और दीबाचे (भूमिका) के तौर पर अपने को खालिस मुगलिया या तातारी खानदान का साबित करने पर आमादा हो गये। दूसरे साहब ने अपना तिजारती पासा फेंका और फख्र से कहने लगे कि वे अपने शहर में तंबाकू के सबसे बड़े थोक व्यापारी हैं। यह सुनते ही हमें तो उनकी दाढ़ी में तंबाकू की उगी ताजी फसल दिखायी देने लगी और उनके कपड़ों में से शीरा-मिली तंबाकू की मीठी-कड़वी बू आने लगी। तीसरे साहब कोई

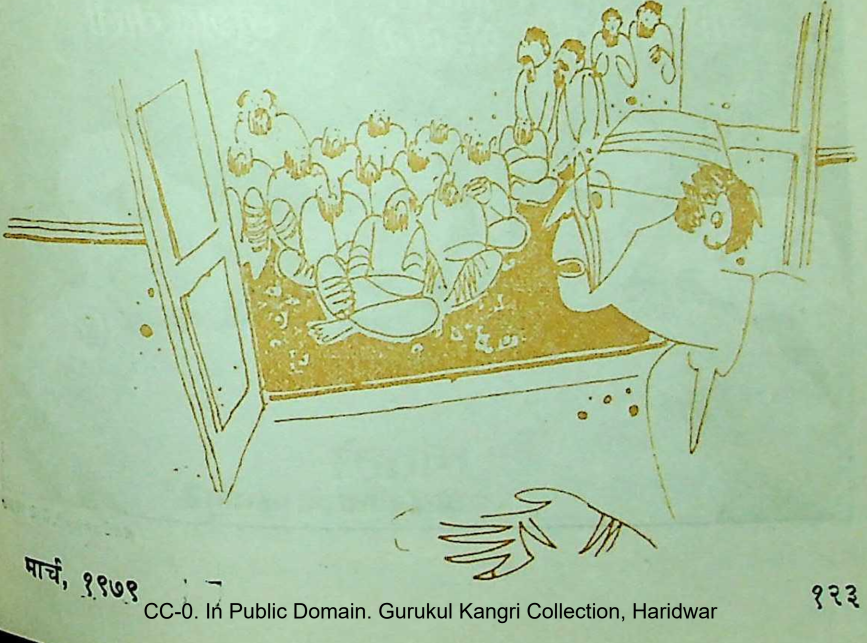

सौंदर्य की दुनिया में एक नयी हलचल

लॅक्मे कॅलमाइन

Lakmé Calamine

इसके जैसा कुछ भी आपने पहले इस्तेमाल न किया होगा.

लॅक्मे कॅलमाइन. कितनी मुलायम, फैलने में कितनी आसान. केवल लॅक्मे कॅलमाइन ही मनपसंद शेड्स में आती है ताकि आपके रूप में एक नयी चमक आ जाय. दाग़ मुहासों का मुक़ाबला करने की दवायुक्त केवल लॅक्मे कॅलमाइन भीनी भीनी खुशबू से भरी है.

त्वचा के लिए कितनी गुणकारी—आपकी त्वचा, नन्हें मुन्ने की कोमल त्वचा और आदमी की त्वचा के लिए भी.

रूपरंग की संपूर्ण देखभाल—लॅक्मे कॅलमाइन!

मुलायम और चमकती

तीन निराले शेड्स में

भीनी भीनी खुशबू वाली

लॅक्मे—

जिन्हें त्वचा की पहचान है

daCunha/LC/2

पुलिसवाले थे और उन्होंने तो कुछ इस अंदाज में गुफ्तगू की कि वे रिश्ता जोड़ने की कोशिश में नहीं बल्कि हमारी गिरफ्तारी का वारंट लेकर आये हों।

यूं हमने किसी की मेहमानवाजी में कोई कसर उठा नहीं रखी थी। किसी को नानखताई-बिसकुट और चाय-पकौड़ी से टालने की कोशिश की तो कोई तंदूरी पराठे और मुर्ग-मुसल्लम से भी टाले न टलते दिखायी देते थे। आखिर हमें बड़ी शाइस्तगी से अपनी मजबूरी जाहिर करनी पड़ी कि 'अभी तो बरकत मियां को बी. ए. ही नहीं, एम. ए. तक पैंगें मारनी हैं। फिर पता नहीं किसी नौकरी की खोज में कितने दिन जूते के तल्ले घिसने पड़ें! तब कहीं जाकर शादी के पींजड़े में दाखिल हो सकते हैं।' हमारी इस साफगोई से उन्हें बेहद चोट पहुंची और वे हमें बेतहाशा लानतों से शराबोर करते हुए हमारी चौखट से बाहर निकलने को मजबूर हुए।

दरअसल हमने बैठे-बिठाये एक मुसीबत मोल ले ली। अब हमें कुछ-कुछ महसूस हुआ कि यह सब कुछ बरखुरदार को इनसानियत और शराफत का जामा पहनाने की वजह से ही हुआ है, क्योंकि अब तक उनके रूखे, बेदरकॉक की तरह हवा में उड़ते बेतरतीब बाल और उनकी झाड़ीनुमा दाढ़ी मैरेज-मार्केट में उन्हें अनमोल साबित करनेवाली बहुत-सी खसूसियात को नाहक लोगों की निगाहों से छुपाये हुए थी।

खैर साहब, बरकत मियां की शादी के लिए अनहोने इशारों को टरकाने की कोशिश में हम कुछ दिन ऐसे मशगूल रहे कि हमें अपनी कुछ सुधबुध ही न रही। दफ्तर से छुट्टी लेकर हम घर में ही अड्डा जमाये बैठे रहते ताकि कल को बिना मिले ही हमारी नेक खसलत के बारे में खुदा-न-ख्वास्ता कोई गलत राय न बना ले और फिर कुछ बरस बाद मौका आने पर जरूरतमंदों को हमारे दरवाजे पर न फटकने देने के लिए न भड़काये। मेहमानों की हद से ज्यादा बेतकल्लुफी और बीवी की बेसुरी तानारीरी से हम इस कदर तंग आ गये कि हमने दरवाजे पर लिखकर तख्ती चिपका दी कि 'फिलहाल शादी के लिए बरखुरदार खाली नहीं'। बाद इसके कई दिन तक घर न लौटने की कसम खाकर हम खुद बाहर निकल गये। कुछ दिन बड़े ऐश के साथ बारी-बारी से यार-दोस्तों के यहां गुजारकर एक शाम जब हम घर लौटे तो आखों के सामने एक नया ही नजारा देखकर दंग रह गये। हमारी ऊपर की सांस ऊपर और नीचे की नीचे! दरवाजे से बरामदे तक दाढ़ियों का भारी हुजूम! किसी से कुछ पूछने की हिम्मत न हुई। आखिर सीधे जनानखाने में जाकर दम लिया और गिनगिनकर सांसें लेने लगे।

फिर बेगम को एक तरफ धकेलकर हमने किवाड़ों की सेंध में से बाहर देखने की कोशिश की। बाहर बड़ा जोशीला आलम था। बरकत के नौजवान साथी

है कोई ऐसा तेल जो स्वादिष्ट भोजन पकाए और अच्छा स्वास्थ्य भी बनाए?

जीहां, मार्वो
गुडहेल्थ रिफ़ाइन्ड तेल

ठोस बचत!
२ किलो सिर्फ़
रुपए २२·५७
(टैक्स अलग)

कैसे? मार्वो पूर्णतया शुद्ध है—
इसमें पके खाने में सही स्वाद है—
यानी ज़ायकेदार!
सिर्फ़ यही नहीं, इसमें प्राकृतिक तत्व
पॉलिअनसेचुरेट्स है—
जो नसों में चर्बी का जमाव घटाता
है; खून के प्रवाह को बनाए रखता है.
याद रखिए: रोज़ाना कसरत और
मार्वो गुडहेल्थ रिफ़ाइन्ड तेल में
पका खाना पूरे परिवार को स्वस्थ
और चुस्त रखता है.

मार्वो
गुडहेल्थ रिफ़ाइन्ड तेल

विश्वसनीय हिन्दुस्तान लीवर की गारंटी के साथ.

लिंटास-MGO. 8-1511 HI (RR)

चाय-काफी की चुस्कियां ले रहे थे और अपनी दाढ़ियां फटकार रहे थे। दरअसल एक दाढ़ी के मातम में वीसियों दाढ़ियां भुनभुना रही थीं। मुसलमानों के साथ-साथ हिंदुओं का भी खासा मजमा। फिरका-वाराना दोस्ती का निहायत ही नायाव मंजर! एक जगह तो हमें शिवाजी महाराज और शहंशाह औरंगजेब दोनों एक ही सफ पर वैठे, घुलमिलकर वातें करते दिखायी दिये। देखकर हमारी तो आंखें चौंधिया गयीं। जमाना कितना बदल गया! और दाढ़ियां भी कितनी तरह की—नयी पौध-जैसी, खसखसी, गिरहबंद, बकरनुमा, भालेनुमा, फरसे की तरह फैली हुई, किसी हसीना की बिखरी जुल्फ-जैसी, और भी न जाने कैसी-कैसी !

या रव, यह कैसा गजव ! हमने अपने पिसर की दाढ़ी पर हाथ क्या डाला गोया भिड़ों के छत्ते से भिड़ गये ! हर तरफ हमारे खिलाफ मोरचे ही मोरचे—हमसे वरखुरदार की शादी का पैगाम मांगनेवालों के मोरचे और दाढ़ी मुंड़ने के खिलाफ अफसोस जाहिर करनेवालों के मोरचे ! दरअसल अंदर ही अंदर हम खुद टूटने लगे थे। हमें तो अव रह-रहकर यह एहसास होता कि हमने कोई भारी गुनाह कर डाला है, जिसका तोवा किये बिना अव हमें चैन नसीब नहीं होगा ! हम सचमुच यह महसूस करने लगे कि नौजवानों को वक्त से पहले शादी के झमेले के बचने के लिए दाढ़ी रखना वाकई वहुत जरूरी है। दरअसल हमारे कालेज-यूनीवर्सिटी के सिलेवस में दाढ़ी रखना कंपलसरी कर दिया जाना चाहिए। कोई मुजायका नहीं अगर हमारे तुलबा पढ़ाई के वजाय दाढ़ी पर ज्यादा ध्यान देने लगें। और जितने फूहड़ ढंग से दाढ़ी की परवरिश की गयी हो उतने ही ज्यादा नंबर पाने के वे हकदार हों, क्योंकि दाढ़ी नौजवानों की हिफाजती दीवार या उनकी सलामती का परचम है।

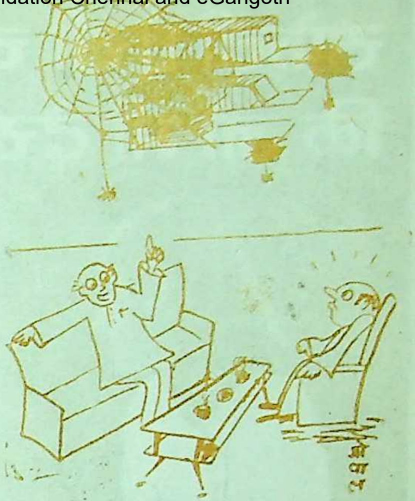

"मुझे पुस्तकों का बड़ा शौक है। जब भी कोई नयी पुस्तक आती है, खरीदे बिना नहीं रह पाता।"

हमारी अक्ल-शरीफ में दाढ़ी की अहमियत जरा देर से समझ में आयी—वह यह कि दाढ़ी वुढ़ापे की वरकत और जवानी का टोटका है। नौजवान की दाढ़ी का हरेक बाल पुकार-पुकारकर कहता है

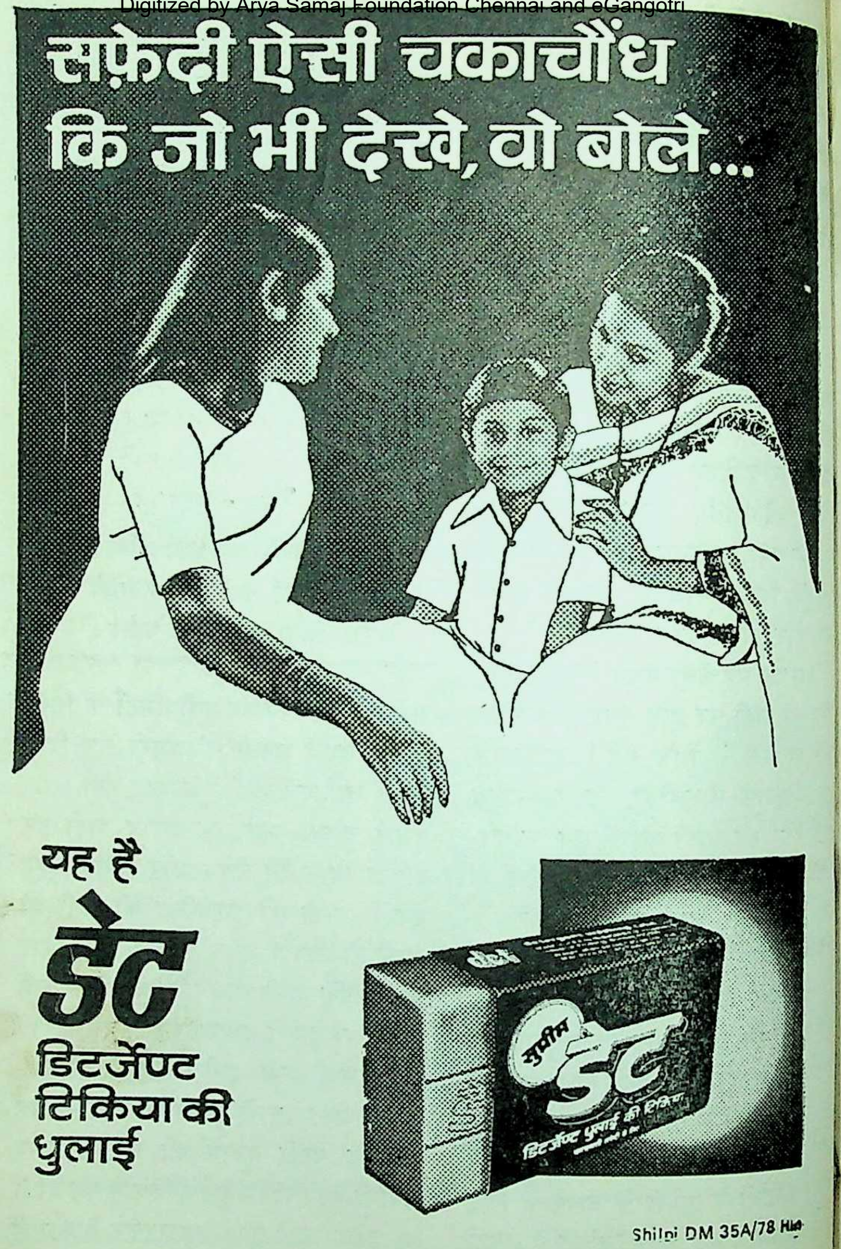
सफ़ेदी ऐसी चकाचौंध
कि जो भी देखे, वो बोले...
यह है
डेट
डिटर्जेण्ट
टिकिया की
धुलाई
सुप्रीम
डेट
डिटर्जेंट धुलाई की टिकिया
Shilpi DM 35A/78 Hin

कि 'देखनेवाले तेरी बुरी नजर न लगे।' फिर, हर नौजवान को अपनी दाढ़ी खुद नहीं मुंड़वाना चाहिए, बल्कि उसे तब तक इंतजार करना चाहिए जब तक कि उसकी जोरू आकर अपनी फरमाइशों के उलटे उस्तरे से उसे न मूंड़ दे !

बरकत मियां के साथ हमने जो खुली बेईमानी की उस पर हम अंदर ही अंदर बेहद शर्मिंदा थे। काश यह मुमकिन होता कि दाढ़ी मूंड़नेवाला हज्जाम किसी बिकी हुई चीज की वापसी की तरह दाढ़ी दोबारा बख्श सकता तो हम यकीनन अपने पैसे वापस लेकर फरजंदे-बुलंद की दाढ़ी फिर चस्पां करा लाये होते ! लेकिन, यह सब खामखयाली थी ! तीर तो हाथ से निकल चुका था। इस खयाली सिलसिले को एकाएक मजलिसे-दाढ़ी से हमारी खस्ता किवाड़ों की दरजों से दाखिल हुई एक आवाज ने तोड़ दिया।

एक साहब जरा दबी आवाज में कह रहे थे, "अजी जानते हो बरकत भाई, वह क्या कहती थी तुम्हारे बारे में ?"

"कौन ?" बरकत ने बड़े भोले अंदाज में पूछा।

"अजी वही जिसका सामने का एक दांत नदारद है !"

"क्या कहती थी ?"

"कहती थी कि अब बरकत मियां की तरफ मैं फूटी आंख भी नहीं देखूंगी।"

"लेकिन ऐसा क्यों ?"

"क्योंकि, वह कहती थी, बरकत मियां का असली चेहरा जब तक दाढ़ी से छुपा हुआ था तब तक मुझे पूरा यकीन था कि कोई लड़की उसकी तरफ देखने की हिमाकत नहीं करेगी। लेकिन, अफसोस, बरकत मियां ने मेरा आखिरी आसरा भी तोड़ दिया ! इसलिए अब मेरा उससे कोई वास्ता नहीं।"

बरकत मियां ने एक बार कंधे उचकाये, कुछ मुंह भींचा, फिर बड़ी संजीदगी से बोले, "दोस्तो ! मैं तो समझता था कि दाढ़ी पुरानी और नयी पीढ़ियों के बीच एक पुल है। उभरती जवानी को कुदरत का एक बेमिसाल तोफा है, मासूमियत की गुलकारी है। मगर सद-अफसोस ! हमारे बुजुर्गवार इसे इनसानियत और खूबसूरती की तौहीन समझते हैं, फितरत समझते हैं। अगर उन्हें यह गवारा नहीं तो हम भी अहद करते हैं कि अब हम अपने इस मनहूस चेहरे पर दाढ़ी का एक बाल भी नहीं पनपने देंगे।"

सारी मजलिस ने अफसोस-अफसोस की सदा दी और दो मिनट के लिए सभी ने खामोशी के साथ अपने मुंह लटका लिये।

बरकत मियां का यह अहद हमारे जिंदा ताबूत में कील की तरह गड़ता जा रहा है। हमारी यह समझ में नहीं आता कि हम अपने ही बनाये गये इस ताबूत से कैसे बाहर निकलें ! अगर आप कोई तरकीब जानते हों तो जरूर बतायें।

—द्वारा 'कादम्बिनी'

होते हैं चेहरे आदतों के आइने

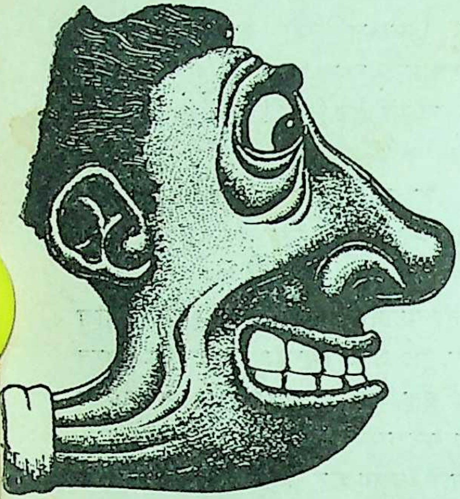

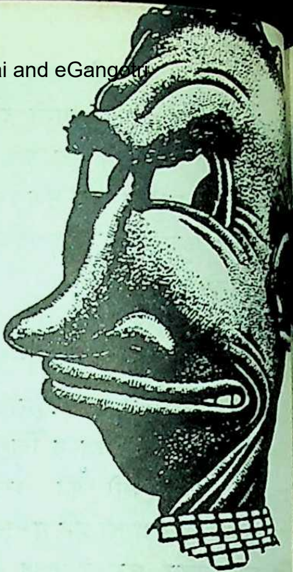

गुस्सा जिनकी नाक पर धरा रहता

उनकी शक्ल ऐसी होती है : जो खुद
तो कुछ नहीं करते
पर दूसरों पर नजर रखते हैं

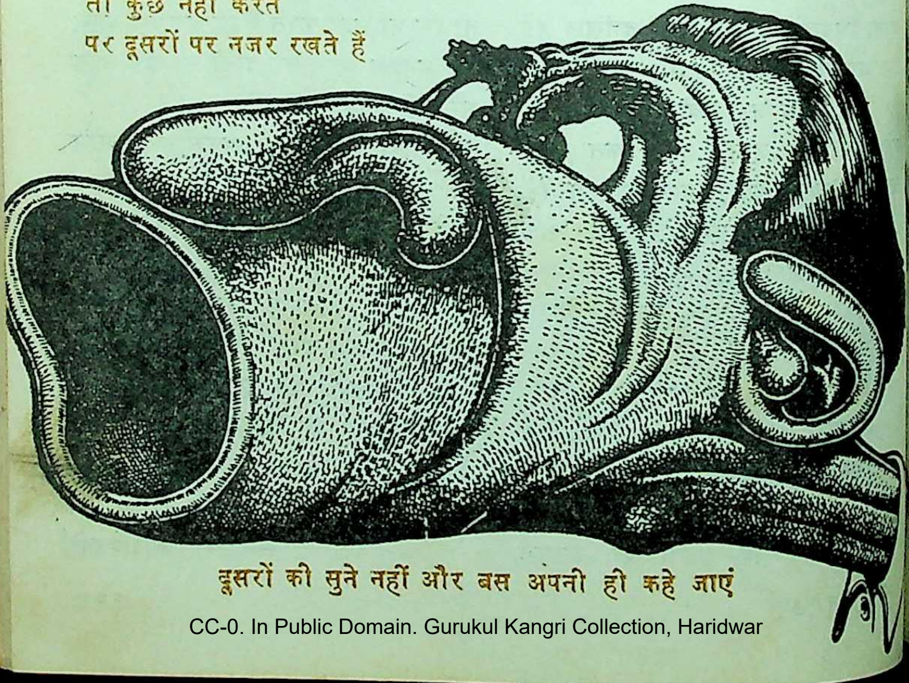

दूसरों की सुने नहीं और बस अपनी ही कहे जाएं

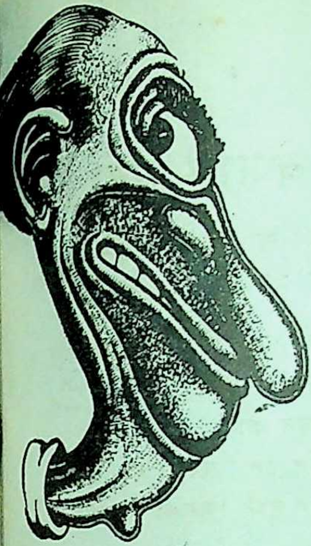

ऐसे होते हैं
गंभीर किस्म के चेहरे

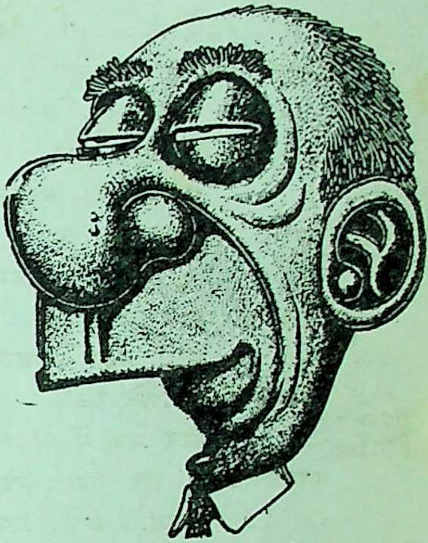

हर आनेवाले क्षण में भयभीत रहना
इनकी आदत है

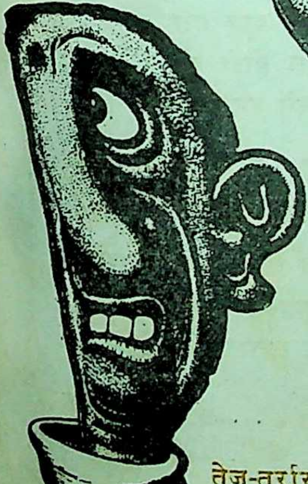

तेज-तर्रार और चालक लोगों
का ऐसा होता है चेहरा

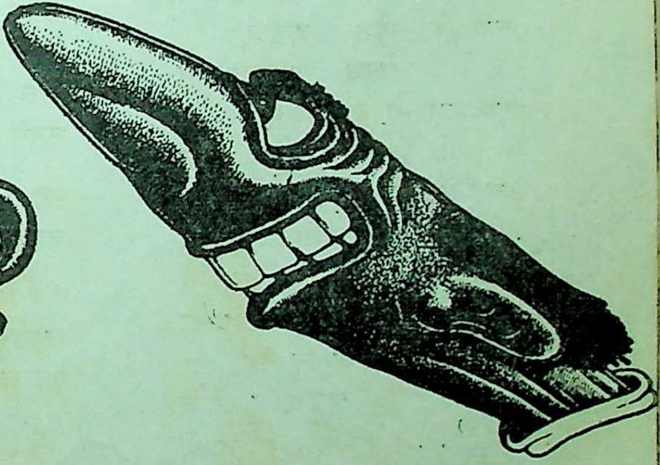

दीनता भरे याचक
किस्म के चेहरे

फागुन आ गया

कसमसाई है लता की देह
फागुन आ गया
पारदर्शी दृष्टियों के पार
सरसों का उमगना
गंध-वन में निर्वसन होते
पलाशों का बहकना
अंजुरी भर-भर लुटाता नेह
फागुन आ गया
इंद्रधनुषी रंग का विस्तार
ओढ़े दिन गुजरते
अमलतासों-से खिले संबंध
फिर मन में उतरते
पंखुरियों-सा झर गया संदेह
फागुन आ गया
एक वंशी-टेर तिरती
छरहरी अमराइयों में
ताल के संकेत बौराये
चपल परछाइयों में
झुके पातों से टपकता मेंह
फागुन आ गया
नम अबीरी धूप पर
छाने लगा लालिम कुहासा
पुर गया रांगोलियों से
व्योम भी कुमकुम-छुआ-सा
पुलक भरते द्वार, आंगन, गेह
फागुन आ गया

——योगेन्द्रदत्त शर्मा

१६१, मोहल्ला कन्हैयालाल
गाजियाबाद-२०१००१

बेजान नदी

तुममें सुगंध और रंग की
एक बेजबान नदी बंद है

तुम्हें अगर खिलना आ जाए
दुर्दिन नस जाए
उपवन का
कांति उतर सकती है
अगर तुम्हें खिलना आ जाए

फिर दोहराता हूं
तुम विस्तृत साम हो
बांस बेहूदे
अगर कहीं आग दाग जाए
मिल पाए छांह
नील होठों की
तुममें वह क्षमता है

यह बंजर राज्य खरझरीला
मधुवन बन सकता है

कैद है तुममें ऐसा आकाश
अनवरुद्ध कोख
हट सरगम की

——कैलाश वाजपेयी

एच-२६, साउथ एक्सटेंशन (प्रथम)
नयी दिल्ली

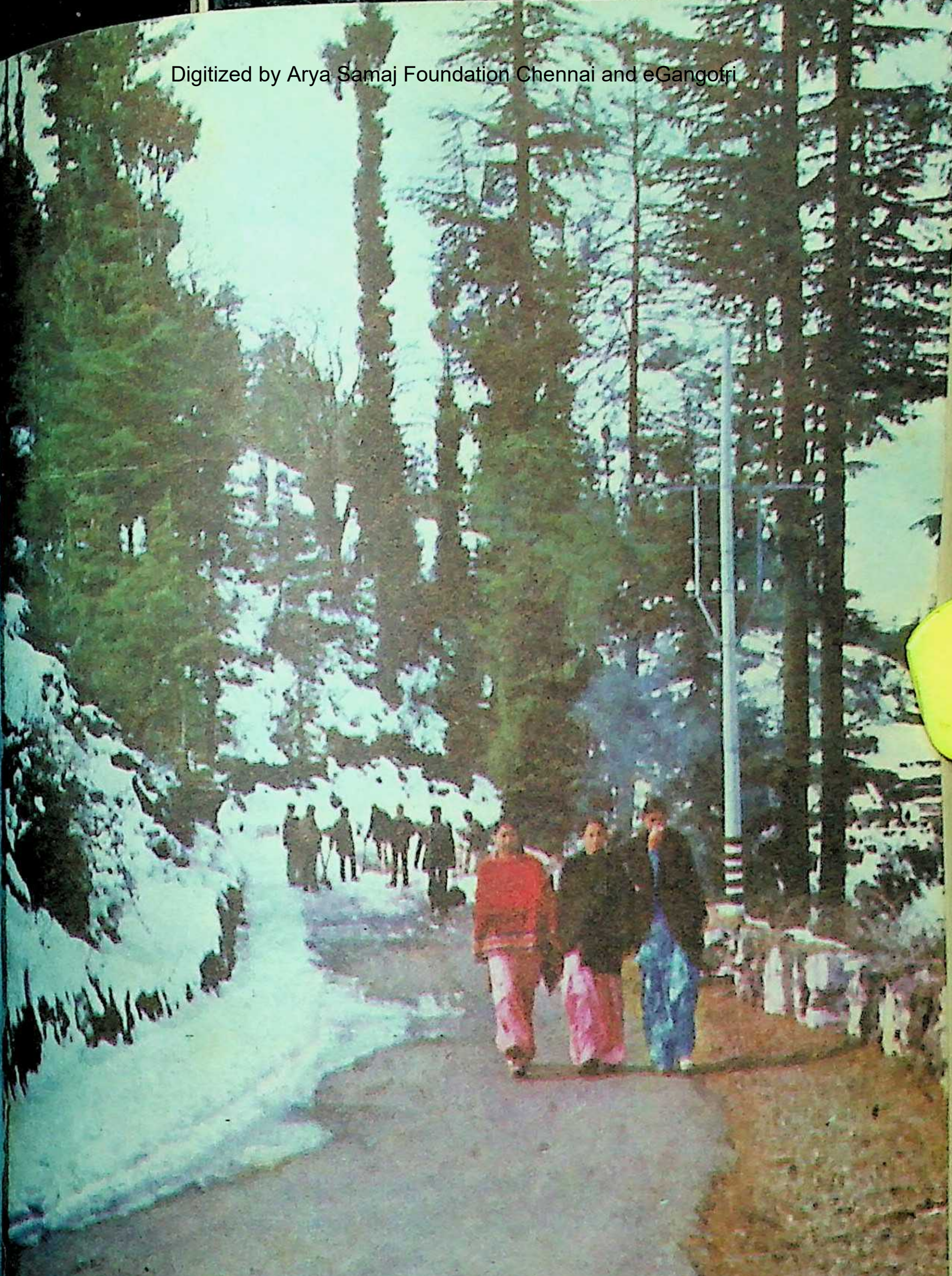

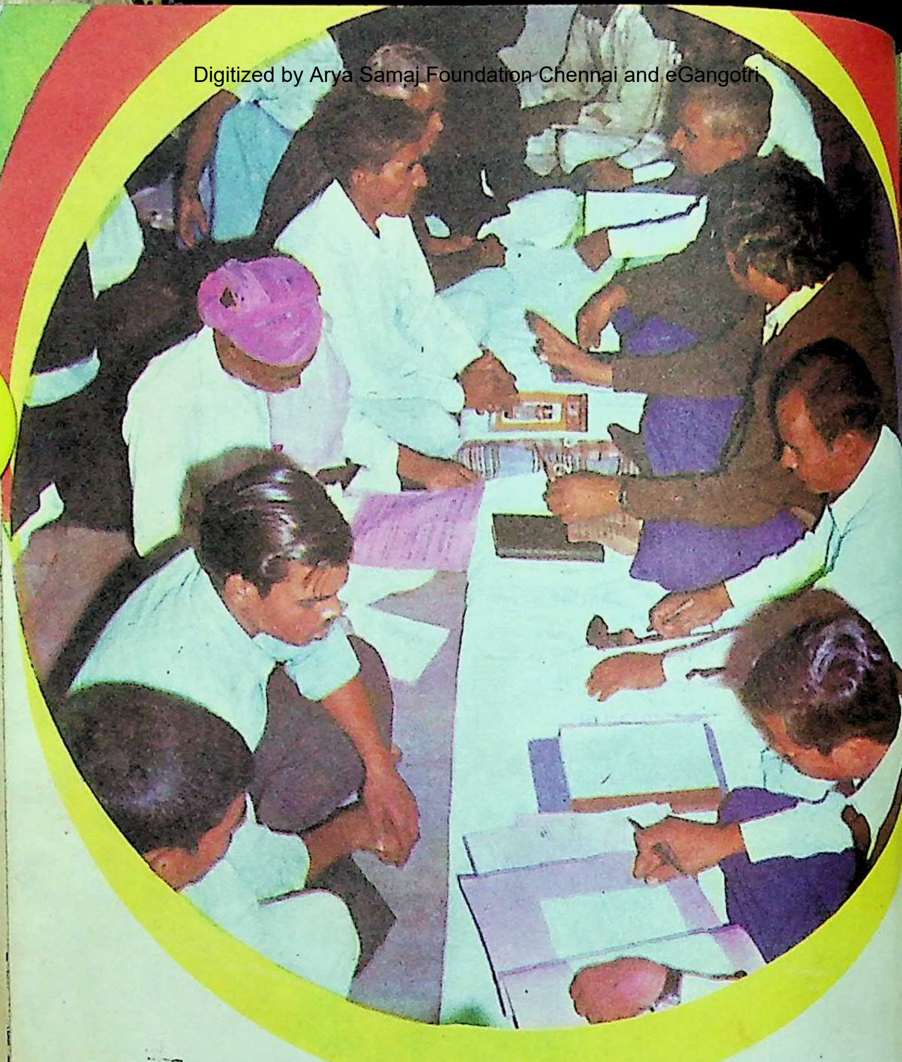

सचिवालय का नाम लेते ही भोपाल के वल्लभ भवन की बहु-मंजिली इमारत की तस्वीर सामने उभर आती है, जहां मंत्रियों व सचिवों के सज्जित कक्ष हैं। सैकड़ों कर्मचारी फाइलों में खोये रहते हैं । सभी प्रकार के अंतिम निर्णय लेने का अधिकार सचिवालय को है । इसलिए लोग छोटे-बड़े कामों के लिए सचिवालय के चक्कर लगाते रहते हैं। यदि आपकी पहुंच मंत्री या सचिव तक हुई तो आप अपना काम जल्दी पूरा करा सकते हैं । सीधी पहुंच के अभाव में आपको किसी पव्वेवाले नेता को पकड़ना पड़ेगा । सिफारिश के बिना सचिवालय की फाइल मुश्किल से दौड़ती है । इसलिए हर रोज सैकड़ों लोग सचिवालय में मंत्रियों के आसपास मंडराते रहते हैं । क्योंकि सभी अधिकारों का केंद्र सचिवालय है।

गांव के दरवाजे पर सचिवालय की दस्तक

• जयकृष्ण गौड़

अधिकार कुछ हाथों में केंद्रित होने से लालफीताशाही व भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलना स्वाभाविक है ।

इन्हीं सब बातों पर विचार करके जनता सरकार ने सत्ता के विकेंद्रीयकरण की बात कही। अब सरकार गांव-गांव तक पहुंचकर लोगों की समस्याएं निबटायेगी । यह नारा जोर-शोर से दिया गया है । इसी संदर्भ में ग्रामीण सचिवालय स्थापित करने की घोषणा की गयी है । कहा गया है कि कृषि, राजस्व पंचायत आदि विभागों के अधिकारी, कर्मचारी एकसाथ बैठकर नागरिकों के मामले निबटायेंगे । इससे ग्रामीणों को व्यर्थ में तहसील या जिला मुख्यालय के चक्कर नहीं लगाने पड़ेंगे। इस दिशा में मध्यप्रदेश में काम भी शुरू हो गया है और सर्वप्रथम इंदौर जिले के क्षिप्रा गांव में ग्रामीण सचिवालय स्थापित किया गया है । मुख्यमंत्री श्री सखलेचा के अनुसार प्रदेश में करीब दो हजार ग्रामीण सचिवालय स्थापित किये जाएंगे ।

ग्रामीण सचिवालय के बारे में ग्रामीण दृष्टिकोण क्या है ? ग्राम की सेवा ग्राम में जाकर करने का जो नारा सरकार ने दिया है, उसको क्रियान्वित करने के बारे में हमारे वरिष्ठ अधिकारी क्या पहल कर रहे हैं ? इन प्रश्नों की हमने श्रीमती सुषमा नाथ से, जो एस. डी. ओ. सावेर है, चर्चा की । श्रीमती नाथ पर क्षिप्रा अजनोद के ग्रामीण सचिवालय के संचालन का उत्तरदायित्व है । महिला आई. ए. एस. अधिकारी होने के बावजूद भी वे ग्रामीण क्षेत्र का अकसर दौरा करती हैं। उन्होंने बतलाया कि ग्रामीण सचिवालय में मुख्यत : पटवारी, पंचायत सचिव, तथा ग्रामसेवक-समिति की सेवाएं ग्रामवासियों को एक निश्चित गांव और समय पर उपलब्ध रहेंगी। ग्रामीण समस्याओं का निराकरण एक छत के नीचे करने की व्यवस्था को ग्रामीण सचिवालय का स्वरूप दिया गया है। श्रीमती नाथ ने कहा कि इन सचिवालयों में ग्रामवासियों का व्यर्थ में समय बर्बाद नहीं होगा और उनका यात्रा-खर्च भी बचेगा। तुरंत न्याय व सहायता मिलने से गांववालों का शोषण भी नहीं हो सकेगा।

श्रीमती नाथ ने बताया कि ग्रामीण

(सामने के पृष्ठ का चित्र म. प्र. सूचना-केंद्र के सौजन्य से)

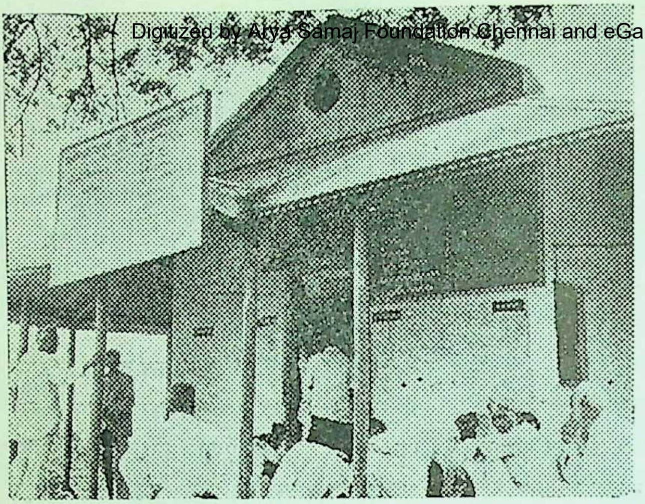

मध्य प्रदेश का पहला ग्रामीण सचिवालय

सचिवालय उस गांव में खोले जाते हैं जहां पंचायत का मुख्यालय हो। जहां आसपास के ग्रामवासी हाट-बाजार करने आते हों और जहां पटवारी, समिति-सेवक, सेवक तथा ग्रामसेवक का मुख्यालय हो। ग्रामीण सचिवालय के लिए भवन का होना भी जरूरी है। इस प्रकार एक छत के नीचे भू-अभिलेख, कृषि-सहकारिता एवं पंचायत-संबंधी मामले निबटाने की प्रक्रिया प्रारंभ की गयी है। गांव के अधिकारियों को निर्देश दिये गये हैं कि उनके लिए हाट के दिन ग्रामीण सचिवालय में उपस्थित होना जरूरी है। यह भी व्यवस्था की जा रही है कि हाट के दिन नायब तहसीलदार, सहायक सर्जन, सहायक पशु-चिकित्सक, राजस्व-निरीक्षक, विद्युतमंडल का सुपरवाइजर एवं आसपास के हलकों के पटवारी भी सचिवालय में उपस्थि रहें, जिससे ग्रामवासि के राजस्व संबंधि प्रकरण निबटाये ज सकें और वहीं प स्वास्थ्य-परीक्षण ए औषधि-वितरण किया जा सके।

हम एक दिन सांवेर क्षेत्र के विकास-खंड अधिकारी श्री हरिसिंह गोलिया के साथ क्षिप्रा की ओर रवाना हुए। रास्ते में कई सवाल-जवाब मन में मंडराते रहे। क्या सचमुच जनता सरकार गांधीजी के ग्राम-स्वराज्य की कल्पना साकार करना चाहती है? क्या अब चौपालों में बैठकर फैसले हुआ करेंगे? शायद इसीलिए जनता सरकार ने पंचायत के चुनाव करा लिये हैं और अब पंचायतों को और अधिक अधिकार देने की बात कही जा रही है। लेकिन क्या आई. ए. एस. अधिकारी अपने अधिकारों को कम करना पसंद करेंगे? सचिवालय के एयरकंडीशंड कमरों में बननेवाली योजनाएं अब क्या चौपालों में बना करेंगी? हमे जनता-मंत्रियों की बातें याद आ गयीं, जिन्होंने कहा है कि अब सरकार ग्रामीणों के घर-घर जाकर दस्तक देगी। पंचायत के अधिकार बढ़ने से छोटे-मोटे मामले गांवों में ही निबटा करेंगे।

क्षिप्रा के किनारे क्षिप्रा

मध्यप्रदेश में इंदौर नगर के पास स्थित आगरा-बंबई राजमार्ग एवं क्षिप्रा नदी के किनारे बसा हुआ गांव क्षिप्रा, जहां बिजली, थाना, स्कूल, चिकित्सालय की सुविधा है। यहां के जन-जीवन पर शहरी जीवन की झलक अधिक दिखायी देती है। इंदौर के फैलाव को देखकर लगता है कि आसपास के गांवों का जल्दी ही शहरीकरण हो जाएगा। सहसा एक वरिष्ठ पत्रकार की बात याद आ गयी, उन्होंने कहा था कि सड़क के किनारे के गांव सही माने में गांव नहीं होते। गांव तो वह है जहां काफी दूर तक पैदल जाना पड़े, जहां न तो थाना है और न बिजली, जहां के बच्चों को गांव से दूर कहीं पढ़ने जाना पड़ता हो। वास्तव में देश के अधिकांश गांवों की हालत ऐसी ही है। खैर, यदि सड़क के किनारे के गांवों का विकास होने लगे तो हम कह सकते हैं कि ग्रामीण विकास की ओर हमारे कदम बढ़ रहे हैं। लेकिन सड़क के किनारे बसे आदिवासी क्षेत्रों के गांवों की हालत देखकर हमें निराशा होगी। ग्रामीण-विकास योजनाओं की घोषणाएं तो बहुत की गयीं, लेकिन देखना यह है कि ये सब क्रियान्वित कब तक होती हैं।

ईंट-चूने का बना दो कमरे का मकान, सामने छोटा-सा बरामदा, जहां बैठे थे चार-पांच सरकारी कर्मचारी। यहां २०–२५ ग्रामीण कर्मचारियों के इर्दगिर्द या तो बैठे थे या इधर-उधर घूम रहे थे। तीन-चार ग्रामीण समय काटने के लिए बीड़ी का कश लगा रहे थे। इस छोटे-से मकाननुमा भवन के सामने बड़ा बोर्ड लगा जिस पर लिखा है, 'ग्रामीण सचिवालय, क्षिप्रा'। जो ग्रामीण इस सचिवालय में आते हैं उनके काम जल्दी होते हैं या नहीं? क्या यहां छुटभैया नेताओं की चलती है? यहां की कार्यप्रणाली क्या है? इन सवालों के जवाब ढूंढ़ने की कोशिश की तो पता चला कि ग्रामीण सचिवालय में विद्युत-

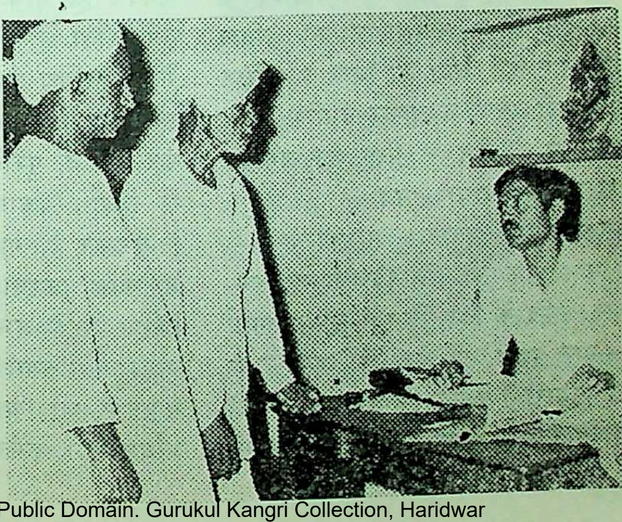

सांवर क्षेत्र के नायब तहसीलदार श्री चौधरी ग्रामीण सचिवालय में शिकायतें सुनते हुए

मंडल का सुपरवाइजर, समिति-सेवक पटवारी, ग्राम-सेवक, राजस्व-निरीक्षक आदि सरकारी कर्मचारी एकसाथ बैठकर, मामले निबटाते हैं।

क्षिप्रा के ग्रामीण सचिवालय में ग्रामवासियों की समस्या सुनते हुए सावेर-क्षेत्र के नायब तहसीलदार श्री ए. आर. चौधरी मिल गये। उनसे चर्चा करने पर पता चला कि क्षिप्रा में प्रदेश का पहला ग्रामीण सचिवालय ८ मई, १९७८ को प्रारंभ हुआ है। शनिवार एवं सोमवार के दिन नायब साहब यहां बैठकर मामलों की सुनवाई करते हैं। ग्रामवासियों की शिकवा-शिकायतें भी सुनते हैं।

श्री चौधरी से बातचीत में निष्कर्ष यह निकला कि छोटे मामले तो ग्रामीण सचिवालय में निबट जाते हैं, लेकिन बड़े मामले के लिए मुख्यालय के चक्कर लगाना जरूरी हो जाता है। इसके लिए आवश्यक है कि ग्रामीण सचिवालय के अधिकारियों व कर्मचारियों को अधिक अधिकार दिये जाएं या जिले के वरिष्ठ अधिकारी गांव में आकर ग्रामीण सचिवालय में दो दिन के लिए कैंप लगायें।

पूरा काम—आधा समय

खसरों की नकल, नामांतरण के के मामले, कुएं के लिए बिजली का कनेक्शन आदि के लिए कितना समय लगता है—यह पूछने पर वहां बैठे ग्राम-सेवक एवं पटवारी ने बताया कि अब इन मामलों को निबटाने में पहले से आधा समय भी नहीं लगता है। खसरों की नकलें, नक्शे आदि तो जल्दी ही मिल जाते हैं। पूर्व में हर विभाग का कर्मचारी एकसाथ नहीं बैठता था, इसलिए गांववालों को इतने चक्कर लगाने पड़ते थे। मैंने सोचा शासकीय कर्मचारी तो ग्रामीण सचिवालय का अच्छा पहलू प्रस्तुत करेंगे, इसलिए भुक्तभोगियों से चर्चा की जाए।

दस दिन में कनेक्शन

ग्रामीण सचिवालय में गांव पुवाड़दाई के कृषक बद्रीलाल मिल गये। उनसे बात करने पर पता चला कि उन्होंने अपने कुएं के लिए बिजली का कनेक्शन मांगा है, वहां बैठे कर्मचारियों ने बताया कि इन्हें १० दिन में बिजली का कनेक्शन मिल जाएगा, पहले कनेक्शन तीन-चार महीनों तक नहीं मिलते थे।

इस ग्रामीण सचिवालय की एक कुरसी पर बैठे सरपंच बाबूलाल पटेल मिल गये। सरपंच ही गांव का मुखिया, नेता सभी कुछ होता है। ग्रामीण-विकास के काम में वह सक्रिय पहल कर सकता है। पटेल साहब बोले, "हम कुछ दिन पूर्व ही चुनकर आये हैं, पुराने लोगों ने चार्ज मुश्किल से दिया। पंचायत के पास फंड नहीं के बराबर है। गांव के विकास की दिशा में काम करना तो बहुत चाहते हैं, लेकिन पैसे के अभाव में कठिनाई होगी।" ग्रामीण सचिवालय के बारे में पटेल साहब ने कहा, "यह तो बहुत अच्छा हुआ। अधिकारी, कर्मचारी एक स्थान पर

मिल जाते हैं। इनके सामने हम अपनी समस्याओं को सरलता से रख सकते हैं।"

सचिवालय में डॉक्टर भी

ग्रामीण सचिवालय में एक चिकित्सक डॉ. देशपांडे सप्ताह में एक-दो दिन आते हैं। छोटी-छोटी बीमारी के लिए दवाई तो यहां से लिख देते हैं, लेकिन नियमित उपचार के लिए गांववालों को स्वास्थ्य-केंद्र पर जाना पड़ता है। केंद्र में प्रसूति के लिए दो पलंग हैं।

क्षिप्रा ग्रामीण सचिवालय से संबद्ध ३० ग्राम हैं, जहां के करीब २७ हजार ग्रामवासियों के मामलों को निबटाने का उत्तरदायित्व इस सचिवालय के अधिकारियों एवं कर्मचारियों पर है। सवाल यह है कि ग्रामीण सचिवालय से गांववासियों को नियमित राहत मिलेगी या नहीं ? या यह भी केवल एक प्रयोग बनकर रह जाएगा ?

शहर का धुंआ—गांव की हवा

क्षिप्रा के सचिवालय से बाहर निकलकर आया, तो गांववाले घेरकर खड़े हो गये, उन्होंने अपनी-अपनी समस्याएं बतानी शुरू कर दीं।

कुछ लोगों के साथ शाला-भवन में जाना पड़ा। गांववालों की शिकायत है कि स्कूल में शिक्षक समय पर नहीं आते। गांव में जानवरों की चिकित्सा हो सकती है, लेकिन इनसान की चिकित्सा के लिए उन्हें शहर जाना पड़ता है। गरीब तो शहर में जाकर महंगा इलाज नहीं करा सकता। गरीबी के कारण कई लोग इलाज के अभाव में मर जाते हैं।

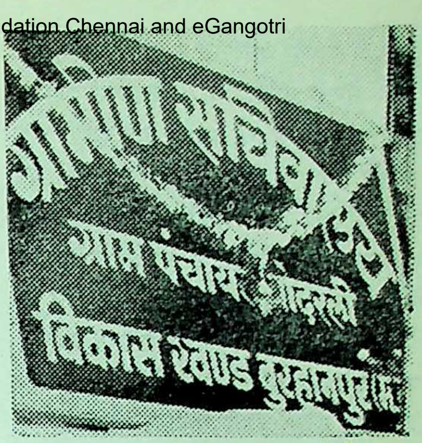

ग्रामीण सचिवालय का बोर्ड

इतने में ही आगरा-बंबई मार्ग पर इंदौर से आ रही दो कारें पेट्रोल का धुआं उड़ाती हुईं निकल गयीं। सड़क के किनारे खड़े हम लोग नाक-भौं सिकोड़ने लगे। इतने में ही क्षिप्रा के खेतों की हरियाली से ठंडी बयारें बहने लगीं। देखना यह है कि शहर के बढ़ते हुए धुएं और घटती शुद्ध हवा से गांव का क्या भविष्य बनता है ?

हाल में मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री वीरेन्द्रकुमार सखलेचा ने उज्जैन में घोषणा की है कि प्रदेश में पांच हजार ग्रामीण सचिवालय कार्यरत हैं। प्रदेश के जिला मुख्यालयों से परिपत्र भी जारी हुए हैं, जिनमें कहा गया है कि ग्रामीण सचिवालय का मूल उद्देश्य है—गांव की सेवा गांव में जाकर की जाए।

एफ—४, ओल्ड पलासिया, इंदौर

बाबू बेचारा बघारता है दाल

• उपेन्द्र मेहता

'एक लड़की बघारती है दाल', इस्माइल मेरठी ने कहा था। कृश्नचंदरजी ने इसी बात पर अपनी आखिरी कहानी, 'एक लड़की बघारती है दाल' में बताया कि अब तो लड़कियां सिर्फ शेखी बघारती हैं, दाल बघारना छोड़ दिया है। पर हमारे खयाल से यह बात भी पुरानी पड़ गयी है, अब तो शेखी बघारने का काम भी वे नहीं करतीं। यह काम लड़कों ने अपने जिम्मे ले लिया है। अब दाल, रोटी पकाना बीवियों का नहीं, बाबुओं का काम बन गया है। बाबू घर में दाल बघारता है और दफ्तर में पहुंचते ही बाकी बाबुओं में बढ़-चढ़कर अपने बघार की शेखी बघारता है।

इकट्ठा बघार खरीदते वक्त

पहले जमाने में तरह-तरह के मसालों और सोने के सिक्कों से दाल को बघार लगायी जाती थी, आजकल जमाना तरक्की पर है। अब कई-कई सिक्कों का इकठ्टा बघार परचूनिये की दुकान पर दाल खरीदते वक्त ही लग जाता है।

पहले ऐसा कीमियागर बावर्ची कोई-कोई ही हुआ करता था जिसकी बघारी दाल रात को सूखे पेड़ पर डाल देने से सुबह पेड़ हरा हो जाता था। अब अनेक कीमियागारिनें ऐसी हैं जिनकी बघारी दाल से हरा पेड़ जल जाए और खानेवालों की जीभ, जिस्म, जिगर भी जल जाए। पर मजबूरी में वह दाल हलक-हवाले करनी ही पड़ती है, नहीं तो वे मायके की राह ताकना नहीं चूकतीं।

हलवे की जगह दाल

शादी के बाद पहली बार चौके-चूल्हे चढ़ती बहुएं हलवा बनाती हैं, पर हमारी बेगम हलवे की जगह जब दाल बनाने लगीं, तब महल्लेवालों का दम खुश्क हो चला। वे दरियाफ्त करने आये, तो पता चला कि बहू ने दाल बघारी है। खाते वक्त जब हमारा गला ही बंद होने लगा, तब हमने दाल की कटोरी उठा गली में खड़े पेड़ पर दे मारी। सुबह उठकर पाया कि पूरा पेड़ ही सूख चुका था।

आमलेट में ही टरका दिया

औरतें अगर दाल पका नहीं पातीं तो यह उनका कसूर नहीं है। उन्हें शुरू

में सिखाया ही नहीं गया। लड़कियों को स्कूल में पाक-शास्त्र की परीक्षा पास करवाने के नाम पर मैडमें आमलेट बनवाकर सर्टीफिकेट थमा देती हैं, क्योंकि खुद मैडमें भी बच्चों व बाबूजी को नाश्ते में आमलेट से ही टरका देती हैं। अगर दाल बनायें तो देगची के आगे दम बांधकर घंटों बैठना पड़ता है। प्रेशर-कुकर में जहां सब्जी-चावल दो मिनट में बनते हैं वहां दाल काफी देर लगाती है। दाल के आगे साइंस के दमखम भी ढीले पड़ गये हैं। पंजाब में उड़द की दाल पकाने के लिए घरों, ढाबों में सुबह से ही देग चढ़ा दी जाती है जो शाम को जाकर पकती है। यह बेहद लजीज और मुकव्वी होती है। पंजाबवालों की कूवत-ए-सेहत का यही राज-ए-खास है। कृश्नचंदरजी को यह दाल इस कदर पसंद थी कि रोजाना शाम को बंबई के कोलीवाड़े (मिनी पंजाब) के ढाबों में बिना नागा जाया करते।

दाल खाकर खुदकशी नहीं

कहते हैं कि बारह बरस में घूरे के भी दिन फिरते हैं। घूरे के दिन फिरते तो देखे नहीं पर दालों के दिन फिरते सभी ने देख लिये हैं। दालों के दाम इस कदर बढ़े हैं कि कोई दाल खाकर खुदकशी करना भी चाहे तो नहीं कर सकता।

हकीम हमेशा ही कहते आये हैं कि मरीज को मूंग की दाल दो, क्योंकि जो काम मुरगा, मीट नहीं कर सकते वह मूंग की दाल करती है। फिर मीट महंगा भी होता है। पर अब बात और ही है। बीमारी में मूंग खरीदने की भी मजबूरी हो गयी है। मीट से महंगी मूंग मिलती है। साइंसदानों ने दालों का भी मीट बनाना शुरू कर दिया है। मूंग की दाल महंगी होने का एक बड़ा कारण यह भी है, अगर पार्टियों में या शादियों में मूंग की दाल का हलुवा न दिया जाए तो बराती लड़की वालों की छाती पर मूंग दल देते हैं। यह बात भी काबिले-गौर है अगले दिन से तकरीबन तमाम बरातियों को अपने घरों पर पेट की मशीन की गड़बड़ी से हफ्तों मूंग की दाल का पतला पानी पीना पड़ता है। मूंग की साथिन है मसूर, जिसकी औरतों और लड़कियों में खासी शोहरत है, रुतबा बुलंद है। रंग गोरा करने के लिए इसे जब दूध में पीस उबटन बना मला जाता है, तब चमक से चेहरा चमचमाने लगता है। इसीलिए गुलाब की महक माफिक मसूर के नूर के चर्चे दूर-दूर तक महकते हैं।

दुश्मनों के हाथ-पांव बराबर

गुलाब के साथ कांटे होते हैं। ऐसे ही केसरी दाल है जो अपने खानेवालों का दलिया दल देती है। दोबारा खाने की बात तो अलग रही, इसकी तरफ देखने की हिम्मत ही नहीं होती। केसरी दाल का जला, चने की दाल को भी फूंक-फूंककर खाता है। केसरी बाना पहने राजपूत मैदाने-जंग में जाते ही दुश्मनों के हाथ-पांव बराबर कर देते हैं। केसरी रंग की यह दाल भी ऐसी ही है, जिस-जिसने भी इसकी तरफ नजर की, उस-उसके भी इसने हाथ-पांव हिला दिये।

इसकी बोरी सब बोरों के पीछे

दालों के दिन फिरे हैं तो अरहर की दाल के। कुछ अरसा पहले तक इसे कोई कवाड़ के भाव भी न पूछता था। दुकानदार इसकी बोरी सब बोरों के पीछे यूं लगाया करता था जैसे फिसड्डी लड़कों को क्लास में बैक बेंच पर बिठाया जाता है। दक्षिण-भारत में इसकी कदर यूं कि बिना इसके सांभर बने नहीं, और जब तक सांभर न बने तब तक इडली, डोसा चले नहीं। जब से राजधानी के दफ्तरों की कैंटीनों में 'सदर्न-डिशेज' ने जोर जमाया तब से अरहर चमक गयी। आजकल महंगी दालों में इसका नंबर आगे है।

दूध दुहना शुरू

लोग कहते हैं दालें बड़ी महंगी हो गयीं। अब महंगी न हों तो और क्या हो! साइंस-वालों ने भी दालों का दूध दुहना शुरू कर दिया। सोयाबीन से दूध, दही, पनीर और भी न जाने क्या-क्या निकालने लगे हैं। डॉक्टर दालों से विटामिन निकाल लेते हैं। लाला लोग चिड़ियों को दवाकर दालें डालते हैं। दालों का तुलादान कराते हैं। मंदिर, दरगाह पर फकीरों को दाल बांटी जाती है। खुद भगवान वृहस्पति देव भी भक्त पर बृहस्पतिवार को चने की दाल से अति प्रसन्न होते हैं। दफ्तरों की कैंटीनों में क्विटलों के हिसाब से दाल की खपत होती है। विदेश में रह रहे हिंदुस्तानी हिंदुस्तान आते वक्त रेडियो, रिकार्ड-प्लेयर लाते हैं और जाते वक्त दालों के पैकेट साथ ले जाते हैं। आजकल दाल-गिफ्ट की बड़ी अहमियत है, जो काम और कोई न कर सके, दाल बखूबी करवा देती है।

तुम्हारा बिजनेस भी परवान चढ़ेगा

हमारे ठेकेदार दोस्त सरदारजी बड़े परेशान थे। बिजनेस बैठा जा रहा था। बड़े साहब को गिफ्टें देने की कोशिशें कीं, पर दाल गली नहीं। जब प्रेशर-कुकर तक दाल गला नहीं पाते तब उनकी दाल कैसे गल जाती! हमने सलाह दी, यदि दाल गलानी हो तो दाल की गिफ्ट दो। अंगरेजों के वक्त डालियां काम करती थीं। फिर चेकों की गिफ्ट चलने लगी, पर अब ये भी काम नहीं करते। लिहाजा दाल की गिफ्ट दो और साहब के साहब-जादों और साहबजादियों के बर्थ-डे पर चेक की बजाय दालें प्रजेंट करो, क्योंकि

इस उमर में ज्यादा प्रोटीन की जरूरत होती है और प्रोटीन दालें ही दे सकती हैं। आपकी दाल-खाने प्रोटीन-पा वे ज्यों-ज्यों परवान चढ़ेंगे त्यों-त्यों तुम्हारा बिजनेस भी परवान चढ़ेगा।

इसलिए सुबह-सवेरे साहब की सेवा में बंगले पर जाओ, बाजार से उड़द और अरहर के बोरे संग ले जाओ, क्योंकि साहब की मेमसाहब को इडली, डोसा और सांभर बनाना होता है। पर खबरदार! मूंग मसूर मत ले जाना। मसूर गरम होती है। कहीं इसकी गरमी से वे ही गरम न हो जाएं। याद रखो जब तक साहब के घर तुम्हारी पहुंचायी दाल बनती रहेगी तुम्हारा बिजनेस भी बाकायदा बढ़ता रहेगा। पर देने से पहले दाल जरूर दिखवा लेना, खाते वक्त कहीं कंकर दांत तले दबा तो साहब तुम्हारा दलिया दल देंगे।

सरदारजी ने ऐसा ही किया। साहब के पास पहुंच गया और कहने लगे, "गांव में जरा जमीन है। कल ही नयी फसल आयी है, सोचा कि हजूर की नजर करूं, सो साहब जरा-सी दाल है।" यह कह उन्होंने बोरे रसोई में लगवा दिये, साहब ने गरदन को और ऊंचा उठा मेमसाहब को निहारा। मेमसाहब के चेहरे पर संतोष झलक रहा था कि अब सुपरबाजार की लंबी लाइन में नहीं लगना पड़ेगा। मेमसाहब प्रसन्न हुईं तो साहब स्वयंमेव प्रसन्न हुए।

कुछ दिन बाद सरदारजी मुसकराते आये, संग दो बोरे भी लाये और बोले, "भाइयाजी, तुहाडी किरपा-नाल साहब दी फुल्ल-फुल्ल किरपा हो गयी है।" यह कहकर बोरे हमारे हवाले कर गायब हो गये।

हम, हमारी बेगम बड़ी खुश हुईं कि अब गली के नुक्कड़ के लाला से सौ-सवा सौ ग्राम दाल के उधार से जान छूटी। दो बोरी दाल से महीनों मौज मनायेंगे। बेगम साहिबा ने उद्घाटनी मूड में बोरों के तग्गे तोड़े। अंदर मूंग, मसूर मंद-मंद मुसकरा रहे थे।

—४४, अशोक पार्क एक्सटेंशन,
पंजाबी बाग, नयी दिल्ली–२६

एक लॉज में हर रोज दो चम्मच गायब होते थे। इसलिए जो लोग भोजन के लिए आते, उन पर कड़ी निगरानी रखी जाती। एक बूढ़ा आदमी हर रोज आता था। जब उसने भोजन समाप्त कर लिया तो दो चम्मच उठाकर अपनी जेब में डाल लिये। फौरन उसको पकड़कर नौकर मालिक के पास ले गये।

मालिक ने पूछा, "आप देखने से तो भले लगते हैं, फिर आपको क्या यह चोरी शोभा देती है!"

उस बूढ़े आदमी ने अपनी जेब में से एक कागज निकालकर मालिक को दिया, जो डॉक्टर का प्रिस्क्रिप्शन था। उसमें लिखा था, "हर रोज भोजन के पश्चात दो चम्मच लेना।"

कुछ खास किस्म की हिचकियां

• मशकूर हुसैन 'याद'

चौधरी फजलू हमारे महल्ले के बहुत दिलचस्प व्यक्ति हैं। उनके चरित्र की सबसे बड़ी खूबी उनकी साहसिकता है। एक बार गांव के नंबरदार की लड़की की शादी में जाना था। हम और चौधरी फजलू तकल्लुफ में खड़े रह गये और सभी बराती लारी में ठुस गये। नंबरदार साहब ने हमसे प्रार्थना की कि हम मोटर की छत पर बैठ जाएं। हमने ट्रैफिक के उसूल बताये तो नंबरदार साहब कहने लगे, "शाह साहब! किसी जलसे के लिए जब लोगों को जमा किया जाता है और जलसे के स्थान पर ले जाया जाता है, तो उस समय ट्रैफिक के उसूल कहां चले जाते हैं? लारी की छत पर सैकड़ों आदमी बैठे होते हैं। शादी भी एक तरह का जलसा ही है। इसलिए आप और चौधरी फजलू निश्चिंत होकर छत पर पधारें।" हम दोनों छत पर बैठ गये और लारी चल पड़ी। अभी चार-पांच मील दूर गये होंगे, कि नीचे से आवाज आयी, "अरे फजलू तेरा बच्चा गिर गया!" बस फिर क्या था। इस आवाज के साथ ही चौधरी फजलू ने छलांग लगा दी—'लारी रोको...' कच्ची सड़क पर लारी के कारण वैसे ही धूल उड़ रही थी। हमें कुछ पता न चल सका, चौधरी कहां और कब गिरा। कुछ दूर जाकर लारी खड़ी हो गयी। नंबरदार कहने लगा, "शाह साहब! क्या बात है?"

मैंने बताया, "चौधरी फजलू ने छलांग लगा दी।"

"वह क्यों?"

"उसका बच्चा जो गिर गया था।"

"उसका बच्चा तो सीट पर से गिरा था। चौधरी फजलू ने बाहर क्यों छलांग लगायी?"

"संभवतः वह यही समझा होगा कि बच्चा लारी से बाहर गिर गया।"

हमारी यह बात सुनकर नंबरदार ने ख्वाहमख्वाह परेशान करने पर फजलू की बीवी को बुरा-भला कहा। इसके बाद चौधरी फजलू की तलाश शुरू हुई। हमारा

खयाल था, चौधरी की हड्डी-पसली टूट गयी होगी और वह कहीं जमीन पर पड़ा कराह रहा होगा; लेकिन हमें यह देखकर अति विस्मय हुआ कि चौधरी फजलू अच्छा-खासा एक कपास के छकड़े में से निकलकर चला आ रहा है। संयोगवश जिस समय चौधरी ने लारी पर से छलांग लगायी, बराबर में कपास से लदा हुआ छकड़ा जा रहा था। वह उसमें गिर पड़ा। बहरहाल चौधरी फजलू की साहसिकता प्रसिद्ध हो गयी। वह समय पड़ने पर अपने प्राणों की परवाह नहीं करता। हमने जो अपने उस्ताद को चौधरी के बारे में इस प्रकार की घटनाएं सुनायीं तो वह कहने लगे, "तुम्हारे चौधरी का जन्म अवश्य २५ फरवरी और २४ मार्च के मध्यवर्ती समय में हुआ होगा।" जांच की गयी तो सचमुच यह बात सत्य निकली। चौधरी फजलू इस संसार में २० मार्च को प्रकट हुआ था। कहते हैं, इस समय में पैदा होनेवाले लोग बड़े साहसी होते हैं।

फर्राटेदार अंगरेजी है

इस अवधि में पैदा होनेवाले व्यक्तियों की एक खूबी यह भी होती है कि यह लोग बड़े समझदार होते हैं, पर इनकी यह समझ-बूझ किसी पुस्तकीय अध्ययन का परिणाम नहीं होती, अपितु अपने अनुभवों से ये लोग बुद्धि और सूझ प्राप्त करते हैं। हमारे मित्र सिद्दीकी कहने लगे, "छोड़ो यार। यह कौन-सी बड़ी ऊंची और पते की बात कर दी है। यह तो मानी हुई बात है कि किसी व्यक्ति में जो भी सूझ-बूझ पैदा होती है, वह अनुभवों से ही पैदा हुआ करती है। पुस्तकों से तो आदमी बहुत कम प्राप्त करता है।" हमने निवेदन किया, "सिद्दीकी साहब, मैं पूछना चाहता हूं, आपने जो अंगरेजी बोलनी, लिखनी और पढ़नी सीखी है, इसमें पुस्तकों का कितना हाथ है, आपके अनुभवों का कितना?" कहने लगे, "हां, यार। बात तो ठीक ही है। सचमुच हमारी अंगरेजी तो पुस्तकों की ही देन है।" हमने कहा, "पर यदि आपकी जन्म-तिथि २५ फरवरी और २४ मार्च के बीच होती, तो फिर निस्संदेह यह होता कि आप पुस्तकों के बिना ही फर-फर अंगरेजी बोलने, लिखने और पढ़ने लगते ..." जरा

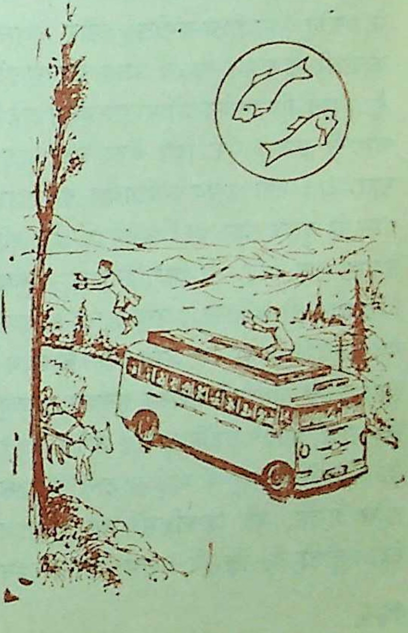

सोचकर बोले, "इसका यह मतलब हुआ कि दुनिया के सभी जानवर फरवरी और मार्च ही में पैदा होते होंगे।"

"वह क्यों ?" हमने तनिक क्रोधित होकर पूछा।

"इसलिए कि जानवरों में जितनी भी सूझ-बूझ और बुद्धिमानी पैदा होती है, वह सभी अनुभवों पर आधारित होती है। मैंने आज तक किसी गाय, बैल, घोड़े, गधे चिड़िया और चकोर आदि को पुस्तक पढ़ते नहीं देखा।"

हमने कहा, "सिद्दीकी साहब ! इसे कहते हैं विवाद के लिए विवाद।" हंसकर बोले, "और जो आप वार्त्तालाप के मोती बिखेर रहे हैं, उसको क्या कहते हैं ? २५ फरवरी, २४ मार्च के लिए विवाद ..."

घड़े बजने लगे !

ये लोग साहित्य-संगीत और अन्य कलाओं में प्रमुख स्थान प्राप्त कर सकते हैं, बशर्ते कि इनका प्रोत्साहन होता रहे। चौधरी फजलू एक दिन बैठा घड़ा बजा रहा था। उस समय संयोगवश नंबरदार पास से गुजर रहा था। उसने चौधरी की प्रशंसा कर दी। बस फिर क्या था ! कुछ दिन बाद ही चौधरी फजलू इतना बढ़िया घड़ा बजाने लगा कि आस-पास के गांव-वाले उसके घड़े की प्रशंसा सुनकर फजलू को अपनी महफिलों में बुलाने लगे। कहते हैं, चौधरी फजलू के घड़े बजाने में एक खास प्रकार की हिचकियों की आवाज पैदा होती है, जिसमें प्रलय का रिद्म [illegible] पैदा होता है। यों लगता है जैसे सुराहीदार गरदनवाली कुछ प्रेमिकाओं को एकसाथ हिचकी लग गयी हो !

इन लोगों की एक विशेषता यह भी है कि इनके जिम्मे कोई काम लगा दें, फिर ये उसे बड़ी लगन के साथ पूरा करेंगे। वैसे अपने-आप कभी कोई जिम्मेदारी उठाना पसंद नहीं करते, मानो ये लोग गले में पड़ा हुआ ढोल खूब बजाना जानते हैं।

इस अवधि में पैदा हुए व्यक्तियों में अपने चरित्र को अकस्मात बदल देने की विशेषता भी खूब पायी जाती है। यही कारण है कि इनके निकट के मित्र भी कई बार विस्मित रह जाते हैं कि ये लोग अभी क्या थे और क्या बन गये! थोड़े दिनों पहले की बात है, चौधरी फजलू-जैसा आलसी और अधर्मी आदमी पूरे गांव में कोई न था, पर एक दिन क्या देखते हैं कि चौधरी सुबह ही सुबह मसजिद में बैठा नमाज पढ़ रहा है।

इन लोगों को समंदर से बहुत प्यार होता है। और सचमुच एक बार चौधरी फजलू हमारे साथ कराची गया। जैसे ही हम उसे समंदर के किनारे ले गये, उसने हमसे दामन छुड़ाकर कपड़ों समेत और अपनी एक अदद लंबी दाढ़ी के साथ समंदर में छलांग लगा दी। अब हम कह रहे हैं, चौधरी फजलू बाहर निकल आओ और चौधरी जवाब दे रहा है, "न भाई, मैं तो अभी कुछ देर और समंदर में ठहरना

चाहता हूं।" हम प्रार्थना कर रहे हैं, "यार फजलू, आ भी जाओ!" फजलू कह रहा है, "मुझे पानी में देर ही कौन-सी हुई है। यही कोई तीन घंटे। कम से कम तीन घंटे और समंदर में रहना चाहता हूं।" आखिर बड़ी याचना और बहुत कठिनाई से उसे समंदर से बाहर निकाला। वह रात को सपने में भी 'समंदर-समंदर' पुकारता रहा। सुबह को हमने वैसे ही फजलू से कहा, "यार फजलू, क्या खयाल है, अगर तुम मछली का कारोबार करो तो कैसा रहे?" उसने हमारी यह बात सुनी ही थी कि वह फौरन फड़क उठा। कहने लगा, "कसम खुदा की, तुमने मेरे दिल की बात कह दी।" अब हम कराची से वापसी का आग्रह कर रहे हैं और फजलू है कि पांव पसारे बैठा है! कहता है, "मैं तो यहीं कराची में रहूंगा और मछली का कारोबार करूंगा।" हमने उससे कहा, "कारोबार करना कोई आसान काम नहीं।" जवाब में बोला, "समंदर की लहरें गिनना तो आसान काम है... मैं और कुछ नहीं कर सकता तो समंदर की लहरें तो गिन सकता हूं!" हमने कहा, "और पेट किस चीज से भरोगे?" जवाब दिया, "वह भी तो आखिर मुझ-जैसे हाथ-पैरवाला आदमी ही था, जिसे समंदर की लहरें गिनने पर लगाया गया था और उसने इस काम में भी दौलत कमाकर दिखा दी थी।"

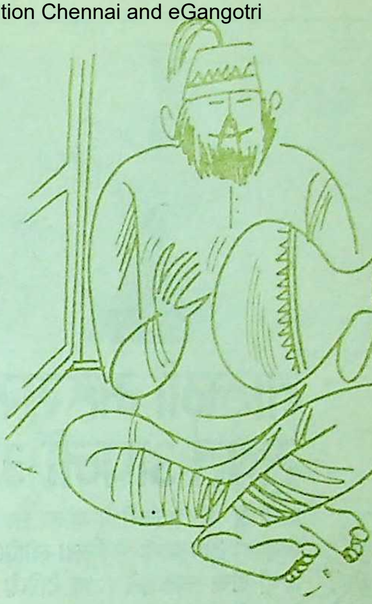

इस अवधि में पैदा होनेवाले व्यक्ति खासे वहमी होते हैं। चौधरी फजलू अगर कहीं जा रहे हों और आप उनसे यह पूछ लें कि चौधरी कहां जा रहे हो, तो बस समझ लीजिए गजब ही हो जाएगा। फौरन जमीन पर अपनी लाठी फेंककर यह महाशय वहीं बैठ जाएंगे और आपको बेभाव की सुनाना शुरू कर देंगे।

इन व्यक्तियों को हृदय-रोग हो सकता है (जैसे और किसी को नहीं हो सकता।) अनिद्रा और निराशा के शिकार हो जाते हैं। (कौन है जिसे यह दो शिकायतें जिंदगी में कभी नहीं हुईं?) इन लोगों को खून की कमी और खून के दौरान में गड़बड़ की तकलीफ भी हो सकती है। कहते हैं, जहां तक हो सके, इन लोगों को खुले वातावरण में रहना चाहिए (मानो औरों को कैद होकर रहने की जरूरत है।)—अनु.: सुरजीत

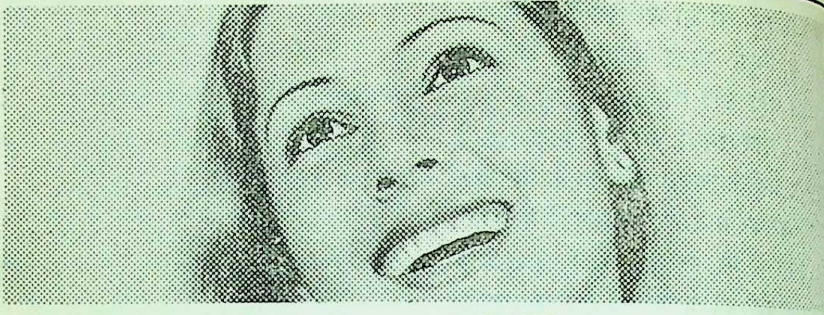

ताज़गी महसूस कीजिये
सुबूत अपनी आँखों से देखिये

पानी से भरी तश्तरी में थोड़ा सा कोयले का चूरा छिड़किये। अब थोड़ा सा बिनाका टॉप पानी में मिला लीजिये और इस घोल की एक बूँद तश्तरी के बीचों-बीच टपकाइये। अब देखिये बिनाका टॉप कितनी तेज़ी से चारों तरफ फैलता है.... मैल को दूर करता है और पानी की सतह को बिल्कुल साफ़ कर देता है।

बिल्कुल इसी तरह बिनाका टॉप का विशेष फैलने वाला तत्व आपके मुँह के हर कोने में फैल कर दातों में सड़न पैदा करनेवाले कीटाणुओं का नाश करता है और साँस की दुर्गन्ध को रोकता है। बिनाका टॉप आपके मुँह की पूरी रक्षा करते हुए उसे ताज़गी से भर देता है।

Binaca
top
toothpaste

बिनाका टॉप
टूथपेस्ट

मुँह की पूरी रक्षा के लिए

शिवा-गायत्री
ARMS-CBT-1-78-HN

समस्या झूठे गवाहों की

• शांतिलाल छाजेड़

कहा जाता है कि न्याय की आंखों पर पट्टी बंधी होती है व उसके हाथ में एक तराजू है। इस तराजू में मुकदमे के दोनों पक्ष अपना-अपना साक्ष्य रखते हैं और जिस पक्ष का पलड़ा भारी होता है, न्याय उसी के हक में हो जाता है।

कहने को तो न्याय का यह सर्वमान्य सिद्धांत है, पर झूठे गवाह इस सिद्धांत के रास्ते में हमेशा रोड़ा अटकाते हैं। झूठे गवाहों की समस्या हमारे न्यायालयों में इतने बड़े पैमाने पर विद्यमान है कि न्यायाधीश स्वयं उलझकर रह जाता है।

कभी-कभी सही बात को सिद्ध करने के लिए भी झूठ का सहारा लेने के मामले मेरी निगाह में आये हैं। यह झूठ इस धारणा के वशीभूत होकर बोला जाता है कि बगैर गवाह या साक्ष्य के मुकदमा खिलाफ निकल जाएगा। ऐसा ही एक मामला बड़ा दिलचस्प था। इस मामले में 'अ' ने 'ब' को कुछ रुपये बही में लिखकर उधार दिये। इस बीच 'अ' और 'ब' में झगड़ा हो गया और 'अ' ने 'ब' से बदला लेने की धमकी दी। 'ब' ने 'अ' को वे रुपये चुका दिये और बही में दो गवाहों के सामने जमा की प्रविष्टि करा दी। उसके एक माह बाद 'अ' ने 'ब' को नोटिस दिया कि रुपये अभी तक बकाया हैं, सात दिन में जमा करायें, वरना वह न्यायालय में वाद प्रस्तुत करेगा। 'ब' के इस जवाब के बावजूद कि उसने अदायगी कर दी है, 'अ' ने वाद प्रस्तुत कर दिया। जब न्यायालय के सम्मुख 'ब' ने बही देखी तो वह बड़ा चकराया। खाता उसी के हाथ का लिखा हुआ ज्यों-का-त्यों था, पर उसमें जमा की प्रविष्टि गायब थी। अब 'ब' क्या करे? भाग्यवश 'ब' को 'अ' के हस्ताक्षर कागज के एक छोटे-से टुकड़े पर किये हुए मिल गये। उसने उन हस्ताक्षरों के ऊपर 'अ' की तरफ से एक रसीद लिखकर न्यायालय में प्रस्तुत कर दी। 'अ' ने न्यायालय में रसीद पर हस्ताक्षर तो अपने स्वीकार किये, पर रसीद को जाली बताया। हस्तलिपि-विशेषज्ञ को बुलाया गया तो उसने भी 'अ' के कथन की पुष्टि की कि हस्ताक्षर तो 'अ' के हैं, लेकिन रसीद की लिखावट बाद में की गयी है, रसीद फरजी है। न्यायालय ने 'अ' का वाद डिग्री कर दिया।

अब देखिए कि 'ब' सच्चा था, फिर भी उसने झूठ का सहारा लिया तो उसका

कथन झूठा सिद्ध हो गया। स्वाभाविक प्रश्न यह उठता है कि 'अ' ने खाते की लिखावट कैसे मिटायी? दरअसल उसने किया यह था कि मूल खाते के ऊपर वही का दूसरा पत्ता मिट्टी का तेल लगाकर रखा व मूल खाते की हूबहू नकल कर ली। जब 'ब' ने रुपये जमा कराये तो ये रुपये मूल खाते में नहीं वरन् मिट्टी के तेल की मदद से उतारी गयी नकल पर जमा किये थे। उस समय किसी को संदेह ही नहीं हुआ। मूल लिखावट 'अ' ने न्यायालय में प्रस्तुत कर दी जिस पर जमा का कोई इंदराज ही नहीं था।

बाद का किस्सा तो और भी मजेदार है। 'अ' 'ब' के यहां कुर्की लेकर गया तो विवश होकर 'ब' को वे रुपये दुबारा देने पड़े, जो वह पहले ही दे चुका था। तीन दिन बाद ही 'अ' ने 'ब' को रुपये तथा उसका मुकदमा लड़ने में हुआ खर्च वापस भिजवाकर कहला भेजा कि उसे तो 'ब' से बदला लेना था सो ले लिया। वह दोबारा रुपये लेकर बेईमान नहीं कहलाना चाहता, क्योंकि मानवीय अदालतों से बड़ी जो अदालत है, वहां ये सब चीजें नहीं चलती हैं।

एक अन्य मामला पुलिस द्वारा झूठ का सहारा लेने के संबंध में है। मामला चोरी का था। तीन अभियुक्त थे तथा प्रत्यक्षदर्शी गवाह कोई नहीं था। अभियोग-पक्ष के अनुसार दो अभियुक्तों के घर से माल बरामद हुआ तथा तीसरे अभियुक्त ने नदी के किनारे एक चबूतरे के पास पत्थरों के ढेर से माल बरामद कराया था। अभियुक्त 'क' न्यायिक हिरासत में था। बरामदगी करनेवाले थानाध्यक्ष साक्ष्य के कठघरे में आये और उन्होंने बयान दिया कि वे 'क' के घर गये तथा 'मोतबिरों' की उपस्थिति में 'क' ने अपने घर की वह जगह बतायी जहां माल रखा हुआ था और वे माल ले आये। उसी क्षण 'क' चिल्ला उठा, "साहब ये झूठ बोलते हैं, माल इन्होंने ही अपने हाथों से वहां रखा व मुझे मारपीट का डर दिखाया सो मैं चुप रहा। फिर ये गये व मोतबिरों के सामने माल बरामद कर ले आये।" चूंकि 'क' न्यायिक हिरासत में था व उसकी पैरवी हेतु कोई वकील नहीं था, अतः उसके कहने के ढंग से मुझे सच्चाई का आभास हुआ। मैंने थानाधिकारी से इस संबंध में कई प्रश्न पूछे। यद्यपि वे इस आक्षेप से इंकार करते रहे, पर उनके चेहरे पर आये पसीने व घबराहट से साफ पता चल रहा था कि वे झूठ बोल रहे हैं। उसके बाद जो दो मोतबिर गवाह आये, उनमें से शायद एक को इस तथ्य का पता था सो उसने स्पष्ट कहा कि माल पुलिस ने ही वहां रखकर बरामद कराया था।

जब मुकदमे की बहस सुनी जा रही थी तब यह निश्चित-सा था कि 'क' साफ बरी हो जाएगा, किंतु मुकदमे ने एक नाटकीय मोड़ लिया। जब मैंने 'क'

से पूछा कि वह कुछ कहना चाहता है तव अभियुक्त की अंतरात्मा शायद छटपटा उठी । उसने वताया कि जहां चोरी हुई वह घर उसके घर के पास ही है । रात को वह पेशाव करने उठा तो उसने देखा कि मुकदमे का एक अभियुक्त उस घर की छत से नीचे उतर रहा था । उसके हाथ में माल की पोटली थी । उसने 'क' को देखा तो वह घवराया तथा कहा कि वह भी थोड़ा-सा माल ले ले, किंतु अन्य किसी को यह वात न वताये । लालच के वशीभूत हो 'क' ने माल ले लिया । थोड़े समय वाद वह अभियुक्त पकड़ा गया और उसने पुलिस को वताया कि 'क' के पास भी कुछ माल है । पुलिस ने 'क' को थाने पर बुलाया तव वह साथ में माल भी लेता गया और पुलिस को दे दिया ।

इन तथ्यों के आधार पर भी 'क' धारा ४११ भा. द. वि. के अनुसार अपराधी ठहरता था, पर पुलिस ने यह सोचा कि शायद 'क' द्वारा माल पेश किये जाने की बात पर न्यायालय विश्वास न करे, इसलिए उसने बरामदगी का नाटक करके मुकदमे को दूसरा ही मोड़ दे दिया । चूंकि 'क' की उम्र कम थी और उसकी अंतरात्मा जागृत हो चुकी थी, अतः मैंने उसे परिवीक्षा-गृह में भेज दिया । जहां से हो सकता है वह एक जिम्मेदार नागरिक होकर वाहर निकले ।

दिल्ली का तीसहजारी अदालत : सच और झूठ का फैसला

ऐसे अनेक उदाहरण मिल जाएंगे, जहां लोग सही होते हुए भी झूठ का सहारा लेते हैं। ऐसे झूठ से सत्य भी झूठ वन जाता है और मुकदमे में हार का मुंह देखना पड़ता है।

उपर्युक्त झूठ निर्दोष झूठ था, परंतु न्याय के रास्ते में वास्तविक रोड़ा निर्दोष झूठ न होकर सदोष झूठ है। सदोष झूठ व्यक्ति क्यों बोलता है ? कई कारण व परिस्थितियां व्यक्ति को झूठ वोलने को वाध्य करती हैं। अपराधी भयानक व दादा-टाइप का हुआ तो सामान्य नागरिक सोचता है कि अगर इसके विरुद्ध गवाही दे दी तो कल यह वाहर आकर

बदला लेगा और उसकी सुरक्षा की कोई व्यवस्था नहीं हो सकेगी। इसके विपरीत अगर अपराधी उसी जगह का रहनेवाला है, जहां के गवाह हैं तब सहानुभूतिवश भी आदमी झूठ बोल जाता है। इसके अतिरिक्त मनुष्य की स्मृति क्षीण होती है। समय के अंतराल से बदले की भावना भी क्षीण हो जाती है। मुकदमा कई दिनों तक चलता है तथा गवाहों में क्षमा व दया की भावना जाग्रत हो जाती है, तब वे झूठ बोलकर अपराधी को बचा लेते हैं।

कभी-कभी व्यक्ति स्थिति को गंभीरतापूर्वक नहीं लेता और लापरवाही में भी झूठ बोलता है। ऐसे लोग प्रकृति से तटस्थ व उदासीन होते हैं। जब दोनों पक्षकार गवाह के परिचित हों तो गवाह सोच लेता है कि मैं किसी के पक्ष में भी क्यों बोलूं! ऐसा सोचकर वह घटना के बारे में सब कुछ जानते हुए भी कह देता है कि वह कुछ नहीं जानता। ऐसा कहते हुए वह सोचता है कि वह तटस्थ रहा, पर उसे पता नहीं कि सत्य को प्रकट न कर वह परोक्ष रूप से एक पक्षकार का पक्ष ले रहा है।

कभी-कभी दुश्मनी भी झूठ का सबब बन जाती है। लोग न्यायालय को दुश्मनी निकालने का सबसे अच्छा 'फोरम' मानते हैं और वहां पर बदले की भावना के वशीभूत होकर अभियुक्त या अभियोगी के विरुद्ध ऐसी-ऐसी बातें कह जाते हैं, जो कभी हुईं ही नहीं।

इन सबसे खतरनाक तो पेशेवर गवाह होते हैं। ऐसे गवाह सही न्याय के रास्ते में सबसे बड़ा रोड़ा होते हैं और इनसे निपटना वास्तव में एक टेढ़ी खीर होती है।

मानव का मन आवेगों व संवेगों से परिचालित होता रहता है। कौन जाने कब किस आवेग के वशीभूत होकर वह झूठ का दामन थाम बैठे। झूठ बोलने के कारण अनगिनत हैं और इस छोटे-से लेख में उनका विश्लेषण करना संभव नहीं है।

क्या इस झूठ का पता लगाया जा सकता है? अभी कोई ऐसा यंत्र नहीं बना जिससे कि झूठ व सत्य का पता लगाया जा सके, पर मेरी यह मान्यता है कि सत्य बड़ा शक्तिशाली है। अनुभवशील, व्यवहारिक, मनोवैज्ञानिक व विवेकशील न्यायाधीश की दृष्टि में झूठ के असंख्य परदों को चीरकर सत्य प्रकाशित हो उठता है। मनुष्य झूठ बोल सकता है, परिस्थितियां कभी झूठ नहीं बोल सकतीं।

होशियार वकील भी सत्य के प्रकटीकरण में सहायक होते हैं। वकील नाम की संस्था का उद्गम भी इसी उद्देश्य से हुआ कि वे सत्य के प्रकट होने में सहायक बनें व न्याय की सहायता करें, पर वास्तव में यह संस्था अब क्या कर रही है, यह हर वह व्यक्ति जानता है जिसका कभी न्यायालय में काम पड़ा है।

सत्य जानने में कभी-कभी शपथ भी बड़ा महत्त्वपूर्ण रोल अदा करती है। आजकल शपथ केवल यांत्रिक रूप से दिला

दी जाती है, जो गलत है। शपथ दिलाते समय पूर्ण निष्ठा व गंभीरता की आवश्यकता है, व न्यायाधीश को चाहिए कि गवाह को शपथ के महत्त्व से परिचित कराये तथा उसकी अंतरात्मा को जगाने का प्रयास करे। इसके लिए धार्मिक ग्रंथ, गंगाजली, धर्मगुरुओं के चित्रों आदि का सहारा लिया जा सकता है।

गवाह के बयान लेते वक्त न्यायाधीश केवल लिखने या लिखाने में ही व्यस्त न रहे बल्कि गवाह का सूक्ष्म परीक्षण करे, तब कोई कारण नहीं कि यह पता न चले कि गवाह में कितनी सच्चाई है। उसका हाव-भाव, उसके चेहरे पर छाया हुआ भय, उसके शरीर की या अंगों की कंपकंपाहट, जवाब के समय उसका लंबा मौन आदि कई चीजें हैं, जो सत्य का पता लगाने में सहायक हो सकती हैं।

क्या झूठ न्यायालय के निर्णयों पर किसी गंभीर सीमा तक असर डालता है? मेरा उत्तर है—'नहीं'। ऐसे तो कई मामले मिल जाएंगे, जहां झूठे गवाहों के कारण अपराधी छूट गये हैं, पर ऐसा मामला लाखों में एक ही मिलेगा जहां झूठ के कारण निरपराध को सजा मिल गयी हो।

झूठ की समस्या विकराल है। न्यायप्रिय, निष्ठावान व विवेकशील न्यायाधीश अपने पूरे बल व साहस से रोज इस झूठ के राक्षस से लड़ रहे हैं व इसे नष्ट करने का हर संभव प्रयत्न कर रहे हैं। परंतु जब तक हमारी जनता की चेतना जाग्रत न हो, जब तक कि सत्यप्रियता एक आंदोलन के रूप में न फैले, जब तक कि सार्वजनिक जीवन में व्याप्त भ्रष्टाचार समाप्त न हो तथा गरीबी व भुखमरी का राक्षस अपनी मौत न मारा जाए, तब तक न्यायालय व न्यायाधीश कुछ नहीं कर सकते, उनका संघर्ष कोई फल प्रदान नहीं कर सकता। व्यक्ति व समाज सत्य की प्रतिज्ञा न ले, तब तक सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक न्याय की लक्ष्य-रेखा केवल कपोल-कल्पना ही होगी, व न्यायालय केवल कागजी न्याय ही कर पायेंगे, सही न्याय नहीं।

—मुंसिफ एवं न्यायिक मजिस्ट्रेट,
नाथद्वारा (राजस्थान)

दो पुराने मित्र मिले, तो एक ने कहा, "जार्ज, तुमसे एक सौदा करना चाहता हूं। मेरे पास एक अफरीकी हाथी है। तुम पचास पौंड में उसे खरीद लो।"

"मजाक मत करो। तुम जानते हो कि मैं एक ऐसी इमारत की छठवीं मंजिल पर रहता हूं, जिसमें लिफ्ट तक नहीं है। भला मैं उस हाथी का क्या करूंगा?" दूसरे ने कहा।

"तुमसे सौदा देर में पटेगा। ऐसा करो, ७५ पौंड में दो हाथी ले लो।"

"हां, अब आये न रास्ते पर, हमेशा कीमत बढ़ाकर बताते हो!" तुरंत उत्तर मिला।

विधि-विधान

आर. पी. बहुगुणा, पौड़ी गढ़वाल : मेरा विवाह १२ मार्च १९७६ को हुआ था। मैं इस विवाह से सहमत न था, जिसका मूल कारण एक अन्य लड़की थी जिससे मैं विवाह करना चाहता था। परंतु अभिभावकों के कारण मुझे यह विवाह करना पड़ा। मैंने अपनी पत्नी से अपने पिछले संबंध की चर्चा कर दी थी। आप कृपया मुझे बतायें कि क्या मैं इस लड़की से अपनी वर्तमान पत्नी के रहते हुए विवाह कर सकता हूं ? अपनी पत्नी के प्रति मैं सर्वथा उदासीन हूं।

आपको विवाह करते समय अपने प्यार को ध्यान में रखकर निर्णय करना चाहिए था। उस समय अपने अभिभावकों के सामने आत्मसमर्पण करके आपने अपना मार्ग-निर्धारण कर लिया। अब विवाह कर लेने के बाद अपनी पत्नी के प्रति उदासीन रहना ठीक नहीं है। अपनी पत्नी को पुराने प्रेम-संबंधों की जानकारी देकर आपने अपने प्रति विश्वास का वातावरण बनाया, परंतु अब विवाह संबंधों भागने का तो कोई उचित कारण नहीं है। एक पत्नी के रहते हुए आपको दूसरे विवाह की अनुमति हिंदू विवाह अधिनियम नहीं देता। दूसरा विवाह करने पर आप द्विपत्नीत्व (बाइगैमी) के दोषी हो सकते हैं। इस अपराध के लिए आ भारतीय विवाह अधिनियम की धारा के अंतर्गत दंड के अधिकारी हो सकते हैं

तरुणकुमार, जखौली : हमारे किराये-दार के खिलाफ एक मुकदमा रुपया-वसूली के लिए चल रहा था। उसका निर्णय न्यायालय ने हमारे विरुद्ध दिया। निर्णय हुए लगभग ४० दिन हो गये हैं। मेरे पिताजी जिनके नाम से मुकदमा है बीमार पड़े थे तथा उधर नकल के दफ्तर में भी वकील का मुंशी नकल लेने नहीं गया और अपील की अवधि निकल गयी। बताइए कि इस बारे में हम क्या कर सकते हैं। कोई कानून ऐसा है या नहीं जिससे हम अब अपील कर सकें ?

भारतीय मर्यादा अधिनियम की धारा ५ के अंतर्गत यह व्यवस्था की गयी है कि यदि अपील करनेवाला व्यक्ति अपील में देरी के लिए कोई पर्याप्त कारण बता

विधि-विधान स्तंभ के अंतर्गत कानून-संबंधी विविध कठिनाइयों के बारे में पाठकों के प्रश्न आमंत्रित हैं। प्रश्नों का समाधान कर रहे हैं राजधानी के एक प्रसिद्ध कानून-विशेषज्ञ—रामप्रकाश गुप्त

सके, तो न्यायालय अपील-अवधि-समाप्ति के बाद भी विचारार्थ स्वीकार कर सकते हैं। नकल लेने में लगे समय को छोड़कर यदि निर्धारित अवधि शेष रहे तो आप उक्त धारा का सहारा ले सकते हैं। आपके पिताजी की बीमारी के आवश्यक प्रमाण अपनी अपील के साथ अवश्य लगवा दें। मुंशी द्वारा की गयी देरी के लिए मुंशी का शपथ-पत्र लगवाना चाहिए। अपील के साथ भारतीय मर्यादा अधिनियम की धारा ५ का आवेदन भी करना होगा।

क ख ग, नरेला : मेरे एक मित्र का झगड़ा अपने पड़ौसी के साथ जगह के बारे में चला था तथा उसमें यह निर्णय हो गया था कि झगड़ेवाली जगह मेरे मित्र की संपत्ति है। अब उक्त पड़ौसी का स्वर्गवास हो गया है। अब उसके पुत्र उसी जगह का अधिकार मांगते हैं तथा अदालत में जाने की धमकी देते हैं। क्या अब फिर से उस जगह के स्वामित्व के बारे में झगड़ा हो सकता है? लड़के अपने पिता के वारिस के रूप में हक मांगने के लिए झगड़ते हैं।

एक बार न्यायालय में झगड़ा निबट जाने के बाद उसी झगड़े को लेकर दोबारा कार्यवाही शुरू करने का अधिकार किसी भी पक्ष को नहीं होता। दीवानी प्रक्रिया संहिता की धारा ११ के अंतर्गत वह मामला पूर्व निर्णीत माना जाएगा तथा न्यायालय उसकी सुनवाई नहीं करेंगे। उक्त धारा न्यायालयों को इस प्रकार के मामले दोबारा सुनने से रोकती है।

अविनाश सेमुअल, नागपुर : हमारा मकान-मालिक हमसे नियमित रूप से किराया लेता रहा है। बीच में कुछ माह उसने रसीद न होने का बहाना करके रसीद नहीं दी, लेकिन अब वह उस किराये की मांग करता है जिसकी रसीद उसने नहीं दी। कुछ रसीदें ऐसी हैं जो एक ही माह में दो बार दी गयी हैं। उसने हमें परेशान करना शुरू कर दिया है।

यदि आप किराया देने के बारे में समुचित प्रमाण जुटा सकें तभी आपकी समस्या का समाधान हो सकता है। आपने मकान-मालिक को किराया दे दिया है, इसका प्रमाण देने की जिम्मेदारी आपकी है। यदि आपने किसी माह का किराया दो बार दिया है या दो बार दिये गये किराये को एक ही माह के किराये के रूप में माना जा रहा है, तब आप ज्यादा दिये किराये को वापस मांग सकते हैं, या उसे आगे के देय किराये में माना जा

सकता है। आपके पत्र से यह पता नहीं लगता कि किस माह के किराये की रसीद आपको नहीं मिली। इसके अभाव में आप अन्य क्या कार्यवाही कर सकते हैं, इसका सुझाव नहीं दिया जा सकता।

रजनीशकुमार वर्मा, झांसी : मैं एक गैर-सरकारी लेकिन सहायता एवं मान्यता-प्राप्त विद्यालय में शिक्षक हूं। उम्र २६ वर्ष है। शादी बहुत पहले हो गयी थी। दो बच्चे हैं। पत्नी अशिक्षित व बदसूरत है। बहुत प्रयत्नों के बाद भी मैं पत्नी को अपने अनुरूप नहीं बना सका। उसके साथ जीवन-यापन कर पाना संभव नहीं। पत्नी और उसके भाई इस बात के लिए सहमत हैं कि मैं दूसरी पत्नी रख लूं, लेकिन तलाक न लूं। क्या मैं दूसरी पत्नी रख सकता हूं? इसका मेरी नौकरी पर कोई प्रभाव तो नहीं पड़ेगा ?

आप ऐसा नहीं कर सकते क्योंकि हिंदू विवाह अधिनियम एक पत्नी व बच्चों के होते हुए दूसरे विवाह की अनुमति नहीं देता। पत्नी की अनुमति से भी आप नियमानुसार दूसरा विवाह नहीं कर सकते। दूसरा विवाह करने का प्रभाव आपकी नौकरी पर भी पड़ सकता है। आपके सेवा-नियोजक आपके विरुद्ध कार्यवाही कर सकते हैं।

आर. वर्मा, भोपाल : मैं २६ वर्षीय, शासकीय सेवारत हिंदू युवक हूं और एक मुस्लिम युवती से विवाह करना चाहता हूं जिसे मैं गत पांच वर्ष से प्यार करता हूं। लड़की की उम्र उसकी मां के अनुसार २० वर्ष की है। उसकी उम्र का कोई प्रमा पत्र नहीं है। क्या आयु का प्रमाण- जरूरी है ? क्या इसके लिए सर्जन प्रमाण-पत्र पर्याप्त नहीं है ? क्या दोनों दूसरे शहर जाकर कोर्ट-मैरिज सकते हैं ?

विशेष विवाह अधिनियम के अंत आप विवाह कर सकते हैं। इसके लिए आ दोनों को किसी दूसरे शहर में जाने जरूरत नहीं है। शादी के लिए लड़ की आयु का प्रमाण-पत्र होना आवश्यक है न्यायालय प्रमाणस्वरूप शपथ-पत्र स्वीकार करते हैं। आयु के लिए सर्जन प्रमाण-पत्र आवश्यक नहीं है। परंतु ऐसा प्रमाण-पत्र रहे तो वह उपयोगी होगा।

यदि आप दोनों स्वेच्छा से नियमानुसार विवाह कर लेते हैं तो आप पर को अभियोग नहीं चलाया जा सकता। विवा का प्रमाण-पत्र दिखा देने पर पुलिस स्थिति में नहीं होती कि वह आपके विरु कोई कार्यवाही कर सके।

"मैं तो तंग आ चुकी हूं—परेशा करनेवाली खबरें सुनते-सुनते। किसी दि दुर्घटना की खबर, किसी दिन गेहूं भाव बढ़ने की खबर तो किसी दि कपड़े के भाव बढ़ने की खबर! क तो अच्छी खबर मिले सुनने को!"

"मम्मी, कल मेरा जन्मदिन है।" नन्हें बच्चे ने बड़े भोलेपन से कहा।

एक अदना बटन की करतूत

• डॉ. सुमन मेहरोत्रा

किसी वस्तु का आकार-प्रकार देखकर उसकी शक्ति का अनुमान करना कभी-कभी बहुत गलत होता है। हाथी का लंबा-चौड़ा शरीर—धोखे से भी अगर किसी पर पैर पड़ जाए तो उसकी चटनी बन जाए, पर बेचारा एक नन्ही-सी चींटी से कितना डरता है! मनुष्य रोज-ब-रोज तमाम चीजों पर विजय प्राप्त करता जा रहा है, पर इस जरा-सी मक्खी ने उसकी जान आफत में कर दी है। चाहे-अनचाहे ढीठ बनी उसकी नाक पर ही बैठती रहती है।

अब देखिए, एक नन्ही-सी चीज और है—बटन। कभी किसी का ध्यान गया है कि यह बेजान, अति साधारण-सा बटन संसार में क्या-क्या नये गुल खिला सकता है?

इसका छोटे-से-छोटा आकार चने की दाल के बराबर और बड़े-से-बड़ा रुपये के बराबर या कभी-कभी उससे भी बड़ा होता है।

ये अपने विभिन्न आकारों, रंगों और डिजाइनों में किसी रूपसी से होड़ लगाये रहते हैं कि देखें आकर्षित करने के कंपटीशन में कौन बाजी मार ले जाता है!

इतनी दूर की कल्पना तो शायद इसके जन्मदाता ने भी नहीं की होगी कि यह एक अदना-सी चीज किसी षोडशी, खूबसूरत नाजुक परी के सौंदर्य में चार चांद लगाने का कारण हो जाएगा। कभी कानों के बटन बनकर, कभी जूड़े के पिन में टंककर, तो कभी हृदय की झंकार सुनने के लिए छाती पर ही सवार हो जाता है, तो कभी सांप की खाल से बने बटुए से चिपक किन्हीं नरम हाथों में लटक जाता है। और तो और पैंट के छिपे बटन सामने आकर सौंदर्यशास्त्र की नयी परिभाषा चरितार्थ करने लगे। यह जूते में लग जाए तो अपना सानी नहीं रखता और कभी किसी प्रेमिका की तरह गले लग टाई का सहारा बन जाता है। बंद गले के कोट के सारे बटन बंद होकर बड़े-बड़े रईसजादों की कमीज और बनियान को नदारद कर देते हैं। कपड़े की कीमत,

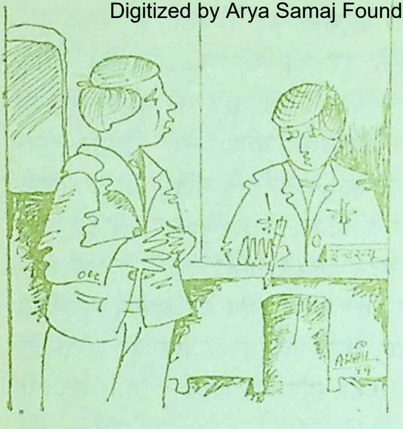

दर्जी की सिलाई और धोबी की धुलाई, ये सबका जमा-खर्च बचा देते हैं।

भुस में आग लगाकर . . .

'आग लगाकर जमालो दूर खड़ी' कहावत इन पर बिलकुल खरी बैठती है। पत्नियों से तो इनका सात जन्म का बैर है। चाहे जितनी भी देखभाल कर बटन टांककर कपड़ों को रखो, पर पतिदेव जब कभी अपने हाथों से कपड़े निकालेंगे, तब बिना बटन की कमीज या पैंट उनके हाथ में आयेगी। बस बटन के दीदार न हुए तो पारा सातवें आसमान पर! मौके की बात है, अगर आफिस जाने का समय है तो गुस्से के साथ-साथ हड़बड़ाहट भी होती है। उसी में जरा जबान फिसल गयी और यह कह दिया कि 'क्या करती हो सारा दिन एक बटन भी नहीं टांक सकती?' बस इतना सुनना था कि श्रीमतीजी भी सातवें आसमान में पहुंच गयीं। हाथ मटकाकर बोलीं, "हां-हां, तुमने तो मेरे लिए बीस-बीस नौकर लगा रखे हैं जो मेरे पैर दबाते रहते हैं। रोकड़ लाकर हाथ पर धरते हैं न, जो मैं झूले में झूलती रहती हूं। लो अपनी चाबी और संभालो अपना घर मैं चली अपने आफिस।" मुहावरे में समय को देखते हुए थोड़ा फेरबदल हो गया है। अब श्रीमतीजी मैके जाने की धमकी की जगह आफिस जाने की धमकी देती है। मां-बाप से ज्यादा बॉस का सहारा होता है। तू-तू, मैं-मैं का अतिक्रमण हुआ और अड़ोसी-पड़ोसियों की खोपड़ियां खिड़कियों से झांकने लगीं। मनोरंजन का एक साधन तैयार हो गया। पर यही नजारा अगर शाम को सिनेमा जाने के समय हो तो सीन बदल जाता है। पत्नी को सिनेमा जाना है तो चुपचाप टसुए बहाती हुई पतिदेव की तानाकशी सुनती रहेगी। पति भी जानता है कि इस समय कतरनी सी चलती जबान को ताला क्यों लग गया है। अतः उसका अहं और भी जागरूक होकर मिल के धुएं की तरह शब्दों का धुआं निकालता रहता है। नतीजा क्या हुआ, पत्नी मुंह छिपाकर बिस्तर पर पड़ गयी, पतिदेव उतारे हुए कपड़ों को ही पहनकर घर से बाहर निकल गये। वाह रे बटन, खूब रंग जमाया! न खुदा ही मिला न विसाले सनम!

घरों के भीतर यह विभिन्न प्रकार के खेल खेलते रहते हैं। 'जरा यह बटन टांक दो' कहने में किसी का कुछ नहीं जाता। पड़ोस के धर्म-देवर को भा

के हाथ से बटन टंकवाने में कुछ और ही लुत्फ आता है। भाभी की मोहिनी सूरत देवर के हृदय में शूल-सी चूभती रहती है और वह ठीक नौकरी पर जाने के समय ही आयेंगे। "भाभी देर हो रही है, कमीज उतारने का समय नहीं है, तुम ऐसे ही पहने-पहने टांक दो...।" भाभी ने मुस-कराकर सुई-डोरा हाथ में ले लिया और बटन टांककर अपने चमकीले दांतों से डोरा काटने के लिए सिर झुकाकर देवर के धड़कते दिल पर रख दिया। दिल की बात बटन के माध्यम से आर-पार हो गयी। पतिदेव हाथ मलते रहे, भाभी देवर की हो गयी।

मिलिटरी आफिसर के लिए बटनों की संख्या उसकी वीरता, शौर्य और साहस की तावेदार होती है। जितने बटन उसके सीने पर बढ़ते जाते हैं, उतना ही वह अपनी चाल से बादशाह बनता जाता है।

जहां एक ओर ये जीवन में समस्या बने रहते हैं वहीं इनमें गुण भी हैं। ये जीवन में रस का संचार भी करते हैं। जब कभी कोई आदमी कुछ ऐसी परिस्थिति में फंस जाता है कि जिह्वा कुछ भी बोलने में असमर्थ हो जाती है तब कोट का बटन नैतिक बल का कारण बन जाता है। कोट के बटन को पकड़कर अकसर लोग इंटरव्यू की वैतरणी पार कर लेते हैं। प्रेमिकाएं अपने प्रेमी के कोट के बटनहोल में फूल लगाकर अपने प्रेम का इजहार करती हैं। भला अगर बटन न होता तो बटनहोल क्यों होता ! और बटनहोल न होता तो भला फूल लगाने को कौन-सा स्थान मिलता ! इतिहास में पढ़ा है कि महमूद गजनवी की प्रेमिका ने बड़े प्यार से उसके कोट के बटनहोल में एक फूल लगा दिया था, जिससे उसे ऐसी प्रेरणा मिली कि भारतवर्ष को छूने के लिए वह चौबीस बार दौड़ा था। गजब है, ये बटन इतिहास भी लिख सकते हैं। नेपोलियन की प्रेमिका ने उसे शुभकामनाओं के साथ फूलों का एक गुलदस्ता भेंट किया था, जिसे रिबन में बटन लगाकर बांधा गया था। उसकी इस कल्पना से नेपोलियन अत्यधिक प्रभावित हुआ था और विश्व-विजय के सपने देखता रहता था।

बटन और गोरी की पीठ

ये बटन अपने रूप-रंग, आकार-प्रकार और स्थान के अनुसार फैशनपरस्ती में बड़े माहिर होते हैं। गांव की गोरी नदी में स्नान कर कपड़े पहन, अपनी

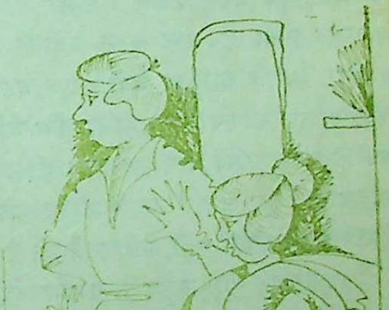

गागर भरकर चली, पर ब्लाउज के बटनों ने आगे के बजाय पीछे लगना आरंभ कर दिया था। वेचारी कैसे वंद करती ? तभी एक नौजवान आता हुआ दीख गया। झट उसके सामने पीठ करके खड़ी हो गयी और भोलेपन से बोली, "ऐ बाबू यह बटन बंद कर दो जरा।" बेचारा किस्मत का मारा, बटनों को हाथ लगाते ही बेहोश होकर गिर पड़ा। सत्य वचन, यह दृश्य मेरी आंखों के सामने घटा था (सिनेमा के परदे पर)।

आंखों से एक बात याद आ गयी। साहित्यकारों पर भी इसका प्रभाव कम नहीं है। जहां आंखों की उपमा कमल, मृग और बैल आदि से दी गयी है वहां नेत्रों को 'आंखें हैं कि बटन' भी कहा जाता है।

वैज्ञानिकों ने तरह-तरह के बटनों का प्रयोग कर संसार को आरामतलब बना दिया है। हर मशीन के काम करने के लिए एक बटन दबाने भर की आवश्यकता होती है। एक बटन मंत्रीजी ने दबाया, मशीन चालू हो गयी। एक बटन फोटोग्राफर ने दबाया मंत्रीजी कैमरे में बंद हो गये। चारों ओर इस बटन की ही महिमा है। इस असार संसार को चलानेवाला अब भगवान नहीं, यह बटन ही है।

बहुत दिन हुए मनुष्य ने तमाम लोहे के टुकड़े, अंजर-पंजर, रबड़ के ट्यूब आदि न जाने क्या-क्या भानुमती का पिटारा जोड़कर एक अपनी प्रतिच्छाया-स्वरूप मनुष्य बनाया था। बटन दबाया रोबट चलने-फिरने लगता है, बटन दबाया कि शांत होकर बैठ जाता है। ईश्वर न करे अगर गलत दब जाए और ये बटन शैतानी पर उतर आयें तो रोबट अपने जन्मदाता का ही भक्षण कर लेंगे।

पत्नी नहीं, बटन चाहिए

इन बटनों के साहस की दाद देनी पड़ेगी। इनकी हिम्मत दिन-ब-दिन बढ़ने लगी है। हजारों-हजारों वर्षों से जिस रसोई पर गृहिणी का एकछत्र राज्य था, वह अब बटनों ने अपने हाथ में ले लिया है। बटन दबाया खाना तैयार, बटन दबाया बर्तन साफ, बटन दबाया कपड़े साफ। ये बटन गृहिणियों की सौत बनने का दावा करने लगे हैं। पुरुषों को अब बीवियों की नहीं, इन बटनों की जरूरत है।

हस्तकला में भी ये दखलअंदाजी करने लगे हैं। उल्लू की आंखों की जगह दो बटन लगते हैं। कुत्ते की नाक बटन से बनायी जाती है। जोकर की तो आंखें, नाक और मुंह सब बटन से ही बनते हैं।

बटनों की अपनी ऐतिहासिकता है, अपनी नैतिकता है, परंपरागत मूल्य हैं। ऐतिहासिक संदर्भों के बिना कोई भी वस्तु जीवित नहीं रह सकती है। बटन आज तक जीवित ही नहीं, निरंतर विकास की ओर उन्मुख भी है। यही उसकी ऐतिहासिकता है। बटन ने आज तक अपनी नैतिकता को नहीं छोड़ा है। यह कभी भी उल्टा नहीं लगाया जाता है। यह सदैव सीधा

रहकर ही कार्यरत रहता है। इसी नैतिक साहस के कारण यह आज मनुष्य को अपना दास बनाता जा रहा है। ये सोने के बने हों, तो बुर्जुआ वर्ग में मिल जाते हैं और अगर प्लास्टिक के हों, तो आम आदमी से जुड़ जाते हैं। ये दोनों वर्गों को जोड़ने की एक कड़ी हैं। इस संदर्भ में बच्चन की एक कविता याद आ गयी—

लड़वाते हैं मंदिर मस्जिद,
मेल कराती मधुशाला

ये पंक्तियां इस पर भी कितनी सार्थक सिद्ध होती हैं; पर आश्चर्य की बात है कि इतनी महत्त्वपूर्ण वस्तु होते हुए भी साहित्य ने आज तक इसके लिए कुछ नहीं किया। एक भी शोध-प्रबंध अभी तक इस पर नहीं लिखा गया, न ही यह किसी पाठ्यक्रम में लगाया गया। साहित्य के विद्यार्थियों के लिए बटन पर एक विशेष चर्चा होनी चाहिए।

तलाक की नौबत

वैज्ञानिकों से भी मेरा अनुरोध है कि वे इतने बड़े-बड़े आविष्कार करते जा रहे हैं, पर एक छोटी-सी मशीन क्यों नहीं ईजाद करते कि बटन टांकने की जहमत गृहिणियों को न उठानी पड़े। किसी भी स्त्री से पूछ लीजिए, सबसे अधिक झगड़ा इस बटन को लेकर ही होता है। हां, एक किस्सा याद आ गया। एक बार एक साहब को अपने मित्र से मिलने जाना था। पत्नी को भी सुबह-सुबह कहीं जाना था। जल्दी-जल्दी में उन्होंने आव देखा न ताव, खींचकर अलमारी से एक जोड़ी कपड़े निकाले और ताला बंद कर चाबी का गुच्छा कमर में लगा चलती बनी। किस्मत की मार कि बेचारे ने जब कपड़े पहनने के लिए उठाये, तब पैंट और कमीज दोनों के बटन गधे के सिर के सींग-से गायब थे। चाबी का गुच्छा तो श्रीमतीजी की कमर की शोभा बढ़ा रहा था। बेचारे बासी कपड़ों को ड्रेसिंग-गाउन से छिपाते हुए मित्र के दरवाजे पर पहुंच गये। मित्र की पत्नी ने दरवाजा खोल स्वागत किया तो उनकी बेतहाशा हंसी छूट गयी। मित्र की पत्नी को इतना हंसते देख उन्होंने अपनी गाथा सुना दी। बटन की बात सुनते ही हंसी पर एकदम से ब्रेक लग गया और वह मुंह लटकाकर अंदर चली गयी। सुना कि दूसरे दिन अखबार की सुर्खी थी कि 'बटन के कारण एक जोड़े में घमासान युद्ध—तलाक की नौबत!' तभी तो अनुरोध है कि बटन टांकने की मशीन बन जाए तो अंदाजे-बयां और ही होगा। **—३२, छात्र मार्ग, दिल्ली**

एक मंत्रीजी मुख्यमंत्री के पास पहुंचे और बोले—"आप मेरा यह विभाग किसी और को दे दीजिए और मुझे स्वास्थ्य-मंत्री बना दीजिए।"

"क्यों, आपके पास जनता के स्वास्थ्य-सुधार के लिए कोई नयी योजना है?" मुख्यमंत्री ने पूछा।

"जी नहीं, आजकल मैं खुद ही कुछ ज्यादा बीमार रहने लगा हूं।"

मुर्गे की बांग

• सुरेश सरल

शुकदेव उनके पास पहुंच गये और अपने ही हाथों से एक कुरसी लेकर बैठ गये तो वल्लभाचार्य ने एक सहज दृष्टि उनके ऊपर फेंकी और बिना मुसकाये या यों कहा जाए कि आनेवाले के सम्मान में बिखेरी जानेवाली परिचित मुसकान अधरसात किये ही धीरे से बोले, "आ गये भाई!"

शुकदेव उनके इस रुख से चिर-परिचित थे, वे समझ गये कि प्रेस का कोई कर्मचारी समय देकर न आया होगा या किसी ने लेटरहेड्स छपा लेने के बाद छपाई की प्रशंसा न कर मुंह बना लिया होगा और पैसे देने में झकझक की होगी आदि-आदि।

वातावरण शांत बनकर स्थिर रह गया था, शुकदेव बोर हो रहे थे। बात बढ़ाने की गरज से बोले, "आज क्या हो गया आचार्यजी?" शुकदेव के प्रश्न में वही-वही शब्द थे जो गत तीन वर्षों से उपयोग में लाये जाते रहे हैं और वही पुरानी 'टोन'।

वल्लभाचार्य चेहरे पर विषाद की रेखाओं का प्रदर्शन कर अपनी बात कहने को तैयार हो गये। कहने लगे, "नोटिस दिया है जयंत ने।"

"...जयंत ने" सुनकर शुकदेव ने साहस बंधाते हुए अपने शब्द कुछ वजनी लहजे में कहे, "दिया है तो देने दो, क जवाब देंगे कि वह भी क्या कहेगा।"

शुकदेव के उत्तर से वल्लभाचार्य की आंखों में चमक आ गयी। कुछ विश्वास भी जागा शुकदेव की दोस्ती पर या सही माने में उनकी बातों पर। अतः एक फटा लिफाफा उठाकर उनकी ओर फेंक दिया। शुकदेव ने घृणा से लिफाफे को छुआ, फिर उसमें रखे कागज निकालकर मुंह बनाकर पढ़ने लगे। टाइप किये हुए तीन पृष्ठ थे।

शुकदेव के नेत्र एक वाक्य पर अटककर रह गये, घिसा-पिटा चिर-पुरातन वाक्यांश—"आपने मेरे पक्षकार श्री जयंत की मानहानि की है, अतः बतौर हरजाना क्यों न आपसे ५० हजार रुपये वसूल किये जाएं?" परंतु नोटिस पूरा पढ़कर वे गंभीर नहीं हुए, उलटे खूब हंसे। धीरे-धीरे वल्लभाचार्य भी हंसने लगे, "मुझे आश्चर्य इस बात का है कि स्साले की

इज्जत ५० हजार की कब से हो गयी ? कहीं ऐसा तो नहीं कि उसने अपनी संस्था के अध्यक्ष की इज्जत का भी मूल्य जोड़कर मुझे नोटिस दिया हो ?”

वल्लभाचार्य के मुक्त संभाषण से शुकदेव को जैसे रस मिला हो। ठहाका मारकर हंसे। इस ठहाके में जितना हंसना चाहिए था, उससे कहीं अधिक हंसी बिखेरी गयी थी। यह अतिरिक्त हंसी शुकदेव ने वल्लभाचार्य के भाष्य पर अपनी अत्यधिक प्रसन्नता और सहमति दर्शाने की गरज से फैलायी थी। वे उनका आनंद और अधिक बढ़ाने के लिए आगे बोले, “क्यों आचार्यजी, कहीं ऐसा तो नहीं कि आपने उसके विरुद्ध कुछ ऊलजलूल छाप दिया हो अखबार में ?”

—“मैं क्यों छापने चला अपने अखबार में कुछ !”

—“तो कुछ लिखित रूप से ... मेरा मतलब कोई पत्र-वत्र तो नहीं दिया आपने जयंत को ?”

—“पत्र लिखने का समय ही कहां है उस नालायक के लिए !”

—“तो फिर मानहानि कैसे हो गयी उसकी ?”

—“जैसे हो गयी हो !” फिर कुछ रुककर संजीदगी से बोले, “शुकदेव आप एक कार्य करिए। अगला व्यंग्य इसी पर चिपकाइए। ऐसा उछालिए कि मजा आ जाये स्साले को।”

वल्लभाचार्य के प्रस्ताव से शुकदेव क्षण भर को सकते में पड़ गये। वे वल्लभाचार्य के अखबार के कालम-राइटर हैं। उन्हें लगा जयंत से उनकी कोई बुराई नहीं है। आपसी संबंध भी कभी नहीं खिंचे हैं, फिर उन पर कलम छींटे कैसे उगलेगी ? अभी वे सोच ही रहे थे कि वल्लभाचार्य ने उन्हें टोका, “प्लाट सोचने लगे क्या ? क्या सोच रहे हो ?” फिर कुछ और विनम्र होकर बोले, “कल लिखकर दे ही दो ताकि अगले अंक में उसे दे दिया जाए। मगर कुछ ऐसा कि जयंत को भी लगे कि नोटिस

का मजा क्या होता है !

शुकदेव ने जिस विषय पर सोचा भी नहीं था वही सामने आया । वे वल्लभाचार्य के विश्वास को ठेस नहीं पहुंचा सकते थे। व्यंग्य लिखना है या नहीं यह सोच भी न पाये थे, पर वल्लभाचार्य का संबोधन सुनकर वे 'न' नहीं कह सके। उल्टे न चाहते हुए भी 'हां . . . हां' कहने लगे।

—"कितने बजे हैं ?"

—"बारह।"

—"इतनी रात तक कहां रहे . . . ? आपको मालूम है आज रविवार था, आज की रात आप मेरे नाम पर लिख चुके हैं वर्षों पूर्व। फिर भी याद नहीं रखते। आज की रात भी गयी। कहां रुक गये थे ?"

इस आवाज में फटकार से अधिक प्यार की पुट थी।

—"बस वहीं वल्लभाचार्य के पास।"

—"तो अब सोइए, ये कागज-पत्तर काहे को समेट रहे हैं !"

—"एक व्यंग्य लिखना है।"

—"अभी आधी रात को ?"

—"तभी तो समय पर बन पायेगा।"

—"मगर ऐसी क्या जल्दी है ?"

—"तुम नहीं जानतीं।"

शुकदेव श्रीमती से इतनी ही वार्त्ता कर सके और कुछ लिखने में व्यस्त हो गये। श्रीमती पड़ी-पड़ी सो गयी। शुकदेव ने क्षण भर को नजर उठायी तो जैसे श्रीमती मृत पड़ी हैं। उसी के में दो बच्चे भी मरे हुए पड़े हैं और उनके बाद शुकदेव का नंबर है। कि बड़ा बेकार लगा उन्हें। शिशु सोते मुसकाते हैं तो और भी प्यारे लगने हैं। शुकदेव ने बारी-बारी से तीनों एक-एक चुंबन लिया। फिर सो बड़े बच्चे के कान में बोले, "बेटे, कालम-राइटर न बनना।" कहीं से मु ने बांग दी। शुकदेव ने घड़ी की अलसायी दृष्टि पसार दी। सुबह के बज चुके थे। शुकदेव को मुरगे का सम का पाबंद होना—समय पर बांग देना—बहुत पंसद आया। उन्हें लगा वे एक मुरगा है जो समय पर ही बांग भर है। अपनी इच्छा से नहीं, समय इच्छा से। उन्होंने पत्नी के कान के पा मुंह ले जाकर कहा, "कुकड़ूं कूं... पत्नी जाग गयी। शुकदेव को अभी त बैठा देखकर अचंभे में पड़ गयी। कह लगी, "आप तो ऐसे लिख-पढ़ हैं जैसे मैट्रिक की परीक्षा में किशो रात भर पढ़ते हैं।" वाक्य सुनकर शुकदे चुप रहे। श्रीमती की सुबह पहर की ता सूरत देखते रहे। फिर बोले, "श्रीमती तुम्हारा नाम श्रीमती ही क्यों र था तुम्हारे पिता ने, कोई दूसरा ना नहीं मिला उन्हें ?" श्रीमती मुसकाकर बोली, "इसी पर कोई व्यंग्य लिखा है क्या ?" उत्तर की प्रतीक्षा किये बगैर

वह दूसरे कमरे में चली गयी। वहां स्टोव की आवाज आयी तो शुकदेव मुसकरा पड़े। एक कप चाय की प्रतीक्षा करने में उन्हें कोई अदृश्य रस मिल रहा था।

चाय पीकर शुकदेव कुछ पढ़ने लगे, फिर सो गये।

सुबह नौ बजे श्रीमती ने जगाया तो शुकदेव कुछ बनकर बोले, "अरे तुम अभी तक जाग रही हो, सोयी नहीं रात भर क्या ?" उनके प्रश्न से श्रीमती को सहज ही हंसी आ गयी। शुकदेव ने श्रीमती की साड़ी पकड़ ली। श्रीमती ने हंसते-हंसते साड़ी छुड़ा ली, फिर जाते-जाते कह गयी, "मुझे रोटी बनाने दो बाबा, जिसमें सार है।"

"सार है" सुनकर शुकदेव झेंप-से गये। उन्हें लगा, सही में सार न लेखन में है न दोस्ती में, न अखबार में न प्रतिबद्धता और संबद्धता में, सार रोटी में है या रोटी के सार ही में सब कुछ है। मगर रोटी...

"पानी गरम हो गया, नहा लीजिए।"

इस आवाज पर नहाना ही उपयुक्त समझा शुकदेव ने। शुकदेव के कानों में आवाज प्रवेश कर गयी। उन्हे लगा ठीक तो है कि यदि पानी ठंडा हो जाएगा तो मजा नहीं आयेगा जैसे।

एक बड़े ड्रम से बाल्टी भर पानी निकालकर उसमें गरम पानी डाल दिया। पानी मिलकर गरम से गुनगुना रह

गया। न चाहते हुए भी गुनगुने पानी से नहा लिया शुकदेव ने।

करीब १२ बजे होंगे दोपहर के। शुकदेव साइकिल से वल्लभाचार्य के कार्यालय पहुंच चुके थे। वल्लभाचार्य अन्य स्थान को गये थे। शुकदेव ने हमेशा की तरह लेख को वल्लभाचार्य की टेबल पर छोड़ना उचित नहीं समझा। अतः वहां उपस्थित एक सहकर्मी को अपनी उपस्थिति बतलाकर वे लौट पड़े। घर जाकर लेटे-लेटे कुछ पढ़ते रहे।

बाहर सड़क से कार के हार्न की आवाज दरवाजे पर पड़े परदे में से छनकर आयी। हार्न सुनकर शुकदेव ने अंदाज लगा लिया कि वल्लभाचार्य हैं, आवाज ही ऐसी है उनके हार्न की। शुकदेव उठे, बाहर झांका और उन्हें बुलाने लगे।

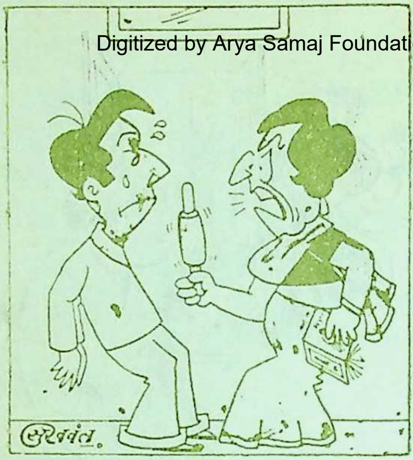

"इस बार यदि कम रन बनाये तो फिर तुम इसे संभालो और बल्ला मैं संभालूँगी !"

—"क्यों भाई प्रेस में कुछ छोड़कर नहीं आये ?"

—"वो . . . वो . . . मैंने सोचा कि आपसे पढ़ा लूं पहले, फिर दूं, व्यंग्य तो तैयार है।"

—"अच्छा . . . अच्छा . . . तो व्यंग्य लिखा है जयंत वाला न ?"

वल्लभाचार्य ऐसे बोल रहे थे जैसे उन्हें याद न हो।

—"हां। लीजिए, देखिए. . पढ़िए।"

—"बतलाइए," कहकर वल्लभाचार्य व्यंग्य को लेकर पढ़ने लगे। पढ़ते-पढ़ते उन्हें लगा कि वह एक प्रखर व्यंग्य बन पड़ा है। उसकी प्रखरता देखकर वे मन ही मन सोचने लगे—कहीं जयंत इस पर भी कोई नोटिस न दे दे या नालिश [illegible] अपने-आप भयभीत होने लगे थे। उन्हें विश्वास हो कि लेख इतना प्रभावकारी होगा यदि उनके अखबार में छापा गया आम पाठक कहेगा कि नोटिस का है यह और कुछ नहीं। इससे बड़ा यह कि मानहानि के दावे को कहीं लेख के प्रकाशन से और गाढ़ी पुष्टि मिल जाए। अतः सोचते-सोचते "हूं, है तो अच्छा। ऐसा करो, इसे रहो, टाइप कराकर किसी अन्य साप्ताहि को दे देंगे।"

वक्तव्य की अनुभूति पीड़ा दे शुकदेव को—किसी के कानों में सलाखें ठोके जाने की पीड़ा, किसी कानों में खौलता सीसा भर दिये की पीड़ा। जैसे गरम सलाखों से खौलते सीसे से जल गये हों—शुकदे का चेहरा काला पड़ गया। रात में जाग पत्नी का निद्रोन्मुख रुख, सोते शिशु मुसकराता चेहरा—एकसाथ झूल उनकी आंखों में। फिर उन्हें सुनायी —मुरगे बांग दे रहे हैं। कोई समय बोल रहा है, कोई मुंह पास लाकर के कान में कह रहा है—कालम-राइ न बनना। इनसे ऊपर एक चेह अट्टहास करता दीख रहा है, सही व्यंग्य पर व्यंग्य कर रहा है, वह चेह उसका था जिस पर शुकदेव रात व्यंग्य लिखते रहे थे।

—सरलकुटी, गढ़ाफाटक, जबलपु

मुर्गियां पालो मगर अंडे न हों

• रिफ़अत सरोश

उर्दू शायरी, जिसका इतिहास शताब्दियों पुराना है, गजल के बोझ तले दबी रही। गजल ने अपने केशों में शायरी को ऐसा उलझाया कि वह वास्तविक जीवन से बहुत दूर जा पड़ी। जिंदगी बिलखती रही, सिसकती रही, परंतु गजल की शायरी अपने सपनों के महलों में खुलकर खेलती रही। जबान की शेखी, द्वंद्व और अलंकार को ही शायरी की चरमसीमा माना जाता रहा। गजल की महफिल सजती तो इस महफिल में 'हास्य-रस' को घुसने न दिया जाता। हास्य-रस के कवियों को मुशायरों में अध्यक्षता के बाद अर्थात मुशायरा खत्म होने के बाद पढ़वाया जाता। इसी कारण उर्दू साहित्य के इतिहास में हास्य-रस के शायरों का वर्णन न मिलने के बराबर है।

अकबर इलाहाबादी हास्य-रस के प्रथम कवि हैं जिन्होंने अपने समकालीन उर्दू कवियों और आलोचकों से अपनी कविता का लोहा मनवाया। उनकी हास्य-रचनाएं केवल मनोरंजन के लिए नहीं थीं। उनके यहां फक्कड़पन और भाषा की कलाबाजियां नहीं थीं, बल्कि वे अपनी हास्य-रचनाओं के द्वारा अपने युग और समाज की दुखती रगों को छेड़ना चाहते थे और उस फोड़े को फोड़ना चाहते थे जो अंदर ही अंदर फैल रहा था। गजल की शायरी द्वारा यह कार्य नहीं हो सकता था। अंगरेजी साम्राज्य की स्थापना के साथ-साथ पाश्चात्य सभ्यता भी फैलने लगी थी। अकबर इस नयी सभ्यता को भारत की जनता के लिए उपयुक्त और परिस्थितियों के अनुकूल नहीं समझते थे। इसलिए उर्दू शायरी का सौभाग्य है कि उसे हास्य-रस का पहला बड़ा शायर अकबर के रूप में मिला, जिसने एक बड़े उद्देश्य को अपनाया। अकबर की हास्य-रस की शायरी के डांडे देशप्रेम से जा मिलते हैं। उन्होंने हंसते-हंसते सुधार करने का प्रयास किया और उनकी रचनाएं लोगों के दिलों में उतर गयीं। अंगरेजी शिक्षा और पाश्चात्य सभ्यता को वे अलग-अलग करके नहीं देखते थे, बल्कि दोनों बातों को एक तसवीर के दो रुख मानते थे। यह भावना उनकी रचनाओं में समायी हुई है—

हामिदा चमकी न थी इंगलिश से बच

ये वही
बेजोड़ टी वी सेट है जिसकी
आपको तलाश थी

क्रिस्टल
डीलक्स
सॉलिड-स्टेट

इन खूबियों की जांच करें

- बढ़े हुए रिजोल्यूशन के जरिये ज्यादा साफ तस्वीर
- स्वर को संतुलित रखने के लिए उच्च और मंद नियंत्रण की अलग व्यवस्था
- सही हाई-फाई आवाज पाने के लिए वूफर-ट्वीटर स्पीकर
- एम्लीफायर की तरह इस्तेमाल किया जा सकता है
- डायरेक्ट रिकॉर्डिंग की सुविधा
- बेहतर दिखाई पड़ने के लिए अतिरिक्त डैनिश स्क्रीन

इसके साथ ही वेस्टन की जब जहां चाहें बिक्री बाद की सेवा उपलब्ध है और आप महसूस करेंगे कि आपके पास देश का सर्वाधिक विशिष्ट टीवी सेट है। वेस्टन क्रिस्टल डीलक्स एस !

मान्यताप्राप्त निर्यात गृह
वेस्टन इलेक्ट्रॉनिक्स लिमिटेड
नई दिल्ली • बम्बई • कलकत्ता • मद्रास • हैदराबाद
• पुणे • अमृतसर • जालंधर • कानपुर • लखनऊ
• देहरादून • मेरठ • जयपुर
विदेशीय: हांगकांग

Weston® TV

भारत का
सबसे अधिक बिकने वाला टीवी

NIH 986/8-W

बेगाना थी
अब है शम्मे-दा-अंजुमन, पहले चरागे-खाना थी

एक लड़की घर का चिराग बनने के बजाय महफिल की शमां बन जाए, कितना भरपूर व्यंग्य है—

लड़कियां पढ़ रही हैं अंगरेजी
कोमा ने ढूंढ ली फलाह की राह
यह ड्रामा दिखायेगा क्या सीन
परदा उठने की मुंतजिर है निगाह

मरदों की अक्ल पर परदा

बात परदे तक आयी है तो बेपरदगी पर भी अकबर का व्यंग्य सुन लीजिए।

बेपरदा कल जो चंद नजर आयीं बीवियां
अकबर जमीं में गैरते-कौमी से गड़ गया
पूछा जो मैंने आपके परदे को क्या हुआ
कहने लगीं कि अक्ल पे मरदों की पड़ गया

अंगरेजों की लायी रेलगाड़ी को भी अकबर ने नहीं छोड़ा—

कहते हैं राहे-तरक्की में हमारे नौजवां
खिज्र की हाजत नहीं हमको जहां तक रेल है

१९१२ में जब दिल्ली दरबार हुआ तो अकबर ने खूब उसका खाका उड़ाया—

सबसे ऊंचे लाट को देखा
हजरत ड्यूक कनाट को देखा
पलटन और रिसाले देखे
गोरे देखे काले देखे

और अंत में एक झटके के साथ नज्म समाप्त होती है—

सबका हिस्सा मन्नो सलवा
मेरा हिस्सा दूर का जलवा

एक अछूता व्यंग्य देखिए—

हरीफों ने रपट लिखवायी है जा-जाके थाने में
कि अकबर नाम लेता है खुदा का इस जमाने में

अकबर इलाहाबादी ने उर्दू शायरी में हास्य और व्यंग्य की जो परंपरा डाली उससे आगे आनेवालों को एक नयी राह मिली, परंतु अकबर के रंग में कहना बहुत कठिन समस्या थी। इकबाल ने भी इस मैदान में जोर-आजमाई की—

उठाकर फेंक दो इनको गली में
नयी तहजीब के अंडे हैं गंदे

इसका अर्थ यह नहीं कि उर्दू के हास्य-रस के कवि अकबर की मक्खी में मक्खी मारते रहे। यद्यपि गजल कहनेवालों की अपेक्षा हास्य-रस के शायर बहुत कम हैं, फिर भी हैं। लखनवी रंग के शायरों में सुप्रसिद्ध हैं 'जरीफ लखनवी'। उनका अपना रंग, अपना अंदाज और अपनी शैली है। कुछ शेर सुनिए—

उनकी मुट्ठी में कभी सीने के पिंजर में रहा
दिल मेरा आधा बटेर और आधा तीतर हो गया
बेखबर सोये जो आशिक मुफ्त इल्जाम आ गया
साथ खर्राटों के लब पर आपका नाम आ गया

★

बहिश्त में हर इक नक्शा उल्टा नजर

भारत सरकार

सांस्कृतिक विभाग

भारतीय शास्त्रीय नृत्य, संगीत, पेन्टिंग्स, स्कल्पचर और नाटक के क्षेत्रों में प्रतिभाखोज छात्रवृत्ति

परम्परागत कलाओं के क्षेत्र में जिनका व्यवहार ग्रामीण / जन-जातियों के क्षेत्र में, जैसे छाऊ, मयूरभंज, सेरायकेला नृत्य, कठपुतली, मुखौटा बनाना, परम्परागत ब्रोंज-कास्टिंग, स्टोन स्कल्पचर, हाथीदांत की कारविंग, कलमकारी पेन्टिंग, और पाट पेन्टिंग, मधुबनी पेन्टिंग आदि और साथ ही शास्त्रीय रूप के नृत्य, संगीत, नाटक, पेन्टिंग और स्कल्पचर, प्रतिभा खोज छात्रवृत्ति योजना, वर्ष १९७९ में प्रदान करने के लिए आवेदकों से आवेदन आमंत्रित हैं। १ जुलाई, १९७८ को १०-१४ वर्ष के आयु समूह के आवेदक और अभिस्वीकृत विद्यालय में पढ़ने वाले ग्राह्य हैं। कला का प्रदर्शन करने वाले परिवारों के बच्चों और ग्रामीण/जनजाति क्षेत्रों में रहने वाले बच्चों के मामले में अभिस्वीकृत विद्यालयों में उपस्थिति की शर्त लागू न होगी।

लगभग १५० छात्रवृत्तियां प्रदान की जाएंगी।

छात्रवृत्ति वार्षिक आधार पर दी जाएगी और शिक्षा के सेकेन्ड्री स्टेज के पूरा होने तक या १८ वर्ष की आयु तक, जो भी पहले हो, वर्षानुवर्ष बढ़ाई जाएगी बशर्ते कि छात्रवृत्ति प्राप्त करने वाला संतोषजनक प्रगति बनाए रखे।

छात्रवृत्ति का मूल्य है :-

(क) रु. ६००/- प्रति वर्ष उस बच्चे को जो विद्यालय और/या नगर में जहां वह पढ़ रहा/रह रहा है में विशिष्टकृत प्रशिक्षण किया है।

(ख) रु. १२००/- प्रति वर्ष जब बच्चे के लिए यह आवश्यक हो कि उसे विशिष्टकृत प्रशिक्षण के लिए किसी अन्य स्थान के संस्थान में भरती होना है।

विशेष क्षेत्र में विशिष्टकृत प्रशिक्षण के लिए शिक्षा शुल्क सरकार देगी।

निर्धारित आवेदन प्रपत्र शिक्षा निदेशक/ राज्य सरकारों/ संबंधित संघ शासित क्षेत्रों के प्रशासन के पब्लिक इंस्ट्रक्शन के निदेशक के कार्यालय से प्राप्त कर सकते हैं। डायरेक्टर आफ पब्लिक इंस्ट्रक्शन/ शिक्षा निदेशक द्वारा आवेदन प्राप्त करने की अन्तिम तिथि १५-३-१९७९ है।

किसी भी रूप में सिफारिश करना आवेदक को अग्राह्य बना देगा।

डीएवीपी-५१२(१८)/७८

आता है

मजनूं नजर आती है, लैला नजर आता है
दाढ़ी को तेरी वाइज सब देखके कहते हैं
वो कस्रे-तकद्दुस का छज्जा नजर आता है
मियां फरहाद-औ-मजनूं शेखचिल्ली हैं जो
लड़ते हैं

ये कहते हैं अरब मेरा, वो कहते हैं अजम
मेरा

जरीफ लखनवी ने केवल जबान के चटखारे की ही शायरी नहीं की है, बल्कि उनकी शायरी में अपने युग की समस्याओं पर भरपूर लिखा गया है। बरसाती मेढकों की तरह पैदा होनेवाले शायरों पर व्यंग्य करते हुए वे लिखते हैं——

तर्ह का मिसरा नहीं, बिजली की है एक
बैटरी
जड़ दी शायर में जहां, उसने गजल एक
ढाल दी
दावतें शेरो-सुखन अब दिल्लगी है दिल्लगी
साल में जितने हैं दिन तादाद उनसे बढ़
गयी

पाश्चात्य सभ्यता की पोल खोलते हुए अपनी नज्म 'मगरिबपरस्ती' में लिखते हैं—

हवाएं मगरिबी हैं तुझमें कितना जज्बे-
पिन्हानी
धरम हिंदी का गायब और मुसलमां की
मुसलमानी

इलेक्शन के बारे में जरीफ की कई कविताएं हैं। एक अच्छे-खासे माकूल आदमी इलेक्शन में खड़े होकर जब वोटों की भीख मांगने जाते हैं तब उनका हाल कुछ ऐसा है——

सबसे पहले उनको जिस वोटर के घर
जाना पड़ा
शेख बुद्धू नाम था और था जुलाहा कौम का
धोती बांधे, मिरजई पहने, तना बैठा हुआ
इक सड़ा मिट्टी का हुक्का पी रहा था कज
अदा
जाते ही तसलीम की जब उसको बा सद
राहतराम
मुंह को टेढ़ा करके बोला——का है——
वालेकुम सलाम

इलेक्शन को वे एक सरकस का तमाशा समझते थे। एक कविता में लिखा——

इलक्शन के सरकस को अब देखिएगा
कि होते हैं करतब वहां कैसे-कैसे
सियासी कलाबाजियां खानेवाले
हैं नटखट हिमाकत निशां कैसे-कैसे
कोई मौलवी है, कोई मालवी है
उठे लेके अंगड़ाइयां कैसे-कैसे
लड़ेगा जो नाकस शोरे अजां से
तो उठेंगे फितने यहां कैसे-कैसे

सामाजिक और राजनीतिक जीवन के क्षेत्र में हास्य और व्यंग्य ने बड़ा काम किया। उर्दू के अखबारों में इस प्रकार की कविताएं अनगिनत छपती रहीं। साहित्य के आलोचकों ने यद्यपि इन रचनाओं को कोई ऊंचा स्थान नहीं दिया, तथापि आज जब नयी दृष्टि से अध्ययन किया जाता है तब हास्य-रचनाओं का महत्त्व मालूम

बुद्धि-विलास के उत्तर

१. चार गुना, २. कोचीन, ३. क. ख. ग. ——प. बंगाल, घ. बिहार, च. मध्यप्रदेश, ४. मेजर-जनरल लक्ष्मी कुट्टी, ५. सुधर्मा (मैसूर), ६. आल्डो मोरो (५ बार इटली के प्रधानमंत्री रहे)——उग्र रेड ब्रिगेड के सदस्यों द्वारा अपहरण तथा हत्या, ७. माइकेल फरेरा (१९६९, '७१, '७७), ८. लाल कणिकाओं द्वारा, ९. क्लोरोफिल की कमी, १०. पंजाब, १४८२ रु. (१९७४-७५ के मूल्य-स्तर पर), ११. डोमिनिका (कैरीबियन द्वीप), १२. तेलुगु, १३. सतीशकुमार (१९७७), १४. टंगस्टन (लगभग ३४०० डिग्री सेंटीग्रेड), १५. आंख की पुतली पर मानव आकृति।

होता है। कांग्रेस के आंदोलन और गांधीजी के व्यक्तित्व की बात को अपने अंदाज में जिस प्रकार अकबर इलाहबादी ने कहा वह अद्वितीय है—

बुद्धू मियां भी हजरते गांधी के साथ हैं
गो मुश्ते-खाक हैं मगर आंधी के साथ हैं

आधुनिक हास्य-रस के कवियों में वह गहराई नहीं जो अकबर इलाहाबादी या जरीफ लखनवी की शायरी में मिलती है, परंतु जनता के बदले दृष्टिकोण और हंसने-हंसाने की आदत ने हास्य-रस के शायरों को मुशायरों में अब एक नया मंच दे दिया है। जहां पहले हास्य-कवि को मुशायरे के बाद सुना जाता था, वहां अ हास्य-रस के शायर ही मुशायरों की आ जान माने जाने लगे हैं। इस परिस्थि ने मामूली दर्जे के हास्य-कवियों को च चमका दिया है, परंतु कभी-कभी ऐ लगने लगता है कि ये शायर नहीं मसख हैं। सस्ती शोहरत पा जाने के कारण मेहनत से दूर भागने लगे हैं और के हंसना-हंसाना ही उनका उद्देश्य बन ग है। वास्तविक जीवन से इन शायरों संबंध टूट-सा गया है, परंतु इस भीड़ कुछ शायर ऐसे भी हैं जो अलग पहचा जाते हैं और भविष्य में जब आधुनि उर्दू शायरी को आंका जाएगा तो उनक भी स्थान मिलेगा।

'मजनूं' लखनवी का अंदाज देखिए—

इक दौर वो था जब मुझे रहती थी ये फि
महमां कोई आ जाए तो खाना खाऊं
इस दौर पे लानत हो कि अब सोचता
ये शख्स चला जाए तो खाना खाऊं

पटना का रजा नकवी वाही भी सो समझकर व्यंग्य करते हैं। उन्होंने अधि तर लंबी-लंबी नजमें लिखी हैं, जिनको समय प्रस्तुत करना मुश्किल है। वाही अछूते ढंग से आधुनिक समाज के पात्रों खाके खींचे हैं। उनके यहां हास्य-व्यं के साथ साहित्य का पुट भी है। उन एक कविता——'लीडरी का नुस्खा' के कु शेर देखिए——

माजून लीडरी का बड़ा कामयाब
नुस्खा ये कस्बे-जर के लिए लाजवाब

अनमोल है ये जिस तिजारत के वास्ते
तरकीब लिख रहा हूं सहूलत के वास्ते
ईमान और जमीर को पहले खरल करें
और उसके बाद खूने हमीयत में हल करें
तुख्मे दिया को अक्ल के कांटे पे तोल लें
साजिश का जहर शहदे फसाहत में घोल लें
बादामो-खुल्क व पिस्ता-ए-तहजीब पीस लें
दोनों को खूब सिल में शकावत की पीस लें
सच में सफेद झूठ का पानी पिलाएं फिर
हिर्सो-हवस की आंच में सबको पकायें फिर

जोशांदा जब उबाल पे आये, उतार लें
और उसको फिर दिमाग की बोतल में गार लें
कंदे समाह-ए-फिरकापरस्ती मिलाएं फिर
और कोशिके जईफ को अपनी खिलाएं फिर

पाकिस्तान चले जानेवाले हास्य-रस के कुछ शायरों का जिक्र भी आवश्यक है। शौकत थानवी, जमीर जाफरी और दिलावर फिगार। जमीर जाफरी की कविता 'माडर्न आर्ट' भरपूर व्यंग्य है। दिलावर फिगार का एक कता पढ़िए—

शायरों ने रात भर बस्ती में बावेला किया
शोर की आवाज से सारा महल्ला उठ गया
इक जईफा अपने बेटे से ये बोली अगले रोज
रात कैसा शोर था क्या कोई शायर मर गया

फुरकत काकोदवी, जिनके देहांत को अभी एक-दो वर्ष हुए हैं, वड़ी गहरी बात कहते थे। मिड-टर्म-इलेक्शन में इंदिरा गांधी की लोकप्रियता को किस ढंग से कहा है—

मिड-इलेक्शन की चली मुल्क में जिस दम आंधी
वोट देने को गया शहर में एक देहाती
वल्दियत के उसे मालूम नहीं थे मानी
वल्दियत पूछी तो कहने लगा इंद्रा गांधी

अन्य प्रसिद्ध कवियों में हिलाल रामपुरी, रिलाल, सैवहादवी, आफताव लखनवी, माचिस लखनवी, सुलेमान खतीब आदि हैं। मुशायरों की वजह से इनकी शोहरत बहुत है; परंतु ऐसा लगता है कि ऐसी सस्ती शोहरत कवि को सुस्ता देती है। कुछ फुटकर रचनाएं सुनिए—

तीसरी बीवी जो की मैंने तो वालिद ने कहा
खुश हूं मैं, अच्छा है जौके शौहरी ठंडा न हो
हां, मगर इस दौर में ये मशवरा दूंगा जरूर
चाहे जितनी मुर्गियां पालो मगर अंडा न हो

(हिलाल रामपुरी)

किया करते हैं बातें आजकल यूं लोग बीवी की
कि जैसे खुद वो बीवी हैं मियां की बात करते हैं

(माचिस)

हास्य-रस के कवियों की बढ़ती हुई मांग से जहां यह अनुमान लगाया जा सकता है कि अब इसे एक स्थान मिल गया है, वहां यह भी संकेत मिलता है कि हास्य-रस के उर्दू कवियों की जिम्मेदारियां बढ़ गयी हैं। उन्हें समाज की दुखती रगों और नब्ज को देखना है, और साथ ही साहित्य की दृष्टि से भी ऊंचा पद प्राप्त करना है।

—८/५५१, रामकृष्णपुरम,
नयी दिल्ली-११००२३

तनाव से मुक्ति

धीरेंद्र सक्सेना, इलाहाबाद : १८ वर्षीय, कालेज-छात्र हूं। मेरे अंदर बचपन से ही यह भावना घर कर गयी है कि भगवान ने मुझे ही सत्यरूप में बनाया है। मैं ही सत्यरूपेण इस संपूर्ण विश्व में साध्य हूं, बाकी सब साधन मात्र हैं, माया है। इस विषय में मन में तर्क-वितर्क भी चलते रहते हैं और मैं विक्षिप्त-सा हो जाता हूं। दिल में हलका दर्द भी शुरू हो जाता है। कृपया इस मानसिक उथल-पुथल को दूर करने का उपाय बतायें।

बचपन में छोटा बच्चा कुछ इसी प्रकार से सोचता है, लेकिन यह उसके मानसिक विकास का सामान्य पक्ष नहीं है। जिन बच्चों को मां-बाप का बहुत लाड़-प्यार मिलता है वे अपने को बहुत सुरक्षित समझने लगते हैं, लेकिन जब वे बाहर की दुनिया में कदम रखते हैं तब स्वयं को निरुपाय और असुरक्षित पाते हैं। इसे 'नर्सिसिटिक ओमनीपोटेंस' (मैं ही सर्वशक्तिमान हूं) की भावना कहते हैं।

अभी समय है कि आप व्यावहारिक बुद्धि को पनपने का मौका दें और ज्यादा समय तक अकेले न रहें। ऐसा करके आप इस भावना से छुटकारा पा सकते हैं।

क. ख. ग., वाराणसी : मेरी अविवाहित ननद एक लड़के से प्रेम करती है, जो उन्हीं के कालेज का छात्र है। वह पढ़ने में तेज है, लेकिन मानसिक समस्याओं का शिकार है और हमेशा उदास व खोया-सा रहता है। एक रविवार को उसने कालेज लाइब्रेरी में जाकर आत्महत्या करने की कोशिश भी की, ठीक समय पर पहुंचकर मेरी ननद ने उसे बचा लिया। उसने जो पत्र अपने पीछे छोड़ने के लिए लिखा था, वह पारिवारिक असंतुलन को दर्शाता है।

हमने इस घटना के बारे में उसके घर-वालों को नहीं बताया है, क्या उन्हें बताना उचित होगा? पिछले चार महीने में उसे दो बार मानसिक उदासी के दौरे पड़ चुके हैं। ननद की हालत भी खराब हो गयी है, वह भी खोयी-सी रहने लगी है, नींद में चिल्ला उठती है। हमें इन दोनों के लिए क्या करना चाहिए?

आप इन दोनों को किसी योग्य मनोचिकित्सक को दिखाकर उपचार करायें। मानसिक उदासी के दौरे में फिर कहीं आत्महत्या की घटना न घट जाए,

सलिए इसका निदान आवश्यक है।

लड़का बहुत गंभीर प्रवृत्तिवाला प्रतीत होता है, जिसके कारण ये समस्याएं आरंभ होती हैं। मात्र पढ़ाई-लिखाई में तेज होना या बहुत चुपचाप रहना आदि मनोवैज्ञानिक रूप से ठीक नहीं है। आप कोशिश करें जिससे वह व्यवहार-कुशल बन सके। व्यावहारिकता संतुलित जीवन के लिए आवश्यक है। अभी उसकी गलत प्रवृत्तियों को रोकने का समय है।

तपेश्वरप्रसाद, बरेली : मैं २५ वर्षीय, महत्त्वाकांक्षी, सरकारी पद पर कार्यरत युवक हूं। घर में हम दो भाई, तीन बहन व मां-बाप हैं। पिताजी वृद्ध हैं। घर की सारी जिम्मेदारी २७ वर्षीय बड़े भाई पर है। वे सरकारी लिपिक हैं। पिछले तीन वर्ष से उनमें अजीब परिवर्तन आ गया है। वे बोलते-चालते नहीं हैं, बल्कि कभी-कभी अकेले ही हंसते रहते हैं। कार्यालय में ठीक से कार्य न कर पाने के कारण उन्हें एक बार नौकरी से हटा दिया गया था। मानसिक अस्पताल में उनका इलाज कराया। वहां से ठीक भी हो आये, लेकिन अब भी स्थिति पूर्ववत है। कृपया पूर्ण स्वस्थ होने के लिए कोई सुझाव दें।

आपके बड़े भाई मानसिक रोग 'साइजोफ्रेनिया' से पीड़ित हैं। इसका उपचार प्राय: लंबा होता है, कई महीनों तक दवा खानी पड़ती है। आप नियमित इलाज करायें तो आपके भाई अवश्य ठीक हो सकते हैं। यह रोग एक अरसे तक चरस या गांजा पीने से भी हो सकता है। यह पता लगा लें कि आपके भाई कहीं नशीले पदार्थों के सेवन के आदी तो नहीं हैं।

अजय भारती, शहडोल : अपने गांव से हायर सेकंडरी पास करने के बाद मैं शहर के कालेज में पढ़ने आया हूं, लेकिन शहर में अकेले रहने के कारण बड़ी बेचैनी महसूस होती है, सब कुछ नीरस लगता है। दिन-रात मानसिक तनाव से ग्रस्त रहने के कारण कभी-कभी तो आत्महत्या करने का विचार आता है। बताइए मैं क्या करूं?

मां-बाप, गांव, परिवार छोड़कर पहली बार शहर आने पर प्राय: ऐसा हो जाता है। आप स्वयं को असुरक्षित व असहाय अनुभव करने लगे हैं, जो स्वाभाविक है। साथ ही आप शहरी जीवन के साथ ताल-मेल नहीं बैठा पाये हैं। शायद, शहर की कुछ समस्याओं से उत्पन्न मानसिक तनावों के कारण आप अवसाद-ग्रस्त हो गये हैं। इस अवसाद को दूर करने की आजकल कई अच्छी दवाइयां मिलती हैं। किसी डॉक्टर के परामर्श से इनका सेवन करने पर आप बिलकुल ठीक हो सकते हैं। आत्महत्या का विचार अवसाद का लक्षण है। अवसाद से मुक्ति पाने पर

इस स्तंभ के अंतर्गत अपनी समस्याएं भेजते समय अपने व्यक्तिगत जीवन का पूरा परिचय, आयु, पद, आय एवं पते का उल्लेख कृपया अवश्य करें।

सुंदर
नटखट
चितचोर

यानी माधुरी जिसने सबका
मन मोह लिया है
यानी टाइम्स आफ इंडिया की
पाक्षिक फिल्म पत्रिका माधुरी

माधुरी
रसभीनी मधुर पत्रिका

आत्महत्या के विचार से भी मुक्ति पा सकेंगे। मेरे विचार में आपके लिए यह उपयुक्त रहेगा कि आप कुछ समय के लिए गांव लौट जाएं और आत्मविश्वास पैदा होने पर शहर लौटें ।

क. ख. ग., दिल्ली : मैं १६ वर्षीया छात्रा हूं और विज्ञान का अध्ययन करती हूं। मैं चित्रकला, साहित्य आदि में भी रुचि रखती हूं। मेरे आसपास सभी मुझे दार्शनिक मानते हैं। मैं स्वस्थ और महत्त्वाकांक्षिणी हूं। इसलिए मेरे सामाजिक दायरे में सब छात्राएं तथा शिक्षकगण— मुझे अपने से भिन्न और ऊंचा समझते हैं। इसीलिए मैं किसी को भी अपना मित्र नहीं बना सकी हूं। मैं ऐसा डॉक्टर बनना चाहती हूं जो मनोवैज्ञानिक, साहित्यकार, दार्शनिक और चित्रकार भी हो। अपने दृष्टिकोण के कारण मैं बहुत रूखी, भावुकताहीन और जीवनशून्य-सी होती जा रही हूं। मैं बहुत चिंतित हूं। कृपया इस अवस्था से निकलने का कोई उपाय बतायें।

१६ वर्ष की कम उम्र में ही आप कई गुणों की धनी है, पर आपकी भिन्न रुचियां आपको कई दिशाओं में खींचती हैं। कुछ समस्याएं आपने अपने लिए खुद खड़ी कर ली हैं। जैसे, आपने अपने जीवन में कृत्रिम रूप से नीरसता पैदा कर ली है।

आपको अपनी प्रवृत्तियों का दमन न करके स्वाभाविक अवस्था में आने का प्रयत्न करना चाहिए, अन्यथा आपका अंतर्मन विद्रोह कर देगा, जैसा कि आपमें आपके चिंतन में प्रकट होता है ।

आपके आसपास के लोगों ने आपको उच्च धरातल पर स्थापित कर दिया है। आपको अपनी अवस्थानुसार मानसिक स्तर पर साहसपूर्वक कुछ निचले धरातल पर लौटने का प्रयत्न करना चाहिए, तभी आप अपने को स्वाभाविक एवं सुविधाजनक स्थिति में महसूस करेंगी।

अ. ब. स., ग्वालियर : मेरी उम्र २३ वर्ष की है। मेरी किराने की छोटी-सी दुकान है, आर्थिक दृष्टि से मुझे कोई कठिनाई नहीं है। मैं अविवाहित हूं, किंतु कुछ वर्षों से हरदम मुझे यह चिंता सताती है कि यदि पिताजी की तरह मेरे भी गाल पिचक गये तो मैं कितना बदसूरत लगूंगा !

आपको गाल पिचकने का भय किशोरावस्था में शुरू हुआ। इस उम्र में अपनी शक्ल-सूरत, पहरावे तथा व्यक्तित्व के बारे में कई तरह की चिंताएं शुरू होती हैं। चूंकि आपके पिता के गाल पिचके हुए हैं, इसलिए आपमें यह डर घर कर गया है कि कहीं यह आनुवंशिक बात न हो। आनुवंशिक लक्षण पिता तथा माता दोनों से आते हैं, केवल पिता से नहीं। गाल का पिचकना या न पिचकना भोजन में चिकनाई या चर्बी की मात्रा पर निर्भर है। आपको यह भी जानना चाहिए कि कहीं यह आपके मानसिक द्वंद्व का प्रतीक तो नहीं जो किशोरावस्था में उत्पन्न हो जाता है। ●

नक्षत्र और आपका भविष्य

● पंडित पुनर्व

लग्न के महत्त्व के संबंध में हम पिछले अंकों में बता चुके हैं। पिछले अंक में आप यह भी पढ़ चुके हैं कि किसी विशेष लग्न में जन्म लेनेवाले व्यक्ति की क्या चारित्रिक विशेषताएं होती हैं। यहां हम राशि के महत्त्व की चर्चा करेंगे। किसी व्यक्ति की जन्मकुंडली में चंद्रमा जिस राशि में होता है, वही उस व्यक्ति की राशि मानी जाती है।

अन्य ग्रहों की तुलना में चंद्रमा सबसे ज्यादा तेज चलता है। चंद्रमा घटत बढ़ता ही है। भारतीय ज्योतिष ने चंद्र को इसीलिए बहुत महत्त्व दिया है कि हम—पृथ्वी पर रहनेवालों—को सब ज्यादा बनाता-मिटाता है। चंद्रमा जलत का अधिकारी है। पूर्णिमा को समुद्र में ज्वार आता है उसका कारण चंद्रमा ही है। इसके अतिरिक्त वनस्पतियां, प

जन्म-कुंडली का अध्ययन करने के पूर्व कुछ मूलभूत बातें जानना जरूरी है। जैसे राशियां बारह होती हैं :

१. मेष, २. वृष, ३. मिथुन, ४. कर्क, ५. सिंह, ६. कन्या, ७. तुला, ८. धनु, १०. मकर, ११. कुंभ, १२. मीन,

इन्हीं बारह राशियों में से एक न एक राशि लग्न में होती है। इस तरह लग्न भी बारह कहे जा सकते हैं।

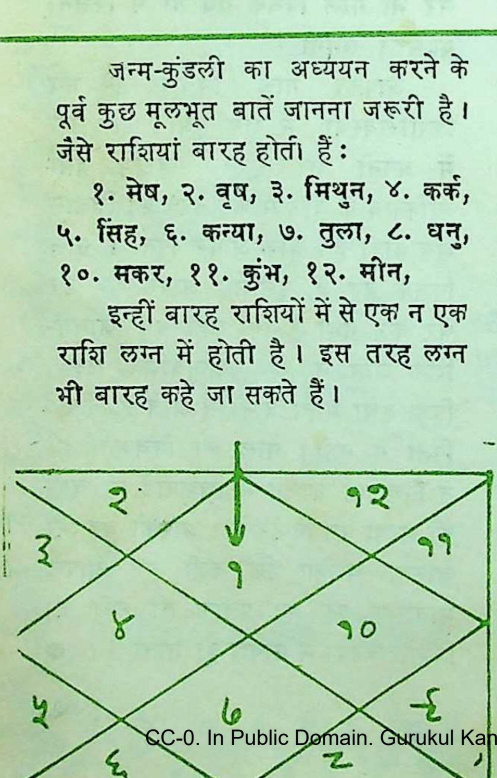

चित्र : १

लग्न और राशि

१. मेष, २ वृष, ३ मिथुन, ४. क ५. सिंह, ६. कन्या, ७. तुला, ८. वृश्चिक ९. धनु, १०. मकर, ११. कुंभ, १२ मी

इसी तरह नौ ग्रह होते हैं—

१. सूर्य, २. चंद्र, ३. मंगल, ४ बु ५. बृहस्पति, ६. शुक्र, ७. शनि, ८. रा ९. केतु

अब यहां प्रकाशित जन्म-च देखिए। इस जन्म-चक्र में १२ स्थान है। बारह राशियां और नौ ग्रह इन बार स्थानों में कहीं न कहीं स्थित होंगे।

इस जन्म-चक्र के १२ स्थानों में लि अंक उन स्थानों के क्रम के सूचक हैं— जैसे १ का अंक प्रथम स्थान का, २ क

पक्षी, सभी जीव किसी न किसी रूप में चंद्रमा से प्रभावित होते हैं। अब अपनी जन्मपत्रिका देखिए । आप पाएंगे कि उसमें चंद्रमा और उसके अंश दिये गये हैं। चंद्रमा के अंशों के आधार पर महादशा निकाली जाती है। महादशा के बारे में हम आगे कभी बताएंगे। अभी तो राशि के मुताबिक आपको अपनी पहचान करनी है। प्रथम भाव को लग्न कहते हैं, यह आप जानते ही हैं।

अगर आप पूर्णिमा को पैदा हुए थे और आपका चंद्रमा लग्न में था तो आप धनवान तो होंगे ही साथ ही सुंदर भी होंगे। यही चंद्रमा अगर कृष्णपक्ष का है तो आदमी मलिन और खिन्न मनवाला हो जाता है। लग्न में अगर मेष, वृषभ या कर्क राशि का चंद्रमा हो तो यह बड़ा उत्साह, बड़ी कल्पना, बड़ी संपत्ति देता है। ऐसा आदमी राजा के समान आदरणीय होता है। पंडित नेहरू की कुंडली में कर्क का चंद्रमा उनके प्रथम भाव यानी लग्न में बैठा था। और यह तो आप भी मानेंगे कि उनका-जैसा आकर्षक व्यक्तित्व बीसवीं सदी में दूसरा नहीं था। यही चंद्रमा अगर लग्न में सिंह और धनु राशियों का हो तो क्रोध और बेफिक्री देता है। यदि यह कन्या अथवा मकर का हो तो आदमी अपने आपको जितना विद्वान

की पहचान

अंक दूसरे स्थान का । इसी तरह शेष। इनमें से १ अंकवाला स्थान प्रथम स्थान या भाव कहलाता है। (तीर का निशान) बारह राशियों में से कोई एक राशि इस प्रथम स्थान में होगी। जैसे दूसरे चित्र में प्रथम स्थान पर ४ का अंक लिखा है। अब राशि तालिका में देखिए चार के अंक के आगे कौन-सी राशि है। चौथे क्रम पर कर्क राशि है। अतः इस कुंडली का कर्क लग्न हुआ। यदि १० का अंक होता तो दसवें क्रम की राशि मकर का लग्न होता।

लग्न के बारे में बताने के बाद अब हम बताएंगे कि जन्म-राशि कैसे पहचानी जाए! अपनी कुंडली में देखिए कि चंद्रमा जिस स्थान में है, उसमें कौन-सा अंक लिखा है। उदाहरण के लिए यहां प्रकाशित जन्म-चक्र में चंद्रमा के साथ ५ का अंक लिखा है। ५ का अंक सिंह-राशि का सूचक है। अर्थात इस जन्म-चक्र में जन्मराशि सिंह है। दूसरे शब्दों में चंद्रमा जिस राशि में होता है, वही उस व्यक्ति की राशि होती है।

इन तथ्यों को याद रखने से इस लेखमाला को समझने में आसानी होगी।

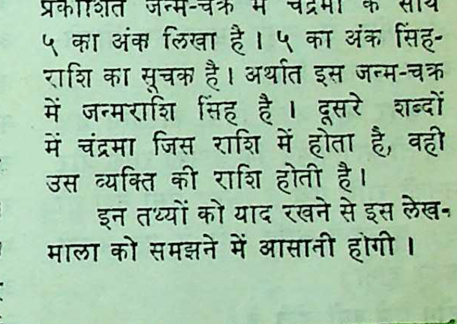

चित्र : २

समझता है उतना होता नहीं। मिथुन, तुला अथवा कुंभ का चंद्र नेतागिरी के लिए उकसाता है। वृश्चिक अथवा मीन का चंद्र आदमी को स्वार्थी बनाता है।

जब चंद्रमा दूसरे भाव में हो

चंद्रमा दूसरे भाव यानी धन-स्थान में हो तो धन का नाश करता है। मेष का चंद्रमा उतना बुरा नहीं, मगर वृषभ और कर्क का हो तो धन की कमी हमेशा बनी रहती है। मिथुन, कन्या और तुला में यही चंद्रमा स्त्री जाति की ओर से धन, मान-हानि की स्थिति पैदा करता है। सिंह के चंद्रमा में मित्रों से लाभ की गुंजाइश रहती है। वृश्चिक के चंद्रमा से अपने हाथों नुकसान हो जाता है। धनु के चंद्रमा से विद्वानों और स्त्रियों द्वारा आदान-प्रदान की सूरत पैदा होती है। मकर व कुंभ में चंद्रमा लेखन या पत्रकारिता में रुचि पैदा करता है और मीन से मधुर, मगर कम बोलनेवाला बनाता है।

अगर आप अपने मित्रों का जन्म चक्र देखें तो आप पायेंगे कि आपकी राशि और उनकी राशि एक है, अगर ऐसा नहीं तो सूर्य, वृहस्पति आदि ग्रहों में यह समता जरूर होगी।

लोग घुन्ने क्यों होते हैं?

तृतीय स्थान का चंद्रमा भाई-बहनों के लिए घातक सिद्ध होता है। अगर भाई-बहन न रहें तो भी उनसे संबंध अच्छे नहीं रहते। तृतीय स्थान में किसी भी राशि का चंद्रमा हो व्यक्ति को थोड़ा घुन्ना बनाता है। ऐसे लोगों को प्रवास भी खूब करना पड़ता है। तृतीय स्थान का चंद्रमा लगभग सभी ज्योतिर्विदों की दृष्टि से शास्त्रीय और गहन विषयों में रुचि पैदा करता है। यह चंद्रमा स्वभाव में अनिश्चितता अथवा फिर हलका सनकीपन देता है। इस चंद्रमा से सत्ताइस वर्ष की आयु में कीर्ति मिलती है।

चौथे भाव का चंद्रमा

चंद्रमा अगर चौथे भाव में हो तो पूर्वार्ध आयु में कष्ट मिलता है। अगर चौथे भाव में यह चंद्रमा मेष, सिंह या धनु का हो तो जीवन के पूर्वार्ध में पैतृक संपत्ति नष्ट हो जाती है। ऐसा चंद्रमा मां के लिए शुभ होता है। यदि चौथे भाव में वृषभ, कन्या, वृश्चिक अथवा मकर का चंद्रमा हो, तो आदमी आजीवन धन नहीं एकत्रित कर पाता। हां, अगर यह चंद्रमा मिथुन अथवा कुंभ का हो तो आदमी मेहनत करके कुछ धन कमा लेता है। माता के कारण कई बार कई लोगों को तुला के चंद्रमा में बहुत लाभ मिलता है। मीन राशि का चंद्रमा अगर चौथे भाव में विद्यमान हो तो ऐसे लोग अकसर तीस वर्ष की आयु तक स्थिरता नहीं प्राप्त कर पाते। ऐसे लोग अगर सुगंधित वस्तुओं का व्यापार करें तो इन्हें बड़ा लाभ मिलता है।

चंद्रमा संतान और विद्या

पांचवा भाव या स्थान संतान और विद्या से संबंध रखता है। अगर आपका चंद्रमा पांचवे स्थान पर है और उस घर में कोई

और क्रूर ग्रह अर्थात सूर्य, मंगल, शनि और राहु भी विद्यमान हैं तो निश्चय जानिए आपकी कन्याएं अधिक होंगी। यह फल तब विशेष रूप से मिलता है जब चंद्रमा वृषभ, कन्या अथवा मकर राशि का हो। यह चंद्रमा अगर मिथुन, तुला अथवा कुंभ का हो तो पुत्र ज्यादातर नहीं ही होता देखा गया। पांचवे भाव में मेष का चंद्रमा पहली संतान, पुत्र ही देता है। कर्क, वृश्चिक, मीन, सिंह एवं धनु राशियों का चंद्रमा भी पुत्रकारक है, मगर ऐसी स्थिति में पहले कन्या फिर पुत्र का जन्म होता है। कई बार मिथुन का चंद्रमा पुंसत्वहीनता भी पैदा करता है। शिक्षा की दृष्टि से यह चंद्रमा ज्यादातर अच्छा ही फल देता है। मगर ऐसी स्थिति में अन्य ग्रहों की दृष्टि भी देखना जरूरी है।

छठवें भाव में चंद्रमा--झगड़े की जड़

छठवें स्थान पर चंद्रमा झगड़े पैदा करता है। शरीर का सुख भी पूरा नहीं मिलता। चंद्रमा अगर मेष का हो तो पित्त को प्रबल करता है। वृषभ में इस चंद्रमा से खांसी या कंठ-नली के दोष पैदा होते हैं। मिथुन में इस चंद्रमा द्वारा आदमी आयुर्विज्ञान की जानकारी बढ़ाता है। कर्क में इस चंद्रमा द्वारा पेट के रोग होने की संभावना रहती है। सिंह और कन्या में यह चंद्रमा तपिश पैदा करता है। तुला का चंद्रमा यहां बैठकर मानसिक संतुलन और वृश्चिक में बैठकर अन्याय न सहन करनेवाला बनाता है। अगर छठे भाव में चंद्रमा धनुराशि का हो तो डॉक्टरी के पेशे की तरफ ले जाता है जबकि मकर और कुंभ में प्रमाद और शिथिलता देता है। मीन में होने से यह चंद्रमा सांसारिक कर्मों के प्रति उदासीनकर अनिष्ट करता है।

पत्नी कैसी मिलेगी

सातवें स्थान का चंद्रमा कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि सातवां स्थान स्त्री कारक है। सातवें स्थान पर मेष का चंद्रमा स्वभाव में रूक्षता रखता है। अगर यह चंद्रमा वृषभ राशि का हो तो अकसर दो विवाह का योग आता है। यह चंद्रमा अगर मिथुन का हो, तो स्त्री बड़ी तेज मिलती है जबकि कर्क में अत्यधिक सुंदरी और विदुषी। सप्तम भाव में सिंह के चंद्रमा से स्त्री हृष्ट-पुष्ट होती है, जबकि कन्या राशि में संसार पर आसक्ता, पैसा बचानेवाली आदि। तुला का चंद्रमा यहां बैठकर कलाप्रिय पत्नी देता है जबकि वृश्चिक में अवैध संबंध के अवसर आते हैं। धनु, मकर में चंद्रमा होने से स्त्री का चेहरा प्रभावी होता है हालांकि वह बहुत सुंदर नहीं होती। कुंभ में स्त्री का चेहरा एकदम साधारण होता है। मीन में स्त्री हंसमुख विलासिनी और मांग-प्रिय होती है। पति को प्रसन्न रखना इसका ध्येय होता है।

आठवें स्थान में चंद्रमा—अशुभ

आठवें घर का चंद्रमा अच्छा नहीं माना

गया। इसलिए कि आठवें घर का संबंध आयु और स्वास्थ्य से है, फिर भी आठवें भाव में मेष, कर्क, वृश्चिक का चंद्रमा हठयोग, प्राणायाम आदि के लिए प्रेरित करता है। सिंह का चंद्रमा यहां रहस्यात्मकता देता है जबकि मिथुन एवं कन्या का चंद्रमा कृशता। तुला का चंद्रमा इस स्थान पर धर्मभीरुता और धनु में न्यायप्रियता देता है। मकर व कुंभ में इस चंद्रमा से समाधि एवं तुरीयावस्था की ओर रुझान भी देखा गया है। मीन में यह चंद्रमा गुह्य विचारधारा देता है।

नवम भाव का चंद्रफल

नवम स्थान का चंद्रमा स्वभाव में मृदुता पैदा करता है। मेष में ऐसा चंद्रमा तकनीकी मामलों में रुचि पैदा करता है जबकि वृषभ में इस चंद्रमा द्वारा मिलिट्री और खेती दोनों ओर रुचि होती है। मिथुन, कर्क व सिंह-वाले लोग इस चंद्रमा द्वारा बहुत उन्नति करते हैं। नवम भाव में कन्या में स्थित चंद्रमा व्यापार एवं तुला, वृश्चिक धनु में ऐसा चंद्रमा प्रकाशन एवं मुद्रण के धंधे में ले जाता है। मकर व कुंभ में बिजली, लोहे का व्यापार और मीन में पुस्तकें लिखने की जरूरत पैदा करता है।

दसवें भाव में चंद्रमा

इसी प्रकार दशम भाव में मेष, कर्क, तुला अथवा मकर का चंद्रमा मां-बाप के लिए अशुभ होता है। वृषभ, मिथुन व कन्या का चंद्रमा होने से आदमी अपने मां-बाप का कर्ज चुकाता है धनु व कुंभ में होने से यश। मीन में चंद्रमा के कारण अस्थिरता रहती है।

ग्यारहवें भाव में चंद्रमा

एकादश भाव में चंद्रमा के फल कहे गये हैं, मगर शर्त यह है कि पुरुष राशि का हो। एकादश स्थान कई महापुरुषों की जन्मपत्रिका में विद्यमान है। अगर आपकी जन्मपत्रि में चंद्रमा एकादश भाव में बैठा है आप निश्चय ही एक दिन उन्नति एकादश भाव का चंद्रमा प्रभुत्व भी है और लोकप्रियता भी।

चंद्रमा और बारहवां

द्वादश भाव में चंद्रमा अगर वृश्चिक, अथवा मेष राशि का हो तो आदमी होता है। वृषभ व तुला में चंद्रमा भी बना सकता है। कई व्यंग्यकार और कन्या के चंद्रमा से युक्त पाये हैं। मात्र सिंह का चंद्रमा ऐसी स्थिति प्रवास देता है। धनु और मीन में इस द्वारा अकस्मात लाभ-हानि होती है।

अगर जन्मपत्रिका में चंद्रमा से कोई ग्रह बैठा हो तो ऐसा योग योग कहलाता है। (ध्यान रहे इन में सूर्य को न गिना जाए।) ऐसे योग जन्म लेनेवाला प्राणी अत्याधिक सुंदर प्रभावी होता है। जब चंद्रमा किसी में मंगल के साथ बैठा हो तो उसे मंगल योग कहते हैं। इस योगवाला अथाह संपत्ति बनाता है, कंजूस होता मगर बहुत प्रसिद्ध।

(क्रमशः)

नयी कृतियां

हिंदी में व्यंग्य और हास्य के अंतर को अभी तक स्पष्ट रूप से नहीं समझा जा सका है। इसीलिए हास्य की रचना व्यंग्य की और व्यंग्य की कृति हास्य की समझ ली जाती है। ऐसा इसलिए भी होता है कि व्यंग्य की भंगिमा लेकर लिखी गयी कृतियां सही दिशा एवं चिंतन-शून्यता के कारण मात्र भौंडे हास्य की रचना बनकर रह जाती हैं। एक कारण यह भी होता है कि स्वयं लेखक ही कभी-कभी यह नहीं तय कर पाता कि

कुछ व्यंग्य प्रधान पुस्तकें

वह शुद्ध व्यंग्य लिखने जा रहा है अथवा शुद्ध हास्य। **'राजधानी में गंवार', 'ऐसा भी होता है',** और **'अभिमन्यु का सत्ता-व्यूह'** कृतियां काफी सीमा तक इन दोषों से मुक्त कही जा सकती हैं।

राजधानी में गंवार : युवा व्यंग्यकार प्रेम जनमेजय की बत्तीस व्यंग्य-कथाओं का संग्रह है। इनमें से अधिकांश कथाओं में लेखक ने समाज की मौजूदा विसंगतियों, निरंतर गिरते जीवन-मूल्यों एवं बिगड़ती कानून-व्यवस्था पर गहरी चोट की है। इस दृष्टि से संग्रह की 'मनुष्य और ठग' 'मंत्री क्षेत्रे : कुरु क्षेत्रे,' 'इंसपेक्टर का तबादला', 'मंत्रीजी का कुत्ता', 'राजधानी में गंवार' कथाएं काफी सशक्त हैं।

ऐसा भी होता है : पचीस व्यंग्य-प्रधान रचनाओं का संकलन है। जीवन की छोटी-छोटी बातों को लेकर लेखक ने समाज के मुखौटे पहने चेहरों पर अच्छे व्यंग्य किये हैं।

अभिमन्यु का सत्ता-व्यूह : 'दादा' की इक्कीस व्यंग्य-प्रधान लघुकथाओं का संग्रह है। लघुकथाओं में लेखक ने पौराणिक या ऐतिहासिक पात्रों के माध्यम से आज की स्थितियों पर सटीक व्यंग्य किये हैं।

दादा के छक्के : छयालीस व्यंग्य कविताओं का संग्रह है। इनमें अधिकांश कविताएं सामान्य हैं, लेकिन कुछ कविताओं का व्यंग्य झकझोरने वाला है, जैसे—

कलाकार
रोटी न जुटा सका
तन के लिए
सचमुच,
कला है कला के लिए
न कि जीवन के लिए

राजधानी में गंवार
लेखक—प्रेम जनमेजय, प्रकाशक—पराग प्रकाशन, ३/११४ कर्णगली, विश्वासनगर, शाहदरा, दिल्ली, पृ.—१५६, मूल्य—१२ रु.

ऐसा भी होता है
लेखक—श्रीराम ठाकुर दादा, प्रकाशक—मदन महल, जनरल स्टोर्स, जबलपुर, पृ. —   मूल्य—३ रु.

अभिमन्यु का सत्ता-व्यूह लेखक—उपर्युक्त, प्रकाशक—लोकचेतना प्रकाशन, जबलपुर पृ.—४०, मूल्य—३ रु.

दादा के छक्के
लेखक एवं प्रकाशक—उपर्युक्त, पृ.—४८, मूल्य—३ रु.

आधुनिक जरमन साहित्यकारों में हाइनरिष ब्योइल, हंस एरिष नोस्सक, ग्युंटर ग्रास, अलफ्रेड आंदर्श, सीगफीड लेंत्स तथा सुश्री लुइजे रिंजर का एक विशिष्ट स्थान है। इनमें से ब्योइल एवं ग्रास ऐसे नाम हैं, जो हिंदी पाठकों के लिए अपरिचित नहीं। ब्योइल जहां नोबेल पुरस्कार विजेता के रूप में विख्यात हैं, वहां ग्रास अपने 'ब्लोवजमिल' अर्थात अर्थात 'टीन का ढोल' शीर्षक उपन्यास से अंतर्राष्ट्रीय ख्याति अर्जित कर चुके हैं। **'जरमन साहित्यकार'** शीर्षक पुस्तक माला में उपरोक्त छहों जरमन साहित्यकारों की श्रेष्ठ कृतियां संकलित हैं, जिनसे न केवल द्वितीय विश्वयुद्ध की विभीषिका का झकझोरनेवाला इतिहास पढ़ने के लिए मिलता है, वरन उस संकल्पपूर्ण जिजीविषा के भी दर्शन होते हैं जिसने जरमन जाति को युद्ध से ध्वस्त जीवन को फिर से सजाने और संवारने की प्रेरणा दी है।

ब्योइल और गुंटर ग्रास की रचनाओं में हमें युद्ध और उसे शांतिप्रिय नागरिकों पर थोपनेवाले नेताओं के प्रति घोर आक्रोश एवं तीखे व्यंग्य की झलक मिलती है। नोस्सक ने भी युद्धोत्तर विभीषिका तथा तत्संबंधित तथ्यों का अपनी तीखी एवं मर्मभेदी विचार-शैली में वर्णन किया है।

आंदर्श ने भी अपनी कृतियों में युद्ध की विभीषिका का वर्णन किया है, किंतु साथ ही वे मनुष्य की संघर्षों पर विजय की क्षमता प्रतिपादित करना भी नहीं भूले हैं। लेंत्स एक परंपरा-विद्रोही लेखक हैं तथा अपनी कृतियों में उन्होंने हर उस वात पर संदेह किया है, जो मात्र परंपरा के कारण आदर्श के रूप में प्रतिष्ठित-पूजित हो चुकी है। लुइजे रिंजर की कृतियों में एक गहरी मानवीय संवेदना के दर्शन होते हैं। जरमन नारी के अंतर्मन को रिंजर ने भलीभांति जाना-परखा है।

इन पुस्तकों की एक विशेषता यह है कि जरमन में मूल रचना भी दे दी गयी है। रिंजर एवं ग्रास की रचनाओं के अनुवादक हैं—मोहितकुमार जुल्का, नोस्सक, आंदर्श तथा लेंत्स की कृतियों की अनुवादिका हैं—प्रेमवसंत एवं ब्योइल की रचनाओं का अनुवाद डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा ने किया है। चूंकि अधिकांश

अनुवाद शब्दशः हैं अतः थोड़ी कृत्रिमता उन्हें बोझिल बनाती है, लेकिन समृद्ध कथ्य इस दोष की भरपाई कर देता है।

जरमन साहित्यकार (छह खंड)

लेखक–(पृथक-पृथक)–हाइनरिष ब्योइल, हंस एरिष, नोस्सक, ग्युंटर ग्रास, अल्फ्रेड आंदर्श, सींग्फीड लेंत्स, लुइजे रिंजर, प्रकाशक—शकुंतला पब्लिशिंग हाउस, मेकर भवन नं. १, १, न्यू मेरिन लाइंस, बबंई-४०००२०, पृ.—क्रमशः १२८, १४८, १३८, १०६, १०४, १०८, मूल्य —उल्लेख नहीं

अथातो सौंदर्य-जिज्ञासा : कला एवं सौंदर्य जैसे विषयों पर मौलिक चिंतन के कुछ नये निष्कर्ष प्रस्तुत करनेवाली एक महत्त्वपूर्ण कृति है। कला एवं सौंदर्य-शास्त्र, कलाकार एवं उसकी सृजन-प्रक्रिया, कला की प्रशंसा करनेवाले सहृदय, अभिव्यंजना एवं संप्रेषणीयता, सौंदर्य तात्त्विक वृत्ति तथा सौंदर्य बोधानुभव पर पौर्वात्य और पाश्चात्य दार्शनिकों एवं आचार्यों की व्याख्याएं देने के साथ-साथ लेखक ने आधुनिक संदर्भ में इन परिभाषाओं की सार्थकता पर भी अपने विचार व्यक्त किये हैं।

पहले अध्याय में कला एवं सौंदर्य-शास्त्र के सिद्धांतों की विस्तृत मीमांसा करने के बाद वे ठीक ही लिखते हैं कि आज लगभग सभी रसों में आलंबन तथा उद्दीपन दोनों में विशाल रद्दोबदल तथा विपर्यय हुआ है। पहले के पात्र बहुधा आदर्शात्मक तथा जीवन के केवल शुक्ल-पक्ष को स्वीकार करनेवाले होते थे, पर आज स्थिति बदल गयी है। . . . जीवन तथा समाज में कृष्णपक्ष भी महत्त्वपूर्ण हो गया है।

इसी तरह अगले एक अध्याय में वे अभिव्यंजना की व्याख्या करते हुए प्रतिनिवेदन को उसका एक प्रधान अमली आयाम बताते हैं और कहते हैं कि प्रतिनिवेदनात्मक अभिव्यंजना कृति के साथ युग एवं समाज की भी व्याख्या करती है। 'संप्रेणीषयता' शीर्षक अध्याय में वे कला, भाषा को एक प्रतीकात्मक भाषा निरूपित करते हैं, जिसकी इकाई माध्यम के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है।

समूची पुस्तक अनेक परंपरामान्य परिभाषाओं पर प्रश्न-चिह्न लगाती है तथा पाठक को चिंतन-मनन के लिए कुछ सूत्र सौंपती है। भाषा कहीं-कहीं अवश्य दुरूह प्रतीत होती है।

—दुर्गाप्रसाद शुक्ल

अथातो सौंदर्य-जिज्ञासा

लेखक—डॉ. रमेशकुंतल मेघ, प्रकाशक—मेकमिलन कंपनी ऑव इंडिया, नयी दिल्ली, पृ.—५०४, मूल्य—५२ रु.

अंत के उस पार : एक विचारोत्तेजक उपन्यास है, जिसमें लेखक ने दो पात्रों—विवेक और विद्रोही—के माध्यम से मनुष्य के लिए सही जीवन-दर्शन खोजने की कोशिश की है। समस्त धर्मों और संतों के निरंतर उपदेशों के बावजूद कि

'प्रेम' मनुष्य जाति के जीवन दर्शन का एक अनिवार्य तत्व है, रोजमर्रा की जिंदगी में घृणा और घृणाजन्य प्रतिक्रियाओं का वर्चस्व है। प्रेम की बात करते हुए हम किसी न किसी स्तर पर घृणा में जीते हैं। उपन्यास का एक पात्र विवेक भ्रष्टाचारी, कठोर पिता का उपेक्षित पुत्र होने के बावजूद मृदुल, संवेदनशील है एवं मानवीय प्रेम के प्रति ग्रहणशील है, जबकि विद्रोही की स्थिति और स्वभाव विवेक के बिल्कुल प्रतिकूल है। विद्रोही एक अत्यधिक ममतालु चाचा की छत्रछाया में पला सरचढ़ा युवक है, लेकिन इस वातावरण में पलकर भी वह विध्वंसात्मक है, अकारण घृणा का साकार रूप। इन दोनों पात्रों एवं उनसे संबंधित घटनाओं के माध्यम से लेखक ने समकालीन चिंतन पर एक प्रश्न-चिह्न लगा दिया है कि आखिर मनुष्य का विस्तार कहां है? उपन्यास न केवल रोचक वरन कुछ सोचने के लिए विवश करनेवाला भी है।

छोटे-छोटे महायुद्ध : हमारे निम्न मध्यवर्गीय आम आदमी के उन महायुद्धों का रोचक उपन्यास है जिन्हें वह रोजमर्रा की जिंदगी में छोटी-छोटी आकांक्षाओं-इच्छाओं की पूर्ति के लिए लड़ता है और हारता है। दिल्ली की गंदी बस्ती में, अभावों में जीनेवाले क्लर्क लल्लन बाबू

सफेद दाग से दुखी क्यों?

सफल तेज आयुर्वेदिक इलाज की खोज

यदि आप सफेद दाग के कारण दुखी हैं तो अब निराश न हों। सफेद दाग असाध्य नहीं है। सही इलाज कराने से यह भी दूसरे रोगों की तरह मिट जाता है। हमने सफेद दाग के हजारों रोगियों को रोग से मुक्ति दिलाकर उनके प्रशंसापत्र प्राप्त किया है। कई वर्षों के लगातार मेहनत एवम् खोज के बाद सफेद दाग की चिकित्सा में पूर्ण सफलता प्राप्त की है। यह इतना तेज एवम् प्रभावी है कि इलाज शुरू होते ही दाग का रंग बदलने लगता है और शीघ्र ही रोग के सभी विकारों को खत्मकर दागको चमड़ी के प्राकृतिक रंग में मिला देता है। वैसे मरीज जो कई प्रकार का इलाज करा कर निराश हो गए थे, वे भी हमारे इलाज से अच्छे हुए हैं। यदि आप भी इन दागों के कारण दुखी हैं, और सभी प्रकार का इलाज कराकर निराश हो गए हों, तो भी एक बार अवश्य आजमा कर देखें। रोग विवरण लिखें। अभी प्रचार हेतु एक पैकेट दवा मुफ्त दी जा रही है। चाहें तो स्वयम् आकर मिलें।

हमारा इलाज हजारों रोगियों पर परिक्षित है। अतः विश्वसनीय है।

श्री आयुर्वेदिक फार्मेसी (का) पो० कतरी सराय (गया)

की आकांक्षा है कि अपने होनहार एकमात्र पुत्र राजेन को पढ़ा-लिखाकर अफसर बना सके, लेकिन नहीं। परिस्थितियां उसे इसमें सफल नहीं होने देती और अंत में एक क्लर्क का बेटा क्लर्क ही बनकर उसी अभाव की जिंदगी जीने पर मजबूर हो जाता है, जो उसके बाप ने जी है। उपन्यास में लेखक ने अपने आसपास की जिंदगी, सामाजिक और आर्थिक शोषण तथा विषमताओं व राजनीति के कुचक्रों को भी भलीभांति चित्रित किया है जिसे आज की जिंदगी में हम भोगने के लिए मजबूर हैं।

काफिला : लगभग तीस कहानियों और बाइस लघुकथाओं का सामान्य संकलन हिंदी कथा-साहित्य में एक नये वाद--'सहज-कहानी' की शुरुआत करने का प्रयास लेकर सामने आया है। 'सहज' क्या है, की वकालत करते हुए संपादक ने कहानी-लेखन में इधर आयी कुछ गलत प्रवृत्तियों पर चिंता व्यक्त की है और उनके खिलाफ मुहिम छेड़कर कहानी को सहज और स्वाभाविक दिशा देना हर जागरूक कहानीकार का दायित्व बताया है और इसी दायित्व के निर्वाह के लिए एक नये वाद की पक्षधरता करते हुए उन्होंने 'नवें दशक की दहलीज पर सहज कहानी की धमक काफिला—१' प्रस्तुत किया है।

संपादकीय मंतव्य कुछ भी हो लेकिन संकलन की कहानियां मात्र कहानियां हैं जो किसी वाद की आलंबरदारी नहीं करतीं। नरेंद्र मौर्य, नासिरा शर्मा, बलराम, भगीरथ, महावीर जैन, मालती महावर, रमेश बतरा, सुरेंद्र सुकुमार, कन्हैयालाल नंदन, हिमांशु जोशी, मनमोहन सरल व प्रणवकुमार आदि की कहानियां और पृथ्वीराज अरोड़ा, प्रेम-जनमेजय, प्रचंड सिमर सदोष, धूमकेतु, अभिमन्यु अनत आदि की लघुकथाएं उल्लेखनीय रचनाएं हैं। इसके ऊपर लगाया गया सहज-कहानी का लेबल बेमानी लगता है।

—डॉ. जगदीश चंद्रिकेश

अंत के उस पार

लेखक—उमेश सैगल, प्रकाशक—हिंदी साहित्य संसार, १५४३, अमीरचंद मार्ग, दिल्ली-६, पृ.—१७६, मूल्य—१६ रु.

छोटे-छोटे महायुद्ध

लेखक—रमाकांत, प्रकाशक—सामयिक प्रकाशन, ३५४३ जटवाड़ा, दरियागंज, नयी दिल्ली-२, पृ.—२५६, मूल्य—१६ रु.

काफिला

संपादक : बलराम, प्रकाशक—कहानी अकादमी, १३/१२१ गोविंदनगर, कानपुर, पृ.—१४४, मूल्य—२० रु.

भारतीय राष्ट्रवाद एवं आर्यसमाज आंदोलन : गुप्त एवं गोपनीय सरकारी प्रतिवेदनों, खुफिया रिपोर्टों, विभिन्न शासकीय दस्तावेजों, मुकदमे के फैसलों तथा विषय से संबंधित अन्य प्राप्त सामग्री के गहन अध्ययन एवं अन्वेषण के बाद लिखा

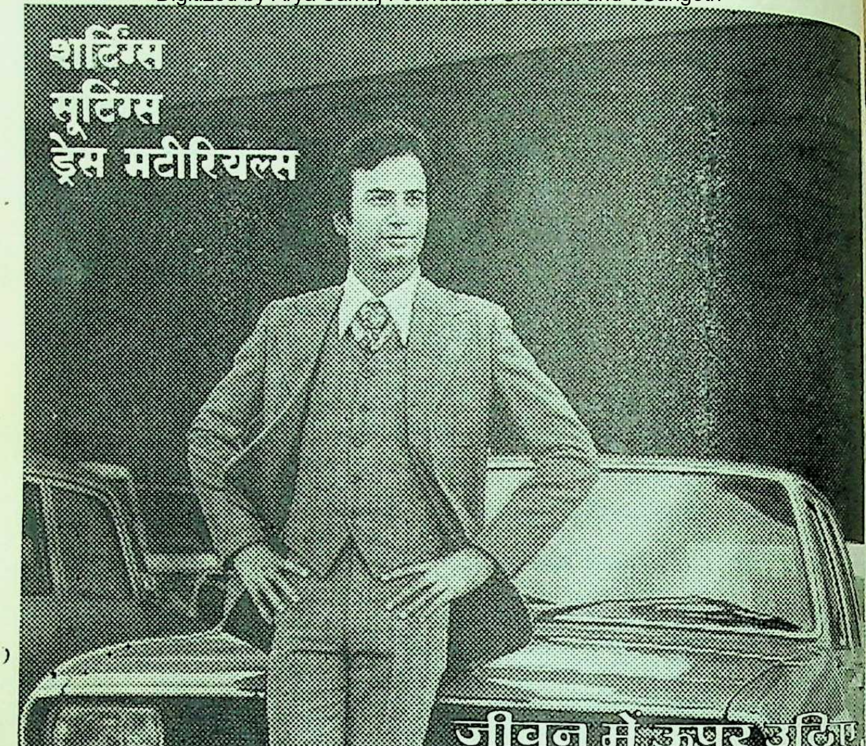

शर्टिंग्स
सूटिंग्स
ड्रेस मटीरियल्स

जीवन में ऊपर उठिए,
आगे बढ़िए

ठाकरसी
की चाल
चलिए

ठाकरसी [illegible]
नया ज़माना, नया तराना

हिंदुस्तान स्पिनिंग एण्ड वीविंग मिल्स लि.
१५, बम्बई समाचार मार्ग, बम्बई ४०००२३

Dattaram HM-8 HIN

गया महत्त्वपूर्ण शोध-प्रबंध है । नौ अध्यायों में विभक्त यह प्रबंध भारतीय राष्ट्रवाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, पुनर्जागरण आंदोलन की विभिन्न प्रवृत्तियों, स्वामी दयानंद के राजधर्म, आर्यसमाज के समाजिक दर्शन एवं राष्ट्रवादी आंदोलन में आर्यसमाज की महत्त्वपूर्ण भूमिका पर अच्छा प्रकाश डालती है। लेखक का निष्कर्ष है कि राममोहन राय, केशवचंद्र सेन, गोपालकृष्ण गोखले और उनके समकालीन अनेक उदारवादी नेता सही अर्थों में राष्ट्रवादी न थे, क्योंकि उनका उद्देश्य राष्ट्र में स्वयं अपनी चेतना उत्पन्न न करना था। इनके विपरीत स्वामी दयानंद, स्वामी विवेकानंद, रवींद्रनाथ टैगोर एवं लाला लाजपत राय जैसे नेता व्यापक अर्थों में राष्ट्रवादी थे। इन राष्ट्रवादियों ने आध्यात्मिक नेतृत्व एवं आंतरिक मनोबल से जनता की मानसिक स्थिति में न केवल क्रांतिकारी परिवर्तन किया, वरन वह सुदृढ़ नींव भी अरोपित की, जिस पर गांधी स्वराज्य का भव्य-भवन निर्मित कर सके।

दयानन्द दिव्य दर्शन : बड़े आकार की, आर्टपेपर पर बहुरंगी चित्रों सहित छपी इस पुस्तक से स्वामी दयानन्द के संपूर्ण जीवन और आर्यसमाज के इतिहास की प्रामाणिक झलक मिलती है। पुस्तक इतनी सरल और रोचक भाषा में लिखी गयी है कि साधारण पढ़े-लिखे व्यक्ति और बच्चे भी इसे पढ़कर भारत के एक युग-पुरुष के बारे में अपनी जानकारी में पर्याप्त वृद्धि कर सकते हैं। १८५७ के पूर्व और पश्चात के भारत में हिंदू जाति के अधःपतन का भी इसमें चित्रण है कि किस प्रकार हमारे समाज को विभिन्न मत-मतांतरों, अंध-विश्वासों, सती तथा कन्यावध-जैसी कुप्रथाओं, पारस्परिक फूट, गौरवशाली वैदिक ज्ञान की विस्मृति और विधर्मियों के बढ़ते प्रभाव ने नितांत जर्जरित कर दिया था । स्वमीजी ने समस्त देश का भ्रमण कर हिंदू-समाज में एकता, आत्मविश्वास तथा वेदों में आस्था का मंत्र फूंका और धर्म के नाम पर प्रचलित कुरीतियों के उन्मूलन का प्रयास किया। इस सिलसिले में अन्य धर्मों को भी नहीं छोड़ा; किंतु विभिन्न धर्मावलंबियों से उन्हें कोई बैर नहीं था। इसका प्रमाण यह है कि लाहौर में आर्यसमाज की स्थापना डॉ. रहीम खां की कोठी पर ही यज्ञ-हवनादि के बाद हुई, जहां वे ठहरे थे। आगरे में एक गिरजाघर के द्वार पर ईसाइयों ने उनका स्वागत किया था।

लेखक ने इस बात की ओर संकेत किया है कि १८५६-'५८ में स्वामीजी की गतिविधियों के बारे में जानकारी नहीं के बराबर है । इतना ही ज्ञात है कि उन्होंने सैनिक छावनियों की यात्रा की थी, ताकि अंगरेजों के प्रति भारतीय सैनिकों के आक्रोश का सही पता चल सके। इससे यह निष्कर्ष निकाला जा

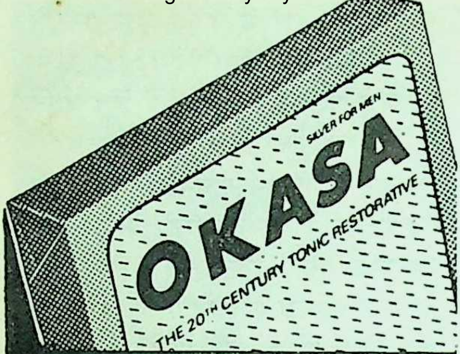

भरपूर
ज़िंदगी
के लिए
ताक़त

जीवन की खुशियाँ हैं ताक़त और तंदुरुस्ती. इनके लिए ओक़ासा में शामिल हैं ६ बायोकेमिकल्स, ६ खनिजद्रव्य, १० ज़रूरी विटामिन तथा अश्वगंधा और योहिम्बाइन जैसी अनमोल जड़ीबूटियाँ. जीवन को स्फूर्ति और उत्साह से भर दीजिए-ओकासा की मशहूर चांदी चढ़ी टॉनिक टिकियाँ लीजिए.

अब नया पॅकेट, इस्तेमाल में आसान

ओकासा

सभी बड़े-बड़े केमिस्टों के यहाँ मिलती है
ओकासा की मुफ़्त पुस्तिका के लिए लिखिए:
OKASA CO. PVT. LTD.,
P. B. No. 396, Bombay 400 001.

O53

लता है कि उन्होंने १८५७ की रा क्रांति में कोई महत्त्वपूर्ण भाग लि होगा। विशेषतया इस दृष्टि से भी कि उनके गुरु विरजानंद के क्रांतिकारियों से संपर्क के वारे में अनेक प्रमाण मिले हैं। इतिहासकारों व अनुसंधानकर्ताओं को भारतीय इतिहास के इन छिपे पृष्ठों को खोलने का प्रयास करना चाहिए।

पुस्तक के लेखक क्षितीश वेदालंकार हिंदी के जाने-माने पत्रकार एवं साहित्यकार हैं। तथ्यों के जुटाने में उन्होंने भा परिश्रम किया है।

—कृष्णचन्द्र शर्मा

भारतीय राष्ट्रवाद एवं आर्यसमाज आंदोलन

लेखक—डॉ. विजेन्द्रपाल सिह, प्रकाशक—विभू प्रकाशन, साहिबाबाद, पृ.—१७६, मूल्य—३० रु.

दयानन्द दिव्य दर्शन

रचयिता—क्षितीश वेदालंकार, प्रकाशक-सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, महर्षि दयानन्द भवन, रामलीला मैदान, नयी दिल्ली, पृ.—१६० मूल्य—५१. रु.

एक सुंदर युवती ने एक कंपनी में सेक्रेटरी की नौकरी के लिए आवेदन किया। उसके इंटरव्यू के पहले एक क्लर्क ने उसकी शिक्षा-योग्यता आदि विवरण उससे मांगा। इस पर उस युवती ने चहकते हुए कहा, "तुम्हें क्या बताना! अपने बास को आने दो, वह स्वयं जान लेगा मेरी योग्यता!"

गोष्ठी

सुषमा भंडारी, जोधपुर : 'स्ट्रेप्टोमाइसीन' का अविष्कार कब, किसने और किस प्रकार किया ?

'स्ट्रेप्टोमाइसीन के आविष्कारक थे डॉक्टर सेलमन ए. वाक्समन, जो एंटीबायोटिक्स के जन्मदाता माने जाते हैं। सन १८८८ में यूक्रेन (रूस) के एक यहूदी परिवार में जन्मे डॉ. वाक्समन न्यूजर्सी (अमरीका) में ब्रंसविक के रट्जर्स विश्वविद्यालय में माइक्रोबायोलाजिस्ट थे। मिट्टी पर अनुसंधान करते हुए उन्होंने पाया कि मिट्टी में असंख्य माइक्रोब और बैक्टीरिया रहते हैं, जिनमें परस्पर युद्ध चलता रहता है और उनकी एक उपजाति दूसरी उपजाति की विनाशक हो सकती है। माइक्रोबों में उन्हें कुछ ऐसे जीव मिले जो आचरण तो बैक्टीरिया की तरह करते थे, लेकिन देखने में फंफूद जैसे थे। ये जीव 'एक्टिनोमाइसिटेस' कहलाते हैं। डॉक्टर वाक्समन ने इनका अध्ययन करके इनकी कई उपजातियां' खोज निकालीं, जिनमें 'स्ट्रेप्टोमाइसीन' के निर्माण में काम आनेवाली उपजाति भी थी। 'स्ट्रेप्टोमाइसीन' का आविष्कार उन्होंने १९४३ में किया। इसके लिए १९५२ में उन्हें नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इसका आविष्कार उन्होंने कैसे किया, यह उनके ही शब्दों में इस प्रकार है—हमने १०,००० माइक्रोबों को छांटकर उनकी रोगाणुओं को मारने की क्षमता का पता लगाया। १० प्रतिशत में यह क्षमता पायी गयी। उन १,००० माइक्रोबों के संवर्ध (कल्चर) तैयार करने का यत्न किया गया तो उनमें से केवल १० प्रतिशत ऐसे निकले जिनके संवर्ध बन सकते थे। उन १०० माइक्रोबों में से हमने रसायन निकालने के प्रयोग किये और १० रसायन बनाने में सफल हुए। उन्ही दस में से एक का नाम है—'स्ट्रेप्टोमाइसीन।'

कुशलसिंह, हापुड़ : वेयर हाउसिंग कारपोरेशन के सरकारी गोदामों में अनाज रखवाने का क्या तरीका है ?

इन गोदामों में अनाज ही नहीं, हर तरह का माल कुछ किराया देकर रखा जा सकता है। परिमाण, आयतन और मूल्य के अनुसार अलग-अलग जिंसों का अलग-अलग किराया लगता है। माल लाने और ले जाने के लिए परिवहन का प्रबंध भी ये गोदाम किराया लेकर कर देते हैं। माल के चोरी चले जाने या आग लग जाने या कीड़ा आदि लगने पर उसके नष्ट हो जाने पर होनेवाली क्षति की पूर्ति के लिए माल का बीमा होता है जिससे ऐसी स्थितियों में माल रखनेवाले को हरजाना मिल जाता है। माल रखवाने

रु. 6650 में लंदन बस पर सैर का मज़ा.

रु. 5850 में मज़ेदार इटालियन खाने का लुत्फ़.

रु. 6590 में स्विट्ज़रलैंड के शीतल प्राकृतिक सौंदर्य का आनन्द.

रु. 6600 में मोनालिसा की मोहक मुस्कान का रहस्य.

रोम, जिनेवा, पेरिस, लंदन. साथही हमारे वापसी ट्रिपवाले एक्सकर्शन फ़ेयर पर और भी कई शहर.

मिलान—रु. 6099. ब्रुसेल्स या प्राग या वार्सा—रु. 6600.

यूरोप के लिए सभी एक्सकर्शन फ़ेयर 14 से 90 दिनों तक के लिए मान्य हैं, तथा रास्ते में किसी एक जगह रुकने की सुविधा भी है. भारत—यू. के. फ़ेयर 21 से 90 दिनों के लिए मान्य हैं और रु. 7350 देने पर रास्ते में किसी एक जगह रुकने की सुविधा भी मिलती है.

सभी एक्सकर्शन फ़ेयर बम्बई/दिल्ली से ही यात्रा प्रारंभ करने के लिए हैं. दूसरी जानकारी के लिए अपने ट्रैवेल एजेंट या एयर-इंडिया से संपर्क कीजिए.

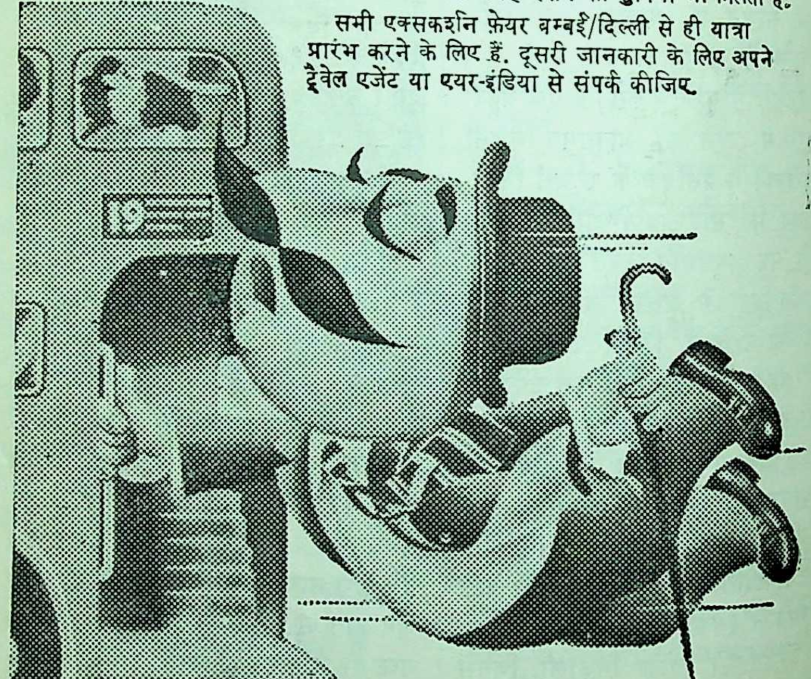

एयर-इंडिया

शुभ यात्रा...शुभ संदेश

AI-3908 A

समय गोदामों में माल की किस्म, वजन आदि की जांचपड़ताल करके दो 'सेंपल' बनाये जाते हैं, जिनमें से एक उस माल की रसीद के साथ माल रखवानेवाले को दे दिया जाता है और दूसरा गोदाम में रख लिया जाता है। माल वापस निकलवाते समय रसीद और 'सेंपल' वापस देना होता है, जिसका मिलान करके माल वापस कर दिया जाता है। माल की रसीद पर माल की किस्म, वजन, कीमत, रखवानेवाला का नाम, पता आदि सब लिखा रहता है। इस रसीद को बैंक में देकर माल की कुल कीमत की ६० प्रतिशत रकम वहां से प्राप्त की जा सकती है।

श्रीपाल 'मौजी' : निदर्शनात्मक तर्कणा (Demonstrative Reasoning) **और सत्याभासी तर्कणा** (Plausible Reasoning) **में क्या अंतर है?**

जीवन की सामान्य गतिविधियों से लेकर अत्यंत जटिल वैज्ञानिक गतिविधियों तक में हम दो प्रकार की तर्कपद्धतियां अपनाते हैं। एक पद्धति तथ्यों के आधार पर निश्चयात्मक निष्कर्ष निकालने की है तो दूसरी तथ्याश्रित संभावनाओं के आधार पर अनिश्चयात्मक निष्कर्षों को स्वीकार करके चलने की। निश्चयात्मक निष्कर्ष तथ्यों के आधार पर पूर्वसिद्ध होते हैं, जबकि अनिश्चयात्मक निष्कर्षों को अनुसंधान, प्रयोग, परीक्षण आदि के द्वारा सत्य सिद्ध करना होता है। संक्षेप में कहें तो तथ्य और संभावना में जो अंतर है, वही निदर्शनात्मक और सत्याभासी तर्कणा में। निदर्शनात्मक तर्कणा विश्वसनीय, प्रामाणिक और अंतिम (फाइनल) होती है और उसमें मतभेदों की गुंजाइश नहीं होती, जबकि सत्याभासी तर्कणा ऊपर से सत्य एवं विश्वसनीय लगते हुए भी सर्वथा प्रामाणिक नहीं होती और उसके बारे में मतभेदों की गुंजाइश बनी रहती है। परंतु ज्ञान-विज्ञान के विकास के लिए दोनों प्रकार की तर्कणाएं उपयोगी होती हैं। यद्यपि निदर्शनात्मक तर्कणा विज्ञान का अनिवार्य अंग है, तथापि उससे हमें कोई नया ज्ञान प्राप्त नहीं होता। नये ज्ञान के लिए हमें हमेशा सत्याभासी तर्कणा का आश्रय लेना पड़ता है। विज्ञान के समस्त आविष्कार प्रायः तथ्याश्रित संभावनाओं पर आधारित अनिश्चयात्मक निष्कर्षों अथवा मान्यताओं से शुरू होते हैं। उनके लिए प्राकृतिक नियमों के अनुसार आवश्यक प्रमाण जुटा लेना ही वस्तुतः एक नया आविष्कार है। उदाहरण के लिए 'पक्षी उड़ते हैं', एक तथ्य था, लेकिन जब इस तथ्य के आधार पर यह सोचा गया कि 'पक्षियों की भांति मनुष्य भी आकाश में उड़ सकता है' तो यह एक तथ्याश्रित संभावना पर आधारित सत्यभासी तर्कणा हुई, और जब इस सत्याभास को निश्चित सत्य अथवा तथ्य में परिणत करते हुए प्राकृतिक नियमों के अनुसार विमान का अविष्कार कर लिया गया, तो एक संभावना तथ्य में

पहला
जल्दी
नहीं

दूसरा
अभी
नहीं

माता पिता
के लिए
नेक सलाह

तीसरा
कभी
नहीं

अपने पास के परिवार नियोजन केन्द्र,
प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र या ग्राम स्वास्थ्य सहायक
से सलाह और सामान लीजिए
आज ही उनके पास जाइए

davp 78/495

और सत्याभासी [illegible] [illegible] तर्कणा में बदल गयी ।

नंदनी सक्सेना, बदायूं : 'पिकारेस्क' (Picaresque) क्या होता है ?

'पिकारेस्क' स्पेनी भाषा के 'पिकारो' (Picaro) शब्द से बना है, जिसका अर्थ होता है—यायावर। तदनुसार पिकारेस्क' का अर्थ है यायावर-वृत्त, अथवा ऐसी कथा जिसमें किसी घुमक्कड़ का जीवन-वृत्त हो। साहित्यिक इतिहासों में यायावर-वृत्त के सर्वप्रथम उदाहरण के रूप में स्पेनी भाषा के किसी अज्ञात लेखक द्वारा लिखित 'ला विदा दे लाजरिलो दे तोरमेस' (अर्थात लाजारिलो दे तोरमेस का जीवन-वृत्त) नामक कृति की चर्चा की जाती है, जो १५५४ ई. में प्रकाशित हुई थी। यह यायावर-वृत्त इतना लोकप्रिय हुआ कि सभी यूरोपीय देशों में यायावर-वृत्त लिखे जाने लगे। सरवांटीज का 'डान किहोटे,' फील्डिंग का 'जेसेफ एंड्ज' तया मार्क ट्वेन का 'हकलबरी फिन' आदि यायावर-वृत्त की परंपरा में लिखे गये उपन्यास हैं। यायावर-वृत्त की एक प्रमुख विशेषता यह होती है कि इसका नायक अपनी यात्राओं के जरिए जन-जीवन के विस्तृत चित्र उपस्थित करता है और उच्च-वर्ग के सामाजिक तथा नैतिक मूल्यों से साधारण जनता के जीवन-मूल्यों की तुलना करके यह सिद्ध करता है कि बाह्य-दृष्टि से उच्च-वर्ग भले ही अधिक सभ्य और सुसंस्कृत दिखायी दे, लेकिन मानवीय गुण वास्तव में साधारण जन-जीवन में ही पाये जाते हैं।

संतोष कुमार सिन्हा, मुजफ्फरपुर : 'कैंप डेविड की भावना' क्या है ?

'कैंप डेविड' वस्तुतः अमरीकी राष्ट्रपतियों के लिए बनी आरामगाह है। यह वाशिंगटन के दक्षिण-पूर्व में ७५ मील की दूरी पर स्थित है, जहां हेलीकॉप्टर से आधे घंटे में पहुंचा जा सकता है। १४३ एकड़ के घेरे में मेरीलैंड्स केटोक्टिन पर्वतों की एक १,८८० फुट ऊंची पहाड़ी पर घने जंगल के बीच बनी इस आरामगाह का निर्माण १९३९ में किया गया था। इसका मूल नाम 'हाइ-केटोक्टिन' था। राष्ट्रपति फ्रैंकलिन रूजवेल्ट ने जेम्स हिल्टन की एक तत्कालीन लोकप्रिय पुस्तक में वर्णित हिमालयी स्वर्ग के नाम से प्रेरित होकर इसका नामकरण 'शांग्री-ला' किया, लेकिन १९५३ में आइजनहावर ने अपने पांच वर्षीय पोते के नाम पर इसका नाम 'कैंप डेविड' रख, १९५९ में सोवियत प्रधानमंत्री निकिता खुश्चेव को यहां ठहराया और विश्व-शांति के लिए निशस्त्रीकरण के बारे में उन दोनों में सहमत हुई।

चलते-चलते एक प्रश्न और...

अरविंद कुमार कोमल, बिलासपुर : 'अक्ल के दुश्मन' तो बहुत सुनने में आते हैं, 'अक्ल के दोस्त' क्यों नहीं ?

अक्ल के दुश्मन उनकी चर्चा करना नहीं चाहते। —बिंदु भास्कर

अब एक बढ़िया आधुनिक शॅम्पू आप के परिवार के हर सदस्य के लिए सचमुच किफायती दाम प

एक सुन्दर अटूट बोतल में सुरक्षित और सुविधा दायक
Palmolive
FAMILY
Shampoo
Good, rich shampoo for your family

नया पामऑलिव फॅमिली शॅम्पू

आज का शॅम्पू : बढ़िया और गाढ़ा यह नया पामऑलिव फॅमिली शॅम्पू न अधिक गाढ़ा है और ना ही ज्यादा पतला किसी भी प्रकार के पानी में भरपूर झाग पैदा करनेवाला।

हर एक के बालों की सुरक्षा : नया पामऑलिव फॅमिली शॅम्पू आप के परिवार के हर सदस्य के लिये विशेष प्रकार से उपयुक्त बनाया गया है, यह छोटे बच्चों के बालों के लिये कोमल है। आपके बालों को मुलायम और चमकदार बनाता है। बालों को बिना रूखापन दिये साफ करता है। आप के घरवालों के लिये भी योग्य।

सचमुच कम दाम पर : जी हाँ—नया पामऑलिव शॅम्पू आप के सम्पूर्ण परिवार के लिये अति सुख दायक, अच्छा और बढ़िया शॅम्पू—अन्य प्रकार के शॅम्पूओं से कम दाम पर।

पामऑलिव फॅमिली शॅम्पू—उत्तम शॅम्पू आप के परिवार के लिये

Shilpi dm 15 A/78 Hin

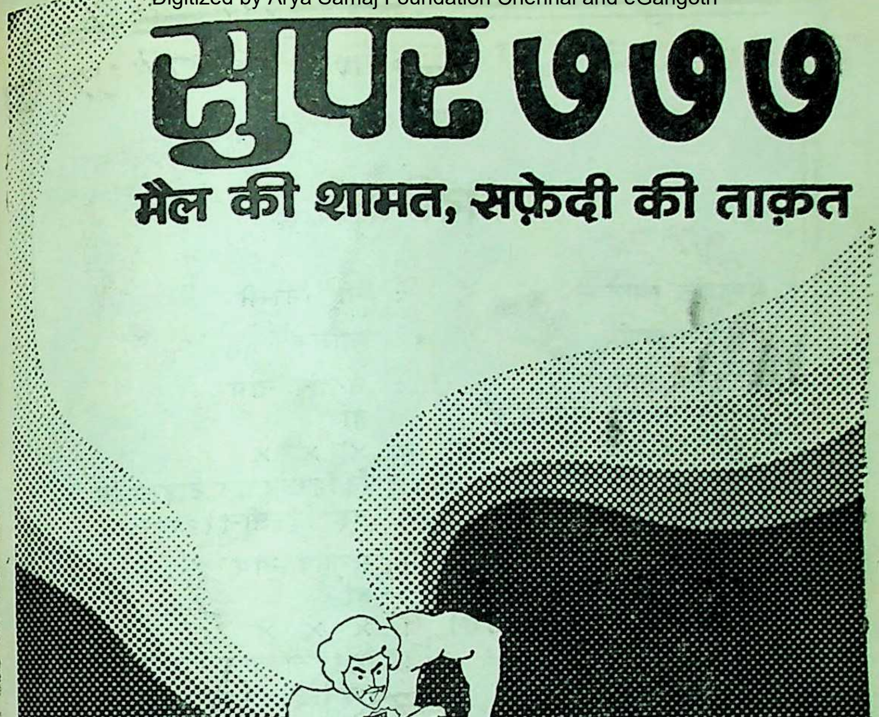
सुपर
777
SUPER 777
detergent washing bar
स्वास्तिक
सुपर
777
डिटर्जेंट धुलाई की बार
SUPER 777
SWASTIK

सुपर ७७७

मैल की शामत, सफ़ेदी की ताक़त

भारत की लाखों गृहणियों की पसन्द
सुपर ७७७ डिटर्जेण्ट धुलाई की बार

पैसा बचाओ, सफ़ेदी बढ़ाओ

Shilpi dm 15 A/78 Hin

फार्म - IV

(नियम ८ देखिए)

कादम्बिनी

१. प्रकाशन स्थान	:	नई दिल्ली
२. प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३. मुद्रक का नाम	:	सन्तोष नाथ
क्या भारत का नागरिक है	:	हां
(यदि विदेशी है तो मूल देश)	:	× × ×
पता	:	दि हिन्दुस्तान टाइम्स लि., नई दिल्ली-११०००१
४. प्रकाशक का नाम	:	सन्तोष नाथ
क्या भारत का नागरिक है	:	हां
(यदि विदेशी है तो मूल देश)	:	× × ×
पता	:	दि हिन्दुस्तान टाइम्स लि., नई दिल्ली-११०००१
५. सम्पादक का नाम	:	राजेन्द्र अवस्थी
क्या भारत का नागरिक है	:	हां
(यदि विदेशी है तो मूल देश)	:	× × ×
पता	:	दि हिन्दुस्तान टाइम्स लि., नई दिल्ली-११०००१
६. उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।	:	दि हिन्दुस्तान टाइम्स लि., नई दिल्ली-११०००१

मैं, सन्तोष नाथ, एतद्द्वारा घोषित करता हूं कि मेरे अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

ह०/- सन्तोष नाथ
प्रकाशक।

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से सन्तोष नाथ द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

चलते चलते

सुशील कालरा

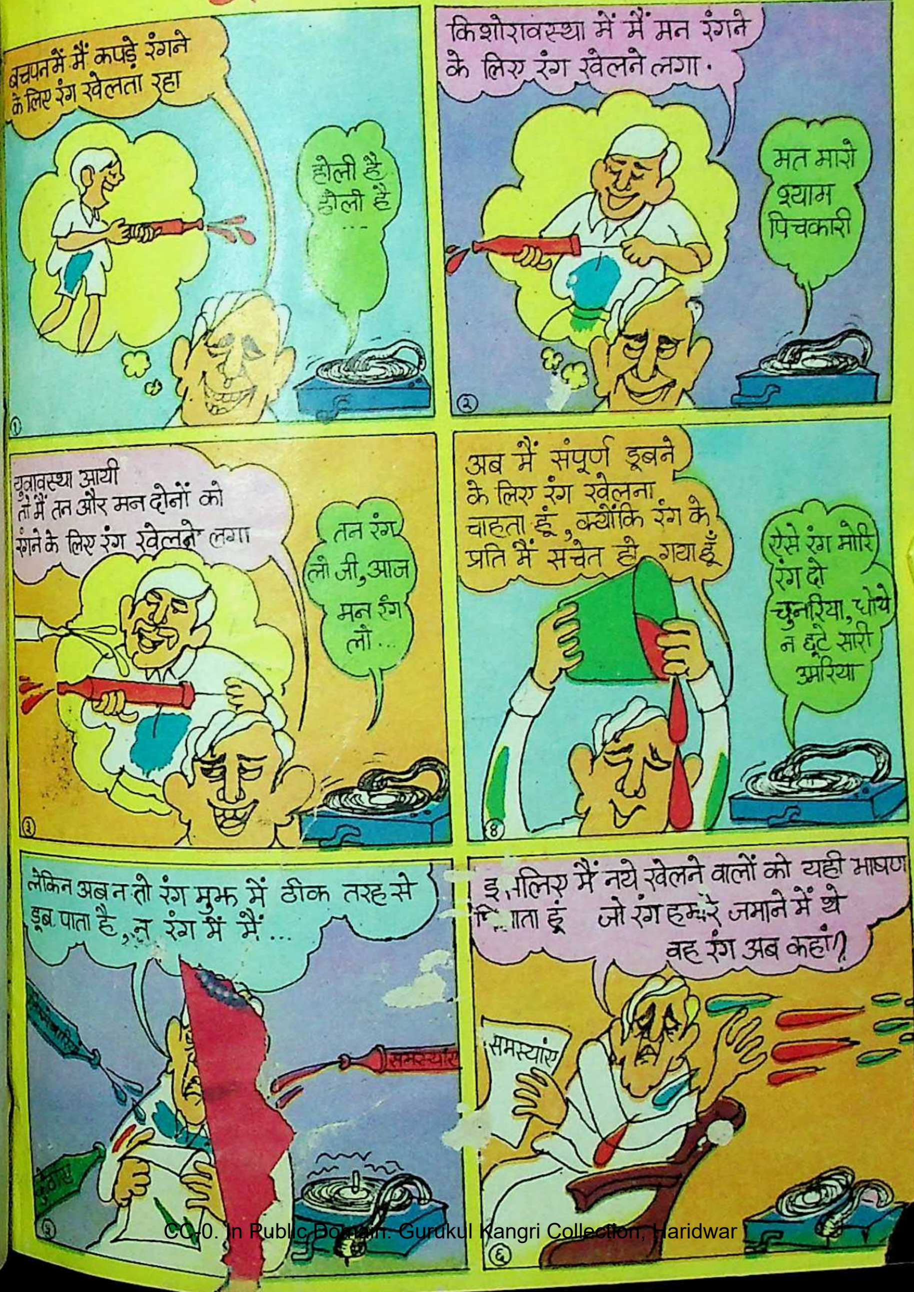
बचपन में मैं कपड़े रंगने के लिए रंग खेलता रहा
होली है होली है ...
①
किशोरावस्था में मैं मन रंगने के लिए रंग खेलने लगा.
मत मारो श्याम पिचकारी
②
युवावस्था आयी तो मैं तन और मन दोनों को रंगने के लिए रंग खेलने लगा
तन रंग लो जी, आज मन रंग लो ...
③
अब मैं संपूर्ण डूबने के लिए रंग खेलना चाहता हूं, क्योंकि रंग के प्रति मैं सचेत हो गया हूं
ऐसे रंग मोरी रंग दो चुनरिया, धोये न छूटे सारी उमरिया
④
लेकिन अब न तो रंग मुझ में ठीक तरह से डूब पाता है, न रंग में मैं ...
समस्याएं
⑤
इसलिए मैं नये खेलने वालों को यही भाषण [illegible] हूं जो रंग हमारे जमाने में थे वह रंग अब कहां!
समस्याएं
⑥

मफतलाल
सूटिंग,
शर्टिंग, साड़ियां
ड्रेस मटीरियल
और डेनिम
MAFATLAL GROUP
मफतलाल के कपड़े – अमर भारतीय [illegible] के रंग

S.N.
5/3/79

कादम्बिनी

भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका

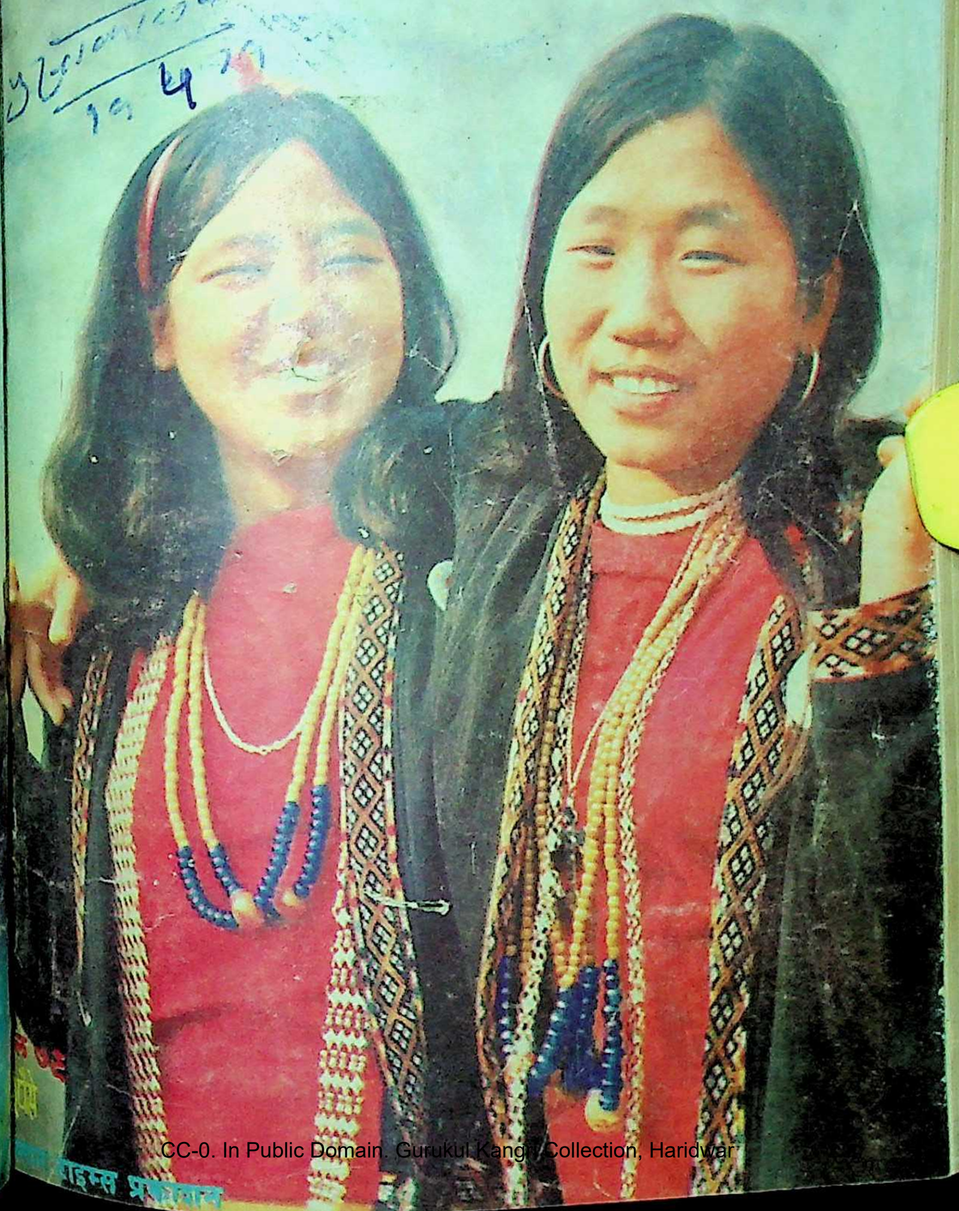

टाइम्स प्रकाशन

डाबर

"बच्चे का पालन-पोषण करना आसान काम नहीं है। बच्चों के पेट में ऐठन, अपचन, गैस, अफारा तो होता ही रहता है।

"ऐसे वक्त पर डाबर ग्राइप वाटर ही काम आता है। इसके आराम दायक, रोगाणु रोधक असर से बच्चे को तुरन्त आराम मिलता है।

"इसलिये जब भी मेरा बच्चा अपच या गैस के कारण रोता है मैं उसे तुरन्त ही डाबर ग्राइप वाटर देती हूँ...

ग्राइप
वाटर
GRIPE
WATER
ग्राइप वाटर

"डाबर ग्राइप वाटर से बच्चे की खोई हुई मुस्कान लौट आती है"

शरीर संवर्धन में संसार का सर्व प्रथम

बुलवर्कर के साथ

७४ रु. मूल्य की मुफ़्त भेंट*

*बुलवर्कर स्पोर्टस शर्ट नवीनतम डिज़ायन व उच्चकोटि के इजिप्शियन सूत से बना कभी कभी पहनने व व्यायाम करते समय के लिए आदर्श तीन नापों में प्राप्त

*बुलवर्कर कैरिंग केस टिकाऊ व उत्तम किस्म का बना

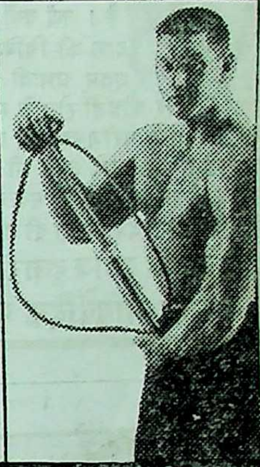

यह योजना १० दिनों के भीतर कूपन भेजने पर ही मान्य होगी।

मेल ऑर्डर सेल्स प्रा. लि. (ऑर्डर विभाग BWC-POR-H)
१५ मैथ्यू रोड, बम्बई ४०० ००४.

कृपया १४ दिनों की मुफ़्त आज़माइश के अंतर्गत मेरा बुलवर्कर भेजिए यदि मैं पूर्णतया परिणामों से सन्तुष्ट नही हुआ तो मैं आज़माइश अवधि के अन्दर अपनी रकम (पोस्टेज़ व अन्य खर्च काटकर) वापिस पाने के लिए शीघ्र ही सबकुछ लोटा दुँगा।

KD-11

(कृपया उचित चौकार में ☑ निशान लगाइये)

☐ रजि. पोस्ट पार्सल द्वारा भेज दीजिए मैं रु. २४४ (साथ रु. १५ डाक खर्च व अतिरिक्त खर्च) चैक/ड्रॉफ्ट/आई.पी.ओ. द्वारा भेज रहा हूँ। मनीऑर्डर नं. .... तारीख............ ☐ वी.पी.पी. द्वारा भेज दीजिए। डिलीवरी के समय पोस्टमेन को रु. २५९ देने का वचन देता हूँ।

स्पोर्ट शर्ट का नाप ☐ **छोटा** ☐ **मध्यम** ☐ **बड़ा**

नाम ....

पता ....

.... हस्ताक्षर ....

मुख्य-मुख्य स्टोर्स एवं उपरलिखे पते पर हमारे शो-रूम से प्राप्त

सफेद दाग से दुखी क्यों?

सफल तेज आयुर्वेदिक इलाज की खोज

यदि आप सफेद दाग के कारण दुखी हैं तो अब निराश न हों। सफेद दाग असाध्य नहीं है। सही इलाज कराने से यह भी दूसरे रोगों की तरह मिट जाता है। हमने सफेद दाग के हजारों रोगियों को रोग से मुक्ति दिलाकर उनके प्रशंसापत्र प्राप्त किया है। कई वर्षों के लगातार मेहनत एवम् खोज के बाद सफेद दाग की चिकित्सा में पूर्ण सफलता प्राप्त की है। यह इतना तेज एवम् प्रभावी है कि इलाज शुरू होते ही दाग का रंग बदलने लगता है और शीघ्र ही रोग के सभी विकारों को खत्मकर दागको चमड़ी के प्राकृतिक रग मे मि देता है। वैसे मरीज जो कई प्रकार का इलाज करा कर निराश हो गए थे, वे भी हमारे इला से अच्छे हुए हैं। यदि आप भी इन दागों के कारण दुखी हैं, और सभी प्रकार का इलाज करा निराश हो गए हों, तो भी एक बार अवश्य आजमा कर देखें। रोग विवरण लिखें। अभी प्रचार हेतु एक पैकेट दवा मुफ्त दी जा रही है। चाहें तो स्वयम् आकर मिलें।

हमारा इलाज हजारों रोगियों पर परिक्षित है। अतः विश्वसनीय है।

श्री आयुर्वेदिक फार्मेसी (का) पो० कतरी सराय (गया)

सफेद दाग का इलाज

सफल तेज असर-कारक इलाज का खोज

इसने सफेद दाग के हजारों रोगियों को रोग मुक्ति दिलाकर अनेक प्रशंसा पत्र प्राप्त किया है। वर्षों लगातार परिश्रम एवं खोज के बाद सफेद दाग के इलाज पर पूर्ण सफलता प्राप्त की है। यह इतनी तेज असर कारक है कि इसके शुरु होते ही दागों का रंग बदलने लगता है और शिघ्र ही रोग होने वाले सभी कारणों को रोक कर, दागों को चमड़े के रंगों में मिला देता है। हमने काफी ऐसे मरीजों को जो यह सोचकर कि अब मेरा दाग नहीं मिटेगा, बैठ गये थे उन्हें भी जड़ से छुटकारा दिलाया है। हजारों ने लाभ पाया हैं और नित्य पा रहे हैं। अभी प्रचार हेतु एक फायल दवा मुफ्त दी जा रही है। यदि आप अनेक प्रकार से निराश हो गये हों, तो भी इसे एक बार अवश्य आजमा कर देखें। दाग कहाँ-कहाँ कितने बड़े एवं कितने दिनों से हैं, अवश्य लिखें। चाहें तो आकर मिलें।

इलाज का दावा कोई भी कर सकता है विश्वास लाभ देख कर करें।

पता :- भारत आयुर्वेदाश्रम, पो० कतरी सराय (गया) भारत

शीतल!
आकर्षक!
सुखद!
गोडीकाटन
आपकी प्रिय फ़ैब्रिक
सहयोग से प्रस्तुत

आस्था के आयाम

कोशिश तो करो

सौराष्ट्र के एक स्कूल की क्रिकेट टीम के खिलाड़ी बेहद परेशान थे। कारण टीम का फास्ट बॉलर—तेज गेंद फेकनेवाला खिलाड़ी—गायब था। उसके अभाव में टीम का मनोबल टूट रहा था। यह देखकर स्कूल के प्रिंसिपल ने टीम के ऑफ स्पिनर गेंद फेकनेवाले खिलाड़ी को सलाह दी, "तुम्हीं क्यों नहीं तेज गेंद फेकते ?" खिलाड़ी थोड़ा हिचकिचाया तो प्रिंसिपल ने कहा, "कोशिश तो करो।"

खिलाड़ी नें कोशिश की और तेज गेंद फेककर पांच खिलाड़ी आउट किये। उसकी हिम्मत बढ़ी और भारत को एक फास्ट बॉलर मिला। उस खिलाड़ी का नाम है—करसन घावरी, जिसने पिछले दिनों वेस्ट इंडीज के साथ खेली टेस्ट श्रृंखला में अनेक विकेट लिये।

एक अति सामान्य बिंदु

ज्योतिर्विदों के एक सम्मेलन में एक प्रख्यात ज्योतिर्विद ने अलबर्ट आइंस्टीन से कहा, "एक ज्योतिर्विद के लिए मनुष्य कुछ नहीं है—अनंत ब्रह्मांड में एक अति-सामान्य बिंदु मात्र !"

"मैं भी यही सोचता था।" आइंस्टीन ने उत्तर दिया, "पर एक दिन मैंने यह भी अनुभव किया कि यही अति-सामान्य बिंदु—मनुष्य—ज्योतिर्विद भी है, जिसने अनंत ब्रह्मांड के रहस्यों को उजागर किया है।"

अपंगों के लिए काम

डेनमार्क की शाही सेना के एक अधिकारी स्टिग गुल्डबर्ग के दोनों हाथ एक बारुद-विस्फोट में उड़ गये। स्टिग गुल्डबर्ग चाहता तो सरकार की ओर से मिलनेवाली पेंशन से वह घर में बैठे-बैठे आराम से जिंदगी गुजार सकता, पर उसने संकल्प किया कि वह अपंग

लोकतंत्र की परख

तिब्बत पर चीनी आधिपत्य के खिलाफ राष्ट्रसंघ में दलाई लामा का पक्ष रखने श्री पुरुषोत्तमदास त्रिकमदास न्यूयार्क जाना चाहते थे, पर उन्हें सरकार विदेशी मुद्रा नहीं दे रही थी। नाराज होकर उन्होंने तत्कालीन प्रधानमंत्री नेहरू को एक कड़ा पत्र लिखा—'कैसा लोकतंत्र है आपका ! मैं दलाई लामा का समर्थन करने राष्ट्रसंघ जाना चाहता हूं, और सरकार मेरे विरोध के भय से विदेशी मुद्रा नहीं दे रही है।'

नेहरूजी ने पत्र पढ़ा और तुरंत आदेश दिया कि श्री पुरुषोत्तम त्रिकमदास जितनी विदेशी मुद्रा चाहते हैं, उन्हें दे दी जाए।

बच्चों में व्याप्त हीन-भावना को दूर करेगा, उन्हें जीना सिखायेगा। गुल्डबर्ग ने अपंग बच्चों के शिविर आयोजित किये और उनमें आत्म-विश्वास पैदा किया। ऐसे ही एक शिविर में दो अपंग बच्चों के बीच हुई बातचीत, "गुल्डबर्ग के हाथ बारूद में न उड़ गये होते तो वे आज शाही सेना में जनरल होते।"

"पर तब हम लोगों का क्या होता? हम-जैसे अपंग बच्चों में आत्म-विश्वास कौन भरता?"

क़िले का किस्सा

गयासुद्दीन तुगलक तब सुलतान नहीं, शहंशाह का एक अदना कर्मचारी था। एक दिन जब वह शहंशाह के साथ दिल्ली के निकट एक स्थान से गुजर रहा था तो उसके दिमाग में एक विचार कौंधा और उसने तत्काल कहा, "जहांपनाह, यह स्थान तो किसी किले के लिए बहुत मौजूं है। यहां एक किला बनवाइए।"

शहंशाह ने उपेक्षा से उसकी ओर देखा और फिर व्यंग्य से कहा, "ठीक है, ठीक है, जब तू शहंशाह बनना तब यहां किला बनवाना।" गयासुद्दीन के कलेजे में यह बात तीर-सी चुभी।

परिस्थितियों का खेल। गयासुद्दीन सुलतान बना और उसने उसी स्थान पर एक किला बनवाया—दिल्ली से २० किलोमीटर दूर बना तुगलकाबाद का वह किला है, जहां बाद में गयासुद्दीन ने अपने कुत्ते की समाधि भी बनवायी।

आदर्श की बलिवेदी पर

वह बंदरगाह के पास बने केबिन में रातभर पढ़ता-लिखता रहता और दिन में गोदी-मजदूरों के बीच चेतना उत्पन्न करने के लिए भाषण देता, उन्हें पढ़ाता। गोदी मजदूरों को स्वप्न में भी यह गुमान न था कि वह युवक एक संपन्न-परिवार का बेटा है। एक दिन उसे अपनी पार्टी की ओर से आदेश मिला कि वह स्पेन में फासिस्टों के जारी संघर्ष में भाग ले। पार्टी के आदेश पर वह स्पेन गया और वहां फासिस्टों के खिलाफ लड़ता मारा गया। अठ्ठाइस वर्षीय इस युवक का नाम था—क्रिस्टोफर काल्डवेल, जिसकी मार्क्सवादी चिंतन पर आधारित पुस्तकें 'इल्यूजन ऐंड रियेलिटी,' 'ए स्टडी इन डाइंग कल्चर' आज भी पढ़ी जाती हैं।

और सफर में

यात्रियों से ठसाठस भरी ट्रेन। एक 'सूरदास' मूंगफली की पुड़िया बेचते हुए मख्मूर देहलवी की एक गजल गा रहे हैं—

हर एक रंज में राहत है आदमी के लिए
पयामे-मौत भी मुज्दा है जिंदगी के लिए

सूरदास का आस्थापूर्ण स्वर थके-मांदे यात्रियों को जिंदगी का, उसमें मिलनेवाले दुःख-दर्द का नया अर्थ दे जाता है!

शब्द-सामर्थ्य बढ़ाइए

● ज्ञानेन्दु

निम्नलिखित शब्दों के जो सही अर्थ हों, उन पर चिह्न लगाइए और इसी पृष्ठ से आरंभ उत्तरों से मिलाइए।

१. **संकल्प**--क. दान, ख. निश्चय, ग. त्याग, घ. कार्य।

२. **कर्णकटु**--क. भद्दी बात, ख. सुनने में अप्रिय, ग. व्यंग्यात्मक, घ. मुंहतोड़।

३. **श्रुतिमधुर**--क. सुंदर, ख. स्वरयुक्त, ग. सुनने में मीठी लगनेवाली, घ. याद रखने योग्य बात।

४. **गर्हित**--क. ग्रहण करने योग्य, ख. निंदित, ग. गंभीर, घ. घमंडी।

५. **संहार**--क. बड़ी हार, ख. मुकाबला, ग. नाश, घ. समाप्ति।

६. **हमजोली**--क. साथ-साथ चलनेवाला, ख. साथी, ग. सहयोगी, घ. सहभागी।

७. **वंशानुगत**--क. प्राचीन, ख. क्रम के अनुसार, ग. दीर्घकालिक, घ. पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आयी।

८. **रणबांकुरा**--क. चतुर, ख. चपल, ग. वीर, घ. छैला।

९. **यथेच्छ**--क. उचित, ख. काफी, ग. थोड़ा, घ. इच्छानुसार।

१०. **मंच**--क. मोरचा, ख. तख्त, ग. सभा, नाटक आदि के लिए बनाया गया चबूतरा, घ. फोरम।

११. **भगदड़**--क. दौड़, ख. भय, ग. डरपोक, घ. भय, घबराहट आदि में लोगों का एकसाथ भाग पड़ना।

१२. **पुरोधा**--क. प्रवर्त्तक, ख. संचालक, ग. पुरोहित, घ. विद्वान।

१३. **औचित्य**--क. न्याय, ख. निष्पक्षता, ग. तर्क, घ. ठीक होने का भाव।

१४. **इंद्रियातीत**--क. अद्भुत, ख. दिव्य, ग. इंद्रियों के ज्ञान से परे, घ. सुंदर।

१५. **बटमारी**--क. कम तोलना, ख. भारीपन, ग. रास्ता चलते लूटना, घ. चोरी।

उत्तर

१. ख. निश्चय, प्रतिज्ञा। जिस बात का **संकल्प** करो उसे पूरा करने में जी-जान से जुट जाओ।

२. ख. सुनने में अप्रिय। इस व्यक्ति

की **कर्णकटु** वार्त्ता से मैं तंग आ गया हूं।

३. ग. सुनने में मीठी लगनेवाली, कानों को प्रिय लगनेवाली। यह शब्दावली कितनी **श्रुतिमधुर** है।

४. ख. निंदित, निंदा के योग्य। किसी के उपकार के बदले में अपकार करना नितांत **गर्हित** है।

५. ग. नाश। राजस्थान में कुछ दुर्लभ पक्षियों के **संहार** का तीव्र विरोध किया गया था।

६ ख. साथी, मित्र। इस शहर में यही तो मेरा **हमजोली** है।

७. घ. पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आयी। वास्तव में उसकी यह बीमारी **वंशानुगत** है।

८. ग. वीर, बहादुरी से लड़नेवाला। युद्ध में भारतीय **रणबांकुरों** ने बड़े जौहर दिखाये हैं।

९.घ. इच्छानुसार। कठोर परिश्रम से ही उसे **यथेच्छ** फल प्राप्त हुआ।

१०. ग. सभा, वाद-विवाद आदि के लिए बनाया गया चबूतरा। (अंग-पुलपिट) कुछ विक्षुब्ध श्रोताओं ने **मंच** हथियाने का प्रयत्न किया। घ. फोरम। किसी विशिष्ट उद्देश्य की पूर्ति, विचाराभिव्यक्ति आदि के लिए आयोजित गोष्ठी या संगठन। देश में एक सबल साहित्यिक **मंच** की आवश्यकता है।

शार्टहैंड—आशुलिपि, शीघ्रलिपि

नोटिंग—टिप्पण

ड्राफ्टिंग—आलेखन

इंप्लिमेंटेशन—क्रियान्विति

एबॉलिशन—उन्मूलन

बैलेंस शीट—पक्का चिट्ठा, तुलन-पत्र

कैलकुलेटर—गणित्र

डेटा—आधार-सामग्री, आंकड़े

रोटेशन—घूर्णन

रेवोल्यूशन—परिभ्रमण, क्रांति (राज.)

११. घ. भय, घबराहट आदि में लोगों का एकसाथ भाग पड़ना (अंग-स्टैंपीड)। उस **भगदड़** का कारण केवल अफवाह थी।

१२. ग. पुरोहित, धार्मिक कार्य संपन्न करानेवाला। आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी हिंदी के नये साहित्यिक आंदोलन के **पुरोधा** थे।

१३. घ. ठीक होने का भाव (अंग-जस्टीफिकेशन)। उस सीधे-सादे व्यक्ति के साथ ऐसे कड़े बरताव का कोई **औचित्य** नहीं है।

१४. ग. इंद्रियों के ज्ञान से परे। ईश्वरीय बोध **इंद्रियातीत** अनुभूति है।

१५. ग. रास्ता चलते लूटना, राहजनी। **बटमारी** की घटनाएं बढ़ी हैं। ●

प्रतिक्रियाएं

सुरुचिपूर्ण होलिकांक

मार्च का होली-अंक मिला: हंसाता और किंचित छेड़छाड़ करता हुआ। 'ओखाड़ू-जी' के उखाड़वाद पर मजा आ गया। विश्वास है संबंधित नेता भी इस लेख को मेरे (पाठक के) दृष्टिकोण से पढ़ेंगे।

संपूर्ण सामग्री अच्छी और प्रासंगिक है। रूस के साहित्यकारों के विषय में अच्छी जानकारी दी है आपने भारत के साहित्यकार को। सर्वश्री कृष्णचंद्र शर्मा, रवीन्द्रनाथ त्यागी, शंकर पुणतांबेकर, गोपालप्रसाद व्यास, विष्णुकांत शुक्ल आदि लेखक इस अंक का मूल्य बढ़ाते हैं।

—सुरेश 'सरल', जबलपुर

होली-अंक काफी सुरुचिपूर्ण रहा। साज-सज्जा चित्ताकर्षक रही। डॉ. गौरीशंकर राजहंस की कहानी 'आंटी' दिल व दिमाग को छू गयी। कथा-साहित्य के सुंदर चयन के लिए धन्यवाद !

—डॉ. राधेमोहन गुप्त, जयपुर

रंग-बिरंगी रचनाओं से पूरित झोली लिये 'कादम्बिनी' का होली अंक मिला। मन खिलखिलाया, खिला। 'काल-चिंतन' और 'आस्था के आयाम' की जितनी प्रशंसा करूं, कम ही होगी। 'काल-चिंतन' जहां व्यथित-चिंतित हृदय-मस्तिष्क को आशा और उत्साह की वैचारिक संजीवनी प्रदान करता है वहां 'आस्था के आयाम' स्तंभ से जीवन के प्रति आस्था को अतिरिक्त बल मिलता है।

—रवीन्द्र उपाध्याय, मुजफ्फरपुर-३

होली अंक की प्रत्येक कविता अंतरमन को छू गयी, गुदगुदा गयी।

'काल-चिंतन' सही अर्थों में एक ऐसा स्तंभ है जिसमें तैरना नहीं, डूबना पड़ता है। 'काल-चिंतन' चिंतन-मनन के लिए एक अच्छी सामग्री है। 'उपहार देने का अर्थ प्रेम देना नहीं है'—आपने कितना यथार्थ लिखा है। सही अर्थों में उपहार देना मात्र एक व्यवहार है। मेरे विचार से प्रेम करना ही सबसे बड़ा उपहार है। प्रेम बिना यह जग सूना है, जिंदगी अधूरी है।

—गुप्तेश्वर प्रसाद 'मधुप', दरभंगा

'कादम्बिनी' के मार्च-अंक में 'वहां मात्र लेखक के रूप में जिया जा सकता है' शीर्षक लेख जानकारीपूर्ण रहा। क्या भारत में कोई ऐसा संगठन नहीं बनाया जा सकता जो देश के लेखकों को उचित मान-सम्मान और सुविधाएं जुटाने का कार्य हाथ में ले?

—विपिनकुमार जैन, खतौली (उ. प्र.)

'होली अंक' में महादेवीजी की कविता 'ओ विषपायी' उनकी अपनी हस्तलिपि में पढ़कर बहुत अच्छा लगा। समूची कविता मन में एक अद्‌भुत प्रेरणा जगा गयी। गोपालकृष्ण कौल की कविता 'मौसम : तीन चित्र' में निहित व्यंग्य प्रखर रहा।

—सुप्रभा मिश्र, चंडीगढ़

होली-अंक में प्रकाशित 'इन्हें हम दूर से पहचान लेते हैं' दिमाग चकराने-वाला था। तिगड़ियों के अर्थ और प्रकाशित चित्रों से उनका संदर्भ कहीं जुड़ा, कहीं पल्ले ही नहीं पड़ा। अगले किसी अंक में इसका राज तो खोलिए।

—कृष्णगोपाल तिवारी, लखनऊ

'कादम्बिनी' का होली-विशेषांक बहुत बढ़िया निकला। विविधतापूर्ण सामग्री एवं आकर्षक ले-आउट ने इस अंक को पठनीय ही नहीं संग्रहणीय भी बना दिया। पत्रकारों द्वारा विशिष्ट राजनेताओं से लिये गये 'इंटरव्यू' का सेवकराम ओखाड़ू द्वारा प्रस्तुत ब्योरा काफी दिलचस्प लगा। यद्यपि राजनेताओं के नाम नहीं थे, फिर भी सजग पाठको ने उन्हें पहचानने में भूल नहीं की होगी। 'यह हमारे पुलिस थाने का मामला नहीं', 'मातमे-दाढ़ी,' और 'मीर कल्लू की गवाही' आदि रचनाएं बेहद पसंद आयीं।

—रामेश्वर वर्मा, लखनऊ

हास्य-व्यंग्य की सामग्री से भरपूर होली-विशेषांक में डॉ. गौरीशंकर राजहंस की कहानी 'आंटी' का एक अपना अलग रंग था। लेखक ने कहानी की मुख्य पात्र सरोज के माध्यम से भारतीय नारी के त्याग एवं समर्पण के गुणों को भली भांति रेखांकित किया है। कहानी पढ़ने के बाद आंखें भर आयीं।

—सरिता शर्मा, फरीदाबाद

हिंदी का विरोध क्यों?

'हिंदी का विरोध क्यों' शीर्षक लेखमाला इस अर्थ में महत्त्वपूर्ण रही कि उससे दक्षिण भारतीय विद्वानों के हिंदी संबंधी विचार जानने को मिले। लगता है कि दक्षिण के विद्वान लेखक भी हिंदी के संबंध में पूर्वाग्रह-मुक्त नहीं हैं। श्री का. ना. सुब्रह्मण्यम का यह विचार कि 'हिंदी साहित्य-संसार स्वयं और भी संकुचित होता जाता है' वास्तविकता से कोसों दूर है। हिंदी पत्र-पत्रिकाओं एवं प्रकाशकों द्वारा अहिंदीभाषी लेखकों की कृतियों का हिंदी में विपुल प्रकाशन स्वयं श्री सुब्रह्मण्यम के कथन को झुठलाता है। हिंदीभाषी पाठकों ने न केवल बंगला वरन तमिल, मलयालम, गुजराती, कन्नड़, उड़िया, मराठी रचनाओं के अनुवादों को सराहा है वरन उन पर गर्व भी अनुभव किया है।

काश, हिंदी-भाषी - जैसी उदार और व्यापक दृष्टि अन्य भारतीय भाषा-भाषियों में भी होती।

—डॉ. सत्यनारायण दुबे, नागपुर

यह वर्ष है बच्चों का जो राष्ट्र की बहुमूल्य निधि हैं

पी एन बी

स्वयं को बच्चों के कल्याण के लिये समर्पित करता है ।

आप अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा, अच्छा भोजन, वस्त्र दे सकें.. उन्हें सुरक्षा प्रदान कर सकें ताकि वे बड़े होकर राष्ट्र की बहुमूल्य निधि बन सकें...इसके लिये पी एन बी के पास विभिन्न बचत-योजनाएं हैं जिनके द्वारा आप अपने बच्चों की जरूरतों को पूरा करने के लिये बचत कर सकते हैं ।

बच्चों में बचत की आदत डालने के लिये एक योजना है...पी एन बी की लघु-बचत योजना । इसके अलावा, बच्चों की उच्च शिक्षा के लिये पी एन बी की ऋण योजनायें हैं । सच पूछिये तो आपके लिये और आपके बच्चों के लिये पी एन बी के पास कई आकर्षक योजनाएं हैं ।

विस्तृत जानकारी के लिये हमारी निकटतम शाखा में आयें ।

पंजाब नैशनल बैंक

(भारत सरकार का उपक्रम)

भरोसे का प्रतीक

आगामी अंक में

मई अंक से तीन नये स्तंभ

चुटकियां––जो आपको गुदगुदाएंगी और खिलखिलाकर हंसने के लिए मजबूर करेंगी। आईने में––आपके जाने-पहचाने लेखकों, कवियों, खिलाड़ियों, अभिनेताओं, अभिनेत्रियों की अनोखी नोकझोंक !

किस्से खोजा फकीर के––कभी लाहौर में एक फकीर हुए थे, उनके किस्से कम दिलचस्प नहीं हैं। 'कादम्बिनी' को यह दुर्लभ सामग्री धारावाहिक प्रकाशित करने का श्रेय है।

इस अंक की कुछ विशिष्ट रचनाएं

- जब कलकत्ते में इंगलैंड से आयी हुई कुंवारियों के बाजार लगते थे
- नशाबंदी और नसबंदी : बकलम जहांगीर
- पृथ्वी गरम हो रही है !
- जहां वनराज सिंह आपसे मुलाकात के लिए आतुर हैं

और

यूं कट रही है जिंदगी हमारी ० जब भारत सम्राट ने माफी मांगी ० संसार की पहली ट्रेन डकैती ० केरल की ऐतिहासिक कथाओं का स्रोत ० उच्च रक्तचाप का योग द्वारा इलाज ० टुंड्रा : मनुष्य के स्थायी निवास के लिए चुनौती, आदि ।

और

एक नयी प्रतियोगिता : पुरस्कार जीतने के लिए सुनहरे अवसर

'कादम्बिनी' पढ़िए
समय के साथ चलिए

वर्ष ११ : अंक ६
अप्रैल, १९७१

कादम्बिनी

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

डॉ. रामजी सिंह
संपूर्ण क्रांति की शव-परीक्षा २४
प्रणय पंडित
उसने चीन को चुनौती दी २९
द्वारकाप्रसाद मिश्र
भूत-प्रेत और पिशाच ३९
शिवशंकर अवस्थी
रेगिस्तान में उतरी बहार ४५
देवेश
तीनमूर्ति के सामने आतंक ५४
राजेन्द्र अवस्थी
वहा काला आदमी सौभाग्यसूचक है ... ६१
सुरेश सिंह
सऊदी अरब के शिकारी राजकुमार ... ६९
डॉ. शशिप्रभा शास्त्री
वह घिनौनी चीज नहीं ८३
महेश्वर दयाल
वह सारे शहर की खबर देती थी ... ८८
डॉ. प्रभाकर माचवे
हिंदी का विरोध क्यों १०७
लक्ष्मीनिवास बिरला
मानस में विरोधाभास ११५
दिनेशचन्द्र दुबे
अदालतों में बयान बदलना आसान ... ११९
रत्नशंकर प्रसाद
प्रसाद कैम्ब्रिज में पढ़ना चाहते थे ... १२३
जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी
अकबर ने बुरका पहनकर ... १२८
ऋषिवंश
शहराते गांव की व्यथाएं १३४
रामचन्द्र शुक्ल
एक और नया नारा : समीक्षावाद... १५१
हरजिंदरसिंह सेठी
जिंदगी तड़पती है १५६
पं. पुनर्वसु
नक्षत्र और आपका भविष्य ... १६७

स्थायी स्तंभ

आस्था के आयाम--८, शब्द-सामर्थ्य--१०, प्रतिक्रियाएं--१२, काल-चिंतन--१८, समय के हस्ताक्षर--२१, तनाव से मुक्ति--५८, बुद्धि-विलास--९५, हंसिकाएं--९६, हंसिकाएं काव्य में (डॉ. सरोजनी प्रीतम)--९७, विधि-विधान--९८, वचन-वीथी--१३७, गोष्ठी--१४५, प्रवेश--१६१, क्षणिकाएं--१७४, नयी कृतियां--१७५, ज्ञान-गंगा--१७८

कथा-साहित्य

कांति त्रिवेदी
बाघिन ३३

कांता सिन्हा
बदलते हुए अर्थ ४८

लू शुन
दवा ७७

श्रवण कुमार
यात्रा १०१

राधेश्याम
पोस्टर १३६

अखिलेश्वर
पनिया कैसे भरू १४८

मशकूर हुसैन 'याद'
जन्म एक अधिकारी का १६२

कविताएं

घनंजयसिंह—७२, डॉ. रमासिंह/अनूप अशेष—७४, सुरेश कुमार/डॉ. हीरालाल बाछोतिया—७५

सार-संक्षेप

महाश्वेता देवी
अनु. : सांत्वना निगम
१०८४वें की मां १७९

मुखपृष्ठ : सुरेन्द्र सरधाना

संपादक
राजेन्द्र अवस्थी

संयुक्त संपादक
शीला झुनझुनवाला

सह-संपादक : दुर्गाप्रसाद शुक्ल
उप-संपादक : कृष्णचन्द्र शर्मा, प्रभा भारद्वाज, डॉ. जगदीश चंद्रिकेश, शैलबाला; प्रूफरीडर : स्वामी शरण
चित्रकार : सुकुमार चटर्जी

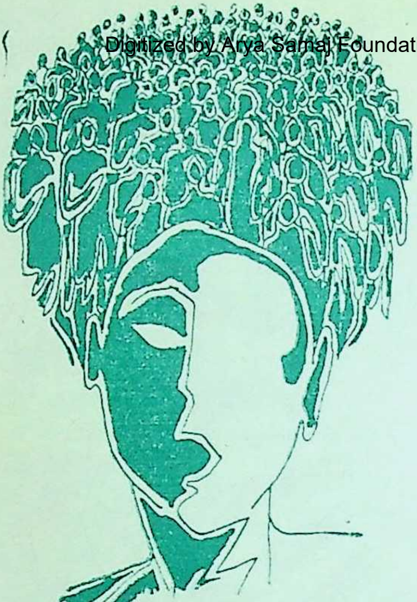

काल-चिंतन

——भीड़ . . . भीड़ . . . भीड़ !

——भीड़ देखकर मेरा मन कांप उठता है और इस तरह भयाक्रांत हो जाता है जैसे घुप्प अंधेरे में किसी अदृश्य भूत ने अचानक आ पकड़ा है !

——आशंकाओं के दावानल मेरी समूची चेतना को आच्छादित कर लेते हैं !

——क्या नहीं हो सकता, सब कुछ सहज के सिवाय ! . . . वह स्थान, वे स्थितियां और वह क्षण न शांत है और न सुखद अनुभूति से ओतप्रोत ! कुछ जरूर है जो न ग्रहणशील है और न ऐसा कुछ है कि सोच के नाजुक द्वारों को प्यार की थपकी देने में समर्थ हो।

——भीड़ निश्चित ही भय का प्रतीक है !

——भीड़ का अर्थ है किसी शव-यात्रा का वह कफन जिसने एक निर्जीव व्यक्ति को ही नहीं समूची चेतना को एक अंधेरे ताबूत में कैद कर लिया है !

——भीड़, यानी हाथा-पाई, मोल-तोल और तेज-तर्रार ज्वालामुखी से निकलनेवाले लावे का प्रकोप !

——भीड़ यानी युद्ध-हमला ! विनाशकारी शस्त्रों द्वारा मानव-रक्त का यूं चूसा जाना जैसे शेर अपने शिकार को मारकर सबसे पहले उसके गर्म रक्त का पान करता है !

●

——हड़तालों का अंदाज भी भीड़ से लगाया जाता है ! सृजन जहां आकर ठहर जाए प्रगति के स्वर्णिम प्रतीक पारे की तरह बिखरने लगते हैं ! काम रुकने से समय नहीं रुकता, मनुष्य की क्रियाशीलता ठहर जाती है !

——हमारी सांसें निश्चित हैं यदि इस तथ्य को स्वीकार कर लिया जाए तो क्रियाशील चेतना का एक पल के लिए भी रुकना उतना ही भयावह और विनाशकारी हो सकता है, जितना महायुद्ध में जरा से कीचड़ में किसी महारथी का वाहन एक क्षण के लिए रुक जाए और उसी क्षण विपरीत शत्रुता को पराजय से उभरने का मौका मिल जाए !

——भीड़ जय की है या पराजय की, मेरी

रक्त-शिराओं में सूई की तरह चुभती है !

—खुली लान में धूप का मजा लेती भीड़ कब धूप को बर्फ के गोले बनाकर उसके साथ खेलने लगे, कौन जानता है।

—महासागरों के तट पर छुट्टियां बिताने के एकांत क्षण जब भीड़ में बदल जाते हैं तब आदमी खतरा महसूस करने लगता है और सुरक्षा-कवच रूपी परिधानों में आवृत्त हो जाता है।

—शांत जलाशय में किसी ने कंकड़ फेंक दिया है। फेंके हुए कंकड़ से बनती गोलाकार लहरें एक चक्र का ही तो आभास दे सकती हैं !

●

—अस्पताल की भीड़, कोर्ट-कचहरियों की भीड़, सिनेमाघरों की भीड़, किसी राजनेता के भाषण की भीड़, बाजारों की भीड़ और भीड़ को चीरता हुआ प्रत्येक व्यक्ति, अपनी निजी सत्ता से भीड़ की सत्ता में बदलता हुआ अपनी अर्थवत्ता को खोता देखकर कितना असहाय नहीं हो जाता !

—प्रदर्शनकारियों की भीड़ ने अपनी ही संपत्ति जला दी, अपने ही घरों में आग लगा दी !

—शादी-विवाह-जैसे उल्लासमय क्षणों में एकत्रित भीड़ ने अपने परिचितों को देखना शुरू कर दिया और वहां न पाकर शत्रुता की सलाखें उसी क्षण अपने भीतर खड़ी कर दीं !

—स्त्रियों की भीड़ ने पुरुषों के उस ओजस्वी प्रखर और प्रवाहमान स्वरूप में पलीता लगा दिया, जिसकी कामना हर स्त्री सदियों से करती रही है और द्वंद्व-परिद्वंद्वों में विजित पुरुष के वरण को अपना गौरव मानती रही है !

—गपशप करती स्त्रियों का समागम कितना कुछ भंडाफोड़ नहीं कर जाता !

—पार्टियों में, सभाओं में, चाहे आदमी हों या स्त्रियां या दोनों किसी कोने से अनजाने कीचड़ के छींटे जरूर उठेंगे और किसी न किसी को गंदा जरूर करेंगे।

●

—एक चित्रकार एक बार कैमरा लेकर निरंतर वादियों में भटकता रहा, उसके पैर थक गये, आंखों में मकड़ी के जाले की तरह एक झिल्ली-सी उतर आयी, सांसें तेज हो गयीं और अपनी खोज के मिथ्या एहसास से उसका पराक्रम टूटने लगा। तभी अचानक वह ठहर गया : भीड़-सी लगनेवाली एकरस हरी वादियों में उसने एक नन्हा-सा अकेला लाल रंग का फूल देखा, उसकी अंगुलियां थिरक उठीं और एक क्लिक में खो गयीं। उसकी थकान उतर गयी थी !

—महासागर के अनंत घेरे में अकेला जहाज भीड़-जल से आक्रांत चीखता हुआ किसी तरह धरती पाने के लिए

प्रयत्नशील है। प्राणी अंधकारमय कृष्ण-वर्णी जल से परेशान हैं, वह निरंतर उन्हें बुला रहा है और छलांग लगाने का आमंत्रण देता है, जैसे कोई भीड़ अकेले आदमी को चुंबक की तरह खींचने के लिए आवाजों के घेरे बनाती है। ऐसी स्थिति में वे उछलती हुई मछलियां जो चांदी-जैसा आभास दे जाती हैं, प्रकाश-स्तंभ हैं और जिंदगी को ओषजन देनेवाला एक नन्हा-सा जुगनू--पानी की भीड़ को तोड़ती जो हैं वे!

●

--भीड़ . . . भीड़ . . . भीड़!

--शायद इसलिए मन होता है इन सबसे भाग जाने का! कहीं ऐसी जगह जाकर ठहर जाने का जहां हम अपने पैरों की आवाजें स्वयं सुन सकें, जहां हमसे बात करने के लिए केवल एक दूसरा व्यक्ति हो--हमारा मन, जहां हर हवा पास आकर एक अर्थ छोड़ जाए, जहां हर पखेरू के स्वर हम पहचान सकते हों, जहां सभी कुछ आकर ठहर जाए और मात्र हम चलते हों!

--जब हम चलेंगे तभी हम मील के पत्थरों को गिन सकेंगे।

--भीड़ में कब थे हम--अकेले आये हैं, अकेले जाएंगे; बीच की परिधि में भीड़ ने हमें फंसा लिया है; जिस दिन इस परिधि से उबरने की क्षमता हम पैदा कर लेंगे, हमारे नाम से स चलेगी, हमारे स्मारक प्रेरणा-केंद्र है और हमारी ऊंचाइयां देश, जाति, और संस्था के माथे पर चंदन तिलक लगा जाएंगी!

--कितनी विडंबना है: जो भीड़ से दू रहे हैं उन्होंने ही भीड़ में नाम पा है; जो भीड़ में रहे हैं आज तक अनजा और अनचीन्हे हैं।

--उन्होंने मनुष्य-धर्म को सार्थक नह किया!

--मनुष्य-धर्म यानी वह जो दुनिया के किसी प्राणी में नहीं है--विश्व का प्रत्येक जानवर, प्रत्येक पक्षी, कीड़ा-मकोड़ा, पांखी और मिट्टी में उपजने-वाले अनंत जीव-जंतु सभी की बनावट धरती के समानांतर है।

--केवल आदमी है जो सीधा खड़ा है!

--सीधा खड़ा है इसीलिए धरती और आकाश को चुनौती देता है।

--इसीलिए वह संपूर्ण सत्ता का शासक है

--सीधा खड़ा होनेवाला आदमी अकेला है!

--कहा भी है: एकला चलो रे!

--भीड़ अपने आप पीछा करेगी और पीछे छूट जाएगी!

राजेन्द्र अवस्थी

समय के हस्ताक्षर

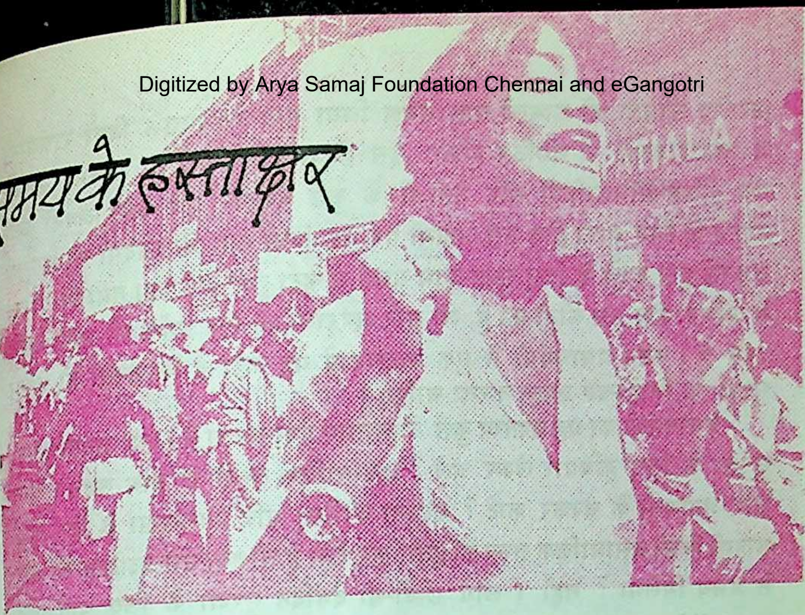

ऊपर का चित्र : गुडागर्दी के खिलाफ लड़कियों का प्रदर्शन

बढ़ते हुए अपराधों का दायित्व?

इधर अपराधों की दिनोंदिन बढ़ती संख्या ने प्रत्यक समझदार नागरिक के मन में कुछ प्रश्न-चिह्न उपस्थित कर दिये हैं। स्कूल-कालेज में पढ़नेवाली लड़कियां, कामकाजी और घरेलू महिलाएं बसों में, ट्रेनों में, सूनी राहों में अकेले चलने से घबराने लगी हैं, दिन-दहाड़े छुरेबाजी, लूट-खसोट, चोरी और डाकेजनी के भय से शांतिप्रिय सामान्य नागरिक की पुलिस से, सत्ता से, और सत्ता के सूत्रों को संचालित करनेवाले नेताओं से आस्था उठती जा रही है। बड़ा दिलचस्प और साथ ही शर्मनाक माहौल है यह कि अखबार में एक ओर संसद और विधान-सभाओं में मंत्रियों के दावे छपते हैं कि अपराधों की संख्या घटी है, पुलिस अब पहले से अधिक चुस्त व सतर्क है और साथ ही दूसरी ओर यह खबर छपती है कि बैंक में डाका पड़ गया, किसी को गोली मार दी गयी या किसी मासूम लड़की का अपहरण कर लिया गया।

स्थिति इतनी बदतर हो गयी है कि सामूहिक बलात्कार की घटनाएं भी घटने लगी हैं। पिछले दिनों उत्तरप्रदेश विधान-सभा में एक विधायक ने एक ऐसी ही लज्जाजनक घटना का विवरण प्रस्तुत किया। उसके अनुसार चालीस नर्सों के साथ सामूहिक बलात्कार किया गया। लड़कियों से छेड़छाड़ को तो एक आम, महा-

नगरीय सभ्यता की मामूली बात समझ लिया गया है। पिछले दिनों राजधानी में जब छात्राओं ने संगठित होकर इस छेड़छाड़ के खिलाफ आवाज उठायी तब पुलिस-अधिकारियों और नेताओं के कुछ वक्तव्य छपे और अपनी बला टालने के लिए सारा दोष उस आदमी पर मढ़ दिया गया जो जिंदगी की मामूली जरूरतें पूरी करने के लिए सुबह-शाम संघर्ष में जुटा हुआ है। कहा गया कि पुलिस से अधिक दोष उन लोगों का है, जो सारे अपराधों को मूक दर्शक की भांति देखते रहते हैं। स्वयं प्रधानमंत्री ने एक वक्तव्य में यह कहा है कि जनता को अपनी सुरक्षा के लिए स्वयं प्रयत्न करना चाहिए।

प्रधानमंत्री का यह वक्तव्य कुछ जिज्ञासाएं पैदा करता है। क्या जनता अपनी सुरक्षा के लिए हथियार लेकर चले? असामाजिक तत्त्वों के साथ लड़कर थाने और अदालतों के चक्कर काटे? कल्पना कीजिए यदि आत्मरक्षा के लिए कोई साहसी किसी असामाजिक तत्त्व की हत्या कर देता है तो क्या उसे प्रशासन की ओर से अभय मिलेगा? नहीं। लोग छोटी-सी दैनंदिन सुरक्षा के लिए थाने और अदालतों के चक्कर काटने की बजाय चुपचाप सब कुछ सह लेना पसंद करेंगे। तब क्या सरकार, जो निर्भय होने का संदेश दे रही है, अपने नागरिकों को इतना निरीह, इतना कायर बनने देना पसंद करेगी? ऐसी स्थिति कोई भी पसंद नहीं करेगा। तब प्रश्न उठता है कि जनता की सुरक्षा की प्राथमिक जिम्मेदारी किसकी है? हमारा उत्तर है—पुलिस की। पर पुलिस की सत्ता तो स्वयं शून्य हो चली है। उसका भय कम से कम अपराधियों को तो रंचमात्र नहीं है, क्योंकि 'निर्भय रहो' मंत्र से जितनी ज्यादा शक्ति उन्हें प्राप्त हुई है, उतनी समाज के किसी अन्य वर्ग को नहीं। समस्या राजधानी या किसी एक विशेष नगर की नहीं, वरन समूचे देश की है। सारे देश में अपराधों की संख्या बड़ी तेजी से बढ़ी है।

हमने आपातकाल का कभी समर्थन नहीं किया, पर उन दिनों का एक तथ्य भुलाये नहीं भूलता कि तब कम से कम आम नागरिक को अपराधियों का विशेष भय नहीं था। बसों में, ट्रेनों में लड़कियां, स्त्रियां स्वयं को निरापद समझती थीं। लगता था, उन दिनों कानून का, सत्ता का भय आम नागरिक के साथ-साथ अपराधियों के दिलों में भी बैठ गया था; पर आज स्थिति बिलकुल अलग है।

वर्तमान सत्तारूढ़ नेताओं का कहना है कि आपातकाल में भी अपराध होते थे, पर पुलिस उन्हें दर्ज नहीं करती थी। पुलिस का रवैया, तमाम घोषणाओं और निर्देशों के बावजूद बदला है, नहीं कहा जा सकता। आज भी अपनी जिम्मेदारी टालने और जांच के झमेलों से बचने के लिए पुलिस अपराधों की रिपोर्ट या तो दर्ज नहीं करती या फिर उसकी कोशिश होती है कि अपराध की गंभीरता कुछ

कम आंकी जाए। रिपोर्ट दर्ज न करने के कई कारण बतलाये गये हैं। किसी इलाके में अधिक जुर्म संबंधित पुलिस-अधिकारी की कार्यक्षमता को धूमिल करते हैं और समय-पूर्व तबादले की आशंका बनी रहती है। एक अहम कारण-- सत्तारूढ़ या अन्य प्रभावशाली नेताओं का वह हस्तक्षेप है, जो अपराधियों को या तो बेदाग छुड़ा ले जाता है या फिर उनके अपराध की गंभीरता को घटा देता है।

इस प्रश्न पर राष्ट्रीय पुलिस आयोग के अध्यक्ष श्री धर्मवीर ने भी गंभीर चिंता व्यक्त की है और कहा है कि देश में पुलिस प्रशासन के दैनंदिन कार्यों में राजनीतिक नेताओं का बढ़ता हुआ हस्तक्षेप चिंता का विषय है।

हमारी दृष्टि में पुलिस की निष्क्रियता और प्रभावशून्यता का यह एक बहुत बड़ा कारण है; पर जिस देश में राजनीतिक उद्देश्यों और व्यक्तिगत हितों की पूर्ति के लिए पुलिस के उपयोग की एक लंबी परंपरा चली आ रही हो, वहां पुलिस और उसकी गतिविधियों का नियंत्रण करनेवाले राजनीतिक नेताओं के व्यवहार में कोई परिवर्तन आएगा, विश्वास नहीं होता।

आज के समाज में अपराधों की संख्या क्यों बढ़ रही है, इस विषय पर बहुत कुछ लिखा जा सकता है। बढ़ती हुई बेरोजगारी, अपराध-प्रधान फिल्में, लक्ष्य-हीनता, नेतृत्व आदि कुछ कारण गिनाये जा सकते हैं। हम विस्तार में न जाकर कुछ सुझाव देना चाहेंगे।

सबसे पहले हमें जनता में कानून के प्रति आस्था, भय नहीं कहेंगे, उत्पन्न करनी होगी और इसके लिए सामाजिक-राजनीतिक नेतृत्व को अपने रवैये में परिवर्तन करना पड़ेगा। दूसरे, पुलिस-सेवा को अधिक सक्षम बनाना होगा। सिपाही-स्तर पर हमें ऐसे सुशिक्षित युवकों को भर्ती करना पड़ेगा, जो अपने कर्त्तव्यों और अधिकारों की सही पहचान कर सकेंगे। हम चाहेंगे कि सरकार कुछ ऐसी व्यवस्था करे कि प्रत्येक नागरिक को पुलिस की सहायता के लिए दो-तीन फर्लांग से दूर न जाना पड़े। इतनी कम दूरी पर पुलिस-सहायता मिल सकने का आश्वासन एक ओर जनता को निर्भीक बनाएगा तो दूसरी ओर अपराधियों के मनोबल को तोड़ेगा। इसके अतिरिक्त कानून तोड़नेवाले के प्रति पुलिस को समान रूप से कड़ा रुख अपनाना पड़ेगा। हमने विदेशों में देखा है कि कार-पार्किंग की एक नियत जगह है, सड़क पर चलने के अपने नियम हैं; यदि उनका उल्लंघन कोई मंत्री या उच्च-अधिकारी भी करता है तो वह स्वयं जाकर नियत जुर्माना अदा कर देता है, अन्यथा पुलिस उसके खिलाफ कार्रवाई करने में ढिलाई नहीं बरतती। अपराधों की रोकथाम में अदालतें भी बहुत बड़ी भूमिका निभा सकती हैं। कानूनी पेचीदगियों के कारण अधिकांश अपराधी 'बहुत सस्ते में' छूट जाते हैं। और समय बेहद लगता है।

सत्ता के प्रतिनिधियों का कहना है कि विदेशों की तुलना में अपराधों की संख्या बहुत कम है, पर यह एक लचर तर्क है। उसे ढाल बनाकर अपराधों की गुरुता कम नहीं की जा सकती। ●

संपूर्ण क्रांति की शव-परीक्षा

संपूर्ण क्रांति—एक समग्र जीवन दर्शन किंतु स्पष्ट व्याख्या के अभाव में कभी-कभी आलोचना का भी विषय। यहां इसी विवादग्रस्त प्रश्न पर प्रस्तुत है श्री जयप्रकाश नारायण के एक निकट सहयोगी, संसत्सदस्य डॉ. रामजीसिंह के विचार

मुझे 'संपूर्ण क्रां।ति' में सर्वप्रथम 'संपूर्ण' शब्द, एक दृष्टि से, निरर्थक प्रतीत होता है । छोटे-मोटे परिवर्तनों को हम 'सुधार' कहते हैं, जबकि समूल परिवर्तन को क्रांति । इतिहास साक्षी है कि क्रांति के नाम पर कभी राजनीतिक परिवर्तन, कभी आर्थिक या सामाजिक स्थितियों में अंतर और कभी धार्मिक या शैक्षिक बदलाव हुए हैं, लेकिन मानव-जीवन के संपूर्ण पहलुओं को एकसाथ संस्पर्श करता हुआ समग्र-परिवर्तन ही संपूर्ण क्रांति का अभीष्ट है। क्रांति के लिए 'सर्वांगीण आमूल परिवर्तन' तो चाहिए ही, साथ ही उसे अपेक्षाकृत 'संघ :' और 'विचार एवं पुरुषार्थयुक्त' भी होना चाहिए ।

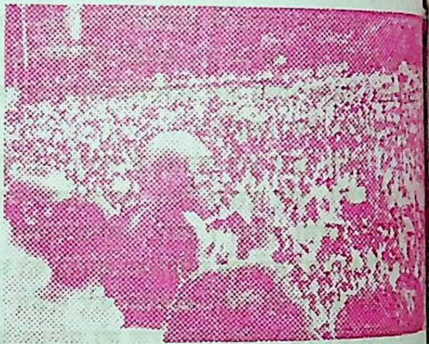

संपूर्ण-क्रांति की दिशा में तीन प्र

क. धार्मिक प्रयोग : विश्व के विभिन्न ध ने 'संपूर्ण मानव-निर्माण' का लक्ष्य र मानव चूंकि समाज में ही रहता है, उसके लिए समाज के सभी क्षेत्रों में आमू भूत परिवर्तन परमावश्यक हैं । प्राची भारतीय चिंतनधारा ने इसीलिए 'धर्म, अ काम और मोक्ष' की कल्पना कर मान के सर्वांगीण व्यक्तित्व को नियंत्रित कि लेकिन 'संपूर्ण क्रांति' के ये धार्मिक प्रयो मूलत : व्यक्ति-केंद्रित रहे, धर्म की दृष्टि में व्यक्ति ही मूल है । यदि व्यक्ति सुध जाएगा तो समाज स्वत: शुद्ध हो जाएगा किंतु यह एकांगी चिंतन ही सिद्ध हुआ।

ख. स्वप्नदर्शी प्रयोग : पृथ्वी पर स्व उतारने की कल्पन मानव-हृदय की ए शाश्वत आकांक्षा है । इसीलिए चाहे 'राम राज्य' हो या अफलातून की 'रिपब्लिक' या टामस मूर की 'यूटोपिया'—ये स स्वप्नदर्शी चिंतन हैं। ये लुभावने भले ही हों लेकिन जमीन पर कभी नहीं उतरे।

ग. मार्क्सवादी प्रयोग : इसीलिए मार्क्स ने न तो धर्मगुरुओं की बात मानी और न स्वप्नधारी चिंतकों की। मार्क्स ने समग्र-क्रांति के विषय में वैज्ञानिक ढंग से सोचने का प्रयास किया। परिवार और समाज, संपत्ति और सत्ता, शिक्षा और संस्कृति—इन सभी पहलुओं पर उसने मौलिक ढंग से चिंतन किया। इसका सारांश 'परिवार, व्यक्तिगत संपत्ति और राजसत्ता' के ऊपर कठोर प्रहार है। व्यक्तिगत परिवार के कारण निहित स्वार्थ का निर्माण होता है और संपत्ति-अर्जन की भावना दृढ़ होती है। फिर व्यक्तिगत संपत्ति की सुरक्षा के लिए राज्यसत्ता का अवलंबन लिया जाता है। अत: शोषण के ये तीन दुर्ग हैं। इसलिए परिवार का रूपांतर, व्यक्तिगत संपत्ति एवं राज्यसत्ता का अपक्षय—ये तीन क्रांतिकारी उद्देश्य थे।

• डॉ. रामजी सिंह

संसद-सदस्य

मार्क्स की विशेषता थी कि उसने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए केवल द्वंद्वात्मक भौतिकवाद का विचार ही नहीं रखा, बल्कि उसकी प्राप्ति के लिए उसी के अनुरूप 'वर्ग-संघर्ष' का साधन भी दिया। मार्क्स का विचार था—उत्पादन के साधन और स्वामित्व को व्यक्ति के स्थान पर जब तक समाज के हाथों में नहीं दिया जाएगा, 'सामाजिक क्रांति' नहीं हो सकती। शायद मार्क्स ने यह नहीं सोचा कि इतिहास की भौतिक और आर्थिक व्याख्या इतिहास का पूर्ण सत्य नहीं है।

राष्ट्रीय स्तर पर भी भारत का साम्यवाद वर्ग-संघर्ष एवं हिंसा को भावभीनी विदाई देकर नक्सलवाद को प्रतिक्रियावाद एवं संशोधनवाद कहता है। शायद वे समझते जा रहे हैं कि हिंसा के द्वारा राज्यसत्ता जनता के हाथों में नहीं आ पाती। बंदूक की नली से यदि राज्यसत्ता मिलती है तो वह उसी को मिलेगी जिसके पास बंदूक होगी।

यही कारण है कि लेनिन और माओ को यह अहसास हुआ कि सत्ता-परिवर्तन ही पूर्ण साम्यवाद नहीं है। इसीलिए लेनिन को अक्तूबर-क्रांति के बाद साम्यवाद की नींव मजबूत करने के लिए स्वैच्छिक श्रमदान का आयोजन करना पड़ा था और माओ ने 'सांस्कृतिक क्रांति' का सूत्रपात किया। वास्तव में जब तक जीवन के मूल्य नहीं बदलेंगे, क्रांति को स्थायित्व नहीं मिलेगा। दबाव और शक्ति के आधार

पर जो क्रांति होगी वह अंतहीन प्रतिक्रांतियों को जन्म देती रहेगी। मुख्य बात है कि हिंसा के माध्यम से हम शांतिमय समाज उसी प्रकार नहीं बना सकते जिस प्रकार पानी से मक्खन या बालू से तेल नहीं निकल सकता। अत: संपूर्ण क्रांति मूलत: वैचारिक क्रांति है।

क्रांति का इंद्रधनुष

विचार की शक्ति अद्वितीय होती है। हर क्रांति के पहले वैचारिक जागृति आवश्यक है। क्रांति के सतरंगी इंद्रधनुष का आधार वैचारिक आकाश ही है। इसके अनेक रूप और रंग होते हैं। गांधी ने मार्क्स की तरह गहराई में जाकर 'मूल से क्रांति' का विचार रखा। उन्होंने जीवन के सभी क्षेत्रों में मौलिक विचार दिये। गांधी के लिए संपूर्ण क्रांति केवल दर्शन नहीं, जीवन का अविभाज्य अंग थी।

डा. राममनोहर लोहिया ने 'सप्तक्रांति' की कल्पना की—१. जन्मजात जाति की विषमता का नाश, २. परदेशी गुलामी की समाप्ति एवं विश्वराज्य की स्थापना का प्रयास, ३. नर-नारी की समानता, ४. चमड़ी के रंग पर आधारित विषमता का अंत, ५. व्यक्तिगत पूंजी की समाप्ति, ६. निजी जीवन में अन्याय का प्रतिकार तथा ७. हिंसा व युद्ध का विरोध एवं सत्याग्रह का अवलंबन।

जयप्रकाश नारायण ने संपूर्ण क्रांति को कुछ अधिक स्पष्ट एवं वर्गीकृत करते हुए आनेवाली पीढ़ी पर इसके लिए चिंतन का दायित्व दिया। संपूर्ण क्रां उनके अनुसार इंद्रधनुष के समान स रंगी है, जिसमें क्रांति के सात महत्व पक्षों की ओर उन्होंने संकेत किया है १. राजनीतिक क्रांति, २. आर्थिक क्रां ३. सामाजिक क्रांति, ४. शैक्षिक क्रां ५. सांस्कृतिक क्रांति, ६. नैतिक क्रां तथा ७. वैचारिक क्रांति।

वैचारिक क्रांति की चर्चा की ज चुकी है। अहिंसा को माननेवाला विचार शक्ति का पुजारी होगा ही, लेकिन उन्हों संपूर्ण क्रांति को नैतिक आयाम देने क भी प्रयास किया है। यह एक मुख्य विशे षता है। नैतिकता क्रांतिरूपी भोज का वह लवण है जिसके अभाव में व्यंज फीके रहेंगे। समाजवाद हो या संपू क्रांति, जनतंत्र हो या स्वदेश-प्रेम— सभी नैतिक परिकल्पनाएं हैं। बिन नैतिकता के, ये सभी दिवास्वप्न रहेंगे। इसीलिए जयप्रकाश नारायण संपूर्ण क्रां के लिए 'शांति के साथ शुद्ध साधनों के अवलंबन पर जोर देते हैं।

लेकिन विचार एवं नैतिकता शून्य से उद्भूत नहीं होते, वे किसी सामाजिक आर्थिक, राजनीतिक परिवेश में ही निर्मित होते हैं। राजनीति आज हमारे संपूर्ण जीवन को संस्पर्श करती है। लेकिन आज राजनीति मिथ्या और धोखाधड़ी का पर्याय बनती जा रही है। इसीलिए गोखले और गांधी ने 'राजनीति के आध्या त्मीकरण' और जयप्रकाश ने साधुता की

राजनीति पर जोर दिया । गांधी और जयप्रकाश ने 'शासन-मुक्ति' की दृष्टि से विकेंद्रित राज्य-व्यवस्था एवं ग्राम-स्वराज्य को आवश्यक माना । राज्य के पास जितनी कम सत्ता होगी, व्यक्ति को उतनी अधिक स्वतंत्रता प्राप्त होगी । अतः सर्वकल्याणकारी राज्य सर्वाधिकारी राज्य बन जाएगा । गांधी और जयप्रकाश ने पाश्चात्य प्रजातंत्र की दलीय प्रथा का इसलिए विरोध किया कि वहीं जनता के बदले दल और दल के बदले दल के दादाओं की तानाशाही, अंत में, फासिस्टवाद, नाजीवाद या इंदिरावाद को जन्म देता है । दल बदल का रोग अलग ही है । इसीलिए प्रशासन को नीचे से ऊपर होना चाहिए । जो काम गांव सभा नहीं कर सकती, उसे प्रखंड, जिला प्रांत व केंद्र को सौंपना चाहिए । इसी प्रकार संपूर्ण क्रांति संकीर्ण राष्ट्रवाद के बदले विश्व राज्य के मूल्य को स्वीकार करेगा ।

लेकिन राजनीति का आधार अर्थ होता है । जहां धर्म व नैतिकता नहीं, वहां अर्थशास्त्र नहीं बल्कि अनर्थ शास्त्र है । मूल प्रश्न है, मानव का कल्याण । इसीलिए राज्य-शक्ति के विकेंद्रीकरण की भांति आर्थिक सत्ता का भी विकेंद्रीकरण अभीष्ट है । स्वामित्व को लेकर भी व्यक्तिगत पूंजीवाद एवं राज्य के पूंजीवाद के बीच कानूनी एवं नियंत्रित ट्रस्टीशिप तथा उद्योगों में श्रमिकों के योगदान की कल्पना है । सबसे बड़ी बात कि आज श्रमिक एवं श्रीमान के दो वर्ग हो गये हैं । जब तक समान-वेतन का सिद्धांत लागू नहीं होगा तब तक ये वर्ग बने रहेंगे ।

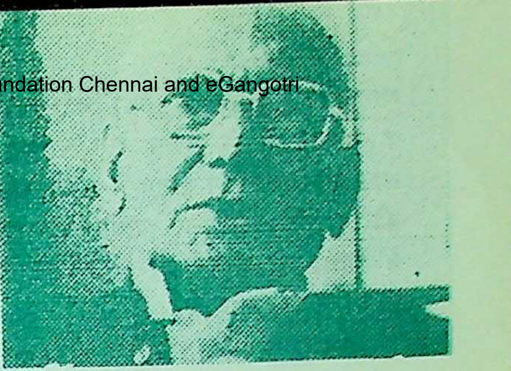

जयप्रकाश नारायण

राजनीतिक और आर्थिक क्रांति के साथ सामाजिक क्रांति भी आवश्यक है । भारत में वर्ण व्यवस्था के नाम पर, जन्मन जाति व्यवस्था के कारण 'सामाजिक विषमता' तो है ही, यह आर्थिक राजनीतिक एवं शैक्षिक विषमताओं का भी मूलाधार रहा है । अतः सामाजिक क्रांति के लिए अंतर्जातीय विवाहों के द्वारा जाति प्रथा का अंत आवश्यक है । इसी प्रकार नर-नारी की समानता भी जरूरी है ।

शिक्षा समाजिक क्रांति की आधार-शिला है । जिस दिन शिक्षा में क्रांति हो जाएगी, समाज स्वतः बदल जाएगा । शिक्षा का उद्देश्य वस्तुतः व्यक्तित्त्व का सर्वांगीण विकास होना चाहिए और उसके लिए शरीर, मस्तिष्क और हृदय तीनों का समान एवं संतुलित विकास होना अपेक्षित है । लेकिन शिक्षा संस्कृति से कटकर नहीं दी जा सकती । अतः अपने

सांस्कृतिक परिवेश में तथा मातृ-भाषा के माध्यम से ही शिक्षा देनी चाहिए। आज की शिक्षा में न जीवन है, न जीविका की गारंटी। इसीलिए गांधी-जयप्रकाश ने शिक्षा को जीवन और जीविका से ही जोड़ने की सलाह दी।

शिक्षा, समाज, राजनीति और अर्थ-नीति-- व्यापक अर्थ में संस्कृति के प्रमुख अंग है। फिर भी सांस्कृतिक क्रांति का अपना महत्त्व है। हमारे जीवन-मूल्य एवं जीवन-दर्शन में परिवर्तन आवश्यक है। हमारा व्यक्तिवादी जीवन-मूल्य हमें संकीर्ण बनाता है। इसीलिए गांधी ने 'सर्वोदय' की कल्पना की और बताया कि सभी के विकास में व्यक्ति का भी विकास निहित है। जयप्रकाश ने भी संपूर्ण क्रांति के लिए मद्यनिषेध, श्रम की प्रतिष्ठा, तिलक-दहेज का उन्मूलन आदि के आंदोलन चलाये।

शंकाएं और समाधान

संपूर्ण क्रांति की सबसे बड़ी आलोचना है कि इसका कोई 'ब्लूप्रिंट' नहीं है। हमने ऊपर जो थोड़ी-सी चर्चा की है उसे इसका रेखा-चित्र माना जा सकता है। परिस्थितियां बदलती रहती हैं, अतः सौ-दो सौ वर्षों के लिए कोई दकियानूस जड़ कार्यक्रम देना क्रांति की गत्यात्मकता के साथ अन्याय है। जनक्रांति में क्रांति की तसवीर के विषय में दिशा-निर्देश भले ही सुझाये जा सकें, लेकिन क्रांति की तसवीर बनाने में जनता का अभिक्रम एवं सहभाग होना चाहिए।

संपूर्ण क्रांति को कुछ लोग 'मं अराजकता' या 'संपूर्ण सर्वनाश' स झने की भूल करते हैं। यह ठीक है कि जब तक हमारे जीर्ण-शीर्ण मूल्यों के बदले हम जीवन के सभी क्षेत्रों में नवीन मू की प्रतिष्ठा नहीं करेंगे, क्रांति का को अर्थ नहीं। लेकिन इसका अर्थ सर्वना नहीं। हर क्षेत्र में संपूर्ण क्रांति ने जीव के शाश्वत मूल्यों को प्रतिष्ठित किया है जैसे सत्य, अहिंसा आदि।

संपूर्ण बनाम समग्र क्रां

ये दोनों शब्द प्रायः पर्यायवाची रूप में व्यवहार किये जाते हैं। अंतर इतना है कि 'समग्र क्रांति' क्रांति की 'समग्रता' का द्योतक है जबकि 'संपूर्ण क्रांति' उसकी 'पूर्णता' का। 'समग्रता' गुणात्मक प्रत्य है और 'संपूर्णता' गुणात्मक के सा परिमाणात्मक भी है। 'संपूर्ण क्रां जीवन और समाज के सभी क्षेत्रों को प्रभावित करती है, अतः यह 'समग्र क्रां कहलायेगी। समग्र क्रांति पूर्ण औ अपूर्ण दोनों हो सकती है। पूर्णता ए आदर्श है जिसको लक्ष्य कर आगे बढ़ रहना होगा।

--८९, नार्थ एवेन्यू, नयी दिल्ली-१

नव विवाहिता अपनी सखी से, 'शादी के पहले उन्होंने चांद-तारे तक ला देने का वायदा किया, पर अब कपड़े धोने की मशीन तक लाने में टालमटोल कर रहे हैं!'

उसने चीन को चुनौती दी थी?

• प्रणय पंडित

वह एक भारतीय था और चीनी अधिकारी उसे फांसी पर चढ़ा देना चाहते थे। उसने मुसकराते हुए उन्हें चुनौती दी थी, "तुम मुझे फांसी पर लटका तो सकते हो, लेकिन मेरे प्राण नहीं ले सकते। तुम मुझे मारने की लाख कोशिशें कर लो, पर मैं मरूंगा नहीं, जिंदा रहूंगा।"

पहले तो चीनी अधिकारियों ने इसे मखौल समझा, पर जब कुछ लोगों ने उन्हें बताया कि यह भारतीय झूठ नहीं कह रहा, हो सकता है कि फांसी पर चढ़ाये जाने के बाद भी वह जीवित रहे, क्योंकि वह पहले भी कुछ चमत्कार दिखला चुका है, तब चीनी अधिकारी आशंकित हो उठे। नियत तिथि पर उन्होंने उस भारतीय को फांसी दी और जब फांसी के तुरंत बाद उन्होंने उसके हृदय की धड़कन बंद पायी तब मानो उनके अपने हृदय पर से मनों भारी बोझ हट गया। लेकिन क्या सचमुच वह भारतीय मर गया था? फांसी पर लटकाये जाने के बाद, अपने दावे के अनुसार, क्या वह जिंदा था?

पिछले दिनों मैं इंगलैंड में था। वहीं एक सत्तर-वर्षीय वृद्ध ने, जो अपने जीवन का एक बड़ा हिस्सा चीन के शंघाई नगर में गुजार चुके थे, मुझे यह रोमांचक सत्य घटना सुनायी थी। वे सारी घटना के एक चश्मदीद गवाह थे, क्योंकि जिस जेल में यह घटना घटी, उसका जेल-अधिकारी उनका घनिष्ठ मित्र था।

बात आज से पैंतालीस वर्ष पूर्व की है।

पैंतालीस वर्ष पूर्व का शंघाई। तब शंघाई की पुलिस में कुछ भारतीय भी थे। इनमें से ही एक था आत्मासिंह—गौर वर्ण, ऊंचा-पूरा बलिष्ठ शरीर, आचार-व्यवहार में पूरी तरह सात्विक।

एक दिन शाम आत्मासिंह अपनी पत्नी के साथ शंघाई के एक बाजार से गुजर रहा था। एक दुकान के सामने भीड़ देखकर वह ठिठक गया। पुलिस कर्मचारी होने के नाते उसका रुकना स्वाभाविक ही था। भीड़ ने उसे देखते ही रास्ता छोड़ दिया। आत्मासिंह अपनी पत्नी के साथ भीड़ को पार कर पहुंचा तो उसने देखा कि शंघाई का एक चीनी गुंडा छुरा निकाले दुकानदार पर हमले के लिए आमादा है। आत्मासिंह ने आगे बढ़कर उसका छुरा छीन लिया। क्षण-भर के लिए वह चीनी गुंडा हतप्रभ रह

गया, पर वह कुछ और करता कि भीड़ ने उसे दबोच लिया।

आत्मासिंह का कर्त्तव्य पूरा हो गया था। उसने सोचा कि लोग उस चीनी गुंडे को थाने पहुंचा देंगे। यही उसकी भूल थी। वह चीनी गुंडा इलाके का 'दादा' था। सब उससे थरथर कांपते थे। आत्मासिंह भी यह जानता था, पर उसने सोचा कि वह गुंडा नशे में है। होश में आते ही वह शांत हो जाएगा। आत्मासिंह स्वयं उसे थाने नहीं ले जाना चाहता था क्योंकि वह गुंडा हाल ही में लंबी सजा काटकर लौटा था। आत्मासिंह उसे थाने ले जाता तो उस गुंडे को फिर जेल हो सकती थी। आत्मासिंह की यही सहानुभूति उसे फांसी के फंदे तक ले गयी।

हुआ यह कि थोड़ी दूर जाने के बाद वह गुंडा फिर आत्मासिंह के पास जा धमका और उसने उसकी पत्नी के साथ दुर्व्यवहार किया। गुंडे के पास छुरा था और आत्मासिंह निहत्था! आत्मासिंह ने गुंडे को धक्का देकर अलग किया और पत्नी का हाथ खींचकर आगे चल पड़ा। ऊपर से वह शांत था, पर भीतर ही भीतर वह क्रोध से उबल रहा था। पत्नी से उसने कहा, "उसके हाथ में छुरा है। अभी उससे उलझना ठीक नहीं, तुम घर जाओ। मैं अभी आता हूं।"

पत्नी के जाते ही आत्मासिंह उस गुंडे से मुकाबले के लिए तैयार हो गया। सहसा उसकी नजर एक ठेले पर पड़ी। ठेले पर सब्जी काटने के काम आनेवाले चाकू बेचने के लिए सजाकर रखे हुए थे। आत्मासिंह ने तत्काल एक फैसला कर लिया। वह इस गुंडे रूपी आतंक को सदा-सदा के लिए समाप्त कर देगा। उसने चीते की फुरती से लपककर ठेले पर से एक चाकू उठाया और गुंडा जब तक संभले, उसने वह चाकू उसके सीने में घोंप दिया। वार सधा हुआ था। गुंडे ने चीख मारी और लड़खड़ाकर ढेर हो गया।

इधर आत्मासिंह चाकू लिये थाने पहुंचा और इनचार्ज अफसर को सारी घटना सुना दी। अफसर ने कहा, "आत्मासिंह, तुमने उस खूंख्वार गुंडे को मारकर अच्छा काम किया, पर कानून तो अंधा होता है। तुम भाग जाओ, नहीं तो तुम्हें फांसी हो जाएगी।"

आत्मासिंह हंस पड़ा, "लगने दीजिए फांसी। एक बात कहूं, मैं मरूंगा नहीं। आप कानून का पालन कीजिए।"

और इस तरह आत्मासिंह स्वेच्छा से गिरफ्तार हो गया।

इधर आत्मासिंह पर मुकदमा चला और न्यायाधीश ने उसे फांसी की सजा सुना दी। इस बीच चाकूवाले ने आत्मासिंह की बात अपने ग्राहकों को बतायी कि उसे फांसी तो लगेगी, पर वह मरेगा नहीं। साथ ही उसने यह भी कहा कि आत्मासिंह को कोई दैवी सिद्धि प्राप्त है।

उसकी कही बातें सच निकलती हैं। सचमुच में आत्मासिंह फांसी लगने के बाद भी जिंदा रहेगा।

नियत तिथि पर आत्मासिंह को फांसी दी गयी। तख्ता हटाते ही उसका शरीर फंदे में झूल गया। थोड़ी देर बाद जल्लादों ने उसका शरीर फंदे से निकाला। तमाम दावों के बावजूद आत्मासिंह मर चुका था। जेल के डॉक्टरों ने उसके शव की परीक्षा की और आत्मासिंह को मृत घोषित कर दिया। आत्मासिंह का शव फांसी की कोठरी में छोड़कर वे बाहर निकल आये।

कुछ देर बाद डॉक्टरों का प्रमुख आया और उसने आत्मासिंह के शव को देखना चाहा। वह अकेले ही फांसी की कोठरी में गया।

सहसा एक लंबी चीख से जेल की दीवारें कांप उठीं। जेल के कर्मचारी भय से सिहर उठे। किसी की हिम्मत उस कोठरी में जाने की नहीं हुई। उनके अंधविश्वासी मन में यह भय समा गया कि आत्मासिंह प्रेत बन गया है और उसी ने डॉक्टर पर हमला किया है।

काफी देर तक कोठरी से कोई आवाज न आने पर उन लोगों ने समझा कि डॉक्टर भी मर गया। पर उनमें कुछ साहसी भी थे। ऐसे तीन लोग हिम्मत कर उस कोठरी में एक साथ गये। बाहर खड़े लोग किसी भयंकर घटना की आशंका में सहमे से खड़े रहे।

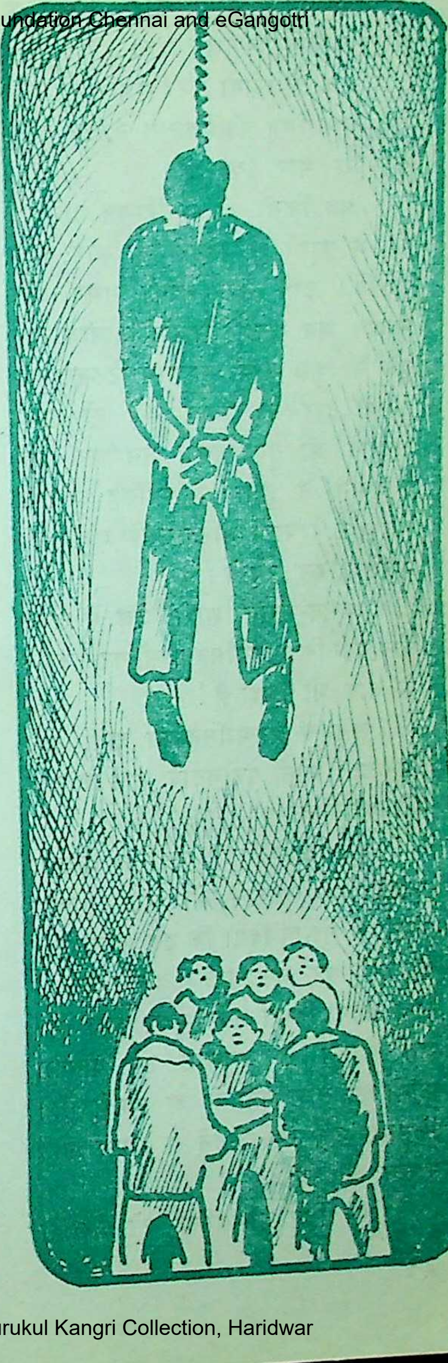

सहसा एकसाथ तीन चीखों से सारा वातावरण गूंज उठा।

अब तो लोगों को विश्वास हो गया कि आत्मासिंह की प्रेतात्मा ने उन तीनों को भी मार दिया है।

अब किसी की भी हिम्मत नहीं हुई कि वे फांसी की कोठरी की ओर कदम बढ़ायें। इसी तरह काफी समय बीत गया। जब कोठरी से कोई आवाज नहीं हुई तो कुछ लोग एकसाथ ठिठकते हुए उसके द्वार पर जाकर खड़े हो गये। उन्होंने जो दृश्य देखा, उस पर उन्हें विश्वास न हुआ। आत्मासिंह जीवित था और वे चारों व्यक्ति उसके शरीर की मालिश कर रहे थे।

आनन-फानन सारी जेल में खबर फैल गयी कि आत्मासिंह फांसी पर लटकने के बाद भी जिंदा है!

सचमुच आत्मासिंह का दावा सही निकला। फांसी पर चढ़ाये जाने के बाद भी वह जिंदा था।

जेल-अधिकारियों ने उसे दोबारा फांसी पर लटकाने की बात सोची। किसी ने सुझाव दिया कि उसे गोली मार दी जाए, पर ऐसा कुछ न हुआ। आत्मासिंह अपनी नियत सजा भुगत चुका था। अब कानून के अनुसार उसे दोबारा फांसी की सजा नहीं दी जा सकती थी। लिहाजा अब उसे छोड़ने के सिवा कोई रास्ता नहीं था।

जिस दिन आत्मासिंह को जेल से छोड़ा गया, उस दिन मानो पूरा श उसे देखने के लिए उमड़ पड़ा। जे निकलते ही लोगों ने उसे कंधों पर लिया।

इस घटना के बाद आत्मासिंह जीवित रहा और शंघाई में किंवदं का केंद्र बना रहा। चीनी अधिक और नागरिक उसके इस चमत्कार हतप्रभ थे। उन्होंने उसे फांसी पर लट तो दिया, पर उसे मार नहीं पाये। आत्मा सिंह क्यों न मर सका, यह आज भी रहस्य बना हुआ है। लोगों ने आत्मासिंह बहुत पूछा, पर उत्तर में वह केवल मु कराता रहा।

क्या फांसी के फंदे में कोई गड़ब थी? —नहीं।

क्या यह योग-विद्या का चमत था?—शायद!

वास्तविकता जो हो, आत्मासि शंघाई के बुजुर्गों की स्मृति में आज जीवित है।

—ए-१/२४२ ए, लारेंस रो
नयी दिल्ली-११००

पश्चिमी जरमनी के कृषि-वैज्ञानिक हरमन बाजनेर ने एक प्रयोग द्वारा किया है कि यदि सुअरों को साफ-सु रखा जाए और संगीत सुनाया जाए जल्दी मोटे-ताजे होते हैं और उनका गोश भी बहुत स्वादिष्ट होता है।

कहानी

बाधित

• क्रांति त्रिवेदी

शिप्रा की नींद जाने कहां उड़ गयी थी ! अपनी थीसिस का आखिरी अध्याय खत्म करके खूब सोना चाहती थी। बड़ी कठिनाई से खत्म कर पायी थी, बीच में ही उसकी मौसी ने विवाह तय कर दिया था, इसीलिए तो इतनी देर हो गयी। अब भी अगर वह सारा काम खत्म करके टाइप करके नहीं दे देगी तो उसका पी-एच. डी. का काम धरा रह जाएगा। अब तक वह विवाह के लिए 'हां' नहीं कर रही थी, लेकिन धीरेन के लिए वह 'न' नहीं कह सकी। उसका चेहरा देखते ही उसे लगा था कि यह उसके लिए उपयुक्त जीवन-साथी होगा । वह किस तरह 'न' करती और क्यों करती ?

क्या उसके लिए जीवन भर वैराग्य धारण किये रहती, जिसने अपनी छुट्टियों के कुछ दिन रंगीन बनाने के लिए शिप्रा का मन किताबों की दुनिया से खींचकर

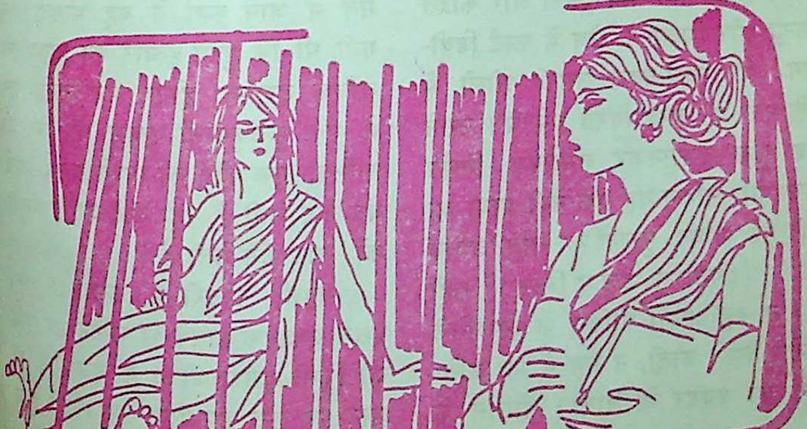

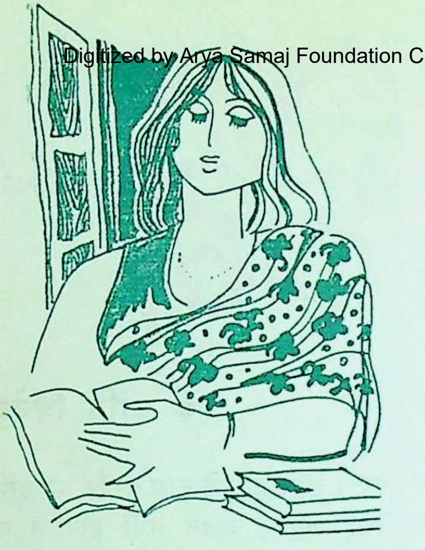

अपने से बांधा, फिर ऐसी अनासक्ति से गांठ छुड़ाकर चल दिया, मानो कभी वंधी ही न थी। एक हलचल-सी मचा गया था वह और तोड़ गया शिप्रा के मन का भ्रम कि उसका सौंदर्य उसकी सबसे बड़ी शक्ति है। इस भ्रम के टूटने का शिप्रा को इतना लाभ अवश्य हुआ कि उसने अपना ध्यान दूसरी ओर केंद्रित किया और शिक्षा के क्षेत्र में फर्स्ट डिवीजन और स्वर्ण-पदक उसकी झोली में पके फल की तरह गिरते गये थे। उसने सब कुछ देखसुनकर, समझकर निर्णय किया था, लेकिन यह एक नयी बाधा आ खड़ी हुई, शायद पुरानों का कहा 'अज्ञान भला' (इगनोरेंस इज ए ब्लिस) सही था। न वह अपनी थीसिस के सिलसिले में जेल देखने जाती, न मन में यह अनिश्चय का बवंडर ले आती। थीसिस के एक अध्याय—'अपराधों की साम पृष्ठभूमि'—के लिए सामग्री इकट्ठी के उद्देश्य से कुछ अपराधियों से प्र चर्चा करने की वात वह वहुत दि सोच रही थी। और सारे अध्याय होने तक के लिए इस काम को कर रखा था, तभी मम्मी ने इस विवाह के प्रस्ताव को सामने ला र

धीरेन उसे पसंद आ गया था—उप समय जानकर वह राजी हो गयी आखिर विवाह एक समझौता ही वल्कि अनेक समझौतों की लंबी ही तो है और उसके वाहर का भी दूसरे समझौतों से भरा पड़ा है। अव इन दोनों के अंतर का अन्वेषण में समय नहीं गंवाना चाहती थी।

शिप्रा के पापा ने जेलर साहब अनुमति ले ली थी। सुबह तैयार हो वह चल पड़ी। उसे हत्या-जैसे अ अपराधों की विवेचना करनी थी। मन में जाने कहां से यह भावना गयी थी कि पुरुष हत्यारे का वाह्य अधिक डरावना होगा, पर उसके में एक कुलबुलाती इच्छा थी कि नारियां एक कीड़े को मारते समय बंद कर लेती हैं, वही जीते-जागते म को मार कैसे लेती हैं!

पहली कोठरी में कलावती इसने एकाएक मायके से लौटने पर को किसी दूसरी औरत के साथ एक खाट पर सोते हुए पाया था। उस

को देखते ही वह अपना संतुलन खो बैठी थी। बैलों का चारा काटनेवाले अपने अभ्यस्त हाथों से उसने इतनी सफाई से बारी-बारी से दोनों की गरदनें काटकर रख दी थीं कि देखनेवाले देखते रह गये थे। गुस्सा ठंडा होने पर वह खूब रोयी थी, अपने को कोसा था। अब भी शिप्रा के सामने कोस रही थी, बोली, "मेमसाहब मरद जात तो होती ही ऐसी है। उसे मारकर मुझे क्या मिला! उसके साथ सो ही लिया था, तो क्या था! घर-बार, खेत-खलिहान सब मेरे थे और मेरे बच्चों के थे।"

शिप्रा ने वार्डन से अनुरोध किया कि उसे ऐसी खूंखार हत्यारिणी से मिलाये जिसे हत्या करने में आनंद आता हो।

शिप्रा जल्दी-जल्दी पैर बढ़ाती जा रही थी और उस कोठरी के आगे निकल भी गयी थी, लेकिन एक क्षणांश में देखे गये उस चेहरे ने उसके पैर मानो बांध दिये। असाधारण रूपवती थी वह युवती। दमकता गोरा रंग, घने काजल-काले केश और आंखें जो कभी [illegible] कितनी मद-भरी रही होंगी—इस समय तो उनकी कोर आंसुओं से सजी जान पड़ती थी। उसकी आंखों में आशा, आशंका साथ-साथ बसी थी। शायद उसे कोई इस कारागार से निकाल ले जाए, जहां वह बीच बसंत में, बंदी बनाकर रख दी गयी थी।

"अभी यह नयी-नयी आयी है, इसलिए पिंजड़े की मैना-सी फड़फड़ाती है।"

पीछे से वार्डन की आवाज आयी तो शिप्रा चौंक गयी, उसने पीछे मुड़कर वार्डन का भावहीन चेहरा देखा। उसने सोचा, रोज-रोज यही दृश्य देखते-देखते वार्डन का हृदय कठोर हो गया होगा वरना बंदिनी का चेहरा देखकर, उसे स्वयं तो रोना आने लगा था। कोठरी का दरवाजा खोलते हुए वार्डन बोली, "इसने भी अपने पति की हत्या की है।"

"नहीं, नहीं! मैंने कुछ भी नहीं किया है। वे अपनी मौत से मरे हैं—

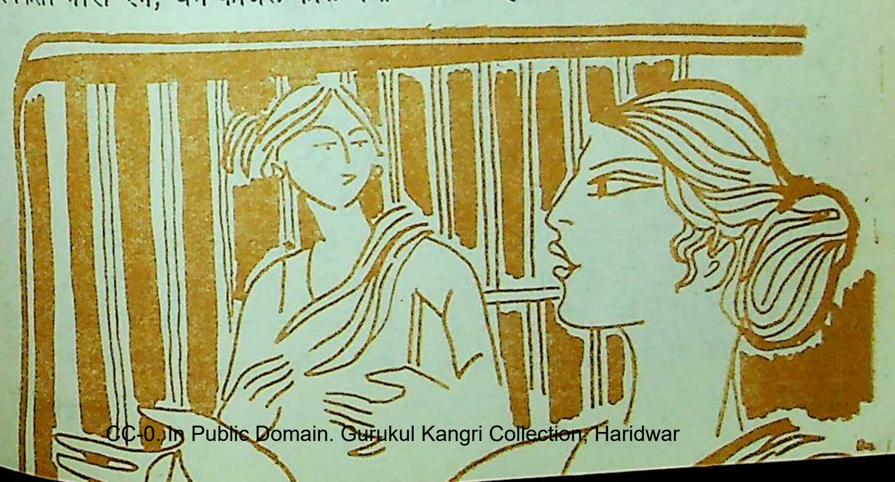

मेरा क्या दोष, जो उनका सिर दीवार पर लगे कुंडे से टकरा गया।" वह चिल्लाकर एक सांस में इतना कह गयी थी।

शायद वह कुछ बोलना चाहती थी। उसने कहना शुरू किया, "मैं बड़ी अभागी हूं। बचपन में मां मर गयी। मौसी, बुआ ने किसी तरह पालकर, चौदह तक पहुंचाया, फिर सभी ने जिम्मेदारी से छुटकारा पाना चाहा। बुआ को मैंने पिताजी से कहते सुना था, भैया, यह तो मानो शहद है, जहां रखो वहीं चींटों की कतार लग जाती है। बड़ी भी कितनी दीखने लगी है।

पिताजी ने कहा था, "दो महीने रुक जाओ सावित्री, फिर मैं इसे अपने पास रखूंगा। दो महीने के भीतर ही उन्होंने दूसरा विवाह कर लिया। नयी मां की उम्र बहुत कम नहीं थी। वे विवाह से पहले स्कूल में पढ़ा रही थीं, बाद में भी उनका मन नौकरी करने का था, पर मैं उनके लिए बहुत बड़ा बंधन थी। उन्होंने मुझे तंग नहीं किया, लेकिन प्यार भी नहीं दिया। बस एक अध्यापिका की तरह मेरी देख-रेख करती रहीं। उन्होंने मुझे हाईस्कूल करा दिया था। पिताजी तभी से मेरे लिए वर खोज रहे थे, अंत में नयी मां ही मेरे लिए रिश्ता खोज लायीं, पर उन्होंने जाने बैर निभाया था, अथवा अनायास ऐसा हो गया था! मेरे पति विधुर ही नहीं थे, उनके दो बच्चे भी थे। विदा के समय नयी मां के मुंह से एक अटपटी-सी बात निकली थी—उन्होंने मेरे पति से कहा था, "हमारी बेटी अभी कमउम्र है। हम तो अभी विवाह न करते, पर इसकी सुंदरता के लोलुप हमें चैन नहीं लेने देते थे।" उनकी यही बात जहर की बेल बन गयी।

"वह कैसे?"

पहले दिन ही उन्होंने मुझसे पूछा था, "तुम्हारे कितने प्रेमी थे?"

तब तो मैं प्रेमी का अर्थ भी नहीं समझती थी। मैं टुकुर-टुकुर मुंह ताकती रह गयी, तब वह बोले, "इतना अनजान बनने से काम नहीं चलेगा! साफ-साफ बता दो।"

कुछ होता, तो मैं बता भी देती! शायद सब कुछ यों ही चलता रहता, और वह जब मन आता पूछते रहते, 'तुम्हारे कितने प्रेमी थे', लेकिन तीन वर्ष बीतने पर मैं एक मांग कर बैठी।

इस बार मैं सब कुछ भूलकर, एक ही विचार लिये जीने लगी थी कि मुझे मेरा अपना बच्चा चाहिए। उस दिन उन्हें खुश देखकर मैंने मांग कर ही दी कि वह मुझे डॉक्टर के पास ले चलें। वे चौंके और एकबारगी ही पूछ डाला—"क्यों?"

मुझे साफ-साफ कहने में शर्म आ रही थी। मेरे मौन से वह भड़क उठे। चेहरे पर क्रोध की लाली देख मैं जल्दी से कह बैठी, "तीन साल हो गये हैं। अब मुझे

बच्चा चाहिए ।

आशा के विपरीत वह कुछ नरम पड़ गये और चेहरा घुमा लिया, लेकिन एकाएक मुड़े और बोले, "जरूर तुम्हीं में कोई खराबी होगी तभी तो इतना . . ."

"फिर क्या हुआ ?"

शिप्रा को तो लगने लगा था कि वह अपनी किसी समवयस्का के साथ बैठी अंतरंग वार्त्ता में लीन है। सुंदरी बंदिनी का दुर्भाग्य भी आकर्षक था।

". . . फिर मैंने अपनी पड़ोसिन कलावती की शरण ली।

मैं चोरी से दवा खाती रही। मेरा स्वास्थ्य सच में अच्छा हो गया था।

उस सत्यानाशी रात को मैं यही तो मांग बैठी थी। उस दिन वह एक पार्टी में गये थे, मैं बच्चों के कारण घर पर रुकी थी। काफी रात बीते लौटे, दरवाजा खोला, तो उनकी सांस की महक और लड़खड़ाती चाल से महसूस हुआ कि उन्होंने थोड़ी-बहुत पी रखी है। कलावती का पति अकसर ही पिया करता था। कलावती ने मुझे बताया था कि नशे में डूबा उसका पति उसकी बहुत-सी मांगें पूरी कर देता है। उस रात मेरे दिमाग में भी वही बात कौंध गयी और मैंने उनके जूते उतारते हुए उनसे कहा, आप डॉक्टर को दिखा लेते, तो मैं भी मां बन जाती, मेरा बड़ा मन है।

मेरे मुंह से शब्द निकले ही थे कि वह धनुष-जैसे तन गये—क्यों, दो बच्चे तो हैं !

मैंने कहा—मुझे मेरे हाड़-मास का बच्चा चाहिए।

—मैं क्यों जाऊं डॉक्टर के पास, मेरे दो बच्चे तो हैं ही, और ज्यादा सुनना चाहती हो तो कान खोलकर सुनो, मैं अब कभी बच्चे पैदा नहीं कर सकता हूं—मेरी नसबंदी हो चुकी है। मेरी बात मानो और खुश होओ कि बच्चे जनने में तुम्हारा रूपरंग और जवानी खराब नहीं होगी।

उनकी बात मुझे चाबुक-जैसी लगी। सोचने की शक्ति तो नहीं रही थी, पर महसूस करने की थी। उनकी पास आती आकृति मुझे छिपकली-जैसी लिजलिजी

लगने लगी——बल्कि उससे भी घृणित। दूर हटने की जगह होती, तो मैं ही हट जाती। इस बार मैंने पूरी ताकत से उन्हें परे धकेला था। उनका सिर जाने कहां टकराया और एकबारगी उसमें तरबूजे-सी दरार पड़ गयी। तब तक बच्चे भी जाग गये थे और वहां आकर आस-पास खड़े हो गये थे। उन्होंने कटा सिर देखा, खून देखा और मुझे देखा। गवाही के लिए इतना काफी था।"

शिप्रा का मन उसके प्रति सहानुभूति से भर उठा। वह बोली, "तुम अपने वकील को यह सब बता चुकी होगी, मुझे विश्वास है, तुम्हें कोई सजा नहीं होगी।" बंदिनी का मोहक चेहरा तब भी निर्विकार बना रहा था और वह शांत स्वर में बोली थी, "जाने क्यों पिताजी मुझे बचाने की कोशिश कर रहे हैं! मैं तो चाहती हूं कि मुझे फांसी हो जाए, सिर्फ एक इच्छा बाकी है, उसे मैं मरने के पहले पूरा करना चाहती हूं।"

शिप्रा के भारी हो आये मन में तनिक-सी उत्तेजना हुई थी। वह कुछ और आगे खिसककर, अपने स्वर को कोमलता की चरमसीमा तक कोमल बनाकर बोली थी, "यदि चाहो तो मुझे बता दो, हो सका तो मैं प्रबंध करूंगी।"

उसकी आंखें कुछ देर शिप्रा के चेहरे पर टिक गयी थीं। शिप्रा सिहर उठी थी . . . कौन कहेगा, इसके हाथ, इसका पति धोखे से मारा गया था। इसकी आंखों में तो भूखी बाघिन-सा भाव है। शिप्रा के उठ सकने के पहले वह हंसी, उस हंसी में गहराई तक भरा व्यंग्य था, फिर वह धीमे से बोली थी, "बहनजी, अब तो मरने से पहले और जिंदा रहने पर भी मेरी एक ही इच्छा बाकी है। वह हमेशा झूठा लांछन लगाया करते थे। मुझे मरते या जीते उस झूठ को सच बना देना है, नहीं तो मेरी आत्मा भटकेगी। मैं दूसरे मर्द के सुख का स्वाद जानना चाहती हूं। कर सकेंगी सहायता?"

शिप्रा ने तब तो यही सोचा था कि इस एकांत कोठरी में पड़ी-पड़ी शायद वह पगला रही है, पर अब वह वैसा नहीं सोच पा रही है और न ही थीसिस का अध्याय ही पूरा कर पा रही है, सोच रही है कि यह जीवन भी क्या है! समझौतों की कड़ी, या झगड़ों और अलगावों की एक लंबी शृंखला!

——सी-२, डॉ. जाकिर हुसैन मार्ग,
नयी दिल्ली-११०००३

कहते हैं, काहिरा में एक डॉक्टर अपनी मृत्यु के दस वर्ष बाद भी रोगियों का, खासकर रोगिणियों का इलाज कर रहा है। रोगी या रोगिणी मृत डॉक्टर के कमरे में जाकर एक कागज पर अपनी बीमारी का हाल लिख देते हैं और बाहर चले आते हैं। बताते हैं कि बाद में डॉक्टर की मृतात्मा उनके रोग की दवा लिख देती है।

भूत प्रेत और पिशाच मनुष्य ही थे!

● द्वारकाप्रसाद मिश्र

भारत के प्राचीन साहित्य में देवताओं और मनुष्यों के संबंधों के वर्णन हैं। अठारह पुराणों में शायद ही कोई पुराण ऐसा होगा, जिसमें विशेषत: इंद्र से संबंधित राजा, ऋषि-मुनि और क्वचित सामान्य स्त्री-पुरुषों का नामोल्लेख न हो। इस संबंध को हमने पौराणिक माना है। फिर भी ऐतिहासिक अनुसंधान के लिए पूर्वाग्रहों को दूर करना और इन कथाओं में निहित सत्य की खोज करना लाभप्रद होगा।

प्राचीन भारत के करीब सभी राजवंशों का मनु वैवस्वत के पुत्र इक्ष्वाकु की ओर से सूर्यवंशी और पुत्री इला की ओर से चंद्रवंशी होने का दावा किया जाता है। यह सच है कि भक्त अपनी उपलब्धियों का श्रेय अपने आराध्य देवों को देते हैं और ऋग्वेद के मंत्र का पारंपरिक अर्थ यही है, परंतु यह संभव है कि इंद्र एक ऐतिहासिक मनुष्य और आर्यों की आदि भूमि का शासक रहा हो। आर्यों के राज्य-विस्तार के दौरान अपरिचित भूमि पर युद्ध का नेतृत्व शायद उसी ने किया था। इंद्र ने अपने जीते हुए प्रदेशों का शासन मनु को सौंप दिया था। ये प्रदेश भारत में थे या ईरान में, इस विषय में इस समय निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता।

ऋग्वेद के अनुसार, इंद्र ने राजा दिवोदास के लिए शंबर को, रिजिश्विन के लिए पिप्रु को, राजा दभीति के लिए चुमुरु तथा धुनि को, कुत्स के लिए शुष्ण को, नमी के लिए नमुचि को तथा पणियों ने जिन ऋषियों की गायें चुरा ली थीं, उनके लिए बल को पराजित किया। ऋग्वेद में इंद्र की जो स्तुति है, उससे तो वह किसी स्वर्ग-देवता की अपेक्षा आर्य युद्ध-नेता ही जान पड़ता है। हड़प्पा और मोहेन-जो-दड़ो-जैसे नगरों में केंद्रित सिंधु नदी की सभ्यता की खोज के बाद इस नाम को अधिक महत्त्व मिला है। इन नगरों के नाश का उत्तरदायित्व इंद्र को दिया जाता है। डॉ. मॉर्टिमेर व्हीलर की इस राय का स्टुअर्ट पिगट ने समर्थन किया है: "इंद्र ऋग्वेद का सबसे बड़ा देवता है . . . वह आर्य युद्ध-नेता का दैवीकरण है। वह पशुओं पर हमला करता है, शत्रुओं के दुर्गों का

आर्यों की आदिभूमि कहां थी? इंद्र देवता थे या आर्यों के युद्ध-नेता? भूत, प्रेत, पिशाच क्या मानव-जातियां थीं? ऐसे अनेक प्रश्नों के अनुसंधानात्मक उत्तर—लेखक की बहुचर्चित पुस्तक 'स्टडीज इन द प्रोटो-हिस्टोरी आव इंडिया' के कुछ रोचक अंश

नाश करता है, पंजाब में घृणित प्राचीन साम्राज्य पर विजय पानेवाले आर्यों का नेता है।”

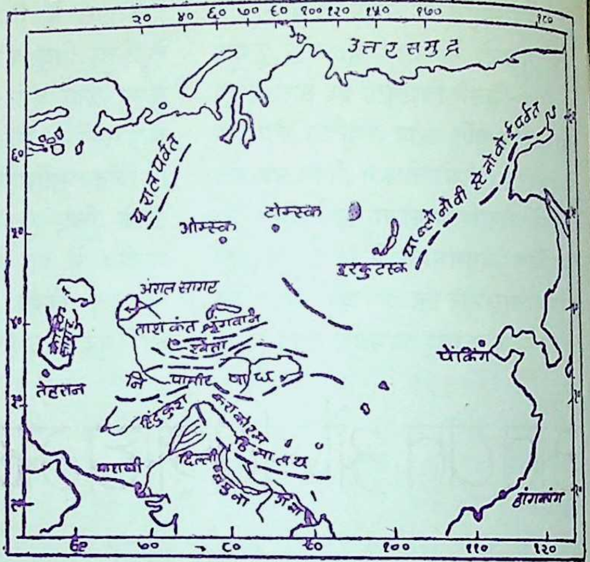
जंबूद्वीप
२० ४० ६० ७० ९० १०० १२० १४० १६० १८०
उत्तर समुद्र
यूराल पर्वत
ओम्स्क
टोम्स्क
इरकुटस्क
अराल सागर
ताशकंत
श्वेता
पामीर
तेहरान
हिंदुकुश
काराकोरम
हिमालय
कराची
दिल्ली
यमुना
गंगा
पेकिंग
हांगकांग
६० ७० ८० ९० १०० ११० १२०

निष्पक्ष दृष्टिकोण से तो इंद्र की तुलना सिकंदर-जैसे आक्रामक व्यक्ति के साथ ही करनी चाहिए, जिसकी दर्पोक्ति का उसके समकालीन लोगों ने भी उल्लेख किया है। ये मनुष्यसहज दुर्बलताएं हैं और इंद्र को देव माननेवाले लोग अब उसे मनुष्य के रूप में देखने लगे हैं, यह शुभ चिह्न है। पि. एस. घाटे वैदिक देवताओं को प्रकृति का मूर्तिमान और महिमामंडित चमत्कार बताते हैं।

इंद्र : एक नहीं अनेक

अब प्रश्न है कि इंद्र एक ही था या कई इंद्र थे? शास्त्री राजाराम रामकृष्ण भागवत ने कई इंद्रों की बात की है। उनके मतानुसार चुमुरु, धुनि, पिप्रु, शंबर तथा शुष्ण से युद्ध करनेवाले इंद्र का नाम सुमंतु था। अर्बुद से लड़नेवाले इंद्र का नाम रिजिश्विन था। एक और इंद्र का नाम पाकस्थामा था। चतुर्थ मंडल में पिता को पैरो से उठाकर उसकी हत्या करनेवाले इंद्र का उल्लेख है, वह एक और इंद्र रहा होगा।

राजाराम शास्त्री के मत में देव एक मनुष्य-जाति थी, जिसके राजा इंद्र कहे जाते थे। ऋग्वेदकालीन इस सिद्धांत की उत्तरकालीन साहित्य में पुष्टि मिलती है। पुराणों में राम के पिता दशरथ-सहित कई सूर्यवंशी और चंद्रवंशी राजाओं का उल्लेख है। कहा जाता है कि देव तथा असुर दोनों राजी नाम के एक राजा की सहायता लेने आये थे, जिसके बदले में उसने इंद्रपद मांगा था। असुरों ने प्रह्लाद को अपना इंद्र बताकर उस मांग को अस्वीकार कर दिया था, पर देवों

ने उसे मान्य कर लिया था। राजी की विजय हुई, किंतु इंद्र ने उसको और उसके पुत्रों को धोखा दिया। पुरूरवा के पौत्र राजा नहुष को अल्प समय के लिए इंद्रपद प्राप्त हुआ था, परंतु इंद्र की पत्नी शची का शीलभंग करने के प्रयत्न के कारण वह पदच्युत हुआ था। चेदी का शासक बसु इंद्र का मित्र था और उसने इंद्र से एक स्वर्गीय रथ प्राप्त किया था। कहा गया है कि बसु ने ही सर्वप्रथम इंद्र-ध्वज की आराधना की थी। इन राजाओं के काल में कई शतकों के अंतर के कारण मानना पड़ता है कि इंद्र कई थे। शासकों के रूप में इंद्रों ने नये प्रदेशों के उपनिवेशन में सहायता की थी और वे संस्थान सुदृढ़ होने के बाद वहां के शासकों ने शासक देश को असुरों के विरुद्ध युद्ध करने में सहायता देकर अपना ऋण चुकाया था। जान पड़ता है कि शासक देश में, वहां की स्त्रियों में भी, वरिष्ठता की भावना बढ़ गयी थी। उर्वशी ने पुरूरवा का जिस प्रकार त्याग किया इससे यह स्पष्ट हो जाता है।

आर्यों की भूमि

अब प्रश्न यह है कि देवभूमि का, वेदकालीन आर्यों की भूमि का स्थान क्या हम निश्चित रूप से जान सकते हैं? वायु-पुराण में मेरु पर्वत के वर्णन से स्पष्ट संकेत मिलता है।

पुराणों में देवलोक का स्थान मेरु पर्वत पर बताया गया है। अधिक महत्त्व की बात तो यह है कि क्या मेरु का किसी वर्तमान पर्वत या पठार के साथ तादात्म्य स्थापित किया जा सकता है? पौराणिक भूगोल को काल्पनिक बताकर उसकी उपेक्षा न करनेवाले कई विद्वान मेरु को पामीर का पठार मानने को सहमत हैं।

फ़ारसी भाषा में पामीर का अर्थ है 'मीर का पैर' जो 'पाद-मेरु' के समान जान पड़ता है। चैंबर्स वर्ल्ड गजेटियर और ज्योग्रैफिकल डिक्शनरी में पामीर को १५,०००—१६,००० फुट ऊंचा पठार बताया गया है।

ऐग्नस हैमिल्टन के अनुसार ३०,००० वर्गमील के पामीर की दक्षिण-सीमा मुज्ताग-आटा को एक गिरिमाला से हिंदूकुश के साथ जोड़ती है, जिसके कारण पानी ऊपरी ऑक्सस और सिंधु नदी की घाटियों में बंट जाता है।

अब इस प्रदेश को तत्कालीन राजनीतिक मानचित्र में देखें। राजनीतिक परिवर्तनों के साथ प्रदेशों के नाम भी बदलते हैं। अफगानिस्तान का नाम कायम रहा है, जिसमें पुराने अफगान तुर्किस्तान के नाम से तुर्किस्तान का हिस्सा भी शामिल है, किंतु पर्शिया (फ़ारस) को उसका पुराना नाम ईरान फिर से मिल गया है। पामीर के पश्चिम और ऑक्सस के उत्तर में रशियन तुर्किस्तान था, जो अब पांच सोवियत समाजवादी गणतंत्रों में बंट गया है। पामीर के पूर्व

में सिक्यांग है, जो पहले चीनी तुर्किस्तान कहा जाता था। अब चीन ने वहां सड़कें बना ली हैं, जो उसे तिब्बत से जोड़ देती हैं और लद्दाख में भारतीय प्रदेश का अतिक्रमण करती हैं। पामीर के दक्षिण में भारत है, जिसका एक हिस्सा अब पाकिस्तान बन गया है। कश्मीर और आजाद कश्मीर कहा जानेवाला प्रदेश पामीर के पठार से संलग्न हैं, और अफगानिस्तान की कुछ मीलों की पट्टी से ही भारत-पाकिस्तान सोवियत रूस से अलग होते हैं। पामीर का पठार एक भौगोलिक बिंदु ही नहीं, परंतु दीर्घकाल से अंतरराष्ट्रीय राजनीति का केंद्र भी रहा है।

लेखक

मेरु पर्वत: एक कुंजी

पामीर की भांति मेरु पर्वत एक कुंजी है, जिससे पुराणों के भौगोलिक द्वार खोले जा सकते हैं। पुराणों के अनुसार पृथ्वी सात द्वीपों या खंडों में बंटी हुई थी और जंबुद्वीप मध्यवर्ती था। जंबुद्वीप के मध्य में सुवर्ण मेरु था। वहां से चार दिशाओं में चार नदियां बहती थीं। पुराणों में मेरु एक बड़ा भारी जल-संभर भी माना गया है, जिसे वक्षु, सीता, भद्रसोम और अलकनंदा कहा गया है और जो क्रमानुसार पश्चिम, पूर्व, उत्तर और दक्षिण में बहती हैं। वक्षु को ऑक्सस या अमु दरिया माना गया है। चीनी लोग तरिमयार्कांद को सीतो कहते हैं, जो पौराणिक नदी सीता ही है। डॉ. अली ने भद्रसोम को सीर दरिया बताया है। अलकनंदा तो निर्विवाद गंगा ही है, जो चार गंगाओं में से एक है। पुराणों के अनुसार इन चारों नदियों का स्रोत आकाश-गंगा है, जो मेरु पर्वत के शिखर पर गिरती है। त्रिपथगा नाम का अर्थ डॉ. अली इस प्रकार स्पष्ट करते हैं:

"गंगा स्वर्गीय नदी है, जिसकी चित्रात्मक ढंग से आकाश-गंगा से तुलना की गयी है . . . पृथ्वी पर इस स्वर्गीय नदी का 'आवास' विस्तीर्ण पामीर का पठार है। स्वर्गीय नदी गंगा मेरु के पठार पर ही नहीं, आसपास की उत्तुंग गिरिमालाओं पर भी टिकी है . . . निकलने के पहले यह नदी मेरु की कई बार प्रदक्षिणा कर लेती है। हिमनदियों के पिघलने पर पानी जब तलहटी में सरो-

वरों के रूप में संचित हो जाता है [illegible] सही अर्थ में नदी का रूप धारण कर लेती है। पुराणों में ऐसे चार सरोवरों का तथा जंबुद्वीप के चार प्रमुख बिंदुओं तक बहनेवाली चार प्रमुख नदियों का उल्लेख है।"

डॉ. अली ने मेरु से बहती हुई चार नदियों का पामीर से बहती हुईं चार नदियों के साथ तादात्म्य स्थापित किया है, यह बात विश्वसनीय लगती है। ईसा के बाद सातवें शतक तक यह समता स्वीकार की गयी थी। भारत से लौटते समय चीनी यात्री ह्वेन सांग इस प्रदेश से गुजरा था। उसने पामीर की विस्तीर्ण घाटी का वर्णन किया है: "यहां लगातार ठंडी हवाएं चलती हैं। गरमियों में और वसंत में भी यहां हिमवर्षा होती है।"

जंबुद्वीप : विभिन्न धारणाएं

पामीर की घाटी के मध्य में बने विशाल नागर्द सरोवर को उसने जंबुद्वीप का मध्यबिंदु कहा है। पुराणों में मेरु को जंबुद्वीप का मध्य-बिंदु बताया गया है और ह्वेन सांग ने पामीर को इसका मध्यबिंदु कहा है। सीतो का उसका वर्णन भी पुराणों की सीता नदी के वर्णन से मिलता-जुलता है।

पुराणकारों ने जंबुद्वीप के सात वर्ष (प्रदेश) बताये हैं, परंतु पूर्व-धारणा के अनुसार जंबुद्वीप के चार विभाग थे, जो मेरु पर्वत के आसपास थे। महाभारत में इनका उल्लेख है। मेरु के उत्तर में [illegible] उत्तरकुरुवर्ष में [illegible] तथा कैस्पियन समुद्र से लेकर आर्कटिक महासागर तक के प्रदेश, अर्थात समरकंद, बुखारा तथा साइबेरिया के विशाल प्रदेश शामिल थे। पूर्व में भद्राश्ववर्ष था, जिसमें डॉ. अली के मतानुसार वर्तमान सिक्यांग तथा उत्तर-चीन समाविष्ट थे। मेरु से दक्षिण का प्रदेश निःशंक भारत ही था। पश्चिम की ओर केतुमालवर्ष था, जिसमें डॉ. अली के मत में लगभग समग्र प्राचीन बेक्ट्रिया आ जाता था।

जंबुद्वीप के चार विभागों के बाद में पेटा-विभाग बनाये गये थे। डॉ. बुद्धप्रकाश के मत में आरंभ के भौगोलिक ग्रंथों में शकद्वीप का उल्लेख नहीं है। पृथ्वी भारतवर्ष या जंबुद्वीप, केतुमाल, भद्राश्ववर्ष और उत्तरकुरु, इन चार विभागों में बंटी थी। मौर्यों तथा कुषाणों के समय में जंबुद्वीप के विषय में धारणा बदल गयी। अब वह भारत की भौगोलिक सीमाओं में सीमित न रहकर एशिया के अन्य प्रदेशों तक फैल गया। जंबुद्वीप केवल भारत नहीं, बृहद भारत सूचित करने लगा। इसके मध्य में मेरु था, जो उत्तर में इला नदी की घाटी तथा दक्षिण में भारत तक पहुंचता था।

उत्तरकुरु : देवभूमि

डॉ. बुद्धप्रकाश का मत है कि उत्तरकुरु में केवल सिक्यांग ही शामिल था। डॉ. अली का मत भिन्न है, लेकिन प्राचीन समय से ही उत्तरकुरु पवित्र माना गया

था। ऐतरेय-ब्राह्मण में इस प्रकार का उल्लेख है। अन्य कथाओं में उसे देवभूमि कहा गया है, जिस पर कोई भी मनुष्य विजय नहीं पा सका था।

इन कथाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि वैदिक युग के ब्राह्मण-समय तक देवजाति भारत के पुरोहित-वर्ग द्वारा अजेय मानी गयी थी। परंतु भारत के आर्य शासकों के मन में राजा नहुष की भांति देवलोक के सिंहासन पर बैठने की और देवों पर शासन करने की इच्छा थी।

महाभारत में भी उत्तरकुरु का उल्लेख है। डॉ. एस. के. अय्यंगार कहते हैं कि उत्तरकुरु के वासी पूर्णतया पार्थिव लोग थे।

यदि हम देवों को पामीर में रहनेवाली मनुष्य-जाति बता रहे हैं तो हम स्वर्ग के देवताओं के अस्तित्व को अस्वीकार नहीं कर रहे हैं। हम कहेंगे कि इंद्र, विष्णु आदि कुछ वैदिक देवताओं का उद्भव प्राकृतिक तथा ऐतिहासिक था, अर्थात स्वर्गीय देवता तथा पार्थिव देवता दोनों का अस्तित्व था और पार्थिव देवता रक्त-मांस से बने मनुष्य ही थे। वायु-पुराण में **'इन्द्रियात्मका : देवाः'** का उल्लेख है। शतपथ-ब्राह्मण में भी **'द्वया वे देवा देवा मनुष्यदेवाः'** की बात कही गयी है। २६वें शतक में भी सायण ने यह स्वीकार किया था कि ऋभुस नाम के तीन देवता मनुष्य ही थे, जिन्होंने तपोबल से देवपद प्राप्त किया था।

देवलोक : तीन प्रदेश

ऋग्वेद में कहीं-कहीं त्रिदिव का उल्लेख मिलता है, जिससे लगता है कि देवलोक के तीन प्रदेश थे। ऋग्वेद के आधार पर राजाराम रणजी इन प्रदेशों को प्रस्रवण, रोचन और समुद्र नाम देते हैं। देवों के भी वसु, रुद्र तथा आदित्य—ये तीन वर्ग थे। इसलिए इनका मत है कि प्रत्येक वर्ग का अपना-अपना प्रदेश होगा। इंद्र को वासव कहा जाता है और उसकी आदित्यों में भी गणना होती है, इसलिए यह कहा जा सकता है कि इंद्र अनेक थे।

विस्मय की बात यह है कि इस त्रिदिव को साइबेरिया के दक्षिण से लेकर पामीर के पठार तक के विशाल प्रदेश के भूगोल में समर्थन मिलता है। यह समग्र प्रदेश पहले रूसी तुर्किस्तान कहा जाता था। अब वह रूस के तीन गणतंत्रों में विभक्त हो गया है। संभव है कि यह प्रदेश ऋग्वेदकालीन प्रस्रवण, रोचन और समुद्र हों। सुपार्श्व और रमणक समरकंद क्षेत्र के किर्गिजिया और उजबेकिस्तान के पौराणिक नाम हैं। संभवतः पौराणिक सुपार्श्व वेदकालीन प्रस्रवण था, क्योंकि वायुपुराण में कहा गया है कि भद्रसोम (सीर) नदी सुपार्श्य के पर्वतों में बहते-बहते फूलमाला की भांति पानी उछाल रही है। इसी प्रकार उजबेकिस्तान के समरकंद प्रदेश का नाम रमणक भी रोचन के समान लगता है और इन दोनों को एक ही प्रदेश माना जा सकता है।

(क्रमशः)

रेगिस्तान में उतरी बहार

• शिवशंकर अवस्थी

वसंत ऋतु की ठंडी-ठडी बयार, मादक वातावरण में संपेरे की बीन का थिरका देनेवाला संगीत, जिसके बोल थे—

तेरा तन डोले
तेरा मन डोले
दिल का किया करार
कौन बजे बांसुली
होगी आधी रात
अब घर जावन दो
मदन सूती सपने में
कौन सुपेरा आया

मुझे लगा कि यह तो वही फिल्मी गाना है जो 'नागिन' में गाया गया है। सोचा लोक-जीवन में फिल्मों का इतना गहरा असर। जिज्ञासा वहीं खड़े एक संपेरे से जाहिर की, तब उसने बताया कि फिल्मवाले तो हजारों चीजें चुराते हैं। यह गीत दरअसल राजस्थानी गीत है, जिसे फिल्मवालों ने चुराकर थोड़ी हेर-फेरकर इसे अपना बना लिया है।

संपेरे से बात चल पड़ी। उसने बताया कि सांपों को वह केवल छह महीने के लिए पकड़ते हैं। सर्दी में सांप छोड़ दिये जाते हैं और गरमी में पकड़े जाते हैं। सांप चलते वक्त अपने पीछे निशान छोड़ जाता है, जिसके सहारे संपेरे उसकी बांबी तक पहुंच जाते हैं। बीन की आवाज पर सांप निकलकर झूमने लगता है, वह बहरा होता है, यह गलत है। झूमते हुए सांप के चारों ओर सात चक्कर लगाकर मंत्रजाप द्वारा उसे वश में कर लेता है। मंत्र के प्रभाव से उसका मुंह बंद हो जाता है। वह काट नहीं पाता और पकड़ लिया जाता है।

तभी मेरी दृष्टि दूर खड़े एक व्यक्ति पर पड़ी। उसकी मूंछों के गुच्छे ने मेरी नजरों को बांध लिया। बरबस पैर उसकी ओर बढ़ गये। एक व्यक्ति ने मुझे रोका और बोला, "जानते हो किससे मिलने जा रहे हो? यह कर्णा डाकू है!"

मैंने कहा, "अच्छा!"

"हां, बड़ा खूंख्वार डाकू था किसी जमाने में, लेकिन अब तो ऐसा गाता है कि बस साहब, मजा आ जाता है। क्या कहने हैं कर्णा के!"

ये संयोग मुझे मिले हैं जैसलमेर में आयोजित रेगिस्तान महोत्सव में। यह अपने किस्म का पहला आयोजन है जो राजस्थान पर्यटन-विकास-निगम ने आयोजित किया है देशी और विदेशी पर्यटकों को रेगिस्तानी भूमि पर आकर्षित करने के लिए। महोत्सव वस्तुतः चार दिन का एक अनूठा आयोजन रहा, जिसमें ऊंटों के नृत्य और करतब, रेगिस्तानी लोकगीत, संगीत के भरपूर कार्यक्रमों के अतिरिक्त यहां के कला-कौशल ने दर्शकों का मन मोह लिया।

(विशेष चित्र : अगले पृष्ठों पर)

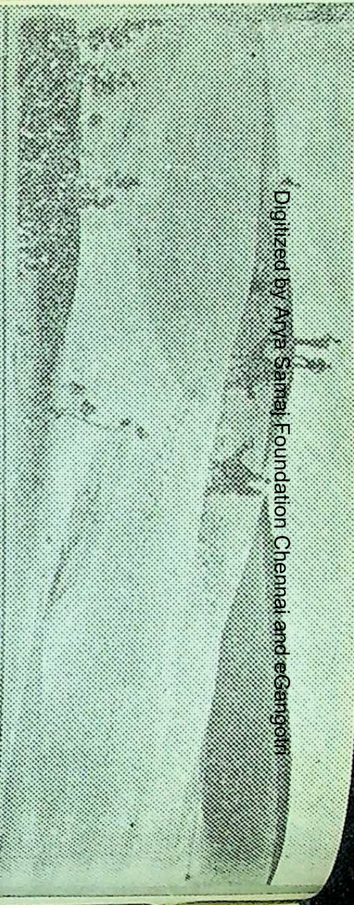

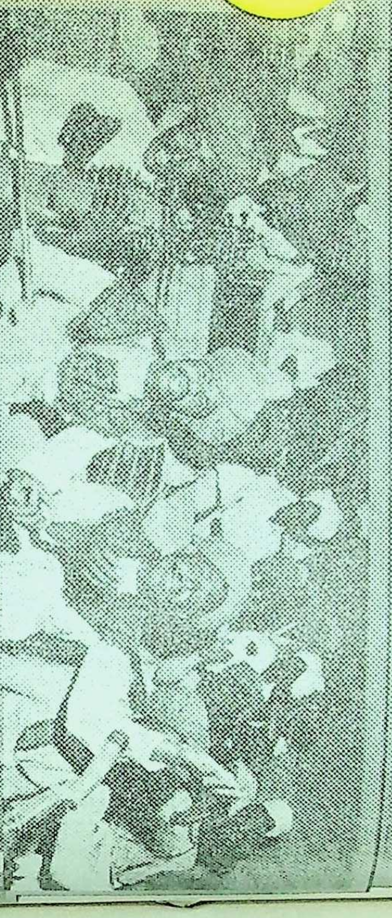

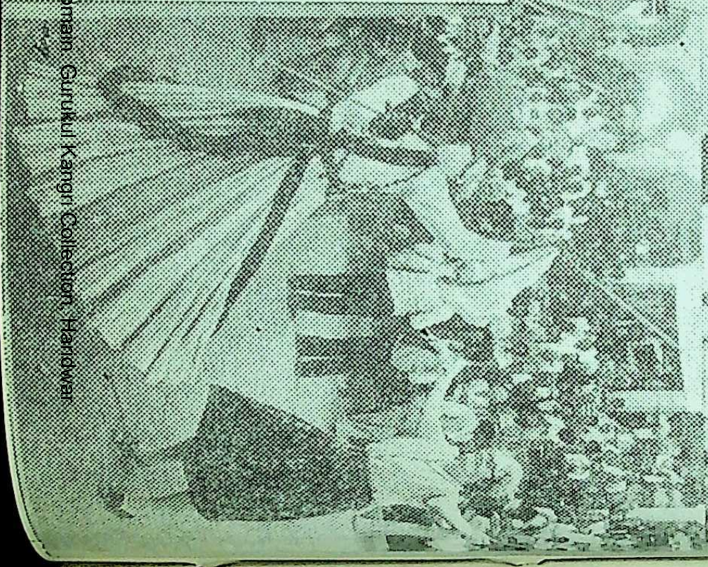

जैसलमेर में आयोजित रेगिस्तान महोत्सव में भाग लेने के लिए रेगिस्तान के 'जहाज' ऊंटों का हजूम

जैसलमेर के दुर्ग को गुंजाता हुआ लोकगीत और संगीत का कार्यक्रम

लोकनृत्य और विदेशी अतिथि

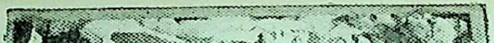

और ये रहे नाचते हुए ऊंट

और ये रहे नाचते हुए ऊंट

दर्शकों की भीड़

कर्णा जो कभी कुख्यात डाकू था अब एक विख्यात गायक है

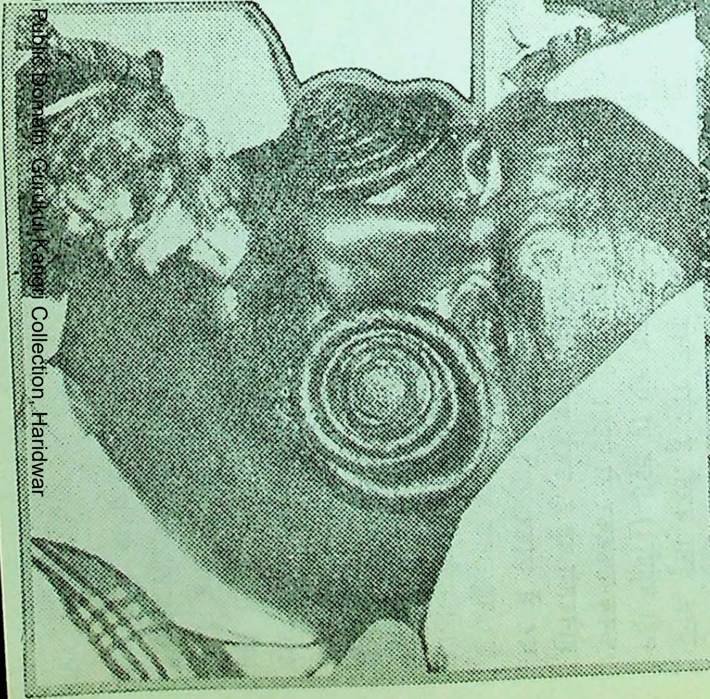

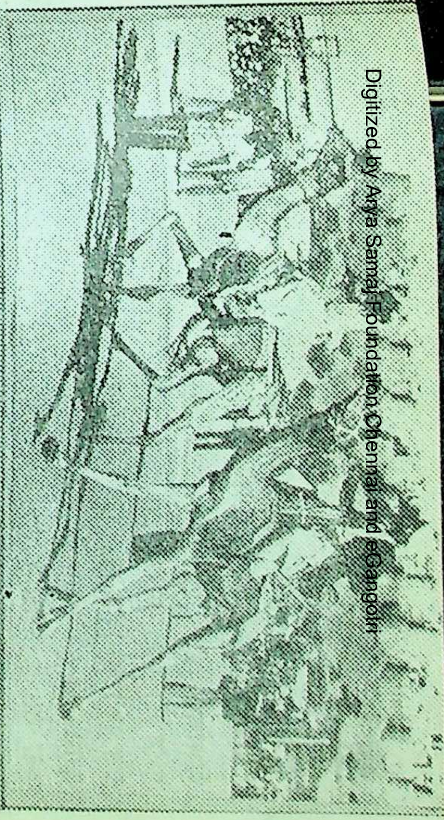

बदलते हुए अर्थ

● कान्ता सिन्हा

बेटे की डायरी सुनीता के सामने खुली पड़ी है। रोते-रोते उसकी हिचकियां बंध गयीं, तब उसने वहीं पलंग की पाटी का सहारा लेकर सिर उस पर टिका दिया, खड़े रहने की शक्ति उसमें नहीं है। लगता है कि कोई गला दबा रहा है, आंखों के आगे अंधेरा छा रहा है, प्राण खींच रहा है कोई और वह अशक्त बनी विमूढ़-सी बैठी है। आंसुओं से डबडबायी आंखें फिर एक बार उस पंक्ति को पढ़ जाती हैं—— 'व्हाई टीना, व्हाई यू रोट, आई हेट देम, आई वोंट स्टे विद देम।' (क्यों टीना ? तुमने यह क्यों लिखा कि मैं उनसे घृणा करती हूं और उनके साथ नहीं रहूंगी।) पढ़ते ही एक बार फिर फफक-फफककर रो उठी। टीना उसकी होनेवाली बहू है, उसके घर की लक्ष्मी ! घर में आकर रहने से ही उसे इनकार है। वह उनसे घृणा करती है। उनसे—— यानी सुनीता से, उसके पति वीरेन्द्र और घर के छोटे बेटे अनुपम से। क्यों करती है वह घृणा ? सुनीता ने तो कभी उससे कुछ कहा नहीं, सदैव सासवाला लाड़-दुलार ही दिया है उसको। फिर . . . फिर क्यों लिखा टीना ने वह सब अनिल को ? अभी तो इस घर में आयी भी नहीं कि फैसला सुना दिया।

साड़ी के छोर से आंखें पोंछकर सुनीता ने मन कड़ा किया और आगे पढ़ने की चेष्टा की। अनिल ने आगे लिखा था, 'दे आर माई फ्लेश एंड ब्लड बट, इफ यू विल इनसिस्ट टीना आई विल हैव टू लीव देम।' (वे लोग मेरे हाड़-मांस और खून हैं टीना, फिर भी तुम चाहोगी तो मैं उन्हें छोड़ दूंगा)।

वह वहीं फर्श पर बिछी दरी पर ढेर हो गयी। बांहों में मुंह छिपाकर लेट गयी, किंतु जीवन के यथार्थ से मुंह कोई छिपा सकता है क्या ? हां, यह सत्य है, उसने अपनी आंखों से पढ़ा है, अनिल की लिखावट है, कोई धोखा या फरेब इसमें नहीं है। अनिल उसकी पहलौठी संतान, उसे छोड़ देगा। वह उसे देखने के लिए भी तरस जाएगी। मां की ममता ने टीस मारी और वह फिर जोर-जोर से रो उठी।

घर में कोई नहीं है। दोपहर के तीन बजे हैं। बाहर लॉन में साये अभी ढलने को हैं। अनिल की पढ़ाई खत्म हुई। डॉक्टर हो गया है, नौकरी पर जाने के पूर्व

घर आया है, होस्टल से। आज सुबह नाश्ता करते हुए बोला था—"मां, मेरा सामान ठीक कर देना, परसों ही तो जाना है दिल्ली।" सुनीता को सामान ठीक करते-करते ही यह डायरी मिली थी। उसमें तो अब इतनी शक्ति भी नहीं है कि फोन करके अनिल को बुला ले और पूछे कि 'क्या मां-बाप को भाड़े पर लिया हुआ था अभी तक, पढ़-लिख लिया और फिर छोड़ दिया ?'

सुनीता की आंखों के आगे टीना का घुंघराले केशों से घिरा भोला-भाला मुखड़ा घूम गया। उसकी बुद्धि-दीप्त आंखें, जिन पर वह देखते ही मोहित हो गयी थी, स्मरण हो आयीं। लंबी तनुत्व लिये देहयष्टि उसे बेहद भा गयी थी और उसने प्रथम साक्षात्कार में ही मन ही मन उसे अपनी बहू मान लिया था।

अनिल तब डाक्टरी के चौथे वर्ष में था, केवल उन्नीस वर्ष का। वह उसे बताना नहीं चाहती थी कि उसने उसके लिए एक लड़की देख ली है, किंतु बातों के तो पर लगे होते हैं, वे छिपायी नहीं जा सकतीं। टीना की अम्मा का बार-बार आना और टीना का अर्थपूर्ण दृष्टि से देखना अनिल से छिपा न रहा।

सुनीता ने लाड़मिश्रित आश्चर्य से बेटे को देखकर, दुलार से उसके एक-दो बाल पीछे करते हुए कहा था, "तुम्हें पसंद है टीना ?"

"पसंद-वसंद छोड़ो। अभी मुझे 'कैरियर' की पड़ी है। तुम्हें लड़की खोजने की पड़ी है! जल्दी किस बात

की है।"

यह रिश्ता तो स्वयं सुनीता ने ही तय किया था। सुनीता को लड़की इतनी भा गयी थी कि वह 'न' भी करना नहीं चाहती थी और 'हां' कहते हुए हिचकिचाहट होती थी, लड़के की छोटी आयु के कारण। फिर टीना की मां ने ही समस्या का समाधान खोज निकाला था कि 'छेका कर दिया जाए, शादी जब आप कहेंगी तभी होगी।' सुनीता ने छेका ले लिया था।

अब लगता है यहीं पर उस से भूल हो गयी थी !

वीरेन्द्र अनिल का रंग-ढंग देखकर सदैव यही कहते, "लड़का गया हाथ से !"

"नहीं-नहीं, शादी के बाद ठीक हो जाएगा।"

"जिसे अभी कोई लाज नहीं है, शादी के बाद तो और भी छुट्टी मिल जाएगी।" वीरेन्द्र एक धमाके से कह जाते।

"तब घर में ही तो रहेगा," सुनीता धीमे से कहती।

"तब क्या-क्या करेगा, यह तो समय ही बतलायेगा। क्या पहले दो-चार साल तक मंगनी नहीं होती थी ? क्या मजाल कि कोई सुसराल में आये-जाए भी ! तुम आधुनिक हो न, लड़के को छुट्टी दिये रहती हो।" वीरेन्द्र उलाहना देते।

"तुम ही कहो, आज क्या बांधकर रखने का जमाना है ?" सुनीता पूछ

वीरेन्द्र चुप हो जाते, इस बात का उत्तर उनके पास भी न था। सुनीता सोचती, लड़के का रिश्ता तो किया था मन की प्रसन्नता के लिए, किंतु यह कैसी परिस्थिति उत्पन्न हो गयी है कि जब-जब भी अनिल घर आया है, एक तनाव-सा छा जाता है! एक-आध बार सुनीता ने उसे चांटा भी मारा था। अनिल चुपचाप सह जाता था सुनीता उसके चेहरे को देखती है तो उसे मन ही मन बेटे पर दया आ जाती है, कैसी भूल-भुलैया में डाल दिया है, उसने बेटे को। इसी दया, ममता के मारे तो वह जबान फेर नहीं सकी।

किंतु, अनिल ने तो बेटा होकर मां को छलने की ठान ली है।

खाने के कमरे में लगी घड़ी ने चार बजाये, तो उसे सुध आयी। वह उठकर बैठ गयी। मन में आया कि अनिल को, जो टीना के यहां बैठा हुआ है, फोन करके बुला ले। किंतु दूसरे क्षण उसने उस खयाल को बदल दिया। टीना के घर जब-जब अनिल जाता है, उसने उसे कभी फोन नही किया, एक सासवाली गरिमा ने उसे सदैव घेर लिया है। 'आ जाएगा अभी' सोचकर वह नाश्ता बनाने के लिए उठ गयी। सबसे पहले उसने सिरदर्द की टिकिया खायी, हाथ-मुंह धोया, किंतु मन था कि बार-बार उस पन्ने पर ही लौटता था जहां लिखा था कि 'आई हेट देम' और 'इफ यू विल इनसिस्ट टीना, आई हैव टू लीव देम।'

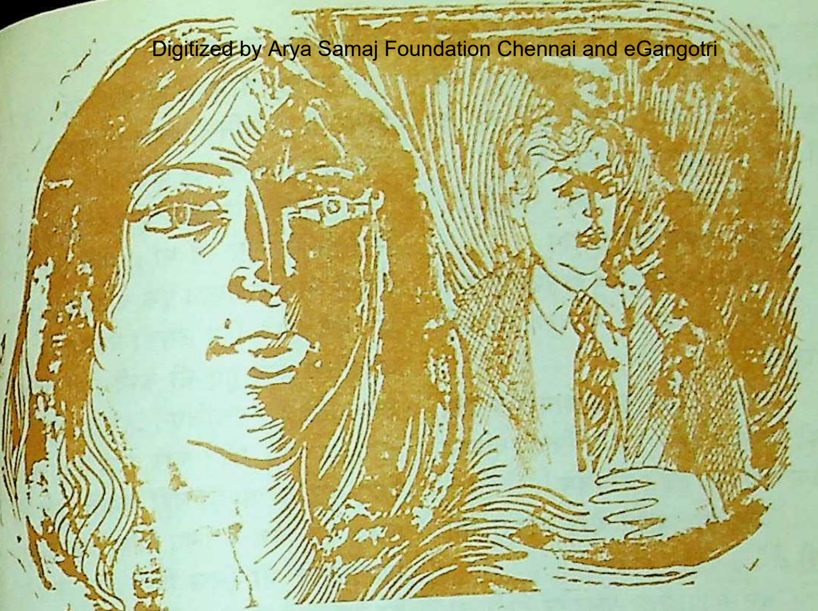

बाहर सांझ घिरने की तैयारी में है। खिड़की के कांच में से अस्त होते हुए सूर्य की लालिमा छन-छनकर भीतर आ रही है। उसी लालिमा में झूमती मधुमालती के लाल और सफेद गुच्छे भी आज सुनीता का ध्यान बंटाने में असमर्थ हैं। बिना साड़ी बदले ही वह गुमसुम-सी खाने की मेज के पास एक कुरसी पर बैठी है। शोभा को नाश्ते का आदेश देकर वह मन ही मन साहस बटोर रही है कि आज वह अनिल से अवश्य पूछेगी कि मां-बाप क्या कोई बेजान वस्तु हैं जिनकी कोई धड़कन नहीं, कोई इच्छा नहीं! क्या अपनी पहली संतान से उन्हें कोई आशाएं नहीं होतीं? जब तुम छोटे थे, असमर्थ थे, तब यह लड़की कहां थी? और आगे उससे सोचा भी नहीं गया, आंसुओं से मुंह भीग गया।

सबसे पहले अनिल ही आया। स्नानगृह में से उसके हाथ-मुंह धोने की आवाज आ रही है। सुनीता ने भी झटपट मुंह पोछ डाला और स्वस्थ होते हुए, सेव तराशने लगी। बाहर गाड़ी की आवाज हुई, वीरेन्द्र भी आ गये, छोटा अनुपम भी। सभी हाथ-मुंह धोकर खाने की मेज पर विराजमान थे। अनिल मां को देखकर मौन है, वीरेन्द्र ने मां-बेटे को चुप देखकर समझा कि कहीं कुछ गड़बड़ है। चारों ओर एक खामोशी-सी छायी हुई थी, तभी अनुपम बोला, “क्या बात है मां, कुछ हुआ क्या?”

अनिल ने आशापूर्ण नेत्रों से देखा, वीरेन्द्र चुपचाप खाते रहे। सुनीता प्रश्न

टाल गयी। दिन-भर से थके-मांदे हैं कुछ खा-पी लें तो वह पूछे। चाय डालते हुए वह पूछ ही बैठी, "अनिल, तुम्हें कोई कहे कि मां-बाप को छोड़ दे तो छोड़ दोगे?"

"ऐसा आप क्यों पूछ रही हैं?" अनिल कुछ समझ नहीं पाया।

"बताओ अनिल, मैं यूं ही पूछ रही हू।"

"नहीं, मैं अपने मां-बाप को क्यों छोड़ूंगा!"

"तब ... तब तुमने डायरी में ऐसा क्यों लिखा है कि 'इफ यू विल इनसिस्ट टीना आई विल हैव टू लीव देम!'

"ओह मां, आपने मेरी डायरी क्यों पढ़ी?"

"बस यूं ही, उलट-पलटकर देखी तो निगाह पड़ गयी।"

"किसी की डायरी नहीं पढ़ते, आप ही ने तो सिखाया है मां।"

अब वीरेन्द्र बोला उठे, "ठीक है, तुम प्रश्न से बचो नहीं—मां जो पूछती है उत्तर दो।"

अनिल ने दृढ़ता से उत्तर दिया, "नहीं मैं छोड़ूंगा क्यों, कभी नहीं छोड़ूंगा।"

सुनीता थोड़ी आश्वस्त हुई। फिर पूछ बैठी, "टीना हमसे घृणा क्यों करती है?"

"नहीं, घृणा नहीं करती।"

"तुमने डायरी में लिखा है।"

वीरेन्द्र स्थिति को समझते हुए बोले, "अनिल यदि कुछ ऐसी बात है, तो तुम्हें छिपाना नहीं चाहिए।"

"पापा, ऐसी कोई बात नहीं।" अनिल न विश्वास दिलाया।

सुनीता बीच में ही कह उठी, "बा छिपा रहे हो अनिल, बताओगे नहीं तो ह कैसे उसके रंज को दूर करेंगे।"

अनिल ने निढाल होकर कहा, "व मेरा ही अपराध था मां। तुमने उस बा देरी से आने के कारण एक चांटा मार दि था, मैंने दूसरे दिन उसको बताया कि म आधुनिक होते हुए भी कभी-कभी पुरान बन जाती हैं। इसलिए ... इसलिए ... आई हेट माई मदर फॉर दिस ... इसके लिए मुझे मां अच्छी नहीं लगती। वह तो केवल एक क्षण के लिए विचार आया था फिर उसने भी लिख दिया कि 'आई ट हेट देम ...आई वोंट स्टे विद देम'। इसका कुछ अर्थ थोड़े ही है। यहां 'हेट' का अर्थ घृणा मत लो मां, तुम्हारा वह संस्कारगत रुख कभी-कभी नहीं भाता।"

वीरेन्द्र बोल उठे, "किंतु उस लड़की का दिमाग तो शादी से पहले ही पूर्वाग्रह से भर गया है, वह क्या कभी हम लोगों को आदर-सत्कार दे पायेगी? आज परिवार इसी प्रकार टूटते हैं।"

सुनीता ने स्थिति को हाथ में लेते हुए कहा, "नहीं, ऐसी बात नहीं है। हमारा प्यार उसे बांध लेगा। यह छोटा-सा परिवार मैं टूटने न दूंगी।"

"लड़के को और 'माडर्न' बनाओ, मुझे क्या है!" कहते-कहते वीरेन्द्र उठकर चले गये।

अनिल अपराधी-सा बना नाश्ते की

तश्तरी की ओर देखने लगा ।

"मां, मैं सच कह रहा हूं, टीना तुमसे घृणा नहीं करती है," अनिल अपने पूरे मनोबल से विश्वास दिलाता हुआ बोल उठा।

"ठीक है बेटे, जो भी है ।" सुनीता अनमनी-सी कह गयी । अनिल को मां का यह स्वर कहीं चुभ गया । वह कुरसी के निकट आया, मां के कंधे पर हाथ रखता हुआ बोला, "मैं तुम्हें प्यार करता हूं मां, तुम्हारे बिना, पापा के बिना, अनु के बिना नहीं रह सकता । प्लीज, इतना तुम जान लो मां ।"

सुनीता का गला भर आया । वह समझ गयी कि भूल तो हमारी ही है . . . यह तो बच्चा है। अंगरेजी बोलते हैं, अंगरेजी में सोचते हैं—अंगरेजी में लिखते हैं । नाराजगी प्रकट करने का भी उस भाषा में 'हेट' एक सामान्य शब्द है । बच्चे दिन में दस बार कहते हैं, 'आई हेट दिस ।' वह नाहक ही परेशान हो गयी . . . सोचते हुए बेटे के सिर पर हाथ फेरती रही ।

—४३-ए, सिविल लाइंस, नागपुर

पिऊ कहां ?

नशे में धुत कवि महोदय ने लिखा
क्या जमाना आ रहा है
नशाबंदी के दिन में प्यासा चातक
'पिऊ कहां ?' की रट लगा रहा है !

तीनमूर्ति के सामने रहस्यमय भूतों का आतंक

तीनमूर्ति—भारत के पहले प्र मंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू निवास । अब नेहरू-संग्रहालय । दर्शकों का आकर्षण-केंद्र । तीनमूर्ति बाहर द्वार पर सड़क के बीच चौराहे खड़े हैं पत्थर के तीन सैनिक ! यह दा में एक स्मारक है, लेकिन तीनमूर्ति जानेवालों या दिल्ली के निवासियों शायद कभी यह जानने की कोशिश की कि यह स्मारक किसका है, कि और कब बनवाया है ।

एक जमाना था जब यहां पर का डेरा बताया जाता था। शाम के लके में किसी यात्री का यहां से सलामत गुजरना आसान नहीं था। एक किसी का रुदन और चीत्कार कभी कहकहों की आवाज से यात्री जाता था और उसके पैर डगमगाने थे। अतीत की भयावह स्मृति का आभास

छह सौ वर्ष से अधिक का हुआ जब मुहम्मद तुगलक दिल्ली तख्त पर था। कहते हैं कि उसे का बड़ा शौक था और जहां आज मूर्ति स्थित है, वहां तब उसकी गाह थी। यहां के जंगली और बीहड़

• देवेश

में वह हिरन से लेकर शेर-चीतों तक का शिकार किया करता था। इसी उद्देश्य से उसके लिए एक पक्का मचान भी बनाया गया था, जिसके टूटे-फूटे खंडहर आज भी तलाश किये जा सकते हैं।

जमाने ने करवट बदली और मुगलों के समय में अनेक छोटी-मोटी लड़ाइयों से यह मैदान अछूता नहीं रहा। फिर अंगरेज आये और उन्होंने इसे एक नया रूप दिया। जंगल काटकर साफ कर दिये गये। यह जमीन बहुत अच्छी तरह मनुष्य के पांव-तले आ गयी। तीनमूर्ति-भवन में ब्रिटिश कमांडर-इन-चीफ का निवास रहा और चौराहे पर प्रथम विश्वयुद्ध (१९१४-१८) में शहीद हुए सैनिकों का स्मारक खड़ा कर दिया गया।

'तीनमूर्ति' की यात्रा के बिना राजधानी का भ्रमण अधूरा रह जाता है। आजकल 'तीनमूर्ति' राजधानी ही नहीं, देश का महत्त्वपूर्ण तीर्थ-स्थल बन गया है।

लेकिन, वास्तविक 'तीनमूर्ति' यह 'तीनमूर्ति भवन' नहीं बल्कि कुछ और ही है—वह है इस भवन के सामने निर्मित 'तीनमूर्ति' स्मारक। कांसे में ढली, भव्य, आदमकद, अस्त्रों से लैस, 'अटेंशन' की मुद्रा में खड़ी मूर्तियां। इनके नाम वहां लगे एक प्रस्तर पर अंकित हैं। ये स्मारक है प्रथम महायुद्ध (१९१४-१८) में स्वेज-नहर, गाजा तथा यरुशलम की लड़ाइयों में

[विजयी एवं शहीद हुए तीन गैर-कमीशन-शुदा सैनिकों के । जोधपुर, मैसूर तथा हैदराबाद के इन लांसरों ने भावनगर, कश्मीर और काठियावाड़ की अपनी टुकड़ियों के साथ प्रथम महायुद्ध में सिनाई, फिलिस्तीन और सीरिया में लड़ाइयां लड़ी थीं और अपनी जान देकर विजयश्री प्राप्त की थी ।

घटना २३ सितंबर, १९१८ की है। जनरल अलेनबी के रेगिस्तानी घुड़सवार कोर का पांचवां दस्ता फिलिस्तीन भूमध्यसागरीय किनारे स्थित है स्थान की ओर बढ़ रहा था। इसमें अलेनबी सिनाई रेगिस्तान में अनेक अभियानों के बाद यरुशलम के पवित्र पर कब्जा करने में सफल हो चुका सदियों पहले सलीबी युद्ध (क्रुसेड) गाडफ्रे डि बुईलोन ने यरुशलम पर कार किया था, लेकिन उसके बाद मुसलमानों के कब्जे में आ गया जनरल अलेनबी इतने समय बाद पर कब्जा करनेवाले पहले व्यक्ति थे ।

चौराहे पर स्थित तीन मूर्तियां

यरुशलम से भूमध्यसागरीय तट फासला अधिक न होने पर भी ब्रिटि सेना को वहां तक पहुंचने में लगभग मास लगे थे। एक घुड़सवार ब्रिगेड टुकड़ियां दो ओर से हैफा की ओर रही थीं । एक का नेतृत्व जोधपुर मैसूर टुकड़ियों के लांसर कर रहे कुछ घंटे बाद उन्होंने मैदान के पर रेल की पटरी को पार कर लिया कार्मेलहीम की पहाड़ियों तक पहुंच यह हैफा के बिलकुल दक्षिण में है।

हैफा में प्रवेश करना कोई बात नहीं थी । वहां कड़ा मुकाबला पड़ता । पूर्व की ओर दलदल और रेगिस्ता वाला निचला स्थान था, जिसे पार बड़ा कठिन था । दक्षिण में जरमनों एक बस्ती थी, जो एक हजार फुट ऊंचाई पर थी । वहां शक्तिशाली

सेना थी । इसलिए दक्षिण की ओर से हैफा पर आक्रमण करना बहुत कठिन था । मैसूर लांसर्स (घुड़सवार सेना) ने दो टुकड़ियों में बंटकर हैफा पर पूर्व तथा दक्षिण की ओर से हमला किया । मैसूर लांसर्स के पीछे थे जोधपुर लांसर्स । इन्हें एक नदी पार करके आगे बढ़ना था, लेकिन भीषण जरमन गोलाबारी के कारण सफलता नहीं मिल पा रही थी । एकाएक जोधपुर लांसर्स ने अपनी दिशा बदलकर सड़क तथा रेलमार्ग के बायीं ओर से बढ़ना शुरू किया । उसका नेतृत्व कर रहे थे मेजर दलपतसिंह । अंत में वह शहीद हो गये ।

इसी बीच मैसूर लांसर्स ने चट्टानी प्रदेश की कड़ी चढ़ाई करके कार्मेलहीम की जरमन चौकी पर कब्जा कर लिया। मैसूर लांसर्स की दूसरी टुकड़ी पूर्व की ओर से समुद्र तट के साथ-साथ बढ़ते हुए तुर्कों से भिड़ गयी और उन्हें खदेड़ दिया । फलस्वरूप १,३५१ बंदी बनाये गये, १७ तोपें और ११ मशीनगनों पर कब्जा कर लिया गया ।

मेजर दलपतसिंह की पूर्ण सैनिक सम्मान के साथ अंत्येष्टि कर दी गयी । उन्हें वीरता के लिए मिलिट्री-क्रास प्रदान किया गया ।

हैफा पर कब्जा होने से अंगरेजों के हाथ में आगे के सैनिक अभियान के लिए एक महत्त्वपूर्ण बंदरगाह आ गया था ।

मूर्ति के नीचे अंकित शिलालेख

हैफा के युद्ध में जो लड़ते-लड़ते शहीद हुए थे उन मेजर दलपतसिंह के अलावा लेफ्टीनेंट-कर्नल होल्डन, जिन्होंने जोधपुर लांसर्स का नेतृत्व करते हुए पहाड़ियों पर से हैफा पर हमला किया था, लेफ्टीनेंट मारिस मेरेडिथ तथा वायने रेमांड, सैनिक शरीफ बेग, लछमनसिंह, अन्नाजी, धूमल तथा रघुनाथ राव के नाम उल्लेखनीय हैं।

किसी जनसमुदाय के लिए शासन प्रणाली की उपयुक्तता इस बात पर निर्भर करती है कि वह जनसमुदाय किन परिस्थितियों में रहता है। कोई भी सरकार उसी मात्रा में सफल मानी जा सकती है जिस मात्रा में वह शासितों के अनुकूल अपने को बना सकती है। —जेनफर्स

तनाव मुक्ति

विजयसिंह, फैजाबाद : (१) मेरे छोटे भाई के बीमार होने पर उसका एक मनोरोग-चिकित्सक से इलाज कराया था। 'शाक' भी लगाया गया। कोई लाभ न होने पर उसे दूसरे चिकित्सक को दिखाया गया। उनकी दवा से उसे कुछ लाभ हुआ, पर एक ही काम को वह कई बार करता है, जिसे 'मेंटल रिटार्डेशन' कहते हैं। क्या 'इलेक्ट्रिक शाक' लगने से स्मृति-लुप्त होने का डर रहता है? (२) नींद की गोलियां खाते रहने से क्या इसकी आदत पड़ जाती है? (३) मानसिक तनाव के रोगी को यदि हरे और नीले रंग के कमरों में रखा जाए तो क्या रोगी को लाभ हो सकता है?

(१) इलेक्ट्रिक 'शाक' से स्मृति लुप्त नहीं होती। हां कुछ समय के लिए कमजोर हो सकती है, किंतु बाद में लौट आती है। यदि उम्र ५० वर्ष के आसपास हो तो स्मरण-शक्ति पूरी तरह नहीं लौटती। जहां तक आपकी समस्या है, पहले रोग का निदान होना चाहिए। कई बार मनोरोग के लक्षण स्नायुविक अस्तव्यस्तता (न्यूरोलाजिकल डिसआर्डर) में प्रकट होते हैं। उनमें 'शाक' नहीं दिया जाता। बार-बार किसी चीज को करना 'मेंटल रिटार्डेशन' का लक्षण नहीं, 'आब्से (ग्रस्तता) हो सकता है।

(२) मनोरोग में नींद की गोलि नहीं, अपितु 'ट्रैंक्विलाइजर' दिये जा हैं। इनसे आदत बनने का खतरा नहीं

(३) हरे और नीले रंग के कमरे कोई विशेषता नहीं। हां, वातावरण के अनुकूल हो, उसकी विवशता या का मजाक न उड़ायें। उसे कुछ न काम करने की आवश्यकता है। चाहे क्यों न हो, जरूर करने दें।

अनुज, छपरा : आरंभ में मेरी अ यन में गहरी रुचि थी। नवीं कक्षा में अच्छी न होने के कारण मुझे परीक्षा नकल करनी पड़ी। तब से वही आद चली आ रही है। मुझे लग रहा है मैं जीवन में सफल नहीं हो पाऊं मेरा लक्ष्य एक कुशल अभियंता ब का है, परंतु इंजीनियर के कार्यों कल्पना करके पढ़ाई में एकाग्रचित रह पाता।

आप किशोरावस्था से गुजर रहे हैं इस अवस्था में मनोस्थिति में उलथ-पुथ मची रहती है। कल्पना भी बहुत प्र होती है। बीती बातों पर पश्चाताप क से कोई लाभ नहीं। आगे की सोचें। अ

लक्ष्य वहुत ऊंचा न रखें। पहले कुछ नीचा लक्ष्य रखकर उसकी पूर्ति करें आपकी कल्पना उड़ानें (फ्लाइट) भरती हैं। जो कार्य आप कर नहीं पाते, वह कल्पना में कर प्रसन्न हो जाते हैं। 'फ्लाइट' का उलटा है 'फाइट' यानी कर्म-युद्ध में कूद पड़ना। यदि आप अपने वर्तमान समय को नष्ट किये विना कार्य करेंगे तो मनोरोगी वनने के वजाय वास्तव में कुछ वन जाएंगे।

उपेन्द्रकुमार, मुजफ्फरनगर : १९ वर्षीय, बी. एस-सी. का छात्र हूं। मैं कभी बेहद उदास या दुःखी और कभी बेहद खुश हो जाता हूं। कभी-कभी मानसिक आघात के कारण आवेग पैदा हो जाता है। जवाब देते समय मेरा गला रुंध जाता है और आंसू टपक पड़ते हैं। प्रायः मुझे अवसाद घेर लेता है, तब मैं बेतरह छटपटाया करता हूं।

दुःखी होना और खुश होना एक सामान्य बात है परंतु वेहद और बिना बात के ऐसा होना 'साइक्लोथेमिक पर्सनेल्टी' के चिन्ह हैं। ऐसे मूड यदि लंबे समय तक रहने लगें और परिवार का कोई सदस्य (मां-वाप की पीढ़ी में) मनोरोग से पीड़ित हुआ हो या फिर उदासीनता व उन्माद बहुत गंभीर रूप धारण करें, तो मनोरोग-चिकित्सक को दिखाकर इलाज कराना आवश्यक है।

क ख ग : मैं, मेरी बहनें और मां, पिताजी के असामान्य व्यवहार एवं दादा-दादी के दुर्व्यवहार से बेहद परेशान हैं। हमारे घर में लड़का और लड़की में पक्षपात किया जाता है। मैं मानसिक तनाव से घिरी रहती हूं। एक युवक मुझसे विवाह करना चाहता है, मेरे मना करने पर रो देता है।

इस स्तंभ के अंतर्गत अपनी समस्याएं भेजते समय अपने व्यक्तिगत जीवन का पूरा परिचय, आयु, पद, आय, एवं पते का उल्लेख कृपया अवश्य करें।

हमारा समाज पुरुष-प्रधान समाज है। अकसर परिवार में लड़के-लड़की में अंतर रखा जाता है। आपके पत्र से ऐसा प्रतीत होता है कि आपके पिता एक 'पैथालाजिकल पर्सनेल्टी' हैं, जो अपनी मनोवृत्ति के लिए आप लोगों का भविष्य बिगाड़ सकते हैं। जिस युवक का आपने जिक्र किया है, शायद वह ऐसे वातावरण में पला है जिसमें स्त्रियों से बोलचाल की मनाही होती है। जो लड़का अपनी प्रेमिका के सामने रो पड़ता हो, उसका पौरुषत्व (मैस्क्युलिन पर्सनेल्टी) उभरा नहीं है। मेरे विचार से उससे धीरे-धीरे पिंड छुटा लें। आप अपनी समस्या का समाधान सोच समझकर करें।

अ ब स, दिल्ली : मैं विश्वविद्यालय की छात्रा हूं और एक प्राध्यापिका को चाहती हूं। मैं दिन-रात उसके बारे में ही सोचती रहती हूं, एकाग्रचित्त होकर पढ़ भी नहीं पाती। मेरा पुरुष-वर्ग के

प्रति कोई आकर्षण नहीं है। क्या मुझ में स्त्रियोचित हारमोनों की कमी है, जिससे पुरुष-वर्ग के प्रति मैं आर्कषित नहीं हो पाती।

आपको पहले यह समझना होगा कि आप पुरुष-वर्ग से घृणा क्यों करती हैं। बचपन में ही पुरुष-वर्ग का रवैया या हर समय उनका रोब, देखकर उनके बारे में कई गलत धारणाएं बन जाती हैं, जो वास्तविकता से दूर होती हैं। प्राध्यापिका आपसे बड़ी हैं, शायद उसके प्रति आपका समलैंगिक आकर्षण है। इस संबंध में यह जान लेना आवश्यक है कि आप पुरुष का रोल किसे देती हैं।

प्राध्यापिका को अपना बनाना अवास्तविक है। पहले आप परीक्षा में अच्छे नबंर लाइए, फिर बैठकर अपनी पिछली जिंदगी का मनन करें, अपने माता-पिता, बचपन के अध्यापक-अध्यापिकाओं आदि के बारे में। तब आपकी समस्या का समाधान संभव है।

उदिता, भागलपुर : मैं इंटर साइंस की १७ वर्षीया छात्रा हूं। दो-तीन वर्ष हुए एक औघड़ ने मेरा हाथ देखकर बताया था कि मेरी कुल आयु केवल ३५ वर्ष है। इस भविष्यवाणी के बाद से मैं प्रायः यह स्वप्न देखती हूं कि एक संन्यासी मुझे नींद से जगाकर कहता है, 'बेटी चलो, अब तुम्हारी आयु पूरी हुई !' यह सुनते ही सचमुच मेरी नींद खुल जाती है और मैं घबराकर पसीने-पसीने हो जाती हूं। इस घबराहट औ डर से मुझे किस तरह छुटकारा मि सकता है ?

यह मानसिक चिंता (ऐंग्जा स्टेट) का लक्षण है। चिंता है 'भो की, दिन में तो आप विपरीत भाव में बदल लेती हैं, परंतु रात को अपने असली डरावने रूप में जाती है।

हस्तरेखाओं से भविष्य बताने विद्या में कितना तथ्य है, यह अभी ज्ञा नहीं है। हां, इस विद्या का दुरुपयो अवश्य किया जाता है। इसके नाम कुछ व्यक्ति लोगों में डर, चिंता आ पैदा कर पैसा ऐंठने से नहीं झिझकते। कई नौसिखिया भी होते हैं। डॉक्ट होने के नाते मैंने बहुत-से मरीजों देखा जिन्हें ज्योतिषियों ने लंबी उ बतायी थी, लेकिन उनकी आकस्मिक मृ हो गयी और ऐसे लोग जिनकी अल्प बतायी थी, दीर्घजीवी हुए हैं। ऐसे माम में भविष्यवक्ता यह स्पष्टीकरण देते कि कर्मों द्वारा रेखाएं बदल जाती और इसलिए विपरीत बातें हो जात हैं।

आपका स्वप्न आशंकित मृत्यु का प्रतीक नहीं, परंतु आपके भय तथा चिंताग्रस्त मनोस्थिति का परिणाम है। आशा है, आप प्राकृतिक (नेचुरल) ढंग से जीवित रह सकेंगी। आपको मृत्यु की चिंता बिलकुल नहीं करनी चाहिए। ●

वहां काला आदमी सौभाग्य सूचक हैं

• राजेन्द्र अवस्थी

“आप हमारे आदरणीय मेहमान हैं, हजार बार स्वागत”, मुझे आज भी उस वृद्ध के ये शब्द भूलते नहीं ! साल समाप्त होने में दो-तीन दिन बचे थे और ग्लासगो में उस शाम हम मेहमाननवाजी का जाम पी रहे थे। यह सज्जन स्कॉटलैंड के 'पोयट लारयेट' हैं और बेहद सम्मानित व्यक्ति हैं।

आयु साठ वर्ष से कम नहीं होगी, घर में वे और उनकी पत्नी थी। बच्चे सब बड़े होकर यहां-वहां चले गये। उनका घर बहुत सीधा और सहज था। स्कॉटलैंड के घरों की विशेषता ही रही है कि वे लकड़ी के बने होते हैं और बहुत साधारण, किंतु आकर्षक होते हैं। घर के भीतर का फर्नीचर हमारे यहां के पारसी-घरों में मिलनेवाले फर्नीचर से बहुत मिलता-जुलता है। उन्होंने पहले तो भारत की बहुत तारीफ की और फिर हमारे अचानक आगमन पर अत्यंत हर्ष व्यक्त किया,

एडिनबरा का गौरव : १९वीं शताब्दी के प्रसिद्ध उपन्यासकार सर वाल्टर स्काट का स्मारक

हमें लगा, सचमुच स्नेहभरी अगाध आत्मीयता और उनके वृद्ध, शून्य तथा नीरस जीवन में एक खुशनुमा शाम मिलने का अवसर हर तरह से वे भोग लेना चाहते थे। लंबी बातचीत के दौरान उन्होंने कुछ टेपरिकार्ड किये हुए, लोकगीत सुनाये और स्कॉटलैंड के सशस्त्र घुड़सवारों की वीरता के गौरवगान भरे हुए उन महान गीतों को दोहराया, जो वहां के अतीत को साकार कर रहे थे।

पहाड़ों की चोटियों से
छलांगें भरते हैं, वे !
मकड़ी के जाले पर पड़े
ओस कण-से
मजबूत हैं उनके पुट्ठे !
हवाओं-से तैरते हैं
ये हमलावर
और साथ ही गाते हैं
मेरे देश स्कॉटलैंड के गीत!

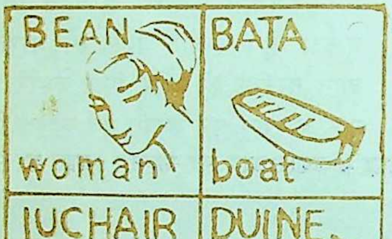
BEAN
woman
BATA
boat
IUCHAIR
key
DUINE
man
CAISE
cheese
GLEANN
glen
TRI
3
three
CEITHIR
4
four

भेंट किये गये रूमाल
का एक अंश

स्कॉटलैंड इंगलैंड के दूसरे हिस्सों बहुत भिन्न है और ग्लासगो वहां प्रवेश द्वार है। यहां के लोग, यहां प्रवृत्ति, रहन-सहन का ढंग और संस् भरे हुए प्राचीन-साहित्य के मुखरित यहां की अपनी उपलब्धियां हैं। सम स्कॉटलैंड सैरगाहों और चारागाहों भरा पड़ा है। दुनिया भर में जहां- स्कॉच-व्हिस्की बेची जाती है, सबकी स्कॉटलैंड में बनती है। हमने 'रा सैल्यूट से लेकर' 'वाट ६९' तक के कारखाने देखे हैं और उनसे लगे उन जंगलों की सैर की है, जहां के बड़े-बड़े बैरल वर्षों से पड़े हैं और ऊपर उन्हें खोलने की तारीख लिखी है, जो शराब जितनी पुरानी होगी, उ ही अच्छी और कीमती होगी।

तीस दिसंबर की शाम ! तीन- व्यक्ति हमसे मिलने आये हैं, इनमें हैं, लेखक हैं और डॉक्टर भी हैं। हैं, एक जनवरी को सुबह-सुबह

हमारे घर आना पड़ेगा।"

"भाई· मैं तो सुबह देर से उठता हूं।" "लेकिन आपको नये साल के दिन हमारे लिए थोड़ा त्याग करना होगा।"

बातचीत के बाद पता लगा कि स्कॉटलैंड में एक प्राचीन परंपरा है, साल के नये दिन सबसे पहले यदि उन्हें किसी काले आदमी के दर्शन हो जाते हैं, तो वह सौभाग्य-सूचक माना जाता है और यह समझा जाता है कि उस पूरे वर्ष उनके घर में समृद्धि रहेगी और उनका जीवन सुखमय बीतेगा। यह धारणा इतनी गहरी बद्धमूल है कि यदि कोई काला आदमी उन्हें नहीं मिलता तो वे अपने सिरहाने काले रंग का कोयला लेकर सोते हैं और सुबह उठते ही सबसे पहले उस कोयले को देखते हैं, फिर कोयला लिये एक दूसरे के घर जाना उनका रिवाज है। स्कॉटलैंड में कुछ भारतीय भी हैं, इसलिए वहां के लोगों का परिचय जिन भारतीय परिवारों से है, वे उन सबको आदर के साथ नये वर्ष की सुबह अपने घर आमंत्रित करते हैं, हमारे लिए कठिनाई तो यह थी कि हम इस तरह कितने घर जाएंगे। तीन-चार दिन वहां रहने के बाद अपने भारतीय मित्र डॉक्टर मिश्रा के माध्यम से बहुत से स्काटिश परिवारों से हमारा परिचय हो गया। बहरहाल हमारे जाने से यदि कुछ घरों को वर्ष भर के लिए सौभाग्य का संदेश मिल सकता है, तो भारतीय दृष्टि के अनुसार 'परोपकार के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करने में नहीं हिचकना चाहिए।' विश्वास कीजिए नये साल हम आठ-दस परिवारों में गये और जो स्वागत और मेहमानवाजी हमें मिली, वह आज भी नहीं भूलती !

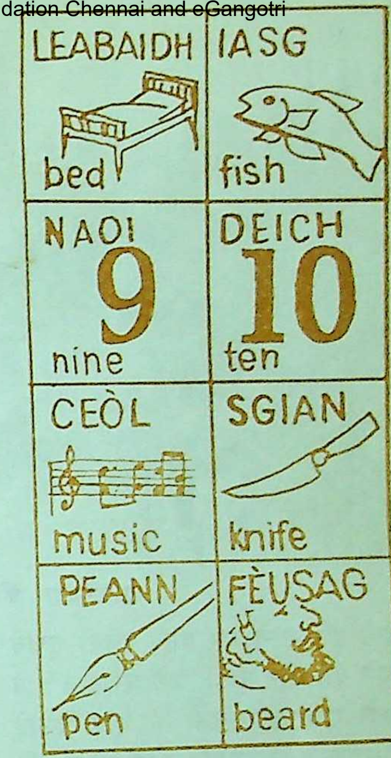
LEABAIDH
bed
IASG
fish
NAOI
9
nine
DEICH
10
ten
CEÒL
music
SGIAN
knife
PEANN
pen
FÈUSAG
beard

रूमाल में अंकित स्काटिश
और अंगरेजी शब्द

स्कॉटलैंड के लोग इंगलैंड के अन्य भागों की अपेक्षा, अधिक उदार और परंपरावादी हैं, ग्लासगो से एडिनबरा तक

एडिनबरा की एक प्रमुख सड़क

जाते हुए रास्ते भर हमने दर्जनों पुराने किले देखे और मीलों फैले चरागाह ! ये किले राजे-महाराजाओं की याद दिलाते हैं। इंगलैंड की वर्तमान महारानी के पति 'ड्यूक ऑव एडिनवरा' के ही हैं । हमने वह विशाल किला देखा जिसमें ड्यूक परिवार परंपरा से रहता चला आया है और शासन करता रहा है। सत्रहवीं सदी में इस किले को बनवाया गया था। यह किला समुद्र की सतह से ४४३ फुट ऊंचा है। चारों ओर पत्थर की घेराबंदी में कैद इस किले के भीतर बहुत कुछ देखने के योग्य है, जिसमें संत मार्गरेट गिरजाघर भी है, जो आठवीं सदी में बनाया गया था। वैसे पूरा किला वहुत आकर्षक तो नहीं है, लेकिन बहुत विशाल और राजा-महाराजाओं के आलीशान जीवन की याद अब भी दिलाता है। यहां केवल वहां के शासक रहते ही नहीं रहे, बल्कि इसी में शासकीय खजाना था। कीमती दस्तावेज भी रखे जाते थे और शस्त्र बनाने के छोटे-छोटे कारखाने भी थे । सन १९४५ तक तो इस किले का संबंध बहुत से राजाओं और महाराजाओं से रहा है, लेकिन उनके बाद अब यह केवल एक दर्शनीय-स्थल ही रह गया है और सैलानियों का आकर्षण केंद्र है।

समूचा स्कॉटलैंड नैसर्गिक सुषमा से इतना अधिक भरा हुआ है कि जहां भी

दृष्टि जाती है एक खुलेपन का एहसास होता है और हमें बरबस नवीनजी की यह पंक्तियां याद आ जाती हैं:

दृष्टि क्षेत्र का मैं राजा हूं
सब पर है मेरा अधिकार
नहीं किसी का शासन मुझ पर
करता हूं मैं स्वच्छंद विहार

लगता है आवाजों की यदि कोई प्रतिध्वनि छोड़ दी जाए तो वादियों में चारों ओर से घिरकर स्वयं हमें कैद कर लेंगी।

मैं नहीं भूलता स्कॉटलैंड के दूसरे 'पोयट लारयेट' को। उनके मन में भारत की एक श्रद्धामय तसवीर है। इंगलैंड के प्रति बहुत बड़ा आक्रोश उनके भीतर भरा है। उनका कहना था इंगलैंड की जितनी भी आय है, उसका अधिकांश हिस्सा स्कॉटलैंड से जाता है। लेकिन हमारे साथ बहुत उपेक्षापूर्ण व्यवहार किया जाता है। हम नहीं जानते यह कितना सच है, क्योंकि इंगलैंड के बहुत बड़े-बड़े कारखाने और उद्योग लंदन मैनचेस्टर बरमिंघम और शेफील्ड के आस-पास फैले हुए हैं; लेकिन इतना जरूर है कि स्कॉटलैंड से आय के मुख्य साधन हैं—स्कॉच-व्हिस्की, अनाज की पैदावारें, नैसर्गिक गैस, तेल के भंडार, खनिज संपदाएं, अच्छे किस्म की ऊन, गाय, भेड़ें और सैलानियों से होनेवाली खासी आमदनी। पूरे स्कॉटलैंड में जगह-जगह सैलानियों को भरपूर सुविधाएं दी जाती हैं। उनके लिए कैंप उपलब्ध हैं और यात्रा में लगनेवाले बहुत छोटे गैस के चूल्हे से लेकर सोने और स्केटिंग के ऐसे सामान

ड्यूक परिवार का परंपरागत निवास-स्थान। विशाल किला

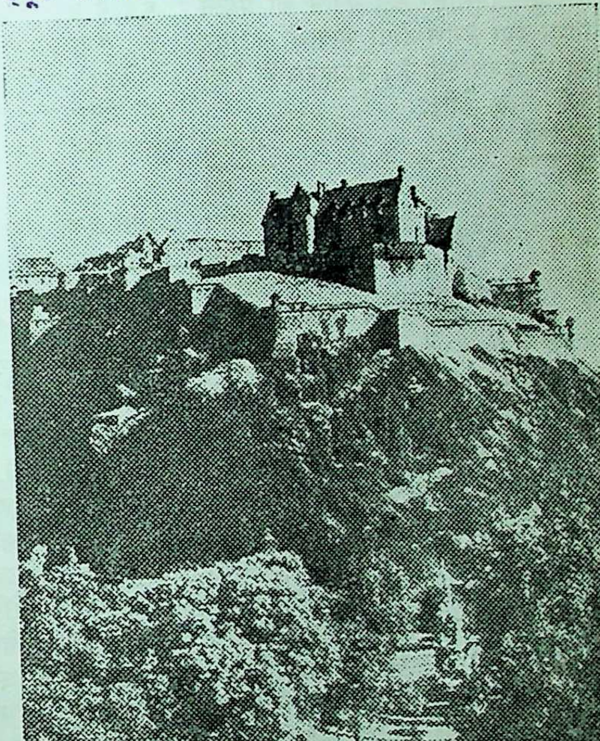

हैं, जिनका वजन बहुत कम होता है और जो आसानी से ले जाये जा सकते हैं। पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए स्कॉटलैंड से अधिक आदर्श जगह दूसरी नहीं है, शायद स्विटजरलैंड भी नहीं, उसका स्थान दूसरे नंबर पर होगा।

स्कॉटलैंड की अपनी भाषा है और इस भाषा को गेलिक कहा जाता है, गेलिक रोमन-लिपि में लिखी जाती है, लेकिन अंगरेजी से बहुत भिन्न है। हमारे मेजबान स्कॉटिश कवि ने हमें कागज की बनी एक रूमाल भेंट की थी, जिसमें सचित्र गेलिक और अंगरेजी के शब्द लिखे हुए हैं। कुल मिलाकर यह बताने का प्रयत्न किया गया है कि दोनों भाषाओं का दूर का भी संबंध नहीं है। उदाहरण के लिए कुछ शब्द देखिए:

अंगरेजी	**गेलिक**
डॉग	**क्यू**
बैल	**क्लैग**
वूमैन	**बीन**
मैन	**ड्यूरिन**

गेलिक का अपना व्याकरण है, अपनी भाषा है और अपना साहित्य है।

हमारे मेजबान कवि का दावा है कि गेलिक भाषा अत्यंत संपन्न और समृद्ध है। और इसकी जितनी प्राचीन साहित्यिक-परंपरा है, उतनी अंगरेजी की भी नहीं। उनका कहना था कि स्वयं शेक्सपीयर ने बहुत से गेलिक शब्दों का प्रयोग किया है। उन्होंने हमें बहुत-से काव्य, महाकाव्य और पुस्तकें दिखायीं और यह बताने की पूरी चेष्टा की कि हमारी पहचान अलग है। पहचान की बात आयी है तो एक बात और बताना आवश्यक है कि स्कॉटलैंड में जो पाउंड का नोट है, इसके ऊपर लिखा है 'दि ट्रेजरी ऑ स्कॉटलैंड' और यह नोट समूचे इं में पूरी तरह चलता है। अर्थ यह है कि स्कॉटलैंड में इंगलैंड का सिक्का चलता ही है, स्कॉटलैंड का अपना अलग सिक्का है जो समूचे इंगलैंड चलता है।

ग्लासगो और एडिनबरा के जंगलों में तीसरी और चौथी सदी पु अवशेष हैं और वैसे ही उफनते हुए हैं, घाटियां हैं, पठार और पर्वत जैसे भारत में देखने को मिलते निस्संदेह यहां के पानी में कोई गुण है जो दुनियाभर में और कहीं है। कहा जाता है कि स्कॉच व्हिस्की 'फ्लेवर' लाने की कोशिश अमरीका भी बहुत की, लेकिन किसी को सफल नहीं मिली, इसका कारण, वहां का पानी

हमने सुन रखा था कि 'रायल सैल्यू दुनिया की सबसे अच्छी व्हिस्की है, लिए हम उस कारखाने को देखने वहां पता लगा इससे भी अच्छी व्हि एक और है, लेकिन उसका बूढ़ा मालि अपने स्तर और उत्पादन की प्रामाणि कता को बनाये रखने के लिए इतनी मात्रा में शराब को बनाता है कि वह केव सीमित संख्या में ही उपलब्ध है। आमतौ से बाजारों में वह बहुत कम मिलती है

नये वर्ष का पहला दिन! द दोस्तों से मिलने के बाद जब हम आसमान के नीचे सैर के लिए नि तो रंग-बिरंगी वेष-भूषा में हवा में तै हुए घुड़सवार और उनके चिर-परि लोक-गीत सारे माहौल में इस तरह रहे थे, जैसे वे मनुष्य की स्वतंत्रता गीत गा रहे हों। ●

ट्रेजरी
समूचे इंग
र्थ यह हु
सिक्का
अपना
इंगलैंड

रा के
सदी पुर
नते हुए ना
र पर्वत
मिलते है
कोई
र कहीं
व्हिस्की
अमरीका
को सफल
का पानी है
रायल सैल्यू
स्की है, इस
देखने
च्छी व्हिस्
बूढ़ा मालि
की प्रामाणि
ए इतनी
कि वह केवल
है। आमतौ
मिलती है
दिन! दर्श
जब हम सु
लिए निक
हवा में तैर
चिर-परिचि
इस तरह
स्वतंत्रता

●

कादम्बिनी

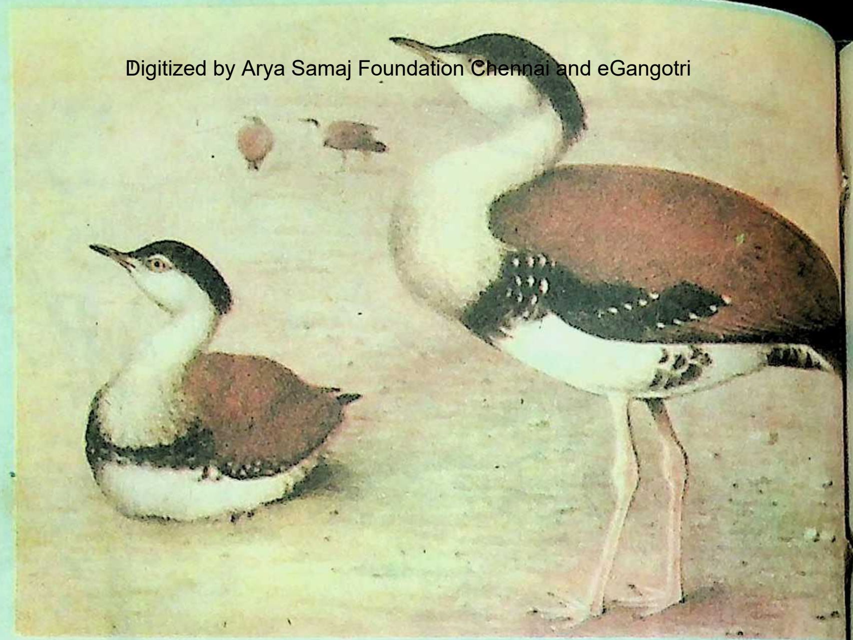

सोन चिड़िया

तिलोर या हो

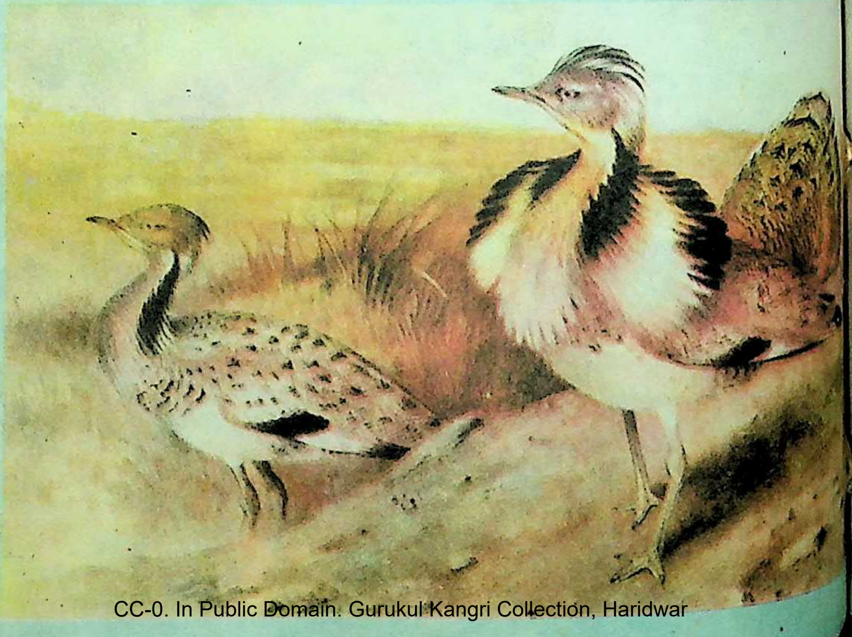

सऊदी अरब के शिकारी राजकुमार

• सुरेश सिंह

भारत के लुप्तप्रायः पक्षी 'सोहन चिड़िया' और सऊदी अरब के प्रिंस बदर की इस देश की शिकार-यात्रा समाचार-पत्रों में काफी चर्चा का विषय बनी रही। तेल के दबाव के कारण भारत सरकार ने उन्हें किस प्रकार इन पक्षियों के शिकार की आज्ञा दे दी, इस समाचार ने सारे देश में एक आक्रोश का वातावरण पैदा कर दिया ।

यहां मेरा उद्देश्य केवल इन पक्षियों का परिचय कराना ही नहीं बल्कि पाठकों के हृदय में ऐसी भावना को जाग्रत करना भी है, जिससे वे सरकार पर इनके संरक्षण के लिए दबाव डाल सकें, नहीं तो वह दिन दूर नहीं जब डोडो (DODO) तथा किवी (KIWI) की तरह हमारी सोहन चिड़िया भी इस पृथ्वी से सदा के लिए लुप्त हो जाएगी। यों राजस्थान के उच्च न्यायालय ने इन पक्षियों के शिकार पर कानूनी प्रतिबंध लगा दिया है, फिर भी इन्हें लुप्त होने से बचाने के लिए और भी उपाय करने होंगे।

मेरा तो ऐसा खयाल है कि प्रिंस बदर को केवल 'तिलोर' पक्षी के शिकार की आज्ञा मिली थी, सोहन चिड़िया की नहीं। और वे यहां केवल सोहन चिड़िया के शिकार के लिए इतना खर्च करके आये, यह भी युक्तिसंगत नहीं जान पड़ता, क्योंकि सोहन चिड़ियों की संख्या अनुमानतः एक हजार से भी कम रह गयी है और ये इस प्रकार पश्चिमी भारत के इलाकों में फैली हुई हैं कि इतनी गिरोहबंदी करके इनका सामूहिक शिकार करना संभव नहीं है। तिलोर के साथ संभव है ५–७ सोहन चिड़ियां भी प्रिंस बदर के हाथ लगी हों, लेकिन उससे इन पक्षियों की संख्या में अधिक कमी नहीं आयी होगी। फिर भी इसके लिए सरकार को सतर्क रहने की आवश्यकता है।

समाचार-पत्रों में जिन लेखकों ने इन पक्षियों के बारे में आवाज उठायी है उन्होंने तिलोर, सोहन चिड़िया और होबार को एक ही पक्षी समझ लिया है।

यहां उन चार पक्षियों का संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है जो सारंग वर्ग (Order : Grallae) के तिलोर परिवार (Family : Otididae) के अंतर्गत आते हैं और जिनमें से एक सोहन चिड़िया भी है।

सारंग-वर्ग बहुत छोटा वर्ग है, जो दो परिवारों में विभाजित है—तिलोर-परिवार और रल-परिवार।

तिलोर-परिवार में निम्नलिखित चार पक्षी हैं, १. सोहन चिड़िया या तूगदार (Great Indian Bustard) पर्याय:महा सारंग, २. तिलोर या होबार (Bustard or Houbara) पर्याय:पश्चिमोत्तर सारंग ३. बड़ा तिलोर (Great Bustard) पर्याय : प्राच्य सारंग, ४. छोटा तिलोर (Little Bustard) पर्याय : लघु सारंग। इसी प्रकार चरत परिवार में दो पक्षी हैं—१. चरत (Bengal Florican) पर्याय : बंग तृण मयूर, २. छोटा चरत या खरमोर (Lesser Florican) पर्याय : लघुतृण मयूर

यहां हम तिलोर-परिवार के चारों पक्षियों का ही संक्षिप्त वर्णन दे रहे हैं।

सारंग-वर्ग में जमीन पर रहनेवाले शिकार के छह पक्षी आते हैं, जिनमें चार तिलोर परिवार के हैं और दो चरत-परिवार के। ये पक्षी अपने रहने के लिए ऐसे खुले हुए सूखे मैदानों को चुनते हैं, जिन पर छोटी-बड़ी झाड़ियां और ऊंची घास हो। इनमें सोहन चिड़िया, चरत, और खरमोर हमारे यहां के बारहमासी पक्षी हैं, जो हमारा देश छोड़कर बाहर नहीं जाते। बाकी तीन, तिलोर, होबार और छोटा तिलोर मौसमी पक्षियों की श्रेणी में आते हैं, जो जाड़े के शुरू में यहां आकर जाड़े के समाप्त होते-होते फिर अपने स्थान को लौट जाते हैं।

बहुत कम संख्या में होने के कारण इन पक्षियों को हम आसानी से देख नहीं पाते और इनको तलाशने में काफी दिक्कत का सामना करना पड़ता है। इनके पैरों के आगे की तीनों उंगलियां छोटी होती हैं, पिछले अंगूठे का सदैव अभाव रहता है। इनमें से अधिकांश चितले भूरे रंग के होते हैं लेकिन कुछ के नरों का अगला भाग काला और भड़कीला होता है।

ये प्रायः अकेले, जोड़े में या छोटे-छोटे गिरोहों में दिखायी पड़ते हैं जिससे इनका शिकार करना कठिन होता है। खतरा देखकर ये पहले तो तीतर आदि की तरह जमीन पर भागना ही पसंद करते हैं लेकिन दवाव बढ़ने पर हवा में उड़ जाते हैं और थोड़ी ही दूर जाकर फिर जमीन पर उतर पड़ते हैं।

ये जमीन पर ही छिछले गढ़ों में एक या दो अंडे देते हैं जो प्रायः मटमैले रंग के रहते हैं। इनके बच्चे तीतर और मुरगियों की तरह अंडे से बाहर आते ही इधर-उधर भागने लगते हैं।

इनका मुख्य भोजन घास-फूस कीड़े-मकोड़े और गल्ला तथा बीज हैं। लेकिन कभी-कभी छिपकलियों और छोटे कीड़ों को भी खा जाते हैं।

स्वदेशप्रिय सोहन चिड़िया

सोहन चिड़िया तिलोर-परिवार का सबसे बड़ा पक्षी है, जो हमारे देश में ही पाया जाता है। यह पंजाब के मैदानों के अलावा

बंबई, काठियावाड़, गुजरात, राजस्थान और विंध्य के पठारों तक दिखायी पड़ता है। इनकी संख्या अब बहुत कम रह गयी है जिससे इन्हें देखना आसान नहीं है।

एक बार मैं रीवां की ओर शिकार के लिए जा रहा था। रीवां की सीमा के निकट एक स्थान पर मोटर रोकी तब अरहर के खेत में फसल के ऊपर एक काली-सी चीज हिलती हुई दिखायी पड़ी। मैंने कोई जंगली जानवर समझकर उस पर बंदूक चलायी तो इस भीमकाय पक्षी को मरा पड़ा देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। लोगों से उसके बारे में पूछा तब उन्होंने बताया कि यह 'घोंघे' है। इधर बहुत कम दिखायी पड़ता है। इसका मांस बहुत स्वादिष्ट होता है और महाराजकुमार विजयानगरम इसका पता बतानेवाले को सौ रुपये इनाम देते।

मेरे साथ पक्षियों के संबंध की पुस्तकें थीं, जिससे शीघ्र ही पता चल गया कि यह तूगदार या सोहन चिड़िया है। उसका रंग तीतरों-जैसा चितला, भूरा और सर का ऊपरी भाग काला था।

सोहन चिड़िया या महाभारत सारंग पंजाब में तूगदार, काठियावाड़ में घोरार, हरियाणा में गुराइन, महाराष्ट्र में हुम और राजस्थान में तिलोर और घीरावण, उ. प्र. में हुकना; सेरालू, घोंघ, मारघोंक सोहन, गगनमेड़ और धूम चिड़िया के नाम से पुकारा जाता है। यह चार फुट ऊंचा और भारी भरकम पक्षी है, जो हमारे देश को छोड़कर बाहर नहीं जाता।

इसके सर का ऊपरी भाग काला, गरदन सफेद और ऊपर का सारा हिस्सा गाढ़े भूरे रंग का होता है, जिस पर महीन काली लकीरें पड़ी रहती हैं। बगल का हिस्सा सिलेटी और नीचे का सफेद रहता है। सीने पर एक काली पट्टी पड़ी रहती है। टांगें गंदे पीले रंग की होती हैं।

इसके नर-मादा एक ही रंगरूप के होते हैं लेकिन मादा नर से काफी छोटी होती है। इसकी ऊंचाई चार फुट और

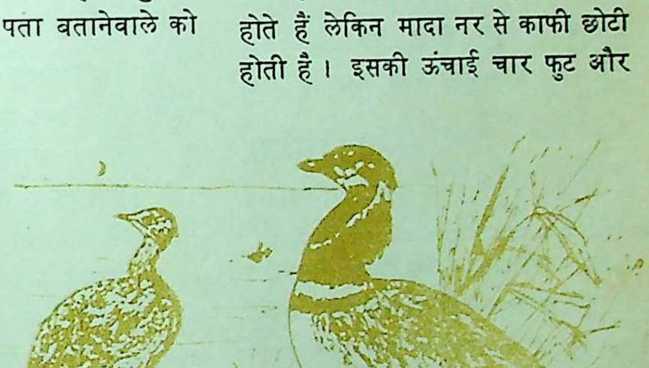

झांकते हैं फिर नदी में पेड़

झांकते हैं
फिर नदी में पेड़ पानी थरथराता है—

यह
नुकीले पत्थरों का तल
काटता है धार को प्रतिपल

और
तट की बांबियों को छेड़
फिर कोई संपेरा गुनगुनाता है

हर नदी का शौक है घड़ियाल
बह न पातीं मछलियां वाचाल

सोचती है एक काली भेड़
यह सूरज यहां क्यों रोज आता है

—धनंजयसिंह

१०८४, विवेकानंद नगर, गाजियाबाद

इसका वजन लगभग दस किलो होता है।

ये बहुत चौकन्ने पक्षी हैं, जो सुबह-शाम चराई के लिए मैदानों में निकलते हैं। दिन में ये किसी खेत या ऊंची घास के बीच आराम करते रहते हैं।

शिकार का पक्षी : तिलोर

तिलोर या होबार भी शिकार का बहुत प्रसिद्ध पक्षी है, जो हमारे यहां जाड़ों में पश्चिम की ओर से काफी संख्या में आकर पंजाव, राजस्थान और गुजरात के मैदानों में फैल जाता है। कुछ पक्षी थोड़ा आगे भी वढ़ जाते हैं। जाड़ा समाप्त हो जाने पर ये फिर दक्षिणपूर्वी यूरोप तथा ईरान और अफगानिस्तान आदि देशों में तथा मध्य एशिया तक जाते हैं।

ये दो ढाई फुट ऊंचे पक्षी हैं जिनका वजन करीव दो ढाई किलो तक रहता है। मादा नर से छोटी होती है। इसका मांस भी वहुत स्वादिष्ट होता है।

तिलोर के सिर और शरीर का पूरा ऊपरी भाग सिलेटी मायल वादामी रंग का होता है, जो महीन टेढ़ी-मेढ़ी काली लकीरों से भरा रहता है। दुम के सिरे के पास कई स्पष्ट सिलेटी पट्टियां दिखायी पड़ती हैं और उसके पर के सिरे सफेद रहते हैं। माथे के पर उठे-उठे से रहते हैं, ठुड्डी और गला बादामीपन लिए सफेद रहता है। गरदन हलके भूरे रंग की होती है, जिस पर पतली, महीन काली लकीरें पड़ी रहती हैं। सीना हलका सिलेटी और नीचे का भाग सफेद रहता है। इनके नर की गरदन के दोनों वगल कुछ मुलायम पर बढ़ रहते हैं जो जड़ और सिरे के पास काले और वीच में हलके भूरे होते हैं। इनको फैलाने पर नर वहुत सुंदर और भड़कीला लगने लगता है।

इसकी लंवी टांगें धूमिल पीले रंग की होती है, जिनमें इस जाति के अन्य पक्षियों की भांति केवल तीन उंगलियां रहती हैं।

तिलोर अकेले-अकेले या छोटे-छोटे गिरोहों में भी रहते हैं, जिनकी संख्या १५–२० तक रहती है। ये उड़ने की अपेक्षा जमीन पर भागना पसंद करते हैं। इनका अन्य स्वभाव तिलोर-परिवार के अन्य पक्षियों के समान होता है।

बड़ा तिलोर

बड़ा तिलोर दक्षिणी यूरोप, उत्तरी अफरीका, मध्य एशिया और अफगानिस्तान के आसपास पाया जाता है। यह कभी-कभी यहां जाड़ों में भी आता था, लेकिन तब यह हमारे देश में दिखायी नहीं पड़ता।

इसके शरीर का ऊपरी भाग भूरापन लिये सलेटी रहता है जिस पर काले चिह्न पड़े रहते हैं। सिर और सीना सलेटी और पेट के पर सफेद होते हैं। इसकी ऊंचाई करीब साढ़े तीन फुट रहती है लेकिन मादा नर से छोटी होती है। वजन में यह लगभग ८ किलो का होता है। इसका रहन-सहन और आदतें तिलोर-परिवार के पक्षियों-जैसी ही होती हैं।

छोटा तिलोर

छोटा तिलोर भी हमारे यहां का मौसमी पक्षी है, जो हमारे देश में अक्तूबर में आकर मार्च तक लौट जाता है और कावुल, ईरान, सीरिया आदि देशों में होता हुआ यूरोप के दक्षिणी भागों में फैल जाता है। हमारे देश में यह काठियावाड़, राजस्थान, कश्मीर और पंजाब तक दिखायी पड़ता है। पंजाब में इसे 'ओबारा' भी कहते हैं।

नर का ऊपरी भाग भूरा होता है, जिस पर काली धारियां पड़ी रहती हैं। सिर का ऊपरी भाग चितकबरा भूरा और सीने के निचले भाग से लेकर पेट का पूरा हिस्सा सफेद रहता है। जोड़ा बांधने के समय नर की गरदन काली हो जाती है, जिस पर गुद्दी से लेकर गरदन के बीच होकर एक लहरदार सफेद पट्टी हार की तरह पड़ी रहती है।

इसकी ऊंचाई डेढ़ से पौने दो फुट तक रहती है और इनका वजन करीब एक किलो रहता है। इसकी और आदतें अन्य तिलोरों से मिलती-जुलती होती है।

अंत में मैं इतना जरूर कहूंगा कि यदि कुछ सोहन चिड़िया प्रिंस बदर के हाथों हलाक भी हुईं तो उनकी शहादत से इस जाति के पक्षियों को जरूर लाभ हुआ। हमारे देशवासी उनके संरक्षण की ओर सच्चे जी से अग्रसर हुए। हमें इसके लिए सऊदी अरब के शाहजादे का आभार मानना चाहिए! **—कालाकांकर, उ. प्र.**

पोस्टर—दीवारों पर लगे फिल्मों के, राजनीतिक दलों के पोस्टर राहगीरों को तो थकान दूर करने का मसाला देते हैं, पर जिनकी दीवारें होती हैं, उनके लिए निरंतर बना रहनेवाला सिरदर्द सिद्ध होते हैं। ऐसे लोगों की राहत के लिए फ्रांस की एक फर्म ने 'पाराकोल' नामक एक केमिकल बनाया है, जिसे दीवारों पर पोत देने के बाद कोई पोस्टर चिपक ही नहीं सकता।

कलगी सुआपंखी तोड़

बाल-बच्चे चिट्ठियां दुहरा गये
कल न आना
याद अपनी मांजने
कट गये हैं
धान-पीले खेत कलगी सुआपंखी तोड़

यह धनहिया देह
गंधी ऋतु सहेजे
मन तुम्हीं से जोड़

फूल जूड़े के सभी मुरझा गये
कल न आना
फूल बासी साजने

सांवलापन धूप में
गहरा गया
अनछुआ रहकर
सूखने को
डबडबायी नदी-सी
यह आंख भर-भर
डाकिये सब गांव वापस आ गये
कल न आना
सांझ कलछर आंजने

——अनूप अशेष

द्वारा——बुक्स कार्नर, हास्पिटल रोड,
सतना (म. प्र.)

मुक्तक

झर रही जलधार, यह बरसात है
कहां फूले-फले, यह कब ज्ञात है
क्या पता मोती बने या विष बने
एक छोटी बूंद की सब बात है

सूखकर धारा यहां फिर से भरी
समय पाकर चोट भी फिर से पुरी
फूल की है रीति, झरकर फूल से—
जुड़ नहीं पायी झरी जो पांखुरी

एक काली डोर में अंबर घिरा
बंधनों में जीर्ण है सारी धरा
पांखुरी ने तो बहुत बांधा, मगर
गंध ने माना नहीं यह दायरा

तैरते तिनके, झुलाती धार है
डूबता कंकड़, बहुत लाचार है
कौन भारी और हलका कौन है
तौलना ही लहर का व्यापार है

——डॉ. रमासिंह

किशोर भवन, पुलिस लाइन के सामने
रतनाडा, जोधपुर-३४२००१

गजल

भटके है नूर-जैसा मन बीच झाड़ियों में
विज्ञप्ति यह प्रकाशित है सुर्ख धारियों में

आंखों में आंख डाले, जीते जी मार
डाले
तू बेमिसाल निकला सारे मदारियों में

घबराये जान ऐसे, दरिया के पास जैसे
फंस जाये कोई प्यासी हिरनी शिकारियों
में

तुम क्या करोगे खोकर, यह रोशनी
भिगोकर
मेरा अतीत बोकर केसर की क्यारियों
में

आवाज कैद मेरी, हर भावना अंधेरी
पत्थर बना हुआ हूं, अंधे पुजारियों में

उस पार तू जो जइयो, मेरा प्रणाम कहियो,
कहियो कि मुंतजिर हूं, अब तक
पहाड़ियों में

——सुरेश कुमार
'रंजिनी' मासिक
जी. टी. रोड, अलीगढ़ (उ. प्र.)

क्या करें

उन आंखों का क्या करें
जो देखकर भी नहीं देखतीं
तब फिजूल है
सूरज का धूप बरसाना
चंद्रकिरणों का
फूलों पर थिरकना
नासमझ हैं बादल
जो मारे-मारे फिरते हैं
अपना श्रम फसलों पर बरसाते हैं

और वे
इंद्रधनुष के उगने पर
खिड़की तक
बंद कर लेते हैं

तब क्यों हम सीपी में बंद होकर
अतल गहराइयों में डूबें—मोती बनें

क्यों अपने आपको धूप में तपायें
पथिक को छाया दें—वृक्ष बनें

और
क्या जरूरत है
साधना करें—खूबी पैदा करें
गुलाब या सूरजमुखी बनें
क्या करें
उन आंखों का क्या करें
जो देखकर भी नहीं देखतीं

——डॉ. हीरालाल बाछोतिया
बी. ९४, सर्वोदय एन्क्लेव, नयी दिल्ली

शर्टिंग्स
सूटिंग्स
ड्रेस मटीरियल्स
और साड़ियाँ

हर पल बन जाए
एक हसीन यादगार
—ठाकरसी ब्लेंड्स में!

TF ठाकरसी ब्लेंड फैशन,
नया जमाना नया तराना

हिंदुस्तान स्पिनिंग एण्ड
वीविंग मिल्स लि.
१६, बम्बई समाचार मार्ग, बम्बई ४०००२३.

Dattaram-HM-9

दवा

• लू शुन

शरद काल के अर्धरात्रि की बाद, चांद क्षितिज से उतर चुका था, पर सूर्योदय अभी तक नहीं हुआ था। लाव श्वान अचानक उठकर बैठ गया। उसने दियासलाई पर एक तीली रगड़ी और तेल से भरी लालटेन जला दी। चाय की दुकान के दोनों कमरों में मैला-मैला-सा उजाला फैल गया।

"श्याव श्वान के पिता! क्या अभी जाओगे?" एक बूढ़ी औरत ने पूछा। अंदर के छोटे-से कमरे से खांसने की आवाज आ रही थी।

"हूं!" बूढ़ा श्वान एक तरफ सुनते हुए जवाब दे रहा था और दूसरी तरफ कपड़े पहन, हाथ बढ़ाकर बोला, "ला, दे मुझे।"

हुवा ता मा ने तकिये के नीचे टटोला और विदेशी रुपयों की एक थैली निकालकर बूढ़े श्वान को थमा दी। बूढ़े श्वान ने उसे जेब में रख लिया और फिर जेब को ऊपर से दो बार टटोलकर देखा। बूढ़ा श्वान अंदर के कमरे की ओर गया। वहां हिलने-डुलने और लगातार खांसने की आवाज हो रही थी। जब खांसी शांत हुई तब बूढ़ा श्वान हलकी आवाज में बोला, "श्याव श्वान ... तुम मत उठना, दुकान तेरी मां ठीक कर लेगी।"

बूढ़ा श्वान कुछ उत्तर न पाकर फिर कुछ न बोला और समझ गया कि वह गहरी नींद में है, तब वह दरवाजे से बाहर सड़क पर आ गया। कमरे की अपेक्षा बाहर खूब ठिठुरन थी, परंतु बूढ़ा उत्साह से चला जा रहा था, जैसे फिर से जवान हो गया हो।

लाव श्वान अपने विचारों में डूबा चला जा रहा था। दूर तिराहा दिखायी

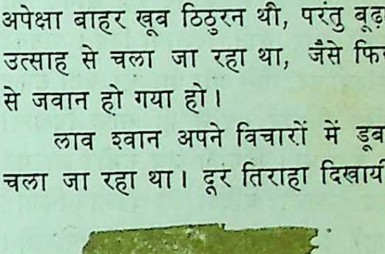

पड़ा तो वह चौंककर रुक गया। कुछ कदम पीछे लौटा और सड़क के किनारे एक दुकान के छज्जे के नीचे खड़ा हो गया। दुकान के दरवाजे बंद थे।

"शायद कोई बूढ़ा है!"

"खूब प्रसन्न लग रहा है।"

लाव श्वान फिर चौंक उठा। उसने ध्यान से देखा—कुछ लोग उसके सामने से चले जा रहे थे। उनमें से एक ने घूमकर उसकी ओर देख भी लिया। उसे पहचान नहीं सका, पर उसकी आंखें चमक गयीं जैसे भूखे की आंखें खाना देखकर चमक उठती हैं। उसने अपनी जेब को हाथ से दबाया, थैली सुरक्षित थी।

जल्द ही सड़क पर कुछ सैनिक भी उसी ओर जाते दिखायी दिये। उनकी वर्दियों पर, सीने और पीठ पर बड़ा सफेद गोल निशान दूर से ही साफ दिखायी दे रहा था। सिपाही जब समीप आ गये तब उनकी वर्दियों के किनारे-किनारे गहरे लाल रंग के बार्डर दीखने लगे। कुछ समय बाद तिराहे पर जाकर सब लोग अर्धचंद्राकार खड़े हो गये।

लाव श्वान भी उसी तरफ देख रहा था, परंतु केवल उनकी पीठें ही दिखायी दे रही थीं। भीड़ में थिरकन-सी जान पड़ी, लोग इधर-उधर जाने लगे, सभी पीछे लौट पड़े, लाव श्वान को धक्का लग गया, वह गिरते-गिरते बचा।

"ये! पैसे निकाल और अपनी चीज ले!" एक आदमी श्वान के सामने रुककर बोला। उस आदमी ने अपना एक बड़ा-सा हाथ पैसों के लिए बूढ़े श्वान की तरफ बढ़ा दिया। उसके दूसरे हाथ में भाप में पकी एक बेलनाकार रोटी थी, रोटी से लाल-लाल बूंदें जमीन पर टपक रही थीं।

बूढ़े श्वान ने जल्दी में विदेशी रुपयों को बाहर निकाल लिया और टटोलकर उसे थमा दिये। स्याहपोश ने रोटी को कागज में लपेटकर श्वान के हाथ में थमा दी।

"किसकी बीमारी के इलाज के लिए ले जा रहा है?" बूढ़े श्वान ने सुना, पर कोई उत्तर नहीं दिया। श्वान कागज में लिपटी रोटी को बहुत सावधानी से संभाले लौट रहा था, जैसे कोई बड़ी साध से पाये नवजात बच्चे को गोद में लिये हो। श्वान के मन को बड़ी सांत्वना मिली। उसे अपने वंश के एकमात्र दीपक की जीवन-रक्षा का आश्वासन मिल गया था। अब उसका भविष्य सुखमय था।

बूढ़ा श्वान लौटकर घर आया तो दुकान में झाड़-पोंछ हो चुकी थी। चौकियां धुली-पुछी चमक रही थीं, परंतु ग्राहक अभी नहीं आये थे। उसका लड़का श्याव श्वान ही दीवार के साथ लगी मेज पर बैठा खाना खा रहा था। उसके लड़के के माथे से पसीने की बड़ी-बड़ी बूंदें टपक रही थीं। उसकी दोहरी बंडी पीठ से सटी हुई थी। कंधों और हंसली के उभर आये हाड़ों के बीच से गरदन

ऐसी उठी हुई थी जैसे कोई चीज गले में खोंस दी गयी हो। लड़के को इस अवस्था में देखकर श्वान के माथे पर फिर चिंता की रेखाएं उभर आयीं। लड़के की मां हड़बड़ाकर रसोई से निकल आयी। मां की आंखों में उत्सुकता भरी थी। अधीर से स्वर में पूछा, "मिल गयी ?"

"हां, मिल गयी।"

बूढ़े ने अंगीठी में आग जलायी और फिर रोटी पर से उतरे रंगीन कागज और पत्ते में लिपटी रोटी को अंगीठी पर रख दिया। दुकान में विचित्र-सी गंध भर गयी।

"क्या महक रहा है ? क्या खा रहे हो ?" कुबड़े ने आते ही पूछा। कुबड़ा का पूरा दिन दुकान में ही बीतता था।

किसी ने उत्तर नहीं दिया। लाव श्वान बाहर आकर कुबड़े के लिए चाय बनाने लगा।

"यहां आओ श्याव श्वान !" उसकी मां ने उसे अंदर के कमरे में बुलाते हुए कहा, और श्याव श्वान चौकी के बीचों-बीच बैठ गया। उसकी मां ने एक प्लेट में गोल काली-सी चीज रखकर, प्यार से पुचकारते हुए कहा, "लो बेटा, खा लो, अब तू चंगा हो जाएगा।"

श्याव श्वान ने उस चीज को उठाकर कुछ समय तक देखा। फिर उसने उस काली टिकिया के दो टुकड़े कर लिये। जली हुई रोटी के भीतर से सफेद-सी भाप उठी और फैल गयी। रोटी ऊपर से जल गयी थी, पर भीतर से अच्छी थी। उसने रोटी खा ली। तश्तरी पड़ी रह गयी। उसके दोनों तरफ खड़े मां-बाप बेटे की ओर ममताभरी आंखों से देखते रहे। दोनों की आंखों से आशीर्वाद बरस रहा था, जैसे दोनों बेटे के शरीर का रोग समेट लेना चाहते थे।

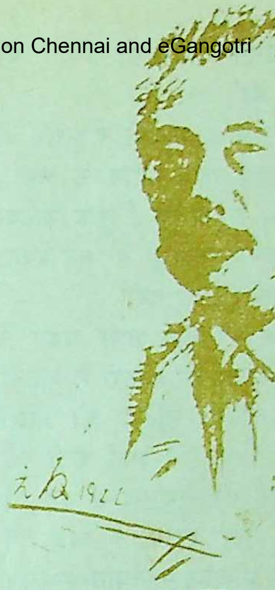

लू शुन

"बेटे, थोड़ी देर के लिए सो जा, बस अब तू चंगा हो जाएगा," मां ने कहा।

श्याव श्वान चुपचाप जाकर बिस्तर में लेट गया और खांसता रहा।

•

दुकान में ग्राहकों की भीड़ थी। बूढ़ा लाव श्वान भी व्यस्ततापूर्वक तांबे की बड़ी केतली उठाये जल्दी-जल्दी ग्राहकों के लिए चाय बनाता जा रहा

था, परंतु उसके चेहरे पर चिंता की गहरी छाया थी।

तभी एक और आदमी ने दुकान में कदम रखा, वह लाव श्वान से बोला, "खिला दिया लड़के को ? कुछ फायदा हुआ ? भाग्य अच्छे हैं तेरे बूढ़े श्वान कि समय से खबर मिल गयी . . ."

पहलवान की बात सभी अदब से सुन रहे थे। भीतर की कोठरी से बुढ़िया भी निकल आयी। बुढ़िया की आंखों के नीचे भी चिंता की झाईं फैली हुई थी। पहलवान की खुशामद में वह भी मुसकरायी। लाव श्वान ने प्याले में खौलता पानी छोड़कर पहलवान के लिए चाय बना दी !

"शर्तिया इलाज है ! कोई मामूली नुस्खा नहीं !" पहलवान बोला। "देखा नहीं था, बिलकुल ताजा गरम-गरम लाकर दिया था तुम्हें ! गरम-गरम तुमने भी खिला दिया होगा !"

"हां, और नहीं तो क्या, चाचा खाङ मदद न करते तो यह हमारे बस का थोड़े था !" बुढ़िया ने कृतज्ञता प्रकट की।

"अरे शर्तिया इलाज है। आदमी के ताजे गरम-गरम खून में रोटी भिगोकर खाने से कैसा ही टी. बी. हो, शर्तिया ठीक हो जाता है !"

टी. बी. शब्द सुनकर बुढ़िया का चेहरा उतर गया, और वह किसी बहाने से उठकर भीतर चली गयी।

"अब तो समझो कि लड़का चंगा हो गया। तभी बूढ़ा श्वान इतना खुश है।" एक दाढ़ीवाला आदमी बात करते-करते पहलवान के पास आ बैठा, और उसने धीरे से पूछा, "खाङ साहब, आज किस बदमाश की गरदन काटी गयी ? कोई कह रहा था कि वह श्या परिवार का लड़का था। क्या नाम था ? किस जुर्म में गरदन काटी गयी ?"

पहलवान ने एक नजर चारों ओर डाली। और वह पहले से भी ऊंचे स्वर में बोला, "अरे बड़ा बदमाश था। साले के सिर पर मौत खेल रही थी। जानबूझकर मरा ! उसके कपड़े-लत्ते भी शरीर से उतारकर लाल आंखों-वाले जेलर ने दबा लिये। यह तो बूढ़े श्वान की किस्मत थी कि इसका काम बन गया। उसके रिश्ते का चाचा श्या भी भाग्यवान था, उसने इनाम तो ले लिया। पचीस औंस चांदी मार ली !"

बूढ़े श्वान का बेटा कोठरी से निकल आया। मां ने लड़के के पास आकर प्यार से पूछा, "कैसा लग रहा है बेटा ?"

"अरे अब यह शर्तिया चंगा हो जाएगा।" लड़के की ओर देखकर पहलवान बोल उठा और फिर पास बैठे लोगों को बताने लगा, "उस लड़के का चाचा श्या बड़ा चालू आदमी है। अगर उसने लड़के का भेद न दे दिया होता तो उसके खानदान भर की गरदन काट दी जाती। घर-जमीन सब जब्त हो जाती। लड़का था बड़ा बदमाश। जेलर को भी बगावत

के लिए उकसा रहा था !

"लाल आंखोंवाले जेलर ने उसे समझाया कि मुखबिर बन जा। लड़का उलटे जेलर को ही पाठ पढ़ाने लगा। कहने लगा, विशाल छिङ साम्राज्य के मालिक तो हम ही हैं। बौरा गया था वह लड़का। जेलर को यह तो मालूम था कि लड़के की बुढ़िया मां ही है, पर खयाल थोड़े ही था कि कमबख्त के घर कुछ भी नहीं निकलेगा। जेलर के हाथ कुछ नहीं लगा तो और चिढ़ बैठा।"

सब लोग टकटकी लगाये सुनते रहे। कोई कुछ नहीं बोला। श्वान के लड़के ने भात खा लिया। वह पसीना-पसीना हो रहा था, आंखें चढ़ गयी थीं।

"जेलर को अक्ल दे रहा था ! बौरा गया था, और क्या !" वह दाढ़ीवाला बोल उठा, मानो उसे सहसा सारी बात समझ में आ गयी हो।

"बौरा नहीं गया था तो क्या !" पीछे बैठे नौजवान ने कहा।

जमीन के बीचोंबीच पदल चलनेवालों ने राह बचाने के लिए पगडंडी बना दी थी। पगडंडी के दोनों ओर कब्रें फैली हुई थीं। बायीं तरफ, सजा पाकर कत्ल किये जानेवाले लोगों या जेल में मरनेवाले लोगों को दफनाया जाता था और दायीं तरफ बहुत गरीब या भिखारी लोगों को दफनाया जाता था।

उस साल बहुत जाड़ा पड़ा था। छिङ-मिङ का पर्व आ गया था, परंतु अब भी बहुत सर्दी थी। बेद के पेड़ों पर कल्ले फूट रहे थे। श्वान की बुढ़िया पगडंडी के दायीं ओर कब्रिस्तान में पहुंच गयी। एक ताजी बनी कब्र के साथ बुढ़िया ने चार तश्तरियों में चार किस्म के पकवान और एक कटोरा भात रख दिया और बैठकर रोने लगी।

आचार-संहिता
गृहिणियों के लिए
अनिवार्य किया जाए
सिन्धु-भारती

पगडंडी पर चिथड़े पहने एक सफेद बालोंवाली बुढ़िया भी चली आ रही थी। बुढ़िया एक पुरानी, लाल रंग की गोल टोकरी लिये थी। टोकरी में डोरी से बंधे नोट भी लटक रहे थे। बुढ़िया धीमे-धीमे कदम रखती चली आ रही थी। उसने पगडंडी के बायीं ओर घूमकर एक कब्र के समीप जा हाथ की टोकरी जमीन पर रख दी।

दोनों कब्रें पगडंडी के समीप ही

एक-दूसरे के आमने-सामने थीं। बूढ़े श्वान की बुढ़िया दूसरी बुढ़िया को दीखती रही। उस बुढ़िया ने भी टोकरी से चार तश्तरियों में पकवान और एक कटोरा भात निकालकर कब्र पर रख दिया और खड़ी होकर रोयी। फिर उसने भी नोट जलाये। 'उस कब्र में इस अभागी का लड़का होगा।' –श्वान की बुढ़िया ने सोचा। वह इधर ही देख रही थी। पगडंडी के बायीं ओरवाली बुढ़िया अपने लड़के की कब्र पर के सामने लड़खड़ाते हुए दो-चार कदम चली।

श्वान की बुढ़िया को लगा कि पगडंडी के पार खड़ी बुढ़िया बेहोश होकर गिर पड़ेगी। वह उठी और पगडंडी लांघकर बोली, "धीरज धरो बहन !"

"हूं !" बुढ़िया ने सिर झुका लिया। अपनी धुंधली आंखें कब्र की ओर लगाये ही उसने पूछा, "देखो, देखो, वह क्या है?"

श्वान की बुढ़िया ने उस ओर ध्यान से देखा, नयी बनी कब्र की मिट्टी पर अभी सब जगह घास भी नहीं उग पायी थी। श्वान की बुढ़िया ने आंखें फैलाकर देखा तो विस्मित रह गयी। उस कब्र पर लाल और सफेद फूल एक माला के आकार में उगे हुए थे।

दोनों बुढ़ियों की नजरें कमजोर हो चुकी थीं, पर उन्होंने ध्यान से देखा तो संदेह नहीं रहा। सचमुच कब्र पर फूल उगे हुए मालूम पड़ते थे।

दूसरी बुढ़िया इस बीच अपने लड़के की कब्र के बिलकुल करीब पहुंच गयी थी। "जड़ें तो नहीं हैं," वह बुदबुदायी, "उगे तो नहीं लगते। कौन आया होगा ? बच्चे भी यहां खेलने नहीं आते। हमारे नाते-रिश्तेदारों में से भी कोई कभी नहीं आया। ये फूल कहां से आ गये ?" बुढ़िया सोच नहीं पा रही थी।

"हाय मेरे बेटे, तुझ पर बड़ा जुल्म हुआ, हाय तुझे कब्र में भी चैन नहीं। तू अब भी कलप रहा है। तभी तो ये फूल उग आये हैं, ताकि मैं तेरा दुख जान सकूं।"

हवा रुक गयी थी। घास-फूस सब तांबे के तार की तरह स्तब्ध खड़े थे। कहीं तिनका भी नहीं हिल रहा था। हवा का एक हलका-सा झोंका आ गया।

श्वान की बुढ़िया को लगा जैसे उसके मन पर पड़ा पुराना बोझ कुछ हलका हो गया है। घर लौटने का ध्यान आया। साथ ही दूसरी बुढ़िया को धीरज बंधाने के लिए बोली, "चलो बहन, अब चलें।"

दूसरी बुढ़िया के कलेजे से एक गहरी आह निकली। उसने अपने आपको संभाला और कब्र पर से भात के कटोरे व तश्तरियों को उठा लिया। एक क्षण के लिए वह रुकी और फिर धीरे से आगे बढ़ गयी।

अनु.––सत्यप्रकाश

द्वितीय महायुद्ध के दौरान संदेश लाने-ले जाने में कबूतरों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी थी। उसी युद्ध में जापान ने चमगादड़ों की पीठ पर बम बांधकर, उनसे बमवर्षकों का काम लिया था। वियतनाम-युद्ध में डालफिन मछलियों की पीठ पर टारपीडो बांधे गये थे और अब यदि ५ लाख पौंड की लागत से किया जा रहा एक प्रयोग सफल हो गया तो रण-भूमि में भी मनुष्यों का स्थान पक्षी ले लेंगे।

कन्नड़ लेखक डॉ. शिवराम कारंत से भेंट

वह घिनौनी चीज़ नहीं

• डॉ. शशिप्रभा शास्त्री

त्रिवेंद्रम की सुहानी सुबह। स्टेट्स गेस्ट हाउस की प्रथम मंजिल का एक कक्ष। मेरे सामने बैठे हैं—कन्नड़ के प्रख्यात लेखक एवं बहुमुखी प्रतिभा के धनी डॉ. शिवराम कारंत, जिन्हें हाल ही में एक अखिल भारतीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।

डॉ. शिवराम कारंत मूलतः केवल कर्नाटक तक सीमित हैं। वहां उन्हें 'समुद्र-तट का भार्गव' कहा जाता है। उपन्यासकार, नाटककार, अभिनेता, निर्देशक, कवि, निबंधकार, समाज-सुधारक, संगीतज्ञ—सब कुछ हैं वे—एक चलता-फिरता विश्वकोष। आपातकाल के दिनों में विरोध-स्वरूप उन्होंने 'पद्मभूषण' की उपाधि लौटा दी थी।

'आथर्स गिल्ड' के अधिवेशन में डॉ. कारंत को अंगरेजी की हिमायत करते देख मेरे मन में कई प्रश्न उठे थे। इसीलिए मैंने उनसे भेंट कर कुछ बातों का स्पष्टीकरण करना चाहा था। डॉ. कारंत ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा था, 'अंगरेजी के महत्त्व को हम भुला नहीं सकते। अंगरेजी भाषा के अभाव में मेरी कन्नड़ रचनाएं आज कर्नाटक क्षेत्र से बाहर नहीं जा पातीं।' अपनी बात मैं इसी बिंदु से आरंभ करना चाहती थी, पर इस समय इसके अतिरिक्त दूसरे कई प्रश्न भी मेरे मस्तिष्क में लहराने लगे थे—उनके कृतित्व—व्यक्तित्व से संबद्ध ढेरों प्रश्न।

डॉ. कारंत के हिंदी में वार्तालाप करने में असमर्थता जता देने पर मैंने बातचीत अंगरेजी में ही आरंभ की।

मैं—आपने कब से लिखना आरंभ किया?

कारंत—सन १९२५ से। १९२१ कांग्रेस-आंदोलन का समय था। गांधीजी का युग। मैं गांधीजी के विचारों, उनके व्यक्तित्व और उनके द्वारा आरंभ किये गये आंदोलन से पूरी तरह प्रभावित था। राजा राममोहन राय और रामकृष्ण परमहंस का प्रभाव भी मुझ पर था ही—असहयोग आंदोलन के दौरान मैंने पढ़ाई छोड़ दी, उस समय मैं सिर्फ एंट्रेंस पास था।

मैं—फ्रीलांसिंग आपने कब से शुरू की?

कारंत—मैं आद्योपांत फ्रीलांसर ही रहा। इधर-उधर भटकते रहना ही जैसे मेरा सबसे बड़ा पेशा हो।

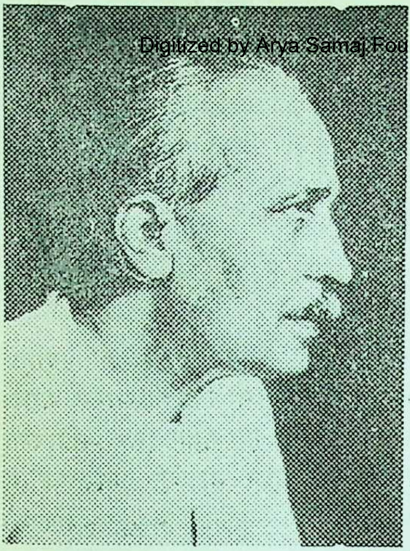

'समुद्र-तट का भार्गव'--कारंत

मैं--आपकी रचनाओं का मुख्य स्वर क्या है ?

कारंत--मुख्य स्वर एक नहीं है, उसमें विविधता है, विविध विषयों पर और विविध विधाओं में लिखा है मैंने--अध्ययन-मनन और अवलोकन के माध्यम से मैंने अपने अनुभवों पर सान रखी--इतने अनुभव मेरे पास न होते तव चालीस उपन्यासों की रचना कैसे होती।

मैं--आपने अपनी आत्मकथा भी लिखी है ?

कारंत--जी, 'टेन फेसेज ऑव अ मेड्स माइंड' मेरी वायोग्रेफिकल रचना है। 'स्मृति पटल' पुस्तक में मेरी स्मृतियां हैं।

एक वात मैं आपको वताना चाहूंगा कि मैंने जो कुछ भी लिखा है, अपने प्रदेशवासियों के लिए ही लिखा है।

मैं--डा. कारंत, एक अच्छा लेखक वनने के लिए क्या-क्या जरूरी है ?

कारंत--सिर्फ इतना कि उसके पास कहने के लिए कुछ होना चाहिए।

मैं--साहित्य में उपस्थित विविध वादों और दलगत साहित्यिक गतिविधियों के संबंध में आपका क्या मत है ?

कारंत--मैंने उस संबंध में कभी नहीं सोचा। ग्रुपवाजी की तरफ वढ़ने में मेरी कभी रुचि नहीं रही। टेक्नीक (शिल्प) भी मेरी समझ से परे की चीज है। केवल मानवीय संबंधों को समझने का प्रयत्न ही मैं आद्योपांत करता रहा--मेरी सभी रचनाओं में इसे देखा जा सकता है। पर यह सिर्फ एक कोशिश है।

मैं--आपने अभी महात्मा गांधी, विवेकानंद तथा श्रीरामकृष्ण परमहंस से प्रभावित होने की बात कही थी। गांधीजी की नैतिकता तथा सेक्स इत्यादि सिद्धांतों से आप कहां तक सहमत हैं ?

कारंत--मैंने आपको अभी वताया, लेखक को अपने आंख-कान और दिमाग खुले रखने चाहिए--समय और परिस्थितियों ने मुझे यही सिखाया है। इसलिए आरंभ में मैं गांधीजी के विचारों से प्रभावित जरूर रहा, लेकिन उसके वाद जीवन में कुछ इस प्रकार की घटनाएं घटित हुईं कि मैं, जिसने गांधीजी की पुस्तक Self Restraint vs. Self Indulgence का अनुवाद किया था, वह मैं सेक्स संबंधी

दूसरी पुस्तकों का अध्ययन करने लगा। उसके आधारभूत प्रश्न और समस्याओं ने मुझे इस बात के लिए विवश कर दिया कि किसी भी चीज को मैं स्वयं समझने का यत्न करूं, असली गहराई में जाऊं। सिद्धांत और व्यवहार में जो अंतर मुझे संसार में दिखा, उसने मुझे निराश कर दिया। तब मैंने अनेक विदेशी लेखकों को पढ़ा और उन पंडितों के विचारों तथा अपने स्वयं के अनुभवों के प्रकाश में अपने परंपरागत संस्कारों को नये सिरे से मापा। एक प्रकार से स्वयं को नये सिरे से गढ़ा। और तब मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि इन सिद्धांतों की 'रिजिडिटी' अर्थात उनकी कट्टरता में विश्वास करना व्यर्थ है। मैंने यह भी समझा कि सेक्स कोई घिनौनी और लज्जास्पद चीज नहीं है। सेक्स इज वर्शिप, सेक्स इज गॉड, ऐंड इट शुड नाट बी कंडैम्ड।

एक विशेष घटना मैं आपको बताना चाहूंगा, जिसने मुझे अपने विचारों को एकदम 'रिवाइज' करने के लिए बाध्य कर दिया। वह घटना हमारे गांव की एक पंद्रह वर्षीया बालिका के संबंध में है। लड़की विधवा हो गयी थी। मैंने गांधीजी से उसके बारे में विचार किया, तब गांधीजी ने तुरत-फुरत राय दे दी कि उस बालिका को अब ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करना चाहिए और शेष जीवन सेवाकार्य में बिताना चाहिए। मैं स्तब्ध था—एक नयी उम्र की बच्ची, जिसकी पूरी जिंदगी उसके सामने पड़ी है, उस प्रकार से जीवन कैसे बिता सकती है और उसे क्यों बितानी चाहिए ? मैंने न केवल उस बालिका का पुनर्विवाह करा दिया, अपने विचारों को भी आद्योपांत बदल डाला, मेरी पुस्तकें इसका प्रमाण हैं।

आपने कभी इस बात पर विचार किया है कि बड़े से बड़े व्यक्ति यानी जिनको हम महान कहते हैं, उनके सिद्धांत भी स्थायी नहीं हैं; काल-परिवेश और वातावरण के अनुसार वे बदलते रहते हैं। कोई भी विचार हर युग के लिए स्वीकार्य नहीं हो सकता। कोई भी मान्यता स्थायी और स्थिर नहीं कही जा सकती, यह तय है। लेखक को इस सत्य को पहचानना चाहिए। किसी भी प्रश्न को अपनी प्रवृत्ति और अपने अनुभव के आधार पर ही समझने का यत्न करते चलना, एक लेखक के लिए कम-से-कम बहुत आवश्यक है।

मेरा अंतिम प्रश्न अभी शेष था—अंतिम और मुख्य।

मैं—आपने अभी कहा था कि अंगरेजी भाषा ही आपके ग्रंथों को प्रकाश में लायी, इसलिए आप उसके पक्षधर हैं, परंतु अंगरेजी भाषा, जिसको आप महत्त्व देने की बात करते हैं, भारत के कितने व्यक्ति जानते हैं ? और जाननेवालों में से भी कितने ऐसे व्यक्ति हैं, जो देश की मर्म-कथा-व्यथा को समझ सकें। देश के

ये वही
बेजोड़ टी वी सेट है जिसकी
आपको तलाश थी

क्रिस्टल डीलक्स S
सॉलिड-स्टेट

इन खूबियों की जांच करें
- बढ़े हुए रिजोल्यूशन के जरिये ज्यादा साफ तस्वीर
- स्वर को संतुलित रखने के लिए उच्च और मंद नियंत्रण की अलग व्यवस्था
- सही हाई-फाई आवाज पाने के लिए वूफर-ट्वीटर स्पीकर
- एम्लीफायर की तरह इस्तेमाल किया जा सकता है
- डायरेक्ट रिकॉर्डिंग की सुविधा
- बेहतर दिखाई पड़ने के लिए अतिरिक्त डैनिश स्क्रीन

इसके साथ ही वेस्टन की जब जहां चाहें बिक्री बाद की सेवा उपलब्ध है और आप महसूस करेंगे कि आपके पास देश का सर्वाधिक विशिष्ट टीवी सेट है। वेस्टन क्रिस्टल डीलक्स एस !

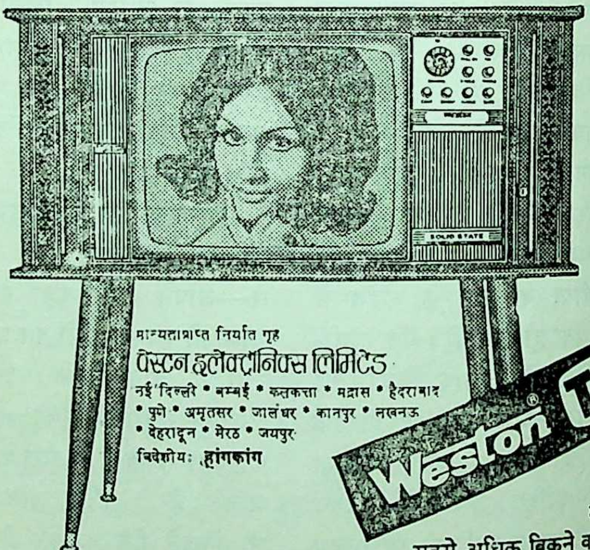

मान्यताप्राप्त निर्यात गृह
वेस्टन इलेक्ट्रानिक्स लिमिटेड
नई दिल्ली • बम्बई • कलकत्ता • मद्रास • हैदराबाद
• पुणे • अमृतसर • जालंधर • कानपुर • लखनऊ
• देहरादून • मेरठ • जयपुर
विदेशीय: हांगकांग

Weston® TV

भारत का
सबसे अधिक बिकने वाला टीवी

W-8/86 HIN

चुनिंदा व्यक्ति ही अंगरेजी भाषा को जानते-जीते हैं, तब आप हिंदी के स्थान पर अंगरेजी के पक्षधर क्यों हैं ?

कारंत--मैं हिंदी का पक्षधर क्यों बनूं ?

मैं--हिंदी एक सरल भाषा है, देश की अधिकांश जनता की भाषा है, इसलिए यह जन-भाषा है। इसे एक सप्ताह के भीतर ही सीख लिया जा सकता है, इसकी सबसे बड़ी विशेषता यही है, इसी कारण इसे राष्ट्र या राजभाषा का दर्जा दिया गया।

कारंत--पर यह सब कागजी है। मैं कहता हूं, हिंदी सात दिन में सीखी जा सकती है, पर दो दिन में भुला भी दी जा सकती है।

मैं--कैसे ?

कारंत--क्योंकि किसी भी भाषा को केवल किताबी ढंग से आत्मसात नहीं किया जा सकता। भाषा को सीखने का रहस्य उसके कानों से सुने जाने और बोले जाने में निहित है। हम लोगों यानी दक्षिण प्रदेश के निवासियों को कितनी हिंदी सुनने या बोलने को मिलती है ? हिंदी फिल्मी गानों की बात जाने दीजिए, जो सिर्फ अपनी धुनों के कारण ही लोकप्रिय है। आप कहते हैं, हिंदी सरल है, मैं कहता हूं मेरी कन्नड़ सरल है !

मैं--ठीक है, कन्नड़ राष्ट्रभाषा बने मुझे कोई आपत्ति नहीं है, पर जिस तरह वर्तमान में हम अंगरेजी भाषा से चिपके हैं, उस तरह हम किसी भी भारतीय भाषा को अपनायें तो अधिक उपकार हो सकता है।

कारंत--देखिए, मुझे किसी भी भाषा से द्रोह नहीं है, मेरा कहना भी सिर्फ इतना है कि मेरी रचनाएं फिलहाल अंगरेजी के माध्यम से दूसरे प्रदेशों में पहुंचीं। इसी तरह कोई भाषा हो, जिसके माध्यम से हम भिन्न-भिन्न प्रदेशों का साहित्य पढ़ सकें, तो ठीक है। फिलहाल इस प्रकार की भाषा कोई नहीं है। अंगरेजी भाषा के अतिरिक्त किसी अन्य भाषा में उतना ज्ञान-विज्ञान का साहित्य भी नहीं है--मेरी मान्यता यही है।

--३/६, भगवान नगर, देहरादून

(ऐसी एकांगी दृष्टि और विचारों से संपादक सहमत नहीं। संभवतः हिंदी की अत्यधिक उदारता से इसी तरह अहिंदीभाषी लेखक लाभ उठाते हैं। --संपादक)

प्रेमिका के लिए दो प्रेमियों द्वारा डुएल अर्थात द्वंद्व-युद्ध द्वारा 'इधर या उधर' का फैसला करने की प्रथा बहुत पुरानी है। सन १८९९ में एक ऐसा ही द्वंद्व-युद्ध लड़ा गया था, सरकस के तार पर। तार पर खेल दिखानेवाले दो कलाकार अपनी एक सह-कलाकार पर आसक्त हो गये और एक दिन 'तू रहे या मैं रहूं' की मुद्रा में खेल के दौरान ही सरकस के तार पर लड़ने लगे। परिणाम--प्रेमिका किसी तीसरे को मिली, क्योंकि दोनों का तार से नीचे गिरते ही प्राणांत हो गया।

दिल्लीवालों की दास्तान (८)

वह सारे शहर की खबर देती थी

• महेश्वर दयाल

झम्मन की मां हमारे महल्ले की भंगिन थी। महल्ले में झाड़ू-बुहारी देती। हवेली में सवेरे-शाम कमाने आती थी। आठ आने महीना और चूल्हे पीछे दो रोटियां वंधी थीं। जब सब खाना खा चुकते तब ड्योढ़ी में खड़ी होकर लंबी तान में आवाज लगाती-- 'ऐ बीबीजी रोटी दे दो।' उसके सिर पर एक छोटा-सा बांस की तीलियोंवाला टोकरा रखा होता, जिसमें चारखानेवाला मोटा कपड़ा बिछा रहता। आवाज सुनकर हमारे घर का नौकर पंचम दो मोटी-मोटी रोटियां और उन पर ढेर-सारी सब्जी और दाल चौके में से लेकर झम्मन की मां के टोकरे में रख देता। दादी पान का टुकड़ा खिलाये बिना उसे जाने नहीं देती थीं। यह हक उसका शहरखबरी का होता था। उसे दिल्ली के चप्पे-चप्पे की खबर थी। बड़ी बढ़ा-चढ़ाकर बातें सुनाती। उसकी लच्छेदार बातें सुनने के लिए घर की बहू-बेटियां दादी के पास आकर बैठ जाती थीं। दादी पूछतीं--"ऐ झम्मन की मां, दिल्ली और आसपास की कोई नयी-ताजी खबर सुनाओ। सब ठीक है न?"

बातों का ता

इतना सुनते ही झम्मन की मां की बातों का तार बंध जाता--'ऐ बहूजी, क्या बताऊं! वह सीताराम के बाजार के लाला करोड़ीमल हैं न, वही जिन्होंने अपने बेटे के व्याह में बिरादरी की दावत की थी, आज फटेहालों हैं। कल मेरी बहना आयी थी। कह रही थी--लाला का दिवाला निकलनेवाला है। दूधवाले के, बनिये के भी पैसे नहीं दे पा रहे हैं। सुना है, व्योपार बंद है। सैकड़ों का देना हो गया है, मगर यह भी सुना है कि जो कुछ उनके पास था, सब छिपा लिया है। अभी तो दिवालिया हो जाएंगे। थोड़े दिन बाद फिर लाखों के मालिक बन जाएंगे। हम तो यही सुनते चले आये हैं कि जिसका जितनी बार दिवाला निकले है, उतना ही अमीर हो जाए है। और हां, यह तो बताना भूल ही गयी, कल खारी बावली में दंगे-फसाद की खबर सुनते ही चांदनी चौक तक की

दुकानें फटाफट बंद हो गयीं। लोगों की भीड़ इकट्ठी हो गयी। पुलिस आ पहुंची। लेकिन थोड़ी देर में पता चला कि दो बिजार (सांड) लड़ रहे हैं।" यह सुनकर सबको हंसी आ गयी, लेकिन झम्मन की मां के होंठों पर मुसकराहट नहीं थी।

बेगम द्वारा मिर्जा की पिटाई

झम्मन की मां कुछ और कहना ही चाहती थी कि दादी ने बात काटकर कहा, "क्या यह सच है कि कल बिल्लीमारों में नवाब अच्छे मिर्जा की बेगम ने अपने मियां की जूतियों से खबर ली, बड़ी पिटाई की?" झम्मन की मां खिलखिलाकर हंस पड़ी और कहा, "बहूजी, यह तो अब पुरानी बात हो गयी। सारा शहर जाने है कि अच्छे मिर्जा बुरे मिर्जा कहलाते हैं। चांदनी चौक की कोतवाली के सामने फव्वारे के पास रामा ठेटर (थिएटर) में जहां आजकल मैजिस्टिक सिनेमा है, कलकत्ते की एक नाटक-मंडली आयी हुई है। अच्छे मिर्जा ने उस मंडली की एक वेश्या पर जान दे दी है। सारी जायदाद लुटा दी। बेगम को पता चला तो उन्होंने अपने मियां की नाक काट ली। अब और क्या सुनाऊं दिल्ली में क्या-क्या हो रहा है! जितना छानों किरकिरा है।" दादी ने सिगरेट के टीन के ढक्कन में पान का टुकड़ा रखकर झम्मन की मां के आगे सरका दिया। उसने कल्ले में पान दबाया और टीन का ढक्कन टोकरे में डाल वह ड्योढ़ी से बाहर चली गयी।

झम्मन की मां की जवानी ढल चुकी थी, लेकिन हाथ-पैर की बड़ी कड़ी थी। फुरतीली भी बहुत थी। बहुत सवेरे से महल्ले में आ जाती और आन की आन में महल्ले में झाड़ू-बुहारी दे डालती, नाली साफ कराके घरों में जाती। उससे खाली नहीं बैठा जाता था। झम्मन की मां बड़ी लाज-शरमवाली थी। महल्ले के बड़े-बूढ़ों को आता देखकर झट घूंघट काढ़कर दीवार की तरफ मुंह करके खड़ी हो जाती थी। एक मोटी-सी खद्दर

की ओढ़नी सिर पर ओढ़े रहता। ओढ़नी के पल्लू से सारा नाक-मुंह ढके रहती थी। काम करते वक्त उसकी तेज, चमकदार, काली-काली, बड़ी-बड़ी आंखें दिखायी देती थीं। झम्मन की मां का छुटपन में ही ब्याह हो गया था। ससुराल गयी, लेकिन न जाने किस बात पर सास से लड़कर अपने मां-बाप के पास चली आयी और अपने घरवाले को भी साथ ले आयी।

घरवाला : बीते दिनों की यादें

झम्मन की मां का घरवाला जवानी में कड़ियल पहलवान था। पट्ठेदार बाल और बड़ी-बड़ी काली, डरावनी मूंछें थीं। सब लोग उसे पलवान (पहलवान) कहकर बुलाते थे। 'पलवान' का नाम सुनकर उसका जी तो हरा हो जाता, लेकिन फिर ठंडी सांस भरकर बीते दिनों की कहानी सुनाने लगता—"अजी, काहे के पलवान हैं, थे जब थे! कौन-सा हुनर था जो हम नहीं जानते थे। बांक, बिनोट, लकड़ी, पट्टा—सभी कुछ आता था। लेकिन अब ऐसी गति को पहुंचे हैं कि देख लीजिए, लोथ की लोथ पड़े हैं! आपके चरनों की सौगंध, नाक पर बैठी मक्खी भी नहीं उड़ायी जाती। क्या करूं जोड़-जोड़ दुखता है। अब तो हम हैं और यह झिलंगी चारपाई। जो है वह हम पर आलस की पोट और अहदी की फबती कसता है। लेकिन बड़े-बड़े पहलवानों को चारों खाने चित पछाड़ा है। ऐसी-ऐसी कुश्तियां जीती हैं कि उस्ताद ने हम पर ही भरोसा किया। अखाड़े का नाम हमसे रोशन था। पुरा बातें सुनाते आंखों में आंसू आ जाते। लेकिन हमने तो जब झम्मन की के घरवाले को देखा, मरियल ही देखा। बदन थुलथुल करता था। डलाव के पास बिछी चारपाई पर पड़ा-पड़ा ऊं रहता था। कामकाज से जी चुरा और हुक्का गुड़गुड़ाता रहता था। झम्मन की मां के ऊपर-तले के कई बच्चे थे यह समझो फौज की फौज थी। बच्चों का लश्कर अपने बाप का हरदम नाक में दम किये रहता। लेकिन झम्मन की मां आती तो बच्चों को सांप सूंघ जाता। वह जुबान की टर्री थी लेकिन दिल की बहुत अच्छी थी। जो कोई उससे दो बोल मीठे बोल लेता तो उसे ऐसा लगता कि ऊंच-नीच मिट गयी।

हमारे घर रोटी पकाने के लिए एक गरीब ब्राह्मणी आती थी। सुंदर शक्ल की सीधी औरत थी। महल्ले में आते-जाते झम्मन की मां को देखती तो थोड़ी देर रुककर उसके हालचाल पूछती। ब्राह्मणी का एक जवान लड़का आजादी के आंदोलन में पकड़ा गया था। जब वह छूटकर आया तो उसकी जोशीली बातें सुनकर झम्मन की मां को विदेशी राज से चिढ़ होती थी। वह ऐसे लोगों को भी बुरा-भला कहती रहती जो अंगरेजों के गुन गाते थे और उनकी रीस करते थे।

यों तो हमारे महल्ले में खद्दरधारी

भी थे और अंगरेजी सूट पहननेवाले भी, लेकिन उसे ऐसी लड़कियों के लच्छन अच्छे नहीं लगते थे जो गालों पर पोडर (पाउडर), लाली और होंठों पर लिपस्टिक लगाकर बाहर जाती थीं। वह जब उन लड़कियों को देखती तो कहती, "ऐ, देखो तो सही रायसाहब की लड़की को, कैसी शेर की मौसी (बिल्ली)-सी लगती है। मालूम होता है कि कबूतर का खून पीकर निकली है।"

बोल गयी माई लार्ड कुकड़-कूं !

होली आयी तो उसे एक बात सूझी। वह कहीं से किसी मेम का फटा-पुराना साया (गाउन) ले आयी और अपने छोटे देवर को पहनाकर मेम बनाया और उसका नाम चुहिया मेम रखा। उसके बड़े देवर ने पैवंद लगा पतलून-कोट डांटा और सिर पर टूट-फूटा हैट पहन लिया। एक लड़के ने गले में ढोल डाला और दूसरे ने हाथों में मंजीरे लिये, पांच-छह लमडों ने मिलकर टोली बनायी और स्वांग भरकर निकल पड़े। चुहिया मेम के हाथ में बेलन था। वह गिटपिट करती अपने साहब को, जो नशे में चूर था, बेलन से झूठमूठ पीटती जाती। साहब और मेम की लड़ाई के साथ टोली के लड़के गाते—'बोल गयी माई लार्ड कुकड़ूं-कूं।'

किसी नौकर ने रायसाहब से शिकायत की कि हुजूर यह सब झम्मन की मां की शरारत है। यह आपकी बिटिया की हंसी उड़ा रही है। होली के दिन हों और स्वांग भरनेवालों से कोई झगड़ा मोल ले, यह कैसे हो सकता था, लेकिन रायसाहब ने नौकर से कहा, "होली हो जाने दो। इस जमादारिन को महल्ले से निकालकर किसी और को महल्ले की सफाई के लिए रखेंगे।" नौकर ने भी कह दिया, "दरोगन का ठेका नहीं जो उससे काम लें। दिल्ली में बहुतेरे भंगी मिल जाएंगे।"

झम्मन की मां ने नौकर की बात सुनी तो आपे से बाहर हो गयी। शेरनी की तरह गरजकर बोली, "ऐ, देखूं तो सही कौन मुआ इस महल्ले में पैर रखता है। उसे हमारे जैसों से पाला नहीं पड़ा। बड़ा आया हमारे महल्ले से हमें निकालनेवाला ! देखूं तो सही वह कौन-सा अफलातून का साला है ! यह किसी और के बाबा की जागीर नहीं। यह महल्ला हमारा है हमारा। इसे हमारे परदादा ने खरीदा था। आज तक तो कोई माई का लाल पैदा हुआ नहीं जो इस महल्ले में घुस सके।"

झम्मन की मां को चिल्लाते हुए बहुतों ने सुना, लेकिन किसी की हिम्मत न हुई कि कोई उससे कुछ कह सके। थोड़ी देर बाद दादी ने हवेली के नौकर को भेजकर जमादारिन को अंदर बुलवाया और कहा, "क्या हो गया तुम्हें ? अब जाने भी दो ! तुम तो झाड़ का कांटा हो गयीं। त्योहार का दिन है। हर्ष और

उल्लास के दिन झगड़ा अच्छा नहीं। यह लो [illegible] खाओ और बच्चों को भी खिलाओ।"

आजादी का आंदोलन

झम्मन की मां ने दादी के सामने झोली पसार दी और चुपचाप बाहर चली गयी। झम्मन की मां पढ़ी-लिखी तो नहीं थी। उसके लिए काला अक्षर भैंस बराबर था, लेकिन कभी हमारी हवेली में आकर और कभी हमारी ब्राह्मणी के घर जाकर आजादी के आंदोलन की खबरें सुना करती थी। चांदनी चौक में जब जुलूस निकलता, 'इंकलाब जिंदाबाद', 'गांधीजी की जय' और 'पंडित जवाहरलाल नेहरू जिंदाबाद' के नारे सुनकर उसे भी जोश उमड़ आता। एक दिन जब उसने सुना कि गांधीजी स्वराज की धुन में पक्के हैं और अंगरेजी सरकार ने उन्हें जेल में डाल दिया है तब वह उन बातों को समझने के लिए ब्राह्मणी के लड़के के पास गयी और बोली, "छोटे पंडित, सुना है बापू ने 'मरन ब्रत' रखा है। अब क्या होगा ?" छोटे पंडित ने कहा, "अंगरेजी सरकार ने बापू को छोड़ दिया है। जेल से बाहर आते ही वे अछूतोद्धार के काम में लग गये हैं। वे अछूतों को हरजिन कहते हैं।"

झम्मन की मां की समझ में छोटे पंडित की बात नहीं आयी। वह पूछने लगी, "हरिजन क्यों कहते हैं ? छुआछूत कैसे मिट सकती है ? अभी कल की ही तो बात है। हमारे लालाजी की बहू का [illegible] हमारे कपड़े से छू गया। उन्होंने वह-वह बातें सुनायीं कि मह [illegible] भर को सिर पर उठा लिया। दिन में [illegible] बार नहायीं, कपड़े बदले, फिर भी चैन नहीं पड़ा। वह तो हमें जानवर से भी बुरा समझते हैं। उन्होंने यह भी नहीं सोचा कि उनकी जमादारिन भला जान-बूझकर कभी ऐसा कर सकती है। [illegible] वह यह भी भूल गयीं कि एक बार जब उनकी बेटी चटक-मटक करती घर से बाहर निकली तब उस भिश्ती के लौंडे ने, जो हमारे महल्ले में मोरी धुलाने आता है, लाला की बेटी को देखकर कुछ ऊंची-नीची बात कह दी थी। मुझे पता चला तो मैंने उस सक्के के लौंडे को वह सुनायीं कि काली नानी के कोसने याद आ गये। मैंने डांटकर कहा, ऐसी झाड़ू मारूंगी कि धसकता फिरेगा। मुंह में झाड़ू ठूंस दूंगी। दुमदार सितारा दिखायी देगा।"

जात-पांत मनगढ़ंत ढकोसले

पंडित के लड़के ने झम्मन की बात काट कर कहा, "छोड़ो इन बातों को। सुनो, बापू कहते हैं, वे लोग जिन्हें सब अछूत समझते हें, असल में वही तो हरि के प्यारे हैं। वे सबसे अधिक सेवा करते हैं। बापू बचपन से ही छूतछात को बुरा समझते थे। वे कहते थे, जात-पांत मनगढ़ंत ढकोसले हैं। उन्होंने वर्धा में एक आश्रम खोला है, जो सेवाग्राम आश्रम कहलाता है, जहां हर जात और दीन-धर्म के आदमी जाकर

रह सकते हैं। आश्रम में रहनेवालों को अपना काम अपने हाथ से करना पड़ता है, जैसे चक्की पीसना, कपड़े धोना, खाना पकाना, झाड़ू देना, टट्टी साफ करना। गांधीजी और उनकी पत्नी कस्तूरबा भी सब आश्रमवालों की तरह ये काम अपने हाथ से करती हैं। बापू का कहना है कि वे उस दिन की राह देख रहे हैं जब देश आजाद होगा और हुकूमत की बागडोर हरिजन लड़की के हाथ में होगी।"

झम्मन की मां सोच में पड़ गयी। वह कहने लगी, "यह सब सपने की बातें हैं। क्या लोग बापू की बात मान लेंगे? जो बातें हजारों वर्षों से चली आ रही हैं, मिट सकेंगी? हम तो कूड़ा-करकट, मैला साफ करते आ रहे हैं और करते रहेंगे। इस बार गांधीजी दिल्ली में आयेंगे तो मैं उनके दर्शन करूंगी।"

छोटे पंडित ने झम्मन की मां को गांधीजी के चित्र का एक कलेंडर दिया और कहा कि इसे अपनी झोपड़ी में लटका लेना। झम्मन की मां खुशी के मारे फूली न समायी। उसने गांधीजी का वह कलेंडर अपने घर की दीवार पर टांग लिया। वह गांधीजी के चित्र के सामने सवेरे-शाम हाथ जोड़ती और कहती, "बापू, मैं भगवान से प्रार्थना करती हूं कि एक दिन तुम मुझे ऐसे ही दर्शन देना जैसे भगवान राम ने शबरी को दिये थे और उनके जूठे बेर खाये थे।"

कुछ महीने बाद जब गांधीजी दिल्ली आये और भंगी कालोनी में ठहरे तो वह भी भीड़ को चीरती हुई उनके दर्शन को गयी। सत्याग्रह चलता रहा। दिल्ली में आये-दिन जलसे होते, जुलूस निकलते। झम्मन की मां सब काम छोड़कर दूर खड़ी सब देखती रहती थी। एक दिन हमने उसे बेसुरी आवाज में कई गाने भी गाते सुना था--

गांधी चला है रन में दीजो जरा सहारा
गांधी का औतार हुआ है भारत भार मिटाने को
संग में वीर जवाहर है अपना राज चलाने को
गांधी के संग में वीर जवाहर है अन्याय मिटाने को
गांधी की सेना जनता है भारत आजाद कराने को

झम्मन की मां तो आजादी से बहुत पहले ही चल बसी, लेकिन बापू की बातें सच हो गयीं। यूं तो छुआछूत कानूनी अपराध है। हरिजन-उद्धार की ओर छुआछूत मिटाने की बातें बहुत की जाती हैं, मगर जब कभी हरिजनों पर अत्याचार की खबरें सुनायी देती हैं तब यही कहना पड़ता है कि अभी मंजिल दूर है।

--९६ बाबर रोड, नयी दिल्ली-१

विश्व प्रसिद्ध कलाकार पाब्लो पिकासो का पूरा नाम था--पाब्लो दियेगो जोस फ्रांसिस्को दे पाला जुआन नेपोमुसेनो मारिया दे लो रेमेदियोज सिप्रियानो दे लां सान्तिसिमा ट्रिनिडाड। उसकी मृत्यु के समय उसकी कुल संपत्ति थी--आठ अरब रुपये।

लघु-कथाएं

प्रतिकार

चुनाव में फूल और कांटा, दोनों ही उम्मीदवार थे। मतदाता था मानव की सारी कमजोरियोंवाला एक सामान्य व्यक्ति।

फूल ने कहा, "प्रिय मतदाता ! मैं तुम्हें जीवन में कोमलता का एहसास दूंगा। तुम जहां चलोगे, मैं तुम्हारी राह में बिछ जाऊंगा। मेरे रहते विद्रूपता तुम्हारे निकट नहीं आ सकती। तुम्हारी सफलता पर स्वयं बिंधकर तुम्हारे गले का हार बनने को मैं उद्यत हूं।"

खेद, मतदाता प्रभावित नहीं हुआ।

कांटे ने अपना पक्ष प्रस्तुत करते हुए कहा, "श्रीमान, मैं वादा करता हूं कि जब फूल तोड़ोगे तब मैं तुम्हें नहीं चुभूंगा। तुम निश्चितता से फूल तोड़ सकोगे।"

मतदाता इससे भी नहीं पिघला।

कांटे ने मतदाता के चेहरे के भाव पढ़े। उसने आश्वासन का दूसरा जाल फेंका--"महोदय ! मैं जानता हूं तुम्हें अनेक लोगों से प्रतिकार लेना है। मैं जहां तुम्हारे फूल चुनने में बाधा नहीं बनूंगा, वहीं तुम्हारे दुश्मनों को फूल कदापि नहीं चुनने दूंगा। उनकी उंगलियों को लहूलुहान कर दूंगा।" मतदाता खिल गया। उसने अपना मत कांटे को दे दिया।

--अर्जुन पंजाबी

पूजा--पूजा में अंतर

ताल के किनारे, एक पेड़ के नीचे, चबूतरे पर भक्तों ने एक छोटा-सा मंदिर बनाया था। उसमें एक पत्थर को सिंदूर का लेप देकर, भगवान का रूप दिया था। पास ही एक बड़ी चट्टान थी, जिस पर धोबी कपड़े धोते थे।

एक रात मंदिर के पत्थर ने दूसरे पत्थर को पुकारकर कहा--"सुन भाई, हम दोनों मूल रूप में एक हैं, फिर भी दोनों में कितना अंतर है! लोग मुझे कितना मानते हैं! और तुम सारे समय पिटते हो!"

धोबी-घाट का पत्थर बोला--"हे भगवान पत्थर! पूजा तो मैं भी जाता हूं। हां, पूजा-पूजा में अंतर है! तुम्हारे पास लोग भावनावश आते हैं और मेरे पास कर्मवश। परिश्रमी लोगों को मैं उनके काम में मदद करता हूं, अतः वे मुझे मन ही मन पूजते होंगे!"

यह सुनकर मंदिर का पत्थर आत्मग्लानि से भर उठा। वह बोला, "हे परोपकारी! क्या मैं भी तुम्हारे पास आकर रह सकता हूं?"

"नहीं, बंधु!" ताल का पत्थर बोला, "तुम अपनी जगह ठीक हो। भवबाधाओं से त्रस्त मनुष्य को तुम्हारी आवश्यकता है! तुम उसका संत्रास हरते हो, हे सृष्टा के प्रतीक!"

--पदमा चौगांवकर

बुद्धि विलास

१. एक मोटर ४० किलोमीटर प्रति-घंटे की रफ्तार से जा रही थी। मार्ग में उसे एक रिक्शा मिली, जिसकी रफ्तार उससे आधी थी। दोनों बिना रुके अपनी-अपनी रफ्तार से एक ही मार्ग पर चलती रहीं। बताइए, दोनों के मिलने से आधे घंटे बाद उन दोनों के बीच कितना फासला हो जाएगा? उत्तर पांच सेकंड में दें।

२. क. यूरोप के इतिहास में किस व्यक्ति को 'लिटिल कारपोरल' कहा जाता था?

ख. उसे अपने देश से कितनी बार और कहां निर्वासित किया गया था?

३. यूरोप में किस व्यक्ति की आकृति सिक्के पर सबसे पहले अंकित की गयी थी?

४. मनुष्य की रीढ़ में कितनी हड्डियां होती हैं?

५. भारतीय डाक-तार विभाग के प्रतीक के रूप में संस्कृत के कौन-से शब्द लिखे रहते हैं?

६. ध्वनि-अवरोध को पार करने के लिए विमान को किस रफ्तार से उड़ने की आवश्यकता है?

७. दुनिया के कौन-से देश १५ अगस्त को अपना स्वतंत्रता-दिवस मनाते हैं?

८. निम्नलिखित पुरस्कार पानेवालों के नाम बताइए—

क. ज्ञानपीठ पुरस्कार (१९७८), ख. हाफमैन पुरस्कार (सामाजिक सेवा के लिए), ग. लूथर किंग पुरस्कार, घ. सातवें अंतर्राष्ट्रीय फिल्म-समारोह में 'स्वर्ण-मयूर' पानेवाली फीचर फिल्म।

९. हिमालय के नाथुला दर्रे के एक ओर भारत है। बताइए, उसके दूसरी ओर कौन-सा देश स्थित है?

१०. हमारी पृथ्वी पर सबसे लंबी पर्वत-श्रेणी कौन-सी है?

११. क. संयुक्त राष्ट्रसंघीय सुरक्षा परिषद के सदस्यों की संख्या कितनी है?

ख. सुरक्षा परिषद के स्थायी सदस्यों के नाम बताइए।

१२. नीचे दिये गये चित्र को ध्यान से देखिए और बताइए यह क्या है—

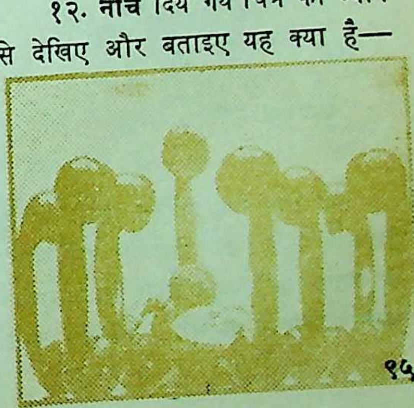

खाने की मेज पर पहुंचते ही झनकूजी ने नाक चढ़ायी और पत्नी से तमतमाते हुए पूछा, "क्या आज कोई खाने पर आनेवाला था जो ये आठ आदमियों का खाना पकाया है ?"

"जी, ऐसी कोई बात नहीं..." पत्नी अभी सफाई दे ही रही थीं कि झनकूजी झनक पड़े, "तब भागवान, मेरा दिवाला निकालने का इरादा है क्या ?"

"जी, ऐसी भी कोई बात नहीं ! दरअसल आज का अखबार आपने नहीं पढ़ा, उसमें बचे हुए खाने के नये-नये व्यंजन बनाने की विधियां छपी हैं, इसीलिए मैंने भी सोचा सीख लूं !" पत्नी ने कहा।

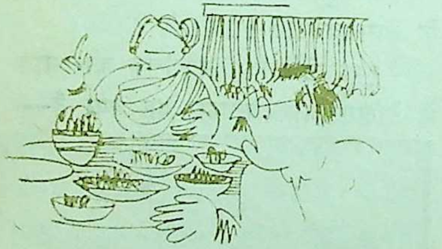

एक बार एक सज्जन किसी अच्छे होटल में पहुंचे। वहां मेज पर रखे 'मीनू' को देखकर उन्हें ध्यान आया कि वे अपना चश्मा दफ्तर में ही भूल आये हैं। तभी वेटर एक गिलास पानी उनकी मेज पर रखता हुआ बोला, "यस सर ! क्या पसंद करेंगे ?"

"पहले जरा इस 'मीनू' को पढ़कर सुनाओ कि क्या-क्या है तुम्हारे यहां ?"

यह सुनकर वेटर थोड़ा सकपकाया, बोला, "वैसे ही बताये देता हूं सर।"

"नहीं, 'मीनू' में से पढ़कर बताओ!" वे सज्जन वेटर का जवाब सुनकर सन्ना उठे थे।

वेटर धीमी आवाज में बहुत ही चतुराई से बोला, "सर, माफ कीजिएगा। मैं भी आपकी तरह ही हूं—'काला अक्षर भैंस बराबर' !"

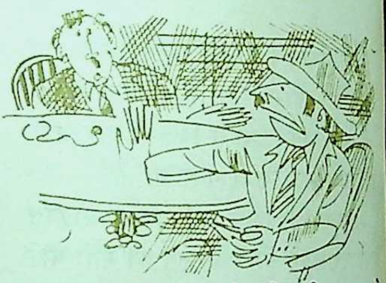

एक सज्जन पंसारी की दुकान से सिगरेट खरीदकर उसे वहीं जलाने लगे तो पंसारी ने टोका, "जनाब, आपने इतना बड़ा बोर्ड नहीं पढ़ा—'यहां सिगरेट पीना मना है।' "

"वाह, आप सिगरेट बेचते हैं और यहां पीने से मना करते हैं !"

"बेचता तो तेज जुलाब की टिकियां भी हूं।"

—नंदिता सिन्हा

मनश्चिकित्सक रोगी की बात ध्यान से सुन रहा था--'मैं हालीवुड में एक सुंदर घर में रहता हूं। मेरे पास एक कार है, ड्राइवर है। दो तरणताल हैं। एक हेलीकोप्टर है। मेरा होटलों का बिल प्रतिमास १००० डालर तक पहुंच जाता है।"

"इन हालात में आपको कष्ट क्या है, समस्या क्या है?" मनश्चिकित्सक ने पूछा।

"मेरी समस्या!" रोगी ने कहा, "यह है कि मैं प्रति-सप्ताह केवल पचास डालर कमा पाता हूं।"

दो फिल्म-अभिनेता एक मनश्चिकित्सक के द्वार पर मिले तो उनमें से एक ने पूछा, "तुम आ रहे हो या जा रहे हो?"

"यही मालूम होता तो यहां क्यों आता!" उत्तर मिला।

★

दो विज्ञापन: 'हम आपके सच्चे मित्र हैं। आज ही हमारी सेवाएं प्राप्त करें--जान सैमुअल जनाजेवाले।'

'एक मोटे शीशे का चश्मा खो गया है। पानेवाले सज्जन मोटे-मोटे अक्षरों में सूचना दें--नयनसुख 'दूरदर्शी।'

—राजशेखर

हंसिकाएं काव्य में

वोट

वोट के दिनों में
उसने--
नेता-प्रेमी से की याचना
"दिल दे सकती हूं
वोट न मांगना"

सकारण

घर में पत्नी थी--
अन्यत्र प्रेमिकाओं का सामीप्य लाभ
--रहा सदा
क्योंकि--
'निंदक नियरे राखिए . . .'
उनका मूलमंत्र था

दौड़

अब इस प्रतियोगिता के
आयाम बदल गये हैं--
पहले साथ-साथ भागे थे (शादी की)
अब एक-दूसरे से भाग रहे हैं!

स्वर

उनकी (युवा) बेटी को
हिंदी पढ़ाने लगा
'अ आ--ओ ओं'
स्वर सिखाने लगा
क्रुद्ध पिता बोले--'वाह--गुरु
पहले ही दिन से आ-आ शुरू'

--डॉ. सरोजनी प्रीतम

विधि-विधान

सुरेश मेहरा, होशंगाबाद : मेरे एक मित्र का एक विवाहित स्त्री से प्रेम हो गया है। इसमें आश्चर्य की बात है कि यह संबंध उसके पति के कहने से हुआ है। उस स्त्री के मेरे मित्र से शारीरिक संबंध भी हैं। उस स्त्री ने अपने पति से अब शारीरिक संबंध तोड़ लिये हैं। इस बात को लेकर दोनों में झगड़ा होता रहता है। मित्र एवं स्त्री दोनों चाहते हैं कि वह अपने पति से तलाक लेकर मित्र से विवाह कर ले। वह स्त्री आत्महत्या की धमकी देती है। क्या मेरा मित्र उस स्त्री को अपना सकता है जबकि वह स्वयं भी विवाहित है ?

स्त्री द्वारा आत्महत्या करने की कल्पना को प्रेम नहीं कहा जा सकता। इस प्रकार के वातावरण में पहुंचने से पूर्व उसके परिणामों को पहले ही सोच लेना चाहिए था। पति की अनुमति से पर-पुरुष से संबंध बना लेने पर पत्नी तलाक लेने का अधिकार नहीं रख हिंदू विवाह अधिनियम इन परि तियों में तलाक की अनुमति नहीं दे आपका मित्र भी विवाहित है। इसलि उन्हें विवाह का विचार छोड़ देना चाहि

अज्ञात, गढ़वाल : मेरा विवाह एक अध्या पिका से हुआ था। शादी के डेढ़ व के बाद संबंधों में तनाव आ गये, क्यों पत्नी का चरित्र संदिग्ध बनता गया दो-तीन बार अपनी आंखों से सब कु देख चुका हूं। एक बार पत्नी ने क्षमा मांग ली थी, लेकिन उनके संबंध पूर्व रहे। कितनी ही बार उसने मुझे व माता-पिता के सामने बेइज्जत किया। व कहीं दूर नौकरी करती है, लेकिन ससु राल नहीं आना चाहती। क्या मुझे आसा से तलाक मिल सकता है ?

आप हिंदू विवाह अधिनियम १९ ५५ की धारा १३ के अंतर्गत तला ले सकते हैं। आपको न्यायालय में य प्रमाणित करना होगा कि आपकी पत्नी के यौन-संबंध अन्य व्यक्ति या व्यक्ति से आपकी अनुमति के बगैर चल रहे हैं। यदि आप यह प्रमाणित करने में सफल हो गये, तो न्यायालय आप तलाक दिलवा देगा।

कैलाशचंद्र सौमानी, टांडा : मेरे पि

विधि-विधान स्तंभ के अंतर्गत कानून-संबंधी कठिनाइयों के बारे में पाठकों के प्रश्न आमंत्रित हैं। प्रश्नों का समाधान कर रहे हैं राजधानी के एक प्रसिद्ध कानून - विशेषज्ञ—रामप्रकाश गुप्त

को मेरी मां की विधवा मौसी ने गोद लिया था, किंतु इस संबंध में किसी प्रकार की भी रजिस्ट्री आदि नहीं हुई थी। लेकिन गोद लेने के कोई तीन वर्षों के बाद ही मौसी ने उन्हें निकाल दिया। हमारे खिलाफ मुकदमा भी किया जिसका फैसला उसके पक्ष में हुआ। फैसला होने के बाद भी हम उसकी जायदाद में रहते रहे उसने कोई आपत्ति नहीं की। विधवा मौसी के मरने के पश्चात अंतिम संस्कार मेरे पिता ने किया। इसी बीच एक व्यक्ति ने सरकार को यह सूचना दी कि पूरी जायदाद लावारिस है इसे सरकार अपने अधिकार में ले ले। उस संपत्ति को लावारिस कैसे कहा जा सकता है, कृपया उचित सलाह दें।

आपकी समस्या काफी गंभीर है। न्यायालय द्वारा आपके पिताजी के विरुद्ध निर्णय दे देने के बाद उनका विधवा की संपत्ति पर कोई अधिकार नहीं रहता। इस निर्णय के बाद रिश्तेदारों की सहमति आदि का आपके पिताजी के अधिकार पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। गोदनामा स्वीकार न होने का मतलब यह नहीं कि संपत्ति का स्वामित्व सरकार को चला जाए। हिंदू महिलाओं द्वारा छोड़ी गयी संपत्ति के उत्तराधिकारी निर्धारण हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा १५ के अंतर्गत होता है। उक्त धारा में वर्णित उत्तराधिकारियों के रहते संपत्ति लावारिस नहीं कही जा सकती तथा गांव के किसी व्यक्ति की शिकायत का कोई औचित्य प्रतीत नहीं होता। आपने अपने पत्र में जीवित रिश्तेदारों का पूरा विवरण नहीं दिया। इसलिए असली अधिकारी कौन होगा यह स्पष्ट नहीं कहा जा सकता।

प्रश्न : बलदाऊदास, बुरहानपुर : किसी अधिकारी को 'पब्लिक सरवेंट' का दर्जा पाने के लिए भारतीय दंड-संहिता की धारा २१ में दी गयी किसी परिभाषा के अंतर्गतअ ना हीं काफी है या उस अधिकारी को (सरकार द्वारा) संबंधित कानून में 'पब्लिक सरवेंट' घोषित होना आवश्यक है।

रामप्रकाश गुप्त

भारतीय दंड संहिता की धारा २१ की परिभाषा

में आना ही 'पब्लिक सरवेंट' के रूप में माने जाने के लिए पर्याप्त है। इसके लिए सरकार द्वारा 'पब्लिक सरवेंट' घोषित किया जाना आवश्यक नहीं। अभी मद्रास के भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री करुणानिधि के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय किया है कि मंत्री भी 'पब्लिक सरवेंट' है।

कृष्णचन्द्र, इलाहाबाद : मैं १८ वर्षीय बी. ए. पूर्वार्द्ध का छात्र हूं। मेरा विचार लंदन से 'बार एट लॉ' करने का है। इसके लिए कौन-सी योग्यताएं अनिवार्य हैं। भारत में क्या इस डिग्री का महत्त्व अब भी है ? एल-एल. एम. से क्या इसका ज्यादा महत्त्व है ?

वार एट लॉ करने के पूर्व वी. ए. होना आवश्यक है। वार एट लॉ का भारत में वही महत्त्व है जो यहां के किसी विश्वविद्यालय से विधि स्नातक (एल-एल. वी.) की डिग्री प्राप्त करने का है। हमारे देश में कानून की शिक्षा के पर्याप्त अवसर उपलब्ध हैं। एल-एल. एम. का अभिप्राय मास्टर ऑव लॉ (कानून के आचार्य) से है और
वार एट लॉ से अधिक महत्त्वपूर्ण डिग्री

गोपाल शर्मा, गया : मेरे दादा तीन
थे। जिनमें सबसे बड़े मेरे दादाजी
छोटे दादाजी के चार में से तीन
अभी मौजूद हैं। मंझले दादाजी निः
थे। पुरखों की संपत्ति में से सिर्फ
मकान मौजूद है। मेरे पिताजी जब
जीवित थे, हिस्से का आश्वासन मि
रहा, किंतु उनके मरने के बाद वे
हिस्सा नहीं देना चाहते हैं। क्या
उस मकान में अपना हिस्सा ले सकते

पूवजों की संपत्ति में आपका
कार पिता के स्वर्गवास से समाप्त
हो जाता। जो अधिकार आपके पिता
के थे उनके स्वर्गवास के वाद सभी आ
हो जाते हैं। आप पूर्वजों की सं
में बंटवारे के लिए आग्रह कर स
हैं और अस्वीकृति की दशा में न्याया
लय की शरण ले सकते हैं। हिंदू उत्त
धिकार कानून आपके अधिकार
मान्यता देता है।

अमरीका के इलिनायस नगर के सॉल लेविने ने अपने टेलीविजन के लिए एक नये ढंग से
बिजली प्राप्त की है। उसने अपनी साइकिल में एक छोटा-सा जनरेटर लगा दिया है।
जब परिवार को टेलीविजन देखने की इच्छा होती है तब एक किशोर जाकर साइकिल
पैडल चलाने लगता है और जनरेटर से बिजली मिलनी शुरू हो जाती है। थोड़ी दे
बाद उसका दूसरा भाई इस काम को संभाल लेता है।

सॉल का कहना है उसके बेटे टेलीविजन बहुत देखा करते थे, इसलिए उसने
तरीका निकाला कि टेलीविजन देखना है तब बारी-बारी से स्वयं बिजली पैदा करो।

यात्रा

• श्रवणकुमार

साढ़े सात बजे बस फिर चल पड़ी, लेकिन जब वह चली तो उसमें चख-चख मची हुई थी। हरजीत का कहना था कि लोगों को उसके बीमार बच्चों का भी लिहाज नहीं, उन्हें सिर्फ दौड़ने की पड़ी है। अग्रवाल का कहना था कि जिन्हें आराम पसंद है, उन्हें घर से बाहर नहीं निकलना चाहिए था—आखिर, भारत-दर्शन यों ही नहीं हो जाता, आपको सुई की नोक पर चलना होता है। बस दौड़ते जाओ! "कैसी सुई की नोक?" श्रीवास्तव जैसे अपने से बाहर हुआ जा रहा था। "आप अपने को गजेटेड अफसर कहते हैं! क्या यही है स्टैंडर्ड आपकी अफसरी का? यहां तो जिंदगी जानवरों से भी बदतर है। दिन भर बस चलेगी। रात भर बस चलेगी। न कहीं खाने का हिसाब, न सोने-जागने का। बस, दौडते जाओ, दौड़ते जाओ। आखिर, हम देख क्या रहे हैं?"

"साहब, इसी को कहते हैं रिटर्न टु प्रिमिटिव!" विमल ने धीरे से बात में बात जोड़ दी, "इस यात्रा ने तो दरअसल, हमें देश-विभाजन की याद दिला दी। तब लोगों की यही हालत थी। कहां खाना है, कहां नहाना है, कुछ पता नहीं।"

"तो हम क्या लावारिसों की तरह नहीं पड़े रहे रामेश्वरम की धर्मशाला में उस रात? सुबह उठे तब पता चला कि कैसी गंदगी पर हम पड़े रहे! ऐसी धर्मशालाओं में तो वे लोग ठहरते हैं जो अस्थियां प्रवाह कर लौटते हैं।" पद्माकर भी जोश में आ गया था।

"मैं तो दिन-रात के इस क्लेश से परेशान हो उठा हूं," इस बार आयोजक मेहरोत्रा अपने पक्ष को उभारना चाहता था, "कल रात इसी क्लेश की वजह से ऐक्सीडेंट होते-होते बचा। मैं आप से पहले भी विनती कर चुका हूं, अब फिर हाथ जोड़कर करता हूं कि चौबीस-पचीस दिन निकल चुके हैं, पांच-छह

दिन और बाकी हैं। अमन-चैन से निकल जाने दीजिए। मैं जानता हूं कुछ लोग जान-बूझकर आपको बरगला रहे हैं। उनका काम ही बरगलाना है। अब मैं उन्हें क्या कहूं!"

"आप कह भी क्या सकते हैं?" श्रीवास्तव अपने पूरे जोश में था--"दिल्ली तो हम सबको लौटना ही है। वहीं अब आप से निबटेंगे।"

श्रीवास्तव ने ऐसी धमकी पहली बार नहीं दी थी, इससे पहले भी वह इसी प्रकार के संकेत दे चुका था। पर उसकी धमकी को लोग खोखला नहीं समझ रहे थे। वे जानते थे श्रीवास्तव सी. बी. आई. में काम करता है और किसी समय भी किसी के लिए मुसीबत खड़ी कर सकता है। इसलिए जब श्रीवास्तव बोलता था, मेहरोत्रा की आवाज दब जाती थी, क्योंकि था तो वह सरकारी कर्मचारी ही!

एक बार श्रीवास्तव ने ड्राइवर को भी समझाया था, "अच्छा, यह बताओ तुम्हें दिन-रात चलकर क्या मिलता है?" "कुछ नहीं," ड्राइवर ने विनम्रता से अपनी खीसें निपोर दी थीं।

"तब तुम यह निश्चय करो कि तुम दिन में तीन-साढ़े तीन सौ किलोमीटर से ज्यादा ड्राइव नहीं करोगे।"

"ठीक है साहब," ड्राइवर ने उसकी हां में हां मिला दी थी और फिर पास में खड़े विष्णुस्वरूप को मुखातिब करते हुए उसने कहा था, "ये गधे यह नहीं जानते कि लोहे की मशीनरी को भी थोड़ा आराम चाहिए, यह तो इनसानी मशीनरी है। अकेला ड्राइवर, रोज लगातार साढ़े चार-पंच सौ किलोमीटर ड्राइव करता है।

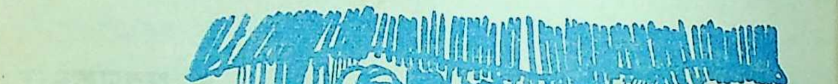

कहीं जरा-सी भी [illegible] हो गयी तुम समझो नैया पार !"

"इन्हें शर्म-लिहाज भी होती तो कोई बात भी थी। कहा इन्होंने यह था कि डी-लक्स बस होगी, जिसमें पंखे लगे होंगे, वाटर-बाक्स होगा, कुछ सीटें खाली छोड़ी जाएंगी ताकि कोई बीमारी की हालत में लेट सके। अब पूछिए इनसे वे सब कहा हैं ? बल्कि इन्होंने बस ठूंस-ठूंसकर भर रखी है। मैं बाजार से खास तौर से आइस-बाक्स लेकर आयी थी, लेकिन द्रविड़ साहब के कहने पर उसे लौटा आयी," अब मणि बोल रही थी और बोलते-बोलते उसकी आंखों में आंसू आ गये, "...मैंने तो बस में कदम रखते ही कहा था कि हम नहीं जाएंगे ऐसी बस में——सामान उतार लो, लेकिन हमारी सुनता कौन है !" पत्नी का परोक्ष उलाहना सुनकर श्रीवास्तव कुछ-कुछ झेंप-सा गया।

"मेरे बच्चे तो प्यास से निढाल हुए जा रहे थे। यह तो भला हो इनका कि इन्होंने सुराही खरीद ली, वरना...।" हरजीत का इशारा कुमारी रैना की तरफ था जो बस में मुश्किल से किसी से दो-एक शब्द बोली थी और मुश्किल से ही वह बस से नीचे उतरी थी। विमल की सीट रैना की सीट से दो सीट पीछे थी, पर शुरू की दो-एक दिन की चुप्पी के बाद वे दोनों आपस में ऐसे घुल-मिल गये थे जैसे दूध-चीनी हों। इसलिए

मेहरोत्रा से कहकर उन्होंने अपनी सीटें एक ही बर्थ पर करवा ली थीं, चाहे नारायणदास-जैसे लोग झींकते रहे और उन पर फब्तियां कसते रहें। विमल तो कभी-कभार लोगों की बात में बात जोड़ भी देता था, पर रैना उनके प्रति एकदम उदासीन थी। वह यदि बात करती भी थी तो केवल विमल से। बस मुश्किल से आधा घंटा चल पायी होगी कि सड़क के किनारे कुछ टपरे-से दीख पड़े। झट से अलका ने नारायणदास को उकसाया और उसने एक नारा बुलंद किया: हम क्या चाहते हैं—चाय। हमारी मांगें पूरी करो।

लाजिमी था कि बस धीमी पड़ती

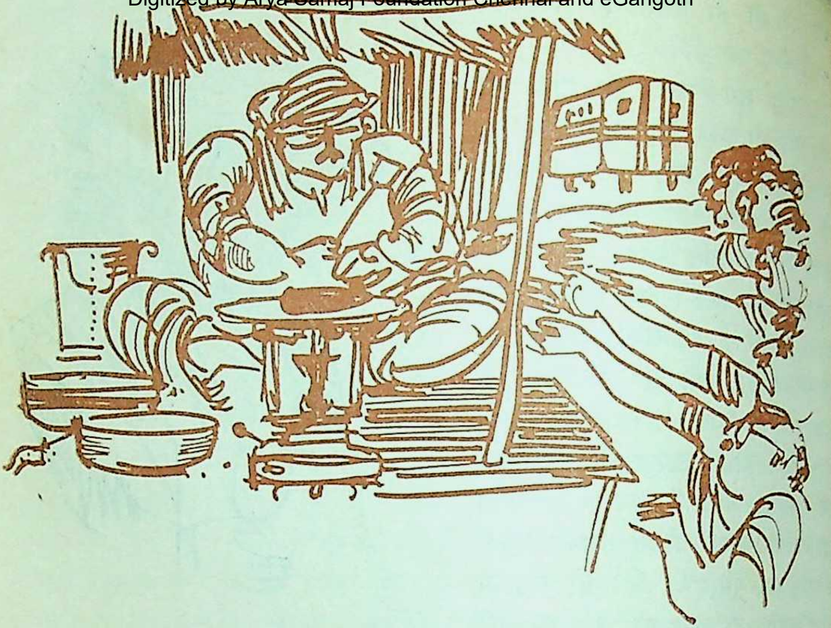

और फिर रुकती भी। बहरहाल, आयोजक मेहरोत्रा ने लोगों को आश्वस्त किया कि यहां चाय की एक बढ़िया दुकान है और वे इत्मीनान से उस दुकान में चाय पी सकते हैं।

चायवाले की सिट्टी-पिट्टी गुम हो रही थी। वह अपने पांच-छह सहायक छोकरों के बावजूद ग्राहकों को संभाल नहीं पा रहा था। कोई रबड़ी मांग रहा था, कोई भुजिया, कोई सेव, कोई कचौड़ी। अब वह बेचारा किस-किस का हिसाब रखे! उधर चाय के लिए आर्डर पर आर्डर आ रहे थे। "इधर चार चाय!", "उधर पांच चाय!", "बाबू के लिए थोड़ी चीनी कम!", "बाबू को दूध ज्यादा!"

हरजीत भी यहां अपने तीनों बच्चों के साथ पहुंच चुकी थी और दूध के लिए मांग कर रही थी।

"बहनजी, हम तो मुश्किल से चाय ही निबटा पायेंगे, दूध नहीं मिलेगा," दुकानदार बड़ी विनम्रता से कह रहा था।

"तब हम कहां जाएं?" हरजीत चिल्लायी।

"वहां सामने चले जाइए," दुकानदार ने अपनी विनम्रता बनाये रखते हुए कहा।

इतने में दुकान का छोकरा अपने दोनों हाथों में पानी के गिलास लिये उनके पास से गुजरा और अलका की मां दम-

यंती के मांगने पर एक गिलास उसने उसकी ओर बढ़ा दिया। छोकरे के दायें हाथ की पुश्त पर जख्म हो रहे थे, जिन पर उसने सफेद मरहम लगा रखा था। पानी के गिलास बांटकर वह उसी हाथ से जूठे गिलास धोने लगा और फिर उसी हाथ से उसने पानी के बड़े मटके में उन गिलासों को डुबो-डुबोकर पानी भरना शुरू किया। कुछ लोग वहीं पानी पीते थे और वहीं गिलास छोड़ देते थे।

"आप लोग अगर चाहें तो हम आपको उड़द की दाल के साथ परांठे खिला सकते हैं," दुकानदार ने ऊंची आवाज में एलान किया। वह शायद पंजाब के किसी गांव से आकर यहां बस गया था और पंजाबी वेश-भूषा में ही था। शरीर भारी, बल्कि तोंदियल, पहलवानों-जैसा और चेहरे पर बड़ी-बड़ी मूंछें।

वैसे यह चाय की दुकान भी क्या थी, एक अच्छी-खासी सराय थी, जहां बीस-पचीस मोटे पायों की चारपाइयां बिछी हुई थीं। जाहिर है यह व्यवस्था मुख्यतः सड़क से गुजरते ट्रक-ड्राइवरों के लिए की गयी होगी। चाहें तो चाय पियें, चाहें तो खाना खायें और चाहें तो थोड़ी देर के लिए नींद भी ले लें।

परांठों के बारे में सूचना पाकर लगभग सभी लोगों ने उनके लिए अपनी इच्छा जाहिर की। इसलिए दुकानदार ने फौरन दो स्टोव जलवाये और उन पर तवे रखवा दिये।

परांठे बनने लगे तो उनके लिए भी छीना-झपटी शुरू हो गयी। हर कोई चाह रहा था कि पहले उसे ही मिलें। चारपाइयों के पास लकड़ी की कुछ पट्टियां पड़ी थीं। उन्हें चारपाइयों के आस-पास बिछा दिया गया, जिससे ये मेज का काम देने लगीं।

अब जो छोकरा पहले पानी पिला रहा था, वह तो परांठे बनानेवाले छोकरों की मदद के लिए रुक गया और उसकी जगह एक और छोकरे ने पानी पिलाने का काम संभाल लिया। यह छोकरा काफी मुश्किल से चल पाता था,

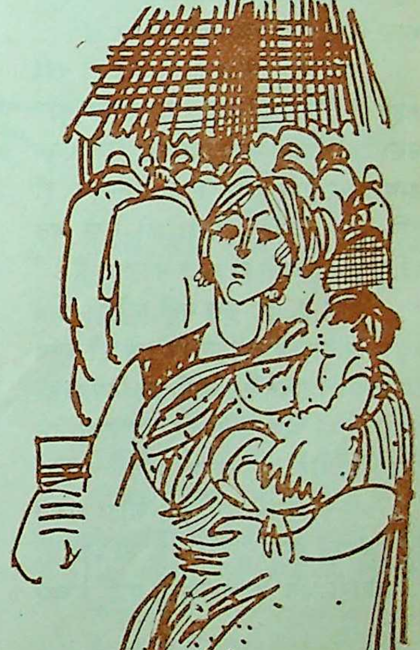

इसके साथ-साथ उसके चेहरे पर कुछ ऐसा भाव था जैसे वह बुद्धिविहीन हो। उसका मुंह बराबर खुला रहता था और काली झलक देते उसके गंदे दांतों को और नुमायां करता था।

"अरे राम रे, दाल में तो टिड्डी है!" श्रीमती अग्रवाल बोल उठीं।

"टिड्डी है तो उसे उंगली से निकालकर बाहर फेंक दो।" पानी के मटके की ओर बढ़ते हुए नारायणदास ने कहा।

पद्माकर ने द्रविड़ से कहा, "तुम लोगों ने सड़ी दुकानें जानबूझकर चुनी।"

"देखिए, आपको जो बात कहनी है मेहरोत्रा से कहिए।" द्रविड़ ने अपनी लाल-लाल आंखें फिर खोल ली थीं।

"आप जो बात कहते हैं इन्हें ही क्यों कहते हैं?" द्रविड़ की पत्नी शांति और उसकी दो बेटियां अनुराधा और रेखा एकसाथ चिल्लायीं और फिर एकसाथ ही रोते हुए बोलीं, "पापा को कुछ मत कहिए। वह पहले ही बहुत परेशान हैं!"

"ठीक है, हम कुछ नहीं कहेंगे। आप अपने पापा से कहिए कि हमें सौ रुपये वापस करें। हमने पैसे उन्हीं को दिये थे।" अग्रवाल भी अब पद्माकर का साथ देने लगा था और दौलतराम भी।

"सौ-सौ रुपये हम कैसे लौटा सकते हैं! "आपने अन्य टूरिस्ट बसें भी देखी ही हैं। हमारी बस उनसे लाख दर्जे अच्छी है।"

"यह बकवास है," विष्णुस्वरूप वहीं जाने कहां से आ टपका, "आपने जरा गौर फरमाया होता। उन बसों में पानी की टंकी थी या नहीं? उनमें क्या ड्राइवर के पीछेवाली सीट दो आदमियों के लिए ही थी? आप उस सीट पर तीन आदमियों को बैठाना चाहते हैं? फिर उन्होंने पांच सीट खाली छोड़ीं, जिससे वे मजे से लेटे हुए आये। और जनाब, इस पर भी उन्होंने सिर्फ पांच सौ रुपये फी-सीट लिये, साढ़े पांच सौ नहीं, जैसा कि आपने किया है!"

द्रविड़ को उम्मीद नहीं थी कि लोग एकाएक ऐसा रुख अख्तियार कर लेंगे और उसे मुंह की खानी पड़ेगी। अब वह बड़ी बेताबी से मेहरोत्रा के लिए इधर-उधर आंखें दौड़ा रहा था, लेकिन मेहरोत्रा बस के भीतर बोनट पर बैठा मन ही मन मुसकराता ड्राइवर से कह रहा था कि वह सबको लौट आने के लिए हार्न दे।

—एच-२५९, डी. डी. ए. फ्लैट,
नारायण-विहार, नयी दिल्ली-११००२८

बेचारा नीरो! कहावत है कि 'जब रोम जल रहा था, तब नीरो बंशी बजा रहा था,' पर यह तथ्य बहुत कम लोग जानते हैं कि जब रोम जल रहा था, तब नीरो एंटीम-स्थित अपने प्रासाद में था। और वंशी, वंशी का तब तक आविष्कार ही नहीं हुआ था।

'हिंदी का विरोध क्यों ?' शीर्षक इस लेखमाला के अंतर्गत पिछले दो अंकों में आपने प्रसिद्ध हिंदीतर-भाषी साहित्यकारों, हिंदी अध्यापकों, प्रचारकों एवं संपादकों के विचार पढ़े। उन्हें प्रेषित प्रश्नावली में बचे हुए चार प्रश्न जन-संचार-साधन, यथा समाचार-पत्र, पत्रिकाएं, आकाशवाणी, दूरदर्शन, सिनेमा, डाक्युमेंटरी आदि के द्वारा हिंदी-प्रचार को सुगम, सर्वसुलभ बनाने की आवश्यकता और महत्ता से संबंधित थे। इस अंतिम किस्त में पढ़िए इन्हीं प्रश्नों पर अहिंदी-भाषी विद्वानों के वक्तव्य--

हिंदी का विरोध क्यों ?

• डॉ. प्रभाकर माचवे

विज्ञान और तकनीकी विकास के साथ समाज में अधिक गतिशीलता आती है। गांवों से लोग शहरों की ओर और शहरों से महानगरों की ओर, यानी विशिष्ट प्रादेशिक, आंचलिक संस्कृतियों से अधिक एक सपाट, समान 'स्टैंडर्डाइज्ड' जिंदगी की ओर ज्यों-ज्यों बढ़ते हैं त्यों-त्यों उन्हें राष्ट्रीय एकात्मता और एक भाषा की भी आवश्यकता अधिक महसूस होने लगती है, जैसे अमरीका में अनेक देशों से लोग आ बसे, पर उन्होंने एक 'द्रवणशील भाषा' का निर्माण किया, सोवियत रूस में विभिन्न प्रदेशों के लोग अपनी 'अस्मिताएं' भुलाकर एक महान रूस पितृदेश की 'मिलीजुली संस्कृति' में साझी होने के लिए रूसी भाषा की लिपि और भाषा भी अपनाते हैं; चीन में भी अपनी छोटी-छोटी उच्चारणगत विशिष्टताएं अपनी जगह रहते हुए भी चीनी भाषा की एकरूपता और लिपि-सुधार के व्यापक प्रकल्प चल रहे हैं। जरमनी में यह काम कई सदियों पहले पूरा हुआ जब उत्तरी, दक्षिणी, पूर्वी जरमन प्रदेशों ने एक महान 'डौइश-प्राख' को अपनाया। क्या भारत में यह संभव नहीं है? दक्षिण के अनेक कवि और उपन्यासकार और समालोचक इस बारे में अलग-अलग राय रखते हैं।

उनसे पूछे गये शेष प्रश्न यों हैं—

पांचवां—क्या हिंदी के प्रचार-प्रसार में सरकार ने काफी काम किया है?

छठा—हिंदी के प्रचार में फिल्मों का योगदान कहां तक है?

सातवां—आकाशवाणी, दूरदर्शन और डाक्युमेंटरी इस दिशा में कहां तक सहायक हैं?

आठवां—समाचार-पत्र और पत्रिकाएं? राष्ट्रीय एकात्मकता?

कन्नड़ के महाकवि कु. वें. पुट्टप्पा ने चारों प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर दिये—सरकारी प्रचार? बहुत अधिक। फिल्म? उत्तर नहीं दिया। आकाशवाणी, दूरदर्शन आदि—वे अतिरेक कर रहे हैं। अंतिम प्रश्न के उत्तर में अधिकार में जो व्यक्ति हैं वे सीमित और संयम से हिंदी-नीति को अपनायें, तब ही कुछ तनाव कम होगा और राष्ट्रीय एकता बढ़ेगी।

उपन्यासकार डॉ. शिवराम कारंत ने लिखा, "सरकार का यह तरीका कि हिंदी में ही अहिंदी लोगों को व्याख्यान देंगे; फार्म, चैक आदि उसी भाषा में छापेंगे——यह सब दक्षिण में हिंदी विरोध का कारण बनता है। फिल्मों से प्रचार होता है। अन्य प्रचार-साधन-जैसे आकाशवाणी, दूरदर्शन आदि में जनता की भाषा में कार्यक्रम देने होंगे।

समाचार-पत्र और पत्रिकाए? ये भी राजनीतिज्ञों के एजेंट बन गये हैं और भाषा-जैसे तनावों में वे आग में और घी डालते हैं।

भ्रष्टाचार का मूल

श्री. का. ना. सुब्रह्मण्यम फिर यही बात दुहराते हैं कि सारे भ्रष्टाचार का मूल कारण सरकारी पैसा है। वे लिखते हैं—"सरकार एक-दो दशकों तक इस समस्या से दूर रहे और अपनी थैलियां न खोले तो हिंदी का भला होगा। हिंदी फिल्में, हिंदी लेखकों से संपर्क, यही अधिक अच्छे साधन हैं हिंदी प्रचार के। सरकार और उसके अमले के छुटभैये अधिकारियों से खुदा बचाये! सरकारी अनुदानों से अधिक फिल्में हिंदी-प्रचार में सहायक होती हैं।

भाषा को राजनीतिक

जिन हिंदी भाषी विद्वानों के विचार हमने प्रकाशित किये हैं उनके संबंध में किसी प्रकार की टिप्पणी करना हम उचित नहीं समझते। हिंदी मूल रूप से राष्ट्रीय प्रश्न है इसलिए इसके संबंध में विचार-स्वातंत्र्य के हम पक्षधर हैं। एक बात जरूर कहना चाहेंगे कि हिंदी बहुमत की भाषा है और हिंदी का साहित्यिक स्तर अन्य भाषाओं के बराबर नहीं है, हम इस आरोप को किसी तरह स्वीकार नहीं करेंगे। हिंदी भाषा और साहित्य की समृद्धि को किसी भी रूप में नकारा नहीं जा सकता।

दुःख इस बात का है कि हिंदी का प्रश्न राजनीति का प्रश्न बन गया है और राजनीतिक दायरे में ही हिंदी के बारे में सोचा और समझा जाता है। हिंदी के माध्यम से देश की अन्य भाषाओं के अनुवाद सामने आये हैं। इस तरह हिंदी ने एक राष्ट्रीय मंच बनाने में सहयोग दिया है। बहुत पहले साहित्य अकादमी के भूतपूर्व अध्यक्ष स्व. सुनीतिकुमार चैटर्जी

आकाशवाणी, दूरदर्शन, आडिटोरियम सरकारी प्रचार-साधन होने से विकास और प्रचार में बाधक रही हैं।”

सरकार की सीमाएं

डॉ विश्वनाथ एयर के अनुसार ‘भारत सरकार और राज्य सरकारें हिंदी प्रचार के लिए बहुत करती हैं, पैसे भी खूब खर्च करती हैं। मगर सरकार की सीमाएं होती हैं। सरकार पर सारा दायित्व सौंपकर धनी समर्थ हिंदीभाषी आराम से रहें और अहिंदी प्रांतों के विषय में शिकायत करें तो प्रगति नहीं हो सकती। फिल्म हिंदी का सबसे सशक्त प्रचार कर सकती है। एक तरफ राजभाषा हिंदी का विरोध होता है; दूसरी तरफ ‘बॉबी,’ और ‘शोले’ के दर्शकों की ‘क्यू’ अनंत है। इन दोनों के निर्माता दक्षिण के थियेटरों से मालामाल हो गये। एर्णाकुलम के दो थियेटरों में नयी से नयी हिंदी फिल्में होती हैं। भीड़ ऐसी कि हफ्तों तक फिल्में चलती हैं। वहां न पार्टी का भेद है, न भाषा का। बरमन साहब के गाये गाने छात्रों की गोष्ठियों में खूब गाये जाते हैं। आकाशवाणी, दूरदर्शन आदि को हिंदी प्रचार के कार्यक्रम और सुनियोजित करने चाहिए। दक्षिण की संस्कृति पर अधिक आलेख-रूपक बनें तो अच्छा हो। दक्षिण के समाचारपत्रों के स्वामी अधिकतर अंगरेजीदां हैं। ईसाई प्रतिष्ठानों का योगदान भी कम नहीं है। हिंदीतर प्रांतों के हिंदी लेखकों के पास अपनी रचनाएं छपाने, प्रकाशित करने के कोई साधन नहीं हैं। हिंदीभाषी प्रांतों के हिंदीभाषी अधिकारीगण पहले आपस में हिंदी में

षड्यंत्रों से बचाइए

ने हिंदी की बोलियों को पूरी भाषा का स्वतंत्र रूप देकर उनको मान्यता देना शुरू कर दिया था। हमारी दृष्टि में यह स्वर्गीय चैटर्जी का सुनियोजित षड्यंत्र था। इस तरह के राजनीतिक षड्यंत्रों से किसी एक भाषा का नहीं, समूचे देश का अहित होता है। राजनीति के बाहर यदि देखा जाए तो दक्षिण भारत के लोग भी हिंदी बोलते और समझते हैं। जब तक इस देश में हिंदी, अंगरेजी और राजभाषा यानी त्रिभाषा फार्मूला चलता रहेगा, हिंदी हमेशा पीछे होती जाएगी। यदि अंगरेजी को छोड़कर दो भाषा फार्मूले को स्वीकार कर लिया जाए तो सारा विरोध अपने आप कम हो जाएगा और हिंदी तथा अन्य भाषाएं एक साथ विकसित होंगी और बढ़ेंगी। हम उस दिन की प्रतीक्षा कर रहे हैं जब भाषा के प्रश्न को एक राष्ट्रीयता के रूप में देखा जाएगा और उसे राजनीतिक षड्यंत्रों का शिकार नहीं होना पड़ेगा।

—संपादक

नियमित रूप से थोड़ी-थोड़ी बचत कीजिये—और
तब वह हर चीज़ आपकी होगी,
जिसका आप हमेशा सपना देखते हैं।

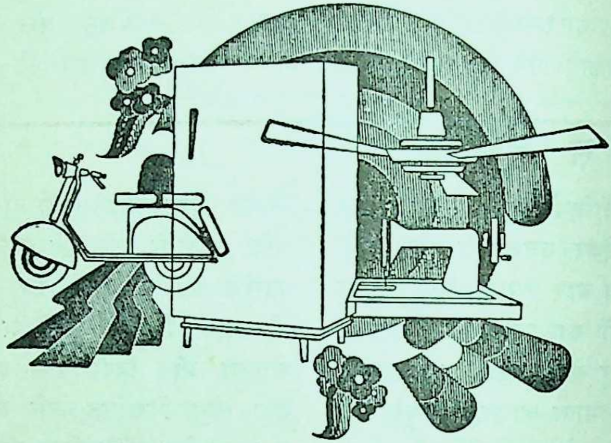

इलाहाबाद बैंक की रेकरिंग डिपॉजिट योजना
आपके सपनों को सच करती है।

इस योजना की सबसे बड़ी खूबी यह है कि इसमें आप खुद तय करते हैं कि हर माह आपको कितना जमा करना है। कम से कम १० रुपये से लेकर अधिक से अधिक १,००० रुपये तक—१ से १० वर्ष तक की अवधि के लिये।

इस प्रकार आप बगैर किसी परेशानी के आसानी से बचत कर सकते हैं। और अन्त में जो आपको वापस मिलेगा, वह आपके जमा किये हुए पैसों से ५०%···या शायद उससे भी ज्यादा हो सकता है। तब आप बड़े आराम से वह सब कुछ खरीद सकेंगे, जिसका आप हमेशा सपना देखते हैं।

अधिक जानकारी के लिये अपने करीब के इलाहाबाद बैंक की किसी भी शाखा में पधारिये।

इलाहाबाद बैंक
आपका अपना बैंक
(भारत सरकार की एक संस्था)

पत्र-व्यवहार शुरू करें। दूसरों की भाषाएं सीखकर, उनके माध्यम से उनसे वार्तालाप करके उनके दिलों को जीतने का काम करें। अंगरेज पादरियों ने यही गुर सीखा था। यह मंत्र हिंदीभाषा क्षेत्रवाले क्यों नहीं सीखते ?

संकीर्णता से ऊपर उठें

इन्हीं प्रश्नों पर तमिलभाषी शौरिराजन के विचार पढ़े, "हिंदी फिल्में हिंदी को लोकप्रिय बनाने में बखूबी मदद पहुंचा रही हैं। लोकप्रिय व्यवसाय का अपना आकर्षक प्रभाव तो होता ही है। आकाशवाणी, दूरदर्शन आदि से कोई शिकायत नहीं। भारत की पत्र-पत्रिकाओं के अपने अजीब चरित्र होते हैं। सत्ताश्रयी स्पर्धा, चाटुकारी कला, लेखकीय दलबंदी, नकली करतब, चर्वित-चर्वण और संकीर्णता से वे ऊपर उठें, तभी हिंदी-विरोधी तनाव को वे दूर कर सकते हैं। एक ही साम्राज्य के अंगरेजी पत्र हिंदी की अयोग्यता-असमर्थता पर तार्किक पैगाम बुलंद करते हैं; तो हिंदी पत्र अंगरेजी के खिलाफ बगावत का बिगुल बजाते हैं। ऐसी पत्र-पत्रिकाओं से राष्ट्रीय एकता कैसे सशक्त बनेगी ? सुप्रतिष्ठित, सुसंपन्न हिंदी पत्र-पत्रिकाओं में लगातार 'अंगरेजी बोलती डिक्शनरी' और 'रैपिडेक्स इंग्लिश स्पीकिंग कोर्स' के भड़कीले विज्ञापन देखकर बड़ा मजा आता है।"

फिल्में और भाषा-वैमनस्य

श्री आरिगपूडि के अनुसार, "फिल्मों के कारण हिंदी फैली हो या न फैली हो, पर इनके कारण भाषागत वैमनस्य अवश्य कम हुआ है। हिंदीतर प्रांतों में आकाशवाणी दूरदर्शन आदि के हिंदी कार्यक्रमों की भूमिका नगण्य है। हर प्रांत की अपनी भाषा है। उसे प्रधानता दी जाती है, जैसा कि उचित भी है।

"हिंदी पत्र-पत्रिकाओं को सर्वप्रांतीय बनना होगा, वे अभी केवल हिंदी प्रदेश के लिए ही मुद्रित होती जान पड़ती हैं। इस पूर्वाग्रह को हटाना होगा कि हिंदी में वे ही लिख सकते हैं, जिनकी वह मातृभाषा है। मैं हिंदी में लिखता हूं, मुझे प्रकाशन की कठिनाई नहीं है, पर मैं कदाचित अपवाद हूं। औरों को बहुत कठिनाइयां होती हैं।"

श्री बालशौरि रेड्डी का कहना है, "जो लोग हिंदीतर क्षेत्रों से हैं और हिंदी का प्रचार करते हैं, उसमें लेखन-कार्य करते हैं, उनकी क्षमता-दक्षता का, उनकी निष्ठा और राष्ट्रहित-कामना का समुचित मूल्यांकन नहीं हुआ है; बल्कि कहना चाहूंगा कि उनकी उपेक्षा ही हुई है। हिंदी के प्रचार का कार्य सुव्यवस्थित और योजनाबद्ध कार्यक्रमों द्वारा नहीं हुआ है। इस कार्य को मुठ्ठीभर लोगों के हाथों में सौंपकर सरकार ने हिंदी का अहित ही किया है। कतिपय हिंदी प्रदेश के विद्वान और आलोचकों ने हिंदीतर प्रांतों के प्रचारक और लेखकों की घोर उपेक्षा की है। स्वयं अपने को हिंदी का उद्धारक

मानकर वे हिंदी का अहित कर रहे हैं।" फिल्मों की हिंदी-प्रचार में महत्त्वपूर्ण भूमिका की प्रशंसा करके रेड्डीजी कहते हैं, "आकाशवाणी और दूरदर्शन में मनोरंजन और ज्ञानवर्धन का समुचित समन्वय होना चाहिए।

"हिंदी-समाचारपत्र और पत्र-पत्रिकाओं को ऐसी सशक्त, उपयोगी और पठनीय सामग्री देनी है जिससे पाठक उस ओर स्वयं स्वेच्छा से आकृष्ट हों। भाषा, जाति, कुल, धर्म, वर्ण, वर्ग से परे हृदयस्पर्शी, व्यापक, गहन और वैविध्यपूर्ण रचनाएं राष्ट्रीय एकीकरण का मार्ग प्रशस्त करेंगी।"

कथनी और करनी का अंतर

हिंदी की स्वर्ण-पदक विजेता गायिका एवं कवयित्री हेमलता आंजनेयलू (जनस्वामी) का मत है, "सरकारी आदेशों और उनके कार्यान्वयन में काफी अंतर रहता आया है। हिंदी प्रशिक्षण योजना, पत्राचार द्वारा प्रशिक्षण-योजना आदि योजनाएं पूर्णरूपेण उपयोगी नहीं हैं। दूसरे, इनके अमल में इतना विलंब होता है कि वर्षों के अनभ्यास के कारण सीखा-सिखाया भी लोग भूल जाते हैं। इन योजनाओं के लिए साहित्यिक हिंदी के बजाय सरकारी कामकाज और रोजाना व्यवहार के लिए उपयोगी भाषा सिखायी जानी चाहिए। बेहतर यह हो कि ऐसी योजनाएं गैर-सरकारी संस्थाओं द्वारा चलायी जाएं और उनकी परीक्षाओं को मान्यता मिले।

"हिंदी फिल्मों के दक्षिण में लोकप्रिय होने का कारण गाने हैं। दृश्य-माध्यम होने से अभिनय के आधार पर अधिकांश लोग प्रसंग समझ लेते हैं और संवादों का उनके लिए कोई महत्त्व नहीं रहता।

"रेडियो और दूरदर्शन के माध्यमों में भाषा के सही उच्चारण, प्रवाह और सुगठित शैली की आवश्यकता होती है। अंतरप्रादेशिक सांस्कृतिक कार्यक्रमों के आदान-प्रदान से इसमें काफी सहायता मिलेगी।

"समाचार पत्र और पत्रिकाएं यदि अपनी सीमित रुचियों और गुटबंदियों से ऊपर उठकर उभरती योग्य प्रतिभाओं को प्रोत्साहन देंगे तो तनाव कम होंगे और राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ होगी। प्रोत्साहन देने के लिए कुछ सुझाव यों हैं:

१. विभिन्न भाषाभाषियों की मूल या अनूदित रचनाएं प्रकाशित करना
२. योग्यता के आधार पर प्रकाशन संबंधी संस्थाओं में नियुक्तियां
३. विभिन्न भाषाभाषियों के साथ भेंट-वार्ताएं
४. पर्यटन-साहित्य
५. हिंदी पत्र-पत्रिकाएं अपनी 'बड़ेपन की ग्रंथि' से उबरें।"

स्वैच्छिक संस्थाएं सक्रिय नहीं

हिंदी प्राध्यापिका, कवयित्री, अनुवादिका कन्नड़भाषिणी कु. ललितांबा लिखती हैं, "शिक्षित समुदाय तक हिंदी

पहुंचाने के लिए सरकार ने काफी अच्छा कार्य किया है। अहिंदीभाषी हिंदी छात्रों को छात्रवृत्ति, केंद्रीय शालाओं में हिंदी शिक्षा, केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा ग्रंथालयों को पुस्तक-दान और अहिंदीभाषी हिंदी लेखकों को विशेष अनुदान, पुरस्कार आदि।

"राज्यसरकारों ने ग्रामों में हिंदी-प्रचार का कार्य स्वैच्छिक संस्थाओं को सौंपा है। वे अधिक सक्रिय नहीं हैं।

"युवा पीढ़ी हिंदी फिल्मी गाने बहुत पसंद करती है। गांवों में फिल्मों से हिंदी पहुंच रही है। विविधभारती के हिंदी गीत, हवामहल आदि हिंदी का प्रसार आकाशवाणी से करते हैं। आकाशवाणी के हिंदी पाठ आकर्षक नहीं हो पाये हैं। दूसरे प्रसारण का समय सब के लिए सुविधाजनक नहीं। हिंदी का 'नवरस' कार्यक्रम महीने में एक बार सिर्फ बीस मिनट के लिए और वह भी 'नीरस' होता है। दूरदर्शन का कर्नाटक में उतना प्रसार नहीं हुआ है।

"हिंदी पत्र-पत्रिकाओं को अहिंदीभाषियों की हिंदी रचनाएं और हिंदीतर भाषाओं से साहित्यिक अनुवाद अधिक प्रकाशित करने चाहिए। अहिंदीभाषी प्रमुख लेखकों का परिचय, अहिंदीभाषी क्षेत्रों की हिंदी साहित्यगोष्ठियों के विवरण, सुनियोजित रूप से प्रकाशित करके राष्ट्रीय एकता की भावना बढ़ाने में विशेष योग देना चाहिए।"

ये सभी सुझाव काफी रचनात्मक हैं। अंत में डॉ. मोतीलाल जिन्होंने सिंधी कहानियों का अनुवाद हिंदी में सबसे पहले प्रकाशित किया, लिखते हैं, "सिंधी भाषा से हिंदी में पर्याप्त अनुवाद नहीं हुए हैं, न इन भाषा-भाषियों में हिंदी प्रसार-प्रचार में सरकार ने कोई विशेष योजना बनायी है।"

हिंदी-विरोध और निराकरण के उपाय

हिंदी-विरोध के कारण केवल राजनीतिक नहीं हैं, वे आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक सभी प्रकार के हैं। स्पष्ट कहा जाए तो बंगाल में हिंदी का अर्थ मारवाड़ियों की भाषा है। सो बंगाली मारवाड़ी का विरोधी है, तो हिंदी-विरोधी भी, बल्कि पहले 'समानासु हिंदी प्रथमा' लिखनेवाले डॉ. सुनीतिकुमार चैटर्जी बाद में हिंदी से राजस्थानी को अलग भाषा का दर्जा दिलानेवालों में प्रमुखता करने लगे। बंगाली के बड़े-बड़े लेखक मन-मन में यह जरूर चाहते हैं कि उनकी पुस्तकों के अनुवाद हिंदी में हों, तो बिक्री बढ़े, आय हो; पर हिंदीभाषी को वे बिहारी, उड़िया-जैसे अपनी संस्कृति से हीनतर भाषा-भाषियों की संस्कृति मन ही मन में मानकर चलते हैं। हिंदी-फिल्मों के लिए कहानी देंगे, संगीत देंगे, दिग्दर्शन भी करेंगे (प्रेमचंद की हिंदी-कथा का अंगरेजी अनुवाद कराके पुनः हिंदी में 'शतरंज के खिलाड़ी' की तरह), हिंदीभाषियों के बड़ी पुरस्कार समितियों की अध्यक्षता करेंगे——

पर व्यक्तिगत रूप से हिंदी की कमियों, छोटेपन की सदा चर्चा करते रहेंगे। यहां विरोध के कारण स्पष्ट हैं—आर्थिक स्पर्धा-भावना; सांस्कृतिक श्रेष्ठता की भाव-ग्रंथि।

असम और उड़ीसा दोनों बंगालियों के विरोधी हैं। इसलिए वे हिंदी के विरोधी नहीं हैं, पर वहां हिंदीभाषियों ने कार्य बहुत कम किया है।

भारत के पूर्वांचल की यह कथा है। संक्षेप में यही बात कमोवेश और प्रदेशों में सही है—दक्षिण की चर्चा विस्तार से हुई है, पर वहां, विशेषतः तमिलनाडु में हिंदी को संस्कृत, ब्राह्मण और उत्तर का पर्यायवाची मान लिया जाता है—अतः विरोध का एक कारण जातिवाद भी है।

अपेक्षाकृत केरल में हिंदी-विरोध सबसे कम है। हिंदी के वे लेखक उन्हें प्रिय हैं जो साम्यवादी, समाजवादी हैं।

महाराष्ट्र, गुजरात में हिंदी का विरोध कभी रहा नहीं। कभी-कभी यह बात जरूर उठती है कि हिंदी सीखकर 'आगे खायेंगे क्या ?' दक्षिण में कई हिंदी पी.-एच. डी. मारे-मारे फिर रहे हैं। बेकार हैं।

नव-धनाढ्य सिंधी-पंजाबी परिवारों में अंगरेजी चलती है। विदेश में जाकर कांग्रेस के राजनेता अंगरेजी का सहारा लेते हैं। रूस-जैसे देश में भी बजाय मातृभाषा हिंदी के, अंगरेजी में प्रयोग करते हैं। परिणाम एक भी हिंदी भाषा-भाषी लेखक अपनी रचना इंग्लैंड, अमरीका में अनुवाद के रूप में पुस्तकाकार नहीं छपवा सका।

भाषा-प्रचार के मामले में भी हिंदीभाषी ने कई भूलें की हैं—भाषा केवल भावुकता के बल पर नहीं फैलती। उसके गुण और उपयोगिता से फैलती है। हिंदी को 'प्रयोजनमूलक' भाषा बनाकर व्यावहारिक स्तर पर प्रचार-प्रसार आवश्यक है। अभी तो यह कार्य केवल 'फिल्में' कर रही हैं। वे भी घटिया बबैया फिल्में और सस्ती जेबी किताबें ! हिंदी की केवल यही 'इमेज' दूर-दूर तक फैलती है कि उसमें विपुल मात्रा में इश्किया और जासूसी किताबें हैं।

हिंदी-विरोध कैसे कम होगा—इसका कोई तैयार नुस्खा मेरे पास नहीं है, पर अगर चालीस साल से हमने हिंदी में कुछ कलम घिसाई की है तो उस सब का सार इतना ही है 'हिंदी का भविष्य उज्ज्वल है; हिंदी सेवक का भी भविष्य उज्ज्वल है। सिर्फ है त्याग और सेवा, संयम और प्रामाणिकता की कमी।' हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए ऐसे लेखक चाहिए जिन्हें पढ़ने के लिए लोग हिंदी सीखें !!

—ई-१८०, ग्रेटर कैलाश-२, नयी दिल्ली

यार्क विश्वविद्यालय में एक युवती प्रतिदिन दस घंटे वर्षों पुराने वसीयतनामों पर गरम इस्तरी फिराती है ताकि इतिहासकार उन्हें पढ़ सकें।

इसी तरह लंदन के एक क्लब में सुबह-सुबह एक व्यक्ति समाचार-पत्रों पर गरम इस्तरी फिराता है ताकि ग्राहकों को उन्हें पढ़ने में आसानी हो।

रामचरितमानस—कुछ शंकाएं

क्या मानस में विरोधाभास हैं?

• लक्ष्मीनिवास बिरला

आजकल वैज्ञानिक अन्वेषण का अर्थ प्रायः हो गया है पुरानी अच्छी बातों को भी किसी-न-किसी तर्क से काट देना। कई लोग कहने लगे हैं कि 'महाभारत हुआ ही नहीं। राम कहां हुए, यह तो कवि की कल्पनामात्र है!' राम हुए या नहीं, इस बहस को छोड़कर हमें काव्य की गहराई में जाना चाहिए। 'रामचरितमानस' हिंदी-साहित्य में एक अनूठा ग्रंथ माना जाता है। इस ग्रंथ को अनगिनत लोगों ने पढ़ा है। इसकी मर्मस्पर्शी चौपाइयां करोड़ों लोगों ने दोहरायी हैं, लेकिन आजकल ऐसे साहित्य में भी कुछ लोग समीक्षात्मक दृष्टि से अनौचित्य और औचित्य यत्र-तत्र खोजते रहते हैं।

विद्रोही युवकों से बातचीत के प्रसंग में यदि यह पूछा जाए कि ऐसे विचार वे क्यों व्यक्त करते हैं जो पुराने लोगों को अनुत्तरदायी व अनैतिक लगते हैं, तो उनका उत्तर यही होता है—'क्यों नहीं!'

इस 'क्यों नहीं' के कम-से-कम दो तात्पर्य हैं:

'मुझे कौन रोक सकता है?' ही केवल नहीं, साथ में 'मुझे कारण बताइए जो मान्य हो।' नवयुवक की मांग में किसी भी बात को मानने में अहनग के साथ-साथ एक निराशापूर्ण अधीरता होती है।

इसलिए लेखन में अधिक सावधानी की आवश्यकता है, जिससे नयी पीढ़ी के युवक उसके वास्तविक मूल अर्थ को समझ सकें। उदाहरणार्थ, नीचे कुछ प्रसंग हैं—

कैकेयी ने दो वर मांग लिये—राम को वनवास दिया जाए और भरत का राजतिलक किया जाए। दशरथ ने राम-जैसे पुत्र को वनवास दे दिया। यह कहां तक उचित है?

कैकेयी की बात सुनकर दशरथ तो सन्न हो गये। उन्हें ऐसी चोट लगी कि दशरथ की मृत्यु ही हो गयी। उन्होंने अपने मुंह से राम को कुछ भी नहीं कहा, पर माता कैकेयी की बात सुनकर राम का उत्तर था:

सुनु जननी! सोइ सुत बड़भागी
जो पितु-मातु वचन अनुरागी
भरत प्रानप्रिय पावहिं राजू
विधि सब विधि मोहि सनमुख आजू

यह कहकर राम वन को चल दिये।

मानस में विरोधाभास भी बताते हैं।

श्रीराम ने माता की आज्ञा का पालन

किया पर भरतजी जब लौटे तो गुरु ने सब बातें समझाते हुए अंत में कहा :

बेद बिदित संमत सबही का
जेहि पितु देइ सो पावइ टीका

माता कौशल्या ने भी भरत से कहा :

पूत पथ्य गुर आयसु अहई
सौ आदरिअ करिअ हित मानी
तजिअ विषादु काल गति जानी

भरतजी ने यह आज्ञा नहीं मानी। इतनी विपरीत बात क्यों ? भरत तो न माने और राम के पास चल दिये। श्रीराम की खड़ाऊं लाकर उन्हें सिंहासन पर रखकर राम का राज्य चलाया।

इसका समाधान तुलसीदासजी ने किया। जब भरत चित्रकूट पर श्रीराम से मिले तो राम ने कहा :

तात भरत तुम्ह धरम धुरीना
लोक बेद बिद प्रेम प्रबीना

पर इतना ही नहीं। गुरु वसिष्ठ ने राजमुकुट पहनने की आज्ञा दी थी, उन्होंने भी अपना मत बदल दिया और बोले :

समुझब कहब करब तुम जोई
धरम सारु जग होइहि सोई

इस तरह भरत की आज्ञा-अवहेलना का भी समाधान हो गया।

वालि-वध का भी अनौचित्य :

मैं बैरी सुग्रीव पियारा
कारन कवन नाथ मोहि मारा

इसका उत्तर राम ने दिया :

अनुज वधू, भगिनी, सुत-नारी
सुनु सठ ! कन्या सम ये चारी

फिर भी शंका बनी ही रह जाती है, विभीषण ने भी तो अग्रज-वधू मंदोदरी को रख लिया था, किंतु तुलसीदासजी ने यहां अनौचित्य को दूर नहीं किया। उनका समाधान तो इसके बाद आता है :

सुनत राम, अति कोमल बानी
बालि सीस परसेउ निज पानी
अचल करौं तनु राखहु प्राना

किंतु बालि ने यह जवाब देकर अनौचित्य दूर कर दिया :

जनम-जनम मुनि जतन कराही
अंत राम कहि आवत नाहीं

इस तरह तुलसीदासजी ने अनन्य भक्ति-भावना से प्रेरित होकर अपने ढंग से अनौचित्य को औचित्य में परिणत कर दिया।

जब हनुमान ने लंका में प्रवेश किया तब तुलसीदासजी कहते हैं :

मसक समान रूप कपि धरी
लंकहि चलेउ सुमिरि नरहरी

शंका की जाती है कि मसक के समान रूप था, तो 'राम-नाम-अंकित' मुद्रिका वह कैसे ले गये ?

एक बार एक कथावाचक व्यासजी ने मसक का अर्थ लगाया था 'बिल्ली'। हनुमान बिल्ली के जैसा रूप धरकर लंका में गये। हम यह भूल जाते हैं कि तुलसीदासजी का यह ग्रंथ जब काफी गहराई तक गया है, तो इतनी छोटी-सी बात पर ऐसा अनौचित्य कैसे हो सकता है ? शंकाशील व्यक्ति को 'मसक' का अर्थ

'अभिधा' में न लेकर 'लक्षणा' में लेना चाहिए।

यह भी कि हनुमान महिमा, अणिमा आदि अष्टसिद्धियों के ज्ञाता थे। जब सुरसा ने अपना वदन बेहद बढ़ाया तो हनुमान ने अपना वदन छोटा कर लिया। हम जब पहाड़ की ऊंचाई से या हवाई विमान से नीचे देखते हैं, तो नीचे चलनेवाले चींटी के बराबर दीखते हैं, ज्यादा ऊंचे होने पर तो वे दीखते ही नहीं हैं। यह कह सकते हैं कि नीचे चलनेवाले 'मसक' के समान होकर ही दीखने बंद हो गये। यही सुरसा के सामने हुआ।

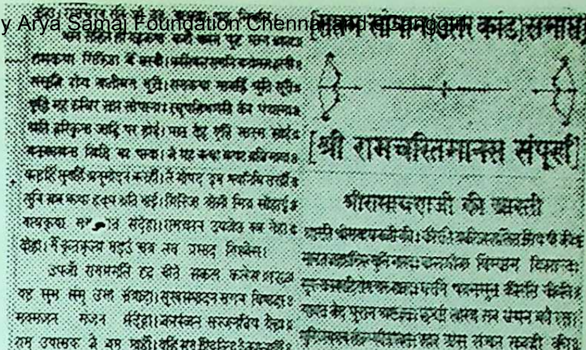
[श्री रामचरितमानस संपूर्ण]

काशी के तुलसी मानस मंदिर में अंकित रामायण

राम-रावण युद्ध में एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठता है कि रावण-जैसा विश्वविजयी कैलास को कंधों पर उठानेवाला लोक-विश्रुत योद्धा, राम द्वारा आखिर क्यों परास्त हुआ? तुलसीदासजी कहते हैं:

रथ विभंजि, हति केतु पताका
गर्जा अति अंतर बल थाका

रावण का अंतर-बल क्यों थक गया?

महाभारत में कथा है कि शल्य पांडवों के बुलाने पर युद्ध में शामिल होने जा रहे थे। रास्ते में दुर्योधन पहुंच गया और उन्हें अपनी तरफ खींचकर ले गया।

शल्य युधिष्ठिर के मामा थे। युधिष्ठिर उनसे मिलने गये, तो शल्य ने 'विजयी हो' यह आशीर्वाद दिया। युधिष्ठिर ने कहा कि आप तो हमारे प्रतिद्वंदी को सहायता दे रहे थे, फिर हम विजयी कैसे होंगे?

शल्य ने प्रतिज्ञा की कि वे कर्ण का आत्मबल क्षीण करते रहेंगे और कर्ण के बिना कौरवों की विजय संभव नहीं होगी।

शल्य ने कर्ण का आत्मबल क्षीण कर दिया। पुराने जमाने में योद्धाओं के साथ चारण उनके बल का बखान करते चलते थे, जिससे वह बढ़ता था। आत्मबल का युद्ध जीतने के लिए बड़ा महत्त्व है।

जरमन और अंगरेजों के युद्ध में अंगरेज शुरू में मार पर मार खाते जाते थे, पर उनमें आत्मबल खूब था, इसलिए धीरे-धीरे तैयारी करके अंत में वे विजयी हुए।

रावण का आत्मबल क्षीण होने के कारण कई थे। कितनी बार तो मंदोदरी ने टोका :

तुम्हहिं रघुपतिहिं अंतर कैसा
खलु खद्योत दिनकरहिं जैसा

रावण नहीं समझा। मंदोदरी ने पुनः समझाया :

पिय तुम ताहि जितब संग्रामा
जाके दूत कैर यह कामा
रखवारे हति, विपिन उजारा
देखत तोहिं अच्छ तेहि मारा
जारि सकल पुर, कीन्हसि छारा
कहां रहा बल गर्व तुम्हारा

इस प्रकार अनेक बार मंदोदरी ने रावण को हतोत्साह किया।

जब राम की सेना समुद्र के उस पार आ गयी, तब विभीषण ने भी रावण को समझाया कि राम मनुष्यों के राजा नहीं हैं, वे तो सकल लोकों के स्वामी, काल के भी काल हैं।

रावण के एक बुद्धिमान मंत्री माल्यवान ने भी विभीषण का समर्थन किया। रावण ने क्रुद्ध होकर विभीषण को लात जमा दी और पुकारकर सिपाहियों से कहा, "हटाओ इस मूर्ख माल्यवान को।"

विभीषण और माल्यवान का जो हाल हुआ वही रावण के पुत्र प्रहस्त का हुआ। उसने भी पिता को समझाया, पर रावण ने एक न सुनी।

जब रावण के बहुत से योद्धा मारे गये, तब उसने कुंभकर्ण को जगाया। कुंभकर्ण ने उठते ही कहा :

भजहु राम होइहि कल्याना

रावण ने उन सब हितैषियों की बात तो न मानी, पर धीरे-धीरे उसका आत्मबल गिरता गया और अंत में :

डोली भूमि गिरत दसकंधर

यह सब शायद गलत हो, किंतु जो समाधान दीख पड़े, वह मैंने ऊपर दिये हैं। ऐसे और भी उदाहरण होंगे, हमें उनका पूरा तथ्य समझना चाहिए। युवकों की तर्कबुद्धि ऐसी-ऐसी शंकाओं के इन समाधानों को ग्रहण करेगी, यह कहना कठिन है; पर अन्वेषण के साथ-साथ तथ्यों की गहराई में जाना चाहिए, यह मेरा निवेदन है।

—९/१ आर. एन. मुखर्जी रोड,
कलकत्ता-७०000१

क्रोधपूर्ण मुद्रा में तैंतालिस मांसपेशियों को श्रम करना पड़ता है, जब कि मुसकराने में केवल सत्तरह। इसलिए सदा मुसकराइए।

विलंबित न्याय : कुछ सुझाव

अदालतों में बयान बदलना आसान

• दिनेशचन्द्र दुबे

अक्टूबर १९७४ की एक व्यस्त अदालतीय दोपहर। बयान जारी थे।

"कब की बात है, बाई ?"

"साल भर पहले की।"

"क्या हुआ था ?"

"दोपहर के वक्त मैं हार में थी। पल्लू अपने खेत में हल चला रहा था। मुझ देखते ही वह यकायक अपना हल छोड़कर मेरे पास आया। आते ही उसने मेरा हाथ पकड़ लिया। मैं चिल्लायी। मेरा ससुर झगड़ू के खेत से भागकर आया। तब पल्लू मुझे छोड़कर भाग गया। मेरी चूड़ियां टूट गयीं। अगले दिन मेरा आदमी आया तो उसे मैंने सारी बात बतायी।" अभियोजक उस युवती का सरल-परीक्षण समाप्त कर खुश-खुश बैठ गया। अब बारी थी अभियुक्त के अभिभाषक की। वह उठा। उसने पहला प्रश्न किया—

"देखो बाई, यह बताओ कि तुम्हें पल्लू ने क्यों पकड़ा था ?"

क्षण भर के लिए उस युवती का चेहरा लालिमा से रंगा। वह पलटी। उसने बाहर खड़े अपने तथा अभियुक्त के रिश्तेदार और मध्यस्थों की ओर क्षण भर के लिए देखा। फिर मेरी तरफ आंखें उठाती हुई बोली, "वह कहता था, तुमने मेरी घास क्यों काटी। वह मुझे पकड़कर गांववालों को चोरी का प्रमाण दिखाने) ले जाना चाहता था। मैं नहीं जा रही थी। इस खींच-तान में मेरी चूड़ियां भी टूट गयीं थी।"

"और कुछ तो नहीं हुआ ?"

"नहीं।"

"तब फिर तुमने रिपोर्ट क्यों की ?"

"इसलिए कि पल्लू कहीं खुद मेरे खिलाफ घास-चोरी की रिपोर्ट न कर दे।"

"ठीक है।" कहकर अभियुक्त का अभिभाषक चारों ओर एक विजयी दृष्टि डालकर बैठ गया। इस पर अभियोजक ने खड़े होकर उससे जिरह की अनुमति प्राप्त करनी चाही। अभियोजक का कहना था कि गांववालों ने राजीनामा करा दिया होगा तभी वह सरल-परीक्षण में तो ठीक बोली, लेकिन जिरह में बदल गयी है।

उल्लेखनीय है कि पुलिस में झूठी रिपोर्ट लिखना भारतीय दंड संहिता

की धारा १९३ के अंतर्गत दंडनीय अपराध है। रिपोर्ट झूठ साबित न हो इसलिए युवती ने सरल-परीक्षण में वही कहा जो रिपोर्ट में था, लेकिन जिरह में मूल तथ्य पर उसने बयान बदल दिया। मामले की मूल रिपोर्ट व युवती का पुलिस बयान इस प्रकार था :

"साहब, मैं दिन के ३ बजे अपने हार में बाड़ी काट रही थी। वहीं पल्लू चमार अपने खेत में हल चला रहा था। पल्लू मुझे देख अपना हल छोड़कर मेरे पास आया और उसने मेरा हाथ पकड़ा। बोला, 'जुड़ई के खेत में चल।' मैंने कहा, 'नहीं जाती।' तब पल्लू जबरन मेरा हाथ पकड़कर जुड़ई के खेत में ले गया। मैं चिल्लाती रही पर... पल्लू ने मेरे दोनों ...फिर धरती में पटककर... मेरा चिल्लाना सुन मेरा ससुर झगड़ू चमार, जो उधर ही था, आ गया, तब पल्लू मुझे छोड़कर भाग गया। पल्लू की पकड़ा-धकड़ी से मेरे दोनों हाथों की चूड़ियां टूट गयीं। मेरा आदमी परसों घर नहीं था। कल रात आया, तब मैंने उसे सारा हाल बताया। सो आज रिपोर्ट के लिए आयी हूं। कार्यवाही की जाए।"

मैंने अभियोजक को जिरह करने की अनुमति दे दी। जिरह शुरू हुई। अभियोजक ने युवती की रिपोर्ट फिर से पढ़कर सुनायी तब वह बदल गयी। बोली, "मैंने रिपोर्ट सही की थी। अभिभाषक को जो मैंने बताया है वह मैं से गलत बता गयी हूं।"

इस पर अभिभाषक को फिर जिरह करने का अधिकार था। अभिभाषक ने युवती से पूछा कि अभी पहले तुमने शपथ खाकर झूठ क्यों बोला तब युवती फिर पलटी। वह बोली, उसने सही सही बताया था। यानी अभी-अभी अभियोजक को दिया हुआ उसका बयान गलत था।

स्पष्ट था कि युवती का कथन विश्वसनीय नहीं है। कानूनन यदि स्वतंत्र साक्षी एवं ताईदी गवाह ताईद करते हैं, तभी ऐसे मामलों में अभियुक्त को सजा दी जा सकती है। फलतः गवाह के रूप में उसके पति को बुलाया गया।

उसने कहा, "जब मैं लौटकर आया तब मेरी घरवाली ने बताया कि वह घास काट रही थी, तभी उसे बिच्छू ने काट खाया। वह चिल्लायी तब पल्लू दौड़ा और उसका हाथ पकड़ लिया।" इस पर अभियोजक झुंझला उठा। उसने जोर देकर पूछा, "मैं पूछता हूं कि पल्लू ने तुम्हारी बीवी का हाथ किस नीयत से पकड़ा था।"

"बिच्छू का जहर न चढ़ने पाये इसलिए।"

गवाह के प्रत्युत्तर से मामला ही बदल गया। अभियोजक ने उस से जिरह की। लेकिन वह टस से मस नहीं हुआ। तब अगले गवाह के रूप में युवती की सास

आयी। उसने भी यही कहा।

अभियोजक ने अपने श्रम को व्यर्थ जाते देख अंत में युवती के ससुर को गवाह के रूप में बुलाया और पूछा––

"जब यह खेत में बाड़ी काट रही थी तब तुम कहां थे?"

"वहीं, पास के खेत में।"

"वह क्यों चिल्लायी थी, बता सकते हो? जब तुम उसके पास पहुंचे तब तुमने क्या देखा था और उस समय उसने तुम्हें क्या बताया था?" अभियोजक ने एकसाथ कई प्रश्न कर जवाब निकालना चाहा। लेकिन बुड्ढ़ा एकदम सतर्क हो गया, बोला, "चीख? कौन की? कैसी चीख? हमने किसी के चीखने की आवाज नहीं सुनी।"

"तब तुमने कुछ नहीं सुना! कुछ नहीं देखा!"

"नहीं।"

इस तरह जब वह सब कुछ नकार गया तब अभियोजक हार कर बैठ गया। स्पष्ट था कि गवाह पहले ही सारी संभावित जिरह से किसी कानूनी ज्ञान रखनेवाले व्यक्ति द्वारा ट्रेंड कर दिये गये थे।

गवाही खत्म होने के साथ ही मामला भी खत्म हो गया।

इस मामले की तफतीश में कुल एक माह लगा और डेढ़ वर्ष न्यायालीय सुनवाई में, कुल दस पेशियां लगीं। कुल वक्त अदालती समय का पूरा एक दिन। और फैसला—'अपराधी की बाइज्जत दोष मुक्ति।' दोष-मुक्ति का निर्णय मैंने लिखा था। और घोषित किया था।

इस मुकदमे को खत्म हुए वर्षों बीत गये, लेकिन आज यकायक ऐसे ही एक अन्य मामले की सुनवाई पूरी कर जब मैं घर लौटा हूं तब जाने क्यों कई प्रश्न दिमाग में कील की तरह ठुक गये हैं। ये प्रश्न हैं:

● क्या इस देश की अदालतें कानून से अनविज्ञ और विज्ञ दोनों के लिए ही महज मनोरंजन भर का स्थल हैं? यदि नहीं तो पुलिस में रिपोर्ट करने, बयान देने के पश्चात अदालत में यह मंजर क्यों

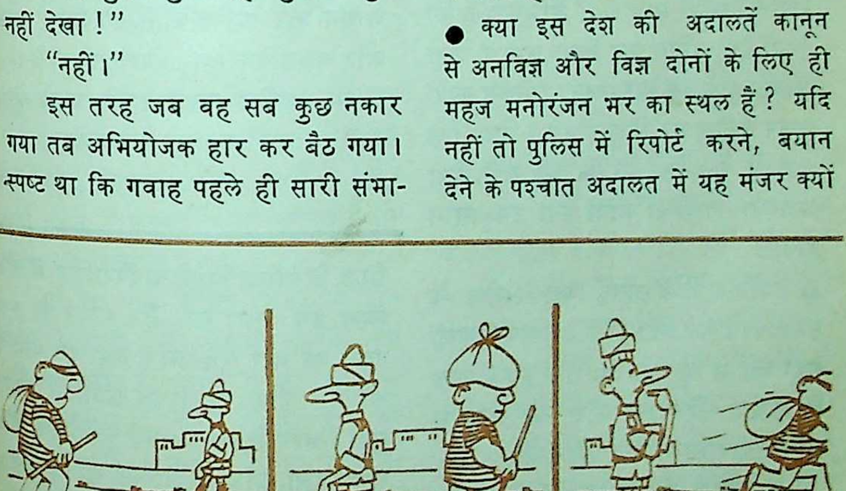

उपस्थित होता है? क्या अभिभाषक व अभियुक्त के हितैषी न्यायालय को सही स्थिति व बदली हुई परिस्थितियों का ज्ञान कराकर अभियुक्त को साधारण माफी या प्रतारणा आदि के दंड-निर्धारण के लिए न्यायालय से विनय नहीं कर सकते थे? ऐसा करके मैं समझता हूं कि न्याय-व्यवस्था के प्रति उचित सम्मान व्यक्त किया जा सकता है।

● क्या वास्तविक न्याय के लिए फौजदारी मामलों में यह उचित न होगा कि अदालत के सामने सीधे फरियादी और अपराधी ही आमने-सामने हों। तब झूठे बचाव जरूरत से संख्या में कम और व्यस्त निचली अदालतों का वक्त तो बरबाद न करेंगे। तब क्या यह ठीक न होगा कि नियमों में परिवर्तन करके ऐसे छोटे-छोटे फौजदारी मामलों में अभिभाषक को पैरवी से विवर्धित कर दिया जाए? जहां जरूरत हो केवल न्यायालय 'एमीकस क्यूरे' टाइप वकील भर नियुक्त करे। उधर ऐसे मामलों में अपीलें भी न हो सकें, ऐसी व्यवस्था का किया जाना क्या उपयुक्त न होगा?

● विधि-मंत्री के सातवें वित्त आयोग के समक्ष दिये गये आंकड़ों के अनुसार निचली अदालतों में जुलाई, ७८ तक १४४ लाख से अधिक फौजदारी और २२ लाख से अधिक दीवानी मामले पेंडिंग हैं।

सोचता हूं दंड-संहिता में वर्णित अनेक कथित बड़े अपराध राजीनामा काबिल बनाकर वैधिक स्थिति बदल क्यों नहीं दी जाती। यदि किसी मामले के संबंधित लोग आपसी रजामंदी से अपराधी को छुड़ाने का फैसला कर लेते हैं और उसी के अनुसार गवाह अपने बयान बदल देते हैं ऐसी स्थिति में कानून क्या कर सकता है।

बड़े अपराधों के संबंध मेरे इस सुझाव के विरुद्ध कुछ लोग तर्क दे सकते हैं। इसके बारे में एक तथ्य और देना चाहूंगा कि बड़े अपराध को न्यायालय की अनुमति द्वारा राजीनामा योग्य बनाना इन तर्कों का पर्याप्त उत्तर होगा। अनुभवी जज खुद स्थिति देखकर ही तो ऐसी अनुमति देगा न।

अनुभवों के आधार पर मेरे इन सुझावों पर गंभीरता से विचारकर नियमों व कानून में यथा परिवर्तन करने से निश्चय ही शासन और व्यक्ति दोनों को शीघ्र, सस्ता और वास्तविक न्याय मिल सकेगा है।

—न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी
एवं व्यवहार न्यायाधीश वर्ग-२
मांडेर, ग्वालियर

मिस्र के प्रसिद्ध गिरजे के पिरामिड में ६० लाख टन पत्थर लगे हैं। पत्थर के एक टुकड़े का भार ५० टन है तथा इन पत्थरों को ५० मील दूर स्थित खानों से लाया गया। आज से ५००० वर्ष पूर्व ये सब कैसे संभव हुआ, आज भी आश्चर्य का विषय है।

प्रसाद : एक जीवन-दृष्टि लेखमाला के अंतर्गत गत अंक से आगे पढ़िए, लेख की अगली किश्त : ३

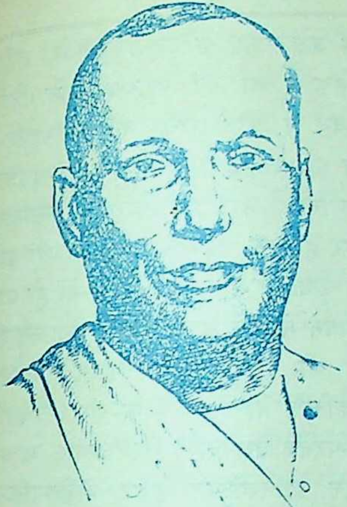

प्रसाद कैम्ब्रिज में पढ़ना चाहते थे

• रत्नशंकर प्रसाद

प्रसाद वांग्मय के मनोवैज्ञानिक विकास का रहस्य उर्वशी के कामायनी रूपग्रहण की चेष्टा में निहित है। सुतराम् अनुपूर्वी संदर्भ में परवर्ती-प्रसंग, अनिवार्य हो उठे—जो विषयांतर नहीं।

हां, तो प्रायः संवत् १९४० में इंद्रप्रस्थ निवासी श्री टीकमलाल के पुत्र श्री मोहिनीलाल गुप्त काशी आये—स्वाभाविक रहा कि वे सुंघनी साहु की गद्दी पर आते। उनका वैदग्ध्य पहचानकर मेरे पितामह ने उन्हें प्रश्रय दिया और पूज्य पिताजी की शिक्षा उनके अधीन कर दी गयी। वही मास्टर मोहिनीलाल रसमयसिद्ध थे जिन्होंने 'सिद्धिसाधन', 'सिद्धरसायन', 'सिद्धमनोरंजन' आदि ग्रंथों का प्रणयन और 'पद्मपुराण के काशी-माहात्म्य' एवं 'श्रीगोपालसूत्र' का भाषानुवाद किया है। कदाचित् और भी उनकी कृतियां हो सकती हैं, जो मुझे विदित नहीं। मेरे घर के समीप ही वे पाठशाला चलाते थे जिसमें शिक्षा पाना कठिन था। सुना जाता है कि वे हाथ-पंखे से प्रचंड प्रहार करते थे। पूज्य पिताजी को उन्होंने 'मानीटर' बना रखा था और उन पर भी केवल एक बार तब इसलिए पंखा-प्रहार हुआ, जब वे कक्षा में अनुशासन नहीं रख सके थे। पद्माकरी-परंपरा के शेष कवि ईशजी (चौ. लक्ष्मीनारायण सिंह) एवं भारतेंदुजी के भ्रातृपुत्र श्री ब्रजचंद्र पूज्य पिताजी के सतीर्थ रहे और वहीं शिक्षा पायी थी। उस पाठशाला में भाषा और व्याकरण के सामान्य ज्ञान के प्राय : साथ-साथ छंद-पिंगल की शिक्षा भी चलती थी। अपनी

कवित्व शैली पर श्री रसमयसिद्ध का यह दोहा काशी-माहात्म्य के अंत में मिलता है—

धन्य सुभग शिवशम्भु तुव धन्य सुभग तुव नाम
देत मनहि नित मोदनव पूरिसकल मन काम
पाय अनुग्रह नाथ तुव रसमयसिद्ध अजान
बातहि में अनुवाद यह पूरन कियउ महान

वैसे, उन्होंने वल्लभीय संप्रदाय में दीक्षा लिया था जिसका ब्यौरा 'गोपालसूत्र' के अनुवाद 'सिद्धिसदन' में प्राप्त है। वहां अंतिम दोहा है—

मांगत रसमयसिद्ध वर देहु मुदित चित चोर
नांचहि लखि घन रूप तुव नित्य रसिक मन मोर

श्रीरसमयसिद्ध के उस दोहा में सामान्यतः तो भक्त की सहज-सी कांक्षा श्रीभगवान् के प्रति निवेदित हुई है (किंतु भक्त की कोटि कुछ असामान्य-सी है) उसका मन नित्यरसिक है और उसकी यह रसमयता सिद्ध है, अपक्व नहीं।

लीला के अभिन्न उपादान प्रेम एवं सौंदर्य अन्योन्याश्रित हैं जो वस्तु सुंदर लगती है वही प्रिय होती है और चारुत्वमूल में प्रेय होकर वे (प्रेम-सौंदर्य) अनन्य हो जाते हैं। उक्ति है—**दुनिया में तुमसे बढ़कर भी लाखों हसीन हैं, मगर मुझको तो तुम पसंद हो, अपनी नजर को क्या करूं।** लीला के स्वरूप अनंत है, भुवन अनंत है और आस्वाद भी अनंत है, इसीलिए व्यापक अथवा पूर्ण प्रेम एवं सौंदर्य चिरपुरातन होकर भी नित्य नवीन रहता है। वास्तविक लीला की स्फुरण-भूमि अक्षर-ब्रह्म के दहराकाश में, प्राति-भासिक लीला की स्फुरण भूमि नित्य वृंदावन में और लीला की व्यावहारिक भूमि ब्रज में बतायी जाती है जो कदाचित् काल विशेष और देश विशेष में निर्मित होकर ही ब्रज पदवाच्य हुई अन्यथा ब्रज और वृन्दावन में अंतर नहीं—**हौं ही ब्रज वृन्दावन मोहिमे बसत सदा।** विज्ञानवादी बौद्ध भी इस स्फुरण को परिनिष्पन्न परिकल्पित और परतंत्र के रूप में देखते हैं—परतंत्र देश-कालाधीन अथवा व्यावहारिक, परिकल्पित हुआ प्रातिभासिक और परिनिष्पन्न हुआ वास्तविक। यहां वास्तविक से तात्पर्य मूल-वस्तुता अथवा परअर्थ के रूप में है। सुतराम् व्यावहारिक अन्य हैं जो देश-कालानुसारी व्यवहार-परक है।

> हम अन्य न और कुटुंबी
> हम केवल एक हमीं हैं
> --प्रेम:

लीला की अनुभूति एक स्पष्ट-स्मृति है: कारण, अस्पष्ट-अनुभूति स्मृति पद-वाच्य है। स्पष्ट-स्मृति किंवा अनुभूति प्रकाशरूप है जिसकी अभिव्यक्ति ही उसकी ख्याति किंवा विमर्श है। यह अनुभूति द्विविध है— संकल्पात्मिका और विकल्पात्मिका। संकल्पात्मिका अनुभूति आत्मा के मनन-शक्ति की असाधारण अवस्था में उदित हो हार्द-क्षेत्र में काव्य-रूपेण अभिव्यक्त होती है—

नखत कीं आशा किरण समान हृदय के
कोमल कवि ही कांत

कल्पना की लघु लहरी दिव्य कर रही
मानस हलचल शांत

और अपोहनात्मक ज्ञान की स्फुरता में आत्मा की विकल्पात्मिका अनुभूति शास्त्र-विज्ञान पदवाच्य होती है, यह ऐड़ (इड़ा का) व्यवहार है—

वक्षस्थल पर एकत्र धरे संसृति के सब
विज्ञान ज्ञान

—इड़ा सर्ग

आत्मा में मनन की असाधारण अवस्था का एक संकेत है—

अनुपममनुभूतिस्वात्म संवेद्यमाद्यं, वितत
सकल विद्यालापमन्योन्यमुख्यं

यहां अनुपम-अनुभूति द्वारा वह संकल्पात्मिका अनुभूति संकेतित है जिसकी अभिव्यक्ति छांदसी (काव्यमयी) ही संभव है: और, विकल्पमयी अनुभूति वह है जो सकल विद्यालाप में वितत है, व्याप्त है: ये स्वात्म-संवेद्य और आद्य है: हंस-युगल संकल्प और विकल्प है—

द्वासुपर्णा सयुजासखाया समानं वृक्षं
परिषस्वजाते तयोरन्यपिप्पलं स्वादयत्य-
न्यश्नन्योभिचाकशीति

द्वारा भी यह तथ्य वेदितव्य है। इन हंसों में आवेग है, वे मुक्तदहराकाश में स्वेच्छाचारी है।

नितराग्, ऐसे रसमयसिद्ध आचार्य के प्रशिक्षण में कदाचित् नयी शब्दात्मिक सृष्टि के अर्थ एक 'मधुर प्राकृतिक भूख समान' वह 'अनादि-वासना नव हो जगी' जिसमें अतींद्रियभोग अपनी संपूर्ण परितृप्ति चाहता और पाता है। रसमयी-दृष्टि में उस 'घनरूप' से वियोग-पीड़ा की गाढ़-अनुभूति के प्रत्यंत पर फैली उनींदी स्मृति और उस 'घनरूप' की स्वानुभूतिमयी प्रत्यभिज्ञा के बीच केवल एक पद व्यवधान है: और, यह उनींदी स्मृति के उपरत होने पर ही निस्तंद्र होती है। जिस विस्मृति में सदा-वियोग की कुछ भी अनुभूति नहीं, अनुमान भी नहीं। अननुमेय को अनुमेय मान अनुमाता अलस रहता है। उसे निद्रा में जागरण और अंधकार में प्रकाश का भ्रम है। फिर हृदय के तार पर तनिक-सी ठोकर पा स्मृति-सी छायी 'घनीभूत पीड़ा' की बदली का 'वातावरण के' दवाव में बरस पड़ना जिसमें, 'आंसू' नद उमड़ पड़ा हो' ——क्या असंभव है। बंसी में एक हलकी-सी फूंक रागमयी अथवा विराग भरी तान-सी फूंक रागमयी अथवा विराग भरी तान उठा देती है।

हां, अतींद्रिय - भोग से अनभिज्ञता, वैसी दशा के व्यवहार में लिंगभेद करना चाहती है और यह नहीं देखती कि **'नंदन तमाल के तल से'** उस **'स्पर्शहीन अनुभव'** का विरह जिसके **'पावन तन की शोभा आलोक मधुर है**: वेदितव्य है। एक अनुरोध भी है—

जग छा दो श्याम लता सी तन्द्रा विह्वल
पल्लव से

यह बात व्यष्टिपरक नहीं। आगे भी —**'जगती को मिले उजाला', 'बरसो**

प्रभात हिमकन-सा आंसू इस विश्व सदन में’ द्वारा समष्टिगत व्यापार इंगित है। वैदिक सोमलता जब अप्राप्य हो गयी तब उसकी विह्वलता के रसिक आर्यों ने अनुकल्प रूप में श्यामलता को ग्रहण किया (कात्यायन श्रौतसूत्र)। नख-शिखांत रूप प्रकार और विप्रलंभ-शृंगार का रूपक कवि के समीप प्रेषणीयता का रथ और सहृदय-संवेदन का वह आधार है जिनका वह अभ्यासी है। फिर उस रसमयसिद्ध परंपरा को कहना ही पड़ा——

ओ मेरे प्रेम बता दे तू स्त्री है या कि पुरुष है
दोनों ही पूछ रहे हैं कोमल है या कि पुरुष है
उनको कैसे समझा दूं तेरे रहस्य की बातें
जो तुमकोसमझ चुके हैं अपने विलास की घातें

उनकी पाठशाला में ही पूज्य पिताजी का यह आदि-छंद प्रस्तुत हुआ; जिसमें शिवानुग्रह का परमोत्कर्ष और उसकी सहज-यांचा विलसित है——

हारे सुरेस रमेस धनेस गनेस हुसेस न पावत पारे
पारे हैं कोटिक पातकी पुंज ‘कलाधर’ ताहि छिनो लिखि तारे
तारेन की गिनती सम नांहि सु जेते तरे प्रभु पापी बिचारे
चारे चलें न बिरंचिहू के जो दयालु ह्वै संकर नेकु निहारे।

आचार्य की ओर से इस पर साशीष साधुवाद मिला, तब उनका वयस् बारह वर्ष था (यह कथन उनके सतीर्थ ईशजी का था) किंतु, आदरणीय रायकृष्णदासजी

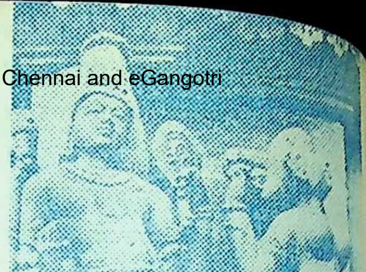

ओ मेरे प्रेम बता दे तू...

बताते हैं कि यह छंद सात और नौ वर्ष की अवस्था के बीच पूज्य पिताजी ने लिखा है। अधिक संभावना इसी की है क्योंकि उन्हें ग्यारहवें वर्ष पितृ-वियोग हुआ, ततः पाठशाला और क्वींस कालिजियट स्कूल का नियमित क्रम टूट गया था।

इस पाठशाला को वे अपना प्रारंभिक सरस्वती-पीठ कहते थे। इसके अतिरिक्त उन्होंने बाबा रामगोपाल की पाठशाला में भी शिक्षा पायी थी।

उन्हें कुछ विशिष्ट अध्यापकों द्वारा भी रघुवंश, शाकुंतल, नैषध आदि की शिक्षा उसी काल में मिली। नैषध के विद्वान आचार्य गंगाधर शास्त्री (बलिया निवासी) शारदीय नवरात्र में विंध्यपीठ से लौटते हुए एक दो दिन मेरे यहां अवश्य रुकते और अपने छात्र की सतत विकसित होती जाती प्रतिभा से प्रमुदित होते।

जिस वर्ष पूज्य पिताजी व्याधिग्रस्त हो शय्या पर थे उस बार भी यथाभ्यास वे आगे और रोग दशा जान दुःखी हो लौटने लगे, तब मैंने पूज्य पिताजी को बताया। यद्यपि, चिकित्सकों ने बात करने पर रोक लगा रखी थी, किंतु उन्होंने बुलाने का इंगित किया—अतिवृद्ध शास्त्रीजी को दमे का रोग था अतः उनके समीप तक जाने में सांस फूलने लगी। अपने कृशकाय छात्र को देख उनके नेत्र सजल हो गये। पूज्य पिताजी ने कहा, सीढ़ी चढ़ने में आपको बड़ा कष्ट हुआ—फिर यथापूर्व दक्षिणा देकर नमस्कार किया।

इस प्रकार चल रहे गंभीर शिक्षा-क्रम के पीछे मेरे पितामह की वह एकांत अभिलाषा थी कि विशद् परिवार और समृद्ध व्यवसाय को देखने और उसमें लगने के लिए तो अनेक व्यक्ति हैं अतएव इन्हें (पूज्य पिताजी को) केवल विद्या-मार्ग पर ही चलना है। पूज्य पिताजी कहते थे कि यदि वे उन्हें ११ वर्ष का छोड़कर चले न गये होते तो एंट्रेंस के बाद ही कैंब्रिज भेजने को उद्यत थे, लेकिन उनके पिता श्री देवीप्रसादजी सुंघनी साहु (मेरे पितामह) का तिरोधान पूज्य पिताजी के ११ वर्ष की वय में हो गया और अपने कनिष्ठ आत्मज के लिए कल्पित वह महत्त्वाकांक्षिणी योजना उनके साथ ही तिरोहित हो गयी। यद्यपि, अग्रज श्रीशम्भुरत्न अपने छोटे भाई को प्रायः उसी क्रम में ले जाना चाहते थे, किंतु विवशताएं थीं, स्कूल से हटाकर तीन पुश्त पुरानी नारियल बाजार की दुकान की पैतृक गद्दी पर बारह वर्ष के छोटे भाई को बैठाना अनिवार्य हो उठा, कदाचित् उस 'तुमुल कोलाहल कलह' में वहीं से 'हृदय की बात' सुनने के लिए। अभी तो केवल दुकान की गद्दी का ही भार था: जहां चुपके-चुपके मनन-अध्ययन कुछ कुछ औरों की आंख बचाते चलता था। किंतु अब कारखाने में उत्पादन और माल का वितरण भी करणीय हो उठा, साथ ही परिवार के विभाजन में जिम्मे आयी लंबी ऋण-राशि के भुगतान की व्यवस्था एक सर्वोपरि प्रश्न बनी क्योंकि १८ वें वर्ष (सं. १९६४) अग्रज की छाया भी हट गयी। संवत् १९६५ के फाल्गुन में स्वयमेव मातृकापूजनपूर्वक विवाह भी करना पड़ा (प्रथम) इन्हीं कारणों से संवत् १९६३ में लिखित उर्वशी-चम्पू 'श्री परमेश्वर कृपा से' संवत् १९६६ की विजया दशमी को प्रकाशित हो पाया। **(क्रमशः)**

पश्चिमी देशों में नये जलपोत के जलावतरण पर शैंपेन (एक किस्म की शराब) चढ़ाने का आजकल रिवाज है। पर एक समय ऐसा था, जब वाइकिंग (स्वीडन के पुराने निवासी) अपने नये जलपोतों के जलावतरण पर मानव-रक्त की भेंट चढ़ाया करते थे ताकि मृतात्माएं सागर की लहरों पर विपत्तियों से उनकी रक्षा करते रहें।

हरियाली तीज—वृंदावन का सबसे बड़ा त्योहार। विहारीजी के तीज के हिंडोले के दर्शनों की इच्छा से दूर-दूर से आये लोगों से वृंदावन अटा पड़ा है। इस भीड़ में मैं भी हूं।

विहारीजी के हिंडोले का दृश्य अनुपम है। हिंडोला तो विशाल और आकर्षक है ही, वह भक्त को भरसक अपनी ओर खींचता है, पर इन दर्शनों की विशेषता यह है कि बांकी अदावाले त्रिभंगीलाल श्री बांकेबिहारी गर्भगृह छोड़कर प्रांगण के चबूतरे पर आ जाते हैं और उनकी आंखों से आंखें लड़ाकर भक्तजन अपूर्व रस का सेवन करते हैं।

पानी बरस रहा है। यात्रियों की भीड़ ठसाठस खड़ी है। इन दिनों विहारीजी के दर्शन खुले होते हैं। रोज की तरह मिनट-मिनट पर परदा इधर से उधर नहीं होता। तभी तो लोग उस छोटे से मंदिर में, जिसमें शिल्प-सौंदर्य के नाम कुछ भी नहीं है, केवल विहारीजी की मूर्ति को देखते हैं।

विहारीजी के ऐसे दो दर्शन होते हैं। —अक्षय तीज को चरण के और हरियाली तीज को हिंडोले के। वैसे हरेक त्योहार को उनकी अपनी अलग झांकी बनती है।

स्वामी हरिदास जी के आराध्य बांकेबिहारीजी

निधिवन - संगीत साधनास्थली

विहारीजी का प्राकट्य निधिवन में हुआ था जो स्वामी हरिदासजी की संगीत-साधनास्थली थी। किंवदंती है कि यहीं आकर सम्राट अकबर ने तानसेन का तानपूरा ढोकर स्वामी हरिदास के दर्शन किये थे और उनके संगीत का श्रवण किया था। कुछ लोगों का कहना

अकबर ने बुरका पहनकर संगीत सुना था

• जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी

है कि स्वामीजी का संगीत सुनने के लिए सम्राट अकबर ने बुरका तक पहन लिया था, पर स्वामीजी सम्राट को पहचान गये थे और उन्होंने अपने संगीत के ज्ञान का ही नहीं, आध्यात्मिक गौरव का भी अकबर को परिचय कराया था।

बिहारीजी की मूर्ति को स्वामी हरिदासजी ने अपनी संगीत की साधना से प्राप्त किया था। कहते हैं कि पहले उन्होंने युगल मूर्ति देखी तो उन्होंने कहा, 'भगवान, मैं आपकी सेवा तो कर लूंगा, पर प्रियाजी के शृंगार का साधन मेरे पास कहां ?' इसके बाद वह मूर्ति एक हो गयी। बिहारीजी के लावण्य का एक कारण यही बताया जाता है कि इस प्रकार मूर्ति में श्रीकृष्ण और राधा दोनों का सम्मिलित सौंदर्य है।

यद्यपि प्राचीन कवियों और भक्तों की भांति स्वामी हरिदास के संबंध में भी भांति-भांति के मत-मतांतर हैं कि वे कौन थे, कहां के थे, परंतु प्रसिद्ध बांकेबिहारीजी के मंदिर के गोस्वामियों के रूप में उनके वंशधर अब भी काफी संख्या में विद्यमान हैं, और वे श्री बांकेबिहारी की सेवा-पूजा में भाग लेते हैं। उन्हीं में से एक ब्रज-साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान डॉ. शरण-बिहारी गोस्वामी के अनुसार स्वामी हरिदासजी के पूर्वज मुलतान के रहनेवाले थे और वहां से ही आकर अलीगढ़ जिले में कोइल नामक कस्बे के निकट एक गांव में बस गये थे। वे सारस्वत ब्राह्मण थे, जो इस बात को सिद्ध करता है कि पंजाब से आये होंगे।

एक समय था, जब मुलतान में मार्तंड का भारत-प्रसिद्ध मंदिर था और वह संस्कृति और कला का प्रसिद्ध केंद्र था। हिंदी के प्रथम मुसलमान कवि अब्दुर्रहमान ने हिंदी कविता में अद्दहमाण के नाम से हस्ताक्षर किये। उस समय के प्रसिद्ध तीर्थ मूलस्थान का इस प्रकार वर्णन किया गया है कि उस नगर में कहीं विद्वान वेदों का पाठ करते हैं, कहीं रसिकों का अभिनय होता है, कहीं नल-कथा होती है, तो कहीं सुदयवच्छ-कथा। अन्यत्र नाना प्रकार से महाभारत का पाठ होता है।

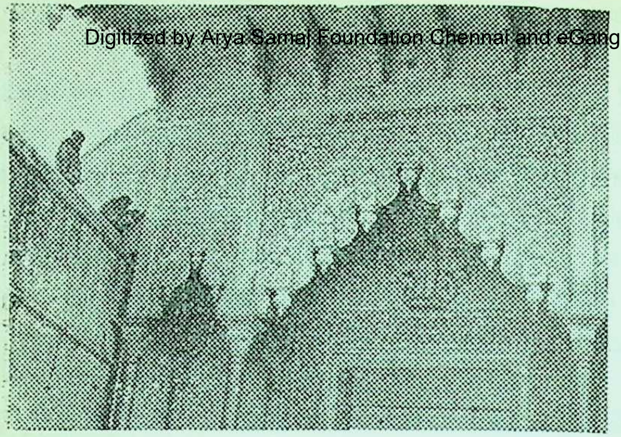

श्रीकृष्ण की लीला-भूमि वृंदावन में निधिवन के द्वार का एक कलात्मक दृश्य

कहीं वीतराग ब्राह्मण रामकथा का उपदेश देते हैं। कहीं वीणावादन है तो कहीं वंशी, ढोल, मृदंग आदि का वादन हो रहा है और कहीं भावभंगिमायुक्त नर्तकियां नृत्य कर रही हैं। नाना प्रकार के नाट्यों का अभिनय हो रहा है। जहां वह जाता है, आश्चर्य से जड़वत हो जाता है।

परंपरा और परिवार

ये परंपराएं थीं, यह सांस्कृतिक वातावरण था, जिसको विरासतस्वरूप लेकर स्वामी हरिदास के पूर्वज मूलस्थान से आकर ब्रजभूमि में उस समय के कोइल नामक प्रसिद्ध नगर के पास आकर बसे थे। उन्हें काफी में जमीन मिली थी, जिसके लिए वे हरिदासपुर नाम के वर्तमान ग्राम में रहे और इसी परिवार में संवत १५३५ में इनका जन्म हुआ। जन्म-संवत के संबंध में कई धारणाएं हैं। कुछ लोग मानते हैं, इनका जन्म-संवत १४४१ में हुआ, कुछ मानते हैं कि संवत १५६९ में हुआ था, पर कुछ भी हो यह तय है कि स्वामी हरि-दासजी अकबर के राज्यकाल में जीवि थे और उन्होंने न केवल तानसेन को, बलि बैजू बावरे को भी संगीत-शिक्षा दी थी। कहा जाता है कि स्वामीजी के संगीत को सुनने के लिए अड़ोस-पड़ोस से हिर इकट्ठे हो जाते थे।

हरिदासजी के दो छोटे भाई थे—श्री जगन्नाथजी और श्री गोविंदजी। वृंदावन के निधिवन में (कुल लोग इ निधुवन भी बोलते हैं) हरिदासजी का जो स्मारक है, उसकी बगल में जगन्नाथजी की मूर्ति बनी हुई है, क्योंकि जगन्नाथजी ने ही बिहारीजी की सेवा-पूजा का दायित्व संभाला था और आज भी उनकी संतानें ही परंपरागत रूप से यह कार्य करती चली आ रही हैं।

कहा जाता है कि हरिदासजी का १५ वर्ष की आयु में विवाह हुआ था, परंतु उनकी पत्नी, जब वे २० वर्ष के ही थे तभी

परलोक सिधार गयीं। पांच वर्ष पश्चात् २५ वर्ष की आयु में राधाष्टमी के दिन वे संन्यासी होकर वृंदावन चले गये, जहां ६५ वर्ष की अवस्था में वे गोलोकवासी हुए।

वृंदावन का वह पुनर्जागरण का युग था और स्वामी हरिदासजी ने उसमें अपना अभिन्न योगदान दिया। कुछ ही दिनों पहले श्री चैतन्य महाप्रभु के शिष्य रूप और सनातन गोस्वामी ने वृंदावन की पुनः पहचान की थी और उसके धार्मिक महत्त्व को निरूपित किया था। उनके बाद श्री गोपाल भट्ट ने रेवतीरमण के मंदिर की स्थापना की थी। विहारीजी के मंदिर से थोड़ी ही दूर पर श्री राधावल्लभजी का मंदिर है, जिसकी स्थापना स्वामी हितहरिवंशजी ने की थी। हितहरिवंशजी ने राधा को आराध्य मानकर राधावल्लभ सम्प्रदाय की स्थापना की। उन्होंने अनेक सिद्धस्थलों का भी पता लगाया और संगीत तथा साहित्य के क्षेत्र में बड़ा योगदान दिया। उसी समय गोस्वामी वल्लभाचार्यजी भी ब्रज आये हुए थे और उन्होंने गोवर्धन, वृंदावन और गोकुल को अपना पूर्व-वैभव दिलाने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी। उन्होंने 'अष्टछाप' की स्थापना की, जिसमें महाकवि सूरदास-जैसे कवियों ने अपना स्थान बनाया।

भारत का सांस्कृतिक हृदय

ब्रज उस समय भारत का सांस्कृतिक हृदय हो रहा था। इसी अवधि में स्वामी हरिदासजी वृंदावन में निवास कर रहे थे। ब्रज में भक्ति, दर्शन, संगीत और साहित्य के उद्‌भट विद्वानों, मनीषियों, कवियों और कलाकारों का जमघट था। उन सबके बीच उन्होंने अपना अलौकिक स्थान कायम किया। आज भी भारतीय संगीत, भारतीय भक्ति-परंपरा और भारतीय लोक-संस्कृति में स्वामी हरिदासजी ने जो स्थान बना लिया है, वह अद्वितीय है। यही कारण है कि आज उनके जन्म की पांचवीं शती मनाने में सभी कलाकारों,

स्वामी हरिदासजी की उपासना-स्थली निधिवन में श्री बांकेबिहारी जी का प्राकट्य-स्थल

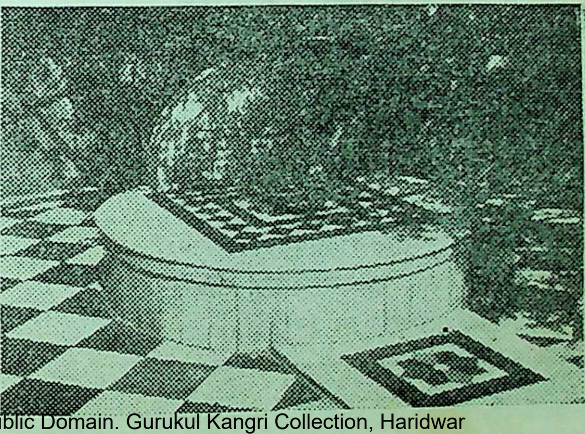

सामने के पृष्ठ पर : संगीत-सा
में लीन स्वामी हरिदासजी

संगीतज्ञों को और सबसे अधिक बांके-बिहारी के भक्तों को प्रसन्नता होती है। सन १५७३ में अकबर वृंदावन गया था। उसके आकर्षण का केंद्र थे स्वामी हरिदास।

जब अकबर ने स्वामी हरिदासजी के संगीत से मुग्ध होकर उनसे कहा, 'आप कुछ मांगिए', तब स्वामी हरिदासजी ने कुछ नहीं मांगा, पर आग्रह किये जाने पर उन्होंने कहा कि यमुना पर उनके घाट का एक कोना टूट गया है, उस कोने की मरम्मत कराकर उसे पूरा करा दें। जब अकबर को उस घाट के पास ले जाया गया तब उसे दिखायी दिया कि घाट तो पूरा का पूरा रत्नों का बना हु
है और उसका जितना कोना टूट गया
उतने रत्नों को जुटाना उस-जैसे सम्राट
लिए भी सरल नहीं है। अकबर ने च
त्कार को स्वीकार कर लिया।

आचार्य छबीलेलाल गोस्वामी
के अनुसार रासलीला का प्रारंभ स्वा
हरिदासजी ने महाप्रभु वल्लभाचार्य
से मंत्रणा करके मथुरा में विश्राम
पर किया था। इसमें उन्होंने रा
जी का शृंगार किया और वल्लभाचार्य
ने श्यामसुंदरजी का। इस रासलीला
बाद स्वामी हरिदासजी ने मुकुट निंबा
संप्रदाय के एक प्रमुख से कहा, 'तुम ललि
सखी के ग्राम करहैला जाकर व
पर रासलीला-मंडली का संगठन करो
राग सर्वस्व के अनुसार भी स्वामी हरि
दासजी ने निंबार्क संप्रदाय के घमंडदे
जी से कहा, 'तुम ब्रजवासियों को अप
शिष्य बनाओ और इनके द्वारा रासली
चलाओ।' घमंडदेवजी ने करहैला जा
उदयकरण व खेमकरण नामक दो बाल
से मिलकर रास की प्रथा प्रचलित की
लगता यह है कि रास की प्रथा उस स
करहैला में प्रचलित होगी। स्वामी हरि
दासजी ने उसका संस्कार कराया, उ
सगीत प्रदान किया, जिसके परिणामस्व
रास आज सारे देश में प्रचलित है।

—५५, काकानगर, नयी दिल्ली

ग्वालियर निवासी संगीत-पारखी हजरत मोहम्मद गौस एवं स्वामी हरिदास में बड़ी घनिष्टता थी। एक बार स्वामी हरिदास वृंदावन से चित्रकूट जाते समय ग्वालियर न रुक सके। इस पर हजरत मोहम्मद गौस बड़े व्यथित हुए। उन्होंने स्वामी हरिदासजी के एक शिष्य के हाथों उन्हें खबर भिजवायी, 'क्या स्वामीजी मेरी कब्र से भेंट करने आएंगे? मैं तो एक कसम के कारण ग्वालियर से बाहर न जाने के लिए मजबूर हूं, पर क्या स्वामीजी ने भी वृंदावन से बाहर न जाने की कसम खा रखी है।'

और एक दिन जब स्वामी हरिदास हजरत गौस से मिलने आये तो उन्होंने अपना एक शिष्य तनसुखराम उन्हें सौंपा, जो आगे चलकर तानसेन बना।

संगीत-सा
हरिदासजी

का बना हु
ा टूट गया है
जैसे सम्राट
कबर ने च
ा।
गोस्वामी
प्रारंभ स्वा
ल्लभाचार्य
विश्रामघा
न्होंने रा
ल्लभाचार्य
रासलीला
मुकुट निबा
'तुम ललि
जाकर
ठन करो
स्वामी हरि
के घमंडदे
ों को अप
ा रासली
रहैला जाक
दो बाल
चलित की
था उस सम
स्वागी हरि
कराया, उ
रणामस्व
त है।
नयी दिल्ली

कादम्बिनी

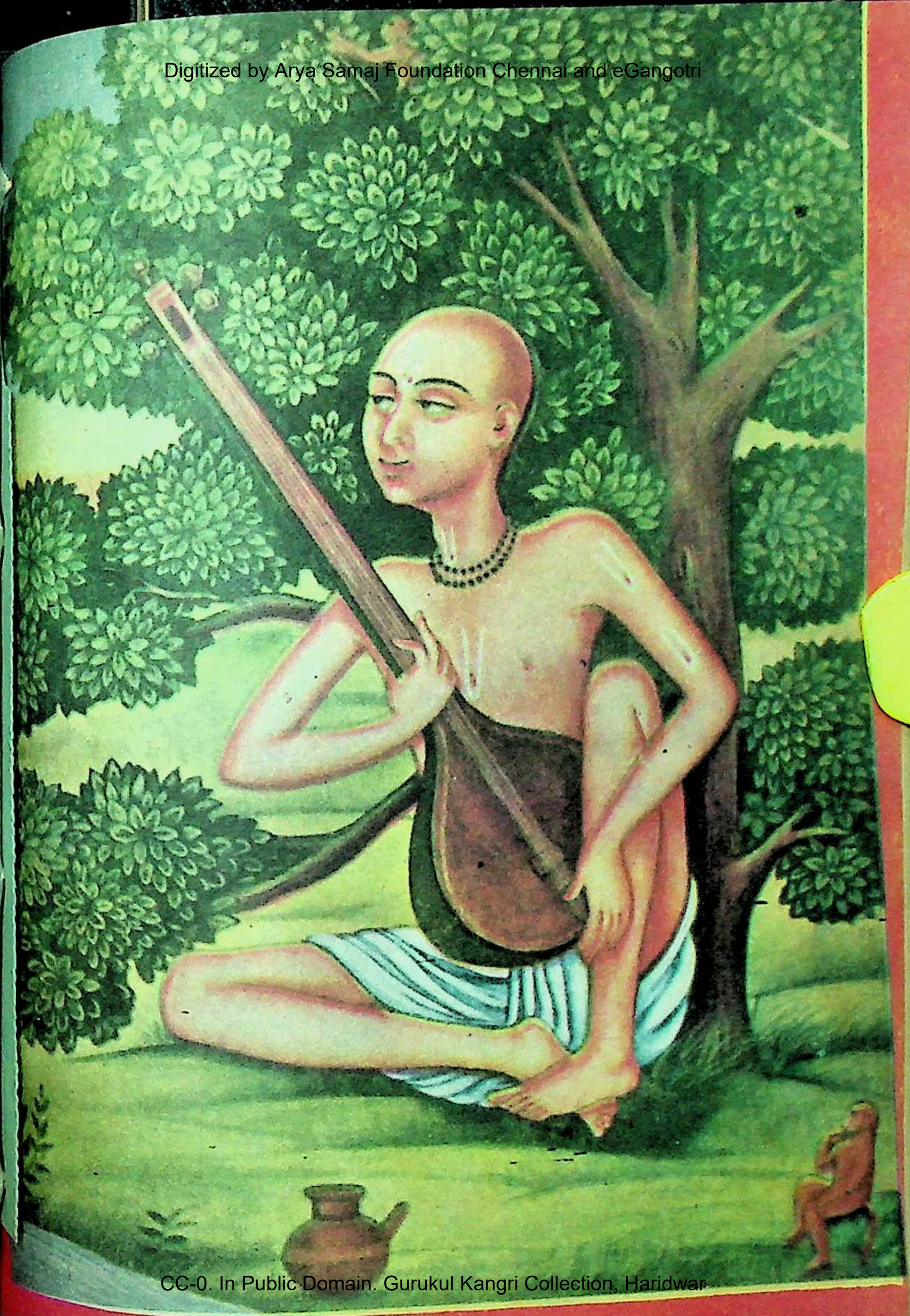

शहरात गांव का यथार्थ

दक्खिन की महुवारी में जाकर सांस लेता हूं, तो यही लगता है जैसे गांव का हर अवयव थोड़ा-बहुत अपना अर्थ खोता जा रहा है। तब तो केवल पगडंडियां सड़कों से जुड़ी थीं, अब छोटे-पतले रास्ते और मेड़ें भी सड़कों की तरफ रुख करने लगी हैं। भीतर कहीं बुरा-सा लगता है—क्या ऐसा होना आवश्यक था ?

इस बार दादा ने लिखा था, "बेटा ! इस बार किरमिच का जूता लेते आना।" यानी कि चमरौधा अब दादा के पैरों को काटने लगा ! और फिर गांव का गाजी चमार ही अब कहां चमरौधा बनाने को खाली बैठा है। बचपन के गांव में डांगर का चमड़ा उतारने गाजी आता था और चमड़ा उतारने के बाद मोल-तोल करते समय उसके चेहरे का उतार-चढ़ाव देखना एक अपना ही सुख देता था। अब तो गाजी के बेटे मशीन पर बूट बनाने लगे हैं। शायद दादा भी इसी लिए चमरौधा...

ा : मेजर एस. एन. सरदाना

• ऋषिवंश

ठीक है, यह तो आदमी की बात है, लेकिन और सब कुछ क्या होता जा रहा है? बचपन में भी दादा कहते थे कि जमाना बदलता जा रहा है। अब गांव गांव नहीं रहे, फिर भी गांव की हवाएं तो अपनी ही लगती हैं। दिन-दिन भर झरबेरियां बीनकर जब दक्खिन की महुवारी में उसको बांटा जाता था, तब तो वहां की हवा इतनी तटस्थ नहीं लगती थी। बिना चेष्टा के ही हवा में घुली मदिरता फेफड़ों तक उतर जाती थी। अब कहां क्या बदल गया है कि चाहकर भी वे क्षण फिर नहीं प्राप्त किये जा सकते? वही बाग है, वही महुए के पेड़ हैं, वही हम हैं, पर शायद हवा बदल गयी है। कितनी 'शहरा' गयी है गांव की हवा।

शाम को घर लौटता हूं तो पता लगता है दूध नहीं है, चाय नहीं बन सकती। यह नहीं कि दूध था और खत्म हो गया, दूध था ही नहीं। 'गांव में दूध अब कहां मिलता है, कौन गोरू-जानवर रख, दुनिया भर की जहमत पाले। इससे अच्छा दूध का डब्बा न खरीद लाये शहर जाकर।' पड़ाइन आजी कितनी सहजता से यह सब कह जाती हैं! पर क्या उन्हें याद नहीं आता होगा जब गांव भर के संड-मुसंड उन्हीं के यहां कमोरी की कमोरी छाछ चढ़ाते पड़े रहते थे? सबको मट्ठा-छाछ और दूध-दही पिला-खिलाकर पड़ाइन आजी जो आत्म-सुख पाती थीं क्या वह पाउडर के दूध से बनी चाय पिलाकर उसका एकाध अंश भी पा सकती हैं? सच्ची बात तो है, कौन गाय, भैंस पाले, सानी-पानी करे, गोबर, खाद उठाये? 'जो गाय, भैंस पाले भी हैं वे अपना खा-पीकर बचा दूध शहर की दुकानों पर दे आते हैं।' पैसा भी तो बड़ी चीज है। पहले भी पैसा पैसा ही था, पर गांवों में अब पैसा जिस रूप में आया है वह केवल शहर के कारण। तब बिना पैसे के भी करीब-करीब सब कुछ सभी पा लेते थे। पर अब तो . . .

पंडित भी बंबई चले गये

दादा ने कहा था, "बड़े दिन बाद घर आये हो, सत्यनारायण की कथा सुन लो।" पर क्या अब वह सब कुछ इतना आसान रह गया है?

कहां गये वे दिन

गांव के [illegible] गणेश पंडित अब गांववालों को कथा सुनाने थोड़े ही आयेंगे। और फिर क्यों आयें ? गांव में सवा रुपये में पंडिताई करके आज के जमाने में किसी का परिवार पलता है ? ठीक ही तो किया गणेश पंडित ने जो बंबई के एक बड़े मंदिर में जाकर पंडिताई करने लगे। कम-से-कम बड़े-बड़े सेठ-साहूकार और मारवाड़ी चढ़ावे के रूप में इतना तो दे ही जाते हैं कि गणेश पंडित का परिवार पलता रहे। दादा बताने लगे कि अब तो गणेश पंडित का पेट बढ़ता ही जा रहा है और कभी गांव आने पर जब खुदा-न-ख्वास्ता किसी के घर वे कथा सुनाने जाते भी हैं मुरव्वतन तो फर्स्ट-क्लास कोट-वोट पहनकर और . . . ! फिर अब कौन हर पूर्णमासी को कथा ही सुनने बैठा है ? एक पड़ाइन ही थीं जो हर पूर्णमासी को निर्जला रहकर कथा सुनती थीं ! अब उन्हीं ने सब कुछ छोड़ दिया तब और कौन नया पैदा होनेवाला इतना सब कुछ मानेगा ! हां, गांव में तो ढूंढ़ने से पंडित मिलता नहीं है, इससे अच्छा है शहर में जाकर कथा सुन लेंगे।

कितना कुछ कहें, जो भी गंवई विशेषताएं थीं, सभी कुछ तो गांव की नहीं रहीं। कम-से-कम शहर में हर कोई जैसे-तैसे खरीदकर आम तो खा लेता है। गांव के पेड़ों को जाने कौन-सी हवा लग गयी है कि किसी साल बौर ही नहीं आता और जब आता भी है तो लासा पड़ जाता है या फिर पेड़ की एकाध शाखा पर फल आ जाते हैं, बस। इस बार दादा ने भी ईख नहीं लगायी थी। कहते हैं, "ईख लगाने में कोई परता नहीं पड़ता। एक तो पूरा साल खेत फंसाये रखती है, उस पर जेठ की चटकती दुपहरिया में सिंचाई का जंजाल लगा रहता है। इससे अच्छा यही है कि झोला उठाया चले गये बाजार और खरीद लाये गुड़-चीनी।"

याद आता है, जब गांव के मदरसे में पढ़ता था तब एकादशी को 'हड़ाहड़ैया' खेलने की तैयारियां महीनों पहले से करने लगता था। गन्ने के फूल, सरपत के फूल इकट्ठा करके उन्हें सुखाने के लिए छानकर एक कोने पर डालना और उसकी चौकीदारी करना, फिर एकादशी को सनई, गन्ने और सरपत के भुवर (फूल) का बना पुतला लेकर उसमें आग लगाना और हाथ में उठाये दूर गन्ने के खेत तक दौड़ के जाना और अपने-अपने गन्ने के खेतों की रखवाली करना। एकादशी से गन्ने चूसने और पेरने का मुहूर्त शुरू होता था। चलो, अब ठीक है ! गन्ना ही नहीं हैं तो रात भर रखवाली करने की क्या बात है।

अब वह फागुन भी नहीं

उस समय शिवान के वातास में जो एक मृदु गुनगुनाहट-सी रहती थी उसे इस जहरीली शहर की हवा ने सोख लिया है। वह मौज, वह मस्तियां, सभी कुछ तो स्वप्न हो गया है ! गांव आकर सबसे

पहले गांव के लड़कों से यही पूछा था कि इस बार किस गांव की होली सबसे देर तक जली थी। वड़ा दुःख हुआ था कि उन्हें अव होली-जैसे विषयों से कोई लगाव ही नहीं है। तव हमारे गांव की होली तीन दिन तक लगातार जलती रहती थी, इस बार न रेड़ गड़ा, न लकड़ी जुटी। एकाध सूखी पत्तियां जलाकर गांववालों ने होली मना ली। दादा कहते हैं, "पिछली की पिछली होली पर लड़कों ने एक हरा वबूल का पेड़ काट लिया था सो लाठी चल गयी थी, अव कौन अपना सिर फुड़वाने जाए!" याद आता है हमारा गुट भी तो कितने हरे पेड़ लाकर होली में स्वाहा कर देता था, कभी किसी ने कुछ नहीं कहा था। होली माने हो ली। एकबार जो लकड़ी होली में पड़ गयी उसे फिर निकालकर घर ले जाने से वड़ा पाप और क्या होता रहा होगा उस समय? पर अव तो सव कुछ चलता है। दादा वताते हैं कि फौजदारी तो हुई सो हुई, होली की सारी लकड़ियां वे लोग अपने-अपने घर उठा ले गये।

सोचता हूं, स्थितियां तो तवसे अच्छी ही हुई हैं, फिर क्यों संवंधों में इतनी कठोरता आती जा रही है? तव कोई शहर से छुट्टी आता था तो पूरा गांव उसे देखने आता था, अव किसी को क्या पड़ी है जो . . . पहले भी गांवों में चालाकी और मक्कारी थी, पर ऐसे तो नहीं। संवंधों का कुछ तो ध्यान रखा जाता था।

वचन-वीथी

प्रकृति परमात्मा का सजीव और दृश्यमान परिधान है।

—गेटे

आवश्यकता कभी अच्छा सौदा नहीं होने देती।

—फ्रैंकलिन

आत्मानुराग इतनी बुरी बात नहीं है जितनी कि आत्म-अवहेलना।

—शेक्सपियर

आज के युग में हम विचारों के लिए संघर्ष कर रहे हैं और समाचार-पत्र हमारे किले हैं।

—हेने

जो शासन करना नहीं जानते उन्हें आज्ञापालन करना चाहिए।

—शेक्सपियर

यदि चिड़ियां एकता कर लें तो सिंह की खाल खींच सकती हैं।

—शेख सादी

चिरस्थायी एकता वहीं उत्पन्न हो सकती है जहां अंतःकरण एक होते हैं।

—स्वामी रामतीर्थ

जो अपने लिए उपयोगी नहीं, वह किसी के लिए उपयोगी नहीं है।

—डेनिश कहावत

इस बार गांव में दो-तीन लड़कों को छोड़कर कोई मिलता नहीं। खेती-बाड़ी भी कोई काम-धंधा है! सब चाहते हैं, वे शहर में किसी ठांव लग जाएं। शहर से कमाकर लौटने पर बगुले के पंख-सी लकदक धोती पहनकर वे महानगरों में प्राप्त सारे दुःख कितनी आसानी से भूल जाते हैं। नगरों और महानगरों में सांस लेने की कीमत वे कितनी चुकाते हैं, वही जानते हैं। शायद गांव में अच्छे थे वे, पर अपनी-अपनी मानसिकता ही तो है। कमाऊ पूत कमाऊ ही होता है। भले ही वह शहर जाकर नब्बे-सौ रुपये महीने ही की कोई भी नौकरी क्यों न करे। दादा कहते हैं, "गिरधारी आजकल चांदी काट रहा है। कमाता है इतना कि घर भर जाए।" पर गिरधारी कैसी चांदी काटता है, मैं ही जानता हूं।

बंबई का नाम बड़ा है। 'परदेसी भैया' का टीपटाप से दो-चार दिन के लिए रहना शायद सब गांववालों को भ्रम में डाल देता है कि शहर सभी को ऐसा ही कर देता है। मुझे मालूम है गिरधारी दादर की एक गंदी-सी झोपड़पट्टी में एक गंदे गटर के सामने रहता है। एक छोटे-से कमरे या झोपड़े में बारह जनों के साथ। न ठीक से पीने का पानी ना संडास ना खाना . . . । गांववाले तो बस लकदक इकलाई और शहराती आवाज ही देखते सुनते हैं।

जो लड़के या पुरुष गांव में हैं वे भी अपनापन भूलते जा रहे हैं। गिरजा पहले आल्हा, चौताल और बहरेतवील से गांव गुंजाता रहता था, पर अब उसके गीत फिल्मी होते जा रहे हैं। और तो और इस बार तिरजुगी भैया की बिटिया के ब्याह में होनेवाले 'सगुन' 'नटका' 'गीत' 'गारी'—सब के सब तो गांव से कितनी दूर होते जा रहे हैं। धान रोपनेवाली स्त्रियां अपनी 'परदेसिया' भूलती जा रही हैं। 'सारंगा-सदावृक्ष' का किस्सा, तोता-मैना का किस्सा, 'सिंहासन बत्तीसी' और 'बेताल पच्चीसी' सुनानेवाला कोई अब गांव में शायद नहीं रहेगा। अब वे 'कबीर' नहीं बोले जाते, वे हंसी-ठिठोलियां नहीं रहीं। शहर की धूर्त्तता और चालाकी मेरे गांव में अच्छी तरह बैठने लगी हैं। अब तो गांव आना भी कुछ विशेष अर्थ नहीं रखता।

हे ईश्वर! क्या होता जा रहा है आजकल मेरे गांवों को। 'शहराते गांव' की व्यथाएं क्या अब नगरों में ही छुछुआती रहेंगी? क्या गांवों का एकमात्र उज्ज्वल भविष्य यही है कि वे अपने को नगरों में समाप्त कर लें?

—उत्तरी वन राजिक महाविद्यालय,
न्यू फारेस्ट, देहरादून

एक स्त्री अपने लिए हैट चुन रही थी। सेल्समैन ने एक सुंदर-सा हैट उसके माथे पर रखते हुए कहा—"मैडम! इस हैट को पहनकर आपकी उम्र दस साल कम जंचेगी।"

पोस्टर

• राधेश्याम

उसे कभी-कभी सारी बातें अजीब-सी मालूम होती हैं। अगर तमाम बातों का कोई सूत्र खोजो तो काफी मुश्किल होती है। अगर वह आसपास के लोगों को उदाहरण के रूप में ले तो उसे हैरत होती है कि लोगों को जीने के लिए कितने बहाने ढूंढ़ने पड़ते हैं। एक रामदासजी हैं। पिछले साल लकवा मार गया है। मौत से भी गलीज जिंदगी जी रहे हैं। फिर भी कल की बेहतरी पर उन्हें पूरा भरोसा है। वे मर नहीं सकते, क्योंकि उनके पास कोई न कोई बहाना है। तमाम उम्र उन्होंने बेईमानी करके घर जोड़ने में लगा दिये। जब घर को जोड़-जोड़कर खड़ा किया, तब उनके लड़कों ने हथियाकर आपस में बांट लिये और इतने बड़े मकान के एक कोने में उनकी चारपाई डलवा दी, जैसे बड़े घरों में कुत्तों को बांधकर रखा जाता है। इसी बात का उन्हें काफी दुःख रहा है और जब से उन्हें जबर्दस्ती घूस लेने के आरोप में नौकरी से अलग किया गया है, तब से वे इस बात को शिद्दत से महसूस करते हैं। बड़ी बहू भी जब मर्जी हुई तब उनका हाल-चाल पूछ लिया करती है। पत्नी तो नौकरी छूटने के बाद ही परलोक सिधार गयी थी। तब से बस वे जीते जा रहे हैं। अपनी मौत को जैसे झुठलाने की कोशिश कर रहे हैं।

इसी प्रकार जब वह याद करने की कोशिश करता है, तब उसके जेहन में घर से लेकर बाहर तक कई लोगों की शक्लें उभर आती हैं और उन चेहरों में कहीं न कहीं अपना अंश पाता है।

वह खिड़की से आकाश देखता है। एक चकोर नीला आकाश उसकी आंखों में भर आता है, जिसमें एक अजीब-सा खालीपन है।

"इदं अन्नम् स्वाहा—इदं घृतं स्वाहा —इदं पुंगीफलम् स्वाहा—" सहसा ये स्वर इस खालीपन को भरने लगते हैं। पंडितजी के स्वाहा-स्वाहा कहने के साथ पिताजी अग्नि-कुंड में होम डालते जा रहे हैं। उनकी लाल गमछी का एक खूंट मां के आंचल से जुड़ा हुआ है। यह सात जन्म का बंधन है। इसे इतनी आसानी से तोड़ा नहीं जा सकता। यानी मां को सात जन्मों तक पिताजी को ही ब्याहना पड़ेगा! उसने सोचा था, अगर यह सच है तो अन्याय

है। मां और पिताजी एक-दूसरे से कभी नहीं जुड़े। उनके साथ सिर्फ गांठें बंधी रहीं। तो फिर यह स्वाहा किसके लिए ?

धीरे-धीरे होम का धुआं चौखटे आकाश में भर गया है, जिसके एक कोने में मां की लाश धरी है। गांठ टूट गयी है। पिताजी आजाद हो गये हैं। लोग कहते है, अगर मुखाग्नि बेटा दे, तो ज्यादा अच्छा है। अंत में उसे ही मुखाग्नि देनी पड़ती है। पिताजी की भी आंखों से आंसू झरने लगते हैं। गांठ जो थी, वह खुल गयी है। वे धीरे-धीरे अचेत होने लगते हैं।

वह देखता है उस चौखटे में जड़े आकाश से धुआं छंट गया है। एक बार फिर गहगट नीला हो गया है। हलके बादलों की एक टुकड़ी सरकती हुई उस चौखटे में प्रवेश करती है और धीरे-धीरे वह चिड़िया-जैसी लगने लगती है। कौन-सी चिड़िया हो सकती है ? मैना, सोन-चिरैया, तीतर या तोता ? अगर अभी स्मिता होती तो पहचान लेती, क्योंकि उसके डॉक्टर बाप को चिड़िया पालने का काफी शौक था। उन्होंने अपनी काफी कीमती कोठी में चिड़ियाखाना बना लिया था। उन्हें इस बात की काफी खुशी थी कि जो चिड़िया कहीं नहीं मिल सकती, उनके यहां निश्चित होती है। वे रोज निश्चित समय पर उन्हें चुगना देते, पानी पिलाते; लेकिन सारी की सारी अपने पिंजड़े के संसार में तड़फड़ाती रहतीं। वह स्मिता को इस बात को लेकर काफी चिढ़ाया करता—"स्मिता, तुम्हारे पिताजी बहुत कठोर हैं——वेचारी चिड़ियां !" इस पर वह नाराज हो जाती और उनकी तरफ से बचाव करने लगती।

"यह कठोरता नहीं है—शौक है। तुम नहीं जानते कितना खर्च होता है, इन पर।"

"खर्च तो कैदियों पर भी होता है।" वह अपना आखिरी जुमला छोड़ता। स्मिता चुप हो जाती। फिर मान-मनौवल चलता। फिर शुरू हो जाती गांठ बंधने की बातें, लेकिन स्मिता बंधी नहीं। एक परिंदे की तरह पिंजड़े से उड़ गयी। वह अपने खाली पिंजड़े को लेकर उदास घूमता रहता और उसके नाम पर उसने गुस्से में पिंजड़े को तोड़कर फेंक दिया, क्योंकि अचानक उसे एक दिन लगा कि उस पर डॉक्टर का प्रभाव आता जा रहा है और उसने भी चिड़ियों को फंसाने की कोशिश शुरू कर दी है।

बादल की सफेद टुकड़ी सरककर आंखों से ओझल हो चुकी है और खिड़की के फ्रेम में जड़ा हुआ नीला आसमान, नीला-नीला-सा लग रहा है। तभी दरवाजे पर दस्तक होती है। वह उठकर दरवाजा खोलता है। सामने एक अपरिचित को देख 'हलो' कहकर मुसकराता है। वह अपरिचित 'सॉरी' कहकर

चल देता है। शायद उसने गलती से उसका दरवाजा खटखटा दिया था। उसकी इच्छा होती है कि वह पूछे, लेकिन वह सिर्फ जाते हुए देखता रहता है।

"सुनो गुरु, इतनी कम तनख्वाह में गुजारा नहीं होगा। तुम तो पढ़े-लिखे आदमी हो, मालिक से डटकर बात करो।"—उससे रामधन कहता है। जहां वह काम करता है वहां रामधन मशीन-मैन है।

उत्तर में वह कुछ नहीं बोलता। उसकी आदत भी कम बोलने की है।

"चिंता मत करो रामधन, वक्त पड़ने पर चींटी भी हाथी को मार डालती है! पोस्टर छप गया?"

"वह तो शहर की दीवारों पर भी लग गया होगा। क्यों?"

"एक और पोस्टर छपना है, आज ही . . ." वह कहता है।

"अब तो ओवरटेम का चक्कर हो जाएगा और मालिक देगा नहीं।"

"लेकिन उसे छपना जरूरी है . . .।"

"ठीक है नरोत्तम बाबू, लेकिन मालिक क्यों नहीं आया कहने? उसने जानबूझकर आपको भेज दिया।"

वह चुप लगा जाता है। इच्छा होती है मालिक से पूछ ले, लेकिन हिम्मत नहीं होती। मालिक ही सब कुछ है, डॉयरेक्टर से लेकर चपरासी तक। फिर थोड़ी देर बाद रामधन से कहता है, "छोड़ो, फिर कल जो होगा देखा जाएगा . . ।"

इतना कहकर कुरसी पर बैठ गया है। उसे अपने अंदर अजीब-सी विवशता का एहसास होता है। कितना छोटा हो जाता है आदमी एक-दूसरे के सामने! वह सोचने लगता है, नौकरी छोड़ देगा। पता नहीं उसकी बुद्धि को लकवा मार गया है। वह इतना अवश क्यों मानता है अपने को। उसे लगता है, मेज पर पड़ा पोस्टर उसका मुंह चिढ़ा रहा है। वह पोस्टर को उलट देता है।

कल भाई का तार आया था। वह

राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेने के कारण गिरफ्तार हो गया है।

शुरूआत तो उसने भी राजनीति से ही की थी। वह पोस्टर लगाने का काम किया करता था। कई-कई बार उसे दीवारों पर रात-रात भर जागकर नारे लिखने पड़ते थे। यह काम ज्यादा जोखिम का था। पुलिस के अलावा मकान-वालों से मार खाने का ज्यादा डर था। और एक दिन यही डर सामने आ गया। पोस्टर चिपकाते समय वह पकड़ लिया गया और उसे बेतरह मार लगी। तब से उसने इस काम से ही नाता तोड़ लिया।

इसीलिए जब भाई की गिरफ्तारी की सूचना मिली तब उसके अंदर कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। हद से हद मंजु से भी उसने हलके-फुलके शब्दों में इसका जिक्र किया था।

पता नहीं क्यों मंजु से उसको बातें करना अच्छा लगता है। मंजु को वह बहुत ही सावधान और चालाक मानता है। उसका अहं हमेशा इतनी जाग्रत अवस्था में होता है कि जरा-सी बात भी मंजु को लग जाती है। वह उससे बातें न करने का कई बार निर्णय ले चुका है, लेकिन जब भी वह उसके सामने जाता है, उसका निर्णय बालू की भीत की तरह ढह जाता है। वह सोचता है, अगर मंजु के साथ उसकी गांठें बंध जातीं तो स्वाहा करने को क्या बचता उसके पास!

"लीजिए, सा'ब चाबी—अब मैं चला . . . ," कहते हुए रामधन चाबी मेज पर रख देता है। नरोत्तम अपनी सोच की दुनिया से वापस आता है। इस सोचने के क्रम में वह भूल गया कि अब पोस्टरों का क्या होगा।

उसे कोफ्त होती है। वह कुढ़ता हुआ उठता है। वह निजात पाना चाहता है इस टटपुंजिए आदमी की नौकरी से। साला टटपुंजिया तो है ही, बीवी का दलाल भी है। असली बिजनेस तो करती है, इसकी बीवी। जहां-तहां काम के लिए भेजता रहता है। वह फटाक से ताला बंद करके मालिक से मिलकर पोस्टर

छपवाना चाहता है, नहीं तो पता नहीं कल क्या करे! तत्काल नौकरी मिलने से रही।

"नहीं। पोस्टर छपना जरूरी है। आप चाहे जहां से भी छपवा कर लायें। मैं पूछता हूं अगर पोस्टर का ब्लाक मौजूद है तो आपको कष्ट क्यों हो रहा है?" मालिक अपनी आवाज को मुलायम बनाने की कोशिश करता हुआ पूछता है।

"लेकिन साहब, ओवरटाइम के लिए कोई मशीनमैन तैयार नहीं हुआ, मैंने बहुत कहा।" वह अपने पक्ष का तर्क देता है। लेकिन मालिक के भावशून्य चेहरे पर कोई प्रतिक्रिया नहीं होती। वह नरोत्तम की ओर हिकारत से देखकर टेलीफोन से जूझने लगता है। डायल कर नरोत्तम से कहता है, "जाइए, मुझे कुछ नहीं मालूम। मुझे कल तक यह पोस्टर छपा हुआ मिलना चाहिए। ओवरटाइम जो भी करेगा मिल जाएगा या और किसी दूसरे को ले आइए . . ।"

नरोत्तम ऑफिस की चाबी को कसकर पकड़ लेता है। नौकरी इसे ही कहते हैं। इच्छा हो रही थी मालिक के भद्दे मुंह पर दो-चार तमाचे जड़कर उसे बतायें—आदमी पहले आदमी होता है ससुर के बच्चे . . . मशीन नहीं . . । वह जल्दी से ऑफिस पहुंचकर पोस्टर छापने की व्यवस्था करना चाहता है। लेकिन अभी मिलेगा कौन? रामधन तो घर गया होगा और दूसरा पता नहीं मिले या न मिले। फिर बेहतर यही है कि वह स्वयं खुद क्यों न छाप ले—दूसरे आदमी के नाम पर . . .। उसे खुद भी तो पैसे की जरूरत है और शाम को देखने कौन आयेगा? देखे भी तो बुरा क्या है? काम तो काम ही होता है। वह जल्दी से ब्लाक को मशीन पर चढ़ाता है और छापना शुरू करता है। जाने क्यों उसे पहली बार एहसास होता है, जैसे वह भी होम करने लगा है! घड़कछो ऽऽ घड़कछो ऽऽ की आवाजों में स्वाहा की आवाजें घुलमिल गयी हैं।

घड़कछो, घड़कछो, घड़कछो!

दो घंटे लगातार काम करने के बाद उसे जोर की थकान महसूस होती है। वह मशीन बंद करके कुरसी पर बैठता है। उसने आज पहली बार ओवरटाइम किया है। वह किसी दूसरे के नाम से आज का बिल बनवा देगा। अगर सच्चाई मालिक को मालूम हुई तो कल से सारा काम इसे ही करना पड़ेगा।

वह अंदर से अचानक बुझने लगता है, जैसे नये काम करने की खुशी गायब हो जाती है। यह सब क्या होने लगता है, कभी-कभी! यकायक अजीब-सी उदासीनता भरने लगती है। इन स्थितियों में उसे मंजु से बातें करना अच्छा लगता है।

वह ताला मारकर मंजु के घर की ओर चल देता है। सामने सड़क पर लगता है, किसी नयी फिल्म का पोस्टर लग गया

है, क्योंकि आज जब वह दफ्तर आ रहा था, तब किसी मंत्री के भाषण का पोस्टर सटा हुआ था। इस पोस्टर के सटने से जैसे एक जान-सी आ गयी है। जो भी जाता है रुककर एक मिनट पढ़ने लगता है। वह भी पढ़ने लगा है, लेकिन पढ़ना क्या, वह फिल्म का नाम पढ़कर चल देता है। उसे फिर लकवा से पीड़ित रामदासजी की याद हो आती है। मंजु को भी रामदासजी के बारे में पता है। उसी ने बताया था उसे? बातचीत के दौरान मंजु भी रामदासजी के बारे में पूछ लिया करती है। उसे दूसरों के बारे में बातें करना अच्छा लगता है। वह जब भी उससे बातें करता है, तब काफी सावधानी बरतनी पड़ती है। वह कई बार मंजु को साफ-साफ बतलाना चाहता है, लेकिन इस अदृश्य संबंध के टूटने के डर से चुप लगा जाता है। उसे लगता है इस औरत को एक अभिनेत्री होना चाहिए था। जिस सादगी और सहजता से उदास और भावुक होने का नाटक वह कर लेती है, उसे देखकर उसको चकित होना पड़ता है! असल में उसे देखकर वह 'कनफ्यूज्ड' हो जाता है।

मंजु के साथ इसका संबंध अचानक ही हो गया था, जैसे अन्य दूसरे संबंध हो जाते हैं। तभी से तमाम अन्य बातों के, वह उसके प्रति आकर्षित होता रहा है। क्यों? इसका जवाब खुद नहीं जानता।

मंजु के कमरे में रोशनी है। इसका मतलब यह कि मंजु है, लेकिन जैसे ही वह कमरे के पास आता है, रुक जाता है। दरवाजा आधा खुला है। एक अजनबी के साथ मंजु के हंसने की आवाजें उसकी कनपटियों को चीरने लगती हैं।

"तुमने जैसा बतलाया आदमी बड़ा इंटरेस्टिंग है। फिर भी तुम्हें थोड़ा रिजर्व रहना चाहिए"—वह अजनबी कहता है।

"मैं क्या करूं . . . ? उसे मना तो कर सकती नहीं। और किसी को गलतफहमियों में जीने का शौक हो तो मेरा क्या बिगड़ता है?" कहकर मंजु की चनचनाती हंसी हवा में बिखर जाती है। दोनों हंसने लगते हैं। वह दबे पांव से धीरे-धीरे वापस आने लगता है। उसका वजन कितना हलका हो गया है। वह हवा में तैर सकता है। वह महसूस करता है, उसके चेहरे पर अपमान के रूप में पसीने की बूंदें उभर आयी हैं। वह नर्वस हो गया है। वह कहीं बैठकर अपने को चाहता है—'इदं अन्नं स्वाहा।' वह पास ही के चाय घर की ओर लपकता है।

थोड़ी देर बाद जब वह वापस लौटने लगता है, उसकी निगाह पोस्टरवाली जगह पर चली जाती है, क्योंकि अभी-अभी फिल्म के पोस्टर की जगह एक दूसरे नेता के भाषण का पोस्टर चिपक गया है। फिल्मवाला पोस्टर का छोटा-सा हिस्सा जो उखाड़ा गया है, उसका एक कोना धीरे-धीरे हवा में कांप रहा है।

—दूरदर्शन केंद्र, मुजफ्फरपुर

गोष्ठी

चंद्रकिशोर सोमानी, कलकत्ता : एक जासूसी उपन्यास में अपराधियों की उंगलियों के निशान पहचानने के लिए किसी 'मैगनेटिक ब्रश' का प्रयोग करना लिखा है । यह क्या होता है ?

उंगलियों के निशानों का पता लगाने का एक प्रचलित तरीका अपराधी द्वारा छुई गयी चीज पर रंगीन पाउडर छिड़ककर उसकी उंगलियों के निशान उभारने का है। उंगलियों पर लगी जो चिकनाई उस चीज पर छूट जाती है, वह पाउडर को पकड़ लेती है और निशान उभर आते हैं। लेकिन इस तरीके में कभी-कभी निशान साफ नहीं उभरते, क्योंकि पाउडर पूरी सतह पर बिखेरा जाता है और यदि यह सतह खुरदरी (जैसे कार्डबोर्ड की) हुई तो पाउडर केवल निशानों पर चिपकने के बजाय अन्यत्र भी चिपका रह जाता है। अतः यह सोचा गया कि पाउडर ऐसा हो और इस प्रकार डाला जाए कि अन्यत्र नहीं, केवल उंगलियों के निशानों पर ही चिपके। इसके लिए लोहे के बहुत महीन चूरे को एक चुंबक पर चिपकाकर चुंबक को संदिग्ध वस्तु की सतह पर फिराया जाता है, जिससे लोहे का चूरा वांछित स्थानों पर चिपककर उंगलियों के निशान सही-सही उभार देता है। चुंबक पर चिपके हुए महीन लौह-चूर्ण के कण दरअसल 'चुंबकीय ब्रश' के 'बाल' हैं, अन्यथा यह कोई ब्रश-जैसी चीज नहीं होती।

घनश्याम वर्मा, रांची : 'ब्लूप्रिंट' कैसे बनाया जाता है ?

इमारती नक्शों, इंजीनियरी डिजाइनों या बिजली के सर्किट-डायग्राम आदि की जो नीली-सफेद प्रतिलिपियां देखने में आती हैं, उन्हें 'ब्लूप्रिंट' कहते हैं। इन्हें बनाने के लिए 'सायनोटाइप' (Cyanotype) अथवा नीलांकन विधि का प्रयोग किया जाता है। इसके लिए 'फैरिक साल्ट' और 'पोटाशियम फैरीसायनाइड' से संवेदित कागज काम में लाया जाता है। मूल नक्शे या डिजाइन को इस कागज पर रखकर प्रकाश देने के बाद (जैसा कि फोटोग्राफी में किया जाता है) उक्त संवेदन-कागज को पानी में धोकर 'डेवलप' किया जाता है। इससे कागज पर नीली पृष्ठभूमि में सफेद रेखाओं से बनी आकृतियां मूल की भांति उभर आती हैं। यह नीला रंग 'फैरिक साल्ट' पर प्रकाश पड़ने पर उसके 'फैरस साल्ट' में परिवर्तित हो जाने तथा 'फैरिस साल्ट' के 'पोटाशियम फैरीसायनाइड' के साथ पारस्परिक क्रिया से प्राप्त होता है।

प्रेमकुमार श्रीवास्तव, कोटा : नयी दिल्ली स्थित राष्ट्रपति-भवन कब

बना था ? इसमें कौन-कौन रह चुके हैं ?

यह भवन पहले वाइसराय-भवन कहलाता था और इसका निर्माण अंगरेजों के समय में हुआ था। १९११ के दिल्ली दरबार में जब जार्ज पंचम ने यह घोषणा की कि भारत की राजधानी कलकत्ता से हटाकर दिल्ली लायी जाएगी, तब वाइसराय के लिए एक भवन बनाने का प्रश्न उठा। इसका निर्माण १९११ में ही शुरू हो गया था, लेकिन बीच में प्रथम महायुद्ध आ जाने से रुक गया। १९२१ में पुनः इसका निर्माण-कार्य शुरू हुआ और १९२९ में यह भवन बनकर तैयार हुआ। सबसे पहले इसमें लार्ड इरविन रहे, फिर लार्ड वेलिंगडन, लार्ड लिनलिथगो, लार्ड वैवेल और लार्ड माउंटबेटन। चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य इसमें रहनेवाले पहले भारतीय थे। राष्ट्रपति-भवन बन जाने के बाद इसमें डा. राजेंद्रप्रसाद, डा. राधा कृष्णन्, डा. जाकिर हुसेन, श्री वराहगिरि वेंकटगिरि और श्री फखरुद्दीन अली अहमद रहे। आजकल राष्ट्रपति नीलम संजीव रेड्डी इस इसके निवासी हैं।

हेमचंद्र उप्रेती, जयपुर : क्या धूप के ऐसे चश्मों का निर्माण संभव है जिनका रंग धूप तेज या कम होने पर स्वतः ही गहरा या हलका हो सके ?

जी हां, यदि चश्मे फोटोक्रोमिक कांच के बने हों। रंग बदलने की क्रिया को अंग्रेजी में 'फोटोक्रोमिज्म' कहते हैं और प्रकृति के प्राणियों में गिरगिट इस क्रिया का अच्छा उदाहरण है। परंतु मनुष्य ने ऐसा गिरगिटी कांच भी बना लिया है जो अपेक्षानुसार रंग बदल सकता है। फोटोक्रोमिक कांच की यह क्रिया कैमरे में प्रयुक्त होनेवाली फोटोग्राफिक फिल्म से मिलती-जुलती है। फोटो-फिल्म की भांति इसमें भी सिल्वर हैलाइड मणिभ (क्रिस्टल) होते हैं, जो पराबैंगनी प्रकाश पड़ने पर रंग बदलकर गहरे रंग के (काले) हो जाते हैं। फोटोक्रोमिक कांच से बने चश्मे का रंग धूप में जाने पर गहरा और छाया में लौटने पर पुनः हलका हो सकता है। अभी इस प्रकार के चश्मे वैज्ञानिक अनुसंधानों और विशिष्ट औद्योगिक कार्यों में ही चलते हैं, किंतु संभव है कुछ समय बाद आम लोगों को भी सुलभ हो जाएं।

क्षमा पटेल, अहमदाबाद : क्या मानव-शरीर में रक्त के स्थान पर कोई और कृत्रिम रूप से विकसित तरल पदार्थ काम में नहीं लाया जा सकता ?

यदि ऐसा संभव हो गया होता तो रक्तदान और रक्त-बैंकों की आवश्यकता समाप्त हो गयी होती। फिर भी निराश न हों, शरीर-विज्ञानी इस समस्या से जूझ रहे हैं और उन्होंने इस दिशा में पशु-पक्षियों पर बहुत कुछ सफल प्रयोग किये हैं। परीक्षणों से यह पता चला है कि फ्लोरोकार्बन नामक यौगिक इस दिशा में उपयोगी हो सकते हैं। ये यौगिक

फ्लोरीन तथा कार्बन के हाइड्रोजन परमाणुयुक्त यौगिक हैं । इन्हें रक्त के स्थान पर प्रयुक्त किया जा सकता है, क्योंकि ये निष्क्रिय होते हैं तथा घुली हुई आक्सीजन को हीमोग्लोबिन के समान ही शरीर के विभिन्न ऊतकों तक पहुंचा सकते हैं।

इनके साथ एक निश्चित मात्रा में लवण, जल तथा ग्लूकोज मिलाकर तैयार किये गये दूध-जैसे तरल पदार्थ में ५० प्रतिशत रक्त मिलाकर जानवरों के शरीर में चढ़ाया गया और पाया गया कि वे जीवित रह सकते हैं। फ्लोरोकार्वन रक्त की लाल कणिकाओं से दस गुने छोटे आकार के होते हैं, लेकिन वुलवुलों के रूप में प्रवाहित आक्सीजन से अवधारित ये फ्लोरोकार्वन रक्त से अधिक आक्सीजन ग्रहण करते पाये गये हैं । कृत्रिम रक्त के ये प्रयोग अभी प्रारंभिक अवस्था में ही हैं।

हर्षकुमार कुलकर्णी, अकोला (महाराष्ट्र) : पेंटोमाइम क्या होता है ?

'पेंटोमाइम' का शाब्दिक अर्थ तो है 'सबका अनुकरण करना', लेकिन इसका अर्थ आजकल 'मूक अभिनय' से लिया जाता है। मूक अभिनय में अभिनेता वाणी का आश्रय लिये विना अपने शरीर और हाथों की मुद्राओं तथा चेहरे की भंगिमाओं से ही सब कुछ कह डालता है। इस कला का आरंभ प्रायः सभी देशों में नृत्य-गान अथवा कथावाचन के साथ हुआ माना जाता है।

कथावाचन के समय पहले एक अकेला अभिनेता मूकाभिनय के द्वारा कथा के विभिन्न पात्रों के भावों की व्याख्या करता हुआ नाचता रहता था, कालांतर में यह मूकाभिनय कथावाचन से स्वतंत्र एक नयी नाट्य-शैली बन गया। इसकी विशेषता यह है कि अंग-संचालन तथा मुख-मुद्राओंवाली इसकी भाषा विश्व में कहीं भी समझी जा सकती है।

सुभाष कपूर, लखनऊ : टी. टी. बी. नामक पौधों का रोग क्या है ?

इसका पूरा नाम है 'टोबैको ट्यूमर वाइरस' या तंवाकू-विषाणु। यह एक घातक विषाणु है जो तंवाकू के पौधों में ही नहीं, अन्य पौधों के तनों और पत्तियों में भी पौधों की कोशिकाओं में इसकी उपस्थिति से उन पर ट्यूमर के काले-काले धब्बे बन जाते हैं। यह वाइरस बीजों में भी रहता है और आनेवाली फसलों को भी रोगी बना सकता है।

चलते-चलते एक प्रश्न और...

क ख ग, नयी दिल्ली । बाल-वर्ष में बच्चों के लिए सबसे बड़ी सीख क्या देनी चाहिए ?

बाल-वर्ष पर सीख बच्चों को नहीं बड़ों को देनी चाहिए ताकि वे अपना बड़प्पन छोड़कर बच्चों से खुद बच्चों की तरह रहना सीखें।

—बिंदु भास्कर

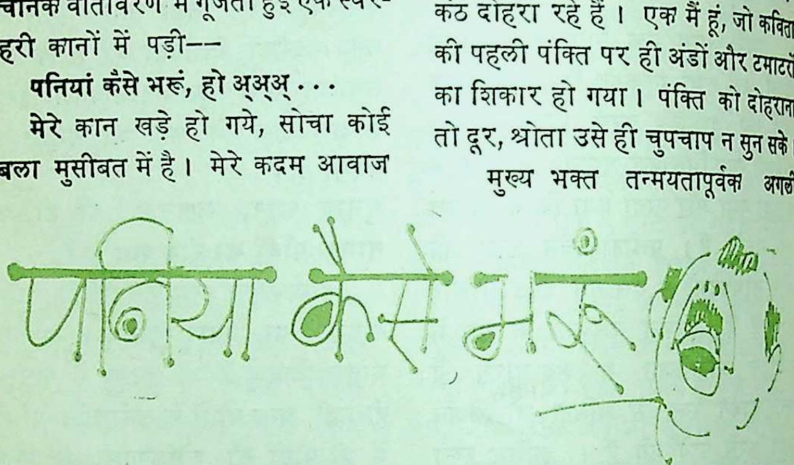

● **अखिलेश्वर**

कवि-सम्मेलन में हूट होने के बाद संयोजक की गालियां सुनकर वापस लौट रहा था और सोच रहा था कि आज के बाद कविता करना बंद कर दूंगा। अब ये बच्चों को लगन से पढ़ाया करूंगा और अपने अध्यापक-जीवन को सफल बनाऊंगा। अचानक वातावरण में गूंजती हुई एक स्वर-लहरी कानों में पड़ी——

पनियां कैसे भरूं, हो अ्अ् . . .

मेरे कान खड़े हो गये, सोचा कोई अबला मुसीबत में है। मेरे कदम आवाज की दिशा में मुड़ गये। कुछ ही दूर चला था कि सारा रहस्य समझ में आ गया।

'श्रीश्याम संकीर्त्तन मंडली' का अखंड-कीर्त्तन चल रहा था। भक्तजनों का चिमटा बज रहा था, खड़तालें खड़क रही थीं। सब भक्तों का बॉस-जैसा दिखनेवाला एक मोटा भक्त गला फाड़कर चीख रहा था——

मैं जल जमुना भरन को जाऊं
आ गये नंदजी के लाल, पनियां कैसे भरूं?

कार्यक्रम पूरी ऊंचाइयों पर था। मुख्य-भक्त माइक को मुंह से सटाकर ऊंची आवाज में दो पंक्तियां बोलकर रुक जाता था। फिर चिमटों, खड़तालों और तबले-वाले भक्त उन्हीं पंक्तियों को दोहराते—

पनियां कैसे भरूं अ्अ् . . .

मैं निराशा में डूब गया। मुख्य भक्त के प्रति ईर्ष्या के भाव जाग उठे। हाय, एक यह है जिसकी एक-एक पंक्ति को सैकड़ों कंठ दोहरा रहे हैं। एक मैं हूं, जो कविता की पहली पंक्ति पर ही अंडों और टमाटरों का शिकार हो गया। पंक्ति को दोहराना तो दूर, श्रोता उसे ही चुपचाप न सुन सके।

मुख्य भक्त तन्मयतापूर्वक अगली पंक्तियां बोल रहा था—

मैं ग्वालिन ब्रज की अति भोरी
भा गये नंदजी के लाल, पनियां कैसे भरूं?

सैकड़ों नर-नारी पीछे से चिल्लाये—

भा गये नंदजी के लाल, पनियां कैसे भरूं

विभोर होकर मुख्य भक्त ने एक लंबा आलाप लिया और अगला शेर अर्ज किया—

ताता-सा पानी साबुन की टिकिया,
नहा गये नंदजी के लाल, पनियां कैसे भरूं

भक्ति भरी अनुगूंज उठी—

नहा गये नंदजी के लाल, पनियां कैसे भरूं

मुझसे न रहा गया। इतनी दाद मिले तो ऐसी-ऐसी रचनाएं मैं प्रतिदिन एक दर्जन के हिसाब से लिख दूं, मेरी विह्वलता बढ़ गयी, खिसककर मैं माइक के पास हो गया और मौके का शेर गढ़कर प्रस्तुत कर दिया—

सोने की थाली में
भोजन परोसा,
खा गये नंदजी के लाल
पनियां कैसे भरूं

मेरा कहना था कि पीछे-पीछे सैकड़ों कंठ बोल उठे—

खा गये नंदजी के लाल,
पनियां कैसे भरूं

मुख्य भक्त ने क्रुद्ध दृष्टि से मेरी ओर इस तरह देखा, जैसे मैंने उसकी शान में कोई बहुत बड़ी गुस्ताखी कर दी हो, माइक अपनी ओर खींचते हुए वह चिल्लाया, "यह अशुद्ध है, गलत है, खाने का और पानी भरने का परस्पर कोई संबंध नहीं है।"

मैंने माइक के अभाव में गला फाड़कर तर्क दिया, "आने, माने और नहाने का पानी से संबंध है, तो खाने का क्यों नहीं है? अवश्य है, खाने के बीच में पीना तो बड़े-बड़े डॉक्टर भी बताते हैं। आप मेरी रचना की लोकप्रियता से जल रहे हैं।"

"गलत, एकदम गलत," वह कांपते हुए बोला, "भगवान कभी खाना नहीं खाते, वे केवल भाव के भूखे होते हैं। तुम विलायती-तालीम पढ़कर भगवान का उपहास कर रहे हो।" मुख्य भक्त इससे आगे बोला—

"नास्तिक है, रंग में भंग डालने आया है, इसे पकड़ कर मारो।"

सहसा सबके सब भक्त-जन चिमटे और खड़ताले ले-लेकर मेरी ओर लपके। मुझे अपने जीवन की अंतिम घड़ी निकट आयी दिखायी देने लगी।

कभी छात्र-जीवन में मैं दौड़ की प्रतियोगिता में भाग लिया करता था। दौड़ की बारीकियां सिखानेवाले उस्तादजी की बात एकाएक याद आयी ... मार्क ऑन योर फूट ... गोअ्अ्अ्।

मैंने तुरंत अपने जूते उठाये और पांवों को सर पर रखकर सरपट भागा।

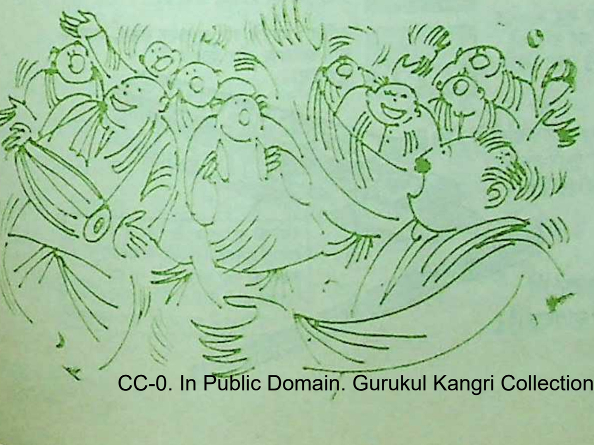

—३०, मंडी ब्लॉक,
श्रीकरनपुर-३३५०७३
(राजस्थान)

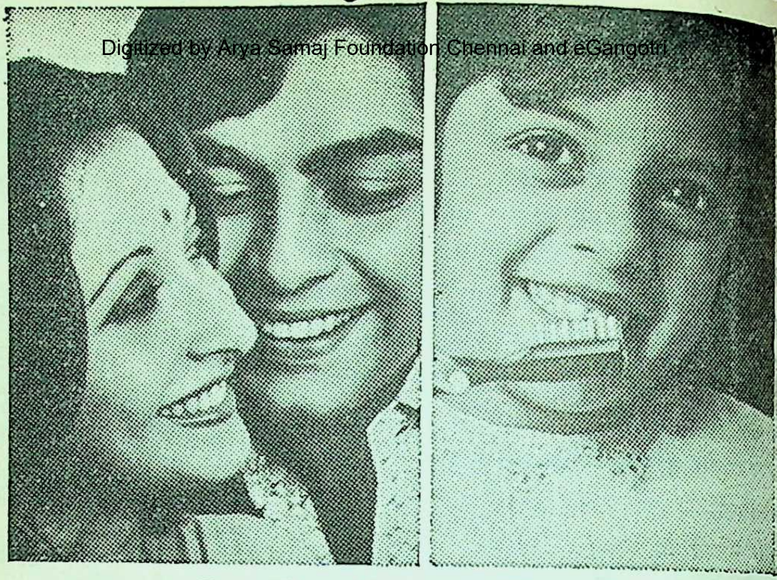

कोलगेट डेन्टल क्रीम से
सांस की बदबू रोकिये...
दंतक्षय का प्रतिकार कीजिये

हर भोजन के बाद अपने दांत कोलगेट से साफ़ कीजिये। यह ठीक उसी तरह दांतों की रक्षा करता है, जैसे दुनियाभर के दंत विशेषज्ञ कहते हैं।

दांतों में छुपे हुए अन्नकणों में कीटाणु बढ़ते हैं। इनसे सांस में बदबू पैदा होती है, और बाद में दांतों में सड़न।

इसीलिए, हमेशा भोजन के फ़ौरन बाद कोलगेट डेन्टल क्रीम से दांत साफ़ कीजिये। यह सांस को ताज़ा, दांतों को सफ़ेद और दांतों की सड़न रोकने में असरदार साबित हो चुका हैं।

अधिक तरोताज़ा सांस और अधिक सफ़ेद दांतो के लिये दुनियाभर में ज़्यादा से ज़्यादा लोग दूसरे टूथपेस्टों के बजाय कोलगेट टूथपेस्ट ही खरीदते हैं।

देखिये, कोलगेट के भरोसेमंद फ़ॉर्मूले का काम:

दांतों में छिपे हुए अन्नकणों में सांस में बदबू और दांत में सड़न पैदा करने वाले कीटाणु बढ़ते हैं।

कोलगेट का अनोखा, असरदार झाग दांतों के कोने में छिपे हुए अन्नकणों को और कीटाणुओं को निकाल देता है।

नतीज़ा: आपके दांत आकर्षक सफ़ेद, आपकी सांस तरोताज़ा और दंतक्षय की रोकथाम।

Colgate
DENTAL CREAM
Colgate
Co
STOPS BAD BRE
Colgate

दांतों की पूरी सुरक्षा के लिए कोलगेट ट्राइगार्ड टूथब्रश। ये दांतों के एनैमल व मसूढ़ों की रक्षा करके दांतों पर जमी परत को हटाते हैं। ८ विभिन्न किस्मों में, परिवार में हरएक के लिए अनुकूल।

सिर्फ़ एक दांतोंका डॉक्टर ही
इससे बेहतर देखभाल कर सकता है।

DC.G.64 HN

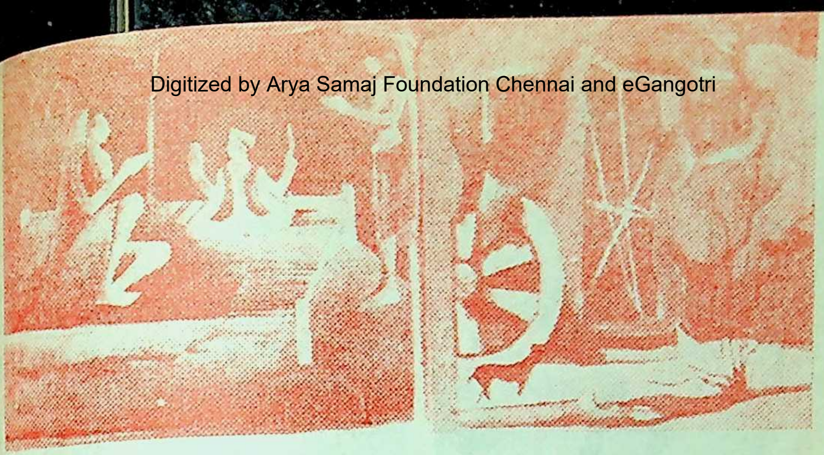

ऊपर का चित्र : नेता का जन्म, चित्रकार : वेदप्रकाश मिश्र

एक और नया नारा : समीक्षावाद

● रामचंद्र शुक्ल

भारत में पिछले तीस-पैंतीस वर्षों में आधुनिक कला के नाम से बहुत सारी कलाकृतियां बनी हैं, प्रदर्शित हुई हैं, और प्रचलित भी हुई हैं, किंतु भारतीय-कला के क्षेत्र में मौलिक सूझ-बूझ, विचारधारा अथवा स्वरूपवाला कोई भी मौलिक कला-आंदोलन उभरकर सामने नहीं आ सका, जबकि पश्चिमी देशों में लगातार मौलिक कला-आंदोलनों के नित-नये स्वरूप उभरते रहे हैं और आज भी उभर रहे हैं। लगभग सौ सवा-सौ वर्षों में, पश्चिमी देशों में, आधुनिक-कला के जितने भी आंदोलन तथा कला-स्वरूप सामने आये हैं उनमें से अनेक पिछले तीस-पैंतीस वर्षों में भारतीय चित्रकारों की कलाकृतियों में भी प्रतिलक्षित हुए हैं, इसे चाहें तो हम भारतीय कला-जगत की उपलब्धि मान लें या अपनी कला-प्रतिभा का खोखलापन। कला, सभ्यता और संस्कृति के क्षेत्र में आदान-प्रदान स्वाभाविक है और खासकर आज के युग में; किंतु यह आदान-प्रदान उस समय कोई मायने नहीं रखता जब कि इससे मौलिक सूझ-

---

रामचंद्र शुक्ल एक वरिष्ठ चित्रकार और कला-समीक्षक हैं। भारतीय आधुनिक कला के क्षेत्र में एक नये कला-आंदोलन 'समीक्षावाद' के प्रणेता, पक्षधर और चित्रकार हैं। इस कलावाद के सैद्धांतिक प्रश्नों पर प्रस्तुत है उनका यह विचारोत्तेजक लेख।

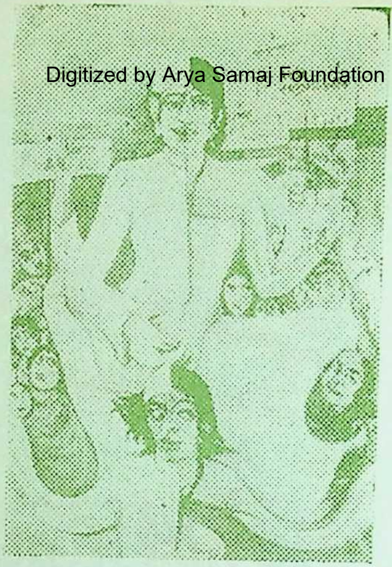

सत्ता और जन,
चित्रकार : मधुकर चतुर्वेदी

बूझ अथवा विचार-धारा को ही आघात पहुंचता हो। यदि पश्चिमी देश आधुनिक कला के क्षेत्र में मौलिक सूझ-बूझ के साथ नित नये कला-स्वरूप उपस्थित करते जा रहे हैं तब क्या कारण है कि भारत अपना एक भी मौलिक कला-आंदोलन, कलागत विचार-धारा या कला-स्वरूप प्रस्तुत करने में सफल न हो? कहीं ऐसा तो नहीं कि भारतीय चित्रकार पाश्चात्य, आधुनिक कला के नित नये स्वरूपों से आक्रांत हो गये हों। ऐसा होने का मलतब होगा, कला की अवनति।

इस चुनौती को उत्तर प्रदेश के कलाकारों के एक ग्रुप ने स्वीकार किया है और 'समीक्षावाद' के नाम से एक मौलिक देशी आधुनिक कला-आंदोलन
का उद्घोष किया है। यह प्रश्न
जा सकता है कि क्या कला के लिए
आंदोलन की आवश्यकता होती है
आंदोलन क्यों? इसके उत्तर में
कहूंगा कि समाजिक, राजनीतिक, धार्मि
अथवा सांस्कृतिक सभी तरह के आं
लन होते रहे हैं और सभी के पीछे
न कोई मूलभूत चेतना, विचार-धा
दर्शन या लक्ष्य अवश्य रहा है।
आंदोलनों का एक ही लक्ष्य होता है—
जीवन तथा समाज को प्रगति प्र
करना अथवा सत्य की ओर सामूहि
रूप से जन-जीवन को प्रेरित कर
यद्यपि कलागत आंदोलनों का नाम भा
के प्राचीनकाल में सुनने को नहीं मिल
किंतु धार्मिक-आंदोलनों के सहायक
रूप में ही कला भी परिवर्तित तथा प्र
करती रही है और विभिन्न शैलियों
रूप में जानी गयी है जैसे—हिंदू-क
बौद्ध-कला, जैन-कला अथवा मुग
कला आदि। ये सभी धार्मिक आंदोल
के सहयोगी के रूप में ही उभरी
स्वतंत्र कलागत आंदोलन के रूप में नहीं
स्वतंत्र कलागत आंदोलन आधुनिक-का
की देन है जबकि कला धार्मिक-बंध
से मुक्त हो चुकी है। आज धार्मि
संप्रदाय के स्थान पर राजनीतिक, आर्थि
तथा सामाजिक प्रश्न महत्त्वपूर्ण हो
हैं। आज का चित्रकार भी इन्हीं प्रश्
से जूझ रहा है और यही उसकी क
का भी मूलभूत आधार होना चाहि

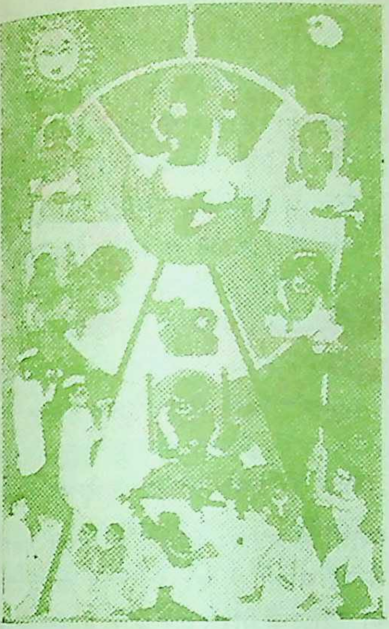

जीवन चक्र, चित्रकार : रघुवीर सेन धीर

था, किंतु चित्रकारों ने इस पर अब तक उतना ध्यान नहीं दिया, जितना पश्चिमी देशों में उभरनेवाले कला-आंदोलनों पर, जिनका झुकाव अधिकांशतः 'कला कला के लिए है' की ओर अथवा वैयक्तिक अभिव्यंजना तथा शुद्ध नव-आकार निरूपण की ओर ही रहा है। जिसके परिणामस्वरूप वहां 'क्यूबिज्म,' 'अन्स्ट्रैक्शनिज्म,' 'एक्स्प्रेशनिज्म' अथवा 'सुर्ररियलिज्म' आदि कला-आंदोलन उभरे। इन कला-आंदोलनों का आधार पश्चिमी देशों की सामाजिक, आर्थिक या राजनीतिक परिस्थितियां थीं, किंतु भारत में इनका प्रचलन एक प्रकार से आरोपित रहा है, स्वाभाविक नहीं—क्योंकि भारत की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियां उनसे काफी कुछ भिन्न हैं।

समीक्षावादी चित्रकार इस तथ्य को स्वीकार करते हैं और चाहते हैं कि भारतीय आधुनिक-कला का निर्माण भारतीय परिस्थितियों, आशाओं, आकांक्षाओं के अनुरूप हो। ऐसा तभी हो सकता है जब भारतीय चित्रकार इसके लिए आंदोलनात्मक रूप में कार्य करें। हमारे बहुत से आधुनिक चित्रकार पश्चिमी आधुनिक-कला से इतने आक्रांत हो चुके हैं कि बिना आंदोलन के भारतीय-कला को अपने सही रास्ते पर ला पाना असंभव-सा हो गया है। इतना ही नहीं, यदि हम अंतर्राष्ट्रीय कला के क्षेत्र में अपना स्थान बनाना चाहते हैं तब भी हमें अपनी कला को मौलिक, वैचारिक अथवा सांस्कृतिक आधार प्रदान करना होगा। तभी हमारी कला वास्तविक प्रगति कर सकेगी।

इस दृष्टि से 'समीक्षावाद' भारतीय आधुनिक-कला के क्षेत्र में प्रथम आंदोलन है जो भारतीय आधुनिक-कला को मौलिक स्वरूप तथा दिशा प्रदान करने के लिए कृत-संकल्प है। हम समीक्षावादी कलाकार सैद्धांतिक रूप में कला को जीवन, समाज या प्रकृति की समीक्षा ही मानते हैं। यथार्थवादी कलाकार जीवन, समाज तथा प्रकृति को जिस रूप में

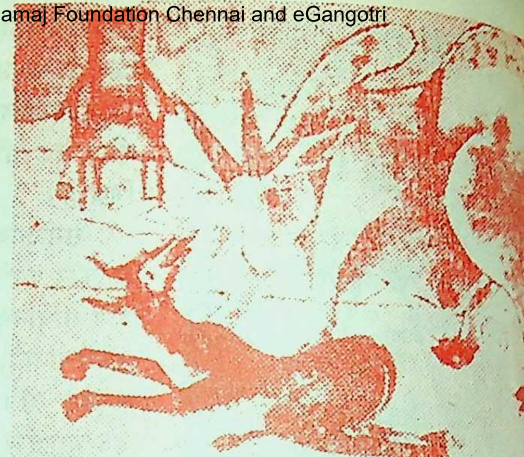

कुरसी का झगड़ा, चित्रकार : संतोषकुमार सिंह

देखते हैं, उसी में चित्रित करने का प्रयास करते हैं। आदर्शवादी कलाकारों ने जीवन, समाज अथवा प्रकृति को हमेशा एक काल्पनिक आदर्श के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया। पाश्चात्य आधुनिक कलाकारों ने वैयक्तिक यथार्थ अथवा आंतरिक अभिव्यंजना को प्रस्तुत करने में अपनी कला को नव-आकारवादी-स्वरूप दे डाला, जिससे उनकी कला घोर व्यक्तिवादी होकर जनमानस की पकड़ से दूर चली गयी, कला मात्र रंगों व आकारों का नव-गठन होकर रह गयी, और उसका लक्ष्य मात्र चाक्षुस-सुख प्रदान करना हो गया। ऐसा चाक्षुस-सुख भरे पेट धनाढ्यों के लिए मनोरंजन के साधन के अतिरिक्त और कुछ नहीं रह गया। भारत जैसे अविकसित देश में, जहां अस्सी प्रतिशत जनता दो जून की रोटी कमा सकने के प्रयास में जूझ, मर रही है वहां ऐसे चाक्षुस-सुख का क्या महत्व हो सकता है ?

समीक्षावादी चित्रकार अपने जीवन, समाज तथा वर्तमान परिस्थितियों से कटकर मात्र चाक्षुस-सुख के प्रपंच में नहीं पड़ना चाहते, बल्कि अपने देश, समाज तथा जनजीवन की वर्तमान समस्याओं से जुड़कर सार्थक कला की रचना करना चाहते हैं जो भारतीय जनमानस को छुए, उन्हें प्रेरित करे और प्रगति प्रदान करने में समर्थ हो सके। ऐसा तभी हो सकता है जब कलाकार कला की सरलतम, सीधी-सादी भाषा में वर्तमान समाज में उत्पन्न ऐसी समस्याओं को अपनी कला का विषयवस्तु बनाये, जिनका जन-मानस से सीधा संबंध हो।

हम समीक्षावादी चित्रकार आधुनिकता में तो विश्वास करते हैं किंतु विदेशी आधुनिक कला-शैलियों का अनुगामी बनना पसंद नहीं करते। हम समीक्षावादी चित्रकार उससे अलग हटकर ऐसा रास्ता बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं, जो भारतीय जीवन, समाज, संस्कृति तथा विचारधारा के अनुरूप हो और विकासोन्मुख तथा प्रगतिशील हो।

पश्चिमी आधुनिक-जीवन तथा कला नितांत व्यक्तिवादी है और भारतीय जनमानस कभी भी व्यक्तिवादी नहीं रहा। समीक्षावादी चित्रकार भी अवैयक्तिक कला में विश्वास रखते हैं और जनमानस से जुड़कर अवैयक्तिक कला को विकसित करना चाहते हैं। वे जन-जीवन में व्याप्त आशा, आकांक्षाओं तथा समस्याओं से जुड़कर सीधी-सादी, सरल कलात्मक भाषा के द्वारा अवैयक्तिक अथवा समष्टिवादी कला का नया स्वरूप प्रस्तुत करना चाहते हैं। हम अपनी कला को पाश्चात्य आधुनिक-कला की भांति तकनीक-परक न बनाकर विचार-परक बनाना चाहते हैं ताकि कला मात्र रंगों, आकारों का खेल बनकर न रह जाए। हम 'कला कला के लिए है' उक्ति में विश्वास नहीं करते बल्कि 'कला समाज के लिए है' में आस्था रखते हैं।

जहां तक शैली, माध्यम और तकनीक का प्रश्न है, हम समीक्षावादी चित्रकारों की कोई एक शैली नहीं है। प्रत्येक चित्रकार अपनी शैली, माध्यम तथा तकनीक में कलाकृतियों का निर्माण करने के लिए स्वतंत्र है। हम ऐसा मानते हैं कि शैली तथा तकनीक महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि उनकी संप्रेषणीयता महत्वपूर्ण है। इसलिए समीक्षावादी कला विषयवस्तु-प्रधान है। समीक्षावादी चित्रकार सुंदर, मधुर या नयनाभिराम चित्र बनाने की बजाय जीवन तथा समाज के यथार्थ को जोरदार ढंग से प्रस्तुत करना चाहता है, और इसे भी यथार्थवादी शैली में नहीं बल्कि प्रतीकों के सहारे और समीक्षात्मक ढंग से।

भारतीय आधुनिक कला-आंदोलन--'समीक्षावाद' के चित्रकारों ने गत जनवरी में नयी दिल्ली के आइफैक्स कला-दीर्घा में अपनी प्रथम प्रदर्शनी आयोजित की जिसमें रामचंद्र शुक्ल, गोपाल मधुकर, बालादत्त पांडे, रघुवीर सेन धीर, संतोषकुमार सिंह, तथा वेदप्रकाश मिश्र के लगभग पचीस चित्र प्रदर्शित किये गये।

हम समीक्षावादी चित्रकार वर्तमान जीवन तथा समाज की ज्वलंत घटनाओं, दृश्यों, विचारों तथा समस्याओं पर गहराई से विचारकर योजनाबद्ध रूप से उनकी समीक्षा अपने चित्र में स्पष्ट तथा पैनी भाषा में प्रस्तुत करने के प्रयास में हैं। हम समाज-सचेतक के रूप में जनमानस को सतर्क तथा क्रियाशील बनाना चाहते हैं ताकि वे सामाजिक कुरीतियों, भ्रष्टाचार तथा शोषण से मुक्ति प्राप्त करने के लिए संघर्षरत हो सकें, नये समाज-रचना की ओर अग्रसर हो सकें। हम कला को समाज की प्रगति तथा विकास का माध्यम अथवा साधन मानते हैं, न कि साध्य। कला लक्ष्य नहीं बल्कि माध्यम है, मानव-कल्याण के लिए।

--अध्यक्ष : चित्रकला-विभाग
काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी-५

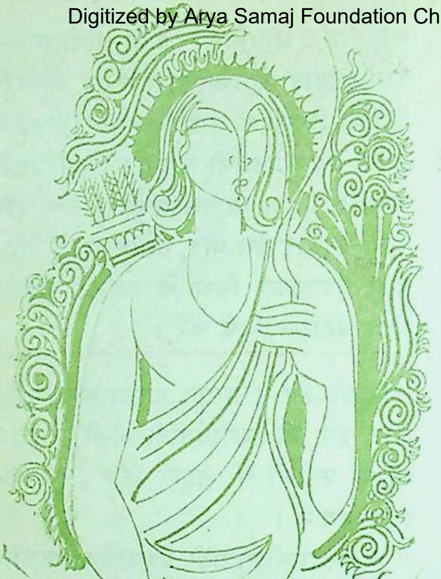

जिंदगी तड़पती है, सीता के स्वयंवर की तरह

● हर्जिंदर सिंह से

उर्दू साहित्य पर भारतीय संस्कृति का बड़ा गहरा प्रभाव रहा है। उर्दू साहित्य के अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि इसकी सृजन-चेतना में भारतीय संस्कृति एवं जीवन-दर्शन कूट-कूटकर भरा हुआ है। इसमें भारतीय धर्म-प्रवर्तकों, सामाजिक एवं राजनीतिक नेताओं, संतों, महापुरुषों, ऋषियों आदि का विशेष रूप से उल्लेख मिलता है। महापुरुषों एवं समाज-सुधारकों में श्रीकृष्ण, भगवान राम, महावीर स्वामी, गौतम बुद्ध एवं गुरु नानक देव पर उर्दू कवि द्वारा अनेक कविताएं तथा नज्में सम समय पर रची गयी हैं। कला एवं साहि का संबंध धरती की सीमाओं से नहीं, म की महक से होता है। उर्दू साहित्यका चाहे वे भारत में बसे हों या पाकिस्ता में, मूल रूप से भारतीय संस्कृति परंपराओं से जुड़े रहे हैं।

आस्था की धरोहर रा

मर्यादा पुरुषोत्तम राम का चरित्र ए आदर्श चरित्र है जो कभी अन्यथा न होता न ही देश, काल और युग सीमाओं में बंधा रहता है। उनके चरित्र सभी मानवीय गुणों की पराकाष्ठा हुई है अतः उनका चरित्र जनमानस में प्रतिष्ठित हो गया है। राम जनता की आस् की धरोहर हो गये हैं, उसके सांस्कृति प्रतीक बन गये हैं। राम की परमश के प्रभाव से उर्दू कवि भी अछूते नहीं र उर्दू के अनेक प्रसिद्ध कवियों ने अप अपनी नजरों से राम को जांचा, पर और उन्हें आधार बनाकर अपनी कविता में उनका गुणगान किया।

उर्दू कवियों की पहली कतार मे

डॉ. सर मुहम्मद इकबाल का नाम आता है। इकबाल प्रमुख रूप से धर्म और दर्शन के कवि हैं। यद्यपि उन्हें इस्लामी कवि माना जाता है, तथापि उनकी अधिकांश कविताएं रंग, नस्ल और जाति-भेद से परे हैं। भारत के चश्मों, पर्वतों, गाती हुई नदियों, लहलहाते पुष्प-कुंजों और देश-प्रेम के प्रकाश से जगमगाते हुए धरती तथा आकाश का पुजारी बनकर उन्होंने नानक, चिश्ती, स्वामी रामतीर्थ का गुणगान किया। 'बाग-ए-दरां' में संकलित 'राम' कविता में उन्होंने राम को दार्शनिक, विशालहृदय, वीर, सबके प्रति प्रेम-भाव रखनेवाला मानते हुए 'इमाम-ए-हिंद' की संज्ञा दी है:

है राम के वजूद पे हिंदोस्तां को नाज
अहले नजर समझते हैं इसको इमाम-ए-हिंद
एजाज इस चिराग-ए-हिदायत का है यही
रोशनतर अज सेहर है जमाना में शाम-ए-हिंद

'काबा में सनमखाना' के कवि मौलाना जफरअली खां ने, जो धर्मोपदेशक होने के साथ-साथ कवि एवं पत्रकार भी थे, अपनी कविता 'हिंदुओं की तहजीब' में राम की ओर संकेत करते हुए यहां तक कहा है कि आज हिंदुस्तान में यदि अपनी संस्कृति के प्रति आस्था है, उसके प्रति लगाव है, तो वह मर्यादा पुरुषोत्तम राम के आदर्श की महानता के कारण ही है:

न तो नाकूस से है और न एक शाम से है
हिंद की गर्मी-ए-हंगामा तेरे नाम से है
हो वह छोटों की इताअत बड़ों की शफकत
जिंदा दोनों की हकीकत तेरे पैगाम से है
नक्श-ए-तहजीब-ए-हुनूद अब भी नुमायां है अगर
तो वह सीता से है, लछमन से है और राम से है

मुनव्वर लखनवी आधुनिक युग के श्रेष्ठ शायरों में गिने जाते हैं। उन्होंने संस्कृत की कुछ पुस्तकों का उर्दू अनुवाद भी किया है। 'भगवान राम की अजमत' शीर्षक कविता में वे कहते हैं कि राम पौराणिक नहीं वरन यथार्थ पात्र हैं, क्योंकि उनकी चर्चा आज भी घर-घर होती है। उनके बताये मार्ग पर चलनेवाला मनुष्य ही आदर्श मनुष्य हो सकता है।

कौन कहता है मिथलाजी है जिक्रे पाक-ए-राम
आज तक जिनकी अजमत का हर इक दिल में कयाम
तजकरा जिनका रहा करता है घर-घर सुबहे-शाम
कारनामे जिनके हैं विरदे जबान-ए खास-आम

अब कोई राम नहीं, गम का धनुष जो तोड़े
जिंदगी तड़पती है, सीता के स्वयंवर की तरह

अब एक बढ़िया आधुनिक शॅम्पू आप के परिवार के हर सदस्य के लिए सचमुच किफायती दाम पर

एक सुन्दर अटूट बोतल में सुरक्षित और सुविधा दायक
Palmolive
FAMILY
Shampoo

नया पामऑलिव फॅमिली शॅम्पू

आज का शॅम्पू : बढ़िया और गाढ़ा यह नया पामऑलिव फॅमिली शॅम्पू न अधिक गाढ़ा है और ना ही ज्यादा पतला किसी भी प्रकार के पानी में भरपूर झाग पैदा करनेवाला।

हर एक के बालों की सुरक्षा : नया पामऑलिव फॅमिली शॅम्पू आप के परिवार के हर सदस्य के लिये विशेष प्रकार से उपयुक्त बनाया गया है, यह छोटे बच्चों के बालों के लिये कोमल है। आपके बालों को मुलायम और चमकदार बनाता है। बालों को बिना रूखापन दिये साफ करता है। आप के घरवालों के लिये भी योग्य।

सचमुच कम दाम पर : जी हाँ—नया पामऑलिव शॅम्पू आप के सम्पूर्ण परिवार के लिये अति सुख दायक, अच्छा और बढ़िया शॅम्पू—अन्य प्रकार के शॅम्पुओं से कम दाम पर।

पामऑलिव फॅमिली शॅम्पू—उत्तम शॅम्पू आप के परिवार के लिये

राम के जर्रों उसूलों पर जो आमिल हो गया
आदमी दुनिया में वह इनसान-ए-काबिल हो गया

जनाब कैफी देहलवी, पं. चकवस्त लखनवी, सलाम मछलीशहरी, अर्श मलसियानी आदि ने राम की जीवन-घटनाओं को आधार बनाकर कविताओं की रचना की है। हर परिस्थति में सम-भाव की प्रवृति राम के चरित्र की एक अद्‌भुत विशेषता है। सुख-दुःख हर्ष-विषाद सभी परिस्थितियों में वे सहज बने रहते हैं। राज्याभिषेक की सूचना मिलने पर न तो वे हर्षित ही होते हैं और न वनगमन की सूचना पर दुःखी ही। उनके लिए राजमहल और वनवास में कोई अंतर नहीं। चकवस्त की मार्मिक कविता 'रामायन एक सीन' में वनगमन के पूर्व राम अपनी माता कौशल्या को समझाते हैं :

अपनी निगाह है करम-ए-कारसाज पर
सहरा चमन बनेगा वह है मेहरबां अगर
जंगल हो या पहाड़, सफर हो कि हो हजर
रहता नहीं वह हाल से बंदे के बेखबर
इसका करम शरीक अगर है तो गम नहीं
दामान-ए-दश्त दामन-ए-मादर से कम नहीं

राम की विनम्रता इतनी कि शबरी के जूठे बेर खाते हुए राम कुपित लक्ष्मण से 'कैफी' के शब्दों में कहते हैं :

दौलत [illegible] शहंशाह राम है
सच्चे भगत का अपने वह लेकिन गुलाम है

यह विनम्रता और सम-भाव की प्रवृति राम के चरित्र का विशेष गुण तो है ही, साथ ही राम के भक्तों को भी, जिन्होंने आराधना द्वारा राम को पा लिया है, जिनके हृदय में राम का निवास है, किसी सांसारिक मोह-माया की आकांक्षा नहीं रह जाती और न ही उन्हें किन्ही दुःखों का भय सताता है। ब्रजलाल 'राना' ने अपनी कविता 'राम' ('रानाइयां' में संकलित) में उसी भाव को व्यक्त किया है :

मुझे कोई रोग सताये क्यों, मुझे कोई रंज रुलाये क्यों
मुझे खौफे-गर्दे इल्म नहीं, मेरे दिल की आंख में राम है
है घटा को बर्क की जुस्तजू, है हवा को सांस की आरजू
मुझे आरजू है न जुस्तजू, मेरे दिल की आंख में राम है

अर्श मलसियानी ने राम के वन से लौटने का बड़ा दिलकश चित्र अपनी कविता में खींचा है। उस समय के अयोध्या-वासियों के हृदय में उमड़ती भावनाओं का वर्णन अर्श ने इन शब्दों में किया है :

चौदह बरस के बाद जो आये वतन में राम
हर लब था वकफ नग्मा तो हर दिल था शाद काम।
थी रश्के नूर सुबह बनारस अवध की शाम
अहले अयोध्या की जुबां पर था ये कलाम

हुस्न [illegible] का काफिला सालार आ गया
वनवासियों की फौज का सरदार आ गया

इनके अतिरिक्त मुंशी सूरजनारायण मेहर ने तो 'मशनिब्यात मेहर' शीर्षक से पूरी रामायण ही लिखी है। मुंशी द्वारकाप्रसाद 'उफक' लखनवी ने 'सीता-स्वयंवर' लिखा। सागर निजामी, साहिर लुधियानवी, सीमाव अकबराबादी, खलीली, चंद्रसेन कमर आदि ने भी राम के जीवन पर आधारित कविताएं रची हैं।

परम-शक्ति के प्रति श्रद्धा

जनाब तिलोकचंद महरूम की कविता **जिस** बुलंदी तक पहुंची है, वह ऊंचाई **कम** ही कवियों को नसीब होती है। **राम,** कृष्ण, मसीह, गुरु नानक संबंधी **उनकी** कविताएं उर्दू में बड़ा विशिष्ट **स्थान** रखती हैं। श्रीराम से संबंधित **उनकी** कविताएं बड़ी उत्कृष्ट रचनाएं **हैं**। 'राम' नामक कविता में कवि ने राम **की** परम-शक्ति के प्रति अपनी हार्दिक **श्रद्धा** एवं अगाध प्रेम को प्रदर्शित करते हुए राम से संबंधित प्रत्येक वस्तु को **अत्यंत** पवित्र माना है:

मोहिनी सूरत तेरी दिल के सनमखाने में है
तू है दिल में या चिराग-ए-नूर काशाने में है
जो सुरूर-ए-जां फजानिश तसव्वुर में तिरे
वह न सागर में, न मीना में, न पैमाने में है
वह किताब-ए-पाक, जिक्रे खैर है जिसमें तेरा
गज-ए-राहत गोइया दुनिया के वीराने में है
रूह को मिलते हैं क्या-क्या ख्वाब-ए-जन्नत के मजे
किस कदर तासीर-ए-तस्कीं तेरे अफसाने में है

रामकथा के स्थापित रूपों में से आधुनिक साहित्य में ऐसे नव-प्रतीक उभरकर सामने आये हैं जिन्होंने वर्तमान परिवेश में जीवन को छूकर नव-सार्थकता सिद्ध की है। उर्दू के कुछेक कवियों ने भी इन्ही नव-प्रतीकों के माध्यम से सामयिक परिस्थितियों को व्याख्यायित करने का प्रयास किया है:

अंतर्यामी को मिलन अंतरज्ञानी जाये
सहबा जी वनवास से कोई राम न बनने पाये

—'सहबा' अख्तर

अब कोई राम नहीं, गम का धनुष जो तोड़े
जिंदगी तड़पती है सीता के स्वयंबर की तरह

—हसन कमाल

खींच दो अपने खूं से जमीं पर लकीर
इस तरफ आने पाये न रावण कोई
तोड़ दो हाथ गर हाथ उठने लगे
छूने पाये न सीता का दामन कोई
अब तुम्हीं राम, तुम्हीं लक्ष्मण साथियो...

—कैफी आजमी

इस प्रकार उर्दू कवियों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से बड़ी निष्ठापूर्वक राम का गुणगान करते हुए भारतीय संस्कृति के प्रतीक, इस महान आत्मा के प्रति अपनी श्रद्धा एवं प्रेम को अभि-व्य क्ति दी है।

—७५/३, मुलुंड कॉलोनी, बंबई-८२

परिवेश

हर सुबह
सूरजमुखी मोतियों को
बदलते देखा है
मैंने
आंसू की बूंद में
जिसके
शांत जल में
तिरता है अंधकार और
क्वांरी सुबह की
किसलयी
रक्तगंध-सी महमहाती
विश्वास के डंठल से बंधी
पखुरियों पर
आकाश खेलता रहता है
लेटा रहता है
जहां प्रखर पराग
'प्रणाम की मुद्रा' में
कंपा देते हैं मुझे
विसंगतियों के धृष्ट आलिंगन
और मेरे मन-फूल की
सीता-राधा-सी कलियां
सिहर उठती हैं
निथरता है व्यंग्य
मेरे युग-पुरुष का
लेकिन हुलाशन पर नहीं मैं बैठ पाती
बांसुरी से डाह करना भी नहीं आता मुझे

—पुष्पा पचौरी

८८७/३, पश्चिमी निमाड़गंज, जबलपुर-१

कविता मेरे अनुभव में परिवेश का परिचय है जो वर्जनाओं से मुक्त अपने अल्पतम दवाव में प्रत्येक क्षण का जीवन मूल्य तय करती है। कविता के सिलसिले में मेरा कथ्य केवल इतना ही है।

जन्म एक अधिकारी का

• मशकूर हुसैन 'याद'

२५ मार्च से २४ अप्रैल के मध्यवर्ती समय में आपके यहां कोई संतान हो जाए तो किसी संदेह के बिना आप समझ लें कि आपके घर एक बड़ा अधिकारी पैदा हो चुका है। उस दिन केवल नवजात के जन्म लेने की ही नहीं, उसके अफसर होने की मिठाई भी आप उसी समय खा और खिला सकते हैं।

इस अवधि में जन्म लेनेवालों की पहली विशेषता यह बतायी जाती है कि इनमें अत्यधिक प्रबंध-योग्यता की क्षमता होती है। आप किसी कार्यालय में चले जाए, मजाल है कोई कर्मचारी आपकी ओर नजर उठाकर देखें। आप हजार गिड़गिड़ाते और आंसू बहाते रहें, वह आपकी ओर कतई ध्यान न देगा। प्रत्येक कर्मचारी समझता है कि वह आपकी ओर ध्यान देगा तो उसका मूल्यवान समय, बल्कि सरकारी समय नष्ट हो जाएगा।

जब आप उसके हाथ पर कुछ रखेंगे तब ही उसे कोई जुंबिश होगी। हम शायद अफसरी प्रबंध-योग्यता के इतने कायल न होते, पर जब से हमें सिद्दीकी के साथ दो-चार बार दफ्तरों में जाने का संयोग प्राप्त हुआ तब से हम पूरी तरह कायल हो गये हैं। सिद्दीकी का हाल यह है कि वे मित्रों में बातों के दरिया बहाते रहते हैं। उनसे कोई पुस्तक पढ़वाकर देख लें, फर-फर पढ़ डालेंगे। कोई भाषण करा लें, इतने प्रवाह से भाषण देंगे कि आपके विस्मय की कोई सीमा न रहेगी। मेरा मतलब है, आप मंत्रमुग्ध होकर रह जाएंगे। एक समय पहली बार सिद्दीकी के साथ एक दफ्तर में गये। दफ्तर के कर्मचारी ने सिद्दीकी से पूछा, "आपका नाम ?" सिद्दीकी की ओर हमने देखा कि वह गुमसुम खड़े हैं। कर्मचारी ने पुनः उसी स्वर में पूछा। इस बार जो हमारी दृष्टि सिद्दीकी के चेहरे पर पड़ी तो हमें यों अनुभव हुआ जैसे शब्द उनके मुंह से निकलने के बजाय उनकी आंखों से निकलने का प्रयत्न कर रहे हैं। हमने स्थिति को नरम करने के लिए सिद्दीकी से कहा, "यार, बोलते क्यों नहीं ? यह क्या गंडेरियां चूस रहे हो ?" सचमुच सिद्दीकी अपने मुंह को यों आगे-पीछे कर रहे थे, जैसे कोई सख्त-सी गंडेरी उनके मुंह में आ गयी हो

और वह टूटने में नहीं आ रही।

यह पहली बार की घटना है। हमने सोचा, शायद कोई स्ंयोग था, नहीं तो सिद्दीकी कब चुप रहनेवाले इनसान हैं। पर दूसरी बार जब हमें उनकी दादी की पैंशन के संबंध में एक दफ्तर में जाना पड़ा, तब इस बार भी कर्मचारी के प्रश्न पर सिद्दीकी ने नमाज की नीयत बांध ली। वह प्रश्न कर रहा था और यह महाशय हाथ बांधे खड़े थे।

कहते हैं, इस समय मे पैदा होनेवाले अपने ऊपर किसी आलोचना को सहन नहीं करते। बस यही हाल हमारे अफसरों का है। आप उनकी प्रशंसा करते रहें, तो ये आप से प्रसन्न हैं। जहां जरा इनकी लापरवाहियों की ओर इशारा हुआ, समझ लें, इनसे बढ़कर शत्रु आपका कोई नहीं। वास्तव में इनका कहना यह है कि हम लोग अपने समय की क्रीम अर्थात मलाई होते हैं। हमारी खूब ठोंक,-बजाकर परीक्षा ली जाती है। हम एक प्रकार से देवताओं से भी अधिक पवित्र हो जाते हैं।

इस समय पैदा होनेवाले लोग अपने काम में किसी का हस्तक्षेप कतई पसंद नहीं करते, और फिर हर काम को विशिष्ट अंदाज में पूरा करते हैं। एक बार हमें अपने गांव से दस मील दूर एक जगह खास काम पड़ गया। हमारी अपनी तबीयत खराब थी। इसलिए हमने अपने खास नौकर ममूरा को इस काम के लिए चुना। ममूरा वैसे तो बहुत जल्दी हमारे आदेश का पालन कर देता था, पर करता था अपने विशिष्ट अंदाज में। उदाहरण के रूप में, घोड़े पर सवार होता तो बराबर से सवार होने के बजाय सदा गोड़े के सामने से सवार होता। पहले घोड़े की गरदन झुकाता और फिर छलांग लगाकर उसकी पीठ पर बैठ जाता, हालांकि इस प्रकार वह उलटा बैठता था और बाद में सीधा होने की कोशिश करता।...पर उस दिन जो हमने उसे ऐसा बैठते हुए देखा तो हमारे मुंह से हठात निकल गया, "यार मसूरे! यह क्या कर रहे हो? सीधी तरह बैठा करो।" हमारा यह कहना था कि ममूरा तत्काल घोड़े से उतरा और कहने लगा, "साहब! आप किसी दूसरे आदमी को भेज दें।"

हम एक सभा में बता रहे थे कि इस अवधि में जन्म लेनेवाले व्यक्तियों का घरेलू जीवन प्रायः असुखद व्यतीत होता।

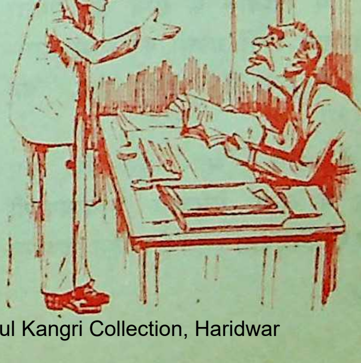

है। इसका कारण उनका जीवन-साथी उनको अच्छी तरह समझा नहीं पाता। यदि जीवन-साथी की ओर आश्वस्त होता है तो फिर बच्चों के कारण ये लोग परेशान रहते हैं। सभा में से एक महाशय बोले, "मान लें किसी की जन्म-तिथि इसी समय की है, उसकी न कोई पत्नी है और न बच्चे, फिर उसका घरेलू जीवन कैसा रहेगा ?" हम अभी उत्तर देनेवाले ही थे कि उस्ताद फनानी उल्लाह बोल उठे, "अरे यार ! जब न पत्नी है और न बच्चे, फिर घरेलू जीवन कहां का ?"

"क्यों ? पत्नी और बच्चों से ही घरेलू जीवन बनता है ?"

"नहीं, तो क्या मुरगा, मुरगी और उनके अंडों से घरेलू जीवन बनता है ?" उस्ताद फनानी अल्लाह ने जलकर कहा. एक दिन का जिक्र सुनिए। हम अपने महल्ले की गली से गुजर रहे थे कि दो बच्चे बहस करते नजर आये। उनमें से एक कह रहा था, "आज हमारे डैडी मम्मी से नहीं लड़ेंगे।" दूसरा कह रहा था. "हमारे डैडी मम्मी से अवश्य लड़ेंगे।" उस्ताद फनानी उल्लाह हमारे साथ थे। कहने लगे, "मैं विश्वास के साथ कह सकता हूं कि इन दोनों बच्चों का जन्म मार्च-अप्रैल में हुआ है।" हमने पूछा, "वह कैसे ?"

वे बोले, 'वह ऐसे कि इस समय में जन्म लेनेवाले भविष्यवाणी करने की विशेषता रखते हैं। जिस विश्वास से ये बच्चे [illegible] रहे हैं, उससे साफ प्रकट होता है कि इसके माता-पिता आपस में लड़ेंगे और दूसरे के नहीं लड़ेंगे।" हमने कहा, "छोड़िए उस्ताद, आखिर लड़ने का प्रश्न ही क्यों पैदा हो ? बच्चे वैसे ही आपसी बातचीत कर रहे हैं।" उस्ताद चहके, "लो साहब लड़ाई की बात कैसे न हो, यह तो हमारे पारिवारिक जीवन का अभिन्न अंग है।"

कहते हैं, इस समय में पैदा होनेवालों के मस्तिष्क नयी-नयी बातों और विचारों से भरपूर होते हैं। आविष्कार और सृजन-क्षमता इनके रग-रग में होती है; इसका प्रमाण है, अंगरेजी साहित्य का विश्व-प्रसिद्ध नाटककार शेक्सपियर! इनका जन्मदिन २३ अप्रैल है। यह नाटककार यदि जन्म लेने में जरा देर कर देता, तो बहुत संभव है वह नाटककार न होता, बल्कि नेता आदि प्रकार की चीज बन जाता, क्योंकि २४ अप्रैल के बाद से दूसरे प्रभावों का महीना शुरू हो जाता है। इस समय में पैदा होनेवाले लोग जन्म के मामले में भी खासी बुद्धिमानी का प्रदर्शन करते हैं! शेक्सपियर ने जब सोचा कि नये-नये विचारों की जन्म-अवधि समाप्त हो रही है, तो ऐन समाप्ति से एक दिन पूर्व जन्म ले लिया।

इस समय में जन्म लेनेवालों के बारे में एक दिलचस्प बात यह भी बतायी जाती है कि ये लोग जन्मजात झगड़ालू होते हैं। सभव है यह बात अपने मध्य स्थान

पर ठीक हो, पर हमारे पहलवान मित्र मिस्टर शेरा को हमने आज तक किसी से लड़ते नहीं देखा, हालांकि उनका जन्मदिन ३० मार्च है। इस पर उस्ताद फनानी उल्लाह कहने लगे, "तुम्हारा मित्र शेरा किसी दूसरे से क्यों लड़ने लगा जबकि वह अपने आपसे लड़ता रहता है?"

हमने पूछा "वह कैसे ?"

कहने लगा, "पहलवानी जो करता है।" परिणाम यह निकला कि इस समय में जन्म लेनेवाले लोगों के लिए आवश्यक है कि वह शारीरिक व्यायाम करते रहें ताकि उनमें किसी से लड़ने की हसरत पैदा न होने पाये।

एक महाशय बोले, "आपने फरमाया शेक्सपियर भी इसी समय में पैदा हुआ था। क्या वह भी झगड़ालू किस्म का आदमी था ? क्या वह भी अखाड़े में या घर पर व्यायाम करके अपने झगड़ालूपन का इलाज करता था ?"

हमने निवेदन किया, "भाई साहब ! शेक्सपियर को पहलवानी करने या व्यायाम करने की क्या जरूरत थी जबकि नाटकों में उसने अपने पात्रों को बहुत लड़ाया-भिड़ाया है ?"

कहते हैं इन लोगों के लिए लाल रंग के सभी शेड उत्तम रहते हैं। इनके स्वास्थ्य के लिए नींद बहुत लाभदायक है। नींद बुरी किसके लिए है ? हमने अपने आपसे प्रश्न किया। अंदर से उत्तर आया—'जिसको सांप काट जाए, उसके लिए नींद अति हानिकारक होती है—क्या समझे ?'

—अनु. : सुरजीत

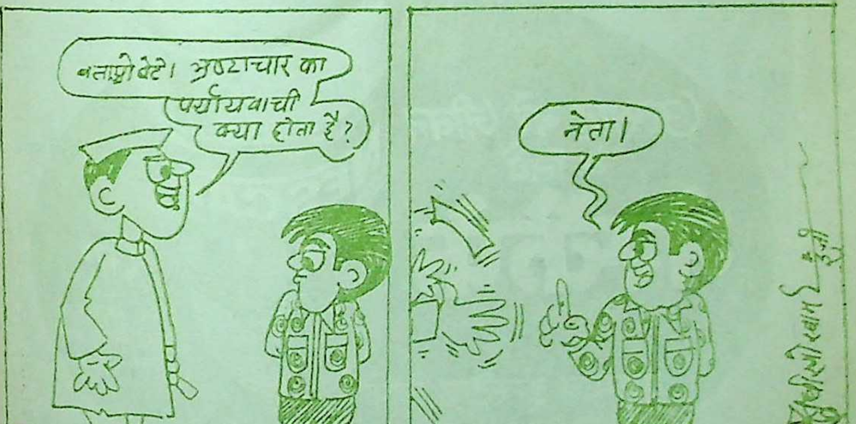
बताओ बेटे। भ्रष्टाचार का पर्यायवाची क्या होता है?
नेता।

Nestle
NESCAFE
instant coffee
उत्साह भरे जीवन
के लिये
नेस्कैफे®
दुनिया भर में सबसे
ज्यादा बिकने वाली
इन्स्टैन्ट कॉफी
एकमात्र इन्स्टैन्ट कॉफी
जो १००% शुद्ध कॉफी से बनी है
NB/CAB-278 HIN

नक्षत्र और आपका भविष्य

• पं. पुनर्वसु

पिछले अंक में हमने चंद्रमा के बारे में बताया था। इस बार मंगल और उसके प्रभाव की चर्चा करें। मंगल, मेष और वृश्चिक राशियों का स्वामी है। अभी हाल में वैज्ञानिकों को जहां वृश्चिक राशि है, वहां खूनी रंग की गैस का पता चला है। मंगल सेनानी ग्रह है, क्रूर और रूखा। मंगल जब शनि के विरोध में होता है तब बड़े उत्पात होते हैं। सन १९०८ में भारत में जो क्रांतिकारी हुए वे लगभग सभी के सभी मंगल के प्रभाव में थे। किसी व्यक्ति के जीवन में चलते अदालती झगड़ों और किसी देश में चलते युद्ध के बारे में मंगल की स्थिति देखकर फलादेश देना चाहिए। बच्चे की कुंडली में मंगल किसी भी स्थान में प्रबल हो तो उसे घाव आदि का खतरा रहता है।

क्रूरता का द्योतक

किसी भी जन्मचक्र में मंगल अगर प्रथम भाव अर्थात लग्न में हो तब ऐसा आदमी क्रूर स्वभाव का होता है। ऐसा आदमी खलनायक हो सकता है, सर्जन हो सकता है, पुलिस या मिलिट्री में हो सकता है। मंगल के प्रभाव से जाति का बंधन भी शिथिल होता है। मंगल का प्रभाव जननेंद्रिय पर भी माना गया है। मकर, कन्या और वृषभ का मंगल लग्न में हो तो प्रभाव अच्छा रहता है। लग्न में कर्क और सिंह के मंगलवाला व्यक्ति अपने प्रारब्ध के स्थान पर दैवयोग से उन्नति करता है। मिथुन, तुला में मंगलवाले व्यक्ति का स्वभाव काफी मिलनसार होता है। वृश्चिक, धनु, कुंभ व मीन में मंगल उलटा प्रभाव देता है। ऐसे लोग स्वार्थी होते हैं।

दूसरे भाव में मंगल

अगर मेष, सिंह या धनु का मंगल दूसरे भाव में हो तो आदमी तत्काल धन पाने की इच्छा से लाटरी, सट्टा

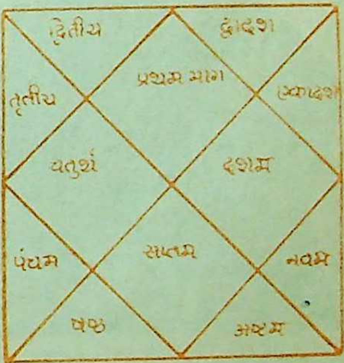

आदि में पैसा लगाता है। मिथुन और कर्क में इन्हें स्त्रियों द्वारा लाभ होता है। मीन लग्न में मंगल पुरानी जायदाद नष्ट करता है। तुला और कुंभ के मंगल से भूमि संबंधी लाभ होता है। अगर यह मंगल वृश्चिक का हो तब या तो पत्नी का निधन होता है या संबंध-विच्छेद होता है। मकर और कन्या में अकारण विभक्त रहना पड़ता है। इन राशियों में मंगल कामुकता भी खूब पैदा करता है।

तीसरे भाव में मंगल का फल

तीसरे भाव में मंगल व्यक्ति को त्यागी और पराक्रमी बनाता है। ड्यूक ऑव विंडसर का मंगल राहु के साथ तृतीय भाव में था। यहां मंगल किसी भी राशि का हो, शत्रु बढ़ाता है। मेष, मकर, वृश्चिक में यह मंगल भाइयों को दीर्घायु प्रदान करता है। वृषभ, कर्क, सिंह में भाइयों से संबंध अच्छे नहीं रहते। कन्या और धनु में इस मंगल द्वारा मां को कष्ट होता है, जबकि तुला में बहन कष्ट पाती है। कुंभ के मंगल से भाइयों द्वारा कोई लाभ नहीं होता है। मीन में ऐसा मंगल अवैध संबंध स्थापित करवाता है।

मंगल और पूर्वजन्म के बुरे कर्म

चौथे भाव का मंगल अगर मेष या वृश्चिक का हो, तो भूमि का सुख बहुत मिलता है। कर्क, मिथुन और तुला का मंगल

राष्ट्र का भविष्य उन पर निर्भर करता है...
उनका भविष्य आप पर निर्भर करता है...
उनको समृद्धि के पथ पर अग्रसर करिए
न्यू बैंक का पिगमी डिपाज़िट
आप या आपके बच्चे पिग्मी डिपाज़िट खाता एक रुपया प्रतिदिन मात्र से खोल सकते हैं। ६३ मास पश्चात आपको रु० २३५६.६४ मिलेंगे। रुपया आपके दरवाज़े से इकट्ठा किया जाता है।
दी न्यू बैंक आफ इंडिया लिमिटेड
पंजीकृत कार्यालय १, टालसटाय मार्ग, नई दिल्ली ११०००१
डी. आर. गन्डोत्रा
चेयरमैन
आर. श्रीनिवासन
ADMAN

मां के लिए भी भाग्यप्रद सिद्ध होता है। अन्य राशियों में मां की मृत्यु या फिर द्विभार्या-योग पैदा करता है। ऐसे लोग जन्मभूमि छोड़कर दूर जाने की इच्छा रखते हैं और यह इच्छा सफल भी होती है। इस स्थान पर मंगल कई बार पहले पुत्र की मृत्यु का कारक भी होता है। कहते हैं, लोगों के चतुर्थ स्थान में मंगल होता ही तब है, जब उन्होंने पूर्वजन्म में कुछ बुरे कर्म किये हों। किसी भी स्त्री या पुरुष की कुंडली में मंगल शुक्र के साथ हो तो वीर्य रजदोष होता है।

पांचवें भाव में मंगल

पंचम स्थान संतान का घर है। यहां मंगल अगर मिथुन अथवा अन्य स्त्री राशियों का हो तो संतान जीवित नहीं रहती। यहां मंगल पितृ-मृत्यु-योग भी पैदा करता है। मेष, सिंह, धनु में यह मंगल सेना की नौकरी देता है या फिर विमानचालन का काम। इसी तरह वृषभ, कन्या और मकर में मंगल भूमि संबंधी काम दिलाता है। मिथुन, तुला अथवा कुंभ में ऐसा मंगल व्यक्ति को फौजदारी कानून, वैद्यक आदि में पारंगत करता है। कर्क, वृश्चिक, मीन में मंगल खोज संबंधी काम दिलाता है, नृतत्त्व-शास्त्री बनाता है अथवा इतिहास के क्षेत्र में ख्याति देता है।

छठवां भाव—शत्रु स्थान

छठवां घर शत्रु-स्थान है। इस मंगल द्वारा नौकरों से तकलीफ होती है। छाती और फेफड़ों के रोग होते हैं। यहां मंगल किसी भी राशि का हो कामुकता बहुत होती है। मकर, मेष में इस मंगल के कारण आदमी नयी खोज करता है। वृषभ में मौसी विधवा हो जाती है। मिथुन, कन्या में तीखे पदार्थ खाने की इच्छा होती है। तुला, धनु आदि में स्त्री को रोग होते हैं। वृश्चिक, कुंभ में स्त्री को गर्भ नहीं ठहरता। मीन में कीर्ति पाने के लिए कठोर परिश्रम करना पड़ता है। मंगल गुप्त शत्रु बनाता है।

सातवें भाव में मंगल

सातवां घर विवाह-स्थान का द्योतक है। यहां मंगल किसी भी राशि का अशुभ माना गया है। यह मंगलीक दोष है। मेष, सिंह, वृश्चिक, मकर और कुंभ में अगर मंगल यहां हो तो एक से अधिक विवाह होते हैं। वृषभ, तुला में जातक अपनी पत्नी को खूब प्यार करता है। कर्क और मकर के मंगल द्वारा आदमी पैंतीस वर्ष के बाद उन्नति कर पाता है। कन्या अथवा कुंभ का मंगल विवाह में देर करता है। विवाह के बाद भाग्योदय होता है। मीन का मंगल सातवें भाव में बैठकर अस्थिरता पैदा करता है। सप्तम के मंगल से आदमी की कोई भी काम करने की इच्छा होती है, मगर व्यवसाय में सफलता नहीं मिलती।

मंगल और गुप्त रोग

आठवें स्थान का मंगल सामान्यतया गुप्त रोग देता है। यह मंगल अगर मेष या सिंह का हो तो ससुर का दिवाला निकल

आज़माइए और सुबूत पाइए:
किसी भी अन्य डिटर्जेंट टिकिया या बार से सुपर रिन की चमकार ज़्यादा सफ़ेद

किसी भी अन्य डिटर्जेंट बार से धोया हुआ
सुपर रिन से धोया हुआ

सुपर रिन नियमित इस्तेमाल कीजिए और अपनी आंखों देखिए आपके कपड़े कितने ज़्यादा सफ़ेद नज़र आते हैं. उन कपड़ों से कहीं ज़्यादा सफ़ेद जो आपने किसी अन्य डिटर्जेंट टिकिया या बार से धोये हैं. यह इसलिए कि सुपर रिन में अधिक सफ़ेदी लाने की शक्ति है. आज़माइए और सुबूत पाइए.

सुपर
रिन
डिटर्जेंट टिकिया

किसी अन्य डिटर्जेंट टिकिया या बार से अधिक सफ़ेदी की शक्ति से भरपूर
हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन.

जाता है। वृषभ, तुला में यह मंगल व्यभिचारी प्रवृत्ति पैदा करता है। यह मंगल अगर कर्क, वृश्चिक या मीन का हो तो संतान बहुत होती है। धनु, मकर में स्त्री का स्वभाव काफी विचित्र होता है। उसका सुख अधिक समय तक नहीं मिलता। इस मंगल के कारण रक्तचाप, लकवा आदि रोग भी हो सकते हैं। वृश्चिक या मीन का मंगल यहां हठयोग का अभ्यास करवाता है। कुंभ का मंगल आठवें घर में आदमी को राजनीतिज्ञ बनाता है।

नवें भाव में मंगल

नवम स्थान का मंगल कुछ-कुछ दुराचारी प्रवृत्ति पैदा करता है। अगर यह मंगल, मेष, सिंह, धनु, कर्क, वृश्चिक तथा मीन राशि में हो तो राजा की ओर से सम्मान मिलता है। वृषभ, मिथुन और कन्या तथा तुला में यह मंगल विद्वान मगर नास्तिक बनाता है। कुंभ में यह मंगल स्वेच्छाचारी बनाता है। ऐसा आदमी कायदे-कानून नहीं मानता। ऐसा आदमी दूसरे का नुकसान करने में नहीं चूकता। सामान्यत: नवम स्थान का मंगल क्रोध बहुत देता है। वृश्चिक, मेष में यह मंगल विदेश-यात्राएं भी कराता है। इस मंगल द्वारा भाग्योदय अट्ठाइसवें वर्ष से पूर्व नहीं होता।

माता-पिता के लिए अशुभ मंगल

दसवें स्थान का मंगल माता-पिता के लिए अशुभ माना गया है। इस मंगल के अशुभ फल उनकी मृत्यु तक का कारण बनते हैं। दशम में मंगल अगर गुरु के साथ बैठा हो तो आदमी अत्यधिक धनवान होता है। मेष, वृश्चिक में यह मंगल बड़ा अधिकार देता है। सिंह, धनु एवं कर्क में इस मंगल के कारण व्यक्तित्व बड़ा भव्य होता है। तुला, मीन में इस मंगल के कारण विद्वत्ता भी खूब होती है। मकर, कुंभ में इस मंगल के कारण सेना अथवा पुलिस में बड़ा अधिकार प्राप्त होता है। ऐसे लोग विपरीत योनि के प्रति विचित्र प्रकार का दृष्टिकोण रखते हैं। संतान एवं संपत्ति दोनों दृष्टियों से सुखी होने के बावजूद ऐसे लोगों का मन बराबर अशांत रहता है। मिथुन के मंगल से अकसर ऐसे लोग कुछ ऐसा व्यापार करते हैं जो लोकप्रिय बनाने के साथ-साथ इन्हें विपुल धन भी देता है।

बुध राजकुमार ग्रह है, जो सदा सूर्य और शुक्र के साथ या उसके आगे-पीछे होता है, इसलिए अधिकांशत: उसका प्रभाव सम्मिलित ही होता है। अगले दो-तीन अंकों में आपको गुरु, शुक्र और शनि के एकनिष्ठ प्रभावों के बारे में बताने के बाद हम ग्रहों के सम्मिलित ग्रहों के प्रभाव के बारे में प्रकाश डालेंगे।

ग्यारहवें भाव में मंगल की स्थिति

एकादश भाव में सिंह का मंगल बहुत

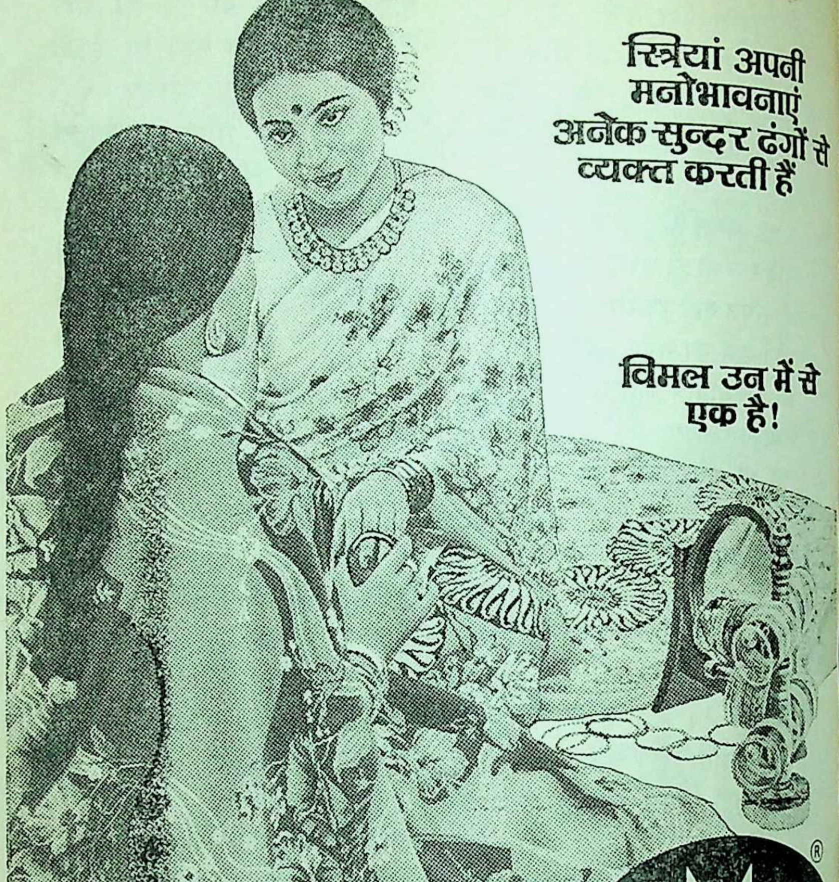
स्त्रियां अपनी
मनोभावनाएं
अनेक सुन्दर ढंगों से
व्यक्त करती हैं
विमल उन में से
एक है!
VIMAL®
A RELIANCE PRODUCT
१००% पॉलिएस्टर साड़ियां

अपने विमल विक्रेता से मांगिए: सारिका, रंगोली, डिवाइन ज्वेल, पॉलिएस्टर टिश्यू क्रे
और साथ ही निट गजी, गजी सिल्क तथा फ्रेंच शिफॉन भी।
® is the Registered trademark of Reliance Textile Industries Ltd.
SIMOES/RTI/S/2

बड़ा अधिकार-पद देता है। साथ ही भाई या मित्र का धन भी प्राप्त होता है। यह मंगल अगर मेष, धनु, मिथुन, तुला या कुंभ में हो तो संतान के लिए घातक सिद्ध होता है। ऐसे व्यक्तियों को संतान या तो होती नहीं या फिर जीवित नहीं रह पाती। हालांकि इस स्थिति में अन्य ग्रहों का प्रभाव भी देखना जरूरी है। यही मंगल अगर कर्क, कन्या, वृश्चिक में हो तो बड़ी कीर्ति देता है। स्त्रियों को यह मंगल अनेक रोग देता है। यही मंगल अगर मकर में हो तो डाक्टरों के लिए बड़ा लाभप्रद सिद्ध होता है। यही बात तुला के मंगल के बारे में भी कही गयी है। मीन का मंगल एकादश भाव में वकीलों को बहुत फलता है। ऐसे लोग वाद-प्रतिवाद में पारंगत होते हैं। मीन का मंगल अभियंताओं के लिए भी अनुकूल होता है। एक-दो ज्योतिर्विदों ने एकादश के मंगल को दत्तक योग से जोड़ने का प्रयत्न किया है, मगर दत्तक या गोद लिये जाने का योग दशम अथवा नवम के मंगल में ज्यादा फलीभूत होता देखा गया है।

बारहवें भाव या स्थान के मंगल को लगभग सभी विद्वानों ने अशुभ माना है। बारहवें भाव में अगर धनु का मंगल हो तो ऐसे व्यक्ति के साथ ही उसका वंश-क्षय हो जाता है। मेष, सिंह में भी इस मंगल के परिणाम अशुभ ही होते हैं। किन्हीं-किन्हीं विद्वानों ने द्वादश भाव के मंगल को माता की मृत्यु का कारक बताया है। उनके अनुसार अट्ठाइसवें वर्ष मां की मृत्यु के पीछे बारहवें घर का मंगल होता है। कर्क और मीन में यह मंगल कई रोग देता है और धन की दृष्टि से आदमी को बेहाल कर देता है। ऐसा व्यक्ति बहुत कामुक होता है, मगर साथ-साथ उदार भी। वृश्चिक का मंगल अगर बारहवें घर में हो तो आदमी क्रांतिकारी और महान त्यागी होता है। इस मंगल के कारण भाई की मृत्यु होती है। यह योग धन के मंगल में विशेष घटित होता है। वृश्चिक के मंगल के कारण भी वंश-क्षय होता है। बारहवें-स्थान का मंगल पत्नी से मनमुटाव पैदा करता है। मकर, कुंभ का मंगल बारहवें स्थान पर विष बाधा भी उत्पन्न करता है। सामान्यत: इस स्थान पर मंगल अशुभ फल ही देता है, सिर्फ मिथुन, तुला में ये अशुभ फल कम मिलते हैं। ●

गोबर से उपले, गोबर से खाद, गोबर से गैस और अब गोबर से स्याही। कैलीफोर्निया के एक वैज्ञानिक ने गोबर से स्याही बनाने का एक तरीका खोज निकाला है। डॉ. मैकेंजी नामक इन वैज्ञानिक महोदय ने बताया है कि गोबर को एक खास तापमान पर गरम करने से एक काला पाउडर मिलता है, जिससे स्याही ही नहीं, बल्कि टायर और भवन बनाने की सामग्री भी तैयार की जा सकती है।

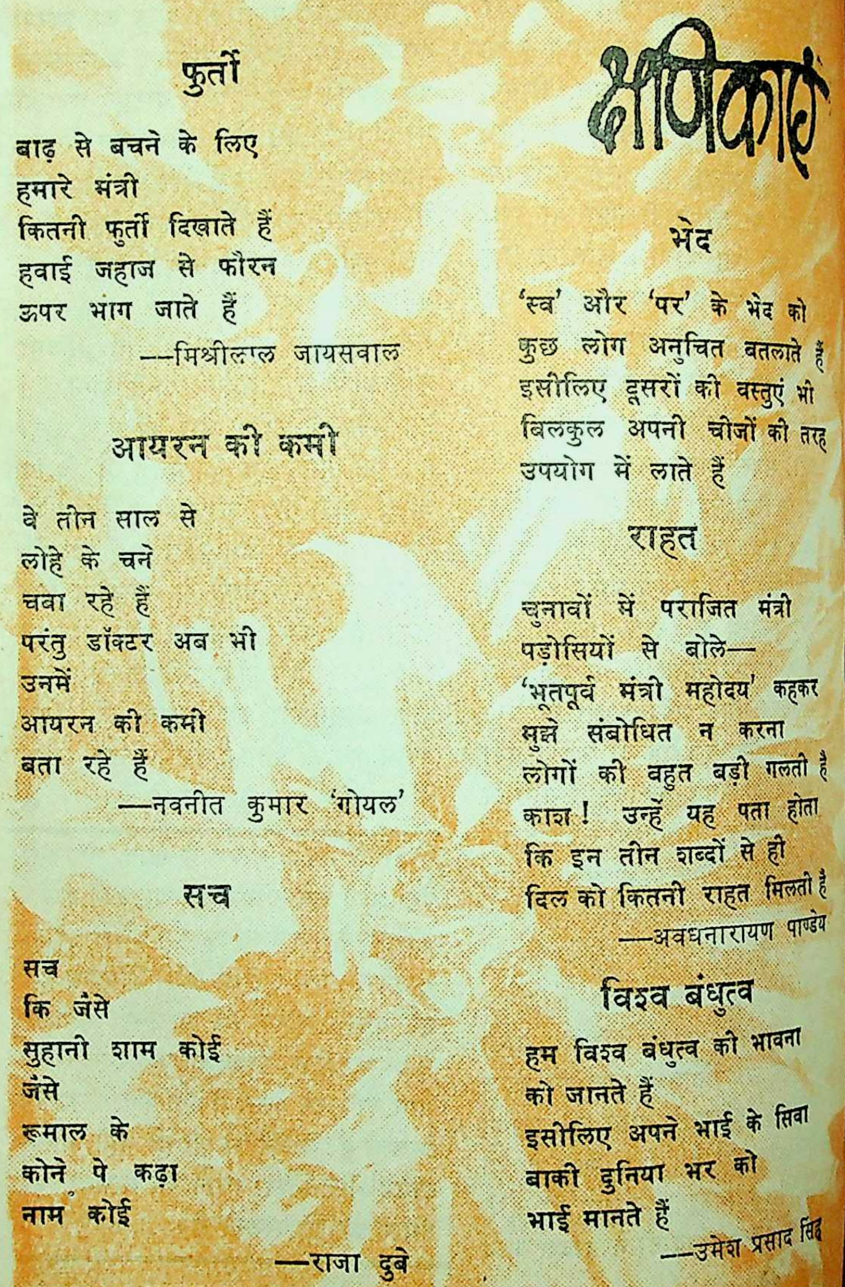

क्षणिकाएं

फुर्ती

बाढ़ से बचने के लिए
हमारे मंत्री
कितनी फुर्ती दिखाते हैं
हवाई जहाज से फौरन
ऊपर भाग जाते हैं

—मिश्रीलाल जायसवाल

आयरन की कमी

वे तीन साल से
लोहे के चने
चबा रहे हैं
परंतु डॉक्टर अब भी
उनमें
आयरन की कमी
बता रहे हैं

—नवनीत कुमार 'गोयल'

सच

सच
कि जैसे
सुहानी शाम कोई
जैसे
रूमाल के
कोने पे कढ़ा
नाम कोई

—राजा दुबे

भेद

'स्व' और 'पर' के भेद को
कुछ लोग अनुचित बतलाते हैं
इसीलिए दूसरों की वस्तुएं भी
बिलकुल अपनी चीजों की तरह
उपयोग में लाते हैं

राहत

चुनावों में पराजित मंत्री
पड़ोसियों से बोले—
'भूतपूर्व मंत्री महोदय' कहकर
मुझे संबोधित न करना
लोगों की बहुत बड़ी गलती है
काश! उन्हें यह पता होता
कि इन तीन शब्दों से ही
दिल को कितनी राहत मिलती है

—अवधनारायण पाण्डेय

विश्व बंधुत्व

हम विश्व बंधुत्व की भावना
को जानते हैं
इसीलिए अपने भाई के सिवा
बाकी दुनिया भर को
भाई मानते हैं

—उमेश प्रसाद सिंह

नयी कृतियां

'क्रांति का उद्घोष' : स्वर्गीय गणेश-शंकर विद्यार्थी के सन १९१९ में सन १९२५ के बीच लिखे गये लेखों का महत्त्वपूर्ण संग्रह है। इनसे न केवल हमें भारतीय स्वाधीनता-संग्राम के एक नाजुक दौर के इतिहास का पता चलता है, वरन उनसे स्वर्गीय विद्यार्थीजी के प्रखर चिंतन एवं उनके निर्भीक व्यक्तित्व की भी झलक मिलती है।

'क्रांति का उद्घोष' में संकलित लेख समकालीन महत्त्व के तत्कालीन ज्वलंत प्रश्नों को लेकर लिखे गये थे, लेकिन उनमें व्यक्त विचारों की सार्वकालिक उपयोगिता है, क्योंकि कुछ प्रश्न ऐसे हैं, जो सहज मानवीय दुर्बलताओं से जुड़े हुए हैं। कुछ ऐसे प्रश्न हैं, जो देश के सामाजिक-राष्ट्रीय जीवन को स्वाधीनता-पूर्व के समय से ही विषाक्त किये हुए हैं, जैसे सांप्रदायिकता का प्रश्न, सार्वजनिक जीवन में सदाचार का प्रश्न, राष्ट्रीय एकता का प्रश्न, देश की गरीबी का प्रश्न इत्यादि।

७ अप्रैल, सन १९२४ को लिखे गये 'सार्वजनिक सदाचार' शीर्षक लेख में वे लिखते हैं—'हम लोगों की ऐसी धारणा हो गयी है कि वैयक्तिक जीवन में साधुता और सत्यपरायणता अच्छी और प्रशंसनीय वस्तुएं हैं। परंतु राजनीतिक जीवन में यदि इनका सहारा लिया जाए, तो वे प्राणघातक सिद्ध होती हैं।' फिर वे प्रश्न करते हैं, 'साधारण सदाचार-शास्त्र के सिद्धांत और राजनीतिक अथवा सार्वदेशिक सदाचार-शास्त्र के सिद्धांतों में भेद क्यों? जो बात एक व्यक्ति के लिए बुरी समझी जाती है, वह राष्ट्र के लिए क्यों बुरी नहीं समझी जाती?' अंत में अनेक उदाहरणों द्वारा अपनी बात स्पष्ट करने के बाद वे उत्तर-स्वरूप लिखते हैं, 'मानव-विकास की अपूर्णता के कारण हम सामाजिक और वैयक्तिक, अंतर्सामाजिक और अंतर्राष्ट्रीय सदाचार-शास्त्र को भिन्न-भिन्न वस्तुएं समझने लगे हैं। आत्मीयता के अभाव के कारण अंतर्राष्ट्रीय जगत में लड़ाई के काले बादल उठा करते हैं। वैयक्तिक सदाचार और राजनीतिक आचार के बीच एक घृणास्पद विभिन्नता का साम्राज्य है। इसका कारण है, आत्मीयता का अभाव, अपने वृत्त की परिधि का संकुचित होना और अति-भौतिक आत्म-तुष्टि की आकांक्षा।'

इसी तरह एक विशेषांक के लिए लिखे गये 'राष्ट्र का निर्माण' शीर्षक लेख में उन्होंने देशहित के लिए युवकों को आगे आने का जो आह्वान किया है, वह आज भी उतना ही प्रेरणास्पद है, जितना ६४ वर्ष पूर्व था।

कभी कभी आप चाहते हैं आपकी ममी ने
सुपरस्टिच इस्तेमाल किया होता

न केवल ऐसी परेशानी
से बचाने के
लिए...

बल्कि
पेटी के लूप बनाने
बटन टाँकने
बटन के काज बनाने
बखिया करने
रफ़ू करने
कढ़ाई करने
मशीन की सिलाई करने
आदि हर काम के लिए भी

सचमुच यह आपकी ममी का सच्चा मित्र है-
और बच्चों को भी परेशानी से
बचाने वाला... सुपरस्टिच धागों की नई [illegible]
जिसकी कार्यकुशलता और उत्कृष्ट [illegible]
जो सिलाई व रफ़ू के लिए सर्वोत्तम है-
सुपरस्टिच धागों का रंग पक्का होता है-
सुपरस्टिच धागे मजबूत और टिकाऊ होते हैं-
सुपरस्टिच धागे अनेकानेक रंगों और रीलों में मिलते हैं-
हर गृहिणी को सुपरस्टिच धागे अपने पास रखने चाहिए

लीजिए सुपरस्टिच
सर्वोपयोगी मोदी धागे
४० से अधिक देशों में मिलते हैं

सर्वसार उपनिषद : आचार्य रजनीश के सत्तरह प्रवचनों का संग्रह है । ये प्रवचन आज से सात वर्ष पूर्व माथेरान में आयोजित साधना-शिविर के दौरान दिये गये थे। कई कारणों से आचार्य रजनीश एवं उनके द्वारा समय-समय पर व्यक्त किये गये विचार विवादों का विषय बन गये हैं, लेकिन उनके प्रवचनों को ध्यानपूर्वक पढ़ने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उन्होंने न केवल पौर्वात्य वरन पाश्चात्य के अनेक नये-पुराने ऋषियों-दार्शनिकों के विचारों का मंथन कर उन्हें ही एक बोधगम्य भाषा-शैली में बड़ी सहजता से प्रस्तुत किया है।

इस पुस्तक में 'प्रार्थना के बाद जिज्ञासा' शीर्षक प्रथम अध्याय में वे जाग्रति, स्वप्न, सुषुप्ति की अवस्थाओं में एवं अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय तथा आनंदमय कोषों की चर्चा करने के बाद जीवात्मा, परमात्मा, माया-जैसे सनातन प्रश्न उपस्थित करते हैं और फिर उनका समुचित उत्तर भी देते हैं। दूसरे अध्याय में वे अपने सक्रिय ध्यान की विधि एवं उसका महत्त्व समझाते हैं। वे अपनी साधना में उपयुक्त 'हू' शब्द का महत्त्व बतलाते हुए कहते हैं कि 'हू' के जोर से उच्चारण पर कुंडली पर, मूलाधार पर चोट पड़ती है। आचार्य रजनीश की खूबी यह है कि उन्होंने अपनी सारी साधना को न केवल वैज्ञानिक आधार दिया है, वरन उसे साधक को अच्छी तरह समझाया है। 'आत्मा की अवस्थाएं' में वे चेतना की चार अवस्थाओं, जिनमें एक स्वप्न भी है, की विस्तृत व्याख्या करने के बाद कहते हैं—'सुषुप्ति में जगनेवाला व्यक्ति तुरीय को उपलब्ध होता है—और ध्यान इसमें सहायक होता है।' अगले अध्याय में तुरीय के बारे में बतलाने के बाद वे उससे अगले अध्याय में पंचकोषों की जानकारी देते हैं। शेष अध्यायों में वे सुख-दुःख के स्वरूपों, अज्ञान की पांच ग्रंथियों, चेतना के तीन रूपों, परब्रह्म-लक्षण आदि पर अपनी सारगर्भित भाषा-शैली में प्रकाश डालते हैं। अपने समस्त प्रवचनों में श्री रजनीश ने अंतर्यात्रा पर बहुत जोर दिया है। वे निकटता पर भी जोर देते हैं, क्योंकि इस निकटता में चेतना एक-दूसरे में आरपार जाने लगती है और बीच के स्तर घुल जाते हैं।

—दुर्गाप्रसाद शुक्ल

'क्रांति का उद्घोष'

क्रांति का उद्घोष—गणेशशंकर विद्यार्थी की कलम से (द्वितीय खंड)

प्रधान संपादक—राधाकृष्ण अवस्थी, प्रकाशक—गणेशशंकर विद्यार्थी स्मारक शिक्षा समिति, पांडुनगर कानपुर–५, पृष्ठ—१०१९, मूल्य–२५०रु०

सर्वसार उपनिषद्

लेखक—आचार्य रजनीश, संपादक—मा आमृत साधना, प्रकाशक—रजनीश फाउंडेशन्स, १७ कोरेगांव पार्क, पूना-११४००१, पृष्ठ—३२९ मूल्य—६० रु.

ज्ञान-गंगा

रत्नैर्महाब्धेस्तुतुषुर्न देवा, न भेजिरे
भीमविषेणा भीतिम्
सुधां बिना न प्रययुर्विरामं, न निश्चिता-
र्थाद्विरमन्ति धीरा:

—समुद्र-रत्नों को पाकर ही देवता लोग संतुष्ट नहीं हो गये और न भयंकर विष पाकर भयभीत ही हुए। समुद्र-मंथन का प्रयत्न नहीं छोड़ा, अमृत पाकर ही विश्राम लिया। अर्थात धीर मनुष्य अपने निश्चित उद्देश्य को प्राप्त किये बिना प्रयास नहीं छोड़ते हैं।

विद्या मित्रं प्रवासेषु भार्या मित्रं गृहेषु च
व्याधितस्यौषधं मित्रं धर्मो मित्रं मृतस्य च ।।

—प्रवास में विद्या मित्र है, घर में भार्या मित्र है, रोग में औषध मित्र है और मृतक का मित्र धर्म है।

अभ्यासाद्धार्यते विद्या कुलं शीलेन धार्यते।
गुणेन ज्ञायतेत्वार्यः कोपो नेत्रेण गम्यते।।

—अभ्यास से विद्या की, शील से कुल की, गुणों से आर्य पुरुषों की रक्षा होती है और नेत्रों से क्रोध की परख होती है।

उत्थानं संयमोदाक्ष्यमप्रमादो धृतिः स्मृतिः
समीक्ष्य च समारम्भो विद्धि मूलं भवस्य तु

—उद्योग, इंद्रियों का निग्रह, चतुरता, सावधान रहना, धैर्य रखना, स्मरण करना और विचारकर कार्य आरंभ करना—यही सब ऐश्वर्य के मूल (कारण) हैं।

—प्रस्तोता : महर्षिकुमार पांडेय

भीतर सांकल : बाहर सांकल : हिंदी में 'गीत' को जिन नवगीतकारों ने पुनः प्रतिष्ठा दी है, उनमें कुंअर बेचैन का विशिष्ट स्थान है। उनके गीतों में एक ऐसी अकुलाहट है, जिसे पाठक अपनी अकुलाहट पाता है और इसलिए उनसे उसका सहज तादात्म्य स्थापित हो जाता है। यह तथ्य कि अब आदमी का एहसास मर गया है और भौतिक सुखों की प्राप्ति के लिए आज के व्यक्ति ने अपनी तमाम संवेदनाओं और अनुभूतियों की बलि चढ़ा दी है, अभी भी जिन लोगों को व्यथित करता है, उनमें गीतकार भी एक है तथा इस संकलन की अधिकांश कविताओं में इसका दर्द अपनी समूची तीव्रता के साथ व्यक्त हुआ है। कुंअर बेचैन के गीतों की अपनी एक भाषा है, शैली है, जो उनके गीतों को विशिष्टता प्रदान करती हैं।

—प्रभा भारद्वाज

भीतर सांकल, बाहर सांकल
लेखक—कुंअर बेचैन, प्रकाशक—प्रगीत प्रकाशन, १३३, पुलिस चौकीवाली गली, सुभाष द्वार, गाजियाबाद

दुनिया जिसे कहते हैं
जादू का खिलौना है
मिल जाए तो मिट्टी है
खो जाए तो सोना है
—निदा फाजली

सार-संक्षेप

१०८४ वें की माँ

महाश्वेता देवी

सुबह

बाईस साल पहले की एक सुबह! सपने में सुजाता वहीं लौट गयी थी। अकसर ऐसा ही होता है; कितनी बार ऐसे ही लौट जाती है, अपने-आप बैग में सामान समेटती है—तौलिया, साड़ी, टूथब्रश, साबुन। अब सुजाता की उम्र है तिरपन। सपने में वह बत्तीस वर्ष की सुजाता को देखती है, जो बैग समेटने में व्यस्त है। गर्भ के भार से ढीला शरीर, लेकिन तरुणी सुजाता अपने बेटे व्रती को इस दुनिया में लाने की तैयारी में व्यस्त है। सुजाता—सपने की सुजाता।

●●

दर्द भयंकर होता जा रहा था। बच्चा कभी भी जन्म ले सकता है, जानकर ही सुजाता पहले से ही नर्सिंग होम में दाखिल हो गयी थी। ज्योति तब दस का था, नीपा आठ और तुली छह की। उसे याद है, सास तब उसके पास ही रह रही थीं। ज्योति के बाबूजी, सासजी के इकलौते पुत्र थे। एक बच्चे के जन्म के बाद ही सास विधवा हो गयी थीं। सुजाता का बार-बार मां बनना उनको सुहाता न था।

सुजाता के पति कहते थे, 'मां का मन बहुत नरम है, समझी? उनसे यह सब देखा नहीं जाता—यह दर्द-वर्द, चीखना-चिल्लाना, और क्या!' लेकिन सुजाता शायद ही कभी चीखी-चिल्लायी। सदा दांत भींचकर बच्चों का बंदोबस्त भी करती। यही सोचकर दिव्यनाथ ने सुजाता का कोई बंदोबस्त नहीं किया।

नर्सिंग होम में चली गयी थी सुजाता। डॉक्टर का चेहरा उसको देखकर चिंताग्रस्त हो गया था। सुजाता डर गयी थी। उसने पूछा था, 'ऐम आई ऑल राइट?'

'आप सोइए न! मैं जो हूं। अकेली क्यों आयीं?'

'वह नहीं हैं।'

कहकर ही सुजाता हैरान रह गयी थी। दिव्यनाथ कभी साथ नहीं आते; सुजाता को अस्पताल नहीं ले जाते; बच्चे का रोना सुनना पड़ेगा—इससे तिमंजिले पर ही सोते रहते।

नौ महीने तक शायद इसीलिए अपने-आप को जाने कितनी अश्लील और अपवित्र मानती रही थी वह! लेकिन जैसे

व्रती—कलकत्ता के एक सुसंपन्न परिवार का युवा पुत्र जो समाज में व्याप्त असमानता और भ्रष्टाचार से क्षुब्ध होकर हिंसात्मक क्रांति में विश्वास रखनेवाले नक्सलपंथियों की ओर आकर्षित हुआ। उसने अपने साथियों के साथ दीवारों पर नारे लिखे, परचे बांटे और एक दिन अपने साथियों सहित महल्लेवालों द्वारा मार दिया गया। इस सारे कांड के प्रति पुलिस तटस्थता का भाव अपनाये रही।

बंगला की सुप्रसिद्ध लेखिका महाश्वेता देवी ने अपने उपन्यास '१०८४वें की मां' में उन्हीं स्थितियों के शिकार कुछ लोगों की कथा का मर्मस्पर्शी चित्रण किया है। यहां है, इसी उपन्यास की संक्षिप्त कथा। हिंदी अनुवाद के प्रकाशक हैं—राधाकृष्ण प्रकाशन अंसारी रोड, नयी दिल्ली।

ही पता लगा कि बच्चे की जीवन संकट में है, तभी मन ममता से छटपटा उठा था। सुजाता ने डॉक्टर को बुलाया था, कहा था, 'ऑपरेशन कीजिए, बचाइए उसको।'

'वही तो कर रहा हूं।'

डॉक्टर के निर्देश से नर्स ने इंजेक्शन दिया। सुजाता के पेड़ू को चीरता हुआ दर्द अंदर-बाहर हो रहा था। सोलह जनवरी की सारी रात दर्द रहा था। सत्रह जनवरी, भोर के धुंधलके में व्रती आ पहुंचा था। आज वही सत्रह जनवरी है।

●●

टेलीफोन की घंटी बज रही है, ज्योति के कमरे में दो साल पहले। उस दिन के बाद से ही ज्योति टेलीफोन अपने कमरे में ले गया था। ज्योति, उनकी पहली संतान—दिव्यनाथ का आज्ञाकारी बेटा, विनी का सहृदय पति, सुमन का स्नेहिल पिता।

समझदार ज्योति! दो साल पहले सुजाता ने इक्यावनवां साल पूरा किया था, ज्योति के पिता ने छप्पनवां। संपन्न स्थिति, सजा-संवरा जीवन दोनों का।

उसी समय, उम्र के उन्हीं सजे-संवरे दिनों में, टेलीफोन की घंटी बजी थी। मां ने नींद-भरी आंखों से टेलीफोन का रिसीवर उठाया था। अचानक एक अनजान, ठंडी, मशीनी अफसरी स्वर ने पूछा था, 'व्रती चटर्जी आपका कौन लगता है? बेटा? कांटापुकूर चले आइए!'

दो साल पहले, सत्रह जनवरी की सुबह, व्रती के जन्मदिन के दिन—व्रती के धरती पर आने के समय ही—इस साफ-सुथरे, सजे-सजाये घर में, इस सुंदर परिवार में, टेलीफोन की खबर ही की तरह एक अहेतुक, बेहिसाब, बेतरतीब घटना घटी थी।

तीन महीने बाद सुजाता ने फिर से बैंक जाना शुरू किया। फिर से ज्योति, नीपा, तुली से सहज होकर बोलने लगी। अचानक एक दिन सुजाता का ध्यान इस बात पर गया कि टेलीफोन उसके कमरे से हटा दिया गया है।

यह देखते ही उसके माथे पर बल पड़ गये थे। अब तो कोई फोन नहीं आयेगा।

ये लोग ऐसा कोई भी जोखिम-भरा खतरनाक काम नहीं करेंगे, जिसके लिए अचानक टेलीफोन आ पहुंचेगा और सुजाता को अचानक मार्ग में गिरते-पड़ते कांटापुकूर जाना पड़ेगा!

ये लोग ऐसा कोई भी अपराध नहीं करेंगे जिससे कांटापुकूर में चित होकर पड़े रहना पड़ेगा। आफिसर कमांडिंग पूछेगा, 'क्या अपने बेटे की शिनाख्त कर पा रही हैं अब?'

ये समझदार हैं! नियम, उप-नियम मानकर चलते हैं; भले नागरिक हैं। ये लोग सुजाता को मुसीबत में नहीं डालेंगे। ज्योति के पिता को दौड़धूप करने के लिए विवश नहीं करेंगे। सच तो यह है कि उनका बेटा ऐसी कलंकित मौत मरा है, इस खबर को दबाने के लिए ही ज्योति

के बाबूजी जाने कहां-कहां सिफारिश का तुक्का भिड़ाते फिर रहे थे।

उस दिन व्रती के साथ-साथ सुजाता की चेतना में व्रती के बाबूजी भी मर गये! व्रती के बाबूजी के उस दिन के बरताव से उसकी पूरी चेतना पर वज्रपात हुआ था; सब-कुछ हिल गया था, झरझराकर टूट के बिखर गया था सब!

दिव्यनाथ की दौड़-धूप सफल हुई थी। सिफारिश का तुक्का भिड़ गया था। दूसरे दिन अखबार में सिर्फ चार लड़कों की हत्या की खबर निकली थी; नाम भी निकले थे उनके। व्रती का नाम कहीं नहीं था!

गोरा, दुबला व्रती—रेशम की तरह मुलायम बाल, आंखों में भरी ममता।

वही व्रती। मुक्ति-दशक (उग्रवादी वामपंथियों द्वारा मई १९७० से चलाया गया आंदोलन।) में एक हजार तिरासी जनों के बाद चौरासी नंबर पर उसका नाम है। अगर कोई इस दशक के ढाई सालों में हत्या किये गये लड़कों के नामों की सूची बनाये तो क्या उसको व्रती का नाम कहीं मिलेगा? अखबारों को छान मारने पर भी तो वह व्रती को नहीं जान पायेगा। व्रती के बाबूजी ने उसका नाम अखबार में भी नहीं आने दिया।

●●

'व्रती की कौन लगती हैं?'

'कोई आइडेंटिफिकेशन मार्क?'

'गरदन पर लहसुन है'

'नहीं, चेहरा देखने की जरूरत नहीं।'

उसने क्या जवाब दिया था? 'मैं देखूंगी!' नीली कमीज, उंगलियां, बाल—सब-कुछ देख लेने पर भी मन में संशय बना हुआ था।

उसकी छाती, पेट और गरदन पर गोलियों के तीन निशान थे। नीले गड्ढे। व्रती का चेहरा। व्रती का चेहरा! सुजाता ने पूरा जोर लगाकर दोनों हाथों से चादर हटा दी। व्रती का चेहरा। किसी तेज और भारी औजार के पिछले हिस्से से मार-मारकर कुचला हुआ व्रती का चेहरा! पीछे से तुली की चीख।

●●

डरता था व्रती, बहुत डरता था। बेहद कल्पनाशील बच्चे-जैसे डरते हैं। अब व्रती सब डरने-न-डरने के परे है।

●●

सुजाता बड़े घर की लड़की है। बेहद रूढ़िवादी परिवार है उसका। लॉरेटो में पढ़ना, बी० ए० पास करना—यह सभी कुछ विवाह के लिए किया गया था। लड़के की हालत खास अच्छी नहीं है—जानते हुए भी, बड़े घर के लड़के दिव्यनाथ से उसकी शादी कर दी गयी।

व्रती दिव्यनाथ को सह नहीं पाता था, यह सुजाता को मालूम था। अच्छी तरह पता था।

'क्यों व्रती, ऐसा क्यों?'

'दिव्यनाथ चटर्जी एक व्यक्ति था

एक इकाई के रूप में मेरे शत्रु नहीं है।

'फिर ?'

'उनका जिन चीजों, जिन मूल्यों पर विश्वास है उन्हीं पर और भी कितने लोगों का विश्वास है। इस मूल्य-बोध को जो पाल-पोस रहा है वही वर्ग हमारा शत्रु है। वे उसी वर्ग के हैं।'

'जाने क्या-क्या कहता है तू; मुझे समझ नहीं आता कुछ।' व्रती कुछ नहीं बोला था—सिर्फ आंखें मिचमिचाकर हंस दिया था। उसके हंसने, बोलने के तरीके में जाने क्या चीज बार-बार झलकती थी—सहनशीलता, धीरज। सुजाता को महसूस हो रहा था कि धीरे-धीरे व्रती अजनवी बनता जा रहा है, उसकी पहचान से परे होता जा रहा है।

क्यों उसे यह अहसास नहीं हुआ था कि जब बेटा धीरे-धीरे मां की पहचान के परे होता जाता है, एक घर में रहते हुए भी जुड़े रहने के सूत्र टूट जाते हैं तब किसी भी दिन भयंकर विपदा आ सकती है? व्रती के कमरे में खड़ी हो सुजाता भौंहें सिकोड़कर यह सब सोचती रही थी।

व्रती अगर सुजाता के भैया की तरह कठिन बीमारी भुगतकर मरता तो मरने के बाद कुछ प्रश्न रह जाते मन में। व्रती अगर दुर्घटना में मरता तो मन में सवाल उठते—दुर्घटना से बचा जा सकता था या नहीं? व्रती जरा संभल जाता, तो क्या होता। पर व्रती तो इनमें से किसी भी श्रेणी में नहीं टिकता। उसका अपराध बस इतना ही था कि इस समाज, इस व्यवस्था पर से उसका विश्वास उठ गया था। उसे एहसास हुआ था कि जिस रास्ते पर समाज, राष्ट्र चल रहा है, उस रास्ते से मुक्ति नहीं मिलेगी। अपराध उसका

महाश्वेता देवी

ढाका में १४ जनवरी, १९२६ में जन्म, पिता मनीष घटक बंगला के सुप्रसिद्ध लेखक। शांति-निकेतन में प्रारंभिक शिक्षा के उपरांत कलकत्ता विश्वविद्यालय से अंगरेजी साहित्य में एम. ए.। संप्रति : कलकत्ता के एक महाविद्यालय में प्रवक्ता-पहली पुस्तक 'झांसी रानी' सन १९५६ में और पहला उपन्यास 'नटी' सन १९५७ में प्रकाशित। अब तक पैंतीस उपन्यास, दो कहानी-संग्रह, बच्चों के लिए कुछ पुस्तकें तथा कुछ बंगाली पाठ्य-पुस्तकें प्रकाशित।

इतना ही था कि उसने सिर्फ नारे लिखे ही नहीं, उन पर विश्वास भी किया था !

व्रती ने नारे लिखे थे। पुलिस ने जब उसके कमरे की तलाशी ली थी तब सुजाता ने नारों की लिपि और इबारत देखी थी। व्रती की ही लिखाई थी।

'क्योंकि जेल ही हमारा विश्वविद्यालय है।'

'बंदूक की नली से ही . . .।'

'यह दशक मुक्ति के दशक में बदल रहा है।'

इबारत सुनी थी सुजाता ने—व्रती-जैसे लोग पहले ऐसी ही इबारतें लिखते हैं, फिर दीवारों पर इन्हें उतारते हैं।

व्रती-जैसे लोग ऐसे ही एक नयी जात के लड़के हैं। नारे लिखने पर सनसनाते हुए कारतूस आयेंगे—यह जानते हुए भी व्रती-जैसे लोग नारे लिखते रहते हैं—कांटापुकूर पहुंचने को जल्दी मचाते हैं!

सुजाता तो चाहकर भी व्रती को किसी अपराधी की श्रेणी में नहीं डाल सकी।

● ●

व्रती के लिए ज्योति और दिव्यनाथ ने उसे समझाया था— इस समाज में बड़े-बड़े हत्यारे हैं जो खाने की चीज़ों में, दवाइयों में, बेबीफूड में मिलावट करते हैं, वे जिंदा रह सकते हैं। इस समाज में नेता लोग निहत्थे गांववालों को पुलिस की गोली के सामने धकेलकर

एक युगान्तरकारी उपन्यास

मुजरिम हाज़िर

(दो खण्डों में सम्पूर्ण)

बंगला के सुप्रसिद्ध उपन्यासकार विमल मित्र का एक बेहद रोचक और हृदयग्राही बृहद् उपन्यास जिसमें आज के सामाजिक जीवन का विशाल कैनवास पर यथार्थ चित्रण हुआ है। अपनी लोकप्रियता के कारण कलकत्ता में बंगला रंगमंच पर लगातार प्रदर्शित। नयनाभिराम डिमाई आकार। मूल्य प्रथम खंड ३५/- द्वितीय खंड ४०/- डाक व्यय ५/-

विशेष रियायत : ७०/- अग्रिम भेजकर रजिस्टर्ड डाक से घर बैठे प्राप्त करें।

श्री विमल मित्र

—विमल मित्र के अन्य उपन्यास—

* लज्जाहरण १०/- * गवाह नम्बर तीन ८/- * चरित्र १०/-
* मन क्यों उदास है ८/- जोगी मत जा ७/- * काजल ५/-

राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली

खुद मकान, गाड़ी समेत पुलिस के पहरे में बेखटके, निडर होकर जिंदा रह सकते हैं। लेकिन व्रती तो उन लोगों से भी बड़ा अपराधी है—क्योंकि उसने विश्वास खो दिया था—इस मुनाफाखोर, स्वार्थांध, समाज और उनके नेताओं पर विश्वास खो दिया था। यह विश्वासहीनता जिस बच्चे, किशोर या युवक के मन में घर बना लेती है, उसकी उम्र बारह, सोलह या बाईस की, चाहे जो भी हो, उनके लिए एक ही सजा निश्चित है—मृत्यु।

छाती के बल जमीन पर रेंगनेवाले, हवा का बदलता हुआ रुख देखकर मत बदल देनेवाले, सुविधावादी-कलाकार, साहित्यिक बुद्धिजीवियों के इस समाज को जो लोग घृणित समझते हैं—उन सब लोगों की सजा निश्चित है—मौत !

●●

ज्योति के कमरे में टेलीफोन की घंटी बज रही है। टेलीफोन उठाने गयी तो ये सब बातें याद आ गयीं।

समू, लालटू, विजित और पार्थ के घरों में तो फोन नहीं है न ! घंटी की आवाज से कोई भी उनको नींद से नहीं जगायेगा। आज उन सबकी माताएं क्या सोच रही होंगी—आज की इस सुबह ?

सुजाता ने फोन उठाया।

'कौन ?'

'मैं नंदिनी।'

'नंदिनी ?'

'हां मैं लौट आयी हूं आपसे एक बार मिलना जरूरी है।'

'नंदिनी, आज तो मेरी छोटी लड़की तुली की सगाई है। तुम बताओ, कहां पर मिलना हो सकता है ? शाम को छोड़कर कभी भी आ सकती हूं।'

नंदिनी ने पता बताया। सुजाता ने फोन नीचे रख दिया। नंदनी ! व्रती नंदनी से प्यार करता था, लेकिन सुजाता ने नंदिनी को कभी नहीं देखा।

दोपहर

दो लाख लोगों की बस्ती, यह कालोनी किसी योजना के आधार पर नहीं बनायी गयी। पश्चिम बंगाल में यही कालोनी अनधिकृत या जबरदस्ती दखल करके बनायी गयी थी।

इस इलाके से हमेशा विरोधी दल को ही वोट मिले हैं—शायद इसीलिए सरकार ने यहां पक्की सड़क, स्वास्थ्य-केंद्र, काफी संख्या में हैंड-पंप, बस-रूट—इन सबका कोई भी बंदोबस्त नहीं किया। इन बीस वर्षों में जो लोग हालात बदलने पर धनी हो गये, उन लोगों ने भी कुछ नहीं किया।

अब और तो कोई अशांति नहीं है; कोई डर नहीं है। अब दूकानों के पल्ले घड़ाधड़ बंद नहीं होते। घर-घर के दरवाजे भी बंद नहीं होते।

कालीगाड़ी अब कभी फर्राटे से

सड़कों पर नहीं दौड़ती; हैलमेट पहने हुए पुलिस का सिपाही या मिलिटरी का जवान अब किसी किशोर को खदेड़ता हुआ नहीं ले जाता। पुलिस-वैन के पीछे रस्सी से बंधा अर्द्धजीवित शरीर सड़क की पटरी से घिसटता हुआ, खिंचता हुआ दिखायी नहीं देता !

कल के हत्यारे आज चोला बदलकर, नये चेहरे लगा, निडर होकर घूमते-फिरते हैं। एक अध्याय की समाप्ति हो गयी।

अब तो सिर्फ संकरी सड़कों के मोड़ों पर, शरीर के अंगों पर खुले घावों की तरह, जगह-जगह पर उभरे स्मृति-स्तंभ दिखलायी देते हैं। लेकिन इन स्मृति-स्तंभों में समु, विजित, पार्थ, लालटू आदि लोगों के नाम नहीं हैं। व्रती का तो है ही नहीं।

समु के घर बैठी थी सुजाता। लाकर के गहने निकाल लायी थी। सब उसके पर्स में पड़े हैं। इस समय उसका चेहरा थका, उखड़ा-सा लग रहा है। समु की मां सामने बैठी चुपचाप आंसू बहा रही थी। दुबला-पतला, काला चेहरा—आंसुओं में डूबा हुआ। पहली बार यहां आते समय सुजाता काफी हिचकिचा रही थी। समु की मां तभी-तभी विधवा हुई थी। महल्ले में आकर समु का नाम लेते ही लोगों ने उसकी ओर हैरानी से देखा था। पहले कोई बताना ही न चाहता था; आखिरकार एक ने कहा था, 'ऊ रहा घर।'

सुजाता की कीमती साड़ी, अभि चेहरा, खिचड़ी बालों से घिरे प्रौढ़ पर छायी कुलीनता—यह सब-कुछ दे समु की मां अचकचा के आंखें फै देखती रही थी।

'मैं व्रती की मां हूं।'

इतना सुनते ही 'समु रे' कह वह फूट-फूटकर रोने लगी। सु से लिपटकर कहने लगी, 'ऊ तुम बिटवा रहा दिदिया, जानै-बूझके गवाय दिहिस। ऊ समु को खबर करे आय रहा, त इनका मालूम गवा कि अब चार जनि मोहल्ला आय गयन, अब जाने रात कटवौ कि बरती आय के पुलिस, समु कहां ह ऊ को कुछ कहि के हम चले जाव। कहा, बिटवा इतनी रात मा जा सकबो हियई रहो जिनि। भिनसारे चले जा मगर दिदिया, रात कहां कटल हियां हमार इ छोटके कमरा मा पारथ, बरती—सब जनि सोये रह

'किस कमरे में ?'

'इसी कमरा मा। कमरा क्या दिदि लड़की-बहनों का लेके बरामदे मा गयी रहिन। बरामदे मा बाड़ है न। इस कमरा मा ऊ लोगन। हम खिड़की मा बइठे रहे कि कौन देखबौ।'

'यहां रात बितायी थी व्रती ने ?'

'हां दिदिया ! लड़कन कमरा

रहे। समु के बापू जागें रहें कि लड़कन को उठाय देब। ऊ कोना मा लेट के कइसे हंसत-बतियात रहे। दिदिया, वरती की हंसी हमार आंखन के आगे अब भी दिखत है। सोना राजा बिटवा रहा तुम्हारा।'

'व्रती यहां आता था ?'

'कतनी-कतनी बार। आय रहा, कहत रहा, 'मउसी पानी मउसी चाह,' बुला-बुलाकर मांगत रहा।'

समु की मां ने कहा था, 'हम कहत रहे, तुम काहे अइसन अपन सब-कुछ लुटा रहे बिटवा, का नहीं है तुम्हार पास ! इत्ते बड़े बाप, इत्ती पढ़ी अम्मा। ऊ चुपचाप हंसत रहा। ऊ की हंसी हमार आंखन के आगे टंगी है, दिदिया !' तभी सुजाता को धक्का पहुंचा था। व्रती की हंसी, वह निश्छल-सी हंसी ! उसने सोचा था, सब स्मृतियां सिर्फ उसकी हैं, उस अकेली की। व्रती समु की मां के दिल में भी स्मृतियों का अंबार छोड़ गया।

●●

उस दिन सारे दिन घर पर ही था व्रती। बैंक से लौटकर उसे घर पर देख सुजाता हैरान हो गयी थी। बाद में पता चला था, सारा दिन वह एक टेलीफोन का इंतजार करता रहा था। उसे यही पता था कि समु और दूसरे लोग लौट आयेंगे; उनको और कहीं जाने के लिए मना कर दिया गया है। लेकिन जिसको मना करने के लिए भेजा है वह धोखा दे गया, समु को मना करने के बदले महल्ले में खबर कर देगा, यह उसे पता नहीं था। फोन आया था तो समझा था कि सर्वनाश हो गया !

व्रती की उमर कम थी। एक विश्वास, एक आस्था ने उन लोगों को अंधा कर दिया था—उनकी समझ में नहीं आया था कि जिस व्यवस्था से उनकी लड़ाई है, वह व्यवस्था जन्मने से पहले ही कुछ को भ्रूणावस्था में ही जहरीला बना देती है। सब तरुणों को ही आदर्श की दीक्षा नहीं मिलती; सभी ऐसे नहीं हैं जो मौत से नहीं डरते—ये सब बातें व्रती जैसे लोग नहीं जानते थे। इसीलिए व्रती ने सोचा

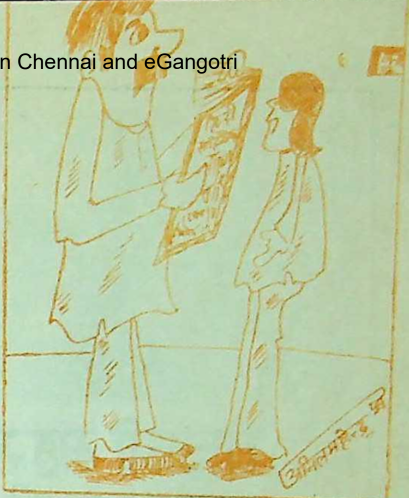

"किसी लेखक की किसी रचना से कोई अंश उद्धृत करें तो वह साहित्यिक चोरी कही जाएगी, लेकिन यदि अनेक लेखकों की रचनाओं के उद्धरण दें तो हम उसे रिसर्च कहेंगे।"

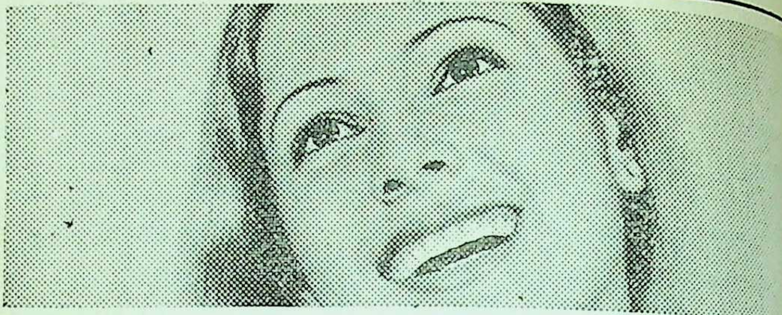

ताज़गी महसूस कीजिये
सुबूत अपनी आँखों से देखिये

पानी से भरी तश्तरी में थोड़ा सा कोयले का चूरा छिड़किये। अब थोड़ा सा बिनाका टॉप पानी में मिला लीजिये और इस घोल की एक बूँद तश्तरी के बीचों-बीच टपकाइये। अब देखिये बिनाका टॉप कितनी तेज़ी से चारों तरफ़ फैल है.... मैल को दूर करता है और पानी की सतह को बिल्कुल साफ़ कर देता है।

बिल्कुल इसी तरह बिनाका टॉप का विशेष फैलने वाला तत्व आपके मुँह के हर कोने में फैल कर दातों में सड़न पैदा करनेवाले कीटाणुओं का नाश करता है और साँस की दुर्गन्ध को रोकता है। बिनाका टॉप आपके मुँह की पूरी रक्षा करते हुए उसे ताज़गी से भर देता है।

Binaca
top
toothpaste

बिनाका टॉप
टूथपेस्ट

मुँह की पूरी रक्षा के लिए

था कि खबर भेज दी गयी है, समु और बाकी साथी सचेत हो जाएंगे। टेलीफोन से खबर आयेगी कि सब ठीक है।

जब पूरा दिन बीत गया, शाम हो गयी—जाड़ों की शाम कलकत्ता में जरा पहले ही उतर जाती है—तब शायद व्रती ने सोचा था, खबर आनी होती तो आ जाती अब तक। दोपहर तक जब फोन नहीं आया तो उसे बेचैनी हुई। दोपहर ढल गयी; शाम हुई; सुजाता लौट आयी।

व्रती जब नीली कमीज पहने अपनी हमेशा की आदत के अनुसार दोनों हथेलियों से बालों को संवारते हुए बाहर जा रहा था, तब सुजाता ने पूछा था, 'कहां जा रहा है ?'

व्रती एक पल ठिठककर खड़ा हो गया था। फिर हंसकर बोला, 'अलीपुर। अगर देर हो जाए, तो समझना रनु और उसके संगियों के घर रुक गया हूं, चिंता मत करना।'

व्रती को तभी पता लग गया था कि भयंकर विपदा आ पड़ी है। जिसको खबर पहुंचाने को कहा गया था वह समु वगैरा को खबर नहीं पहुंचा सका। कोई खबर न पाकर समु आदि लोग पहले की योजना के अनुसार महल्ले में लौट गये हैं। व्रती को तब भी यह मालूम नहीं था कि जिस लड़के ने समु को खबर नहीं दी, उसी ने महल्ले में खबर कर दी कि समु और उसके साथी महल्ले में वापस आ रहे हैं। इसीलिए व्रती ने सोचा था—रातों-रात समु आदि को सावधान रहने को कहकर किसी तरह महल्ले से निकालकर ले आये। हालांकि उसे उम्मीद कम ही थी, लेकिन सोचा था, शायद कामयाब हो ही जाए। फिर भी इतने सहज स्वर में उसने कहा था, 'चिंता न करना,' सुजाता निश्चित हो ही गयी थी।

उसके जाते समय कोई संदेह, कोई आशंका उसे नहीं हुई थी। सुजाता को क्या पता था कि रात के बारह बजते-न-बजते समु आदि युवकों के घर के सामने भीड़ इकट्ठी हो जाएगी ? महल्ले के बड़े-बड़े बुजुर्गों ने चीख-चीखकर कहा था, 'निकाल दीजिए उन लोगों को।'

●●

सुजाता को याद आया। मुरदाघर में उसने कुछ लाशें देखी थीं। श्मशान में कुछ लोगों को सिर पीटते देखा था और सुना था उनका रोना-चीखना।

समु की मां कह रही थी, 'ललटू काम करिकै पगला हुई जात रहा। एक्कौ काम ना मिला, तबही से बावला जइसा होइ गवा, अऊर तबहि से ऊ का मन मा ई आग धधकै रही।'

इस बार भी समु की मां रो रही थी। सुजाता उसकी हथेलियों पर हथेली फेर रही थी। इस साल समु का और दूसरों का घर और भी पुराना हो गया था। चारों तरफ दारिद्र्य के चिह्न उभर आये थे। समु की मां शायद ऐसी साड़ी

पहने थी जिसे पहनकर सुजाता के सामने नहीं आया जाता। सुजाता के आने पर अंदर से कपड़े बदलकर आयी। यह साड़ी अगर इतनी घिसी और पैबंद लगी है तो इससे पहले जिसे उतारा है, वह कैसी रही होगी ?

समु की मां ने कहा, 'तुम ही भागमान रहिस दिदिया, एक बिटवा गवात दूसर का छाती से लगाय के ऊ को दुःख भूल सकत हो। हमार त एक्को रहा, छाती का पसली अभी टूट गवा। हमार छाती की चिता त चिता पै चढ़ै के बुझिबे।'

सुजाता ने कहना चाहा कि अगर वह समु की मां की तरह फुक्का फाड़कर रो पाती, जोर-जोर से विलापकर पाती तो बच जाती। लेकिन वह समु की मां से कहे कि व्रती की मौत के बाद से वह छाती पर पत्थर रखकर जी रही है, दिल खोलकर रो तक नहीं पायी तब भी तो समु की मां उसे असामान्य मानेगी। व्रती की मौत की खबर पाते-न-पाते जो लोग उस खबर को दबा देने के लिए झटपटकर जाते हैं, उन लोगों के सामने रो नहीं सकी थी सुजाता, आवाज बंद हो गयी थी उसकी। यह सब समु की मां कभी नहीं समझेगी !

समु के मां-बाप ने उस समय तो कुछ भी नहीं सोचा था।

रात के बारह नहीं बजे थे। दुःस्वप्न —सब दुःस्वप्न-जैसा लगता है। बारह

आइटेक्स
सौंदर्य प्रसाधन

EYETEX KAJAL

ARAVIND LABORATORIES MADRAS-600 033

AL-H35
EYETEX
BINDI
EYETEX
BINDI
DELUXE
MATT FINISH
EYETEX
BINDI
DELUXE
EYETEX
REGD.

बजने से पहले ही उन लोगों ने समु का मकान घेर लिया था। एक-एक करके लोगों को इकट्ठा होते देखकर ही समु की मां सुबक उठी थी और मुंह पर हाथ रखकर रुलाई रोके थी। समु के बाबू ने बेबस, व्याकुल होकर पूछा था, 'का करैं अब, पिछवाड़े जाइके देखीं, हुंआ से भाग सकत कि नाहीं . . .।'

समु ने धीरे से कहा था, 'फायदा ना होइ हैं बाबू, उ लोगन पीछे से भी घेर लिहिस, हम आवाज सुने रहे उनका।'

'निकालिए उन सबको ।' दबी-दबी हिंस्र आवाज !

व्रती पहले उठा था । खिड़की के पास जाकर चिल्लाकर बोला था, 'गाली मत दीजिए; हम लोग आ रहे हैं।'

'स्साले, ई बाबू साहब का कहां से लावा ? बाहेर आ रे बाबू का पट्ठा,'

'ना जा, समुआ रे . . .।'

'माई, रोवो जिनि, बापू का देखो, हम बाहेर जात है, नाहीं त ऊ लोग आग लगाई देब !'

विजित और पार्थ के पास चाकू था; समु और व्रती के पास कोई हथियार नहीं। वे लोग खड़े हो गये—एक-दूसरे का हाथ पकड़कर नारे लगाते हुए उन्होंने दरवाजा खोल दिया था।

'तोर पहिले हम मरब'—कहकर समु के बापू आगे बढ़े, लेकिन समु ने उनको धकेल दिया था। नारे लगाते-लगाते वे बाहर निकल गये थे। बाहर अंधेरा और कुछ घुप्प अंधेरे चेहरे, 'हा-हा-हा', हंसी और उल्लास, चारों तरफ उमगते हुए ठहाके ! घरों में एक-एक करके बत्तियां बुझती जा रही हैं—दरवाजे, खिड़कियां बंद होती जा रही हैं, चौंककर डरे हुए चेहरे अंधकार में छुपे जा रहे हैं और उधर आसमान में जोरों से सीटी की आवाज उछाल दी जाती है। इन लोगों की आवाज में नारे लगाते हुए चाकू सीधा कर दौड़ आते हैं ! किसके गले में घोंप रहे हैं ?

एक चीख. . .'स्साले चाकू चलात हो।' किसी ने कहा था, 'कर खतम स्सालों को।' नारे तीन आवाजों में, फिर विजित की गर्दन पर फंदा आ फंसता है बड़ी फुरती के साथ। उसकी आवाज घुट जाती है। 'हा-हा-हा,' नारे ! नारे ! स्लॉगन !! जिंदाबाद !' जुग-जुग जीओ, जिंदाबाद ! जुग-जुग जीओ !' बेहिसाब हड़बड़ी । अचानक सब आवाजें रुक गयीं। हत्यारे दूर हटते जा रहे हैं। गोली की आवाज—फट्-फट्-फट् ! जाड़े की सर्द हवा ठिठक जाती है; बारूद की गंध, हवा का दम घोंटती बारूद की गंध ! कालिमा से लिपटे चेहरे दूर भागे जा रहे हैं . . .।

'हाय-हाय-हाय !' समु के बापू छाती पीटते हुए पछाड़ खाकर गिरते हैं, 'समु रे !'

'दद्दा रे !' बहनें रोती हैं। समु की मां को और कुछ नहीं मालूम । बेहोशी। अंधेरा, गहरा अंधकार !

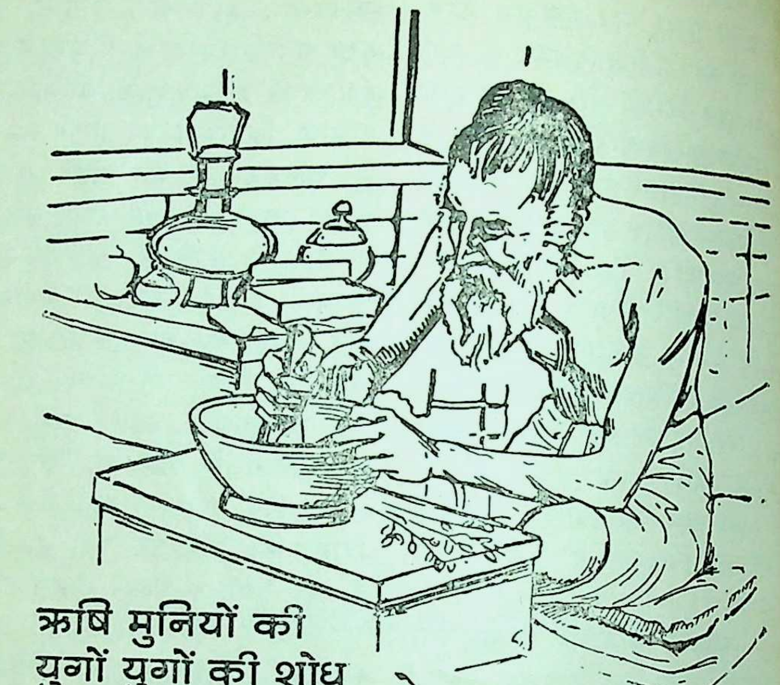
ऋषि मुनियों की
युगों युगों की शोध

सेवाश्रम का

गाय छाप

ब्राह्मी आँवला तैल
BRAHMI AMLA OIL
AYURVED SEVASHRAM LTD.
SEVASHRAM'S
COW BRAND
BLACK
TOOTH POWDER
काला दन्त-मंजन

ब्राह्मी आँवला
केश-तैल और
काला दन्त-मन्जन

ब्राह्मी आँवला केश-तैल आधुनिक पद्धतिसे निर्मित केवल तैल ही नहीं एक आयुर्वेदिक सौंदर्य प्रसाधन है।
तथा काला दन्त-मंजन केवल मंजन ही नहीं एक आयुर्वेदिक औषधि है।

आयुर्वेद सेवाश्रम लिमिटेड,
उदयपुर, वाराणसी, हैदराबाद

AS-143

●●

समु की मां कैसे समझेगी कि सुजाता क्यों नहीं रो सकती ? कैसे मानेगी कि उस घर में व्रती का नाम भी कोई नहीं लेता ? व्रती का नाम अखबार में न छपे, इसके लिए व्रती के बाबूजी को कितनी दौड़-धूप करनी पड़ी थी !

समु की मां कैसे समझेगी सुजाता की बात ? सुजाता अगर उन्हें बताये कि वह एक ऐसे समाज में रहती है जहां पैरों के नीचे धरती का आधार नहीं है, धरती में धंसी जड़ें नहीं हैं, एक बेजान मरा हुआ समाज, जहां नंगी देह दिखाने में शर्म नहीं, शर्म है भावनाएं दिखाने में !

सुजाता उठ खड़ी हुई।

'फिर आइ हो, दिदिया। तुहार संग बात करै से हमार जी ठंडा हो जात है।' सुजाता जानती थी, फिर वह कभी नहीं आयेगी। 'चलूं !' अचानक समु की मां के कंधे पर हाथ रखा। उसने कहा, 'आपका बहुत अहसान रहा मुझ पर।'

शाम

वह मकान उनके घर के पास ही था। आते-जाते कई बार सुजाता ने इसे देखा था, लेकिन कभी अंदर नहीं गयी। किसका मकान है, यह भी नहीं पता था। पुराने ढंग का दुमंजिला मकान। सामने लंबा बरामदा। मकान की मुंडेर पर विदेशी नक्काशी और नाम लिखा हुआ था—पूर्व गंगानगर।

अंधेरा गलियारा पार करके, पंचायती आंगन के एक तरफ एक कमरा। मकान का पिछवाड़ा है यह। कमरे की दीवारों और छत से पलस्तर झर रहा है; फर्श पर से सीमेंट उखड़ रहा है। अलमारी पर लगा है जंग-खाया ताला। सुजाता तख्त पर बैठी थी, नंदिनी उसके सामने मूढ़े पर।

'बिट्रे किया था अनिंद्य ने,' नंदिनी ने फिर कहा। पहले भी कहा था; अब कहते समय उसकी आंखों पर विस्मय की छाया तैर गयी।

'नंदिनी, मुझे सब बातें नहीं मालूम।'

'पता है। आप लोगों को कभी भी कुछ भी मालूम नहीं रहता। जो कुछ हो जाता है, वह आपके लिए सिर्फ हो जाना मात्र है। क्यों होता है, कैसे होता है—यह बिना जाने भी चल जाता है। ये विश्वास कितने गलत किस्म के हैं, अब तो आपको मालूम पड़ रहा है ?'

सुजाता चुप रही।

अनिंद्य ने दगा किया था ! व्रती लाइक ए फूल ट्रस्टिड हिम। (बेवकूफ की तरह व्रती ने उस पर विश्वास किया।) उसकी वजह यह थी कि अनिंद्य को नीतू, जो व्रती का अच्छा दोस्त था, ले आया था। नीतू जिसको लाया—उस पर संदेह नहीं किया जा सकता ! व्रती ने यही सोचा होगा। नीतू क्या जान-बूझकर ही अनिंद्य को लाया था ? सुजाता ने मन-ही-मन पूछा। तभी नंदिनी ने कहा, 'जेल में थी

तो अनिंद्य की हत्या करने का मन होता था, पर अब...क्या बदल गयी हो ?'

'नहीं मौसी, मैं बदली नहीं हूं। लेकिन शायद अनिंद्य से ही नहीं, सभी कुछ के विरुद्ध फिर से लड़ना होगा।'

'फिर से, नंदिनी ?'

'क्यों नहीं ?'

'लेकिन अब तो सचमुच सब-कुछ शांत है, नंदिनी।'

'नहीं !' नंदिनी चीख उठी; सुजाता अवाक रह गयी।

'कुछ भी शांत नहीं हुआ ?'

'नहीं, नहीं हुआ। वे सब लोग मरे क्यों ? क्या खत्म हो गया है ? लोग सुखी हैं ? राजनीति का खेल खत्म हो गया है ? क्या दुनिया बेहतर हो गयी है।'

'नहीं ?'

'हजारों लड़के बिना मुकदमे के, न्याय की जेलों में सड़ रहे हैं ! फिर भी आप कहती हैं कि सब शांत हैं ?' सुजाता बैठी रही। अभी बैठे रहने का समय नहीं है। संध्या उतर रही है। जाड़ों की शाम जरा जल्दी ही आ जाती है। अब उसे घर लौटना चाहिए। लेकिन पैर पत्थर हो रहे हैं।

'आप अब जाएंगी नहीं ?'

सुजाता ने हामी भरी। फिर कहा, 'एक चीज तुम्हें दू ?'

'क्या ?'

'यह तुम्हीं रखो।'

बती की फोटो। हमेशा उसके बैग में रहती है, उसके पास-पास। नंदिनी ने फोटो ले लिया। तख्तपोश के ऊपर रखा। उसके बाद कहा, 'मेरे पास और कुछ भी नहीं है, न था।'

सुजाता ने धीरे से कहा, 'चलूं।'

नंदिनी ने कुछ नहीं कहा। पीछे मुड़ी—मैली, अंधेरी दीवार पर हाथ रखा, फिर धीरे-धीरे अंदर की तरफ बढ़ने लगी। उसका हर कदम उसे सुजाता से दूर ले जाता रहा। सुजाता बाहर निकल आयी—कलकत्ता की सड़क पर!

रात

जाड़ों की शाम बहुत जल्दी ही उतर आती है, इसलिए इतना अंधेरा है। और अंधेरा है, इसलिए सुजाता के हर कमरे की रोशनी इतनी तेज है।

दिव्यनाथ बहुत देर से शायद दरवाजे तक आ-जा रहे थे। सुजाता को देखते ही वे पहले की तरह कर्कश स्वर में चिल्ला उठे, 'घर लौटने का समय हो गया ? हद है !'

सुजाता कुछ नहीं बोली।

'क्या सोचती हो तुम ? जानती हो, पचास लोगों को बुलाया है !'

'जानती हूं।'

'मतलब ?'

'बंदोबस्त किया हुआ था सब। अब और बात मत बढ़ाओ।'

'बात मत बढ़ाओ ! '

'तुम—अगर—इसी—समय—

—चले न जाओ—[illegible] जाऊंगी—और कभी नहीं लौटूंगी।' जाता ने रुक-रुककर कहा। उसको लग रही है, बेहद घिन लग रही व्यनाथ और वह टाइपिस्ट लड़की; नाथ और सुजाता की रिश्ते की दिव्यनाथ और उनकी एक भाभी! दिव्यनाथ के गाल पर जैसे किसी ने ा जड़ दिया। चौंतीस साल के ाहित जीवन में सुजाता एक बार भी तरह अपने पति से नहीं बोली थी। 'तुम सारा दिन कहां रहीं, क्या भी पूछ नहीं सकता?'

'नहीं।'

'क्या?'

'दो साल पहले तक, पिछले बत्तीस ा से तुम अपनी शामें कहां बिताते किसको लेकर पिछले दस साल से पर जा रहे हो, क्यों तुम अपनी ानी टाइपिस्ट के लिए मकान का राया देते रहे—यह सब मैंने तुमसे ी नहीं पूछा। तुम मुझसे एक बात नहीं पूछोगे!'

सुजाता अपने कमरे में चली गयी। लमारी खोली। देह की एक-एक नस ड़क रही है, कह रही है, 'नहीं, नहीं, हीं।' लेकिन आज की शाम का कर्त्तव्य निभाना ही पड़ेगा।

मिसेज कपाड़िया के हाथ में स्कॉच-भरा गिलास था। सुजाता और दूसरे लोग उनकी बातें सुन रहे हैं। सुजाता के चेहरे पर उनकी मुसकान है; दिमाग काम नहीं कर रहा; शरीर थककर चूर-चूर हो चुका है।

सुजाता ने शाल रख दिया और बाहर चली आयी। काली वैन। खिड़कियों में जाली, पीछे के दरवाजों में जाली। खिड़कियों की जाली से हैलमेट से ढका सिर दीख रहा है। सामने कौन बैठा है?

सफेद धुली पोशाक। पीतल का बैज; डि. सी., डि. डि. सरोजपाल! बंगला मां का बेहद नटखट बेटा, शेर-दिल सरोजपाल! 'सरोजपाल! तुम्हारे लिए काफी नहीं है।' लिखा हुआ एल्यूमीनियम का दरवाजा धड़ से गिरता है, अंदर व्रती का लिटाया हुआ शरीर—निस्पंद, बर्फ-सा ठंडा। सरोजपाल!

'आपके बेटे ने जो कुछ किया, उसको माफ नहीं किया जा सकता।'

सुजाता ने देखा, सरोजपाल ने देखा। एक हजार चौरासीवें की मां! व्रती चटर्जी की मां! इनसे, सुजाता से मुलाकात हो जाएगी—इसलिए सरोजपाल आना नहीं चाहता था।

बिनी ने आगे बढ़कर कहा, 'नीचे नहीं उतरेंगे?'

'नहीं।'

'मिठाई का पैकेट तो लीजिए न कम-से-कम।'

'दीजिए, जल्दी में हूं। अच्छा नमस्ते।'

स्टार्ट। गाड़ी जोर से घरघरायी और निकल गयी।

क्या आप हररोज़ का कामकाज फिर से करने को उत्सुक हैं?

ग्लैक्सोज़-डी® आपको तुरन्त शक्ति देकर थकान मिटाता है।

ग्लैक्सोज़-डी से आप घर के काम-काज के लिए तैयार हो जाती हैं। क्योंकि ग्लैक्सोज़-डी आप को वह भरपूर शक्ति देता है, जो आप को थकान के बाद फिर से चुस्ती-फुर्ती के लिए चाहिए। डॉक्टरों की सिफारिश पाने वाला ग्लैक्सोज़-डी बहुत उच्च कोटि का ग्लूकोज़ है जो विटामिन-डी, कैल्शियम और फॉस्फरस से युक्त है।

ग्लैक्सोज़-डी आप की थकान मिटाता है और आप को ऐसी शक्ति देता है कि आप मज़े से घर का काम-काज करती रहती हैं।

ग्लैक्सोज़-डी®
सारे परिवार के लिए
तुरन्त शक्ति का साधन

dCA/GL/

बुद्धि
१.
्योलिय
एल्बा त
४. ३३
हैं तथा
बनाती
४० मी
७. भार
८. सचि
('अज्ञेय
तथा गे
अमरीकी
'हंगेरिय
ऐंडीज
८. पंद्र
सोवियत
रिसीव

अ
फॉर्म
के नीचे
के केस
पर है
व
दु
धप्-ध
की अ
गोली
अप्रैल

बुद्धि-विलास के उत्तर

१. १० किलोमीटर, २. क. पोलियन, ख. दो बार निर्वासित—एल्बा तथा सेंट हेलना को, ३. सिकंदर, ४. ३३ हड्डियां, जिनमें २४ पृथक होती हैं तथा ९ हड्डियां मिलकर २ हड्डियां बनाती हैं, ५. अहर्निशं सेवामहे, ६. ४० मीटर प्रति-सेकंड से अधिक रफ्तार, ७. भारत, द. कोरिया, बहरीन, ८. क. सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन ('अज्ञेय'), ख. दुर्गाबाई देशमुख (भारत) तथा गेताचु मेखुरिया (इथिओपिया), ग. अमरीकी राष्ट्रपति जिमी कार्टर, घ. 'हंगेरियंस' (हंगरी), ९. चीन, १०. ऐंडीज (दक्षिण अमरीका), ११. क. पंद्रह, ख. अमरीका, ब्रिटेन, फ्रांस, सोवियत रूस, चीन, १२. टेलीफोनों के रिसीवर ।

अभी भी काम है ? अभी भी यूनिफॉर्म पहननी है ? कालीगाड़ी, क़मीज के नीचे स्टील के चेन की शील्ड, चमड़े के केस में बंद पिस्तौल, पीछे की सीट पर हैलमेट पहने संतरी !

कहां है अशांति ? कहां है काम ?

दुकानों के पल्ले कहां बंद होंगे ? धप्-धप्-धप्-धप्—सड़क पर भारी बूटों की आवाज होगी; वैन की घरघराहट, गोली की आवाज होगी ? कहां ?

कहां भागेगा ? कहां नहीं हैं हत्यारे, कहां नहीं है गोली, पुलिस, वैन और जेल ? कहां भागेगा व्रती ? कहां खो जाएगा फिर से ? भाग मत व्रती, मेरे पास लौट आ, लौट आ व्रती, मत भाग अब !

डोल रहा है सब-कुछ, सब-कुछ हिल रहा है, घूम रहा है। इन लाशों को जैसे कोई धागे से खींचकर नचा रहा है।

धरती की सब कविता, कविता के बिंब, लाल गुलाब के गुच्छे, हरी घास, नियॉन की रोशनी, मां के चेहरे पर फैली हंसी, शिशु का क्रंदन—हमेशा, अनंत काल तक इन सबका भोग करती रहेंगी ये लाशें ! अपने सड़े-गले-गंधाते अस्तित्व को लिये धरती के हर सौंदर्य और माधुर्य को हथियाये रहेंगी, क्या इसीलिए व्रती मर गया ? सिर्फ इसीलिए ? धरती को, पृथ्वी को इन लोगों के हवाले कर उनके ही हाथों में सौंपने के लिए क्या उसने अपनी जान दे दी ? 'नहीं, कभी नहीं, व्रती ई . . .ई . . !'

सुजाता की लंबी, दिल दहला देनेवाली चीख, उसका आर्त्त-विलाप। एक विस्फोट की तरह फूटकर बिखर गया ।

यह क्रंदन खोखला नहीं है—इसमें भरी है रक्त की गंध, प्रतिवाद का प्रण, शोक की आतुरता ।

फिर सब-कुछ अंधेरा; सुजाता का शरीर लड़खड़ाकर गिर पड़ा। दिव्यनाथ चिल्ला उठे, 'लगता है, ऐपेंडिक्स फट गया !'

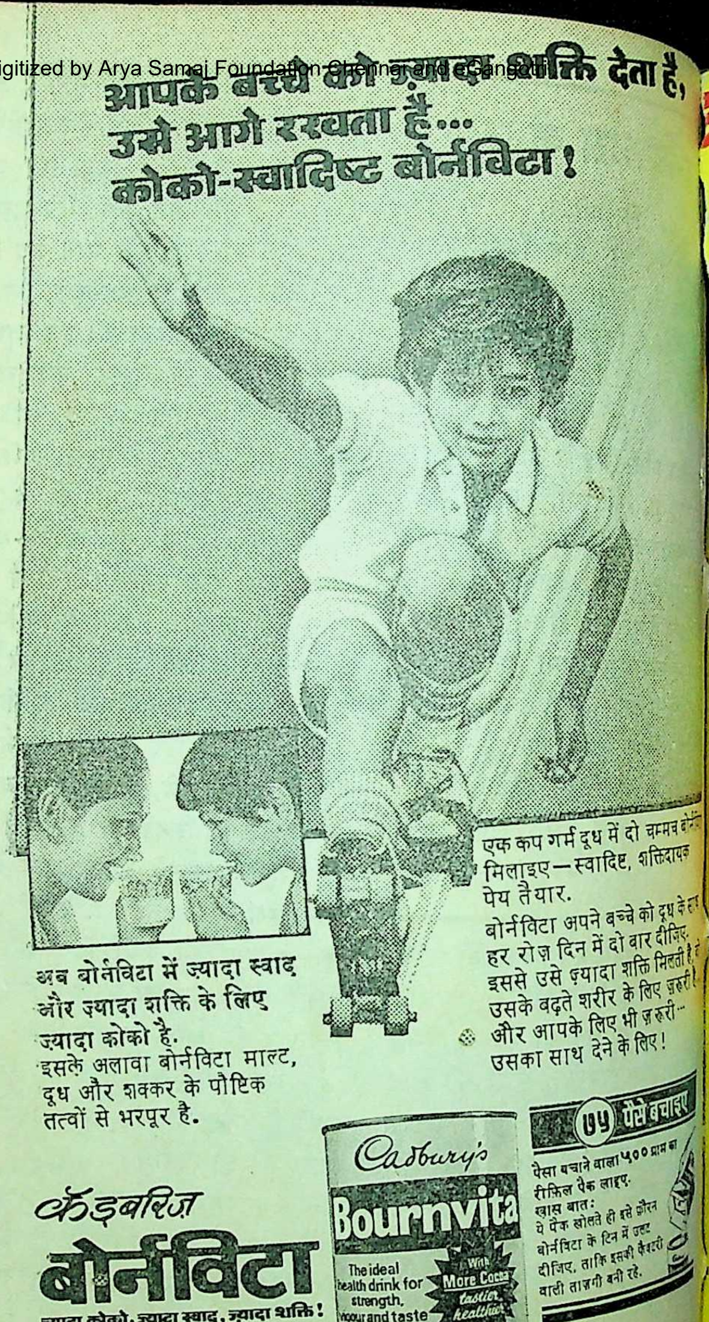
आपके बच्चे को ज़्यादा शक्ति देता है,
उसे आगे रखता है...
कोको-स्वादिष्ट बोर्नविटा !

एक कप गर्म दूध में दो चम्मच बो
मिलाइए—स्वादिष्ट, शक्तिदायक
पेय तैयार.
बोर्नविटा अपने बच्चे को दूध के
हर रोज़ दिन में दो बार दीजिए.
इससे उसे ज़्यादा शक्ति मिलती है
उसके बढ़ते शरीर के लिए ज़रूरी
और आपके लिए भी ज़रूरी...
उसका साथ देने के लिए !

अब बोर्नविटा में ज़्यादा स्वाद
और ज़्यादा शक्ति के लिए
ज़्यादा कोको है.
इसके अलावा बोर्नविटा माल्ट,
दूध और शक्कर के पौष्टिक
तत्वों से भरपूर है.

७५ पैसे बचाइए
पैसा बचाने वाला ५०० ग्राम का
रीफ़िल पैक लाइए.
ख़ास बात:
ये पैक खोलते ही इसे फ़ौरन
बोर्नविटा के टिन में उलट
दीजिए, ताकि इसकी कैडबरी
वाली ताज़गी बनी रहे.

कैडबरिज़
बोर्नविटा
ज़्यादा कोको, ज़्यादा स्वाद, ज़्यादा शक्ति !

OBM/8376

Cadbury's
Bournvita
The ideal health drink for strength, vigour and taste
With More Cocoa
tastier healthier
500 g net

दी हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से सन्तोष नाथ द्वारा हिन्दु
टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

चलते चलते

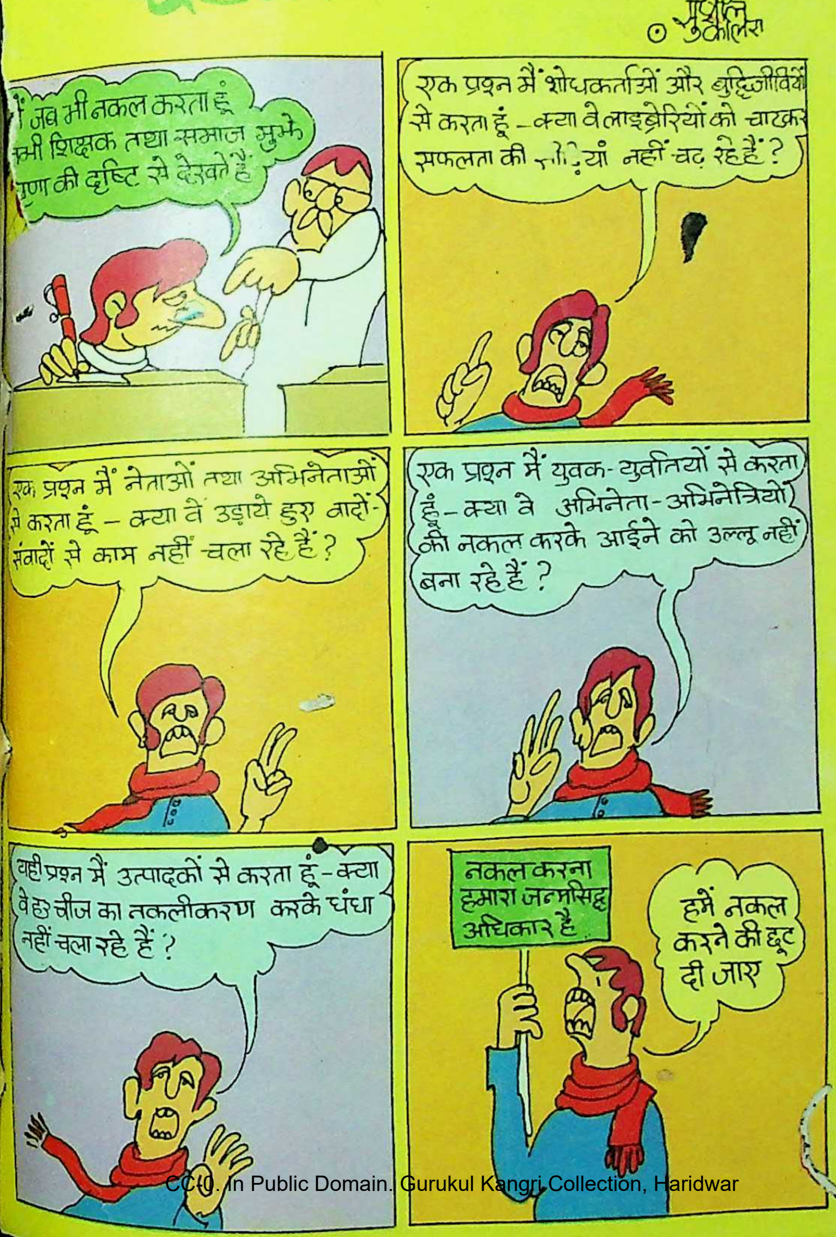
सुशील कालरा
मैं जब भी नकल करता हूं सभी शिक्षक तथा समाज मुझे घृणा की दृष्टि से देखते हैं
एक प्रश्न मैं शोधकर्ताओं और बुद्धिजीवियों से करता हूं – क्या वे लाइब्रेरियों को चाटकर सफलता की सीढ़ियां नहीं चढ़ रहे हैं?
एक प्रश्न मैं नेताओं तथा अभिनेताओं से करता हूं – क्या वे उड़ाये हुए वादों-संवादों से काम नहीं चला रहे हैं?
एक प्रश्न मैं युवक-युवतियों से करता हूं – क्या वे अभिनेता-अभिनेत्रियों की नकल करके आईने को उल्लू नहीं बना रहे हैं?
यही प्रश्न मैं उत्पादकों से करता हूं – क्या वे हर चीज का नकलीकरण करके धंधा नहीं चला रहे हैं?
नकल करना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है
हमें नकल करने की छूट दी जाए

२०।१।७९

शराब सामाजिक अभिशाप है

यह आपके स्वास्थ्य और परिवार को बरबाद करती है

मनुष्य की और बुराइयों की अपेक्षा शराब ने कहीं ज्यादा घर उजाड़े हैं। कोई भी व्यक्ति जो 'मौज-मस्ती' या दोस्ती के नाम पर शराब पीता है विनाश के रास्ते पर पैर बढ़ाता है।

शराब आदमी को अपना गुलाम बनाती है। फिर यह आपके स्वास्थ्य को चौपट करती है। यह जिगर को बेकार एवं दिल को कमजोर करती है और खून में जहर घोल देती है।

शराब का गुलाम बनने से
पहले ही इससे
छुटकारा पाइए

समय रहते चेतिए

davp 78/494

स प्रकाशन

कादम्बिनी

भारतीय भाषाओं की विशिष्ट पत्रिका

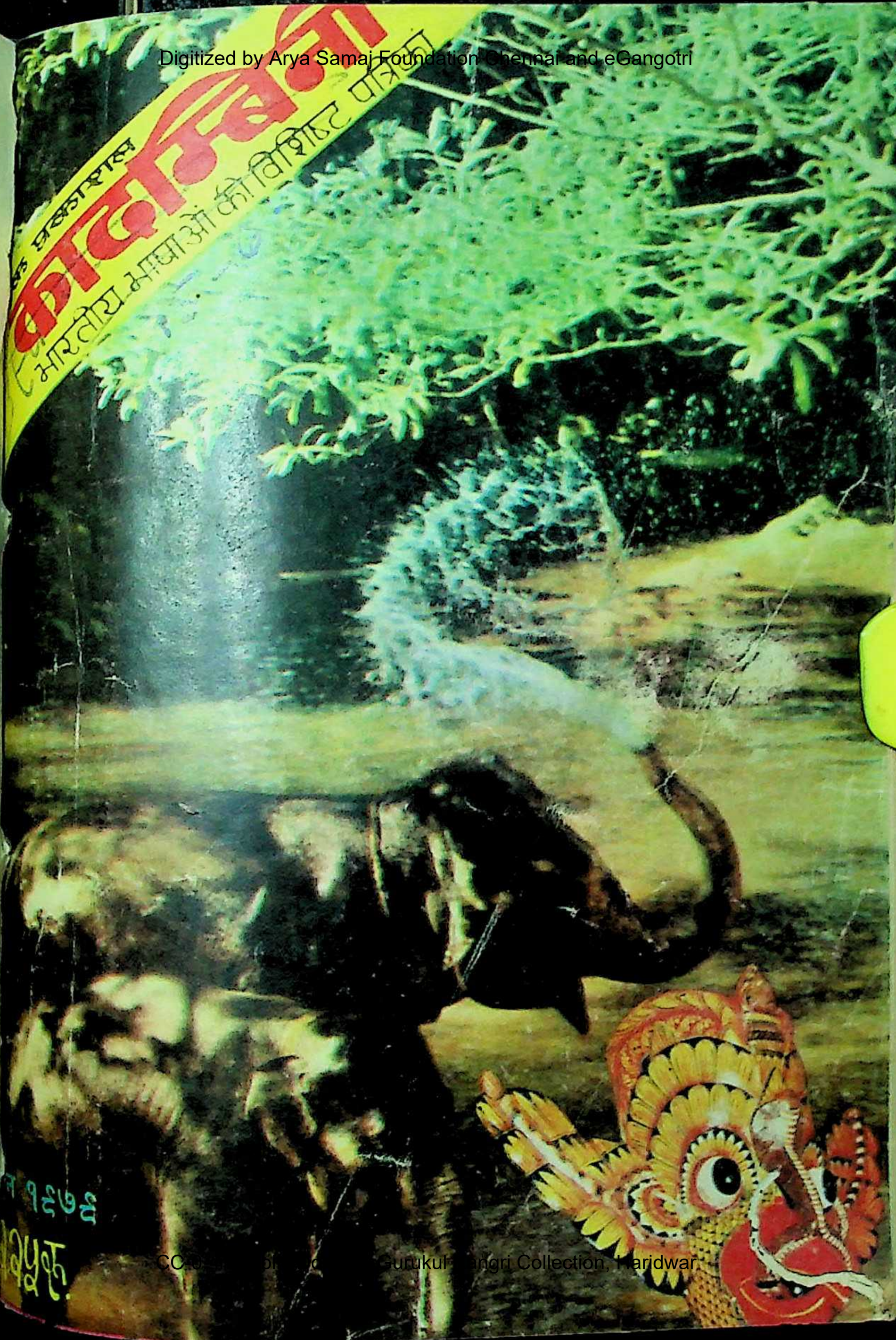

न १९७९
वपूरू.

डाबर

"बच्चे का पालन-पोषण करना आसान काम नहीं है। बच्चों के पेट में ऐठन, अपचन, गैस, अफारा तो होता ही रहता है।

"ऐसे वक्त पर डाबर ग्राइप वाटर ही काम आता है। इसके आराम दायक, रोगाणु रोधक असर से बच्चे को तुरन्त आराम मिलता है।

"इसलिये जब भी मेरा बच्चा अपच या गैस के कारण रोता है मैं उसे तुरन्त ही डाबर ग्राइप वाटर देती हूँ...

GRIPE
WATER
GRIPE
WATER
ग्राइप वाटर

"डाबर ग्राइप वाटर से बच्चे की खोई हुई मुस्कान लौट आती है"

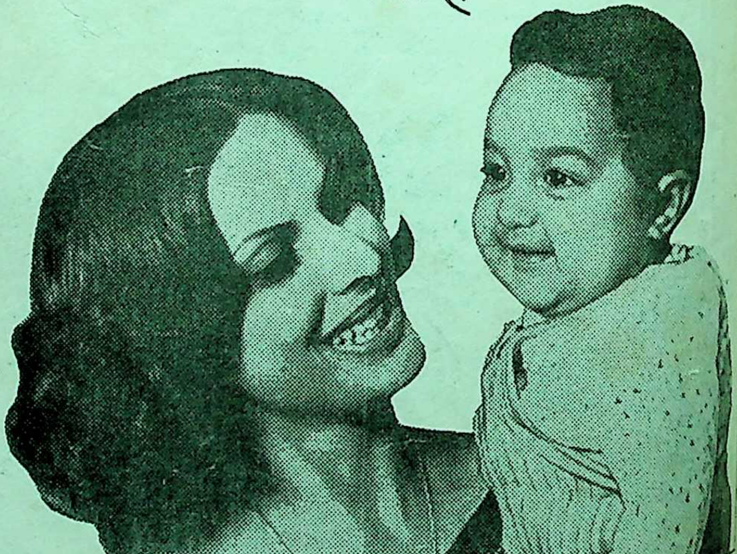

DIT-78

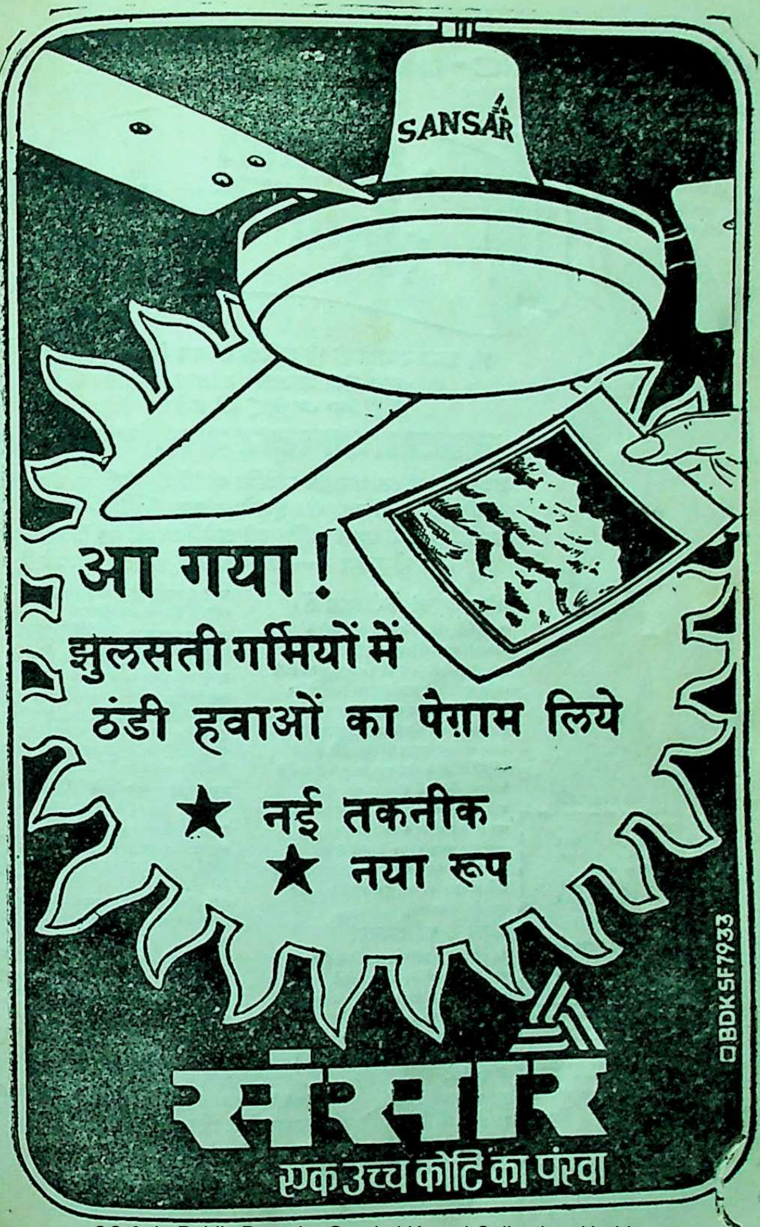
SANSAR
आ गया!
झुलसती गर्मियों में
ठंडी हवाओं का पैग़ाम लिये
★ नई तकनीक
★ नया रूप
संसार
एक उच्च कोटि का पंखा
BDK SF 7933

chic-modithread शिक-मोदीथ्रेड

एम्ब्रॉयडरी झालर-काम,
बुनाई, क्रोशिया
या दस्तकारी
जाननेवाला कोई
भी विजयी हो
सकता है।

"नीडलवर्क
प्रतियोगिता"

१½ लाख रुपयों से भी अधिक कीमत के पुरस्कार जीतिए।
भाग लेना आसान! जीतना आसान!
TCI [illegible] की मज़ेदार सैर!

लाजवाब शानदार राष्ट्रीय पुरस्कार

सर्वश्रेष्ठ अखिल भारतीय प्रविष्टि को 'शिक-मोदीथ्रेड नीडलवर्क क्वीन ट्रॉफी' दी जाएगी। इसके अलावा TCI [illegible] द्वारा आयोजित सभी खर्चों सहित पूरे अमेरिका की २१ दिवसीय सैर का मज़ा भी मुफ़्त में— जिसका खर्च १६,५०० रुपये है.

प्रवेश मुफ़्त! कैसे भाग लें:

आपको सिर्फ़ पक्के रंग के रंगीन मोदी धागों से एम्ब्रॉयडरी, बुनाई, क्रोशिया, झालर-काम या दस्तकारी करनी है. कम से कम २० से.मी.×२० से.मी. आकार का कोई भी आकर्षक नमूना तैयार कीजिए. आप चाहे जिस वर्ग का नमूना भेजें, हर प्रविष्टि को सफाई, रंगों के मेल और डिज़ाइन की सुन्दरता के आधार पर परखा जाएगा. पूर्ण विवरण, नियम और प्रतियोगिता के प्रवेश कूपन, समस्त मोदी धागों के विक्रेताओं, मोदी धागों की क्राफ्ट शॉप, मोदी धागों के डिपो और वितरकों के यहाँ तो मिलेंगे ही साथ ही शिक पत्रिका के मार्च, अप्रैल, मई, जून, जुलाई और अगस्त १९७९ के अंकों में भी मिल जाएंगे. प्रत्येक प्रविष्टि के साथ इस्तेमाल किए गये धागों का लेबल और भरा हुआ प्रतियोगिता प्रवेश कूपन होना आवश्यक है.

जीतने के कई अवसर!

आपको जीतने के अधिक अवसर देने के लिए इस प्रतियोगिता को देश के १० क्षेत्रों में बाँट दिया गया है. हर क्षेत्र के लिए ८० पुरस्कार हैं यानी कुल मिलाकर ८०० पुरस्कार और एक शानदार राष्ट्रीय पुरस्कार. जिसका चुनाव १० क्षेत्रों की प्रथम पुरस्कार प्राप्त प्रविष्टियों में से किया जाएगा.

८०१ पुरस्कारों में से कोई भी जीतिए।
(आपके क्षेत्र में ८० पुरस्कार)

दस प्रथम पुरस्कार FEDDERS LLOYD ZENITH 165 लीटर रेफ्रिजरेटर. हर एक की कीमत ४,२७५ रुपये.

दस द्वितीय पुरस्कार Oberoi Hotels की ओर से पति-पत्नी के लिए दस ५ दिवसीय छुट्टियों का आयोजन— उनके काठमांडू, गोवा, कश्मीर, दार्जिलिंग, शिमला और गोपालपुर-ऑन-सी स्थित आरामदायक होटलों में.

दस तृतीय पुरस्कार modifloor विश्व-कोटि के मशीन से बने कालीन. हर एक की कीमत २,५०० रुपये.

दस चतुर्थ पुरस्कार MERRITT सिलाई की मशीन. हर एक की कीमत १,९६५ रुपये.

दस पाँचवे पुरस्कार [illegible] किचन वेयर सेट. हर एक की कीमत १,००० रुपये.

साथ ही

modicotton के १५० सराहना पुरस्कार. झटपट कमीज़ खुद ही बनाइये. हर एक की कीमत १५ रुपये

५०० प्रोत्साहन पुरस्कार— शिक पब्लिकेशन्स की ओर से प्रत्येक ४० रुपये कीमत के पुरस्कार.

१०० बोनस पुरस्कार— ब्राउन एण्ड पोलसन और [illegible] के उत्पादक कॉर्न प्रॉडक्ट्स की ओर से प्रत्येक २५ रुपये कीमत के उपहार.

शिक के ग्राहक बनें

वार्षिक चन्दे में २० रुपया बचाइये. न्यूज़स्टॉलों में १२ अंकों की कीमत— ६० रुपये, वार्षिक चन्दा— ४० रुपये. दो वर्ष के लिए— ७५ रुपये।

रुपया अपने पोस्टल ऑर्डर, ड्राफ्ट, मनी ऑर्डर शिक पब्लिकेशन के हित में बम्बई में देय होने के लिए बनायें।

To subscribe, mail this to
CHIC PUBLICATIONS,
89, Bhulabhai Desai Road, Bombay 400036.
OR VIJAY STORES
231, Dr. D.N. Rd., Commissariat Bldg.,
Fort, Bombay 400001.

Name: ______
______
Address: ______
______
Enclosed Postal Order for Rs. ______
for ______ years subscription from ______

chic- सृजनात्मक, मनोरंजक फैशन पत्रिका.

जल्दी कीजिए! प्रतियोगिता की अन्तिम तिथि ३१ अगस्त ७९.

अपनी प्रविष्टि अपने क्षेत्र के मोदीथ्रेड डिपो में भेजें. पते की जानकारी के लिए नियम व शर्तें पढ़ें. प्रथम शिक-मोदीथ्रेड बच्चों की कसीदाकारी प्रतियोगिता के लिए बच्चों की पत्रिकाएँ देखें.

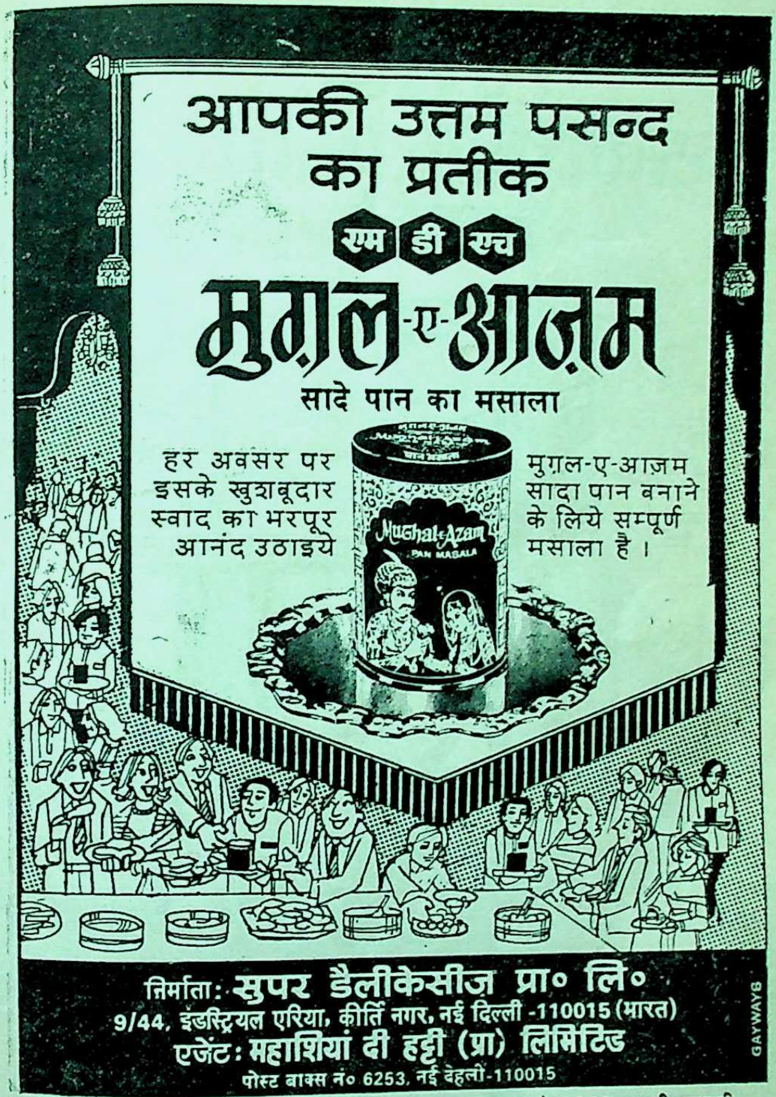

आपकी उत्तम पसन्द का प्रतीक

एम डी एच

मुग़ल-ए-आज़म

सादे पान का मसाला

हर अवसर पर इसके खुशबूदार स्वाद का भरपूर आनंद उठाइये

मुग़ल-ए-आज़म सादा पान बनाने के लिये सम्पूर्ण मसाला है।

निर्माता: सुपर डैलीकेसीज़ प्रा० लि०
9/44, इंडस्ट्रियल एरिया, कीर्ति नगर, नई दिल्ली -110015 (भारत)
एजेंट: महाशियां दी हट्टी (प्रा) लिमिटिड
पोस्ट बाक्स नं० 6253, नई देहली-110015

स्टाकिस्ट : मैसर्ज़ के० सी० ट्रेडर्स (किशन चन्द सूरज प्रकाश) 6633- खारी बावली,
देहली-6 फ़ोन : 522217
मैसर्ज़ रूपक स्टोर्ज़, अजमलखां रोड, नई देहली-5 फ़ोन : 562569

टेक्सला. इसकी सर्वोत्तमता ही इसकी सफलता है

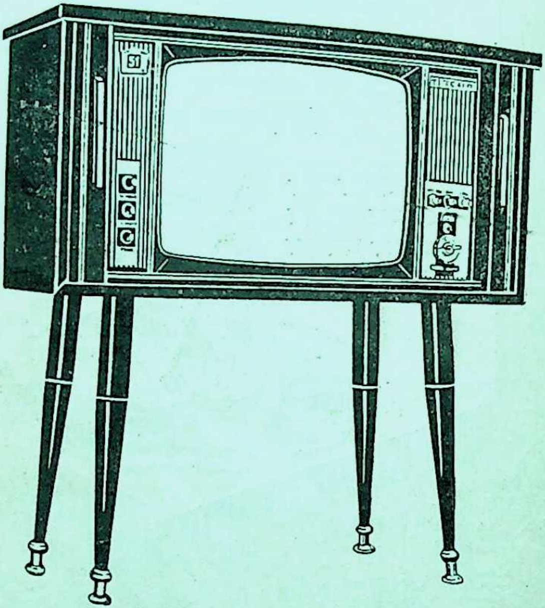

टेक्सला टीवी की टेक्नालॉजी भरोसेमंद है।

ऐसी टेक्नालॉजी जिसे भारतीय परिस्थितियों में आजमाया, परखा और सही सिद्ध किया गया है।

यही वजह है कि टेक्सला टीवी ले कर अधिक से अधिक लोग खुश हैं।

यह ऐसा टी वी है जो अधिक से अधिक समय तक उत्तम सेवाएं देता है।

क्योंकि इसे महज 'सफल' घोषित करने के लिए नहीं बनाया गया है।

यह सर्वोत्तम बना रहने के लिए बनाया गया है।

Texla TV

क्योंकि यह सर्वोत्तम है.

T-90

अब-आप अपने बिलों का भुगतान अपने "फिक्स्ड डिपॉज़िट" पर हर माह मिलने वाले ब्याज से कर सकते हैं.

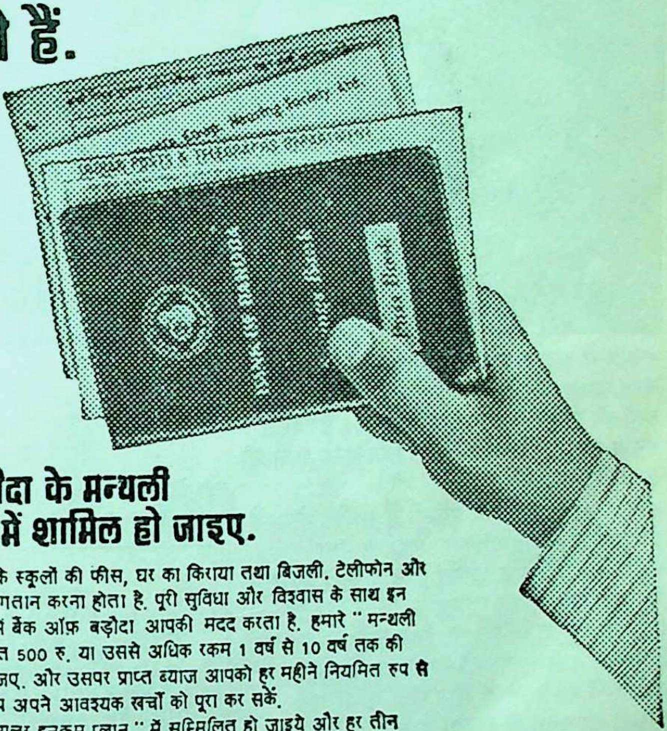

बैंक ऑफ़ बड़ौदा के मन्थली इनकम प्लान में शामिल हो जाइए.

आपको हर महीने बच्चों के स्कूलों की फीस, घर का किराया तथा बिजली, टेलीफोन और अन्य मासिक बिलों का भुगतान करना होता है. पूरी सुविधा और विश्वास के साथ इन खर्चों को पूरा कर सकने में बैंक ऑफ़ बड़ौदा आपकी मदद करता है. हमारे "मन्थली इनकम प्लान" के अंतर्गत 500 रु. या उससे अधिक रकम 1 वर्ष से 10 वर्ष तक की अवधि के लिए जमा कीजिए. और उसपर प्राप्त ब्याज आपको हर महीने नियमित रुप से मिलता रहेगा जिससे आप अपने आवश्यक खर्चों को पूरा कर सकें.

या फिर आप हमारे "रेग्यूलर इनकम प्लान" में सम्मिलित हो जाइये और हर तीन महीने बाद ब्याज पाइये.

अधिक जानकारी के लिए बैंक ऑफ़ बड़ौदा को नजदीकी शाखा में पधारिये.

बैंक ऑफ़ बड़ौदा

(भारत सरकार उपक्रम)

भारत और विदेशों — बहामा, बेल्जियम, फिजी द्वीप समूह, गयाना, केन्या, मारीशस, सीशल्स, ओमन सल्तनत, संयुक्त अरब अमिरात, यू. के. और यू.एस.ए. में — 1350 से भी अधिक शाखाओं का विस्तृत जाल.

Imageads/BOB/53-Hin.

खूबसूरत-
जब तक हंसे नहीं

बचपन में दांत अगर दंतक्षय से गिरते हैं तो उनकी जगह आनेवाले दांत टेढ़े-मेढ़े निकलते हैं जो आपकी हंसी को हमेशा के लिए बरबाद कर देते हैं। इससे बचाव का एक ही रास्ता है कि आप अपने दांतों की सुरक्षा बिनाका फ्लोराइड* से करें।

दुनिया भर में किए गये प्रयोगों से साबित होता है कि टूथपेस्ट में फ्लोराइड ही एकमात्र ऐसा पदार्थ है जो दांतों के एनेमल के साथ सही प्रकार से मिलकर उन्हें अधिक मजबूत बनाता है। खराब होने से बचाता है। बिनाका फ्लोराइड का देर तक बना रहनेवाला असर दंतक्षय पैदा करनेवाले कीटाणुओं को बढ़ने से और दांतों में दर्दनाक सूराखों को बनने से रोकता है।

*इसमें सबसे असरदार फ्लोराइड कम्पाउन्ड सोडियम मोनोफ्लोरोफॉस्फेट है।

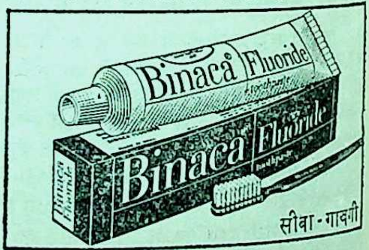
Binaca Fluoride
Binaca Fluoride
सीबा-गायगी

अधिक मजबूत दांत, दंतक्षय की रोकथाम—

बिनाका फ्लोराइड

भारत का सबसे पहला और प्रभावी फ्लोराइड टूथपेस्ट

U-BF 7/7 hin

अब बोर्नविटा को ओलिम्पिक पेय की मान्यता

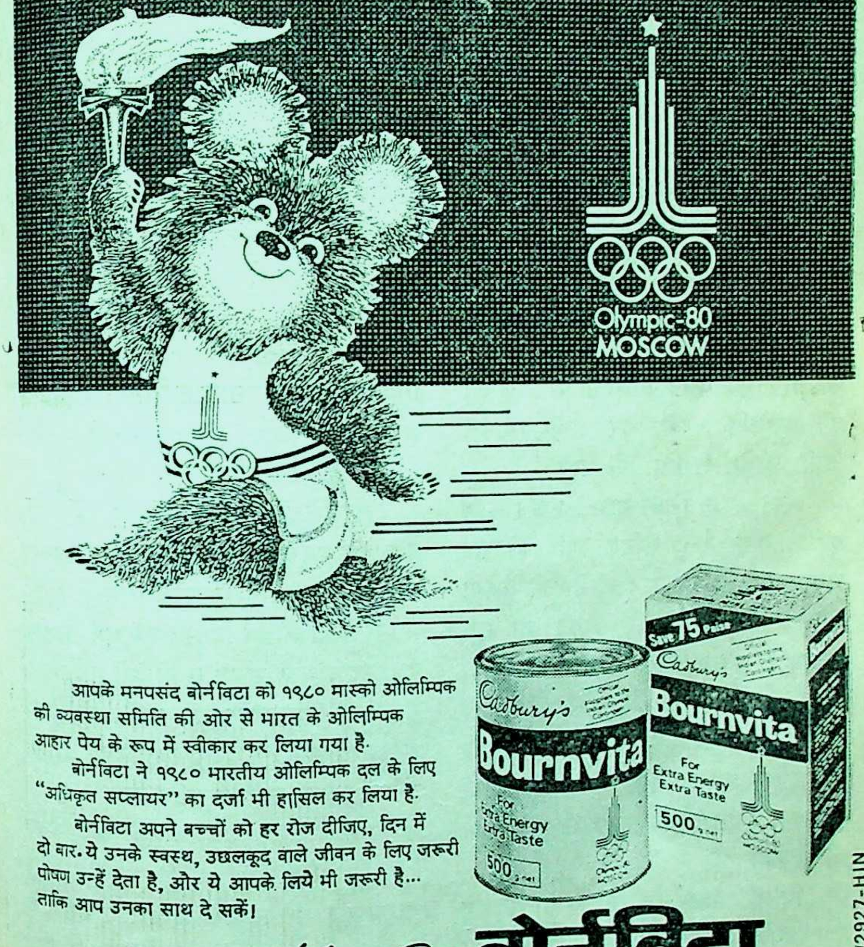
Olympic-80
MOSCOW
Save 75 Paise
Cadbury's
Bournvita
For Extra Energy Extra Taste
500 g net

आपके मनपसंद बोर्नविटा को १९८० मास्को ओलिम्पिक की व्यवस्था समिति की ओर से भारत के ओलिम्पिक आहार पेय के रूप में स्वीकार कर लिया गया है.

बोर्नविटा ने १९८० भारतीय ओलिम्पिक दल के लिए "अधिकृत सप्लायर" का दर्जा भी हासिल कर लिया है.

बोर्नविटा अपने बच्चों को हर रोज दीजिए, दिन में दो बार. ये उनके स्वस्थ, उछलकूद वाले जीवन के लिए जरूरी पोषण उन्हें देता है, और ये आपके लिये भी जरूरी है... ताकि आप उनका साथ दे सकें।

कॅडबरिज़ बोर्नविटा

चुस्त फुर्तीले जीवन के लिए!

OBM/2927-HIN

आस्था के आयाम

धैर्यवान ही विजयी

घने वनों और हिंसक पशुओं से भरी वर्मा की क्लंग घाटी। एक ओर देश की आजादी के लिए सर्वस्व त्यागने को आतुर तीन भारतीय सैनिक और दूसरी ओर एक सौ उनसठ अंगरेज सैनिक। तीनों सैनिक चौकी की रक्षा में स्वयं को असमर्थ पा रहे थे। उन्होंने सेनापति सुभाषचंद्र बोस से पीछे लौटने की अनुमति चाही, पर आदेश आया, 'नहीं, चौकी की रक्षा की जाए।'

रात भर गोलियां चलती रहीं। सुबह दुश्मन कुछ मृत सैनिकों को छोड़कर भाग गया। सुभाषबाबू को इसकी सूचना दी गयी तो उन्होंने विवेकानंद की एक पुस्तक के इस अंश को माथे से लगा लिया—

'जब संकटों के बादल सिर पर मंडरा रहे हों, तब भी मनुष्य को धैर्य नहीं छोड़ना चाहिए। धैर्यवान भीषण परिस्थितियों में भी विजयी होते हैं।'

पिछली रात इसी अंश को पढ़कर सुभाषबाबू ने तीनों सैनिकों को चौकी पर डटे रहने का आदेश दिया था।

पत्रकार उपराष्ट्रपति

पिता गरीब था। अपने बेटे सार्मिटो को पढ़ा नहीं सकता था। अतः उसे स्कूल से निकालकर एक दुकान पर नौकर रखवा दिया, पर बेटे के मन में पढ़ाई का चाव उत्पन्न हो गया था। वह फुरसत के समय विविध विषयों की पुस्तकें पढ़ा करता। एक दिन उसने फ्रैंकलिन की जीवनी पढ़ी और उसके समूचे शरीर में जैसे बिजली दौड़ गयी। फ्रैंकलिन को दस वर्ष की आयु में स्कूल से निकलना पड़ा था, पर उसने प्रयत्न कर पांच भाषाएं सीखी थीं और अब वह एक विश्वविख्यात वैज्ञानिक, दार्शनिक और राजनीतिक नेता था।

सारमिंटो ने निश्चय किया, 'मैं दूसरा फ्रैंकलिन बनूंगा।' उसने भी अनेक भाषाएं सीखीं। राजनीति में भाग लिया। चिली में निर्वासित जीवन बिताते हुए एक निर्भीक पत्रकार के नाते उसने अपने देश अर्जेंटाइना में व्याप्त भ्रष्टाचार का पर्दाफाश किया और जब वह एक दिन स्वदेश लौटा, तब उसे देश का उपराष्ट्रपति बनाया गया। उपराष्ट्रपति के पद पर पहुंचकर उसने देश की गरीब, निरक्षर जनता को साक्षर बनाने का आंदोलन छेड़ा और उसी के प्रयत्नों के फलस्वरूप अर्जेंटाइना आज विश्व का एक सर्वाधिक शिक्षित देश है।

रद्दी की टोकरी से विश्व-प्रसिद्धि तक

एरिक मारिया रिमार्क, जरमन भाषा के एक प्रसिद्ध उपन्यासकार। जब उन्होंने अपना पहला उपन्यास प्रकाशक के पास प्रकाशनार्थ भेजा, तो उसने उसे बिना पढ़े वापस कर दिया। प्रकाशक के व्यवहार से रिमार्क इतने क्षुब्ध हुए कि उन्होंने उस उपन्यास को रद्दी की टोकरी में फेंक दिया। पर रिमार्क की पत्नी को विश्वास था कि उपन्यास विश्व-साहित्य की एक अमर कृति सिद्ध होगा। उसने उपन्यास की पांडुलिपि उठायी और प्रकाशक से जाकर कहा, 'कम से कम इसे एक बार पढ़ लीजिए। यदि तब इसे लौटा देंगे, तो मुझे दुःख नहीं होगा।'

रिमार्क की पत्नी का अनुरोध स्वीकार कर प्रकाशक ने पांडुलिपि स्वयं पढ़ी और उसे तत्काल प्रकाशित करने का निर्णय किया। रिमार्क के उस उपन्यास का नाम है—'आल क्वाइट आन द् वेस्टर्न फ्रंट'।

यातनाकारी चक्रपूजा

महाराष्ट्र में सह्याद्रि की पर्वतमालाओं के बीच बसा एक छोटा-सा गांव शिरकोली, जहां अपने पापों के प्रायश्चित के लिए लोग हंसते-हंसते यातनाकारी 'चक्रपूजा' करते हैं। इस गांव में पचास फुट ऊंचा स्तंभ है, जिस पर एक बल्ली लगी है। बल्ली में लगे हैं मोटे तार, जिसके एक छोर पर मोटा-सा हुक है। लोग इस हुक को अपनी पीठ में गड़ाकर इस मजबूती से फंसा लेते हैं कि बीस मिनट तक उस हुक से लटके-लटके स्तंभ पर चक्कर काटने के बाद भी वह निकलता नहीं। प्रायश्चित का यह तरीका महाराष्ट्र के सह्याद्रि और कोकंण क्षेत्र में 'बगड़' कहलाता है, जबकि बंगाल के गांवों में 'चक्रपूजा'। एक भक्त से जब पूछा गया कि वह किस शक्ति के बल पर इतनी पीड़ा सह लेता है।

उत्तर मिला, 'ईश्वर पर आस्था के कारण।'

संकल्प-शक्ति का चमत्कार

पिछले अंक में हमने नार्वे के एक उत्साही नेत्रहीन युवक तोरे नायरलैंड से अपनी भेंट की चर्चा की थी। प्राप्त सूचनाओं के आधार पर तोरे नायरलैंड अपनी मित्र कुमारी मारित गेस्टर के साथ साइकल पर विश्व-परिक्रिमा पूरी कर पुनः लंदन पहुंच गया है। तोरे नायरलेंड ने इस यात्रा द्वारा अपना यह दावा सिद्ध कर दिया है कि अपंग व्यक्ति भी साहस और सम्मान की जिंदगी जी सकते हैं। तोरे नायरलेंड ने अपनी विश्व-परिक्रमा के लिए वही मार्ग चुना था, जिसे कल्पनाशील प्रख्यात कलाकार जूल वर्न ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास 'एराउंड द् वर्ल्ड एट्टी डेज' में नायक फिनेस फांग के लिए निर्धारित किया था। जूल वर्न के काल्पनिक नायक ने अस्सी दिनों में विश्व-परिक्रमा की थी, जबकि वास्तविक नायक तोरे नायरलैंड ने केवल उनहत्तर दिनों में यह सफर पूरा किया।

शब्द-सामर्थ्य बढ़ाइए

निम्नांकित शब्दों के जो सही अर्थ हों, उन पर चिह्न लगाइए और इसी पृष्ठ से आरंभ उत्तरों से मिलाइए।

१. **अनुकल्प**—क. विकल्प, ख. कल्पित, ग. आभास, घ. संकल्प।

२. **धारणा**—क. कल्पना, ख. विचार, ग. इच्छा, घ. धारण करना।

३. **संप्रति**—क. अभी-अभी, ख. सद्यः घटित, ग. वर्तमान में, घ. उपस्थित।

४. **त्रास**—क. कष्ट, ख. भय, ग. संकट, घ. वेदना।

५. **प्रमाद**—क. घमंड, ख. उन्माद, ग. दुःख, घ. निराशा।

६. **यायावर**—क. भटका हुआ, ख. निर्लक्ष्य, ग. सदा घूमनेवाला, घ. जीवन-विमुख।

७. **लीचड़**—क. अयोग्य, ख. असुंदर, अशिष्ट, घ. अकर्मण्य।

८. **प्रव्रज्या**—क. भिक्षुणी, फकीर, ग. संन्यास, घ. पदयात्री।

९. **हड़कना**—क. डरना, उलझना, ग. किसी वस्तु के लिए तरसना, घ. क्रोधित होना।

१०. **अस्मिता**—क. मुसकान रहित, ख. प्रतिष्ठा, ग. अस्तित्व, घ. मंदहास।

११. **नीति**—क. विचार, ख. भावना, ग. व्यूह रचना, घ. जिस आधार पर कोई कार्य किया जाए।

१२. **प्रांजल**—क. सरस, ख. सुंदर, ग. सरल-सुबोध, घ. स्वच्छ।

१३. **उद्भ्रांत**—क. भ्रमित, निराश, ग. दुःखी, घ. कुंठित।

१४. **समावेश**—क. मिलना, मिलाना, ग. ढ़का हुआ, घ. समाप्ति।

उत्तर

१. क—विकल्प, किसी वस्तु के स्था पर प्रयुक्त वस्तु। आजकल परमाणु विद्युत शक्ति के **अनुकल्प** स्वरूप प्रयो की जा रही है।

२. ख—विचार, निश्चित मति आपके संबंध में उसकी **धारणा** नहीं है।

३. ग—वर्तमान में। **संप्रति,** वह पत्रिका में कार्य कर रहे हैं।

४—ख, भय। यह **त्रास** तो उसकी भ्रांति का परिणाम है।

५. ख—उन्माद। **प्रमाद,** अस्ति मन का संवेग है।

६. ग—सदा घूमनेवाला । मन का क्या, वह तो **यायावर** है !

७. घ—अकर्मण्य । वह तो अव्वल दर्जे का **लीचड़** है ।

८. ग—संन्यास । अपने अंतिम दिनों में उसने **प्रव्रज्या** ग्रहण कर ली ।

९. ग—तरसना, किसी वस्तु के लिए लालायित होना । छोटी-छोटी बातों के लिए भी कितना **हड़कना** पड़ रहा है ।

१०. ग—अस्तित्व । सृजन ही कलाकार की **अस्मिता** है ।

११. घ—जिस आधार पर कोई कार्य किया जाए, कार्य-पद्धति । उनकी यह **नीति** आपत्तिजनक है ।

१२. ग—सरल, सुबोध । प्रेमचंद की भाषा बड़ी **प्रांजल** है ।

१३. क—भ्रमित, उद्विग्न । असफलताओं से **उद्भ्रांत** नहीं होना चाहिए ।

१४. क—मिलना, शामिल रहना । उसकी सफलता में प्रतिभा और श्रम दोनों का **समावेश** है ।

पारिभाषिक शब्द

करेक्टरस्टिक्स=विशेषताएं
हीटप्रूफ=ऊष्मसह
प्रिवेंटिव=निरोधक, निवारक
रिसेप्शनिस्ट=स्वागती
रेसीप्रोकल=व्युत्क्रम
ट्रेजरी-बिल=राजकोष-पत्र
डिस्टिलेशन=आसवन
हायपोएसिडिटी=अल्पाम्लता
इमीजियेट आफीसर=आसन्न अधिकारी

समस्या पूर्ति-प्रतियोगिता-१

मैं

गवाह

परिणाम

प्रथम पुरस्कार

गुलशन का एक दरख्त हुआ धूप में तबाह
आती है जब बहार तो भरता है सर्द आह
सूखी हुई जड़ों में अभी भी वो आब है
जिसकी पनाह फूल खिलाती है बेपनाह
घायल बुर्जुगियत की नफासत को देखकर
खुशबू की अदालत में हुआ पेश मैं गवाह

—डॉ. हरिश्चन्द्र पाठक

विभागाध्यक्ष हिंदी, राजकीय महाविद्यालय, ऋषिकेश-२४९२०१

द्वितीय पुरस्कार

मैं गवाह.......
एक ऐसी खामोशी का
जो खामोश भी—बोलती है
और इंसान से अधिक
जिंदगी के गूढ़ रहस्यों को टटोलती है

—आरती पांडेय

द्वारा श्रीमती के. एन. पांडेय, प्रधानाचार्य आवास, सिविल लाइंस, बांदा

प्रतिक्रियाएं

खोजपूर्ण पत्रकारिता

मई अंक में 'मैस्लिमैलविल' के नाम से प्रकाशित लेख 'मैंने भुट्टो को फांसी पर लटकते देखा है,' इनवेस्टिगेटिव रिपोर्टिंग' का एक उत्कृष्ट उदाहरण कहा जा सकता है। इस लेख में जहां एक ओर दिवंगत पाक नेता के रहस्यमय व्यक्तित्व को समझने में सहायता मिलती है, वहां दूसरी ओर एक जांबाज पत्रकार द्वारा प्राणों पर खेलकर पाकिस्तानी जेल में घुसकर एक महत्त्वपूर्ण घटना को अपनी आंखों से देखने और उसे लिपिबद्ध करने के साहसिक कारनामे का रोमांचक विवरण भी मिलता है। यों 'कादम्बिनी' एक साहित्यिक-सांस्कृतिक पत्रिका है, फिर भी आपने दिवंगत भुट्टो को फांसी पर चढ़ाये जानें के विवरण को भारत में सर्वप्रथम प्रकाशित कर 'इनवेस्टिगेटिव रिर्पोटिंग' का एक आदर्श प्रस्तुत किया है। बधाई।

—डॉ. विजयशंकर, नागपुर

'कादम्बिनी' के विज्ञापनों में 'मैंने भुट्टो को फांसी पर लटकते देखा है' शीर्षक लेख की घोषणा पढ़कर मई अंक पढ़ने की बेहद उत्सुकता हुई। लेख में उल्लेखित घटनाएं पढ़कर मैं बेहद रोमांचित हो उठा। मेरा ख्याल है, यह हर संपादक का स्वप्न रहा होगा कि काश वह अपने किसी रिपोर्टर को इस घटना के 'कवरेज' के लिए फांसीघर में उपस्थित रख पाता। इसीलिए अनेक विदेशी पत्रकार रावलपिंडी भी पहुंचे थे। मैस्लिमेलविल छद्मनामधारी पत्रकार का कड़े पहरे के बावजूद फांसीघर तक पहुंचना 'ट्रुथ इज स्ट्रेंजर देन फिक्शन' (सत्य कल्पना से अधिक आश्चर्यजनक होता है।) वाली कहावत को चरितार्थ करता है।

—शंकरलाल शर्मा, इटारसी

मई अंक एक विशिष्ट अंक रहा। भुट्टो संबंधी लेख प्रकाशित कर आपने अपनी साहसिक-सूझ-बूझ से पूर्ण संपादन-परंपरा का ही निर्वाह किया है। मुझे याद आता है, बंगला देश युद्ध के बाद भारत में बंदी बनाकर रखे गये हजारों पाकिस्तानी सैनिकों में से कुछ लोगों के इंटरव्यू 'कादम्बिनी' ने ही सर्वप्रथम प्रकाशित किये थे। आशा है, भविष्य में भी इस परंपरा का निर्वाह करेंगे।

—सतीशकुमार जैन, ग्वालियर

'मैंने भुट्टो को फांसी पर लटकते देखा है' लेख के कारण मुझे मई अंक अद्वितीय लगा। निस्संदेह कादम्बिनी ने

इस लेख में अछूती सामग्री पाठकों को दी है। यदि मैं यह कहूं कि 'कादम्बिनी' ने इस अछूती सत्य घटना को हिंदी में भारत के अंदर पहली बार प्रकाशित कर एक कीर्तिमान स्थापित किया है तो अतिश्योक्ति न होगी।

--दशरथभाई मालाकर, बिहटा, पटना

'काल चिंतन' में जिन मानसि कअनुभूतियों का विश्लेषण है, उससे जहां मुझे जीवन में उत्साह मिला वहीं प्रगति की राह भी मिली। कहानी 'मुरदाघर' एवं 'धापली' को पढ़ने में आनंद आया। शीला गुजराल की कविता 'न जाने क्यों' ने प्रभावित किया।

--प्रिय रवींद्र, भोपाल

मई अंक में मैस्लिमेलविल द्वारा लिखित 'मैंने भुट्टो को फांसी पर लटकते देखा है' लेख पढ़ा। अनुभूतियों की एक फिल्म-सी मस्तिष्क में घूम गयी। ऐसा लगा मानो लेख नहीं पढ़ रहा, बल्कि कोई भयंकर सपना देख रहा हूं! लेख की प्रवाहमयी भाषा अंत तक बांधे रखती है। लेख पढ़ने से कुछ नये तथ्य सामने आये, मसलन कि भुट्टो 'कवि' भी थे तथा सिल्क पहनने और शैंपेन पीने के शौकीन थे। आशा है, समसामयिक संदर्भों में इसी प्रकार आप भविष्य में भी लेख प्रकाशित करते रहेंगे।

--रामेश्वरदयाल पुजारी,
बाड़ी (राजस्थान)

सेवकराम ओखाड़ू कौन ?

'कादम्बिनी' में प्रकाशित सेवकराम ओखाड़ू के 'जो घर फूंके आपनो' शीर्षक लेख के संबंध में हमें अनेक पाठकों के प्रशंसा भरे पत्र मिले हैं, जिनमें उन्होंने सेवकराम ओखाड़ू का वास्तविक परिचय एवं पता जानना चाहा है। सेवकराम ओखाड़ू हिंदी कथाकार हैं और पाठक फिलहाल 'कादम्बिनी' के माध्यम से ही उनसे पत्राचार कर सकते हैं।

सेवकराम ओखाड़ू का 'कबिरा खड़ा बजार में' तथा डी. प्रसाद का 'यूं कट रही है जिंदगी हमारी' लेख मन को काफी भाया।

'काल-चिंतन', 'वचन-वीथी', 'किस्से खोजा फकीर के' तथा 'ज्ञान-गंगा' स्तंभ कादम्बिनी को शाश्वत मूल्यों का 'प्रतीक' बनाने में पूर्णतः समर्थ रहे हैं।

--डी. एस. मिश्रा, अयोध्या

'भारत में पर्यटन ग्रामों का निर्माण होगा' को पढ़कर मालूम हुआ कि वर्तमान सरकार गांवों के सौंदर्यीकरण तथा उन्हें पर्यटन-स्थल बनाने हेतु किस हद तक प्रयत्नशील है! निश्चित ही गांवों का पर्यटन-स्थल बनना गांवों और शहरों के बीच एक सांस्कृतिक-समन्वय की आवश्यकता को पूरा कर सकेंगे!

--कु. साधना मिश्रा, कोंडागांव (बस्तर)

मई अंक में प्रकाशित 'अमर हैं वे यहां की हर गलियों में' लेख रोचक और प्रेरणाप्रद लगा! आर्यों की आदि भूमि

तथा इंद्रदेव के संबंध में अनुसंधानात्मक तथ्य पर आधारित 'भूत-प्रेत और पिशाच मनुष्य ही थे' लेख ज्ञानवर्धक रहा ।

'समस्यापूर्ति' शीर्षक स्तंभ जो आपने प्रारंभ किया है, उस हेतु वधाई ।

—राजन राहू, कोटा

मई अंक में 'कव तक दर्द देती रहेंगी ये हिंदी फिल्में' शीर्षक लेख में श्रीमती शीला झुनझुनवाला ने भारतीय फिल्मों की वर्तमान स्थिति पर सही और सम्यक विश्लेषण प्रस्तुत किया है । सचमुच 'अनूदित सोच' के दायरे से निकलकर हिंदी फिल्में न केवल खोये जीवन-मूल्यों की पुनर्स्थापना वरन राष्ट्रभाषा के प्रचार-प्रसार में भी सहायक हो सकती हैं।

—मधूमिता सेन, कलकत्ता

आज के परिवेश में जहां मानवीय मूल्य निरंतर ह्रासोन्मुख होते जा रहे हैं, और पीत तथा प्रतिबद्ध पत्रकारिता ने रचनाधर्मियों के समक्ष अभिव्यक्ति का एक कृत्रिम संकट पैदा कर दिया है, वहां 'कादम्बिनी ' न निष्पक्षरूप से जन-अभिव्यक्ति को एक स्वस्थ माध्यम प्रदान कर अपने सांस्कृतिक दायित्व को सफलतापूर्वक निभाया है। 'कालचिंतन' का यह वाक्य कि 'स्वप्न के झूठे जल से हम अपनी प्यास नहीं बुझा सकते' हमारी संघर्षरत जिजीविषा का मूलमंत्र है और जहां हर संघर्षरत मन अपने आपको खड़ा पाता है।

—मंजुला कमलेश, बड़विल, उड़ीसा

कुओं का परदादा

मई के 'कादम्बिनी' अंक में 'आस्था के आयाम' स्तंभ के अंतर्गत 'कुओं का परदादा' में वड़ा सुंदर प्रसंग छेड़ा गया। इस संवंध में कुछ तथ्य मुझे आविकारिक रूप से ज्ञात हैं तथा 'कादम्बिनी' के पाठकों को रुचिकर होंगे, उन्हें मैं भेज रहा हूं:

१. तथोक्त कूप का एक हाथीदांत का वना मॉडल सन १९६१ में महारानी एलिजावेथ के काशी पधारने पर काशी नरेश ने भेंट किया था तथा इस तथ्य को जानकर महारानी लंदन लौटकर उस स्थल पर स्वयं कूप का निरीक्षण करने गयीं और काशी नरेश को पत्र लिखकर इसकी सूचना भी दी।

२. इसी कूप की ठीक अनुकृति काशी के नगवा महल्ले के काशीराज के वाग में अभी विद्यमान है, जिस पर लिखा है कि ऐसा कूप इंग्लैंड में बनवाया गया है।

३. इसी नगवा के काशीराज के बगीचे में नेपाली के 'भारतेंदु' कवि मोतीराम भट्ट ने साहित्य सृजन किया है।

४. तत्कालीन अंगरेज कमिश्नर का नाम रिवेडे न होकर रीऐंडे था। यह कमिश्नर काशी में १८५३ तक रहे।

५. पहाड़ी कस्वा चिल्टर्नहिल था न कि स्टोजवरी।

६. कुंआ इंगलैंड के ऑक्सफोर्ड शायर के इप्सडन नामक ग्राम में सन १८६३ में खुदा था।

—गिरीशचंद्र चौधरी, वाराणसी

आगामी अंक में

विशिष्ट लेखकों की कुछ कहानियां

कर्त्तारसिंह दुग्गल ० उषाकांता शर्मा ० ईश्वरचन्दर ० जयंत दलवी

हास्य-व्यंग्य की बेजोड़ सामग्री

सेवकराम ओखाड़ू : तेल मालिश : फिसलते हाथ ० डॉ. बरसानेलाल चतुर्वेदी : आना चुटकुला प्रसाद का और ० किस्से खोजा फकीर के

और कुछ विशेष रचनाएं

० वहां पाप मिटाने के लिए पूजा नहीं है ० जहां समूची बारात पत्थर बन गयी !
० कहानी चक्रवात की ० दाढ़ी मूछवाला बच्चा ० शोध कार्य : एक सुनहरा सपना
० जब सड़क रास्ता भूल गयी ० कहानी एक मुक्त शहर की ० प्रेमचंद : दो रूप
० हवा में तैरते हुए : एक नयी दुनिया की सैर
० अब इनकी भी बात सुन लीजिए—एक केंद्रीय-मंत्री से चौंका देनेवाली बातचीत

ग्रामीण पाठकों के लिए विशेष :

० गाय काटने से पहले आदमी को काटना पड़ेगा

नया शीर्षक—समस्यापूर्ति

हजारों पाठक एक रात में कवि बन गये ! इस स्तंभ का हमारे पाठकों ने बेहद स्वागत किया है ० पुरस्कारों की घोषणा

सार-संक्षेप

एक रहस्यमय चौंका देनेवाली दास्तान—हिंदी के पाठकों के लिए पहली बार !
नक्षत्र और आपका भविष्य तथा सभी स्थायी स्तंभ

'कादम्बिनी' पढ़िए : समय के साथ चलिए

कादम्बिनी

वर्ष १९ : अंक ८
जून, १९७९

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादम्बिनी वर्षतु

निबंध एवं लेख

ब्रजलाल वर्मा
गैरजिम्मेदार कर्मचारी २८
नवीन खन्ना
आप घर में परमाणु बना सकते हैं. ३५
कृष्णचन्द्र
विवाह के लिए अखबार चाहिए. ४०
कृष्णकुमार बिरला
वेतनों की सीमा है ४४
विमला मेहता
१० डाउनिंग स्ट्रीट में ५८
भिक्षु महाबोधि मोगलायन
बुद्ध के अंतिम दिन. ६२
डॉ. देशबंधु विष्ट
जीवन की अंतिम शाम थी ६९
योगराज थानी
भारतीय क्रिकेट : ७५
कविराज वेदव्रत शर्मा
आयुर्वेद में रक्तचाप का उपचार. . . .८१
डॉ. श्रीकृष्णदत्त भारद्वाज
योग द्वारा रक्तचाप का उपचार. . . .८२
महेश्वरदयाल
एक नूर आदमी : हजार नूर कपड़ा . .१०४
चन्द्रमोहन 'प्रधान'
वे प्रलय तक भटकते रहेंगे. ११०
नीरा गर्ग
पृथ्वी गरम हो रही है ! ११७
डॉ. विश्वनाथ अय्यर
केरल की ऐतिहासिक कथाएं. . . . १२०
प्रभा भारद्वाज
लोहे के फेफड़े में कैद संपादक. . . .१२५
संगमलाल मालवीय
एक शहर सदाबहार नजाकत का. . .१२८
शक्तिप्रकाश रावत 'सम्राट'
एक सांस में ढाई मन की खीर १४३
पं. पुनर्वसु
नक्षत्र और आपका भविष्य. १४६

स्थायी स्तंभ

आस्था के आयाम—१०, शब्द सामर्थ्य—१२, प्रतिक्रियाएं—१४, समय के हस्ताक्षर—२०, काल-चिंतन—२५, हंसिकाएं काव्य में—४३ (डॉ. सरोजनी प्रीतम), बुद्धि-विलास—५५, वचन-वीथी—८०, ज्ञान-गंगा—९३, चुटकियां—९४, किस्से खोजा फकीर के—९५, तनाव से मुक्ति—९६, विधि-विधान—११४, गोष्ठी—१५२, नयी कृतियां—१६७

मुखपृष्ठ : प्रेम कपूर

कथा-साहित्य

राजेन्द्रशंकर भट्ट
मंदिर और मठों का भविष्य १५५

माया मिश्र
सड़ा अंकुर ४६

कुओ मो-जो, हूआंग जुई-यानपी, पाओ-चुन
चीनी लघुकथाएं ५६

दामोदर खडसे
चुमता हुआ घोसंला ८६

कृष्णकिशोर श्रीवास्तव
फ्रिज १००

आशुतोष मुखर्जी
तप १३३

मशकूर हुसैन याद
शक्ति के चमत्कार १६०

कविताएं

फहमीदा रियाज
एक बहुत ही सीधी बात १६४

डॉ. वचनदेव कुमार
अजनबी..................१६५

पारस तातारी
गजल १६५

रामसहाय यात्री
बस तेरे लिए..............१७७

सार-संक्षेप

चार्ल्स बर्लिट्स
द्वीप जिसे समंदर पी गया ... १७८

संपादक

राजेन्द्र अवस्थी

संयुक्त-संपादक
शीला झुनझुनवाला

सह-संपादक : दुर्गाप्रसाद शुक्ल
उप-संपादक : कृष्णचन्द्र शर्मा,
प्रभा भारद्वाज, डॉ. जगदीश चंद्रिकेश
प्रूफरीडर : स्वामी शरण
चित्रकार : सुकुमार चटर्जी

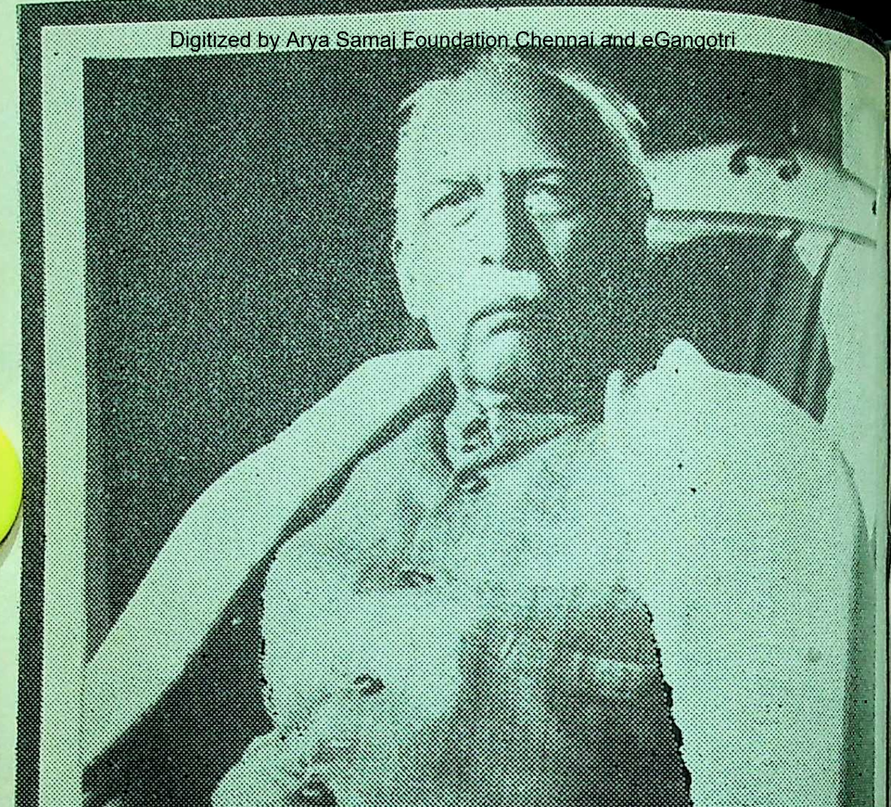
हजारीप्रसाद द्विवेदी

जन्म : १९ अगस्त, १९०७ **निधन** : १९ मई, १९७९

श्रद्धांजलि

जिंदगी और मौत के दस्तावेज

यह सत्य है कि मृत्यु अनिवार्य है, व्यष्टि-रूप में प्रत्येक व्यक्ति मरने को बाध्य है। जिसका जन्म हुआ है, उसकी मृत्यु होगी––'जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः।' फिर भी मुझे लगता है कि सामूहिक रूप में मनुष्य की जीने की इच्छा कभी नहीं मरेगी। इस इच्छा के कारण ही मनुष्य भविष्य की योजनाएं बनाता है, सुनहले स्वप्न देखता है तथा जन्म और मृत्यु के विषय में दार्शनिक विवेचन करता है। व्यक्ति नहीं रहेगा, लेकिन समष्टि रहेगी। सोचना-विचारना उसी के लिए है।

●

मुझे ऐसे अनेक मित्रों से, जिनकी सच्चाई के बारे में मुझे पूरा विश्वास है, सुनने को मिला है कि उन्होंने अपनी संकल्पशक्ति से और योजनाबद्ध तरीके से भिन्न-भिन्न कार्य सिद्ध किये हैं। मैं नहीं कर सका हूं। शुरू से अंत तक जीवन में जो करना चाहा, वह नहीं कर सका और जिसकी बिलकुल आकांक्षा नहीं थी, वह हो गया। बनने चला था ज्योतिषी, बन गया हिंदी का लेखक। जो लिखना चाहा था वह नहीं लिखा, अप्रत्याशित रूप से कुछ ऐसा लिख गया, जिसकी कल्पना भी मन में नहीं थी। इसलिए योजनाबद्ध ढंग से कोई काम नहीं कर पाया।

●

जो जिंदगी का कोई दस्तावेज नहीं बना सका, वह मौत का दस्तावेज क्या तैयार करेगा! दस्तावेज भी कुछ स्वतंत्र-चिंतन की अपेक्षा रखता है। कौन जानता है कि कुछ बनाते-बनाते क्या बना जाऊं? सो, मैं इस झमेले में नहीं पड़ता। जानता हूं कि बनाने-वाला कोई और है। मैं उसके इशारे की प्रतीक्षा भी नहीं कर पाऊंगा। जब, जहां, जैसे चाहेगा, बनवायेगा। बेकार कौन मूड़ मारे!

––डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी, 'कादम्बिनी', फरवरी '७८

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का नाम साहित्य-प्रेमियों के लिए नया नहीं है। उनका परिचय देना हमारी अज्ञानता और दुःसाहस होगा। आचार्य द्विवेदी का जन्म १९ अगस्त, १९०७ को गांव दुबैका, जिला बलिया उ. प्र. में हुआ था। भारत सरकार ने उन्हें पद्मभूषण की उपाधि से अलंकृत किया था।

एक ओर जहां शुक्लोत्तर युग के आलोचकों में उनका शीर्षस्थ स्थान था, वहां अपने उपन्यास 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के प्रकाशन से ही उन्होंने न केवल हिंदी के बल्कि सभी भारतीय भाषाओं के श्रेष्ठ उपन्यासकारों में अपना विशेष स्थान बना लिया था।

अप्रतिम उपन्यासकार, निबंध-लेखक और आलोचक आचार्य द्विवेदी के समूचे चिंतन की आधारभूमि भारतीय संस्कृति और मानवतावाद थी।

समय के हस्ताक्षर

एक चेतना सो गयी

आचार्य द्विवेदी १९७२ से उत्तरप्रदेश 'हिंदी-ग्रंथ अकादमी' के संचालक-मंडल के अध्यक्ष थे, इसके पूर्व वह विश्वभारती हिंदी-भवन के निदेशक (१९३०-३५), बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में हिंदी-विभाग के प्राचार्य एवं अध्यक्ष (१९५०-६०), पंजाब-विश्वविद्यालय में हिंदी-विभाग के प्राचार्य एवं अध्यक्ष (१९६०-६७), टैगोर प्रोफेसर (१९६७)। बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के रैक्टर (१९६८-७०) और हिंदी भाषा के ऐतिहासिक व्याकरण के निदेशक (१९७०-७२) भी रहे थे।

वह निम्नांकित संस्थानों, समितियों आदि के सदस्य भी रहे थे--राजभाषा आयोग (१९५५-५६), राष्ट्रीय प्रसारण समिति (१९६७)। राष्ट्रीय शिक्षा परिषद, साहित्य-अकादमी की महासभा और कार्यकारिणी (१९७१) तक।

आचार्य द्विवेदी के अब तक ३० से अधिक ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं, जिनमें 'हिंदी साहित्य की भूमिका', 'कबीर', 'नाथ संप्रदाय', 'बाणभट्ट की आत्मकथा', 'चारु चंद्रलेख', 'अशोक के फूल', 'कुटज', 'कल्प लता', 'आलोक पर्व' और 'पुनर्नवा' विशेष उल्लेखनीय हैं।

आचार्य द्विवेदी को अनेक संस्थाओं ने पुरस्कृत किया था। उन्हें १९४७ में मंगलाप्रसाद पुरस्कार, १९६७ में हिंदी साहित्य सम्मेलन की ओर से साहित्य वाचस्पति की उपाधि, लखनऊ विश्वविद्यालय की ओर से डी. लिट् की मानद उपाधि (१९४९), साहित्य-अकादमी का टैगोर पुरस्कार (६२), रवीन्द्र भारती का टैगोर पुरस्कार (७३) और साहित्य अकादमी पुरस्कार (१९७३) भी प्राप्त हुआ था।

आचार्य द्विवेदी की मृत्यु से चिंतन और विचारशीलता के एक समूचे युग का अंत हो गया है। उन जैसे व्यक्ति शताब्दियों में एक बार पैदा होते हैं। वे साहित्य और भारतीय संस्कृति के एक अतुलनीय आख्याता थे। उनका देह-अंत (देहांत) भले हो गया हो, लेकिन भारतीय संस्कृति और साहित्य के संदर्भ में द्विवेदीजी कभी नहीं मरेंगे। उन्होंने भारतीय संस्कृति के उन पक्षों का विवेचन किया है, जिन पर पुरातत्त्ववेत्ताओं और इतिहासकारों का भी ध्यान नहीं गया। उदाहरण के लिए 'प्राचीन भारत के कला-विनोद' शीर्षक उनका निबंध-संग्रह लिया जा सकता है, जिसमें उन्होंने बहुत सहज संप्रेष्य भाषा के द्वारा अतीत के गतिमान भारत और उसकी सांस्कृतिक चर्याओं का विवरण दिया है।

द्विवेदीजी ब्राह्मण-कुल में जन्म लेकर ज्योतिर्विद होते हुए भी विचार के स्तर पर कबीर से प्रभावित थे। कहना चाहिए, कबीर से उन्होंने न केवल सरलता का प्रभाव लिया, अपितु कबीर के मानिंद उन्होंने आडंबर और थोथे संस्कारों पर चोट कर स्वयं को उदाहरण बनाकर, प्रमाण दिया।

हिंदी के विश्वविद्यालयीन आचार्यों की परंपरा से आचार्य द्विवेदी बहुत दूर अलग खड़े हैं, क्योंकि उनके पास विश्वविद्यालय के उच्चतम पदों और कुलपति के योग्य उपाधियां नहीं थीं, बल्कि उपाधि के नाम पर विश्वविद्यालय की कोई भी डिग्री उनके

विवेक की !

अंतिम दर्शन : 'सन्निधि' में दर्शनार्थ रखा गया आचार्य द्विवेदी का पार्थिव शरीर

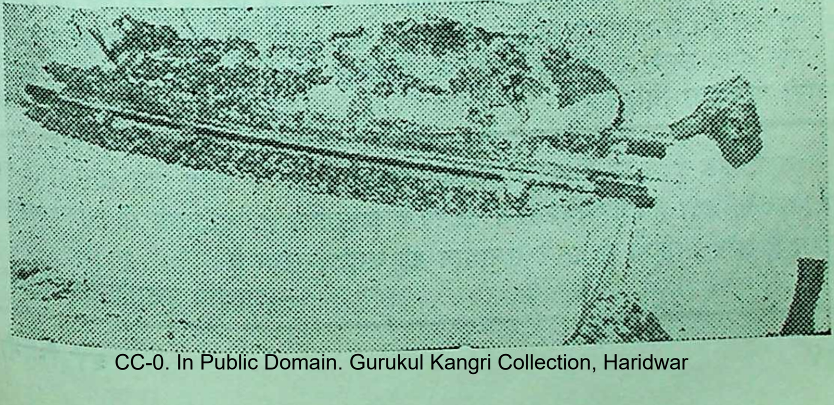

पास नहीं थी। परिणामतः आज के आचार्यों की तरह, किताबी कीड़े बनने की अपेक्षा उन्होंने अपनी श्रमशीलता, रचना-धर्मिता और सृजनात्मकता के स्तर पर बिलकुल नये आयामों को उद्घाटित किया है। वे इस बात के प्रमाण हैं कि सृजनात्मक लेखक अधिक प्रामाणिक और सशक्त 'अकादमीशियन' हो सकता है।

इसे दुर्भाग्य कहा जाएगा कि जहां भारतीय शास्त्रों में वाराणसी को स्वर्ग का द्वार खोलनेवाली नगरी कहा गया है और जहां अपने जीवन का अंत करने के लिए लोग जाकर रहते हैं, आचार्य द्विवेदी को अपने अंतिम दिनों में वाराणसी छोड़ना पड़ा और विरोधाभासों की नगरी दिल्ली में जीवन-लीला समाप्त करनी पड़ी।

द्विवेदीजी की मृत्यु से उद्भूत कुछ मूलभूत प्रश्न

आजादी के बाद से अब तक ३२ वर्षों में क्या हमारे देश ने राजनीति के आधार पर विश्व में अपनी कोई अलग पहचान बनायी है——निश्चित ही नहीं !

तब भी भारत का एक गौरवपूर्ण मानचित्र विश्वभर में व्याप्त है। उसका कारण है यहां की सांस्कृतिक और साहित्यिक थाती और वे महान व्यक्तित्व जो वाल्मीकि, कालिदास, तुलसीदास से लेकर आचार्य द्विवेदी तक हमारे देश में पैदा हुए हैं।

द्विवेदीजी की मृत्यु १९ मई को हुई । उस दिन राजधानी में सारे हिंदीभाषी राज्यों के मुख्यमंत्री उपस्थित थे। जनता द्वारा चुनी हुई सत्ता के संचालकों को (केवल उत्तरप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री बनारसीदास गुप्त को छोड़कर) दस मिनट का भी समय नहीं मिला कि वे ऐसे महान व्यक्तित्व को जाकर श्रद्धांजलि भेंट कर सकें, जबकि उनका शव पूरे ढाई घंटे 'सन्निधि' (गांधी स्मारक निधि) में रखा गया था।

उस दिन मुख्यमंत्री सम्मेलन में शायद इतने महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर चर्चा हो रही थी कि उनकी स्मृति में एक शोक प्रस्ताव पारित करना भी उचित नहीं समझा गया!

उनकी शव-यात्रा में, राजनेताओं में, सर्वश्री चन्द्रशेखर, जनेश्वर मिश्र, रामधन, नरसिंह यादव, लाड़लीमोहन निगम ही उपस्थित थे।

द्विवेदीजी का शरीर अब नहीं रहा, लेकिन एक मूलभूत प्रश्न रह ही जाता है कि इस देश में एक साहित्यकार की बिसात क्या है ? अंत में मृत्यु के द्वार पर हम सबको भी पहुंचना है। अमर होकर कोई नहीं आया। जो हमारे हैं, जो हमें छोड़कर जा रहे हैं, जाते वक्त उनके प्रति किस सीमा तक कृतज्ञता प्रकट कर सकते हैं, इसी में शायद हमारी सार्थकता निहित है। ●

बहुत कुछ टूट रहा है, बहुत कुछ ढह रहा है। मनुष्य सर्वत्र इन समस्याओं का समाधान खोजता है। वह विज्ञान से इसका हाल पूछता है, इतिहास से इसका रास्ता पूछता है और साहित्य से इसके समाधान की आशा रखता है।

——आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

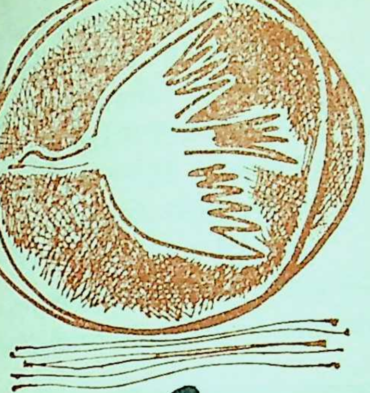

कालचिंतन

— प्रतिदिन की रेल यात्रा : सूरज की पहली किरण और गहराते हुए अंधेरे के बीच सड़कों, गलियों और सीढ़ियों को नापते, बिछुड़ने और मिलने का क्रम—कितना चल चुके इसमें : वह हिसाब लगा रहा था। उत्तर मिला पांच बरस में दस हजार मील !

— दस हजार मील ! किसलिए : सौंदर्य की किन ऊंचाइयों तक पहुंचने में अथवा प्रकृति के सुरम्य रहस्यमय आलोक को उद्घाटित करने में उसने बिता दिये इतने दिन !

— उत्तर यहां भी भ्रामक ! नकारात्मक स्वर ! कुछ भी तो नहीं मिला, न देखा-परखा या सुना-समझा ! कोल्हू के एक बैल की तरह वही सीधा रास्ता, वही प्लेटफार्म, वही रेल, वही दफ्तर, वही सुबह और वैसी ही शाम ! एक मशीनी जिंदगी आधुनिक उपकरणों से अभिशप्त दधीचि की हड्डी बनकर रह गयी।

— एक दिन अचानक उसने स्टेशन तक पैदल चलने का निश्चय किया, ताकि उसके मस्तिष्क में रेल के इंजिन की गड़गड़ाहट न समा सके और वह मशीनीकरण की दुनिया से उभरकर अपने भीतर के आदमी के साथ जी सके !

— उसने हलके-से स्वर सुने ! वह ठिठककर रुक गया ! स्वर थम गये थे ! उसने कदम जरा आगे बढ़ाये, तो फिर वही स्वर : मधुर स्वर !

— घंटियों के स्वर हैं ये !

— घुंघरुओं की हलचल, किसी बारीक से बहते नाले की धार का वह आभास, जो केवल हवा के किसी झोंके में ही तैरकर पहुंच सकता है !

— एक साथ हंसने-खिलखिलाने का अहसास !

— फिर अट्टहास !

— फिर रेल की तीव्र कर्कश ध्वनि, किसी प्राचीन युद्ध का व्यतीत उजागर हो रहा है !

●●

— कितना-कुछ तुच्छ है यह सब ! उसने जिंदगी के इतने मूल्यवान क्षण केवल एक घंटी और घुंघरुओं की आवाजों में बिता दिये !

— ये आवाजें उसके घर की थीं !

— पत्नी उसके गले की घंटी है !

— उसके बोल घुंघरू हैं !

— वह रोज केवल इन्हीं के लिए जाता है और आता है !

— इन सबका पेट भरना है न उसे !

— न ये होते, न आने-जाने की नौबत आती !

●●

— घर ?

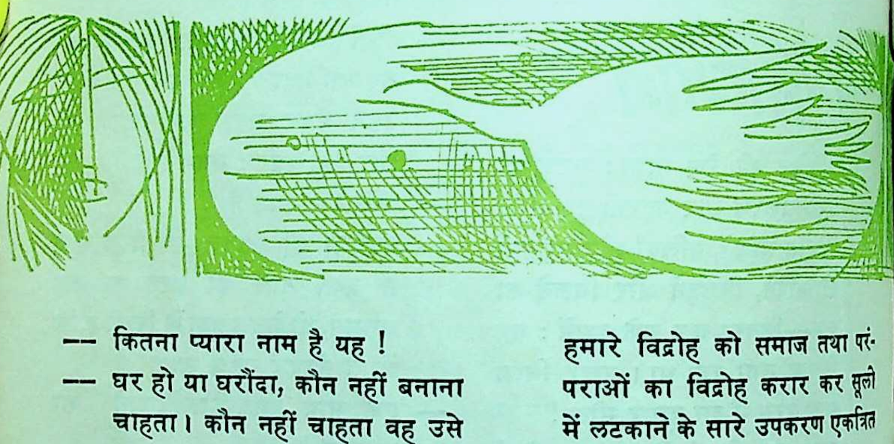

— कितना प्यारा नाम है यह !

— घर हो या घरौंदा, कौन नहीं बनाना चाहता। कौन नहीं चाहता वह उसे 'अपना' कहे ! परंतु इसके बनते ही घंटी वर्ष की अंतिम रात्रि के माहौल में खो जाती है और वह सुबह होने तक सिर्फ बजती रहती है !

— क्या इससे बेहतर नहीं है, फुटपाथों की जिंदगी !

— वहां मर्यादाओं का मोल झूठ और फरेब की दूकानों में नहीं तौला जाता!

— कोई आवृत्त नहीं किये हैं; प्रतीक्षा के वहम में कोई नहीं जी रहा ! न वे अपने आपसे लड़ रहे, न दूसरों से; सह-अस्तित्व के समान भागीदार, आश्रयहीन, बेघर कितने बसे-संवरे हैं वे; और कितने आबाद हैं उनके घर!

— हम आबाद घरों में उजड़े हुए महलों के तहखाने देखने रोज जाते हैं, जैसे रोज अपनी ही मजार पर चादर चढ़ाते हैं !

— दुआएं मांगने का अधिकार भी हमसे किसी ने छीन लिया है और हमारे विद्रोह को समाज तथा परंपराओं का विद्रोह करार कर सूली में लटकाने के सारे उपकरण एकत्रित कर लिये गये हैं।

— सूली हमारे नसीब में नहीं है !

— आत्महत्या हमारे धर्म में पाप है !

— पुण्य है दमघोंट धुएं को ऑक्सीजन समझकर सतही सांस लेते रहना ! तभी हम अपने पूर्वजों के सपूत बनेंगे, उनकी आत्माओं को शांति देंगे !

— स्वयं अशांत रहकर आत्माओं को शांति देना—कितना अच्छा लगता है, समंदर के किनारे रेत के महल

बनाना और फिर किसी एक लहर के द्वारा उनको विध्वंस होते देखते रहना !

— अपने ही खून को अपनी ही जीभ से चाटने में कितना मजा आता है !

— अपने कोमल पैरों में पट्टी बांधकर एक प्रलय को जीतने की भावना कितनी सुखद होती है !

— हम सब एक सीमा-रेखा में जीते हैं!

— सोचने-समझने की भी हमने सीमा बना ली है !

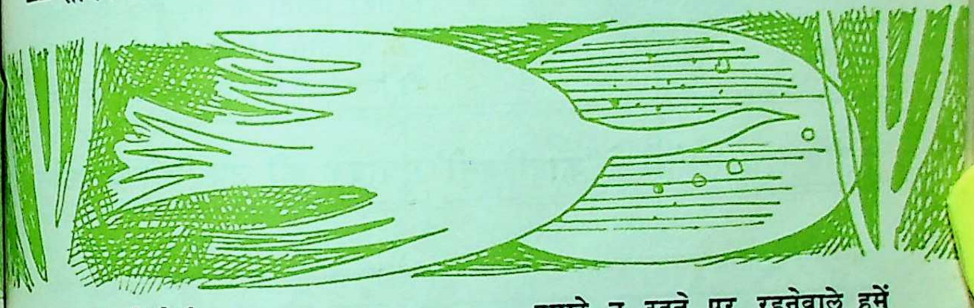

— न जाने किन अजूबा, भुतहा, भग्न राजमहलों के दावेदार बनने का अधिकार अपनी मजबूत मुट्ठियों में कैद कर लेते हैं और पुनर्जन्म की व्याख्या में उलझकर वर्तमान की घंटियों और घुंघरुओं के कर्कश स्वरों को भविष्य के स्वर्णिम महलों की कल्पना में 'भोग' की तरह वैतरणी से तैरते हैं हम !

— यह नहीं तो वह जनम, वह नहीं तो और ... और यह और ... ! यही तो खा रहा है, हमारे 'आज' को !

— हम व्यर्थ ही यात्राएं कर रहे हैं !

— हम व्यर्थ की सीमाओं में मित्रता के सूत्र खोजते हैं; वे सूत्र, जो कच्चे धागे से भी ज्यादा नाजुक होते हैं !

— कौन किसका है ?

— सब स्वार्थों के दियों में अपनी जिंदगी का तेल अर्पण कर रहे हैं !

— करते रहेंगे हम ! क्योंकि परंपराओं को तोड़ने का सामर्थ्य हम खो चुके हैं !

— जिंदगीभर हम घंटी और घुंघरुओं की प्रतिध्वनियां सुनते रहेंगे ताकि हमारे न रहने पर रहनेवाले हमें पत्थरों में तराश सकें !

— सचमुच सांसों की जिंदगी से पत्थर की जिंदगी में परिवर्तित होकर सदियों तक अमर बने रहना कितना सुखद है, कितना निरापद और निर्भय; और मूल्यवान भी कि कोई चोरी भी करे तो हमारी कीमत लाखों में आंकी जाए, जबकि जीवित रहते, हम कौड़ी के मोल भी खरीदे नहीं जा सकते थे !

राजेन्द्र अवस्थी

केंद्रीय संचार-मंत्री से 'कादम्बिनी' संपादक की उपयोगी बातचीत

गैर जिम्मेदार कर्मचारी : दंड के भागीदार हैं!

● ब्रजलाल वर्मा
(केंद्रीय संचार-मंत्री)

केंद्रीय डाक-तार एवं संचार-मंत्री श्री ब्रजलाल वर्मा ने कुछ दिन पहले एक अनौपचारिक बातचीत में हमें बताया था कि उन्होंने अपने विभाग में अनेक क्रांतिकारी परिवर्तन किये हैं। यही नहीं, इस तरह के परिवर्तनों की उनकी एक लंबी योजना है।

हमने श्री वर्मा को उनकी इन उपलब्धियों के लिए बधाई दी थी, लेकिन हमने उन्हें उस नौकरशाही के प्रति भी सचेत किया था, जो अपनी लालफीताशाही के फंदे में अच्छी से अच्छी योजनाओं और जनोपयोगी कार्यक्रमों का दम घोटने में एक अजीब-सी तृप्ति का अनुभव करती है।

श्री वर्मा ने हमें वचन दिया कि वे ऐसा नहीं होने देंगे और इस मामले में जायज शिकायत मिलने पर तत्काल कदम उठायेंगे।

श्री वर्मा एक ऐसे विभाग के मंत्री हैं, जिसका जनता के सुख-दुःख से चौबीस घंटों का साथ है। वह हर पल, हर व्यक्ति की जिंदगी से जुड़ा हुआ है, चाहे वह अमीर हो या गरीब। झोपड़ी से लेकर महलों तक-सभी जगह संदेश भेजने या पाने के लिए आतुर आंखें इस विभाग की दया पर 'निर्भर' रहती हैं। डाक, तार, टेलीफोन, कुछ भी तो ऐसा नहीं, जिसके बिना आज का जीवन चल सके। ऐसे महत्त्वपूर्ण विभाग में वर्माजी ने क्या परिवर्तन किये हैं, और वे क्या नये परिवर्तन करने जा रहे

हैं, इन विषयों पर हमने उनसे एक लंबी अनौपचारिक बातचीत की, जो यहां प्रस्तुत है ।

परिवर्तनों की शुरूआत

प्रश्न : आपने टेलीफोन विभाग में कौन-कौन से नये क्रांतिकारी परिवर्तन किये हैं ?

उत्तर : हमने वर्तमान टेलीफोन-व्यवस्था में सुधार के लिए कई महत्त्वपूर्ण कदम उठाये हैं । पहली बात तो यह है कि इस समय देश में अधिकांश स्थानों पर टेलीफोन के खुले तारों का उपयोग किया जा रहा है। इनसे उनके काटे जाने और चुराये जाने का भय बना रहता है। आंधी-पानी से क्षतिग्रस्त होकर वे अकसर संचार-व्यवस्था को भंग कर देते हैं। अब हम 'माइक्रो-वेव सिस्टम' अपना रहे हैं 'माइक्रो-वेव सिस्टम' वही है जो रेडियो-टेलीविजन में बेतार के सहारे काम देता है। अब टेलीफोन भी इस प्रणाली से बेतार-पद्धति के द्वारा चलने लगेंगे, जो आधुनिक देशों में प्रचलित है। भारत में भी 'को-एक्सिल' और 'माइक्रो-वेव सिस्टम' का उपयोग करने का हमने निश्चय किया है ।

कलकत्ता-जैसे घनी आबादीवाले शहरों के गली-कूचों में जहां टेलीफोन के तार भूमि के भीतर बिछाना कठिन और खरचीला है, वहां हमने 'इंटरनल माइक्रो-वेव सिस्टम' का प्रयोग शुरू कर दिया है। इस प्रणाली के उपयोग से न तारों की चोरी का खतरा होगा और न बरसात में भूमिगत तारों में खराबी हो जाने के कारण किसी गड़बड़ी की आशंका होगी ।

प्रश्न : 'माइक्रो-वेव प्रणाली' कहां-कहां अपनायी जाएगी ?

उत्तर : अभी तो इसे हम कलकत्ता, बंबई और दिल्ली महानगरों के घनी आबादी-वाले इलाकों में शुरू करने जा रहे हैं।

इलेक्ट्रानिक एक्सचेंज के पुरजों की जांच करते हुए तकनीशियन

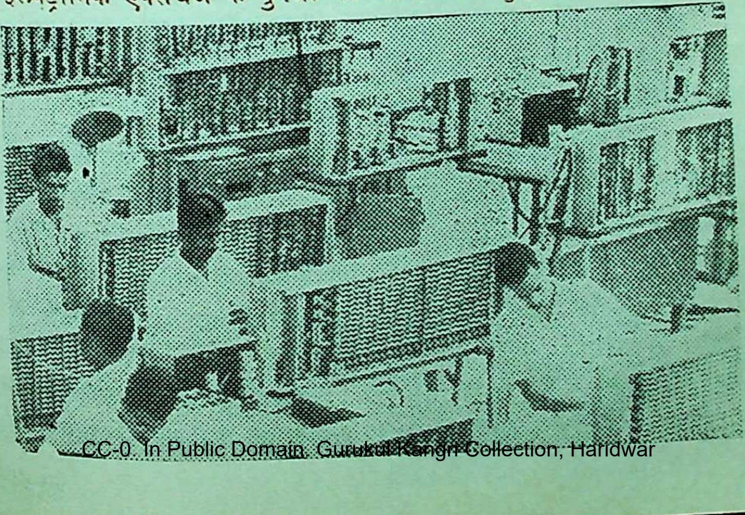

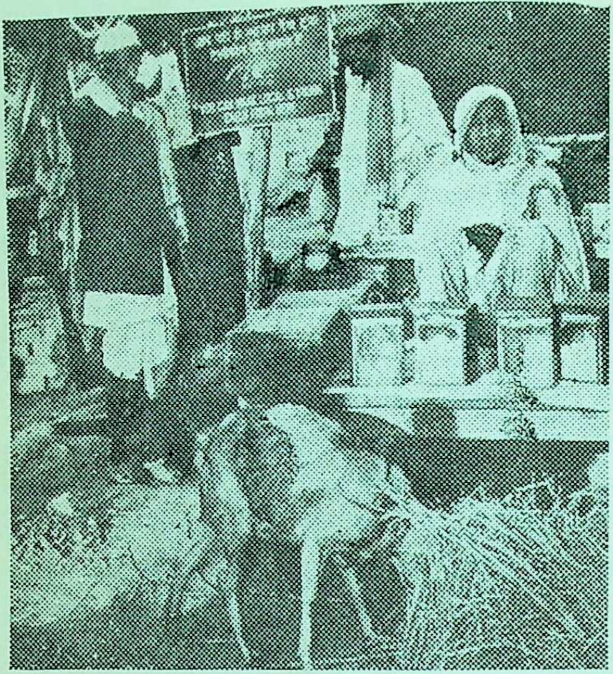

गांववालों के लिए टेलीफोन अनेक सुविधाओं की सौगात लेकर आया है। अब कड़ी धूप या भीषण बरसात में सफर कर संदेश पहुंचाने की बजाय वे टेलीफोन के द्वारा अपनी बात कह सकते हैं।

प्रश्न : शेष इलाकों में ?

उत्तर : वहां मौजूदा टेलीफोनिक–व्यवस्था में सुधार किया जा रहा है, क्योंकि वरसात में अकसर भूमिगत तारों में खरावी आ जाती थी। अब हमने इन तारों में 'गैस प्रेशराइजेशन', 'जेली फील्ड' का उपयोग कर इन खराबियों की जड़ ही काट दी है।

प्रश्न : इन दोनों प्रणालियों को जरा सरल शब्दों में बताइए।

उत्तर : 'गैस प्रेशराइजेशन' प्रणाली में हम भूमिगत तारों में गैस या 'ड्राई-एयर' (सूखी हवा) भर देते हैं। यदि तार में कहीं 'लीकेज' हुआ तो वहां से तुरंत गैस निकलने लगती है और एक्सचेंज को तुरंत पता लग जाता है। इससे तुरंत गड़बड़ी दूर की जा सकती है। इस पद्धति का उपयोग वहां संभव है, जहां टेलीफोनों की संख्या ज्यादा है।

'जेली फिल्ड' में हम 'मोबिल-आइल' की तरह का एक तरल द्रव्य तारों वाले पाइप में भर देते हैं, जिससे उनमें वरसात का पानी प्रवेश नहीं कर पाता। जहां भी कहीं 'लीकेज' हुआ तो तरल द्रव्य वाहर आ जाएगा और गलती तुरंत पकड़ी जा सकती है। ऐसे शहरों में जहां कम टेलीफोन हैं, यह पद्धति उपयोग में लायी जाती है।

इन दिनों हम एक और महत्त्वपूर्ण कार्य में जुटे हैं। हम सारे देश में टेलीफोन

के उन तमाम तारों की जांच कर रहे हैं जो पोल यानी खंभे से घर के भीतर कनेक्शन तक जाते हैं। अगले दो वर्षों के भीतर हम तमाम तारों और उपकरणों का पूरा 'ओवरहाल' कर देंगे।

प्रश्न : हमने अनेक विकसित देशों में 'इलेक्ट्रानिक एक्सचेंज' देखे हैं। यह शायद आधुनिकतम तकनीक है। अपने देश में कब तक 'इलेक्ट्रानिक एक्सचेंज' काम करने लगेंगे।

उत्तर : बंबई में १० हजार लाइनोंवाला तो एक 'इलेक्ट्रानिक एक्सचेंज' कार्य कर ही रहा है। दिल्ली में राजौरी गार्डन में हमने एक 'इलेक्ट्रानिक एक्सचेंज' प्रायोगिक तौर पर शुरू किया है। हम देश में ही 'इलेक्ट्रानिक एक्सचेंज' के निर्माण की योजना बना रहे हैं।

उपग्रह बनेगा डाकिया

प्रश्न : उपग्रहों के उपयोग से भी तो संचार-व्यवस्था को कुशल और प्रभावी बनाया जा सकता है। इस दिशा में आपकी क्या योजना है ?

उत्तर : हमने उपग्रह द्वारा दूर-संचार परिपथों की व्यवस्था का एक कार्यक्रम तैयार किया है। आशा है कि अगले वर्ष अर्थात १९८०-८१ तक भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह 'इन्सेट' काम करने लगेगा। 'इन्सैट' द्वारा तीन महत्त्वपूर्ण सेवाएं—दूर-संचार, दूरदर्शन विस्तार कार्य और मौसम-विज्ञान संबंधी सुविधा प्रदान करने का कार्यक्रम बनाया गया है। इस सिलसिले में हम २८ स्थानों में भू-स्टेशन बनाएंगे जिनसे गंगतोक (सिक्किम), ईटा नगर (अरुणाचल) अगरतला (त्रिपुरा), कोहिमा (नागालैंड), इम्फाल (मणिपुर), गोवा आदि को सेवा प्रदान की जाएगी। इसके अलावा हम चार सड़क परिवहनीय और दो हवाई सड़क परिवहनीय भू-स्टेशन भी बनाएंगे। प्राकृतिक आपत्तियों के वक्त इनका प्रयोग किया जा सकेगा। हम 'इन्सैट' द्वारा दिल्ली, बंबई, कलकत्ता और मद्रास को अंतःरूप से जोड़ेंगे।

गांव-गांव में टेलीफोन

प्रश्न : दूर संचार सेवाओं का लाभ देहातों और छोटे शहरों को भी मिले, इसके लिए आप क्या कर रहे हैं ?

स्ट्रोगर एक्सचेंज का एक दृश्य

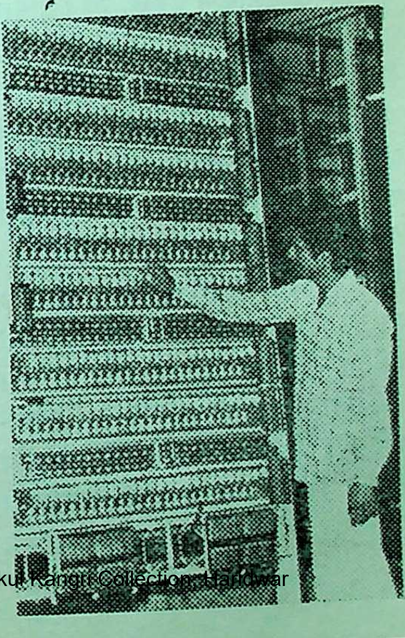

टेलीफोन ठीक नहीं होता तो आप क्या करें ?

जनता की शिकायतों पर तत्काल ध्यान देने के लिए केंद्रीय संचार-मंत्री ने दो पृथक निदेशकों (डॉयरेक्टर ऑव कंप्लेंट्स) की नियुक्ति की है। इनके पास देश के किसी भी हिस्से की शिकायत भेजी जा सकती है। यह विभाग संचार-भवन में है। टेलीफोन नंबर हैं—३८१६६९, ३८०६६८। डॉयरेक्टर के घर भी टेलीफोन से शिकायत कर सकते हैं। कोई आपसे पैसा मांगता हो, तो भी तुरंत शिकायत कीजिए। वहां भी न सुनी जाए तो सीधे मंत्रीजी को फोन कीजिए। फोन नंबर : कार्यालय ३८४१२४, निवास ३८३७२१।

उत्तर : हम गांव-गांव में टेलीफोन पहुंचाने का सपना साकार करने जा रहे हैं। इसमें समय तो लगेगा, पर एक दिन ऐसा अवश्य आएगा, जब गांव-गांव में टेलीफोन होंगे। अगले चार वर्षों में हम पिछड़े ग्रामीण क्षेत्रों में १५,००० सार्वजनिक टेलीफोन घर खोलेंगे। पिछले वर्ष ७७-७८ में हमने ऐसे ग्रामीण इलाकों में २,७९० सार्वजनिक टेलीफोन घर खोले हैं। ग्रामीण दूरसंचार व्यवस्था को कारगर बनाने के लिए हमने अनेक रियायतें भी दी हैं। अव घाटे की सीमा विना निर्धारित किये और न्यूनतम राजस्व की शर्त लगाये बिना, पांच हजार से अधिक आवादीवाले स्थानों में टेलीफोन और तार की सुविधाएं देंगे। पहाड़ी क्षेत्रों में और भी सुविधा दी जाएगी। जहां ढाई हजार से अधिक की आवादी होगी, हम टेलीफोन और तारघर खोलेंगे।

हमारा यह भी प्रस्ताव है कि दूरवर्ती क्षेत्र में यदि एक बड़े केंद्रीय गांव के दस किलोमीटर के दायरे में किसी ग्राम-समूह की आवादी ढाई हजार से अधिक हो तो वहां भी टेलीफोन लगाये जाएंगे। तार सुविधाएं दी जाएंगी। इसके अलावा पिछड़े इलाकों में पुलिस चौकियों, उन दूरवर्ती स्थानों में, जहां चालीस किलोमीटर के दायरे में कोई टेलीफोन एक्सचेंज और बीस किलोमीटर के दायरे में कोई तारघर न हो, टेलीफोन, तार-सुविधाएं देने को तैयार है। पर्यटन और तीर्थ-स्थलों तथा कृषि, सिंचाई, विद्युत परियोजनाओं और अन्य बस्तियों में भी इसी आधार पर ऐसी सुविधाएं दी जा सकती हैं।

इन सब सुविधाओं से देश की दूर-संचार व्यवस्था में क्रांतिकारी परिवर्तन आएगा।

नौकरशाही का अभद्र व्यवहार

प्रश्न : आपकी सफलता के लिए शुभकामनाएं, परंतु आपके विभागीय कर्मचारियों और अधिकारियों के व्यवहार से हमें ही नहीं, सारी जनता को शिकायत है। उनका व्यवहार मधुर नहीं है और नौकरशाही से वह बेहद ग्रस्त है। हम अपना आक्रोश

आपको बताना चाहते हैं।

उत्तर : मैं अपने विभाग के कर्मचारियों से बार-बार कहता हूं कि वे जनता की सेवा के लिए हैं। जनता उनके मातहत नहीं है। वे जनता का दिया हुआ वेतन खाते हैं। जनता को प्रसन्न रखकर ही वे अपना वेतन बढ़वा सकते हैं और नौकरी में रह सकते हैं। जनता के साथ गैर-जिम्मेदार व्यवहार मुझे बर्दाश्त नहीं होगा।

प्रश्न : इसके बावजूद आपके कर्मचारियों और अधिकारियों का जनता से व्यवहार रूड (अभद्र) होता है। कई शिकायतों के बावजूद टेलीफोन ठीक नहीं होते, टेलीफोन बिल देने के बाद भी टेलीफोन काट दिये जाते हैं और जनता को परेशान किया जाता है। आप इसके लिए क्या कर रहे हैं? इसमें आपने सुधार नहीं किया, तो आपकी बाकी योजनाएं व्यर्थ हैं।

उत्तर : जनता से अभद्र व्यवहार करने वाले कर्मचारियों और अधिकारियों को हम कड़ा दंड देते हैं। दिक्कत यह है कि जनता की शिकायतें हम तक पहुंच नहीं पातीं। जब भी हमने शिकायत जायज पायी है, तत्काल कदम उठाया है।

तुरंत दंड की व्यवस्था

प्रश्न : हर व्यक्ति तो आप तक पहुंच नहीं सकता। उसे तो अधिकारियों और लाइनमैनों की 'दया' पर ही निर्भर रहना होता है।

उत्तर : भुगतान के बाद टेलीफोन-संबंध काटना गलत है, पर ऐसा होता है। हमने कर्मचारियों और अधिकारियों को चेतावनी दी है कि इस मामले में दोषी व्यक्तियों को तत्काल दंड दिया जाएगा। कुछ लोगों को तो हमने मुअत्तिल भी किया है। टेलीफोन-उपभोक्ताओं को चाहिए कि वे इस तरह टेलीफोन कटने पर दोबारा 'चार्ज' न दें और कर्मचारियों को रिकार्ड जांचने के लिए विवश करें। टेलीफोन ठीक न हों तो हमने एक 'डॉयरेक्टर ऑव कंपलेंट्स' नियुक्त किया है, उसे बतायें। काम न होने पर वे सीधे मेरे पास आकर शिकायत कर सकते हैं। मैं ऐसे अधिकारियों को तुरंत दंडित किये बिना नहीं रहूंगा।

माइक्रोवेव एक्सचेंज का एक उपकरण

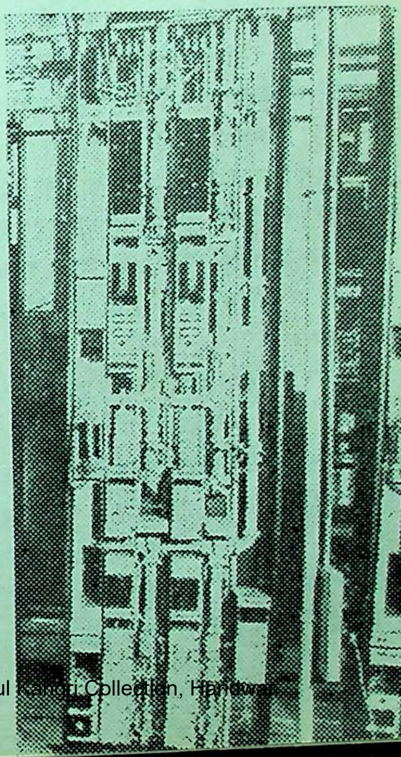

कभी रिश्वत मत दीजिए

टेलीफोन विभाग के कर्मचारियों को न बख्शीश दीजिए और न रिश्वत देकर बढ़ावा दीजिए। वे आपके सेवक हैं। जो आपको परेशान करे, मंत्रीजी के पास उसकी सीधे शिकायत कीजिए। ऐसे उदार मंत्री मुश्किल से मिलते हैं।

अफसरशाही की कार्य-कुशलता !

प्रश्न : क्या आपने नयी टेलीफोन डायरेक्टरी के दोषों के संबंध में प्रकाशित लंबे-लंबे समाचार देखे हैं ?

उत्तर : नहीं, ये समाचार तो मैंने नहीं पढ़े, लेकिन नयी टेलीफोन डायरेक्टरी तो कंप्यूटर की सहायता से तैयार की गयी है, उसमें तो गलती नहीं होनी चाहिए।

प्रश्न : नयी निर्देशिका में एक नहीं, ढेर सारी गलतियां हैं। उसमें सन १९६४ से चला आ रहा मेरा ही नाम गायब है, जबकि उसके लिए मैंने 'पेमेंट' भी किया था।

उतर : (कुछ हतप्रभ होते हुए) ऐसा तो नहीं होना चाहिए।

प्रश्न : नाम ही नहीं, कई निर्देशिकाओं में तो पृष्ठ के पृष्ठ गायब हैं। नामों को सही ढंग से नहीं लिखा गया है। इन सब विषयों पर सभी अखबारों ने समाचार छापे हैं, टिप्पणियां भी की गयी हैं, पर आश्चर्य है कि ये सब समाचार आपकी दृष्टि में नहीं लाये गये। आपकी अफसरशाही की कार्य-कुशलता का यह एक ताजा उदाहरण है।

बातचीत के दौरान उपस्थित एक सूचना अधिकारी ने हमें सफाई देनी चाही कि टेलीफोन विभाग ने बड़ी निर्देशिका के साथ एक छोटी 'मूल-सुधारनुमा' निर्देशिका भी वितरित की है।

हमने वर्मा जी से कहा, 'यह एक दूसरा झूठ है। जब आपके सामने ऐसा कहा जा सकता है, तब बाहर क्या-क्या कहा जाता होगा, क्या-क्या किया जाता होगा, अनुमान की चीज है। सत्य तो यह है कि आपने इस विभाग में इतना अधिक काम किया है, वह जनता के सामने पूरी तरह आना चाहिए।'

वर्माजी ने स्थिति को संभालने के लिहाज से कहा, "आपने दोषों की ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया, धन्यवाद! मैं स्वयं सारे मामले को देखूंगा। मैं गैर-जिम्मेदार अधिकारियों को इस तरह छूट नहीं दूंगा।"

●

इंगलैंड में पक्षियों के संरक्षण के लिए बनी रायल सोसायटी को दो बिल्लियों की ओर से चेक प्राप्त हुए। वे चेक उनके मालिक ने भेजे थे, क्योंकि उसे आशंका थी कि दोनों बिल्लियों ने कई पक्षी मार डाले हैं। चेक भेजकर मालिक उनके किये पर खेद व्यक्त करना चाहता था।

आप घर में भी परमाणु बम बना सकते हैं

• नवीन खन्ना

जी हां ! परमाणु बम आप घर में भी बना सकते हैं। इसके लिए यह भी जरूरी नहीं कि आपकी गुप्त सरकारी जानकारी तक पहुंच भी हो। जरूरत है केवल कुछ लाख रुपये की। इसके साथ ही एक पुस्तकालय की सदस्यता जिसमें परमाणु-साहित्य की वर्गीकृत सामग्री उपलब्ध हो। तब आप आसानी से एक परमाणु बम बना सकते हैं।

ब्रिटेन में इस प्रकार के परमाणु बम का निर्माण किया भी जा चुका है। यह बम केवल पुस्तकालय में प्राप्त जानकारी के आधार पर बनाया गया। इसमें प्रयुक्त सामग्री भी बाजार में आसानी से मिल सकती है। इसको बनाने में केवल एक महीने का समय लगा। परमाणु बम का डिजाइन जब ब्रिटेन के परमाणु-विज्ञानी जोसेफ रोटब्लाट को दिखाया गया तो उनका जवाब था, "यदि तोड़फोड़ करनेवाले तत्व ब्लैकमेल करने की नीयत से सरकार को यह डिजाइन दिखाते, तो मैं सरकार को यही सलाह देता कि हजारों व्यक्तियों की जान पर खेलने से बेहतर यही है कि विध्वंसकारी तत्वों की बात मान ली जाए।"

इस बम के निर्माण के एक महीने बाद ही लंदन के एक और घर में परमाणु बम तैयार किया गया। इसका निर्माण कुछ अंडर-ग्रेजुएट छात्रों ने किया। यह परमाणु बम पहलेवाले बम से भी दो कदम आगे है। इसमें प्लूटोनियम के स्थान पर परमाणु-ईंधन छड़ का प्रयोग किया गया। यद्यपि प्लूटोनियम किसी परमाणु भट्टी से अपेक्षाकृत आसानी से उड़ाया जा सकता है, लेकिन इससे परमाणु बम बनाने के लिए कहीं अधिक तकनीकी और वैज्ञानिक जानकारी की आवश्यकता है। फिर भी ईंधन छड़ से परमाणु बम थोड़ी-बहुत तकनीकी जानकारी से ही बनाया जा सकता है।

प्लूटोनियम कहां से

प्लूटोनियम अथवा अन्य परमाणु-ईंधन कहां से प्राप्त किया जाए ? इस विषय में अमरीका की फोर्ड फाउंडेशन की तरफ से एक अध्ययन कराया गया। इसका विषय था, 'परमाणु सामग्री के संभावित चोर कौन व्यक्ति हो सकते हैं और वे कैसे इसे चुरा सकते हैं?' इस अध्ययन मंडल के सदस्य

थे, परमाणु-विज्ञानी थियोडोर बी. टेलर और शस्त्र निरोध विशेषज्ञ मेसन विलरिच। इनके निष्कर्ष बहुत रोचक थे।

मि. अकेलाराम

उन साहब को देखिए। हर समय वैज्ञानिक होने की गंभीरता। कभी किसी से बातचीत नहीं, अपने में ही मस्त। साथी लोग सोचते हैं, श्रीमानजी मनन कर रहे हैं, लेकिन हजरत इस ताक में थे कि परमाणु सामग्री कैसे पार की जाए।

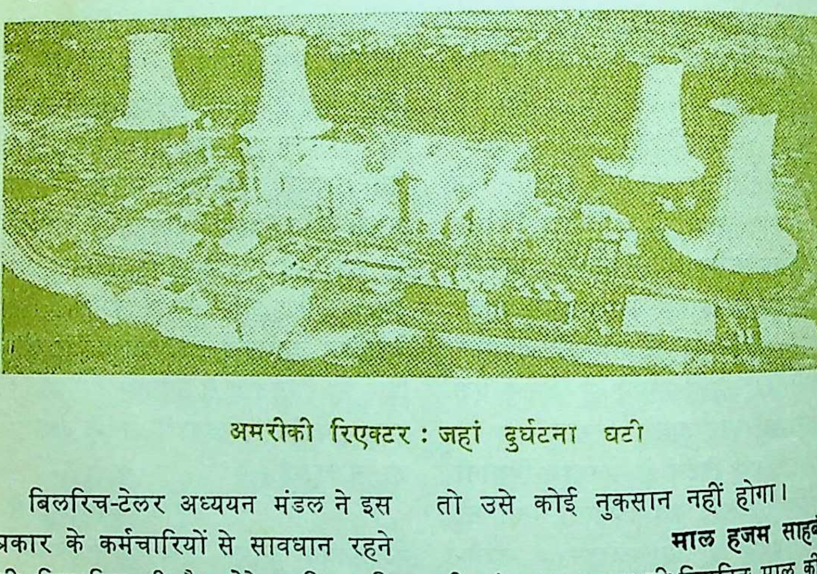

अमरीकी रिएक्टर : जहां दुर्घटना घटी

बिलरिच-टेलर अध्ययन मंडल ने इस प्रकार के कर्मचारियों से सावधान रहने की सिफारिश की है। ऐसे व्यक्ति यदि खतरे की घंटी बजा दें, तो फौरन समझ जाइये कि इसकी आड़ में वे परमाणु सामग्री पर भी हाथ साफ करने जा रहे हैं।

यदि परमाणु सयंत्र केंद्र में सुरक्षा संबंधी प्रावधान कुछ शिथिल हुए, तो ऐसे व्यक्ति धीरे-धीरे प्लूटोनियम रोज खिसकाते जाते हैं।

प्रश्न यह उठता है कि प्लूटोनियम या ऐसा पदार्थ चुराना क्या स्वयं चोर के लिए घातक तो नहीं होगा? प्लूटोनियम अथवा रेडियम-जैसे पदार्थ अन्य रेडियो-धर्मी पदार्थों के साथ मिलकर अत्यधिक घातक सिद्ध हो सकते हैं, लेकिन अकेला प्लूटोनियम निजी सुरक्षा के लिए इतना अधिक घातक नहीं है। इसको चुरानेवाला यदि इसे पूरी तरह से बंद पात्र में ले जाए, तो उसे कोई नुकसान नहीं होगा।

माल हजम साहब

जी हां, इन सज्जन की नियुक्ति माल की रखवाली के लिए ही की गयी है। ये प्लूटोनियम इत्यादि के स्टॉक की देखरेख करते हैं। परमाणु धंधा क्योंकि बहुत विश्रृंखलापूर्ण है, इस कारण इसमें ईंधन की कमी भी दर्शायी जा सकती है। ये श्रीमान इसी बात का फायदा उठा रहे हैं और स्टॉक

में दिखाये गये घटे प्लूटोनियम को घर ले जाने में व्यस्त हैं।

तब क्या होगा ?

उपरोक्त अध्ययन के निष्कर्ष आंख खोल देनेवाले हैं। गैर जिम्मेदार तत्त्वों के हाथ में परमाणु सामग्री पहुंच जाना कितना खतरनाक है, उसका अंदाजा इसी से लग सकता है कि एक कच्चा परमाणु बम केवल २५ पौंड प्लूटोनियम से ही बनाया जा सकता है। एक शहर को खतरे में डालने के लिए केवल एक पौंड प्लूटोनियम ही काफी है।

प्लूटोनियम, कोवरा सर्प विष से २०,००० गुना अधिक विषाक्त होता है। इसके एक ग्राम के हजारवें भाग को भी यदि कोई व्यक्ति सूंघ ले, तो उसके फेफड़ों में जमाव के कारण एक हफ्ते में मृत्यु हो जाएगी।

इस भयानक विष की आयु भी वहुत है, यानी ४८,००० वर्ष। यदि एक बार कहीं गिर जाए तो इसके नष्ट होने में कई कल्प बीत जाएंगे।

परमाणु बम है क्या ?

परमाणु बम का निर्माण यूरेनियम २३५ से होता है। यूरेनियम २३५ की यह विशेषता है कि यदि इसके नाभिक पर न्यूट्रानों की बमबारी की जाए तो इसके परमाणु दो भागों में विखंडित होकर अत्यंत प्रचंडता से अत्यधिक ऊर्जा उत्पन्न करते हैं। इसके साथ ही नाभिकीय विखंडन की यह क्रिया एक सेकंड के लाखवें भाग में ही ३,९,२७ इत्यादि की परंपरा में बढ़ती हुई 'श्रृंखला-अभिक्रिया' का रूप धारण कर लेती है।

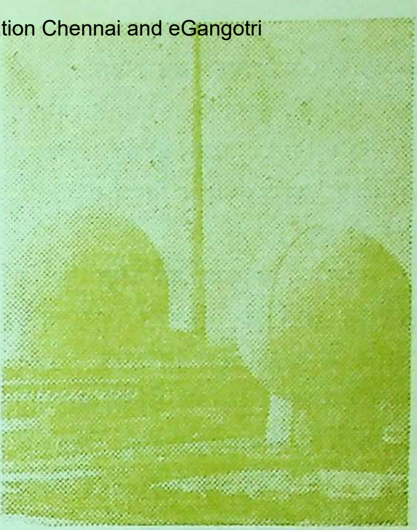

भारत का एक परमाणुघर

ऐसी स्थिति प्लूटोनियम के परमाणु के साथ भी संभव है। इस कारण यह भी परमाणु बम वनाने में प्रयुक्त किया जाता है।

हिरोशिमा और नागासाकी पर फेंके गये वम, यूरेनियम २३५ (अथवा प्लूटोनियम) तथा ग्रेफाइट के मिश्रण से बनाये वम थे। परमाणु विखंडन की 'श्रृंखला-अभिक्रिया' प्रारंभ करने के लिए उपयुक्त नाप के यूरेनियम के टुकड़ों की आवश्यकता होती है। परमाणु वम में उस नियत नाप से छोटे टुकड़े रखे जाते हैं तथा विस्फोट से पूर्व उन्हें एक-दूसरे के पास लाया जाता है। हिरोशिमा पर फेंके गये वम में यूरेनि-

यम के एक भाग पर बंदूक दागकर इसे दूसरे भाग की तरफ फेंका गया। उपयुक्त नाप का रूप धारण करते ही यह 'श्रृंखला-अभिक्रिया' द्वारा परमाणु विस्फोट में परिणित हो गया।

अमरीकी सरकार का दावा था कि उपरोक्त बमों के निर्माण एवं शोध इत्यादि में इसका कुल मिलाकर ७०० करोड़ रुपया खर्च हुआ था, लेकिन भारतीय वैज्ञानिकों ने केवल 'कुछ लाख' रुपये में परमाणु बम बनाने का दावा करके विश्व में सनसनी फैला दी थी।

यूरेनियम २३५ अत्यंत दुर्लभ खनिज है। साधारण यूरेनियम में यूरेनियम २३५ की मात्रा केवल ०.७ प्रतिशत होती है। तारापुर के लिए भारत को अमरीका से मिलने वाले सघनीकृत यूरेनियम में यूरेनियम २३५ की मात्रा २.७१ प्रतिशत है।

खनिज यूरेनियम से यूरेनियम २३५ का उत्पादन अति जटिल क्रिया है जो केवल परमाणु-संयंत्रों द्वारा ही संभव हैं, लेकिन ऊर्जा प्राप्ति के लिए बनाये गये संयंत्रों से परमाणु बम के स्तर का ईंधन आसानी से प्राप्त हो सकता है।

पिछले दिनों परमाणु बम बनाने का एक नया तरीका भी प्रकाश में आया है, इसके द्वारा वे राष्ट्र भी परमाणु बम बना सकेंगे जिनके पास महंगे परमाणु-संयंत्र बनाने की क्षमता नहीं है। आतंकवादी तत्व भी इस विधि से आसानोपूर्वक बम का निर्माण कर सकेंगे क्योंकि इस बम का निर्माण सामान्य यूरेनियम अथवा थोरियम द्वारा हो सकता है। विद्युत उद्योग में प्रयुक्त एक यंत्र 'एटम-स्मेशर' द्वारा थोरियम अथवा यूरेनियम पर न्यूट्रॉनों की बौछार करके इसे यूरेनियम २३३ में बदला जा सकता है। यूरेनियम २३३ भी परमाणु विस्फोट के लिए बहुत उपयुक्त पदार्थ है। इस प्रकार के बम के लिए केवल पांच किलोग्राम सामग्री ही काफी है।

यूरेनियम जैसे महत्वपूर्ण पदार्थ को सन् १९४० से पूर्व केवल सीमित उपयोग का पदार्थ माना जाता था। सन् १९४५ के बाद से यूरेनियम के ४१ नये खनिज स्रोतों का पता लगाया जा चुका है। आज

यूरेनियम २३५ का अर्थ–अणु का वजन–२३५, प्रोट्रोनों की संख्या–९२, न्यूट्रॉनों की संख्या–१४३, नाभिक में प्रोटोन और न्यूट्रॉन तथा सात घेरों में चक्कर काटते हुए इलैक्ट्रॉन

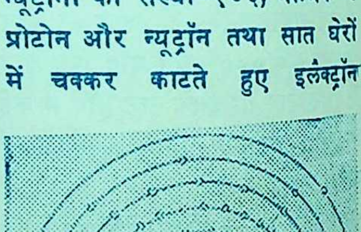

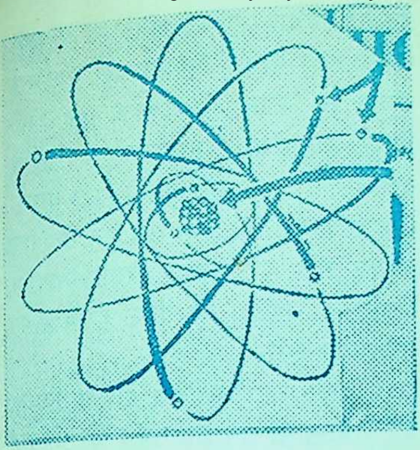

इलैक्ट्रॉन: नाभिक के चारों ओर निश्चित कक्षा में घूमते हुए, नाभिक : प्रोटोनों और न्यूट्रॉनों से बना हुआ।

यूरेनियम के कुल मिलाकर ८५ खनिज स्रोत हैं, लेकिन यूरेनियम मुख्य रूप से 'यूरेन्नाइट' नामक खनिज से प्राप्त किया जाता है।

यूरेनियम से रेडियम भी प्राप्त किया जाता है, लेकिन इसमें व्याप्त रेडियम की मात्रा का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि ७५० टन यूरेनियम से केवल १२ टन सघनीकृत यूरेनियम प्राप्त होता है और इसको कई रसायनिक क्रियाओं से गुजारने के पश्चात मात्र एक ग्राम रेडियम प्राप्त होता है।

सन् १९७७ में विश्व में ३०,००० टन यूरेनियम का उत्पादन हुआ। सर्वाधिक उत्पादन अमरीका में २०,३०० टन हुआ। इसके बाद दक्षिण अफरीका में ९,७०० टन यूरेनियम का उत्पादन हुआ। भारत का भाग केवल २०० टन यूरेनियम उत्पादन का था। भारत में यूरेनियम मुख्यत: जाडुगुडा की खानों से प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त गया, अजमेर, जयपुर, गढ़वाल तथा नेल्लूर में भी यूरेनियम के छिट-पुट भंडार हैं।

—ई-१२८, कालकाजी, नयी दिल्ली

ट्रांबे में बेकार हुई रेडियोधर्मी सामग्री एक निर्धारित स्थल 'गामा गार्डन' यानी परमाणु कब्रिस्तान में दबा दी जाती है। वहीं पर सयंत्र में प्रयोग होने के बाद बेकार हुई अल्युमीनियम की रेडियोधर्मी छड़ों के खोल भी दबा दिये जाते थे। इन खोलों पर कुछ समाज-विरोधी तत्वों की दृष्टि थी। एक दिन वे कई खोल उड़ा ले गये।

शीघ्र ही इन घातक खोलों की खोज-बीन की गयी। तब वैज्ञानिकों ने इन्हें बंबई के एक बाजार में से खोज निकाला।

अभी तक यह पता नहीं चल पाया है कि इस खतरनाक पदार्थ में से कितना माल अभी भी बाजार में बिक रहा है, तथा इससे कितना विनाश हो चुका है।

उपरोक्त दुर्घटना के पश्चात् परमाणु कब्रिस्तान के आसपास तारों की फेंसिंग लगा दी गयी है, साथ ही गार्ड भी तैनात कर दिये गये हैं।

अब विवाह के लिए ~~नाई ठाकुर~~ अखबार चाहिए

• कृष्णचन्द्र

बकौल शेक्सपियर, 'फांसी पर लटकना तथा शादी करना दोनों ही भाग्य के अधीन हैं।' कोई कितना ही सोच-समझकर हिसाब लगाकर, ज्योतिषियों से कुंडलियां मिलवाकर, परिचय या अपरिचय के आधार पर, रिश्तेदारों और मित्रों को बीच में डालकर या स्वयं कुछ दिन प्रेम के हिंडोले में पैंगें मारने के बाद विवाह-सूत्र में बंधे, लेकिन शादी अंततः एक जुआ ही है—कहा नहीं जा सकता कि गिरस्ती का ऊंट कब किस करवट बैठे !

अब तक विवाह की कई परंपराएं रही हैं, लेकिन सबसे अधिक प्रचलित परंपरा, खास तौर से हमारे देश में यही रही है कि माता-पिता, नाते-रिश्तेदार, शुभचिंतक, खानदान, परिवार की आर्थिक स्थिति, लड़के-लड़की के गुण, स्वभाव आदि को ध्यान में रखते हुए विवाह तय कराते हैं।

एक समय यह काम विवाह करानेवाले पुरोहितों के जिम्मे था। वे विवाह-योग्य लड़के-लड़कियों को अपनी नजर में रखते और नये संबंध जोड़ते। फिर पुरोहितों के साथ-साथ यह काम नाई ठाकुरों ने भी शुरू कर दिया। हमने अपने बचपन में पुरोहितों या नाई ठाकुरों द्वारा जोड़े गये ऐसे अनेक रिश्तों को देखा है। पर ऐसे विवाहों में कई खतरे भी थे। हमें अच्छी तरह याद है कि एक बार एक नाई ठाकुर ने विवाह के इच्छुक एक रोगी विधुर का ऐसा प्रभावशाली व्यक्तित्व बखाना कि लड़कीवाले दूसरों द्वारा वास्तविकता बतलाने पर भी उस पर विश्वास न कर सके और जब विवाह-मंडप में असलियत खुली तो सिर-फुटौवल की नौबत आ गयी।

प्रेम-संबंध बनाम विवाह

हां, कभी-कभी पूर्व-प्रेम-संबंध भी विवाह में परिणत हो जाते हैं। पश्चिमी समाज में यही सर्वमान्य तरीका है। लेकिन अब पश्चिम में ही नहीं, हमारे देश में भी विवाह का एक नया साधन अपनाया जाने लगा है। यह है विवाह का एक यांत्रिक अथवा व्यावसायिक रूप, जो आज के व्यावसायिक युग की देन है। आज विज्ञापन का युग है, अतः इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि विवाह-संबंध भी विज्ञापन के माध्यम से होने लगें। पश्चिम में तो विवाह-एजेंसियां कंप्यूटर की सहायता से भावी वर-वधू की रुचियों एवं आवश्यकताओं के आधार पर आनन-

फानन संभाव्य संबंधों का ब्योरा तैयार कर अपने ग्राहकों को दे देती हैं।

विज्ञापन द्वारा विवाह अब संभावना का विषय नहीं वरन वह यथार्थ के धरातल पर आ गया है। यद्यपि इसकी सफलता का सही आकलन अभी नहीं किया जा सकता तथापि पत्रों में प्रकाशित विवाह-संबंधी विज्ञापनों के आधार पर कुछ तथ्य अवश्य प्रस्तुत किये जा सकते हैं।

कुछ मूलभूत प्रश्न

सबसे पहली बात तो यह है कि ऐसे विज्ञापनों की संख्या निरंतर बढ़ती जा रही है, जिससे दो सहज निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं—पहला यह कि विवाह का सामाजिक दायित्व अब सिमटकर वैयक्तिक दायरे में आता जा रहा है। दूसरा यह कि संभावित वर-वधू की पारिवारिक पृष्ठभूमि तथा परिस्थितियों की व्यापक खोजबीन के लिए समय मिलना संभव नहीं है, क्योंकि यह एक शीघ्र निबटनेवाला सौदा है। विलंब होने से विज्ञापन का प्रभाव समाप्त हो जाता है। तीसरी बात यह कि यह विवाह के एक मूलभूत मानवीय सिद्धांत का प्रतिरोधक है। सामाजिक विकास की अवस्था में विवाह युगल के पूर्व-प्रेम की ही संपुष्टि है। सुप्रसिद्ध दार्शनिक बर्ट्रेंड रसेल की राय में—'जिसने विवाह से पूर्व प्रणय नहीं किया उसने सही माने में विवाह किया ही नहीं है।'

लड़कियों की समस्या प्रमुख

भारतीय पत्रों में प्रकाशित विज्ञापनों से एक और तथ्य प्रकट होता है। अधिकांश विज्ञापन लड़कियों की ओर से उनके अभिभावकों द्वारा दिये जाते हैं, लड़कों की ओर से अपेक्षतया कम होते हैं। इनका अनुपात मोटे तौर पर आधे से भी कम होता है। इससे यह परिलक्षित होता है कि शादी के लिए लड़कियों की समस्या प्रमुख है। यह मूलतया हमारी समाजिक समस्या ही है, जो विज्ञापन के स्तर पर भी प्रकट हुए बिना नहीं रहती।

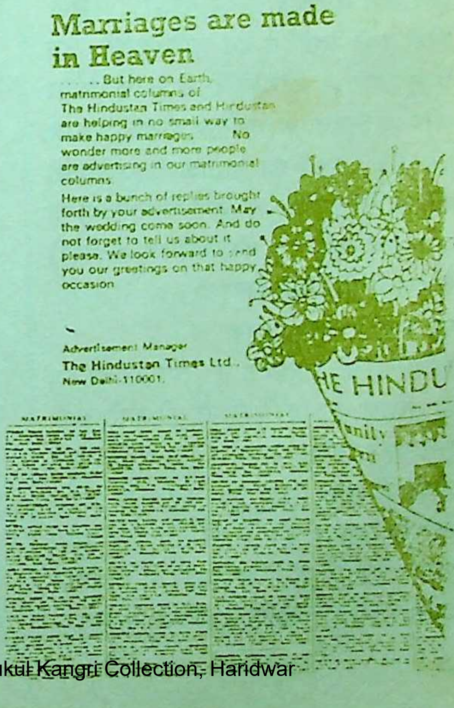

Marriages are made in Heaven

. . . . . But here on Earth, matrimonial columns of The Hindustan Times and Hindustan are helping in no small way to make happy marriages. No wonder more and more people are advertising in our matrimonial columns.

Here is a bunch of replies brought forth by your advertisement. May the wedding come soon. And do not forget to tell us about it please. We look forward to send you our greetings on that happy occasion.

Advertisement Manager
The Hindustan Times Ltd.,
New Delhi-110001.

उपयुक्त वर-वधू ढूंढ़ने में नयी दिल्ली के अंगरेजी पत्र 'हिन्दुस्तान टाइम्स' की एक नयी भूमिका है।

उपयुक्त जोड़े मिलना एक अच्छा-खासा व्यवसाय भी बन गया है। बड़े शहरों में ऐसी संस्थाएं हैं जो विवाह के इच्छुक व्यक्ति से २५ से ५० रु. रजिस्ट्रेशन फीस के रूप में लेकर उपयुक्त जोड़ा ढूंढ़ती हैं और विवाह होने पर २५० रु. से ५०० रु. तक की राशि भेंटस्वरूप लेती हैं।

लड़कों की ओर से दिये गये विज्ञापनों से यह बात भी प्रकट होती है कि उनमें से काफी अनुपात में ऐसे हैं जो कमानेवाली लड़कियों की तलाश में होते हैं। परिवार की आर्थिक दशा सुधारने का इससे अच्छा तरीका और क्या हो सकता है! हल्दी लगे न फिटकरी रंग चोखा! लेकिन बीवी कहीं 'बॉस' न बन जाए, इसके लिए वे सुंदरता से अधिक उनमें सहनशीलता और घरेलूपन के गुणों पर अधिक बल देते हैं। लड़की का कमाऊपन स्त्रीजाति की आर्थिक मुक्ति के रूप में नहीं बल्कि पति एवं परिवार की आर्थिक बढ़ोतरी के रूप में ही देखा जाता है।

वर एक : वधुएं अनेक

विज्ञापनों की सहायता से योग्य वर या वधू की तलाश करनेवाले लोगों को कभी-कभी ऐसा गहरा धोखा खाना पड़ता है कि दूसरे लोगों की कुछ समय के लिए ऐसे विज्ञापनों से आस्था उठ जाती है। प्रेम शर्मा नामक एक युवक ने अखबारों में विज्ञापन देकर एक नहीं, अनेक युवतियों से अलग-अलग समय, अलग तिथियों पर विवाह किया। ऐसे ही एक विवाह में उसकी पत्नी बनी एक युवती भी प्रेम शर्मा की इस धोखाधड़ी में शामिल थी। प्रेम शर्मा ने विवाह को एक व्यवसाय ही बना लिया था। अंततः एक दिन उसका रहस्य खुला और अंत में उसे जेल जाना पड़ा।

पर सिक्के का एक और पहलू है। हमारे ऐसे अनेक परिचित हैं, जिन्होंने अखबारों में विज्ञापन देखकर चिट्ठी डाली और उत्तर में योग्य पत्नी पायी।

कभी-कभी विवाह का उपयुक्त समय निकल जाने पर अथवा अधिक अवस्था हो जाने पर बार-बार विज्ञापन देने पर भी जीवन-साथी नहीं मिल पाता। कई ऐसी महिला डॉक्टर, अध्यापिकाएं आदि देखी गयी हैं जिन्हें अपनी गिरस्ती बसाने में विज्ञापनों से कोई सहायता नहीं मिली। अधिक उम्र के पुरुषों का भी यही हाल है।

सामाजिक परिवर्तन का द्योतक नहीं

इन विज्ञापनों से सामाजिक परिवर्तन का लक्ष्य पूरा नहीं होता। अधिकतर विज्ञापन जातपांत के आधार पर ही होते हैं और इनमें जाति-बंधन तथा दहेज से मुक्ति को किसी विवशता में ही स्वीकार किया जाता है। लड़के प्रायः समृद्ध परिवारों की अथवा कमानेवाली लड़कियों की ओर ही अधिक रुझान रखते हैं।

कितनी टूट : कितनी जुड़न ?

विवाह-संबंधी विज्ञापनों से अप्रत्यक्ष रूप से हमारी सामाजिक अथवा सही माने में

पारिवारिक विश्रृंखलता का भी आभास मिलता है। ऐसे विज्ञापन भी काफी निकलते हैं, जिनमें तलाकशुदा व्यक्ति —स्त्री या पुरुष—पुनः अपना जीवन-साथी चाहते हैं। यह एक तरह से हमारे समाज में तलाकों की बढ़ती संख्या का द्योतक है। किंतु इसे एक दूसरे दृष्टिकोण से भी देखा जा सकता है। जिनका पारिवारिक जीवन एक बार अस्तव्यस्त हो चुका है, वे पुनः सामाजिक जीवन की धारा में प्रतिष्ठापूर्वक प्रविष्ट होना चाहते हैं।

बड़ी उम्र के लोगों की आशा

इसी सिलसिले में एक अन्य बात का भी जिक्र किया जा सकता है। यह विधुरों तथा बड़ी उम्र के लोगों के बारे में है। कुछ लोग बढ़ती उम्र में किसी के साथ सुखमय जीवन बिताने के इच्छुक होते हैं और कुछ अपने बच्चों की उपयुक्त देखभाल के लिए अपनी जीवन-सहचरी चाहते हैं। विज्ञापन इसमें कितनी सहायता करते हैं, इसके आंकड़े उपलब्ध होना आसान नहीं है, किंतु ऐसे विज्ञापनों का पत्रों में निकलना इस बात का संकेत है कि विधुरों या बड़ी उम्र के लोगों की उद्देश्य-पूर्ति के लिए ये उपयुक्त साधन सिद्ध हो सकते हैं।

संक्षेप में, विवाह के लिए विज्ञापन सशक्त माध्यम बनते जा रहे हैं। जहां इसमें व्यावसायिक प्रवृत्ति की कुछ कमियां हैं, वहां एक अनिवार्य सामाजिक उद्देश्य के लिए तत्काल लाभ की क्षमताएं भी कम नहीं हैं।

हंसिकाएं : काव्य में

परिचय

शोकसभा में
संपादक को माइक पर बुलाते हुए
संयोजक लगा कहने—
"खेद प्रकट करने का
सर्वाधिक अनुभव है इन्हें।"

बस

संपादक के कक्ष के बाहर
'मिलने का समय दो से तीन बजे तक'
पढ़कर
बोल उठी बरबस
"दो या तीन बस !"

विरोध

उनकी ऊंची आवाजें सुनकर
बोले वे—
'भौंकते कुत्तों का मुंह बंद करने के लिए
कुछ द्रव्य चाहिए
अथवा—एकाध एकलव्य चाहिए।'

घड़ी

मंत्रीजी से बोली वह
"बहुत दिनों बाद
यह शुभ घड़ी आयी है"
वे बोले—"जी इंपोर्टेड है
बाहर से मंगायी है"

—डॉ. सरोजनी प्रीतम

औद्योगिक संबंधों में तनाव और हिंसा

वेतनों की सीमा निर्धारित करना अनुचित है!

● कृष्ण कुमार बिरला

मजदूर वर्ग में इतना असंतोष क्यों है ? आपकी दृष्टि में प्रबंधकों और मजदूरों के बीच निरंतर बिगड़ते हुए संबंधों के क्या कारण हैं ?

मेरी दृष्टि में उद्योगों में मजदूरों के बीच असंतोष उत्पन्न करनेवाले दो कारण हैं—(क) मजदूर संगठनों में आपसी प्रतिद्वंद्विता, (ख) बोनस अधिनियम के अंतर्गत इस बात की व्यवस्था कि कानून में निर्धारित बोनस फार्मूले से अलग भी श्रमिक और प्रबंधक बोनस के बारे में कोई समझौता कर सकते हैं।

मैं इस बात को सरल ढंग से रखना चाहता हूं। यह अतीत का अभिशाप कहा जाएगा कि देश में मजदूर संगठन हमेशा से ही राजनीतिक दलों के साथ संबद्ध रहे हैं। हमारे श्रमिक आंदोलन का संगठन आजादी के लिए राजनीतिक संघर्ष के एक अंग के रूप में हुआ था, जबकि उसे औद्योगिक अर्थ-व्यवस्था की एक अलग आर्थिक इकाई के रूप में संगठित होना था। वस्तुतः उन दिनों कांग्रेस ही एकमात्र संगठित पार्टी थी। उसने मजदूरों को भारतीय राष्ट्रीय मजदूर संगठन (इनटक) के झंडे के नीचे इकट्ठा किया। बाद में दूसरी पार्टियों ने भी भिन्न-भिन्न नामों से अपने मजदूर संघ संगठित किये। आज देश में लगभग सभी राजनीतिक पार्टियां किसी न किसी ट्रेड यूनियन पर कब्जा किये हुए हैं।

चुनाव के अवसर पर मजदूरों का समर्थन प्राप्त करने के लिए राजनीतिक पार्टियां ऐसे मजदूर संगठन बनाती हैं। भारतीय कांग्रेस का संगठन है इनटक, भारतीय

सुप्रसिद्ध उद्योगपति श्री कृष्णकुमार बिरला ने हाल में बोनस तथा श्रम-संबंधी अनेक समस्याओं पर जो विचार प्रकट किये हैं, वे देश की बिगड़ती वर्तमान स्थिति में अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। यह परिचर्चा बेनेडिक्ट कोस्टा ने 'इलस्ट्रेटेड वीकली ऑव इंडिया' के ८ अप्रैल, १९७९ अंक में प्रकाशित की थी। हम हिंदी पाठकों के लिए उसे यहां प्रस्तुत कर रहे हैं। ––संपादक

कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) का संगठन है सीटू (सी. आई. टी. यू.), सोशलिस्ट पार्टी का संगठन है हिंद मजदूर सभा, क्रांतिकारी समाजवादी दल तथा अन्य राजनीतिक गुटों का संगठन है––यूनाइटेड ट्रेड यूनियन कांग्रेस और जनसंघ का संगठन है भारतीय मजदूर संघ । पश्चिम बंगाल में नक्सलवादियों ने कई औद्योगिक इकाइयों में अपने मजदूर संगठन बना लिये हैं । नवनिर्मित जनता पार्टी भी अखिल भारतीय पैमाने पर अपने मजदूर संगठन बनाने का विचार कर रही है ।

संगठनों के बीच होड़

यह आश्चर्य की बात नहीं कि मजदूर संगठनों की ऐसी बाढ़ में प्रत्येक संगठन एक-दूसरे से बाजी मार ले जाने और बड़े-बड़े वायदे तथा यह दावे करके मजदूरों को बहकाने की कोशिश करते हैं कि मात्र वही उनकी दशा सुधार सकते हैं। मजदूरों को फुसलाने के चक्कर में मजदूर संगठन छोटी-छोटी बातों को लेकर प्रबंधकों को नीचा दिखाने में बाजी मार ले जाने के लिए एक-दूसरे से होड़ लगाते हैं।

मजदूर संगठनों में इस तरह की आपसी होड़ से एक ओर मजदूरों के बीच कटुता बढ़ती है तो दूसरी ओर प्रबंधकों के प्रति अविश्वास ।

इस देश में संगठित श्रमिक ही सबसे अधिक वेतन पाते हैं । श्रमिक असंतोष वास्तविक आर्थिक कारणों से इतना नहीं है जितना कि नियोजित ढंग पर भड़काये जाने की वजह से है । एक बार कटुता पर आधारित आंदोलन शुरू हो जाए तो वह हिंसा पर उतर आता है । इस तरह के वातावरण का परिणाम केवल बड़े तूफानों को जन्म दे सकता है ।

बोनस कानून

बोनस अदायगी कानून में ऐसे विकल्प की व्यवस्था है कि श्रमिकों और प्रबंधकों के बीच उत्पादन तथा उत्पादन-क्षमता के आधार पर, या कानून में निर्धारित सूत्रों से पृथक किसी अन्य सूत्र (फार्मूला) के आधार पर, बोनस की राशि के बारे में समझौता हो सकता है । इस व्यवस्था ने, लगता है, जैसे 'पैंडोरा बाक्स' खोल दिया है। हर बार बोनस का मामला उठ खड़ा होता है, मजदूर बोनस की ऐसी राशि की अदायगी की मांग करते हैं जिसका न तो उत्पादन-क्षमता से कोई संबंध होता है और न कानून में निर्धारित सूत्र से । परिणाम : खींचतान, बाजारू सौदेबाजी, जिसके फलस्वरूप वातावरण में तनाव उत्पन्न होता है, धमकियां दी

जाती हैं और हिंसा होती है।

औद्योगिक शांति के हित में प्रबंधक सरकार से यह आग्रह करते रहे हैं कि बोनस अधिनियम की इस व्यवस्था को समाप्त कर दिया जाए और एक निश्चित नियम बना दिया जाए कि केवल बोनस-कानून में दिये गये सूत्रों के अनुसार ही बोनस दिया जाएगा।

प्रबंधकों और मजदूरों के बीच सौहार्दपूर्ण वातावरण स्थापित करने के लिए एक आचार-संहिता तैयार की जाए, इसके लिए क्या किया जाना चाहिए?

मात्र मजदूर संगठनों के बीच प्रतिद्वंद्विता ही हिंसा का कारण नहीं है। सबसे बड़ा कारण है बोनस के लिए सौदेबाजी।

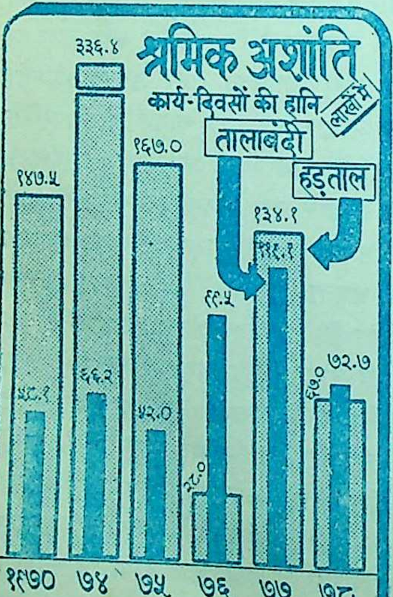

मजदूरों और प्रबंधकों के बीच अधिक अच्छे संबंध बनाये रखने के लिए मैं अनुरोध करूंगा कि ऊपर बताये गये बुनियादी कारणों को दूर किया जाए।

व्यावहारिक दृष्टिकोण

इस सिलसिले में मैं जनता सरकार द्वारा प्रस्तावित औद्योगिक संबंध विधेयक का उल्लेख करना चाहूंगा। इस विधेयक का दृष्टिकोण व्यावहारिक तथा उपयोगी है और उसकी व्यवस्थाएं हैं--(क) मजदूर संगठनों में इस समय व्यवस्था है कि उसके पदाधिकारियों की (जो उस प्रतिष्ठान के कर्मचारी नहीं हैं) संख्या पचास प्रतिशत हो सकती है, उसे कम कर केवल दो व्यक्तियों तक सीमित कर दी जानी चाहिए (ख) मजदूर नेताओं पर यह पाबंदी लगा दी जाए कि वे एक समय में चार से अधिक संगठनों के पदाधिकारी नहीं रह सकते (ग) जिस संगठन को कम से कम ६५ प्रतिशत कर्मचारियों का समर्थन प्राप्त हो, उसे प्रबंधकों से बातचीत करनेवाले एकमात्र माध्यम के रूप में मान्यता दी जाए और जिस संगठन को ५० प्रतिशत से अधिक और ६५ प्रतिशत से कम कर्मचारियों का समर्थन प्राप्त हो, उनकी स्थिति प्रमुख समझौता वार्ताकारों में होनी चाहिए। (घ) प्रबंधकों को इस बात के लिए बाध्य किया जाए कि वे वार्ता के लिए समर्थ एकमात्र संगठन या प्रमुख संगठन से ही बातचीत करें। साथ ही द्विपक्षीय समझौता-वार्ता पूरी करने की

अवधि ६० दिन निर्धारित कर दी जाए, (ड) अनिवार्य सेवाओं में हड़ताल करने का अधिकार समाप्त कर दिया जाए। अन्य सेवाओं के बारे में संगठनों पर यह शर्त लागू हो कि वे हड़ताल के लिए १४ दिन का नोटिस दें, जिसका समर्थन ६० प्रतिशत कर्मचारियों द्वारा गुप्त मतदान से किया गया हो। यह मतदान 'रजिस्ट्रार ऑव ट्रेड यूनियन' के निरीक्षण में होना चाहिए।

इस विधेयक के कानून बन जाने से श्रमिकों और प्रबंधकों के बीच संबंध सामान्य होने में भारी सहायता मिलेगी।

क्या अब समय नहीं आ गया है कि मजदूरों को उद्योग में साझेदार समझा जाए? यदि नहीं, तो क्यों?

मजदूर निस्संदेह उद्योग में साझीदार हैं। उद्योगों के विकास से मजदूरों की आर्थिक स्थिति भी सुधरती है। यदि मजदूरों या प्रबंधकों ने इस बुनियादी सचाई को अब तक नहीं समझा है तो यह दुर्भाग्य की बात है।

जनता पार्टी के सत्ता में आने के बाद क्या औद्योगिक असंतोष पहले से बढ़ा है?

औद्योगिक असंतोष, जो राष्ट्रीय आपात स्थिति के दौरान कम होने लगा था, आपात स्थिति (इमरजेंसी) हटने के बाद बढ़ गया तथा औद्योगिक क्षेत्र में इस समय जितना असंतोष पाया जाता है, वह इमरजेंसी से पहले के दिनों की अपेक्षा अधिक नहीं है। यदि प्रस्तावित औद्योगिक संबंध विधेयक स्वीकार होता है तो स्थिति में बहुत सुधार होगा।

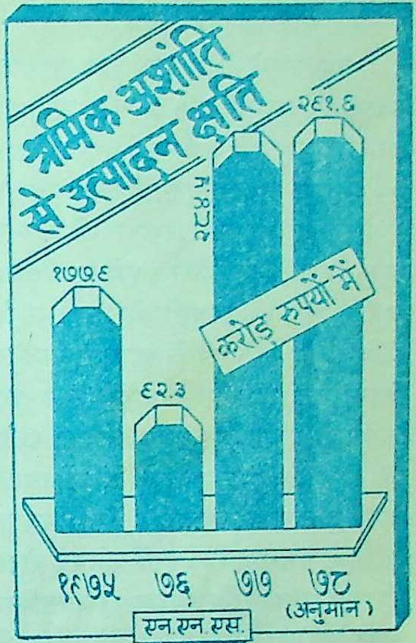

क्या आप इस बात से सहमत हैं कि उच्चपदस्थ प्रबंधकों और सबसे नीचे के तबके के मजदूरों के बीच जो खाई है, वह चौंका देनेवाली है? क्या आप इनके वेतन, भत्तों आदि के बारे में १ तथा १० के अनुपातवाले सूत्र का समर्थन करेंगे?

वेतन, भत्तों आदि के विषय में १ तथा १० अनुपातवाले सूत्र पर अपनी राय प्रकट करने से पहले मैं वास्तविक स्थिति बताना चाहूंगा। अधिकतर उद्योगों में सबसे निचले स्तर के कर्मचारी को वेतन चार सौ

से लेकर साढ़े चार सौ रुपये माह मिलता है । बड़े उद्योगों में जहां तक सर्वोच्च पदस्थ प्रबंधक का प्रश्न है, कुछ अपवादों को छोड़कर, भत्ते आदि सहित वह ५०००० रुपये प्रतिवर्ष पाता है तथापि दोनों के वेतनादि की कुल रकमों की तुलना करना उचित नहीं होगा । हमें यह देखना चाहिए कि सबसे निचली और सबसे ऊंची श्रेणियों के कर्मचारी के हाथ में कितना वेतन आता है । सबसे निचले स्तर पर कर्मचारी प्रावीडेंट फंड में अंशदान करते हैं, किंतु उन्हें आयकर नहीं देना पड़ता । अत: श्रमिकों को वास्तविक वेतन मिलता है वह लगभग ४,४००रुपये प्रतिवर्ष होता है । एक उच्चस्तरीय प्रबंधक का वास्तविक वेतन करीब १५०००० रुपये प्रतिवर्ष होगा । इस प्रकार निगम क्षेत्र (कारपोरेट सेक्टर) में निम्नतम और उच्चतम आय अनुपात १:१२ का बैठता है ।

बाहर नौकरी की तलाश

किसी के वेतनादि की अधिकतम सीमा निर्धारित करना प्रतिगामी कदम है । यदि योग्यता, पहल, आगे बढ़ने के प्रयास और उद्यम का उपयुक्त फल न मिले तो उससे निराशा या कुंठा ही पैदा होगी । अभी बहुत बड़ी संख्या में भारतीयों को लगभग सभी क्षेत्रों में, विदेशों में, जिनमें खाड़ीवाले (गल्फ स्टेट) देश ही नहीं, उन्नत देश भी शामिल हैं, लाभदायक रोजगार मिलते हैं । उपयुवत अवसर के अभाव के कारण ही नोबल पुरस्कार विजेता डॉ. हरगोविन्द खुराना को अमरीका में बसने को बाध्य होना पड़ा । इसलिए, हमें अपनी समग्र प्रगति के हित में इस तरह के बौद्धिक निष्क्रमण (ब्रेन ड्रेन) को रोकना चाहिए ।

मेरा यह दृढ़ मत है कि हमें अपने सामाजिक स्तर को नीचे लाने की अपेक्षा ऊंचे स्तर तक पहुंचाने का लक्ष्य बनाना चाहिए । तभी वास्तविक समृद्धि हो सकती है ।

९।१, आर. एन. मुखर्जी रोड, कलकत्ता

कहते हैं, एक बार गुरु गोरखनाथ अपनी साधना द्वारा प्राप्त फल को दान देने के लिए योग्य पात्र की तलाश करते-करते वाराणसी पहुंचे । वहां गंगा के तट पर एक संन्यासी को अपना संन्यास-दंड गंगा में प्रवाहित करते देख उन्होंने उससे कहा, “महात्मन्, मैं आप जैसे ही त्यागी व्यक्ति की खोज में था । साधना द्वारा प्राप्त सिद्धियां मुझे भटका न दें, इसीलिए मैं अपनी तपस्या के समस्त फल आपको अर्पित करता चाहता हूं । कृपया स्वीकार करें ।”

संन्यासी ने भेंट को सहर्ष स्वीकार कर तत्काल उसे भी गंगा में प्रवाहित कर दिया ।

संन्यासी के निस्पृह स्वभाव को देखकर गुरु गोरखनाथ गदगद हो उठे । फिर बोले— ‘सचमुच आप महान हैं । जो दान में प्राप्त अलभ्य वस्तु को भी जल को अर्पित कर दे, उससे महान त्यागी व दानी और कौन हो सकता है !’

कहानी

सड़ा अंकुर

• माया मिश्र

आज प्रभास फिर आया है, वर्षों बाद। कॉल-बेल बजी, तो जरा भी देर न लगी पहचानने में कि एकदम अलग आवाज प्रभास की ही है। न जाने किस ढंग से बेल बजाता है कि एकदम जान जाती हूं कि वह वही है। निढाल-सा आते ही वह सोफे पर मानो गिर पड़ा। “सुमि अपनी कसमें वापस ले लो। लौटा लो मुझे उसी मृग-मरीचिका में। कम से कम जिंदगी जीने के लिए थोड़ा सहारा ही होगा। तुम्हारे पास जो ये दो-चार क्षण बीतते हैं, वही मेरी अमानत हैं, वही मेरी जिंदगी है। वरना बेबस-बेसहारा सांसें कैसे कब तक साथ देंगी!”

मैं जानती थी वह जरूर वापस आयेगा। मेरी कसमों का क्या, जैसे मैं खुद ही जानती थी, चाहती थी कि वह उन बातों को छोड़ और कसमों को तोड़ फिर आये। एक अनकही खुशी से दो शब्द भी मेरे मुंह से न निकले।

“सुमि, नाराज न होओ। तुम्हारी यह चुप्पी हमेशा मुझे सालती है। जाने क्यों तुम मुझे समझ नहीं पायीं!”

कैसे कहूं प्रभास से कि जितना मैं उसे समझी हूं कौन समझ सकेगा! कैसे कहूं प्रभास से कि जितना उसने मुझे चाहा है, उसका प्रतिदान मैं नहीं दे पाती। इसका अर्थ यह नहीं कि मैं उसे नहीं चाहती! और यह भी कैसे कहूं कि इतने दिन क्यों नहीं आया!

पर मेरा भी कोई कसूर नहीं। आज फिर कितना अकेला महसूस कर रही हूं। बड़ी बेटी का विवाह कर दिया। छोटी भी इसी साल डॉक्टरी पास कर लेगी। बार-बार ध्यान आता रहता है कि कौन है मेरा, जो मेरा अपना सुख-दुःख बांट सकेगा। किससे कहूं! कभी तो कह सकूं मन की उलझनें। बड़ी बेटी आयी थी, पिछले महीने। तमाम हुक्म, तमाम सलाहें। छोटी डॉक्टर क्या बन रही है, दोनों में वह तालमेल प्यार का जैसे रहा ही नहीं। छोटी-छोटी बातों को लेकर

रोज ही झगड़ा होता।... 'चुनमुन का कुत्ता बहुत भौंकता है, मैं सो नहीं सकती।' वेचारा कुत्ता घर से बाहर ठिठुरने को फेंक दिया जाता है।... यह क्या क्लासिकल गजलें बजा रही है गोपा, थोड़ा तो पढ़ाई का ख्याल करे। आपने तो शादी कर ली, भई दूसरों को तो पढ़ने दें ... मानों बड़ी के तमाचा जड़ दिया हो कि बी. ए. पास होते न होते ब्याह रचा लिया, मुझसे क्या बराबरी! फिर दोनों में किसी की तरफ से बोलने का हक भी नहीं है मेरा! आज सुबह भी दनदनाती घर से गयी है चुनमुन—यह क्यों पूछा, "कितने बजे लौटोगी?" इन्हीं सब बातों को सोचते-तौलते आज की दोपहर भर की अपनी जिंदगी का लेखा-जोखा करती रही थी मैं।

प्रभास क्यों नहीं आता! कितनी टैलीपेथी है, मेरी उसके साथ! जब कभी दुःख-दुविधा में मैं भटकी हूं, उसने मुझे संबल दिया है। व्यथा उसकी ही तो अधिक है। मैं आज भीड़ में होकर ही महसूस कर रही हूं; पर उस बेचारे ने तो, जिंदगी क्या होती है—यही कब जाना! एक घर, परिवार, बच्चों सबके सुख से खींचकर बाहर कड़कती धूप में सूखता रहा है। भटकन भी इतनी कि कहीं कोई रास्ता है ही नहीं।

... सूखी डालें है प्रभास। कभी पत्ता, फूल इनमें न खिलेगा। मन एकदम शून्य, विजलीकृत है, चाहे जितना नेह-मेह वरसाओ कभी कहीं अंकुर प्रस्फुटित न होगा।

...जीवन में कितनी देर से तुम मिले। मैंने कितना कुछ गंवा दिया था और तुमने मेरे आंचल को उससे न जाने कितना गुणा भर दिया। ...

'तुम न होते प्रभास तो सच मानो मैं छोटे-छोटे सुखों को भी तरस जाती।'

एक-एक बात याद आती रही, तमाम बातें जो मैंने कभी प्रभास से कहीं थीं।

अनिरुद्ध यूं मूझे बेसहारा छोड़ चले जायेंगे वह क्षण दहकते अंगारे की तरह मन में, आंखों में बराबर जलता रहता है। होनी बड़ी प्रबल होती है। इतवार दोपहर खाना खाकर आराम कर रहे थे। देर से खाना खाया था। अचानक ही वे बोले, "चलो, थोड़ा ड्राइव कर आयें। गोपा की परीक्षा खत्म हुई है, घूम लेगी। चुन्नू भी घूमने की शौकीन है।" बस, मृत्यु का आह्वान था-जैसे। बाकी तो सोचने और विश्वास करने का सामर्थ्य आज भी नहीं है। महीनों का क्या सालों मुझे यकीन ही न हुआ कि अनिरुद्ध अब मेरे साथ मेरे पास नहीं हैं। पेपरस् पर उन्होंने दस्तखत भी नहीं किये कि वह समझते रहे कि उन्हें कुछ नहीं हुआ।

फिर जिंदगी चलने लगी। ठहराव, पड़ाव होता ही कहां है? दोनों बच्चे मुझे व्यस्त रखने लगे। उनके प्यार में इतना अधिक मैं उलझ गयी कि अनिरुद्ध भी कोशिश करने पर ही याद आते।

बस एक फैसला, जो किसी को पसंद नहीं आया, वह यह कि मैंने नौकरी कर ली। आखिर इतने बड़े अफसर की पत्नी बेकार परेशानी उठाये ? पिताजी ने कहा, "घर में सब कुछ है, मैं उनके पास ही रहूं। ससुराल में मन हो तो वहां ही रहने लगूं।"

फिर कहीं रुकने की कभी मुझे जरूरत नहीं हुई। सब काम करने मुझे आ गये। अनिरुद्ध की यादें—कितनी सुकोमल, स्नेहिल और आत्म-विभोर करनेवाली थीं। उनका आकर्षक व्यक्तित्त्व, मोहक चेहरा! गोपा तो हूबहू उनकी कॉपी! और इसके सहारे जो जिंदगी मैंने जी, उसे मैं अनिरुद्ध के प्रति अपने प्यार व विश्वास का प्रतिदान कहूंगी।

सारी दोपहर आज अनिरुद्ध बेहद याद आये। और अब भी मुझे उनकी यादों ने घेरा है, जब भी मैंने यह सोचा कि मैं कितनी अकेली हूं, प्रभास आ जाता है, मेरी जिंदगी में! आज से नहीं जब से वह मुझसे मिला तभी से!

मिला क्या, जैसे मैं बाट जोह रही होऊं कि वह आये!

गोपा को छोड़ने नैनीताल जा रही थी। स्टेशन पर जब पहुंची तो अनिरुद्ध के सहयोगी बकुल अनायास मिल गये। वे भी उसी ट्रेन से जा रहे थे। अपने साथ खाना खाने को मैंने उनसे कहा। वे कुछ सकुचाये। उनके एक मित्र और भी थे। मैंने कहा, "उन्हें भी बुला लीजिए खाना तो बहुत है, अच्छा लगेगा।"

और प्रभास कंपार्टमेंट में बड़े अनमने भाव से आया। जाने क्यों मुझे यह अहसास हुआ कि कहीं कुछ ऐसा उसमें है जो अनिरुद्ध-जैसा है। शायद जैसे अनिरुद्ध चुपचाप मेरी ओर देखते थे, उसने उसी ढंग से मुझे देखा ! कहीं ऐसा तो नहीं कि कोई झलक अरु-जैसी थी ! कहीं ऐसा तो नहीं कि मैं ही कल्पनाओं में खोयी थी, बेकार सामंजस्य मिलाने बैठ गयी ! एक अपरिचित-सा वह बैठा रहा, पूरे वक्त !

"अरे, यह चोट कैसी है ?" और झट प्रभास ने मेरे माथे पर लगी चोट को हाथ से छू लिया। मैं दिल्ली लौट आयी थी। उसी शाम प्रभास ने बेल बजायी थी मेरे घर की, फिर उसी शाम वह अपरिचित प्रभास एकदम विशिष्ट हो गया मेरे जीवन में। "माफ कीजिएगा, आपका व्यवहार, आपके मैनरिज्म मुझे इतने भा गये कि मुझसे तो रहा ही न गया कि आपसे फौरन न मिलूं—जानती हैं, अभी घर भी नहीं गया हूं, सोचा पहले आपसे मिलता चलूं।" कहां तो उस दिन पूरे वक्त चुप रहा, अब बोले ही जा रहा था जैसे मुझे सिर्फ सुनना है, कोई उत्तर नहीं देना। और फिर उसने मेरे माथे पर लगी चोट को छू लिया !

"अरे, कितने टांके लगे हैं ?"

"क्या बताऊं, अनिरुद्ध यहीं चोट का निशान दे गये हैं, ताकि हर दिन,

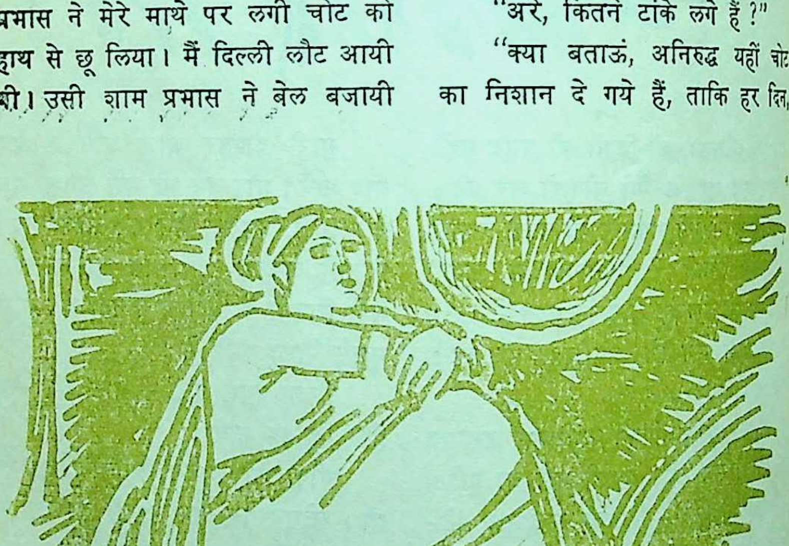

हर शाम, जब दर्पण देखूं याद रखूं" फिर मैंने प्रभास को सब कुछ बताया। उम्र मेरी तब क्या यही चौतीस-पैंतीस की होगी। अनिरुद्ध को गये भी तो पांच वर्ष हो गये। छोटी-सी गोपा हाई स्कूल पास कर लेगी इस वर्ष। प्रभास नया-नया पुलिस आफीसर बना था। कहीं कोई धारणा बनने-बनाने की बात ही कहां थी। बल्कि सच पूछो तो एक बारगी मन में यह बात जरूर आयी कि गोपा भी तो बड़ी हो रही है। जात-पांत के बंधन तोड़ दूंगी, न, न, अब यह सोचना भी पाप है!

यों कभी-कभी दुःख भी होता है कि ये बच्चे, जिनके लिए जीवन एक संन्यासी जैसा व्यतीत किया, वे तनिक भी मान-सम्मान देना अपना कर्तव्य नहीं समझते।

"आपको क्या तकलीफ रही?—और हां पापा के नहीं रहने से तो और भी फ्रीडम ही थी! आपने कौन-सी शाम अकेले गुजारी?" यह चुनमुन कह चुकी हैं।

गोपा भी कम नहीं। "ममी, चुनमुन बड़ी हो गयी है, अच्छा नहीं लगता ये आलतू-फालतू लोग आ जाते हैं।" अब नौकरी करती हूं। कोई रिसर्च स्कॉलर कोई स्टूडेंट, कोई फैलो टीचर शाम को आ ही जाते हैं। संयम, धर्म या नियम का यह अर्थ तो नहीं कि अपने को दो घड़ी दुरूह विभीषिकाओं से दूर रखने को किसी से बात भी न करूं!

पर सफाई देने की बात कहां है, जरूरत भी क्या है? प्रभास तो आहत

ही रहा हैं। मन के एक कोने में नहीं; मन पर पूरा छाया रहा है। गोपा ने जरूर स्टडी किया होगा। तभी तो कभी गोपा में प्रभास को इंट्रेस्ट नहीं लेने दिया—न, न, यह सच नहीं है। झूठ बोलने की बात ही क्या है? जरूरत भी नहीं। वह स्वयं ही इतना आकर्षित, सम्मोहित रहा मेरे प्रति, उसने स्वयं ही कभी चेष्टा नहीं की। अब तो वह बी. ए. फाइनल में थी और स्वयं ही उसने गोपा के लिए मैच ढूंढा!

अनिरुद्ध के जाने के बाद के वर्ष सच में इतने एकाकी, इतने वीरान न थे, जितने अब ये आगे के होंगे। प्रभास का साथ भी तो अब लंबे दस वर्षों का हो चला। वह अकेला निस्पृह अपना चैन-सुख गंवाता चल रहा है। मेरा उसका कोई संबंध कभी हो सकेगा यह भ्रम तो मैंने उसे कभी होने ही नहीं दिया, पर अनकहे अमर-प्रेम-जैसा उसका मुग्ध प्यार

है, कुछ आसक्ति है जो उसे मुझसे दूर जाने नहीं देती !

तुम शायद अपने को संभाल लो प्रभास, लेकिन ऐसा लगता है कि मुझे अपने को सीमा में बांधे रखने में बड़ा प्रयास करना पड़ रहा है। यूं कोई बंधन मुझ पर नहीं है, पर तुममें अनिरुद्ध की छवि है, तुममें झलक है उनकी, पर आखिर तुम अनिरुद्ध तो नहीं हो।... तुम जाओ, कभी मत आना... !

प्रभास चला गया था, मुझे यातना देकर। सारी दोपहर सोचती रही थी कुछ अनहोनी तो नहीं थी, मैंने सुख क्यों नहीं देखा ? क्यों मैं पग-पग पर अपने को सीमाओं के घेरों में बांध छलती रही ? क्यों मैंने अपने संत्रास को प्यार की फुहारों से और गहरा किया ? क्यों मैंने यह संबल नहीं जुटाया कि आदर्शों और सामाजिक बंधनों को अपने मन की व्यथा से पराजित कर पाती ? बच्चे अपने संसार में मगन हो गये हैं। इस 'आज' का ध्यान उस दिन क्यों नहीं हुआ ?

शायद प्रभास मुझसे बहुत छोटा है, शायद विजातीय है। कोई ऐसा ही डर रहा होगा ! पर आज की वीरानी दूर करने, न गोपा है, न चुनमुन। और अनिरुद्ध की यादें मुझे और अकेला करती जा रही हैं।

फिर भी मैं फैसला कर चुकी हूं। प्रभास को समझना होगा। अपने मन में उगा अंकुर सड़ा दिया है मैंने ! दुःख को इतना भोगा है कि प्यार की कोंपल निकलते देख, उसे नोंच फेंका है। डर जो है कि ये विकलांग पत्ते और भी बेडौल बना डालेंगे मेरे जीवन को। यों प्रभास पास होगा, तो क्या मुझे मेरी वीरानी छोड़ देगी ? तब क्या होगा जब प्रभास के पास बैठकर भी अनिरुद्ध, गोपा और चुनमुन मुझे, मेरे सूखे ठूंठ से मन को उघाड़ देंगे ?

नहीं, वादे-कसमें निभाने होंगे प्रभास को। उसे लौट जाना होगा। इस सावन-भादो की निरंतर झड़ी-फुहार में भी एक भी अंकुर अब न फूटने पायेगा।

—द्वारा-श्री **रमेशप्रसाद मिश्र,**
डी. आई. जी., पुलिस हेडक्वार्टर्स, भोपाल

ताजमहल और मथुरा में बननेवाले तेलशोधक कारखाने के संदर्भ में एक छोटा-सा समाचार: अमरीका में तीन इंच से भी छोटी एक मछली के कारण ८२ करोड़ की लागत से बन रहे एक बांध का काम बीच में ही छोड़ देना पड़ा। हुआ यह कि जब बांध-निर्माण पर ५० करोड़ रुपये खर्च हो चुके तो वातावरण विशेषज्ञों ने सुप्रीम कोर्ट में दावा किया कि बांध के कारण केवल उसी क्षेत्र में पायी जानेवाली एक विशेष मछली का सदा-सदा के लिए अस्तित्त्व समाप्त हो जाएगा। सुप्रीम कोर्ट ने उनका दावा मंजूर कर बांध के निर्माण पर रोक लगा दी।

बुद्धि-विलास

१. एक कर्मचारी एक दिन अपने घर से ५. कि. मी. प्रति-घंटे की रफ्तार से चलकर जब अपने कार्यालय पहुंचा, तो वह नियत समय से ५ मिनट देर से पहुंचा। दूसरे दिन वह पहले दिन की अपेक्षा २० प्रतिशत अधिक तेज चला और कार्यालय नियत समय से ५ मिनट पूर्व पहुंच गया। बताइए, उसका कार्यालय उसके घर से कितनी दूर है?

२. दुनिया का कौन-सा देश भारत के प. बंगाल, असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम राज्यों से घिरा हुआ है?

३. क. एवरेस्ट शिखर पर चढ़ने में अभी हाल में किसने सफलता प्राप्त की है?
ख. इस अभियान की क्या विशेषता है?

४. भारत में सबसे अधिक कोयला-उत्पादन की क्षमतावाली कोयला-खान कहां है?

५. दुनिया में सबसे अधिक बाघ किस देश में हैं?

६. संयुक्त राष्ट्रसंघ ने १९७४-८४ का दशक किस विशेष बात के लिए निर्धारित किया है?

७. किस प्रसिद्ध इमारत को कंपूचियाई राष्ट्रवाद का प्रमुख प्रतीक कहा जा सकता है?

८. क. आगामी नवंबर मास में देश के किस महापुरुष की द्विशतवार्षिकी मनायी जानेवाली है?
ख. उनके जन्मस्थान का नाम बताइए।

९. चिकित्सा-विशेषज्ञों की राय में जिस्म के किस भाग द्वारा काम करना बंद किये जाने से मृत घोषित किया जाना चाहिए?

१०. क. किस महाद्वीप की आबादी सबसे अधिक है?

ख. दुनिया के तीन सबसे अधिक आबादीवाले नगरों के नाम बताइए।

११. भारत में सौर-ऊर्जा के विकास के अध्ययन के लिए सबसे पहली संस्था कहां स्थापित हुई है?

१२. दुनिया में सबसे अधिक लोकप्रिय पेय क्या है?

१३. रासायनिक ढंग से निर्मित सबसे कठोर पदार्थ कौन-सा है?

१४. समुद्री फासला नापने के लिए किस इकाई का प्रयोग किया जाता है?

१५. नीचे दिये गये चित्र को ध्यान से देखिए और बताइए यह क्या है—

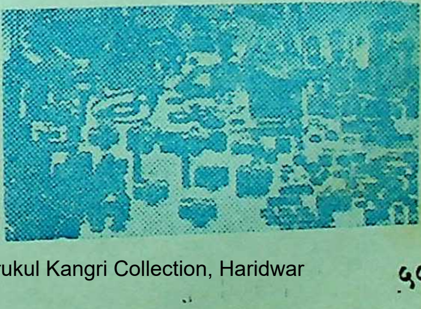

चीनी आधुनिक नीति-कथाएं

बंदूक

पेड़ के नीचे बैठा एक गड़रिया अपनी भेड़ों को देख रहा था। उसके कंधे पर बंदूक थी। इतने में अपनी गाय को चरा रहा एक व्यक्ति उसके पास आया और आराम के लिए बैठ गया। उसके हाथ में चाबुक थी।

गड़रिये ने पूछा, "इस चाबुक से क्या अपनी गाय को मारते हो? तुम्हें यह हिंसा नहीं करनी चाहिए।"

इस पर गाय चरानेवाले ने कहा, "तो तुमने यह बंदूक क्यों रखी हुई है?"

"इसलिए कि कहीं चोर आकर मेरी भेड़ें न ले जाएं, लेकिन अच्छा है कि मैं इसे न ही रखूं।"

तभी उसने अपने कंधे पर से बंदूक उतारकर एक ओर रख दी। गायवाला उसे उठाकर देखने लगा। उसी समय वहां एक शेर दिखायी दिया। गड़रिया डर के मारे पेड़ पर चढ़ गया।

गायवाले ने बंदूक से शेर का निशाना बांधा। गड़रिया और भी भयभीत होकर पेड़ से चिल्लाया, "बंदूक न चलाना। शेर आदमियों को खा जाते हैं।"

लेकिन गायवाले ने गोली चला दी और वह शेर के सिर में जाकर लगी।

गड़रिया पेड़ से तुरंत उतरा और शिकायती लहजे में गायवाले से बोला, "तुमने मेरे कहने की कोई परवाह नहीं की। आखिर अकारण ही गोली क्यों चलायी?"

"अगर न चलाता तो शेर मुझे खा जाता।"

"जरूरी नहीं है। बहुत करता तो वह किसी भेड़ को उठाकर भाग खड़ा होता। संयोग से ही तुम्हारा निशाना ठीक बैठा, वरना शेर तुम्हें खा गया होता।"

गड़रिये ने उससे बंदूक ली, उसमें गोली डाली और फिर उसका निशाना बांधते हुए कहा, "मुझे तुम्हारी गाय चाहिए जिस पर लादकर शेर को घर ले जा सकूं।"

"पर शेर को तो मैंने मारा है। तुम उसे कैसे ले जा सकते हो?"

"तुमने उसे मेरी बंदूक से मारा है। और देखो, अगर तुमने गड़बड़ की, तो मैं तुम्हें गोली मार दूंगा।"

—कुओमो-जो

पत्रवाहक कबूतर

एक आदमी के पास दो पत्रवाहक कबूतर थे। वह जब भी उन्हें कोई संदेश देकर भेजता, तो वे दोनों एकसाथ निश्चित स्थान पर बिलकुल सही समय पर पहुंचते, लेकिन लौटने पर एकसाथ न आते। उनका मालिक सोचता कि कहीं वे रास्ता न भूल जाते हों। सो, उसने सोचा कि क्यों न दोनों को एक-दूसरे से बांधकर

भेजा जाए।

अगली बार उसने उन्हें एक फुट लंबी रस्सी से बांधकर भेजा। वे दोनों आपस में न तो एक-सी दूरी रख पाये और न पहली-सी रफ्तार से उड़ सके। कुछेक मौकों पर रस्सी उलझती भी जाती थी।

आखिर एक मौके पर वे आपस में ऐसे उलझे कि नीचे धरती पर आ गिरे। उन्होंने फिर से उड़ने का प्रयत्न किया, लेकिन उड़ न पाये और अंत में उसी हालत में पड़े मर गये।

—हुआंग जुइ-यान

नुस्खा

एक दिन एक लोमड़ी और बाघ ने योजना बनायी कि वे दोनों मिलकर जंगल के छोटे-बड़े जानवरों को मार डालें और बाद में उन्हें आराम से खायें।

सो, उन्होंने अपने बादशाह, शेर के नाम पर घोषणा की कि पता लगा है कि हमारे राज्य में किसी के पास अमर होने का नुस्खा है। तब शाही हुक्म दिया जाता है कि यह एलान सुनते ही हर कोई दरबार में हाजिर होकर उस दवाई का नुस्खा बताये। जो भी इस हुक्म का पालन नहीं करेगा, उसे मौत की सजा दी जाएगी।

जब जंगल के सभी जानवर वहां आकर जमा हो गये, तब बाघ और लोमड़ी ने शेर के नाम पर कार्रवाई शुरू की।

सबसे पहले हिरण से पूछा गया। उसने नुस्खे के बारे में अनभिज्ञता प्रकट की, तो लोमड़ी ने फैसला सुनाया, "हिरण हुक्म मानने से इनकार कर रहा है।" तभी बाघ ने झपटकर हिरण को दबोच लिया।

चारों ओर चुप्पी और दहशत छा गयी।

तभी एक सफेद खरगोश उछलकर लोमड़ी और बाघ के सामने आया और साहस से बोला, "मैं जानता हूं वह नुस्खा!"

लोमड़ी ने चौंककर उसकी ओर देखा और बाघ ने दांत पीसे। फिर एक साथ पूछा, "क्या कहा तुमने?"

"आप अमरता का नुस्खा जानना चाहते थे ना? वह नुस्खा है कि हमारे बादशाह शेर को अमर होने के लिए जल्द-से-जल्द लोमड़ी का दिल और बाघ के फेफड़े खाने चाहिए।" यह कहते ही खरगोश बाकी जानवरों की ओर मुड़ा और ऊंची आवाज में बोला, "आओ, आगे बढ़ो! इनका दिल और फेफड़े निकालकर शेर को जाकर भेंट करें।"

सभी जानवर खरगोश की बात का मतलब समझ गये थे और साझी घृणा की बदौलत एक होकर लोमड़ी और बाघ पर टूट पड़े और उनका सफाया कर डाला।

—ली पाओ-चुन

१० डाउनिंग स्ट्रीट: पहली बार एक महिला का प्रवेश

• विमला मेहता

४ मई . . . शुक्रवार . . . १९७९ की गोधूलि बेला में . . . ब्रिटेन के प्रधानमंत्री के परंपरागत निवासस्थल डाउनिंग स्ट्रीट की संकरी सड़क . . . । एक काली रोवर लिमौसिन से अति आकर्षक व्यवितत्त्व और विजय के उल्लास से दीप्त एक महिला उतरती है। तालियां बजाते, बधाइयां देते उत्साही लोगों की भीड़ के बीच से गुजरते हुए वह सधे कदमों से १० नंबर डाउनिंग स्ट्रीट में प्रवेश करती है। ये है ब्रिटेन की नवनिर्वाचित प्रधानमंत्री श्रीमती मार्गरेट हील्डा थैचर। मार्गरेट थैचर, जिन्हें ब्रिटेन ही नहीं, समस्त यूरोप में पहली महिला प्रधानमंत्री होने का गौरव प्राप्त हुआ है। इस एक क्षण ने यूरोप के इतिहास को एक नया मोड़ दिया है। अभी-अभी श्रीमती मार्गरेट थैचर की कंजरवेटिव पार्टी ने ब्रिटेन के आम चुनाव में सत्तारूढ़ लेबर पार्टी को ४३ वोटों से पराजित किया है।

इस क्षण के कुछ समय पूर्व ही लेबर-पार्टी के नेता व प्रधानमंत्री श्री जेम्स कैल्हन ने बकिंघम पैलेस में जाकर महारानी को अपना इस्तीफा दे दिया है। इसके तुरंत पश्चात महारानी एलिजाबेथ के आमंत्रण पर मार्गरेट थैचर ने रानी से भेंट की। इसके बाद ही परंपरागत रीति के अनुसार मार्गरेट प्रधानमंत्री के पद में प्रधानमंत्री-निवास १० डाउनिंग स्ट्रीट की ओर चल दीं, जहां उनके प्रशंसक आगमन की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

फरवरी १९७५ में, श्रीमती मार्गरेट थैचर के ब्रिटेन के विरोधी दल—कंजरवेटिव पार्टी की नेता चुने जाने पर न्यूयार्क टाइम्स ने लिखा—'श्रीमती थैचर को ऐतिहासिक तथा जबरदस्त विजय ने सबको स्तब्ध कर दिया है, साथ ही इस धारणा को भी दफन कर दिया है कि ब्रिटेन में राजनैतिक परंपरावाद और पुरुषों का आधिपत्य साथ-साथ चलते हैं।'

परचून की दुकान चलानेवाले एक अति साधारण परिवार में सन १९२५ में मार्गरेट का जन्म हुआ। पिता श्री राबर्टस दुकान के साथ राजनीति में भी भाग लेते थे। दो बहनों में छोटी मार्गरेट एक बहुत प्यारी-सी सुंदर बच्ची थी, जो परियों की राजकुमारी की भांति सौंदर्य में अद्वितीय लगती थी। स्कूल में वह मेहनती, लगनशील व पक्के इरादोंवाली मानी जाती थी।

नौ वर्ष की आयु में नगर की कविता

पाठ प्रतियोगिता में मार्गरेट को प्रथम पुरस्कार मिला, तब गौरवान्वित हेड-मास्टरनी ने आगे बढ़कर कहा, "मार्गरेट! तुम बहुत भाग्यशाली हो।" ... इस पर इस अल्हड़ बालिका ने दृढ़ता से कहा, "नहीं, मैं भाग्यशाली नहीं हूं ... मैं इस योग्य हूं कि यह पुरस्कार मुझे मिले ...।"

कुछ बड़ी होने पर दोनों बहनें दुकान पर अपने माता-पिता की मदद करती थीं। कस्बेभर में निहायत सुंदरी किशोरी होने के बावजूद उसके किशोर-मित्र कम थे। मार्गरेट शनिवार के दिन शाम के समय भी दुकान चलाती। रात गये पिता राजनीतिक मामलों में सहयोग देकर टाउन से लौटते तो रात काफी बीतने पर भी अपनी बच्चियों को राजनैतिक हलचल के बारे में विस्तार से बताते।

बीस वर्ष की आयु तक पहुंचते-पहुंचते मार्गरेट कहने लगी, "राजनीति मेरे खून में है।"

स्कूली शिक्षा पूरी करने के बाद उन्होंने ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया और वहां छात्रवृत्ति पाकर उन्होंने रसायनशास्त्र में स्नातक उपाधि प्राप्त की। इसके बाद तीन वर्ष तक एक प्लास्टिक फैक्ट्री में कार्य किया।

क्योंकि राजनीति उनके खून में थी। इसलिए वह ऑक्सफोर्ड में कंजरवेटिव सोसाइटी की सभापति निर्वाचित हुई। और तो और, कंजरवेटिव पार्टी के अध्यक्ष सन १९४९ में इस चौबीस वर्षीया सुंदरी की प्रतिभा से ऐसे प्रभावित हुए कि उन्होंने अगले वर्ष संसदीय चुनाव में अपने दल की उम्मीदवार के रूप में चुनाव लड़ने के लिए आमंत्रित किया।

इस चुनाव अभियान के दौरान मार्गरेट मिस्टर थैचर के संपर्क में आयी। मार्गरेट से उम्र में १० वर्ष बड़े थैचर टोयल आर्टीलर में रहे थे और मेजर के रूप में द्वितीय विश्व युद्ध में इटली व फ्रांस की लड़ाइयों में भाग ले चुके थे। इस संपर्क ने घनिष्ठता का रूप ले लिया और सन १९५१ में दोनों ने आपस में शादी कर ली। शादी के बाद लगभग ८ साल तक

श्रीमती थैचर को अपनी पुस्तक भेंट करती हुई लेखिका

वह सक्रिय राजनीति से अलग घर-गृहस्थी में व्यस्त रहीं।

इस दौरान वे राजनीतिक गतिविधियों का गहराई के साथ अध्ययन करती रहीं और सन १९५९ में फिर चुनाव के मैदान में उतरीं और विजय प्राप्त की।

१९५९ के चुनाव जीतने के बाद उन्होंने पत्रकारों को वह सम्मानित अधिकार दिलवाया जिसमें वे सार्वजनिक संस्थाओं की बैठकों में हिस्सा ले सकें। १९६४ में वे छाया-केबिनेट की सदस्या थी। १९७० में उनका दल जीता तो वे शिक्षा तथा विज्ञानमंत्री बनी।

व्यक्तिगत स्वतंत्रता की हामी मार्गरेट थैचर चाहती हैं कि देशवासियों के जीवन में कम से कम हस्तक्षेप किया जाए। लेकिन वे अश्वेत लोगों द्वारा ब्रिटेन पर 'हावी' होने जैसे बातों की भी विरोधी हैं।

परंतु श्रीमती मार्गरेट थैचर की जिंदगी का दूसरा पहलू भी असाधारण है। वह है— महिलाओं का अपना संसार। वे एक कुशल गृहिणी हैं। उनका दाम्पत्य-जीवन सुखी और सद्भावपूर्ण है। पति से उन्हें राजनीतिक कार्य में सहयोग मिलता रहा है।

स्त्रियोचित शृंगार व वेशभूषा में भी श्रीमती थैचर किसी से पीछे नहीं। शालीन पोशाक, संवरे हुए बाल और गर्वीली चाल से एक अभिजात्य रुचि का आभास होता है। वे स्वयं कहती हैं, "मैं हृदय से एक 'रोमांटिक' महिला हूं।' उनका परिवार एक सुखी परिवार है जिसमें सब एक-दूसरे के बहुत निकट हैं।

एक छोटे से जहाज पर छुट्टियां बिताते हुए उन्होंने एक बार कहा था, "कौन गृहिणी नहीं जानती कि जहाज की ही तरह छोटे घर को संवारकर रखने के लिए हर चीज अपनी जगह पर ही होनी चाहिए?" किस गृहिणी के मर्म को यह बात नहीं छू लेगी? उन्हें साफ-सुथरापन बेहद पसंद है। व्यस्त रहने के पहले खरीदारी व रसोई का काम वे स्वयं करती रही हैं और खरीदारी में भी उनका कोई जवाब नहीं है। वे खरीदारी करने से पहले खूब जांच-पड़ताल करती हैं और जिस जगह पर चीजें अच्छी और सस्ती यानी वाजिब दामों पर मिलती हैं, वहां से खरीदती हैं।

यदि कहा जाए कि मार्गरेट थैचर के व्यक्तित्व में दो भिन्न व्यक्तियों का समन्वय है, तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। राजनीति में शुष्क व लौह महिला मानी जानेवाली इस महिला प्रधानमंत्री ने प्रधानमंत्री पद ग्रहण करने के बाद अपने कर्मचारियों को निर्देश दिया है कि १० डाउनिंग स्ट्रीट के कार्यालय के सभी व्यस्त कार्यक्रमों के बीच सप्ताह में एक घंटा मेरे लिए अलग से अवश्य रखा जाए। इस पर कर्मचारियों ने प्रश्नवाचक मुद्रा बनायी तो वे बोलीं, "मुझे सप्ताह में एक बार अपने बालों की साज-संवार करानी पड़ती है।

मार्गरेट थैचर का व्यक्तित्व अत्यंत प्रभावशाली है। सितंबर १९७६ में वे भारत सरकार के निमंत्रण पर हमारी शाही मेहमान बनकर पधारीं तो २४ सितंबर १९७६ के दिन शास्त्री-भवन में हुई एक प्रेस-कांफ्रेंस में उनका रोबदार व्यक्तित्त्व देखते ही बनता था। पत्रकारों के प्रश्नों की बौछार को उन्होंने बड़े धैर्यपूर्वक झेला और बे-झिझक उत्तर दिये। उसी प्रेस-कांफ्रेंस में उन्होंने स्पष्टतापूर्वक कहा, "भारत के मौजूदा हालात से मेरा सहमत होना कोई आवश्यक नहीं।" (संभव है उनके प्रधानमंत्री बनने के बाद उनकी यह भावना और उभरकर सामने आये।) उस समय उनकी ऐसी कड़वी बातें उनके सौंदर्य, श्वेत पोशाक पर लगे ताजे गुलाब और मोरपंख-जैसे ब्रौच से तनिक भी मेल नहीं खाती मालूम होती थीं। परंतु आज मुझे ऐसा महसूस होता है कि यदि कोई सुंदर-सजी महिला राजनीति में कदम रखती है, तो क्या उसमें संकोच, लज्जा आदि स्त्रियोचित गुणों का होना आवश्यक है?

श्रीमती थैचर के कई साथी आज यह समझते हैं कि उनकी यह कठोर नेता प्रधानमंत्रित्व की गरमाहट पाते ही और अधिक तेज हो जाएगी।

मार्गरेट थैचर के शब्दों में, "बचपन में माता-पिता ने कहा था और बड़ी अच्छी तरह समझाया था कि काम और सुघड़ता सबसे बड़ी चीज है। कुछ अच्छा पाने के लिए काम करना, कसकर करना, नकद पैसे देना, नकद लेना, फिर कुछ बचत करना और आगे बढ़ना आदि-बातें हमारे माता-पिता हमारे मन में कूट-कूटकर भरते थे। काम केवल जीविका के रूप में न करके, कर्त्तव्य के रूप में करने की प्रेरणा मिलती थी...आज मैं वह याद करती हूं और माता-पिता के प्रति कृतज्ञता से भर उठती हूं।"

यह भी एक संयोग है कि विकासशील कहे जानेवाले भारत ने इंदिरा गांधी, इजरायल ने गोल्डा मायर व श्रीलंका ने भंडारनायके को महिला प्रधानमंत्रियों के रूप में पहले चुना और विकसित कहे जानेवाले ब्रिटेन ने कई युगों बाद . . . । यह एक कटु सत्य है कि दुनिया के विकसित देशों के इतिहास में पहली बार एक महिला को प्रधानमंत्री बनने का अवसर मिला है।

—द्वारा श्री वीरेन्द्रराज मेहता,
१२, रेलवे कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,
नयी दिल्ली-११००२१

काफी के बारे में किये गये एक सर्वेक्षण के निष्कर्ष : एक कप काफी पेट का तापमान १५ डिग्री फारेनहाइट तो बढ़ा ही देती है, साथ ही उससे हृदय की धड़कन भी १५ प्रतिशत बढ़ जाती है। फेफड़ों को १३ प्रतिशत ज्यादा काम करना पड़ता है और गुर्दों (किडनी) का काम दुगुना बढ़ जाता है।

बुद्ध के अंतिम दिन

• भिक्षु महाबोधि मोगलायन

एक व्यक्ति ! राजपरंपरा और राजधर्म के बीच कलह ! धर्म वह जिसकी आस्था केवल अपने निजी स्वार्थ तक सीमित रहती है । एक बार एक तपस्वी ने पूछा था, "दुनिया का सबसे स्वार्थी व्यक्ति कौन है ?" उत्तर मिला था "राजा"। यह उत्तर अजीब लग सकता है, लेकिन सत्य भी कितना है। शताब्दियों से लेकर आज तक जहां-जहां राजशाही या राजतंत्र है वह एक व्यक्ति विशेष का केंद्र बिंदु बनी । जन सेवा और कल्याण के नाम पर जो कुछ होता है, छिपा हुआ नहीं है ।

गौतम राज-परिवार के ऐसे ही व्यक्ति थे । वे अपने पिता के सबसे बड़े बेटे, राजगद्दी के उत्तराधिकारी थे। उनके चारों ओर सुख-समृद्धि फैली थी। उन्होंने विवाह भी किया, एक पुत्र भी हुआ लेकिन . . . नियति कुछ और थी अकेले घूमते हुए एक दिन एक अनजाने व्यक्ति की शव-यात्रा को देखकर जीवन के प्रति वैराग्य और वितृष्णा का पैदा हो जाना मात्र साधारण-सी घटना नहीं हो सकती।

शाही जिंदगी का त्याग

जातक कथाओं में बार-बार कहा गया है कि पुनर्जन्म की मान्यता के फलस्वरूप बुद्ध कोई नये व्यक्ति नहीं थे, वे धोखे से ही एक राज-परिवार में अवतरित हुए थे। संभवतः इसीलिए एक दिन अचानक भयानक काल-रात्रि में धोखे से मिली हुई शाही जिंदगी को छोड़कर गौतम घर से बाहर निकल आये।

गौतम को मृत्यु के भय ने आक्रांत कर दिया था और वे अमरत्व का वरदान पाकर मृत्यु से मुकाबला करना चाहते थे। आदमी बहुत कुछ करना चाहता है, लेकिन क्या वह सब होता है ? आखिर गौतम को सिद्धि तो मिली लेकिन मृत्यु को वह जीत नहीं सका। जीतनेभर की बात नहीं है बल्कि वे एक यातना-पूर्ण मृत्यु के भागीदार बने। यह इतिहास का एक बहुत कटु सत्य है और सहस्त्रों सदियों की शोध के बाद भी आदमी की विवशता का प्रतीक है।

गौतम की दीर्घ जीवन-यात्रा का क्रम सिद्धि पाकर महात्मा और बुद्ध बनने तक चलता रहा। जब से यह कहानी शुरू होती है, तब से बुद्ध अपनी सिद्धि की चरमसीमा पर थे।

विभिन्न स्थानों का भ्रमण

उपदेश देते हुए वे विभिन्न स्थानों का

भ्रमण कर रहे थे। एक जगह ठहरकर रहना उनके केवल वर्षाकाल में ही संभव था। इस मौसम में वे अलग-अलग स्थानों में रहते। उन्होंने पहला वर्षावास वाराणसी में किया था। इसके बाद वैशाली, श्रावस्ती, कपिलवस्तु और राजगृह आदि स्थानों में वे लगातार रहे। अस्सी वर्ष की आयु तक बुद्ध धर्म का प्रचार करते हुए उत्तर प्रदेश और बिहार में घूमते रहे।

महात्मा बुद्ध प्रातःकाल भिक्षा-चर्या के समय तक एकांत आसन में बैठते थे। भिक्षाटन कभी अकेले ही या फिर भिक्षु-संघ के साथ करते थे। श्रद्धालु भक्तों के निमंत्रण पर उनके यहां भोजन करते एवं उपदेश देते। वहां से लौटने पर भिक्षुओं को उपदेश देते और फिर कुछ क्षण विश्राम कर दर्शनार्थियों को उपदेश करते। सायंकाल स्नान और ध्यान के बाद भिक्षुओं की समस्याएं हल करते। मध्य-रात्रि में अपने विश्वस्त सहयोगियों के प्रश्नों के उत्तर देते, और रात्रि के अंतिम प्रहर में कुछ समय विश्राम कर नये ज्ञानलोक की खोज में समाविस्थ हुआ करते थे।

जातिवाद और कर्मकांड को स्थान नहीं

महात्मा बुद्ध ध्यानशील मौन और एकांतप्रेमी थे। उनकी दया और करुणा-भावना जगत प्रसिद्ध है। वे अंधश्रद्धा के कट्टर विरोधी थे और सत्य का उपदेश करते थे। उनके उपदेशों में जातिवाद और कर्मकांड का स्थान नहीं था, जो विद्या और आचरण का धनी हो उसे वे सच्चा ब्राह्मण मानते थे।

महात्मा बुद्ध का कहना था, 'संसार एक दुःखमय चक्र है', उनके अनुसार यह संसार असत्य-असार और मृगमरीचिका है—इस अनित्य संसार के द्वंद्वात्मक दुःख से मुक्ति केवल संबोधि से प्राप्त हो सकती है। परम-सत्य का साक्षात्कार ही हमें सारे दुःखों से मुक्ति दिलवा सकता है। उन्होंने पारमार्थिक धर्म के दो रूप बताये : प्रतीत्यसमुत्पाद और निर्वाण। प्रतीत्युसमुत्पाद में इस जीवन में दुःख की उपस्थिति

महापरिनिर्वाण बेला में तथागत : शिल्पकारों द्वारा निर्मित एक मूर्ति

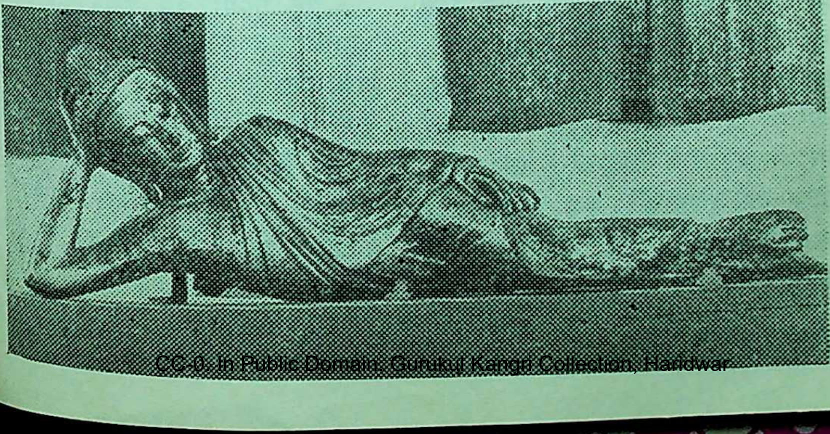

और उसकी अधीनता का वर्णन है और निर्वाण में परम शांति। इस अनित्य और परतंत्रचित्त शरीर को आत्मस्वरूप समझना ही अज्ञानता है, उसी से तृष्णा, मोह, लोभ और सांसारिक इच्छाएं जन्म लेती हैं, उसी से संसार-चक्र अनवरत गतिशील रहता है। इसके विपरीत शील, सत्कर्म, वैराग्य, प्रज्ञा संसार से निर्वाण की ओर ले जाते हैं। प्रज्ञा से सत्य का साक्षात्कार होता है। महात्मा बुद्ध द्वारा बताये गये चार आर्य-सत्यों में भी यही संदेश हैं।

बुद्ध ने कर्मतत्त्व को मनोवैज्ञानिक विश्लेषण द्वारा चित्त से उत्पन्न बताया है। उनका कहना है कि संसार-वृक्ष का बीज मन ही है-- **मनोपुब्वंगमा धम्मा मनोसेट्ठा मनोमया**--और दूसरी ओर इसी चित्त की अनित्यता और परतंत्रता द्वारा उसकी अनात्मता और हेयता को उन्होंने स्पष्ट व्याख्यायित किया है। मूलतः चित्त में नैरात्म्य बोध के द्वारा चित्तोपशम ही निर्वाण है।

वह पीड़ादायक महायात्रा !

कहना न होगा कि गौतम जिस लक्ष्य को लेकर जंगल-जंगल भटकते रहे, वह लक्ष्य उन्हें अंततः प्राप्त तो हुआ, लेकिन उन्हें यह बोध भी हुआ कि जिस मृत्यु के भय से वे भाग रहे हैं, वह उनका पीछा नहीं छोड़ रही। बुद्ध की महायात्रा के अंतिम दिन बहुत कष्टदायक थे। उनकी अंतिम पद-यात्रा बहुत बड़ी यातना और पीड़ा में बीती। बुद्ध उन दिनों राजगृह में रहे थे। जब मगधराज अजातशत्रु ने जनपद पर आक्रमण करना चाहता था। राजगृह से बुद्ध पाटलिपुत्र होते हुए गंगा के पार बसे वैशाली नगर में प्रविष्ट हुए। वैशाली नगर की नगरवधू आम्रपाली उन्हें देखते ही श्रद्धावनत हो गयी। उसने उनका आतिथ्य करना चाहा। सर्वप्रथम बुद्ध को भिक्षु-संघ सहित भोजन पर निमंत्रित किया। जब वैशाली के लिच्छवियों ने यह सुना कि भगवान बुद्ध ने एक गणिका आम्रपाली का निमंत्रण स्वीकार कर लिया है तब उन्हें यह सोचकर बड़ी ग्लानि हुई कि एक गणिका ने उन्हें बुद्ध का सम्मान करने में पराजित कर दिया। उन्होंने आम्रपाली से निवेदन किया कि यदि वे महात्मा बुद्ध को पहले उनके यहां भोजन करने की अनुमति दे दें तो वे उसे इस कृपा के लिए शत-सहस्र मोहरें देंगे। किंतु आम्रपाली ने धन से अधिक महात्मा बुद्ध के सम्मान को मूल्यवान समझा। वह किसी भी मूल्य पर उनको सम्मानित करने से वंचित नहीं रहना चाहती थी।

यह घटना उस समय की है जब महात्मा बुद्ध के परिनिर्वाण के तीन मास अभी शेष थे। यहां से बुद्ध वेलुवग्राम पहुंचे। वहां भगवान बुद्ध ने वर्षावास व्यतीत किया। यहां आकर वे अत्यधिक रुग्ण हो गये। उनकी इस अवस्था में देखते हुए उनके शिष्य ने बुद्ध को चिंता व्यक्त की, कहीं संघ को कोई निर्देश दिये

बिना ही उनका परिनिर्वाण न हो जाए। उनकी इस शंका का समाधान करते हुए बुद्ध ने आनंद से कहा, "आनंद, यह संघ अब और मुझसे क्या अपेक्षाएं रखता है, मैंने धर्म से संबंधित यथोचित उपदेश दे दिया है, अब मेरी आयु ८० वर्ष की है, जो मुझे और जीने के लिए आज्ञा नहीं देती, मैं वृद्ध और कृशकाय हो गया हूं, और संघ का नेतृत्व नहीं करना चाहता। आनंद, तुम्हें चाहिए कि तुम आत्मदीप, आत्मशरण, अनन्यशरण, धर्मदीप, धर्मशरण और अनन्यशरण होकर विहार करो।"

बुद्ध को सूअर का मांस खिलाया गया

अपने शिष्यों के साथ बुद्ध आगे चले—अनेक स्थानों में घूमते हुए वे पावापुरी पहुंचे। पावा पहुंचकर बुद्ध ने आम्रवन में विश्राम किया और चुंद कुम्मारपुत्र का आतिथ्य स्वीकार किया। अतिथि की सेवा में चुंद ने कुछ भी बचा नहीं रखा, लेकिन कहा जाता है कि भोजन में सूअर का मांस भी शामिल था। सूअर का मांस बुद्ध ने कभी नहीं खाया था। अनजाने में खाते ही उन्हें भयंकर यंत्रणादायक रक्तातिसार रोग हो गया और उन्हें शरीर में मर्मांतक पीड़ा होने लगी। उसी अवस्था में उन्होंने कुशीनगर की ओर प्रस्थान किया। थके हारे बुद्ध ने मार्ग में फिर एक आम्रवन में विश्राम किया। उन्होंने आनंद से पासवाली नदी से अपने पीने के लिए पानी लाने को कहा। उस समय उस नदी से होकर पांच सौ गाड़ियां गुजरीं थीं। उनके चक्कों से पानी गंदा हो गया था। आनंद ने उनसे कहा कि उस गंदी नदी की अपेक्षा यदि वह ककुत्या नदी से पानी ले आये तो कैसा रहे, पर बुद्ध ने उसी छिछली नदी से पानी लाने का आदेश दिया। आनंद जब दोबारा उस नदी में पहुंचे तो देखा कि नदी का गंदला पानी स्वच्छ और निर्मल हो गया है। संभवतः यह बुद्ध के प्रभाव के कारण ही हुआ था।

परिनिर्माण का पूर्वाभ्यास

महात्मा बुद्ध ने वहीं विश्राम करते हुए अपने परम शिष्य आनंद को एक दुःखांत सूचना दी। उन्होंने बताया कि रात के पिछले पहर कुशीनारा शालवन में उनका परिनिर्वाण होगा।

भगवान बुद्ध ने आनंद से कहा कि क्योंकि वे चुंद कुम्मारपुत्र के भोजन ग्रहण करने से अस्वस्थ हुए हैं, तो संभव है लोग चुंद को उनके परिनिर्वाण के लिए दोषी ठहरायें। अतः उन्होंने आनंद के द्वारा चुंद कुम्मारपुत्र को कहलवाया कि उसके भोजन से ही उन्हें परिनिर्वाण का लाभ हुआ है, इसलिए वे इसके लिए दोषी नहीं हैं।

इसके पश्चात बुद्ध ने हिरण्यवती नदी पार की। नदी पार करते ही वे कुशीनगर के शालवन में पहुंचे और वहीं लेट गये। उन्होंने आनंद से कहा, "शिष्य, मेरा जन्मस्थान लुंबिनी है। बोधि प्राप्त

मैंने बोधगया में किया। धर्मचक्र प्रवर्तन का स्थान सारनाथ है। अब मैं कुशीनगर में अपना जीवन समाप्त कर निर्वाण ले रहा हूं। ये स्थान मेरे श्रद्धालु भक्तों के प्रेरणा केंद्र होंगे।"

बुद्ध को महानिर्वाण प्राप्त करते हुए देखकर आयुष्मान आनंद को अत्यंत दु:ख पहुंचा। उन्हें दु:खी देखकर महात्मा बुद्ध ने शिष्य को पास बुलाकर कहा, "आनंद, शोक रहित होओ। मैं तुम्हें पहले ही बता चुका हूं कि सभी प्रियजन से एक न एक दिन वियोग अवश्यंभावी है। यह चराचर जगत नाशवान है। तूने कायिक, वाचिक और मानसिक कर्मों से तथागत की पूर्ण सेवा की है, इसलिए तुम शीघ्र ही सत्कर्मों के परिणाम स्वरूप –निर्वाण साधना में लगकर बंधन मुक्त होगे।

बुद्ध का अंतिम उपदेश

इसके पश्चात बुद्ध ने आनंद को अपना अंतिम उपदेश दिया। उन्होंने कहा, "हे आनंद मेरे परिनिर्वाण के अनंतर तुम यह न समझना कि अब हमारा पथ-प्रदर्शक नहीं है। मैंने जो धर्म और विनय के उपदेश दिये हैं, मेरे महानिर्वाण के बाद वे ही तुम्हारे शास्ता होंगे। समय और इच्छा-अनुसार उनमें परिवर्तन भी संभव है, क्योंकि मैंने हमेशा विकास का मार्ग अपनाया है।"

महात्मा बुद्ध के परिनिर्वाण के समय भीषण लोमहर्षक महाभूचाल हुआ तथा देव-दुंदुभियां बजीं। कुछ भिक्षु जिनकी साधना में कमी थी, क्रंदन कर रहे थे। कुछ जमीन पर लोट-लोटकर चीख रहे थे। उनमें से कुछ भिक्षु जो वीतराग थे अपने दु:ख को चुपचाप सहन कर रहे थे और इसी बात पर संतोष कर रहे थे कि यह संसार अनित्य है, नाशवान है, अमर तो केवल आत्मा है। बुद्ध के महा-परिनिर्वाण की सूचना तत्काल सर्वत्र फैल गयी। कुशीनारा के मल्ल गंध, वाद्य तथा पांच सहस्त्र जोड़े वस्त्र लेकर कुशीनारा के शालवन में पहुंचे जहां बुद्ध का पार्थिव शरीर रखा था। उन्होंने भगवान बुद्ध के शरीर को पांच-सौ जोड़ों में लपेटकर गंध-काष्ठ की चिता निर्मित की और चिता पर रखा। शिष्य आनंद ने अग्नि प्रज्ज्वलित की जब चिता पूर्णरूपेण जल चुकी तो आकाश में मेघों ने गरज-बरसकर चित को शांत किया।

इसके पश्चात राजा अजातशत्रु, वैशाली के लिच्छवी, कपिलवस्तु के शाक्य, अल्लकप्प्य के बुलिय, रामग्राम के कोलिय वेट्ठ द्वीप के ब्राह्मण तथा पावा के मल्लों ने बुद्ध के अवशेषों को प्राप्त करने के लिए प्रयत्न किये। द्रोण नाम के एक ब्राह्मण ने उन अवशेषों को आठ भागों में विभक्त कर उन सबको एक-एक भाग दे दिया। पिप्पली वन के मौर्य भी अवशेष लेने आये और वेट्ठ द्वीप के ब्राह्मण ने भी अवशेष का एक हिस्सा लिया और एक स्तूप बनवाकर उन्हें सुरक्षित किया। ●

महापुरुषों का जीवन कभी सपाट रास्ते की तरह सीधा नहीं रहा। अपना मार्ग प्रशस्त करने के लिए उन्हें हमेशा संघर्ष करना पड़ा है। संघर्ष की यातनाओं में उन्होंने अपने 'स्व' का होम किया है और वृहत्तर सामाजिक कल्याण के चेतना-प्रतीक बने हैं। जो अपने निजी स्वार्थों को छोड़कर समाज और देश तथा मानवता के कल्याण के लिए काम करता है, वही पूजा जाता है। ऐसे व्यक्ति कभी मरते नहीं, उन्हें न समय मिटा सकता, न शस्त्र मार सकते और न अग्नि उनका होम कर सकती है। वे विश्व का सारा विष आत्मसात कर मानवता को नये पवित्र परिधान दे जाते हैं। अपने लिए कौन नहीं जीता, अमर वही होता है जो दूसरों के लिए जीता है। बुद्ध एक सामान्य राज-परिवार में उत्पन्न होकर भी दीन-दलित और दर्द-पीड़ित जनता के अगुआ बने। उन्होंने भारत में ही नहीं, भारत से अधिक शक्तिशाली और विशाल देशों में अपने कार्यों और उपदेशों को स्वीकार कराया है। आज महात्मा बुद्ध अपने जीवनकाल से भी अधिक जीवित हैं और भारत की सांस्कृतिक धारा को पवित्र गंगा की तरह समूचे दक्षिण-पूर्व एशिया, चीन और जापान तक पहुंचाकर विश्व-विजेता सिद्ध हुए हैं।

छाया : प्रेम कपूर

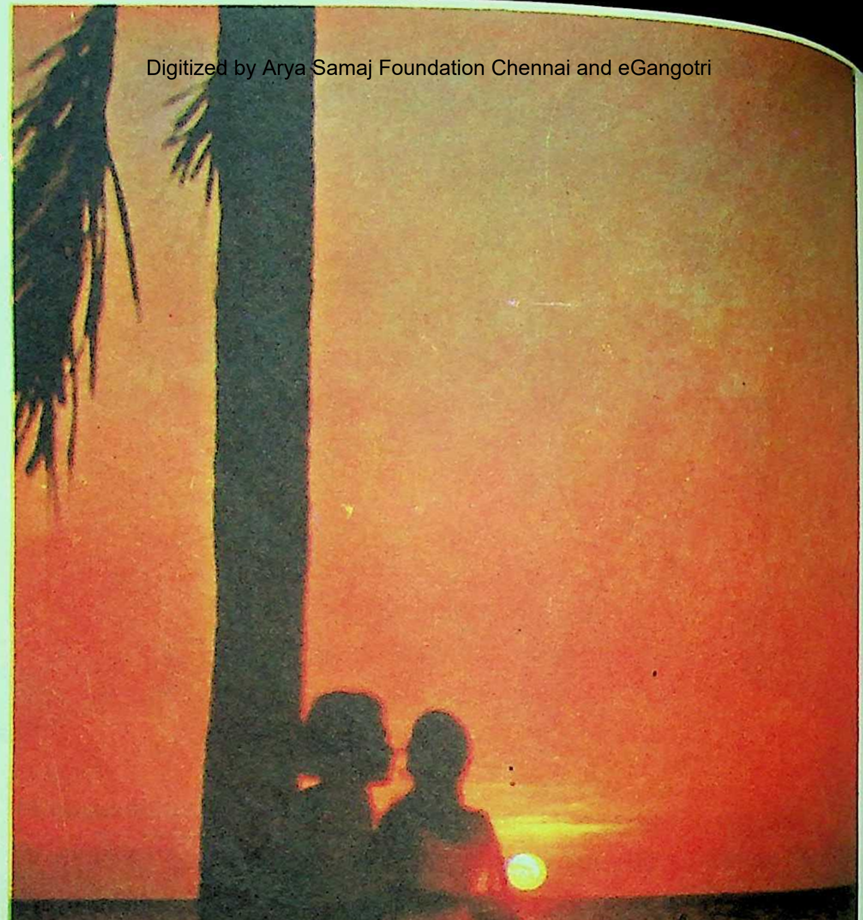

छाया : प्रेम कपूर

यह उनके जीवन की अंतिम शाम थी

• डॉ. देशबन्धु बिष्ट

(उपमहानिदेशक भारतीय स्वास्थ्य-सेवाएं)

उन दिनों मैं एक नौजवान हृदय रोग-विशेषज्ञ डॉक्टर था और तब दिल में एक ही अरमान हर पल मचलता रहता था कि चाहे जैसे भी हो हर व्यक्ति को चंगा करना है। उसे किसी भी तरह मौत के मुंह से खींच लाना है।

एक दिन मुझे एक ऐसे वृद्ध प्रोफेसर के इलाज के लिए बुलाया गया, जिनका मस्तिष्क तो सक्रिय था किंतु हृदय की गति रुक गयी थी। वे प्रोफेसर रक्त के कैंसर के शिकार थे। मैंने पूरी कोशिश की और उन्हें मौत के मुंह से खींच लिया, लेकिन होश संभालते ही वे फूट-फूटकर रोने लगे। उन्होंने कहा, "डॉक्टर, तुम जानते हो कि मैं ब्लड कैंसर का मरीज हूं, बचूंगा नहीं। मैं भी इस तथ्य को जानता हूं। पर मैं इससे भयभीत नहीं हूं। मैं जानता हूं कि मैंने ईमानदारी का जीवन जिया है। मैं एक ईमानदार शिक्षक, ईमानदार पति, ईमानदार पिता रहा। मैं अपने जीवन से, उसकी उपलब्धियों से पूरी तरह संतुष्ट हूं। बेटों को पढ़ा-लिखाकर उनकी शादी करवा दी तथा सभी अपने पैरों पर खड़े आराम की जिंदगी बसर कर रहे हैं। अतः अब मैं और जीना नहीं चाहता। बेहोशी की स्थिति में बहुत चैन से था कि कैंसर की पीड़ा कभी अनुभव नहीं करनी पड़ेगी, क्योंकि मृत्यु के बाद व्यक्ति सुख-दुख के अनुभव से परे हो जाता है। अब होश में आने के बाद पुनः बेहोश हो जाने तक की यह पीड़ा फिर भुगतनी पडेगी। अतः अब जब दुबारा बेहोश हो जाऊं तो मुझे होश में नहीं लाइएगा।"

सुख दुःख के अनुभव

मैं हतप्रभ-सा उनका चेहरा देखता रह गया। क्या ऐसा भी होता है कि कोई स्वयं मृत्यु का वरण करना चाहे। मैंने बहुत सोचा-विचारा और जब अगली बार बेहोश हुए तब मैंने उनकी इच्छा पूरी होने दी।

इस घटना ने मेरी आंखें खोल दीं और मैं मुत्यु को करीब से समझने की कोशिश करने लगा।

मृत्यु : एक लंबी प्रक्रिया

दरअसल मृत्यु कोई अचानक घटित होनेवाली घटना नहीं बल्कि एक क्रमिक-प्रक्रिया है, जो जन्म के साथ ही शुरू हो जाती है। कोई भी वस्तु चाहे वह जड़ हो या चेतन, जन्म से लेकर समाप्त होने तक निरंतर क्षयग्रस्त होती चलती है और अंततोगत्वा एक ऐसे बिंदु पर पहुंच जाती है, जिसे हम मृत्यु की संज्ञा देते हैं। वैसे मेरे विचार में मृत्यु से बेहतर नाम 'देहांत' है। शरीर के विभिन्न अवयवों के ढेर-सारे 'सेल' होते हैं और जब कभी कोई 'सेल' या कोष मर जाता है तब अवयव उसे निकाल फेंकता है। एक तरफ जहां शारीरिक संचलन क्रिया से हमारे नये कोषों की उत्पत्ति होती है वहीं दूसरी ओर निकाले गये कोष की खपत अन्य अवयवों में हो जाती है। लेकिन जब कोष की मृत्यु का पलड़ा भारी होता है तब अवयव मर जाता है। हम यह समझते हैं कि जो व्यक्ति बहरा हो गया, उसके ज्ञान-तंतुओं की मृत्यु हो गयी। इसी तरह से किसी भी अवयव विशेष की मृत्यु के कारण ही हमारे शरीर का उससे संबंधित अंग प्रभावित होता है। धीरे-धीरे एक ऐसी स्थिति आती है, जहां व्युत्पत्ति की क्षमता चुक जाती है और जीवन-दायिनी शक्तियों पर मुत्युदायिनी शक्तियां हावी हो जाती हैं। दूसरे शब्दों में कुछ अवयवों की मुत्यु हो जाना ही देहांत कहलाता है।

मृत्यु कब होती है

वैज्ञानिकों द्वारा इस क्षेत्र में किये गये सर्वेक्षणों के आधार पर यह माना गया है कि किसी भी व्यक्ति की मृत्यु तब मान ली जानी चाहिए जब उसके मस्तिष्क की संचालन-क्रिया रुक जाए। कारण, हृदय की संचालन-क्रिया तो दुबारा चालू की जा सकती है लेकिन यदि मस्तिष्क की संचालन-क्रिया रुकी हुई हो तो व्यक्ति मृत्यु-सदृश ही है। कानून की दृष्टि से भी कई देशों नें मुत्यु के इस मानदंड को वैध घोषित किया है। इसके पीछे यही कारण है कि मस्तिष्क की गति के रुकने के साथ ही व्यक्ति और व्यक्तित्त्व में एक स्पष्ट विभाजन हो जाता है। मस्तिष्क की संचालन-क्रिया के साथ ही मनुष्य का व्यक्तित्त्व बदलता रहता है और फेफड़े, गुरदे आदि के सक्रिय रहते हुए भी 'इलेक्ट्रिकल इंपलसेज' की समाप्ति के साथ ही मुत्यु हो जाती है।

मृत्यु एक : दृष्टि अनेक

मृत्यु की सर्वमान्य परिभाषा क्या हो

जीवित रहना बोझ नहीं

सकती है, कहना कठिन है। आम आदमी के लिए दिल की धड़कन बंद हो जाना ही मृत्यु है। पर कभी-कभी व्यक्ति मर जाता है और उसका हृदय किसी दूसरे व्यक्ति को नया जीवन दे देता है। तो क्या वह मृत व्यक्ति, जिसका हृदय कार्यरत है, जीवित माना जाएगा। नहीं! चिकित्सा-शास्त्री मस्तिष्क की क्रिया बंद होने पर ही मृत्यु मानते हैं।

एक अर्थशास्त्री मृत्यु को उपभोक्ता और उत्पादक की कसौटी पर कसता है। यदि आप दोनों नहीं हैं तो अर्थशास्त्र की दृष्टि से आप मृत-सदृश हैं। जब व्यक्ति न उपभोक्ता होता है और न उत्पादक सिर्फ समाज के खर्च पर जीवित रहता है तब वह 'बोझ' माना जाता है।

समाजशास्त्री, धर्मशास्त्री की दृष्टि से भी मृत्यु के भिन्न-भिन्न अर्थ होते हैं। कुछ लोग अपनी रुचि के अनुसार जीवन न जी पाने को ही अपनी मृत्यु मान लेते हैं और खुदकशी कर लेते हैं। मेरे एक परिचित आजाद हिंद फौज में थे। जब वे तपेदिक के शिकार हो गये तब उन्हें एक-एक पल जीना मृत्यु तुल्य हो गया और एक दिन उन्होंने ब्लेड से गले की नस काट कर आत्महत्या कर ली।

इसी तरह जब व्यक्ति को लगता है कि उसके सांस्कृतिक मूल्यों और विश्वासों का ह्रास हो रहा है, तब मरना पसंद करता है। जैसे प्रसिद्ध जापानी लेखक मिशीमा ने आत्महत्या कर ली थी। हमारे यहां भी लोग एक बिंदु पर पहुंचकर आत्महत्या करने का निर्णय कर लेते थे। हमारे यहां तो स्वेच्छया प्राण त्यागने की शास्त्र सम्मत विधियों का भी उल्लेख है। जब आदमी अपनी इच्छा से प्राण त्याग करता था।

मैं अभी नहीं मरूंगा

इसी संदर्भ में मुझे एक प्रेरक घटना याद आती है। गुरदे के एक मरीज की अत्यधिक दयनीय स्थिति हो गयी थी। जब उसकी हालत बहुत ज्यादा खराब हो गयी और बचने के कोई आसार नहीं रहे तो मैंने अपने सहायक को मरसलीन की सुई लगाने को कहा और अस्पताल से घर लौट आया। इत्तफाक से अगले

दिन छुट्टी थी। तीसरे दिन जब मैं अस्पताल पहुंचा तो उसका बिस्तर खाली था और वहां धुली-धुलाई सफेद चादर बिछी थी। मैंने अपने सहायक से पूछा कि उसकी मृत्यु कब हुई तो उसने चुपचाप सिर झुका दिया। नर्स से पूछा तो उसने भी मौन साध लिया। मेरे दुवारा कड़ककर पूछने पर एक जोरदार ठहाका मेरे कानों में गूंज उठा और मेरा ध्यान पार्टीशन से घिरे एक कोने की ओर गया। मैंने पास जाकर देखा तो उसी मरीज को आरामकुरसी पर बैठा पाया। मुझे देखते ही उसने हंसकर कहा, "डॉक्टर साहब! आप समझते थे कि मैं निश्चय ही मर जाऊंगा, है ना! इसीलिए यह मजाक किया मैंने। लेकिन डॉक्टर साहब, अभी मैं मरूंगा नहीं। मैं जिंदा रहना चाहता हूं। मैंने पुलिस की नौकरी ताउम्र की है। तमाम लांछनाओं के बावजूद कि पुलिसवाले बेईमान होते हैं, मैंने आज तक ईमानदारी का दामन नहीं छोड़ा। मुझे अपने बेटे को पैरों पर खड़ा करना है। उसकी शादी भी करनी है। अतः मैं यह सब काम निबटा चुकने के बाद ही मरूंगा।"

मैं अवाक खड़ा उसे देखता रह गया। ठीक तीन महीने बाद उसने अपने बेटे की शादी की और अगले दिन ही उसकी मृत्यु हो गयी। संभवतः अपने ऐसे ही दृढ़ मनोबल के कारण शरशैया पर पड़े भीष्म पितामह ने सूर्य के उत्तरायण होने पर अपनी इच्छानुसार ही प्राण त्यागे थे।

व्यक्तित्व ह्रास या मृत्यु की क्रमिक-प्रक्रिया को सामाजिक संदर्भों में देखें तो पाते हैं कि व्यक्ति का सर्वोत्तम व्यक्तित्व बाल्यावस्था का है, जब हम बच्चे में भगवान की कल्पना करते है। यह बच्चा जैसे-जैसे बड़ा होता है, व्यक्तित्व-ह्रास का शिकार होने लगता हैं। जैसे बीज से पेड़ और पुनः पेड़ से बीज की पुनरावृत्ति एक क्रमिक प्रक्रिया है, व्यक्ति भी मौत का शिकार हो, ब्रह्मांड का एक पिंड बनकर विलीन हो जाता है। हमारे उपनिषदों में भी कहा गया है कि जो पिंड में है, वह ब्रह्मांड में है। जिस दिन हम पिंड को समझ जाएंगे, उस दिन ब्रह्मांड को जान जाएंगे।

क्या मृत्यु का पूर्वाभास होता है? अकसर कहा जाता है कि कुछ लोगों को मृत्यु का पूर्वाभास हो जाता है और वे बिना किसी भय के सहजभाव से मृत्यु को स्वीकारते हैं। पांडीचेरी में नियुक्ति के दौरान मेरा श्री अरविंद आश्रम से निकट का संपर्क रहा है। मैंने यह महसूस किया है कि वहां के अधिकांश लोग मृत्यु से नहीं डरते। वे मृत्यु को सहजभाव से स्वीकार करते हैं।

आश्रम में एक नियत दिन फिल्में भी दिखायी जाती हैं जिन्हें अधिकांश आश्रमवासी चाव से देखते हैं। एक बार मेरे एक मित्र जब फिल्म देखने जा रहे थे तो

उनके पिता की मृत्यु हो गयी। मित्र ने कहा, "पिताजी के शव को कमरे में ही रहने दें। फिल्म देख आयें। कल सुबह दाह-संस्कार करेंगे।" उनके लिए मृत्यु कोई दुःखदायी दुर्घटना नहीं थी।

आश्रम में ही मेरे एक और परिचित थे। वे हृदय के रोगी थे। एक रात उन्होंने मुझे भोजन के लिए आमंत्रित किया और बढ़िया सी खीर खिलायी। वे जानते थे कि खीर मेरा प्रिय भोजन है। भोजन के बाद उनसे विदा लेकर में घर लौटा। सुबह मुझे फोन पर सूचना मिली कि उनका देहांत हो गया है। मैं तुरंत उनके घर पहुंचा तो देखा कि दीवान पर जिस करवट अधलेटे थे, उसी अवस्था में उनका देहांत हो गया था। बिस्तर पर एक शिकन न थी अर्थात् मृत्यु की बेला में न वे छटपटाये थे, न कोई हलचल की थी। क्या उन्हें अपनी मृत्यु का पूर्वाभास हो गया था, जो उन्होंने मुझे भोजन के लिए आमंत्रित किया गया था। स्वयं मेरे नानाजी ने अपनी मृत्यु के सात दिन पूर्व कह दिया था कि मेरे जाने का समय आ गया है। जिस किसी को बुलवाना हो बुलवा लो।

पर वास्तविकता यह है कि इस तरह की मृत्यु का कोई पूर्वाभास नहीं होता, लेकिन जिन लोगों को अपनी मृत्यु का पूर्वाभास होता है, वे आमतौर पर मृत्यु के पूर्व कई-कई स्तरों से गुजरते हैं। सबसे पहले तो आदमी का विश्वास होता है कि वह मरेगा नहीं। इसके बाद की स्थिति भय की स्थिति होती है। उसके बाद आदमी चिंताकुल हो उठता है। चिंतित होते ही मृत्यु से एक भय का आभास होने लगता है और तब आखिरी स्थिति हताशा की होती है, जब आदमी अपनी मृत्यु की पूर्वघोषणा कर देता है।

मृत्यु के प्रति व्यक्ति का दृष्टिकोण उसके विश्वासों, संस्कारों, पूर्व अनुभवों और चिंतन प्रक्रिया पर निर्भर करता है। पुलिस इंस्पेक्टर और प्रोफेसर अपने विश्वासों, संस्कारों और अनुभवों के कारण ही मृत्यु से भयभीत नहीं हुए। उन्होंने उसे एक अनिवार्य प्रक्रिया के रूप में लिया जबकि मैंने कुछ लोग ऐसे भी देखे हैं, जो मृत्यु-भय से पागल हो जाते हैं।

मुझे एक वृद्धा स्त्री की याद आती है। बीमारी के दौरान वह बार-बार एक तकिये को अपने से चिपटा लेती। एक दिन जब उसकी मृत्यु हो गयी तो लोगों ने सहज उसके तकिये को फाड़ा तो उन्हें उसमें नोटों की गड्डियां मिलीं। कुछ नोट सही-सलामत थे तो कुछ फटे हुए। इन नोटों को उस वृद्धा ने ही फाड़ा था, यह जानकर कि उसकी मृत्यु सन्निकट है। जैसा कि मैंने पहले लिखा है कि मस्तिष्क क्रिया बंद होने के बाद ही व्यक्ति की वास्तविक मृत्यु होती है। सामान्यतः दिल की गति बंद होने के छह मिनट बाद मस्तिष्क की क्रिया बंद होती है। इस अवधि में व्यक्ति को आमतौर पर मिलते-जुलते अनुभव होते हैं। जैसे इस अवधि में लोग

एक अपूर्व सुख-शांति का अनुभव करते हैं, मानो वे हवा में उड़ते जा रहे हैं। यदि हृदय की गति बंद होने के तुरंत बाद कृत्रिम तरीके से हृदय की गति पुनः शुरू की जा सके तो व्यक्ति बचाया जा सकता है। दूसरे शब्दों में वह मृत्यु के मुख से लौट आता है। मृत्यु के मुख से इसी तरह लौट आये कुछ लोगों से मैंने उनके अनुभव जाने हैं, और उनके अनुभव मेरे अनुभव से मिलते-जुलते हैं क्योंकि मैं भी एक बार 'मृत्यु के मुख से' लौट आया हूं।

हुआ यह कि एक बार में एक बच्चे के गले का ऑपरेशन कर रहा था कि जाने कैसे एक चिहुक के साथ डिप्थीरिया की एक बूंद मेरी दायीं आंख में आ पड़ी। मैंने किसी तरह ऑपरेशन किया और उसके तुरंत बाद आंख में पैंसीलीन ड्राप्स डाले अन्यथा मेरी आंख जाने का खतरा था। पर जब पैंसीलीन ड्राप्स से भी आंख की लाली और सूजन नहीं गयी तब मेरे एक सहयोगी मित्र मुझे अपने घर ले गये और उन्होंने कुरसी पर बैठाकर मुझे पैंनसीलीन की सुई दी। कुछ ही देर बाद मुझे ऐसा लगा कि मैं 'ट्रांस' में पहुंच गया हूं और जोरों का ठहाका लगाने लगा हूं। मुझे वह क्षण अब भी याद है जब उस समय मुझे बहुत अच्छा लगा था। थोड़ी देर बाद मुझे ऐसा लगा कि कोई मेरी छाती पर हथौड़े बरसा रहा है और सिर में तेज दर्द हो रहा है। यह आभास होते ही मैंने अपनी आंखें खोलीं और मैंने आसपास लोगों को वहां खड़े पाया। पूछे जाने पर पता चला कि मैं उन अल्पांश लोगों में से हूं जिन्हें पेनसीलिन माफिक नहीं पड़ती। सुई लगते ही मैं चेतना-शून्य होकर कुरसी से गिर पड़ा था और मेरी हृदय-गति पुनः शुरू हुई तो उसके कारण छाती पर हथौड़े की चोट का अनुभव हुआ। कुरसी से गिरने के कारण मेरे सिर के पिछले हिस्से में गहरी चोट आ गयी थी जिसके परिणामस्वरूप सिर में तेज दर्द था। यदि मेरे मित्र ने समय पर उचित उपचार न किया होता तो बहुत संभव था कि वही शाम मेरे जीवन की अंतिम शाम में बदल जाती।

—१४ सी, फीरोजशाह रोड,
नयी दिल्ली-१

ट्रैफिक बहुत घना था, सिगनल की बत्ती हरी हो गयी। कार चालू नहीं हो रही थी और पीछेवाली कारों के हॉर्न की आवाजें और ऊंची होती गयीं। बेचारा ड्राइवर जितनी कोशिश कर रहा था उतनी ही उसकी परेशानी बढ़ रही थी। तंग आकर वह अपनी कार से उतरा। ऐन पीछेवाली कार के ड्राइवर के पास गया और बोला, "मुझे अफसोस है, मेरी कार चालू नहीं हो रही है। आप मेरी कार चालू करने का प्रयत्न करें, मैं यहां खड़ा होकर आपकी कार का हार्न बजाता हूं।"

भारतीय क्रिकेट
यह समय परीक्षा का है, समीक्षा का नहीं

• योगराज थानी

किसी भी बड़ी प्रतियोगिता के कई पक्ष होते हैं मसलन तैयारी, प्रशिक्षण, चुनाव, जय-पराजय की संभावनाएं। असली परीक्षा और परिणाम निकल जाने के बाद विश्लेषण का जो दौर शुरू होता है वह महीनों चलता रहता है।

भारत-इंग्लैंड टेस्ट शृंखला शुरू होने में अब ज्यादा देर नहीं है लेकिन टीम के चुनाव के तुरंत बाद चर्चा और परिचर्चा का जो दौर शुरू हुआ वह अभी तक समाप्त नहीं हुआ फिर भी वही सवाल और वही जवाब। यानी भारतीय क्रिकेट के कप्तानों का इतनी जल्दी-जल्दी बदला जाना शुभ है या अशुभ? फिर यह भी कि इस बार चयनकर्त्ताओं ने जिस टीम का चुनाव किया है उसे संतुलित कहा जाए या असंतुलित।

खैर, हरएक के अपने-अपने पक्ष और अपने-अपने तर्क हैं। फिर भारतीय जनमानस की भी एक अजीब-सी स्थिति है। उसमें तर्क का भाव कम और करुणा का भाव ज्यादा है। पहले तो लोग यह कहते हैं कि अमुक को कप्तान पद से हटा दिया जाना चाहिए और सचमुच उसे हटा दिया जाता है, तो वे ही लोग उस पर करुणा और दया करने लगते हैं। यानी हमारे यहां वंचित व्यक्ति झटपट बेचारा हो जाता है।

पिछले वर्ष पाकिस्तान का दौरा करनेवाली भारतीय टीम का नेतृत्व बिशन सिंह बेदी ने किया। उसके बाद वेस्ट-इंडीज की टीम ने भारत का दौरा किया और सुनील गावसकर को कप्तान का पद और दायित्व सौंपा गया। अब इंग्लैंड का दौरा करनेवाली भारतीय टीम की कप्तानी एस. वेंकटराघवन को सौंपी गयी है और पिछले दोनों कप्तानों को भी टीम में शामिल कर लिया गया है।

कितनी अजीब-सी बात है जो कल तक वेंकटराघवन को निर्देश देते थे, आज उसके निर्देश का पालन करेंगे।

भारतीय टीम

इस बार टीम में जिन खिलाड़ियों को शामिल किया है उनके नाम इस प्रकार हैं:

एस. वेंकटराघवन (कप्तान) जी. आर. विश्वनाथ (उप-कप्तान), सुनील गावसकर, दिलीप वेंगसरकर, अंशुमन गायकवाड़, चेतन चौहान, बृजेश पटेल, यशपाल शर्मा, यजुवेंद्र सिंह, कपिल देव, करसन घावरी, मोहिंदर अमरनाथ, सुरेंद्र

खन्ना, भरत रेड्डी, बी. एस. चंद्रशेखर, बिशनसिंह बेदी ।

एक बात और, चौहान और चंद्रशेखर जून के अंतिम सप्ताह में टीम में शामिल होंगे । कारण यह कि पहले प्रूडेंशियल कप (विश्व कप) प्रतियोगिता होगी और उसके बाद भारतीय टीम इंग्लैंड में ४ टेस्ट और ८ अन्य साधारण मैच खेलेगी ।

टीम का चुनाव : अपना-अपना दृष्टिकोण

भारतीय टीम का चुनाव हो और उस पर कोई टीका-टिप्पणी न हो, यह कैसे संभव हो सकता है क्योंकि इसके लिए तो साधारण क्रिकेट प्रेमी से लेकर क्रिकेट का पंडित और महापंडित झट से तैयार हो जाता है। यदि बात पहले से शुरू करें तो कह सकते हैं कि गावसकर को कप्तान पद से ही क्यों हटाया गया ? यों तो यह कहानी अपने आप में ही इतनी लंबी है कि पूरा पोथा तैयार किया जा सकता है, लेकिन संक्षेप में इतना ही कह सकते हैं कि यदि गावसकर कैरी पैकर के प्रलोभन में आकर इतने बयान न देते तो शायद कप्तान बने रहते, लेकिन वह तो बोर्ड के अधिकारियों तक से जूझने को तैयार हो गये थे।

हमेशा याद रखिए कि निर्धन धनवान से और दुर्बल बलवान से नहीं लड़ सकता। इसी प्रकार जब-जब भी खिलाड़ियों और अधिकारियों में ठनी है तब-तब नुकसान खिलाड़ियों का ही हुआ है। गावसकर यदि बयानबाजी के अखाड़े में न उतरते तो आज उनकी यह हालत न होती। वेस्टइंडीज के भारत के दौरे के दौरान तो भारतीय क्रिकेट नियंत्रण बोर्ड का ऐसा कोई इरादा नहीं था। यदि होता तो वे उस समय भी वेंकटराघवन को गावसकर का उप-कप्तान बना सकते थे।

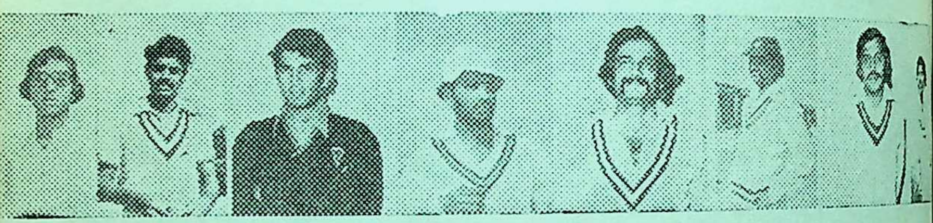

बायें से : अंशुमन गायकवाड़, दिलीप बेंगसरकर, सुनील गावसकर, बिशनसिंह बेदी, बृजेश पटेल, विश्वनाथ, वेंकटराघवन, कपिलदेव,

खैर, इस चुनाव प्रक्रिया पर लोगों की प्रतिक्रिया काफी आलोचनात्मक रही। यहां तक कहा गया कि चयन समिति ने अपनी जिम्मेदारी को ईमानदारी के साथ नहीं निभाया और श्रेष्ठ खिलाड़ियों को चुनने की बजाय समिति के सदस्य क्षेत्रीय सौदेबाजी तक ही सीमिति रहे। वरना सैयद किरमानी और सुरेंद्र अमरनाथ-जैसे अनुभवी खिलाड़ियों को टीम से बाहर

करने का कोई औचित्य समझ में नहीं आता। टीम में जिन दो नये विकेटकीपरों को शामिल किया गया है उन्हें मैचों का अनुभव ही नहीं है। यदि भरत रेड्डी को लेना ही था, तो कम से कम वैस्टइंडीज के विरुद्ध उसे एकाध टेस्ट खिलाकर परखा जा सकता था।

सुरेंद्र खन्ना, चंद्रशेखर, भरत रेड्डी, करसन घावरी, यजुर्वेंद्र सिंह, चेतन चौहान, मोहिंदर अमरनाथ, यशपाल शर्मा

माना कि विशन सिंह बेदी दुनिया के श्रेष्ठ खब्बू स्पिनर हैं लेकिन इन दिनों वह बिलकुल भी फार्म में नहीं हैं। शारीरिक दृष्टि से भी वह पूर्ण स्वस्थ नहीं हैं फिर थोड़ी देर गेंद फेंकने के बाद उनके कंधे में तकलीफ महसूस होने लगती है। इंग्लैंड में १९७१ में भारत को जो ऐतिहासिक विजय प्राप्त हुई थी वह इन्हीं स्पिनरों वेंकट, चंद्रा और बेदी के बदौलत ही हुई, लेकिन आज हमारे स्पिनरों का उतना दबदबा नहीं रहा जितना कि कुछ साल पहले था।

जिन दिनों कपिल देव की चारों ओर जयजयकार हो रही थी उन्हीं दिनों चयन समिति के एक सदस्य ने मुझसे यह कहा था कि चुनाव का काम कोई आसान काम नहीं होता। इसमें हमें दूरदृष्टि से काम लेना पड़ता है। खिलाड़ी को ठीक समय पर टेस्ट टीम में शामिल करना पड़ता है। यदि समय से पहले उसे टीम में शामिल करते हैं तो वह अपना आत्मविश्वास खो बैठता है। यदि देर से शामिल किया जाता है तो वह अपने असली फार्म में नहीं रहता। कुल मिलाकर यह कि वह कपिल देव की सफलता का श्रेय स्वयं प्राप्त करना चाहते थे और जब मैंने उन्हीं से यह पूछ लिया कि आखिर राजेंद्र सिंह 'हंस' पर आपकी कृपादृष्टि कब होगी? मेरे इस सवाल का कोई जवाब उनके पास नहीं था।

आशावादी कप्तान

किसी भी श्रृंखला या प्रतियोगिता शुरू होने से पहले टीम के खिलाड़ी काफी आशावादी दिखायी देते हैं। वेंकट बार-बार यह कहते रहे कि हमारे खिलाड़ियों को प्रूडेंशियल कप (विश्व कप) के सीमित ओवरों के खेल का काफी अभ्यास है

और हमारा प्रदर्शन उत्साहवर्द्धक रहेगा। उन्होंने कहा, "मैं यह दावा तो नहीं करता कि हम जीत ही जाएंगे। हां, पिछली बार की तुलना में इस बार हमारा प्रदर्शन जरूर बेहतर होगा।"

३४ वर्षीय वेंकटराघवन इससे पहले १९७५ में पहली विश्व-कप प्रतियोगिता (प्रूडेंशियल कप) में भी भारतीय टीम का नेतृत्व कर चुके हैं। १९७४-७५ में भारत और वेस्टइडीज के बीच खेले गये दूसरे टेस्ट में भी उन्होंने भारतीय टीम का नेतृत्व किया था। अजीत वाडेकर की कप्तानी में वह उप-कप्तान के रूप में २ बार इंग्लैंड का और १ बार वेस्टइंडीज का दौरा कर चुके हैं। वेंकट अब तक ४३ टेस्टों में ३२.२६ की औसत से १३३ विकेट ले चुके हैं और बल्लेबाजी के रूप में ८० पारियों में खेलकर ६८५ रन बना चुके हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने २६ कैच भी लिये हैं।

पंडितों : क्रिकेट पंडितों की राय

टीम के चुनाव पर भारत के कुछ पुराने क्रिकेट खिलाड़ियों ने भी प्रतिकूल और तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की। अधिकांश ने यही कहा कि हमारे पास तीन तेज गेंद फेकनेवाले हैं और तीन ही स्पिनर हैं, लेकिन अब स्पिनरों पर भरोसा नहीं किया जा सकता। गेंदबाजी का भार अधिकतर कपिलदेव, घावरी और मोहिंदर पर ही रहेगा। स्पिनरों से अधिक उम्मीद नहीं रखी जा सकती, इससे तो यही अच्छा था कि मदन लाल को टीम में शामिल कर लिया जाता। वह बल्लेबाजी और गेंदबाजी दोनों में अधिक सफल होता।

जहां तक सीमित ओवरों का सवाल है उसमें कम से कम एक तेज गेंदबाज की और जरूरत थी। इसमें क्षेत्ररक्षण करने वाली टीम को ६० ओवर फेकने होते हैं, और उसमें कोई गेंदबाज १२ ओवर से अधिक नहीं फेक सकता। यदि उसमें हम दो स्पिनरों को लगा देंगे तो घाटे में रहेंगे। वर्ल्ड कप में यदि वेंकट और बेदी दोनों ने गेंद फंकी तो हारना निश्चित है।

खैर, अभी से इतना निराश या हताश होने की जरूरत नहीं है। हां, यदि आप भारत–इंग्लैंड श्रृंखला के पुराने इतिहास पर नजर दौड़ाएं, तो आप पायेंगे कि इंग्लैंड को हराना बहुत मुश्किल है। यों तो अब तक दोनों देशों के बीच जितने भी टेस्ट खेले गये हैं, उनमें इंग्लैंड का ही पलड़ा भारी रहा है। यानी कुल मिलाकर ५३ टेस्ट खेले जा चुके हैं और भारत केवल ७ टेस्ट जीत पाया है। इंग्लैंड ने २५ टेस्ट जीते हैं और २१ टेस्ट बराबर रहे हैं।

इंग्लैंड की धरती पर इंग्लैंड को हराने का गौरव भारत को २४ अगस्त, १९७१ को प्राप्त हुआ। ओवल में खेले गये भारत-इंग्लैंड टेस्ट श्रृंखला के तीसरे और आखिरी टेस्ट में भारत ने इंग्लैंड को ४

भारत-इंगलैंड टैस्ट एक नजर में

वर्ष	भारतीय कप्तान	इंग्लैंड कप्तान	कुल टैस्ट	भारत जीता	इंग्लैंड जीता	अनिर्णीत
१९३२	सी. के. नायडू	डी. आर जारडन	१	०	१	०
१९३३–३४	सी. के. नायडू	डी. आर. जारडन	३	०	२	१
१९३६	महाराजकुमार विजयनगरम	जी. एलन	३	०	२	१
१९४६	नवाब आफ पटौदी (सी.)	डब्ल्यू. हैमण्ड	३	०	१	२
१९५१–५२	विजय हजारे	नाइगल हावर्ड तथा डोनाल्डकार	५	१	१	३
१९५२	विजय हजारे	लेन हटन	४	०	३	१
१९५९	दत्तू गायकवाड़	कालिन काउड्रे	५	०	५	०
१९६१–६२	नारी कांट्रेक्टर	टेड डेक्सटर	५	२	०	३
१९६४	मंसूर अली खां पटौदी	एम. जे. के. स्मिथ	५	०	०	५
१९६७	मंसूर अली खां पटौदी	डी. बी. क्लोज	३	०	३	०
१९७१	अजीत वाडेकर	रे इलिंगवर्थ	३	१	०	२
१९७२–७३	अजीत वाडेकर	टोनी लुइस	५	२	१	२
१९७४–७५	अजीत वाडेकर	माइक डेनेस	३	०	३	०
१९७६–७७	बिशनसिंह बेदी	टोनी ग्रेग	५	१	३	१
		कुल–	५३	७	२५	२१

विकेट से हराकर १–० से श्रृंखला जीती थी। पहले दोनों टेस्ट मैचों में हार-जीत का फैसला नहीं हो सका था। दूसरे शब्दों में ३९ साल बाद इंग्लैंड को इंग्लैंड की धरती पर हराने का भारतीय क्रिकेट-प्रेमियों का स्वप्न साकार हुआ।

यों भी क्रिकेट के खेल में भारत और इंग्लैंड का रिश्ता बहुत पुराना है। क्योंकि भारत ने टेस्ट मैचों की शुरूआत भी इंग्लैंड से ही की। २५ जून, १९३२ को पहली बार भारतीय टीम ने इंग्लैंड का दौरा किया था।

तथ्य और आंकड़े

कहते हैं कि क्रिकेट आंकड़ों का खेल है। आये दिन नये रिकार्ड बनते हैं। दूसरे शब्दों में यह कि इसके आंकड़ों को पुराने होते

दर नहीं लगती। १९७१ में भारत को ऐतिहासिक विजय प्राप्त हुई और १९७४ में भारत की पूरी टीम एक पारी में ४२ रनों पर आउट हो गयी। याद रहे कि १९७४ में लार्डस में खेले गये टेस्ट में भारतीय टीम इतने कम रनों पर आउट हो गयी थी। लगते हाथ यह भी जान लें कि भारत के विरुद्ध इंग्लैंड का न्यूनतम स्कोर १०१ रन का है जो उसने १९७१ में ओवल में बनाया था। ठीक उसी टेस्ट में जिसमें भारत को विजय प्राप्त हुई थी।

क्रिकेट के खेल में भविष्यवाणी नहीं की जा सकती यह बात हर कोई जानता है, लेकिन इस पर भी हर कोई झट से भविष्यवाणी करने को तैयार हो जाता है। इस खेल में तो महापंडितों की भविष्यवाणियां भी गलत साबित हो जाती हैं फिर मैंने तो अभी तक खिलाड़ियों की कुंडली भी ठीक तरह से नहीं देखी। कौन जाने इस समय उनकी मनःस्थिति क्या है? सब कुछ टीम भावना और खिलाड़ियों के सहयोग पर निर्भर करता है। वेंकटराघवन को 'गावसकर एंड कंपनी' और 'बेदी एंड कंपनी' का यदि पूरा सहयोग मिल गया तब तो कुछ उम्मीद की जा सकती है वरना नहीं। वस्तुस्थिति की व्याख्या करने पर तो यही कहा जा सकता है कि बहुत ज्यादा आशावान होने की जरूरत नहीं है।

—दिनमान, १० दरियागंज, दिल्ली

वचन-वीथी

कोई क्षण ऐसा नहीं जो कर्त्तव्य से रिक्त हो।

—सिसरो

यदि तुम गंदगी और विश्वभर के पापों से बचना चाहो तो खूब दृढ़तापूर्वक कार्य करो, चाहे तुम्हारा कार्य अस्तबल साफ करना ही क्यों न हो?

—एच. डी. थोरो

कलाकार बनने के लिए प्रमुख शर्त है मानव-मात्र के प्रति प्रेम, न कि कला-प्रेम।

—टॉलस्टाय

कवि हमें हिला देता है और पिघला देता है, फिर भी हम नहीं जानते कि कहां से और क्यों कर?

—शैली

मेरे नेत्र रिवाज, आदर्श और स्वार्थ से अंधे हो गये थे।

—जॉन न्यूटन

रात-रातभर प्रार्थना करने की अपेक्षा एक घंटा भी दूसरों को ज्ञान देने में खर्च करना अधिक अच्छा है।

—हजरत मोहम्मद

संसार महापुरुषों की प्रयोगशाला है।

—हरिभाऊ उपाध्याय

आयुर्वेद में रक्तचाप का उपचार

● कविराज वेदव्रत शर्मा

'ब्लड प्रेशर' का अर्थ रक्त का दवाव या रक्तचाप है। इसी को रक्त भार, रक्तसम्मर्द, रक्तनिपीड भी कहा जाता है। आयुर्वेद में इसे धमनीकाठिन्य, सिरागत वायु, स्नायुगत वायु, पित्तावृत्त वायु, कफावृत वायु, वातरक्त, रक्तगत वात, रक्तपित्त, हृत्क्रियाव्याधि, मद, मूर्च्छा, संन्यास आदि अनेक रोगों के अंतर्गत मानते हैं, परंतु आयुर्वेद में इसे स्वतंत्र व्याधि न मानकर किसी व्याधि का लक्षण या उपद्रव माना जाता है। वैसे आयुर्वेद के अनुसार यह वातव्याधि का लक्षण है।

वस्तुतः ब्लड-प्रेशर या रक्तचाप कोई रोग नहीं है। हर व्यक्ति को हर समय रक्तचाप रहता है, लेकिन जब यह रक्तचाप आवश्यकता से अधिक बढ़ या घट जाता है, तभी चिंता का विषय बनता है।

हमारा हृदय एक रक्तशोधनशाला है और वही शरीर के सब अंगों को शुद्ध रक्त की आपूर्ति करता है। हृदय में संकोचन और प्रसारण की एक स्वाभाविक शक्ति है। हृदय के संकोचन और प्रसरण से ही रक्त धमनियों में प्रवाहित होता है। जब रक्तचाप स्वाभाविक से अधिक हो जाता है तो उसे उच्च रक्तचाप या हाई ब्लड-प्रेशर और जब कम हो जाता है तो न्यून रक्तचाप या लो ब्लड-प्रेशर कहते हैं।

रक्तचाप क्यों घटता बढ़ता है ?

रक्तचाप बढ़ने का मुख्य कारण धमनियों की दीवारों का मोटा और कड़ा हो जाना है। दीवारों के मोटे हो जाने से रक्त का मार्ग तंग हो जाता है और उसे आगे ठेलने के लिए हृदय को बहुत जोर लगाना पड़ता है। हृदय को रक्त के ठेलने के लिए सामान्य से जितना अधिक जोर लगाना पड़ता है, उतना ही रक्तचाप बढ़ता है। धमनियों के मोटे और कठोर होने तथा रक्त का मार्ग तंग और अवरुद्ध होने का एक प्रमुख कारण वात-प्रकोप है। जब प्रकुपित वायु कफ के साथ अपनी प्रवृद्ध गति से धमनी में संचरण करती है तो कफ आदि के अंश वहां जमा हो जाते हैं, जिससे रक्त का मार्ग अवरुद्ध हो जाता है और धमनियां कठोर हो जाती हैं।

वृद्धावस्था में धमनियों का लचीलापन घट जाता है। इस लिए हृदय संकोच के समय वे फैल नहीं पातीं, जिससे रक्त का दबाव बढ़ जाता है।

सुषुम्ना नाड़ीसूत्र धमनियों को संकुचित और हृदय को उत्तेजित रखते हैं। इसलिए आवेशप्रधान और विक्षोभशील प्रकृतिवाले व्यक्तियों में स्वभावत: रक्तचाप बढ़ने की प्रवृत्ति होती है। इसी प्रकार जो व्यक्ति वातप्रकृति के होते हैं और व्यायाम नहीं करते, उनका भी रक्तचाप बढ़ा हुआ रहता है।

वृक्कों को रक्त कम मिले या उपवृक्क ग्रंथि में कैंसर, अर्बुद या आघात हो, तो शरीर में लवण और जल अधिक रुक जाते हैं, जिससे धमनियां संकुचित हो जाती हैं और रक्तचाप बढ़ जाता है।

स्त्रियों में जब मासिक धर्म बंद होने को होता है तो धमनियां संकुचित हो जाती हैं और रक्तचाप बढ़ा देती हैं।

मधुमेह, मेदोवृद्धि, उपदंश, गठिया, वृक्करोग, दंतपूय आदि रोगों से, औषधियों के विषैले प्रभाव से, पीयूष (पिटुटरी) ग्रंथि की प्रबलता से, चुल्लिका (थाइरोइड) ग्रंथि की अतिक्रियाशीलता या निष्क्रियता से, रक्ताधिक्य से, तंबाकू, मद्य, चाय, काफी आदि पदार्थों के अतिमात्रा में चिरकाल तक सेवन करने से, मेदोवृद्धि से, आरामतलबी से और चिंता एवं विषाद से भी रक्तवाहिनियां संकु-

रक्तचाप की सरल चिकित्सा :

शवासन योग का सर्वोत्तम आसन है जिसके नित्य प्रति के अभ्यास से, बिना किसी प्रकार की दवाई का उपयोग किये, उच्च रक्त-चाप का सफल उपचार किया जा सकता है। यदि शवासन के साथ दवाई का उपयोग करना भी पड़ता है तो उसके उपयोग की मात्रा अवश्य ही घट जाती है।

मैंने अपने क्लीनिक पर दिसंबर, १९७७ से उच्च रक्त-चाप के बीस रोगियों को लेकर शवासन का परीक्षण किया। इन बीस रोगियों में से तेरह पुरुष व सात महिलाएं थीं। जिनमें से दो की उम्र २० से ३० वर्ष के बीच, तीन की उम्र ३० से ४०, पांच की ४० से ५०, और दस की ५० से ६० वर्ष के बीच थी।

मैंने इन रोगियों को शवासन कराने से एक घंटा पहले हलका नाश्ता करने का निर्देश दिया और आसन के दौरान ढीले कपड़े पहनने के लिए कहा। शवासन कराने के लिए उन्हें फर्श पर रीढ़ की हड्डी के बल लिटाया। टांगें धड़ से ३० डिग्री के कोंण पर और भुजाएं १५ डिग्री के कोंण पर रखायी गयीं। हथेली थोड़ी ढीली, अंदर की तरफ झुकी हुई तथा अंगुलियां अंदर की ओर झुकी हुई। सारा

चित होकर रक्तचाप बढ़ाती हैं।

रक्तचाप के लक्षण

इस रोग में जब तक शरीर के अवयवों को उचित मात्रा में रक्त मिलता रहता है तब तक कोई विशेष लक्षण नहीं होता। यदि हृदय का कार्य ठीक से चल रहा है तो रक्तचाप बढ़ा रहने पर भी मनुष्य स्वस्थ रहता है। रक्तचाप वृद्धि का प्रभाव मस्तिष्क, हृदय और वस्ति पर विशेष पड़ता है। इस रोग में सबसे पहले वृक्क ग्रस्त होते हैं, परंतु लक्षण सबसे पहले मस्तिष्क और हृदय में प्रकट होते हैं। सबसे पहले सिर में चक्कर आते हैं; आंखों के नीचे अंधेरा छा जाता है; बुद्धि, धृति, स्मृति, एकाग्रता नष्ट हो जाती है; घबराहट, व्याकुलता, विक्षोभशीलता बढ़ जाती है; व्यक्ति अकारण या स्वल्प कारण से ही उद्विग्न और अशांत हो जाता है तथा अपने पर नियंत्रण नहीं रख पाता; मन और मस्तिष्क से निर्बल हो जाते हैं और निद्रा नहीं आती। किसी-किसी रोगी को मूर्च्छा भी आ जाती है और वह कुछ देर अचेत गहरी निद्रा में सो जाता है। किसी-किसी को मूर्च्छा के साथ मिरगी के समान आक्षेप भी आते हैं और अचेतावस्था में वह अपने हाथ-पैरों को पटकता

योग का सर्वोच्च आसन शवासन

● डॉ. श्री कृष्णदत्त भारद्वाज

शरीर पूरी तरह ढीला रखा गई। आंखें बंद। पलकें नीचे झुकी हुईं सांस धीरे-धीरे अंदर लेने तथा सांस अंदर लेने के बाद थोड़ी देर उसे रोके रखने के उपरांत बाहर निकालने के लिए कहा गया। सांस लेने-निकालने की इस क्रिया के साथ यह आसन तीस मिनट तक कराया गया। मन और वातावरण को शांत रखा।

यह आसन इन रोगियों को १५ महीने कराया गया। आसन आरंभ करने के दस दिन के अंदर पांच रोगियों (२५ प्रतिशत) को लाभ हुआ, १५ दिन के अंदर चार रोगियों (२० प्रतिशत) को, बीस दिन के अंदर चार रोगियों (२० प्रतिशत) को लाभ हुआ। सात रोगियों (३५ प्रतिशत) को कोई लाभ नहीं हुआ, क्योंकि वे अधिक उम्र के थे साथ ही इस रोग के पुराने रोगी थे। इस प्रकार शवासन से उच्च रक्त-चाप के ६५ प्रतिशत रोगियों को लाभ हुआ।

शवासन से उच्च रक्त-चाप के रोगियों को अधिक से अधिक लाभ के लिए चाहिए कि शवासन सही ढंग से, नित्यप्रति और शांत वातावरण में किया जाए।

रहता है। कुछ लोगों को चक्कर आने के साथ-साथ सिर में दर्द भी रहता है जो विशेष रूप से सिर के पिछले भाग में होता है। सुबह अधिक होता है, फिर धीरे-धीरे कम होता जाता है। कभी-कभी मस्तिष्क की धमनी फट जाने से रक्तस्राव होकर मूर्च्छा और पक्षाघात के उपद्रव हो जाते हैं और अंत में मृत्यु भी हो जाती है।

इस रोग के कारण हृदय कमजोर हो जाने से उसकी धड़कन बढ़ जाती है और सांस लेने में कष्ट होता है। थोड़ा-सा परिश्रम करते ही दम फूलने लगता है और सांस घुटने लगती है। फेंफड़े सूज जाने से रात में श्वास-कष्ट अधिक होता है। हृदय में मीठा-मीठा दर्द होने लगता है। हृदय की कमजोरी अत्याधिक बढ़ जाने से वह काम करना बंद कर देता है, जिससे मृत्यु हो जाती है।

वृक्कों की धमनियों के कठोर हो जाने से उनकी मूत्र को गाढ़ा करने की शक्ति घट जाती है, जिससे बार-बार मूत्र त्याग की इच्छा होती है। मूत्र की मात्रा बढ़ जाने से प्यास भी अधिक लगती है। मूत्र में ओजधातू (अल्ब्युमिन) जाने लगती है और कभी-कभी रक्त भी निकलता है, परंतु कभी-कभी जब वृक्क क्षतिग्रस्त होकर काम करना बंद कर देते हैं तो मूत्र की मात्रा घट जाती है। रोगी का मुंह पीला और फीका पड़ने लगता है और दुर्बलता बढ़ जाती है।

रक्तचाप की वृद्धि से आंख भी विशेष प्रभावित होती है। आंख की धमनियों के कठोर और संकुचित हो जाने से दृष्टि मंद हो जाती है।

इसके अलावा, इस रोग से कानों में कर्णघोष होने लगता है; जिह्वा की बोलने की शक्ति नष्ट हो जाती है; हाथ-पैर और नाखून सूखने लगते हैं, त्वचा में झुर्रियां पड़ जाती हैं; जंघा में उद्वेष्टन की पीड़ा होती है; आमाशय में अग्निमांद्य से अजीर्ण और अरुचि रहती है; वमन होता है या वमन की इच्छा होती है; रक्तवमन भी होता है; आंतों, प्लीहा और पित्ताशय में वेदना तथा पसलियों में शूल पैदा हो जाता है।

चिकित्सा

यदि रक्तचाप अधिक हो, पर रोगी को कोई कष्ट न हो, तो चिकित्सा की कोई आवश्यकता नहीं। यदि मस्तिष्क, हृदय या नेत्रसंबंधी कोई उपद्रव प्रकट हो जाय तो उसकी उपेक्षा कभी नहीं करनी चाहिए।

अधिक रक्तचापवाले रोगी को न तो ऐसे वातावरण में रहना चाहिए और न ऐसा वातावरण पैदा ही करना चाहिए जिससे काम, क्रोध, क्षोभ या आवेश की सृष्टि होती हो। उसे बातचीत और व्यवहार में नर्मी लानी चाहिए और जोश में न आकर सहनशीलता से काम लेना चाहिए। उसे अधिक मानसिक श्रम नहीं करना चाहिए। उसे शोक और चिंता बिलकुल नहीं करनी चाहिए; यहां

तक कि इस बात की भी चिंता नहीं करनी चाहिए कि 'मुझे रक्तचाप का रोग है,' क्योंकि रोग प्रारंभ होने के बाद भी वह दस पंद्रह वर्ष तक ठीक रह सकता है। हृदय और वृक्कों की निर्वलता को दूर करने के लिए यह आवश्यक है कि शारीरिक परिश्रम कम करें और हल्का भोजन थोड़ी मात्रा में लें। भोजन में प्रोटीन और सोडियम की मात्रा कम होनी चाहिए। चावल, दूध, केला, सेव, अंगूर और संतरा खाने से विशेष लाभ होता है। नमक बहुत कम खाना चाहिए पर पानी खूब पीना चाहिए। सप्ताह में कम से कम एक दिन दलिया या खिचड़ी लेनी चाहिए। प्रति दिन खुली हवा में घूमना, सरदी से बचना, गरम जल से स्नान, रात में कम से कम एक घंटा और दिन में एक घंटा अवश्य सोना चाहिए। नशीली वस्तुओं का सेवन नहीं करना चाहिए, चाय-काफी कम पीनी चाहिए, वनस्पति घी का उपयोग भी नहीं करना चाहिए; और यदि शरीर स्थूल हो तो वजन कम करने की कोशिश करनी चाहिए।

बढ़े हुए रक्तचाप की सबसे उत्तम औषधि सर्पगंधा है। वैद्य और डॉक्टर दोनों ही इसका प्रयोग करते हैं। यह अर्क गुलाब या पानी के साथ घोटकर दी जाती है। रस-सिंदूर या मकरध्वज के साथ मिलाकर भी दी जाती है। इसके सेवन से रक्तचाप कम हो जाता है और हृदय तथा मस्तिष्क को बल मिलता है।

रक्तचाप कम करनेवाली कुछ अन्य अनुभूत औषधियां ये हैं—शंखपुष्पी, जटामांसी, त्रिफला, कृष्ण चतुर्मुख रस, बृहत् वार्तचितामणि, योगेंद्र रस, चितामणि रस, चंद्रप्रभावटी, शिलाजीत तगर, खरेटी, ब्राह्मी, ब्रह्म रसायन, चंद्रावलेह, वसंत कुसुमाकररस, महात्रिफलादिघृत, रुद्राक्ष का जल और गन्ने के रस में सात बार भावित आंवले का चूर्ण गूगल आदि। इन औषधियों के सेवन से भी रक्तचाप कम हो जाता है और रोगी को शांति मिलती है।

यदि बढ़ा हुआ रक्तचाप सात दिन के विश्राम से और औषधि सेवन से ठीक हो जाय तो रोग असाध्य नहीं माना जाता, परंतु जिस रोगी का हृदय और वृक्क विशेष दुर्बल हो जाते हैं, वह आसाध्य होता है।

रक्तचाप के रोगी को न तो व्यर्थ आतंकित होना चाहिए और न रोग की उपेक्षा ही करनी चाहिए। जब तक उसे कोई कष्ट न हो तब तक अपने को स्वस्थ समझते रहना चाहिए और लक्षण प्रकट होते ही चिकित्सा आरंभ कर देनी चाहिए। यदि रोगी भोजन और विश्राम के नियमों का पालन करता रहे तथा शांत वातावरण में शांति से रहने का प्रयत्न करे, तो उसे चिकित्सा की भी आवश्यकता नहीं रहती।

—बी ५–७, कृष्णनगर,
दिल्ली–११००५१

चलता हुआ घोंसला

● दामोदर खडसे

सुबह-सुबह की बारिश देखकर वह बहुत खुश होता है। ऐसी ही बरसाती सुबह में उसकी सब्जी खूब बिकती है। बजाजनगर, जहां वह अकसर अपनी ठेली लिये जाता है, अधिकांश लोग वहां ऑफिसवाले हैं। सुबह की बारिश देखकर सब चाय की चुस्कियां लेते रहते हैं और अखबार के पन्नों के विज्ञापन तक चाट जाते हैं। भीगने की जोखिम कोई नहीं उठाता। बस, यहीं उसकी बिक्री बढ़ जाती है और वह थोड़ा-बहुत भाव भी बढ़ा देता है। हरी सब्जियों के लिए पानी छिड़कने का भी झंझट नहीं रहता, उल्टे उसका बजन कुछ बढ़ ही जाता है।

उसने अपनी कर्मभूमि के लिए बजाजनगर का चुनाव बहुत सोच-समझकर किया था। सबसे बड़ी बात तो यह थी कि बजाजनगर उसके घर से काफी दूरी पर था, जिससे उसके पास-पड़ोसवालों को यह पता चलने की संभावना बहुत कम रहती कि वह सब्जी बेचने-जैसे कामों तक में उतर सकता है। नागपुर में रहने का यही तो एक फायदा था उसे।

आज सुबह से ही बारिश बहुत तेज थी। वह हमेशा से कुछ पहले ही अपनी ठेली पर कई प्रकार की हरी सब्जियां और दूसरी सब्जियां रखकर बड़ी तेजी से आगे बढ़ रहा था।

सब्जी की थोक दुकान फूले मार्केट से सब्जी लेकर बजाजनगर पहुंचने में उसे करीबन आधे घंटे से ऊपर लगता है। उसने अपनी पैंट की मोहरी घुटनों तक मोड़ ली है। स्लीपर जो पैरों में थी, बहुत काट रही थी। उसे भी उतारकर उसने झोलीनुमा बोरी में रख दिया। पीठ तक का हिस्सा उसने ठेली की टप में घुसेड़ दिया। वह ठेली ढकेलते हुए आगे बढ़ने लगा।

कितना बुरा लगा था पिताजी को जब उन्हें पता चला कि उनका दीनू सब्जी बेचने का काम करता है। पहली बार उन्हें सस्पेंड होने का घातक एहसास हुआ था। वैसे कई असहनीय झमेले उन्होंने झेले थे, पर यह बात वे न सह सके। बहुत डांटा था उन्होंने—मेरी इज्जत का तनिक भी खयाल

नहीं। सारे लोग कहेंगे, बड़े बाबू का लड़का अब सब्जी बेचने का काम करता है। बाद में कमाई के तीन-चार रुपये, घर की बोझिलता को कम करने लगे। पिताजी की मजबूरी और क्रोध को वे रुपये धीरे-धीरे सहलाने लगे।

आज उसकी काफी बिक्री हुई और रकम भी अच्छी बनी। उसने देखा ठेली में अब कोई खास सब्जी नहीं बची। वह ठेली को रामू के घर पर रखने के लिए निकला। दोपहर को वह अपनी ठेली रामू के यहां रखता है।

मोड़ पर उसने अपना हिसाब मिलाया, ठेकेदार को और ठेली का किराया देकर उसके पास लगभग सोलह रुपये बच गये। पहली बार आधे दिन की इतनी बड़ी उसकी कमाई थी। कुल तीन महीने के उसके इस रोड-व्यापार की जिंदगी में सबसे अधिक कमाई! पर शाम को शायद कुछ भी न मिले! वह सोच ही रहा था कि ऊपर से

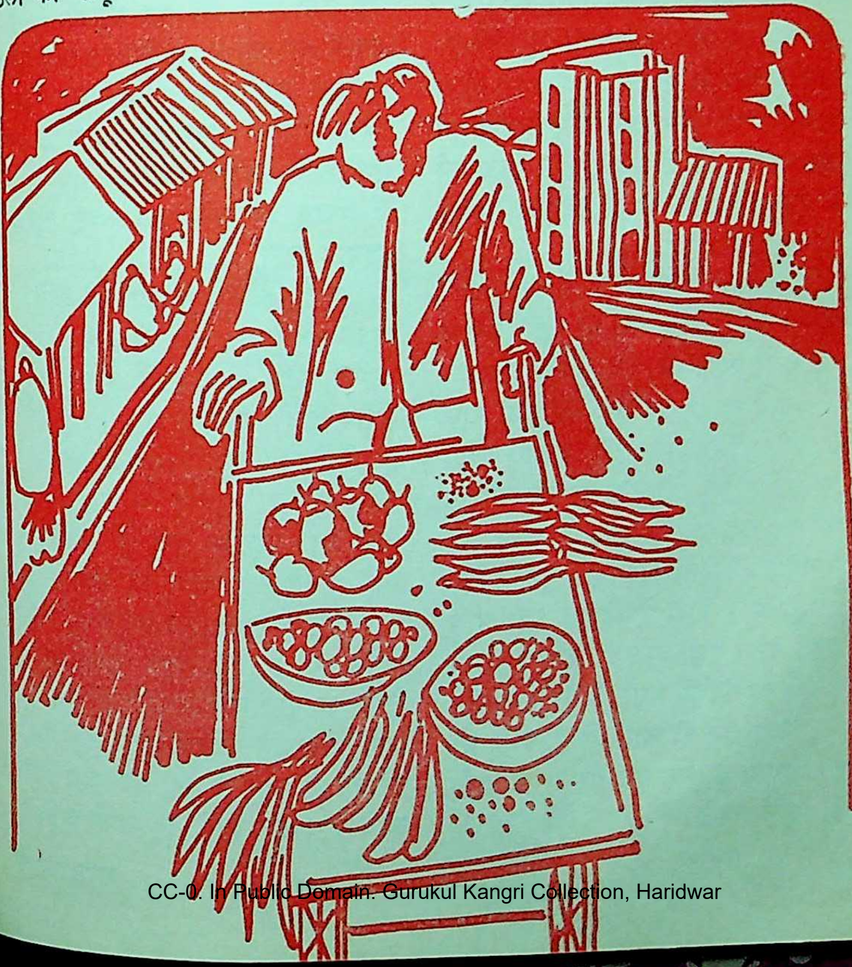

आवाज आयी—अरे . . . पालक है क्या ? किसी महिला ने पूछा ।

पहले उसने अपनी ठेली में देखा । थोड़ा पालक बचा था । फिर ऊपर देखकर हां कह दी । महिला ऊपर से नीचे आ रही थी । जिस बिल्डिंग के सामने वह खड़ा था, वहां डिस्पेंसरी थी : डॉ. बी. एस. भागवत, एम. बी. बी. एस. और पास ही उसी आकार की डॉ. **श्रीमती सुशीला** भागवत की तख्ती सटकर लगी थी । वह जो सब्जी लेने आ रही है, डॉक्टर ही होगी । नीचे डिस्पेंसरी है और ऊपर शायद वे रहते हैं । उस महिला के जाने के बाद उसने सोचा यदि पिताजी की नौकरी न छूटी होती तो वह भी इस वर्ष बी. एस-सी. के दूसरे वर्ष में होता । और ऐसी ही डिस्पेंसरी होती और ऐसी ही . . .

बहुत देर तक उसने अपने आपको सोचने की इजाजत नहीं दी । पैसे जेब में रखे और झटके से ठेली ढकेलने लगा ।

साढ़े ग्यारह बज चुके थे । ठेली रामू के घर रखकर घर जाना, भोजन करना इन सबके लिए उसे और दो घंटे चाहिए, पर तब तक उसकी भूख कड़ककर रह जाएगी । अरे दिनेश! दिनेश ने मुड़कर देखा रामू ही था । गली से निकल रहा था । "बहुत देर कर दी आज ?" रामू ने पूछा । "तू तो बहुत लेट हो गया ।" दिनेश बोला ।

"मेरा घर तो पास ही है, कभी भी पहुंच सकता हूं, पर तुम तो दो के पहले नहीं पहुंच सकते ।"

पंद्रह-बीस दिनों में ही वह दिनेश से कैसे घुल-मिल गया, पता नहीं ।

"यार, इतनी बरसात में भीगकर कमाओ । घर जाते ही दिमाग की किरकिरी हो जाती है । खाना खाने बैठो, थाली में दाल है तो चावल नहीं । सब्जी में ठीक से तेल नहीं । बस, मुंह लटकाकर थाली पर झुके रहो । कैसे भी खाओ और थोड़ी देर में वापस जुत जाओ," रामू कह रहा था और दिनेश सुन रहा था । पर उसे लगा कि वह उसकी ही बात बयान कर रहा है । दिनेश रामू के जीवन-दर्शन से प्रभावित हुआ । झट बोल पड़ा—"बस ज्यादा भाषण मत झाड़ो । आज तुम्हारे साथ हो जाए ।"

रामू की जम गयी । वह तो इसी इंतजार में था ।

दोनों स्टेशन के पास, 'शेरे-पंजाब' होटल में घुसे । दोनों की ठेली होटल के सामने खड़ी थी । साढ़े बारह बजे के करीब दोनों बाहर आये । पैसे दिनेश ने ही दिये थे । बाहर आते ही हिसाब हो गया । रामू हिसाब के बारे में बड़ा साफ था । हिसाब होते ही उसने पांच रुपये अस्सी पैसे दिनेश की ओर बढ़ाये ।

रामू के पास दस का नोट देखकर दिनेश बोला, "तू ऐसा कर, यह दस रुपये का नोट मुझे दे दे ! मैं तुझे चार रुपये बीस पैसे लौटाये देता हूं । हिसाब बराबर ।" रामू ने दस का नोट दिनेश को दे दिया और बाकी पैसे वापस ले लिये ।

इतने दिनों बाद दस रुपये के नोट से दिनेश अचानक ही जुड़ गया था। पिताजी की नौकरी जब छूट गयी थी तब भी उसका सिनेमा देखना नहीं छूटा था। वह दो-चार रुपये पिताजी के पहचानवालों से ले चुका था, पिताजी के नाम पर। कई लोगों ने पैसे दिये और कइयों ने ना भी कही।

उस दिन वह प्रकाश स्टूडियो की ओर बढ़ा। घनश्यामदासजी उसके पिता के अच्छे परिचितों में से हैं। उसने सोचा आज इधर कुछ व्यवस्था हो जाए। ऊपर पहुंचते ही उसने देखा एक नीम परिचित-से सज्जन भी घनश्यामदासजी के पास बैठे हैं। दिनेश को संकोच हुआ।

"क्यों फार्म भरने के लिए फोटो चाहिए ? अब कौन-सी परीक्षा में बैठ रहे हो ?" घनश्यामदासजी के प्रश्न ने दिनेश को चौंका दिया।

फार्म के लिए फोटो, वह सोच भी नहीं सकता था यह प्रश्न ! कैसे बताये वह कि फीस के अभाव में पांच महीने से उसका कालेज जाना बंद है। अपने आपको संभालते हुए उसने कहा, "नहीं, फोटो नहीं, दस रुपये चाहिए थे ?" दिनेश की आंखें अपनी सारी विवंचना छिपाने के लिए किसी अच्छे चेहरे की तलाश में उठीं शो-बोर्ड पर। पर पहली ही नजर मूंछवाले खूंखार हवलदार के फुल-साइज फोटो पर अटकी और उसने नजरें झुका लीं और धीरे-धीरे डरते हुए नीम परिचित की नजरों की ओर उठाने लगा, जो उसी को घूरे जा रहा था। वह

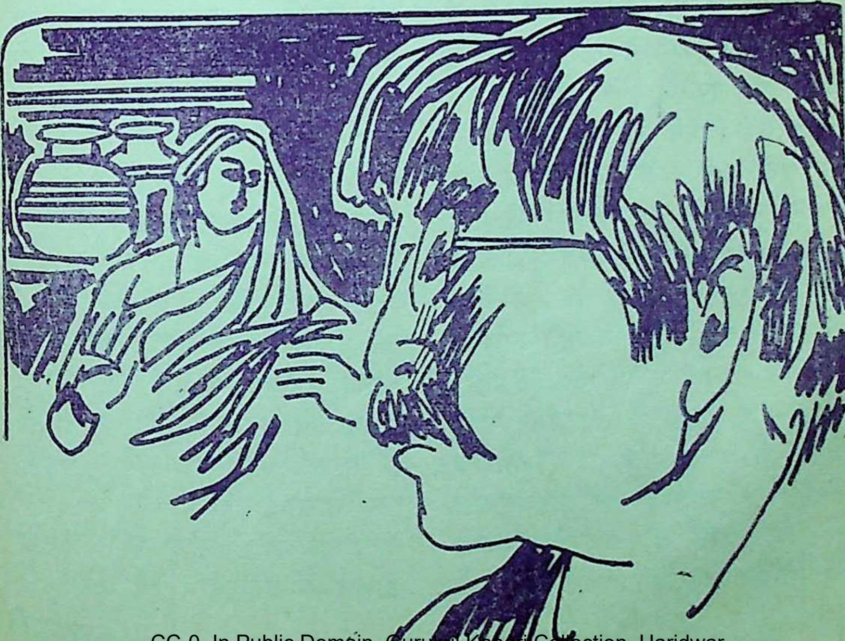

और भी सहम गया।

"अभी तो नहीं हैं, थोड़ी देर से चलेगा ?" घनश्यामदासजी के पर्याय ने उसे बहुत बड़ी राहत दी।

"ठीक है, साढ़े-पांच तक आऊं ?" हां में उत्तर पाकर दिनेश सीढ़ियां उतरने लगा। अभी वह तीन-चार सीढ़ियां ही उतर पाया था कि किसी शक्तिशाली चुंबक ने उसे पीछे खींच लिया। वह ठिठक गया।

"देखो, इसे पैसे बिलकुल मत देना। रामेश्वर की जब से नौकरी छूटी है, उसका यह बड़ा लड़का एकदम आवारा हो गया है। बाप के नाम पर पैसे मांगता फिरता है," पास ही बैठे व्यक्ति ने घनश्यामदासजी को आगाह कर दिया।

दिनेश के पांव जैसे लकड़ी के थे और अचानक किसी ने एक ही झटके में छीन लिये। वह सहारे के लिए दीवाल से चिपक गया। वैसे ही बेजान-सा धीरे-धीरे नीचे आने लगा। उसे पहली बार एहसास हुआ कि वह आवारा हो गया हैं। इस तरह उसे अपने पिता की साख नहीं बिगाड़नी चाहिए। पर वह ऐसा क्यों करता गया, उसे भी नहीं मालूम।

शाम को वह रुपये लेने नहीं गया। दोपहर से ही इधर-उधर भटकता रहा। पार्क में, चौक की रेलिंग पर, सिनेमा के पोस्टर्स आदि देखता-सोचता वह भटकता रहा। रात हो चली थी। घर जाना जरूरी था। उसे घर खाने को दौड़ता है। पिताजी अब चिड़चिड़े हो गये हैं। घर की हालत निरंतर गिरती जा रही है। वह सब जानता है, पर बोझ से बहुत घबराता है। अभी तक उसने अपने कंधे बचाये रखे हैं।

घर में कदम रखते ही उसके पिता प्रश्नों और गालियों की बौछार लिये टूट पड़े। दिनेश के मौन ने रामेश्वर को और अधिक उग्र बना दिया। शायद दिनेश की पैसे मांगनेवाली बात उन्हें मालूम हो चुकी थी। वे दांत पीसते हुए दिनेश पर दो-चार झापड़ों के साथ टूट ही पड़े। गुस्सा जोरों पर था।

"यह कोई मारने की उम्र है। सब कुछ कैसे बिगड़ता जा रहा है। क्या होगा अब इस घर का !" दीनू की मां की बातें सुनते ही रामेश्वर के हाथ रुक गये। मुंह भी बंद हो गया। वे भी शायद चाहते ही थे कि ऐसी ही कोई बात हो, जिससे गुस्से में दरार पड़े और वे उसमें से बाहर भाग निकलें। क्योंकि हाथ गुस्से में उठ गया था और प्रतिष्ठा का प्रश्न जबरन गुस्सा बनाये रखना चाहता था।

दिनेश को अपनी मां का चेहरा स्पष्ट याद नहीं। वैसे लोगों द्वारा ही उसे धीरे-धीरे यह मालूम हुआ कि यह उसकी सौतेली मां है। पर अभी-अभी जिसने उसे सहानुभूति दी, वह निश्चित ही मां थी। यह बात दिनेश को काफी कुछ सहारा दे रही थी। फिर भी उसका चेहरा लाल हो गया था। आंख-कान में आग-सी लगी थी। स्थितियों के जाल

में छोर खो चुका था। कहां से शुरू करें ? कैसे सुलझाया जाए ? ये यक्ष-प्रश्न कमर कसकर खड़े थे, पर युधिष्ठिर के अभाव में सब कुछ अनुत्तरित रह जाता।

दिनेश और रामू पान चबाते हुए फूले मार्केट में ठेकेदार की ओर मुड़े। एक ही सिगरेट वे आपस में फूंक रहे थे।

"अब तो आकाश साफ हो गया," रामू ने ऊपर देखते हुए कहा।

'हूं' के सिवाय दिनेश के पास था भी क्या ! उधर रामू चहक रहा था। "मौसम बड़ा मजेदार रहेगा आज शाम को। आज जहां मटन खाया था न, वहीं केबिन में बियर और शराब भी मिलती है। चलेगा शाम को ? आज तो भई अपना मन बहक रहा है और लगाम अपने पास है नहीं। कोई साथ हो तो मजा डबल, नहीं तो अकेले राम।"

"अपने को यार उसमें मजा नहीं आता," दिनेश ने कटते हुए कहा।

"बेटा, अभी तो एक-दो बार चखी ही है, पीना शुरू कर दे, उसके बगैर मजा नहीं आएगा; और आज तो उसकी अगली गली का भी प्रोग्राम है।" ऐसा कहकर रामू ने अपनी एक आंख मारकर शरारतपूर्ण इशारा किया और आंखें गड़ाकर दिनेश के चेहरे की प्रतिक्रिया पढ़ने में लग गया।

सामने पूरन ठेकेदार की दुकान आ चुकी थी। सुबह का हिसाब करना था। नयी सब्जियां लेनी थीं। दोनों अपने-अपने काम में लग गये। रामू का हिसाब-किताब जल्दी हो गया। उसने अपनी ठेली सजा ली और दिनेश से बोला, "शाम का तय रहा, मेरे घर आ जाना। वापस घर जाने की जरूरत नहीं। फिर वहीं से सब तय कर लेंगे।"

दिनेश को रामू की यह आदत अच्छी नहीं लगती। वह बड़ी डरावनी स्थिति में होता है, इन सब स्थितियों के बीच। वह सिर्फ इतना ही कह पाया।

"मैं शाम को तो घर ही जाऊंगा।"

"सोच ले," इतना कहकर रामू अपनी ठेली ढकेलते हुए आगे बढ़ गया।

रोज की तरह शाम को दिनेश ने अपनी ठेली रामू के घर के पास जमा करा दी। किराया चुकाया। बची सब्जियों को बोरे में भरकर रामू के घर रखने के बाद ठेकेदार के पैसे चुकाये।

दिनेश की जेब में अब दस का नोट और तीन–चार रुपये बच गये। आठ–साढ़े आठ बज रहे होंगे। आकाश फिर डबडबाया हुआ था। मोटे छीटों के छिटपुट हमले हो रहे थे। दूर कहीं आकाश की काली छाती पर एक छोटी–सी रोशनी की रेखा तिलमिलाकर गायब हो गयी थी। दिनेश को घर पहुंचने की जल्दी थी। वह बस स्टाप पर आया। उसे तेरह नंबर की बस का इंतजार था।

तेरह नंबर की बस आयी। लदी हुई। लोग बस की ओर लपके और

दिनेश बस के डंडे से लटककर भीड़ में घंस गया।

बस मंदिर के स्टाप पर रुकी। उतरते ही दिनेश शेड में हो लिया। उसकी और भीगने की हिम्मत नहीं थी।

बिल्डिगों की आड़ में लुकता–छिपता बारिश से अपने–आपको बचाता वह अपनी गली में दाखिल हो गया। उसे रामू की याद आयी। आज दोपहर को उसके साथ भोजन में कितना मजा आया था। इस ठंड में रामू का प्रोग्राम...? और यदि सेकंड शो के लिए मैं कहता तो वह ना कहने की हिम्मत न रखता . . . सोचते-सोचते अनायास ही वह मुसकराया। बारिश कुछ छितरायी। उसने सिर को एक झटका दिया। बाल रूमाल से पोंछे और दस का नोट टटोलकर तसल्ली कर ली, चिल्हर पैसों से उसे उसने अलग रखा था। बस में भी बड़ा सावधान था वह। बस की इतनी भीड़–भाड़ में भी वह सलामत रहा। वह सोच रहा था कि उसके पिताजी कितने खुश होंगे। इस दस रुपये की बदौलत उसने बहुत कुछ सहा है। आज पिताजी के हाथ में यह नोट देकर मैं उस दिन का बदला लूंगा। देखना है आज किसकी नजर कितनी नीची-ऊंची होती है। गैलरी खत्म होते ही उसने अपने स्लीपर हाथ में ले लिये और दीवार के साथ-साथ कूदता-फांदता आगे बढ़ा।

अब वह अपने मकान के सामने था। बीच में संकरी गली थी। पर ज्योंही वह दरवाजे के एकदम करीब गया तो सुना– "दीनू नहीं आया अभी तक ?" अपना नाम सुनते ही सांकल पर खटखटानेवाले उसके हाथ अचानक रुक गये। उत्तर में पिता की आवाज भी उसने सुनी, "आ जाएगा . . . तुम तो इधर आओ।"

"दोपहर में भी नहीं आया, न जाने क्या बात है ?"

"दिनेश की इतनी चिंता करती हो . . . यदि तुम्हारा अपना होता तो मेरा तो भगवान ही मालिक था . . . जितना थोड़ा बहुत अभी ध्यान देती हो . . ।" तभी बिजली कड़की और भीतर से संपर्क टूट गया। बारिश धरती पर चीते की तरह झपटी। मूसलाधार झोका आया और दिनेश को पूरी तरह नहला गया। भीतर-बाहर तक वह भीग गया। उसका दस का नोट भी भीग चुका था।

रामेश्वर रुक-रुककर बोल रहे थे, "दीनू को अब पंख उग आये हैं, उसकी चिंता कम किया करो, अपनी सोचो।"

"कितने बजे हैं" पत्नी के पूछने पर बिना घड़ी देखे बोले, "ग्यारह"। आधे घंटे से वे पत्नी का इंतजार कर रहे थे।

"भोजन भी ठंडा हो रहा है।" दीनू की मां ने कहा। दिनेश की ओर से पत्नी का ध्यान हटाने के लिए बोल पड़े– "इतनी चिंता करने की कोई जरूरत नहीं है। जहां उसे गरम भोजन मिलेगा वहां कर लेगा वह," कहते-कहते वे रुक गये।

"क्या मतलब ?" दीनू की मां ने उत्सुकतावश पूछा ।

"आज ही मैंने उसे मटन होटल से निकलते हुए देखा । पान-वान चबाकर साहबजादे सिगरेट से अपने आपको खूब गरमाते हुए चल रहे थे । उसके साथ एक लड़का भी था ।"

"क्या कहते हो ।"

"सही कह रहा हूं । मैंने अपनी आखों से देखा है । थोड़ा कमाता है, बहुत उड़ाता है । आजकल के लड़के हैं, कौन किसकी चिंता करता है ? तुम हो, जो मुफ्त में अपना जी ठंडा कर रही हो । बस बचे-खुचे चिल्लर पैसे वह हमारी मजबूरी के माथे मारकर मजा करता है । इसके लिए कोई चिंता करने की जरूरत नहीं ।"

उसे लगा कि वह अधमरा मवेशी है, जिस पर चील-गिद्ध हमले कर रहे हैं । उसके शरीर से जिंदे लोथड़े नोच रहे हैं और वह कुछ नहीं कर पा रहा है ।

दिनेश के नथुने गुस्से से फूल रहे थे । उसकी एक मुट्ठी दूसरी हथेली पर कौंध रही थी । भीतर-बाहर अंधेरा ही अंधेरा था । ऐसी गहरी बारिश में उसे गली के कोने का टिमटिमाता पीला बल्ब दिखा । उसे फिर रामू याद आ गया । बस, तभी वह उल्टे पांव भागा, किसी रामू की तलाश में ।

—बैंक ऑव महाराष्ट्र,
सीताबर्डी, नागपुर (महाराष्ट्र)

ज्ञान-गंगा

बुद्ध्या भयं प्रणुदति तपसा विंदते महत् ।
गुरुशुश्रूषया ज्ञानं शांति योगेन विंदति ।।

बुद्धि से भय का नाश होता है, तपस्या से सद्गुरु और शास्त्र प्राप्त होता है, गुरुशुश्रूषा से ज्ञान मिलता है और चित्तवृत्ति के निरोध से मन की शांति होती है ।

धूमायंते व्यपेतानि ज्वलंति सहितानि च ।
धृतराष्ट्रोल्मुकानीव ज्ञातयो भारतर्षभ ।।

हे भारत श्रेष्ठ ! धृतराष्ट्र ! जलती हुई लकड़ियां अलग-अलग होने से धुआं फेकती हैं और एक कर देने से जल उठती हैं, इसी तरह भेद दृष्टिवाले बांधव सदा दुःख उठाया करते हैं और जहां एकता रहती है वहां सुखी रहते हैं ।

तृणानि नोन्मूलयति प्रभंजनो मृदूनि नीचैः
प्रणातानि सर्वतः स्वभाव एवोन्ततचितसा-
मयं महान् महत्स्वंव करोति विक्रमम्

प्रभंजन (वायु) मुलायम, नीचे हुए और सब ओर से नतशील तृण को नहीं उखाड़ता । क्योंकि यह उच्च विचारवालों का स्वभाव ही है ! बड़े लोग बड़ों के ही साथ पराक्रम दिखाया करते हैं ।

सुमंभिते सुविक्रांते सुकृतौ सुविचारिते ।
प्रारंभे कृतबुद्धीनां सिद्धिरव्यभिचारिणी ।।

श्रेष्ठ सम्मति, श्रेष्ठ पराक्रम, श्रेष्ठ कार्य और सुंदर विचार पूर्वक आरंभ किये हुए कार्यों में बुद्धिमानों को निर्विघ्नता से सिद्धि की प्राप्ति होती है ।

—प्रस्तोता : महर्षिकुमार पांडे

चुटकियां

नानाजी देशपांडे के निवास पर किसी सज्जन ने टेलिफोन मिलाया, "नानाजी हैं क्या घर पर ?"

"नानाजी तो मंदिर गये हैं । आप चाहें तो मैं मामाजी को बुलाऊं ?" उधर से एक छोटे से बच्चे ने सहज ही पूछा ।

★

"सक्सेनाजी, आप यह क्या कहते हैं कि शतरंज का खेल आउटडोर गेम है ।"

"हां, क्योंकि मैं शतरंज का खेल मैदान में ही बैठकर खेलता हूं । पत्नी की वजह से घर में तो खेल ही नहीं सकता ।"

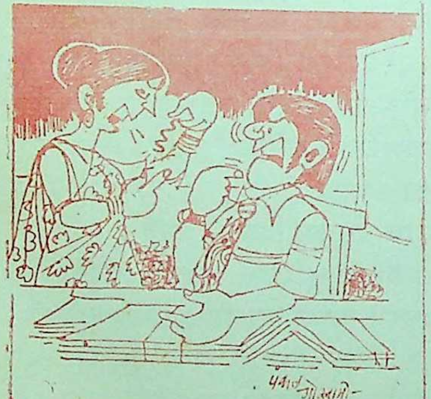

"डार्लिंग ! लगता है आपने अपनी स्टेनो बदल ली है, क्योंकि पहले आपके कपड़ों में सीधे बाल निकलते थे और अब घुंघराले..."

"गुप्ताजी ने वर्माजी को छेड़ा, "क्या बात है वर्माजी, आज एक पैर में काला जूता और दूसरे में लाल क्यों पहन रखा है, खैरियत तो है न !"

"क्या बताऊं गुप्ताजी, शू मार्केट में ठगे गये । एक छोड़ दो जोड़े खरीदे थे पर दोनों ही ऐसे निकले ।"

★

शहर में चित्रकला प्रदर्शनी लगी। एक चित्रकार अपने एक डॉक्टर मित्र को वहां ले गया । वहां एक जर्जर वृद्ध के चित्र को देख चित्रकार भावविभोर होकर डॉक्टर से बोला, "क्या राय है इसके बारे में !"

"मुझे तो लगता है कि इसे टी. बी. है।"

—नंदिता सिन्हा

आइने में

बंबई की एक कवयित्री ने रमानाथ अवस्थी की उपस्थिति में उनके ही गीत का मुखड़ा लेकर एक नया गीत सुना दिया। उनके बाद जब रमानाथ अवस्थी का नाम पुकारा गया तो उन्होंने कुछ उदासी, कुछ तल्खी से कहा, "मैं अब किस मुंह से गीत सुनाऊं ।"

★

कवयित्री माया गोविंद के शृंगार की बड़ी तारीफ हो रही थी। किसी ने डॉ. धर्मवीर भारती की भी राय जाननी चाही तो उत्तर मिला--"मायाजी के शृंगार का क्या ! उसे देखकर तो वैराग्य उपजता है ।"

हा! हा!!

"वकील साहब, मैं अपनी इस कटी हुई उंगली के लिए दस हजार का दावा करना चाहती हूं।"

"सिर्फ दस हजार का ही क्यों ?"

"क्योंकि 'इनकी' साल भर की इनकम दस हजार रुपये ही है।"

"आपके पति की इनकम . . . मैं कुछ समझा नहीं ?"

"वकील साहब, इसी उंगली से तो मैं 'इन्हें' नचाया करती थी।"

डसलडोर्फ (प. जरमनी) में एक नयी प्रकार की टेलीफोन सेवा शुरू हुई है—नंबर है-- ७७५५२१-२। इस नंबर पर टेलीफोन करने के बाद एक नया नंबर बताया जाता है जिससे संपर्क और एक निश्चित राशि का पहले भुगतान करने पर कोई व्यक्ति घंटों किसी अज्ञात युवती से प्यार भरी बातें कर सकता है।

किस्से खोजा फकीर के

ईरान में तेल-कंपनी का एक मैनेजर था, उसने एक खूबसूरत बिल्ली पाल रखी थी। वह बिल्ली बेलाग सारे घर में घूमती रहती थी।

उसने एक दिन एक कोने में एक बिच्छू देखा। उसने उसका पीछा किया। अंततः बिच्छू को लगा कि अब उसकी मृत्यु बहुत निकट है। उसने ठहरकर कहा, "प्यारी बिल्ली, तुम मेरी जान बख्श दो। मैं इतना छोटा हूं कि तुम्हारा एक कौर भी पूरा नहीं होगा। यदि तुम मेरी जान बख्श दो तो मैं अपना एक गुप्त रहस्य बता दूंगा, जो तुम्हारे बहुत काम आयेगा।" अपनी आदत के अनुसार बिल्ली ने उसे बख्श दिया और अपना कान उसके पास बढ़ा दिया। बिच्छू ने कान में धीरे से कुछ कहा और भाग गया।

इसके बाद बिल्ली दौड़ते हुए अपने मालिक के पास पहुंची। मालिक उससे वैसे ही बहद प्यार करता था। उसने तुरंत बिल्ली को अपनी गोद में उठा लिया। बिल्ली ने तुरंत अपने पैर के नुकीले पंजे से मालिक के हाथ में घाव कर दिया। मालिक को बहुत क्रोध आया, लेकिन तभी खोजा फकीर वहां पहुंच गया। उसने हंसते हुए कहा, "बिच्छू से शिक्षा लेनेवाली बिल्ली यही काम कर सकती थी। आखिर संगत का भी असर होता है--(संगत गुन अनेक फल)" मालिक ने तुरंत उस बिल्ली को एक थैले में बंद किया और उसके सिरे से कसकर कपड़ा बांधा और नदी में फेंक आया।

दुष्ट का साथ खराब होता है, दुष्ट की सीख खराब होती है, जिस पर उसकी छाया पड़ जाए, वह भी उसी रंग में बदल जाता है।

तनाव से मुक्ति

● डॉ. सतीश मलिक

क. ख. ग, आरा : मैं बी. एस-सी., अंतिम वर्ष का छात्र हूं। मेरे हाथ लिखते वक्त बुरी तरह कांपते हैं। परिणामस्वरूप मुझे अपने ज्ञान के अनुसार परीक्षा में अंक प्राप्त नहीं होते। इसलिए मैंने अध्ययन करना करीब-करीब बंद-सा कर दिया है। मैं जानना चाहता हूं कि मेरी बीमारी मानसिक है या शारीरिक?

आपकी बीमारी मानसिक है, शारीरिक नहीं। इसे 'रायटर्स क्रैंप' कहते हैं। यह बीमारी प्रायः ऐसे लोगों में देखी गयी है जिन्हें बहुत लिखने या हस्ताक्षर करने का काम करना पड़ता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से मैं यह कह सकता हूं कि आप एक तीव्र बुद्धि के मेहनती व्यक्ति हैं। आपके लिए परीक्षा में अच्छे नंबर लाना तथा उपलब्धियां प्राप्त करना महत्त्वपूर्ण रहा होगा, तथा आप कुछ हद तक अपरिवर्तनशील भी हैं। इस समय आप 'रायटर्स क्रैंप', चिंताग्रस्त-स्थिति तथा उदासीनता से पीड़ित हैं। इसका इलाज भी मनोवैज्ञानिक ढंग से होता है। पहले तो आपको 'रिलैक्स' करना सीखना है। शवआसन भी लाभप्रद है। आपके जीवन की पूर्व घटनाओं के बारे में, जिनका असर आपके ऊपर हुआ है, जानना आवश्यक है। इसके पश्चात व्यवहार-चिकित्सा (बिहेवियर-थिरेपी), तथा मनोचिकित्सा (साइकोथिरेपी) से इस रोग का इलाज हो सकता है।

रमेशचंद्र सोनी, खंडवा : ३० वर्षीय बैंक कर्मचारी हूं। वृद्ध माता-पिता, पत्नी व दो बच्चों का दायित्व है मुझ पर। तीन महीने पहले मेरे सात महीने के बच्चे को दस्त लग गये। डॉक्टर ने उसे इंजेक्शन लगाया, जिससे उसकी मौत हो गयी। तब से ही मुझे तनाव बना रहता है। बार-बार पछतावा होता है कि अगर बच्चे को डॉक्टर को न दिखाता तो उसकी मौत न होती। पिताजी की आंखों का आपरेशन हुआ है, मां अस्वस्थ हैं, पत्नी सदमे के कारण ज्वर-ग्रस्त है, दोनों बच्चों को भी बुखार है। निराशा से चारों ओर से घिर गया हूं--बहुत परेशान हूं, किसी भी काम में मन नहीं लगता। क्या करूं?

क्या आप यह दावे से कह सकते हैं कि बच्चे की मौत इंजेक्शन लगने से ही हुई है? दरअसल, दस्तों के कारण शरीर में पानी की कमी हो जाती है जो मौत का कारण बन जाती है। इसलिए इसमें न तो डॉक्टर का कोई दोष है और न

इस स्तंभ के अंतर्गत अपनी समस्याएं भेजते समय अपने व्यक्तिगत जीवन का पूरा परिचय, अवस्था, पद, आय एवं पते का उल्लेख कृपया अवश्य करें।

आपका। अतः आपका पछतावा व्यर्थ है। यदि आप न ले जाते और ऐसी स्थिति में मृत्यु हो जाती तब आप दोष किसे देते ?

आपको हमारी यही सलाह है कि आप अपराध-बोध की भावना को छोड़ें और यही मानकर संतोष करें कि बच्चे का जीवन इतना ही था।

आप और आपकी पत्नी अवसाद से पीड़ित हैं इसीलिए निराशा अनुभव कर रहे हैं। वैसे हारी-बीमारी तो आती-जाती रहती है। निराशा छोड़कर काम-काज में मन लगाएं। कुछ समय में सब स्वत : ही ठीक हो जाएगा।

यू. चौरसिया, बांदा : १८ वर्षीय एम. ए. की छात्रा हूं। बचपन में प्रण किया था कि डॉक्टर बनूंगी। पिताजी भी डॉक्टर हैं। उन्होंने मुझे पूरा प्रोत्साहन दिया। इंटर में विज्ञान विषय में तो मैं आगे रही लेकिन अंगरेजी में सप्लीमेंट्री आयी। पास तो हो गयी लेकिन स्वप्न टूट गये। बी. ए. कर चुकी हूं लेकिन मन से डॉक्टर बनने का खयाल नहीं निकाल पा रही हूं। बहुत सोचने लगी हूं, जिससे मुझे मायोपिया भी हो गया है। अब पिताजी की इच्छा है कि किसी प्रतियोगी परीक्षा में बैठूं। लेकिन मन तो पढ़ाई में बिलकुल नहीं लगता। खाली बैठने पर मन बहुत घबड़ाता है। लक्ष्य तो छूट गया, आखिर अब क्या करूं ?

अपनी इज्जत के लिए प्रायः मां-बाप बच्चों के लिए, बच्चों की मनोवृत्ति व अभिरुचियों को ध्यान में रखे बिना, स्वयं ही ऐसे निर्णय ले लेते हैं जो बच्चों के लिए असाध्य हो जाते हैं और फलतः वे मनोविकारों के शिकार हो जाते हैं। आप भी इसी के शिकार हैं।

आप स्वप्नों की दुनिया को छोड़कर वास्तविकता की जमीन पर खड़े होने की कोशिश करें। बीते को बिसार कर वर्तमान को बनाने में जुटें। पिताजी से भी खुलकर बात करलें। शायद, वह आपके लिए लक्ष्य को बदल दें। फिर भी आपके मन में डॉक्टर बनने का इतना ही आग्रह रहे तो एम. ए. के बाद पी. एच-डी. कर लें जिससे आप नाम के आगे डॉक्टर लगा सकें।

अ. ब. स., गाजियाबाद : मैं बीस वर्षीय बी. ए. का छात्र हूं। पिछले कुछ महीनों से कक्षा में बोलते समय नर्वस हो जाता हूं, यहां तक कि हाजिरी बोलते समय भी। एक बार हाजिरी बोलते समय अटक गया था, जिस पर प्राध्यापक ने मेरा अपमान कर दिया। शायद इसी के सदमे के कारण ऐसा होने लगा है। इस स्थिति की वजह से मैं बहुत ही तनावग्रस्त रहता हूं।

आपके नर्वस होने का कारण शायद कक्षा में अध्यापक का डांटा जाना ही

है शायद आप इस बात को बहुत महत्व दे बैठे हैं कि दूसरे लोग आपके बारे में क्या सोचते हैं।

आप मनन करें कि क्या आपको सभी काम दूसरों के लिए ही करने हैं? दूसरे कुछ भी सोचें, सोचने दीजिए। अपने को 'स्व' पर केंद्रित कर पूरे आत्मविश्वास के साथ लोगों से बातचीत करें तो आपकी यह परेशानी दूर हो सकती है।

कल्याणसिंह, रायपुर : मैं २१ वर्षीय बी. एस-सी. का छात्र हूं। छोटी-छोटी बातों को लेकर मेरा जी घबराने लगता है, दिमाग भारी रहता है। पढ़ नहीं पाता। हाथ, पैर कांपने लगते हैं। साधारण आर्थिक स्थिति के मां-बाप मुझे डॉक्टर बनाना चाहते हैं। लेकिन अपने हाथों के कंपन को लेकर निराशा से भर जाता हूं। समझ में नहीं आता कि मैं अपने मां-बाप का स्वप्न कैसे साकार कर सकूंगा।

ये लक्षण बताते हैं कि आप किसी भारी चिंता के शिकार हैं। आप भावुक, आदर्शवादी व महत्त्वाकांक्षी हैं। मां-बाप के स्वप्न को साकार करने की चिंता आप पर हावी है। इसलिए आप इस चिंता से मुक्त होने की कोशिश कीजिए। लगता है आप बहुत गंभीर हैं, अतः गंभीरता कम कीजिए, हंसी-मजाक और प्रफुल्लता को अपने जीवन में स्थान दीजिए। योगासनों में यदि आप शवासन करें तो आपको विश्रांति मिल सकती है। साथ ही मिलने-जुलने, सभा सोसाइटियों में बैठने का अभ्यास डालिए इससे आत्मविश्वास जगेगा और घबराहट कम होगी।

उपेंद्रकुमार, मुजफ्फरनगर : मैं १९ वर्षीय छात्र हूं। घर और बाहर के लोगों से मेरे संबंध अच्छे रहते हैं। फिर भी, कभी-कभी मैं बेहद गमगीन हो जाता हूं और कभी-कभी बेहद खुश। मैं बचपन से ही आवेग के क्षणों में रो पड़ता हूं, यह आवेग विशेष रूप से उस समय पैदा होता है जब मुझे निर्दोष होते हुए भी दोषी ठहराया जाता है। इससे मुझे जो गहरा मानसिक आघात लगता है उससे दो-तीन दिन तक खिन्न रहता हूं। मैं इस अति-भावुकता और अवसाद से मुक्ति चाहता हूं।

गमगीन होना या खुश होना मानव मन की एक स्वाभाविक गति है, परंतु अकारण ही ऐसा होना 'साइक्लोमेनिक परसनेल्टी' का लक्षण है। यदि आप इन स्थितियों में अपने आप ही ठीक हो जाते हैं तब तो आपको इनके लिए कुछ नहीं करना है बल्कि अपने व्यक्तित्त्व को अच्छी तरह समझकर उसके अनुरूप चलना है।

यदि यह स्थिति—अवसाद की या प्रसन्नता की लंबे समय तक रहने लगे या उन्माद व उदासीनता बहुत गंभीर रूप धारण कर लें तो और यदि आपके परिवार का कोई सदस्य—मां या बाप की पीढ़ी में, मनोरोग से पीड़ित हों या हुए हों, तो आपके लिए यही उचित है कि आप किसी मनोरोग चिकित्सक से परामर्श लें। ●

"आज मैं फ़ाइनल इन्टरव्यू दूँ तो कैसे! सर बुरी तरह दुख रहा है।"
"मेरी मानो तो एनासिन ले लो।"

जल्द आराम पाने के लिए तेज़ असर और विश्वसनीय एनासिन लीजिए

तेज़ असर—एनासिन में वह दर्द-निवारक दवा ज़्यादा है, जिस की दुनिया-भर के डॉक्टर सिफ़ारिश करते हैं। इसी लिए एनासिन दर्द से जल्द आराम दिलाती है।

विश्वसनीय—एनासिन आपके डॉक्टर की दवाई की तरह दवाओं का नपा-तुला सम्मिश्रण है। इसी लिए एनासिन पर लाखों लोगों को पूरा भरोसा है।

एनासिन बदन के दर्द, दाँत के दर्द, सर्दी-जुकाम और फ़्लू की पीड़ा से भी जल्द आराम दिलाती है।

तेज़ असर और विश्वसनीय
मॅनर्स
एनासिन*

भारत की सब से लोकप्रिय दर्द-निवारक दवा
जेफ्री मॅनर्स के एनासिन विभाग की ओर से

*Regd. TM

A 22-7/78

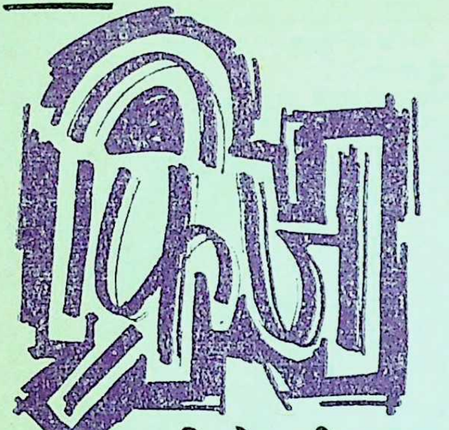

कृष्णकिशोर श्रीवास्तव

अभी चार दिन पहले, बचपन का मित्र नवीन मेरे ही आफिस में अफसर बनकर आ गया। मैंने मुसकराहट से उसका स्वागत किया, एक उत्साह से उसकी उपलब्धियों पर उसे सराहा। पूरे आफिस में अपनी और उसकी मित्रता का ढिंढोरा पीटा। पर सच तो यह था कि उसकी नियुक्ति पर मैं मन ही मन जल गया था। मेरी वह मुसकराहट खोखली थी, मेरा सारा उत्साह आडंबर था। नवीन के पहले न जाने कितने अफसर मेरे सिर पर बैठे और चले गये। सब अनजाने थे। मैं तो बाबू बनकर भर्ती हुआ था और आज भी बाबू था। अफसर बनने के लिए मैं अयोग्य ठहरा दिया गया, इसीलिए किसी और को मेरा अफसर बनना ही था, यह सब समझने के बावजूद नवीन के आने पर मैंने एक घुटन-सी महसूस की। शायद मैं अपने मित्र को अपने-जैसा बाबू ही देखना चाहता था।

अपनी इस घुटन के लिए मैं लाचार था। करता क्या? पर जिस मध्यम वर्ग का मैं हूं ये उसी के संस्कार हैं। ...और यह कमबख्त मध्यमवर्ग एक अजीब-सी चीज है। समाज की सारी कुंठाएं अपने कंधों पर ढोता है और कराहने में भी शरमाता है। निम्न वर्ग तो अपनी पीड़ाओं और अभावों की प्रदर्शनी लगाता है। उच्च वर्ग अपनी खटमली प्रवृत्ति के कारण अंधेरे में अपना संसार उजागर करता है, पर मेरा वर्ग समाज के भय से छिपकर रोता है और आलोचना के भय से बचकर हंसता है। नवीन के आगमन पर मेरी हंसी भी कुछ ऐसी ही थी।

आते ही नवीन ने सारे आफिस पर अपनी धाक जमा ली। सब कर्मचारी उसके भक्त बन गये। मगर मेरा मन उसकी महत्ता के प्रति विद्रोह कर रहा था। मैं स्कूल के दिनों से उसे जानता था। साथ पढ़ता था इसलिए उसके गुण-दोष मुझसे छिपे नहीं थे, पर इस समय उसकी कमजोरियां ही मुझे याद आ रही थीं। सिगरेट और शराब की लतें उसकी पुरानी थीं। लड़कियों के पीछे घूमना और उनसे छेड़छाड़ करने में उसे मजा आता था। अपनी इन्हीं हरकतों के करण वह कई बार घर, स्कूल और महल्ले में पीटा भी गया था। उसकी सारी हरकतें मुझे

भी ललचाती थीं, पर डांट और मार के भय से मैं आदर्शवादी बन गया था।

घर के बाहर शराब पीने के बाद, इलायची खाकर घर लौटनेवाले इस मध्यम वर्ग की साकार प्रतिमा मेरे पिता भी थे। इसलिए मेरे मैट्रिक पास करते ही उन्होंने अपनी तरह मुझे भी एक ऑफिस में बाबू बनवा दिया। अपनी परंपराओं के कारण मैं थोड़े ही दिनों में पूरे ऑफिस का आदर्श बाबू बन गया। न किसी से झगड़ा, न किसी से लेना-देना। अफसर को धरती का देवता माननेवाला, आज्ञाकारी, शासकीय सेवक। दिनभर फाइलें और शाम को अफसर के घर की चौखट, बस इन्हीं को मैंने पहचाना और धीरे-धीरे अपनी टूटी कुरसी में धंसा तो धंसता ही चला गया।

नवीन का हाल दूसरा था। उसके पिता भी उसे बाबू बनाना चाहते थे, पर वह नहीं माना, पिता से झगड़कर घर से भाग गया। नवीन के इस व्यवहार पर सबके साथ मैंने भी थू-थू की। उसके बाद

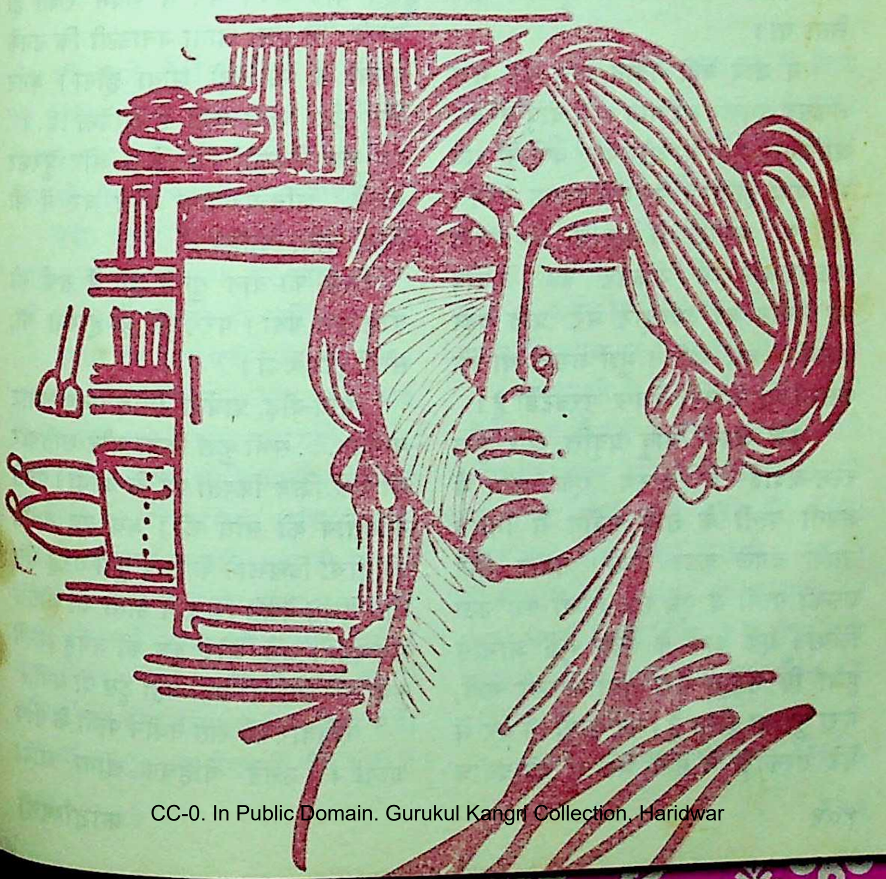

घूमते-भटकते उसके समाचार मिलते रहे। अब वह किसी कालेज में पढ़ रहा था, कालेज यूनियन का कार्यकर्त्ता भी था। प्रिंसिपल से भी अकसर झगड़ता। उन दिनों कालेज से निकाल दिया गया था। अब किसी आफिस में नौकरी कर रहा है और रात्रि कालेज में पढ़ भी रहा है...। अभी तीन-चार साल पहले उसके विजातीय विवाह को लेकर बड़ा हो-हल्ला मचा था। उसके पिता मुंह छिपाये फिरते थे, और मैं अपनी सजातीय पत्नी के साथ उसकी आलोचना में खुलकर भाग लेता था।

न जाने वही नवीन आज कैसे मेरा अफसर बनकर आ गया। मैं बाबू बनकर आफिस में घुसा था और पंद्रह वर्षों के बाद भी बाबू ही था। पर मुझे इसका मलाल नहीं था, मलाल तो यह था कि नवीन अफसर बन गया। अफसर बनने के बाद भी नवीन का व्यवहार मेरे प्रति बड़ा आत्मीय था, लेकिन मुझे लगता था कि उसकी यह सादगी केवल 'परवर्टेंड' है।

कुछ अपनी बाबू प्रवृत्ति और कुछ रस्म-अदाई के कारण एक शाम मैं अपनी पत्नी के साथ नवीन से मिलने उसके बंगले चला गया। नवीन और उसकी पत्नी ने हमें सर आंखों पर उठा लिया। एक क्षण के लिए मुझे आभास हुआ कि नवीन मेरा नया अफसर नहीं, मेरा पुराना दोस्त है। पर थोड़ी ही देर में मेरे संस्कारों ने मेरी भावना को दबोच लिया। मैं मन ही मन कुढ़ता रहा। चलते समय उसने अपनी जन्म-जात मस्ती से कहा, "रविवार को हम दोनों तेरे घर आ रहे हैं। रात को भाभी का बनाया खाना खाकर लौटेंगे।"

नवीन के घर से निकलते ही मेरी पत्नी का प्रवचन प्रारंभ हो गया। उसका एक-एक शब्द व्यंग्य, तिरस्कार और कुंठा से भरा था। नवीन को नीचा दिखलाने का इरादा उसका साफ-साफ था, पर यह संभव कैसे होगा? वह तय नहीं कर पा रही थी। अपने घर में कदम रखते ही बोली, "मैं ऐसा खाना बनाऊंगी कि उनके पुरखों ने भी नहीं खाया होगा। मगर वैसा ठंडा पानी कहीं से आयेगा...?" वह कुछ ठिठकी, फिर मेरी ओर घूरकर बोली, "शनिवार तक अपने घर में भी फ्रिज आना चाहिए।"

फ्रिज की बात सुनते ही मैं बर्फ की तरह जम गया। पर मुझे ही हारना था; सो मैं हार गया।

भाग-दौड़, प्रार्थना, घिघियाना, उधार मांगना... सभी कुछ किया और शनिवार को एक फ्रिज किश्तों पर ले आया। पत्नी ने संतोष की सांस ली। अब वह नवीन को नीचा दिखलाने के लिए पूरी तरह लैस थी। देखते-देखते फ्रिज में पानी की बोतलें भर गयीं। अंडे और दूध की जगह मिली कुछ सब्जियां जो यहां-वहां ठूंस दी गयीं।

रविवार की रात नवीन पत्नी के साथ आया। उसने बेहिचक खाना खाया

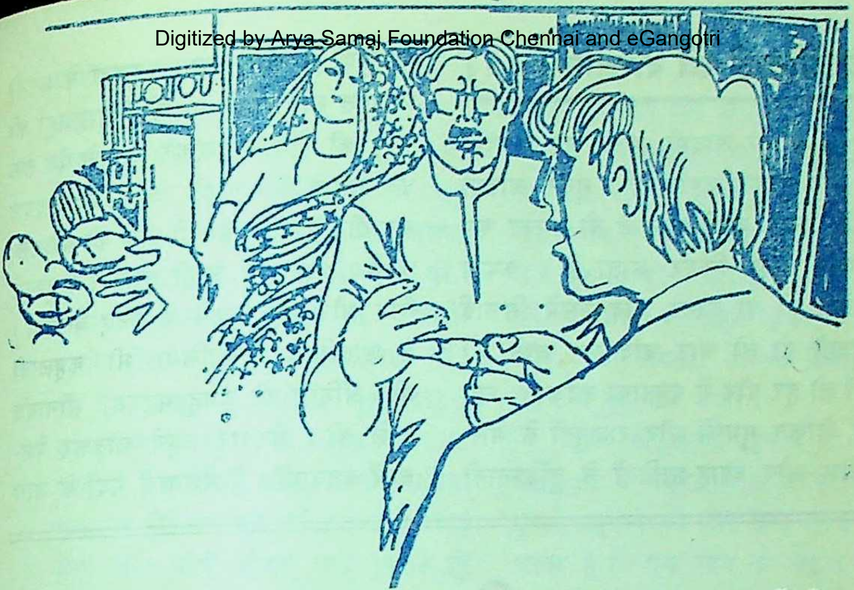

और जी भरके मेरी पत्नी के पाक-ज्ञान की तारीफ की। उसके बाद पानी का गिलास उठाते ही बोला, "भाभीजी! ये फ्रिज की बीमारी आपको भी लग गयी?"

मेरी पत्नी ने शरमाने का बहाना करते हुए कहा, "क्या करें भाई साहब, घड़े का पानी अच्छा ही नहीं लगता।"

नवीन हंस पड़ा, बुरी तरह हंस पड़ा। हम सब उसे देखते रहे। कुछ क्षणों बाद दो घूंट पानी गले के नीचे उतारकर बोला, "फ्रिज तो मेरे यहां भी है, मगर मुझे फ्रिज से नफरत है। आप भरोसा कीजिए भाभीजी, फ्रिज हमारे सामने बड़ा ही मनहूस आदर्श रखता है।" उसके बाद उसने अपनी नजरों से मुझे बांधा और फिर बोलना शुरू किया, "यार, मुझे तो लाचारी में 'स्टेटस' का ढोंग रचने के लिए फ्रिज लेना पड़ा था, पर तुझे यह बेवकूफी कैसे सूझी? सच मान मेरे दोस्त, जब-जब मैं फ्रिज खोलता हूं, तब-तब मुझे बड़ा दुःख होता है। हर चीज समय से कटी और पिछड़ी लगती है।" नवीन मेरी पत्नी की तरह गंभीर हो गया और बोला, "भाभीजी; बाहर की तपन से जिसे डर रहता है वह फ्रिज के अंदर सुरक्षित तो हो जाता है; पर बढ़ते समय का साथ नहीं दे पाता।"

वह कुरसी से उठा और उसने मेरी ओर नजर दौड़ायी। गरम सलाखों-जैसी लपलपाती नजर मेरी पत्नी की ओर डालते हुए उसने अपनी बात पूरी की, "मेरा दोस्त मेरी बात समझ गया है। आपको भी समझा देगा।" कहते ही अचानक हंस पड़ा। अपनी मूर्खता छिपाने के लिए मेरी पत्नी ने उसका साथ दिया, पर मैं न हंस पाया, न रो पाया।

—ए-४, जीतनगर, वरसोवा, बंबई-६

दिल्लीवालों की दास्तान (१०)

एक नूर आदमी : हजार नूर कपड़ा

● महेश्वर दयाल

"एक नूर आदमी, हजार नूर कपड़ा" पुरानी कहावत है। सुंदर आदमी यदि अच्छे कपड़े पहन ले तो उसका रूप हजार गुना निखर आता है। कपड़ा महंगा हो या सस्ता, यदि उसमें सिलाई अच्छी हो तो चार चांद लग जाते हैं। यों तो हर दौर में पहनावा बदलता रहा है, लेकिन मुगलों और राजपूतों के मेल-जोल और ब्याह-शादियों ने तुर्किस्तानी और हिंदुस्तानी पहनावे को एक नया रंग दे दिया।

बाबर और हुमायूं के राज्य में बादशाहों, बेगमों, शहजादियों और विदेशी लोगों का पहनावा मुगल सम्राट अकबर के दौर में बदल गया। राजपूत रानियों की ओढ़नियां, अंगियां और घेरदार लहंगे सबके मन को ऐसे भाये कि बेगमें अपना तुर्किस्तानी लिवास भूल गयीं। अकबर को भी हिंदुस्तानी पोशाक बहुत पसंद थी। हुमायूं के इज्जत-ताज और खासा-ताज (हीरे-लाल जड़ी टोपियां) पगड़ियों में बदल गये। नूरजहां ने अपनी राजपूत सौत जगत गुसाईं (शाहजहां की मां) की पोशाक देखकर सिर से पैर तक के पहनावे में थोड़ी बहुत अदल-बदल कर दी। बारीक, हलकी ढाके की मलमल, तनजेव, आवे रवां, लाही, गुलशन के दुपट्टे सिर और मुंह ढांकने के लिए बनवाये। ये ओढ़नियां पंचतौलिया भी कहलाती थीं। अंगिया की जगह महरम, सीनाबंद ने ले ली। घेरदार लहंगे छोड़कर पेशवाजें बनवायीं। ये पेशवाजें मर्दों के जामे की तरह होती थीं। गरमियों में रंगीन मलमल की और जाड़ों में कमख्वाब, जरबफ्त और अतलस की। दुल्हन के लिए नूरमहली पोशाक बनी। औरंगजेब की बेटी जेबुन्निसा ने शाही बेगमों और शहजादियों के बदन को ढांकने के लिए अंगिया कुरती बनवायी। औरंगजेब को सादगी पसंद थी। उसे रंगीन, तड़क-भड़क के कपड़ों से चिढ़ थी, मगर उसके मरने के बाद फिर वही कीमती

कपड़ों का रिवाज हो गया।

मर्दों के सिले कपड़े नहीं

शाहजहां और औरंगजेब के दौर का बयान करते हुए मनोची नाम का एक विदेशी यात्री लिखता है कि मुसलमान औरतें साड़ी भी पहनने लगी थीं। किलेवाली, अमीर घराने की दिल्लीवाली औरतें जाड़ों में कबा पहनती थीं। यह एक तरह का आगे से खुला दोहरा रुईदार जामा होता था। कबा के दोनों पल्लुओं को बेगमें और अमीरजादियां अनमोल हीरे-जवाहर जड़े बटनों से जोड़ लेती थीं। कोई औरत चाहे कितने ही अमीर या गरीब घर की हो, मर्दों के हाथ के सिले कपड़े नहीं पहनती थीं। कपड़े सीने का काम मुगलानियां या दर्जिनें करती थीं। किले में बेगमों और शहजादियों के कपड़े सीने के लिए बड़ी-बड़ी नामी और होनहार मुगलानियां काम करती थीं। ये तुर्किस्तानी रंग-ढंग के कपड़ों में तो माहिर होती ही थीं, जैसे-जैसे समय बदलता गया इन्होंने हिंदुस्तानी लिबास सीने में भी कमाल हासिल किया। इनके सिले दुपट्टे, महरम, कुरती, पाजामे, पेशवाज नये-नये ढंग के होते थे। ये घनक, पेचक, गुखरू, कलाबत्तू, सलमे-सितारे, तिकोरे, गजाल, कटोरियां, किरन, ठप्पे, बांकुड़ी, चंपा टांकने में और नन्ही जान और रेशम के तारों से कपड़ों में ऐसी बानगी दिखातीं कि देखनेवाले दंग रह जाते थे। इनके टंकन में ऐसा कमाल और जादू था कि अगर हजार बेगमें किसी एक महफिल में हों, तो इन सबके लिबास अलग-अलग मालूम होते। एक की पोशाक दूसरे से नहीं मिलती। क्या मजाल कि एक और बेगम रानी की सज-धज एक-सी हो जाए। जिस बेगम, रानी और शहजादी का पहनावा सबसे अच्छा और भला लगता, उसकी किला और शहर में धूम मच जाती।

अगर कोई इनके पहनावे को अपना लेता, तो ये नयी पोशाक बनवातीं और पुराने पहनावे को छोड़ देती थीं। कहा जाता है कि एक दिन का पहना कपड़ा दूसरे दिन नहीं पहना जाता था। कुछ कपड़े तो ऐसे होते थे कि जो बदन पर

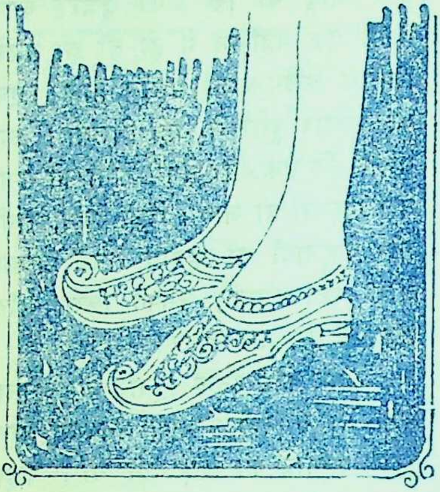

हीरे-जवाहरात जड़ी जूतियां

चिपके होते, उन्हें फाड़कर उतारा जाता था। कपड़ों के अलावा पैरों में पापोश या जूतियां पहनी जाती थीं। मखमली जूतियों पर जरी के काम से बेल-बूटे बनाये जाते थे। हीरे-जवाहरात जड़ी जूतियां भी पहनी जाती थीं। एक इतिहासकार लिखता है कि शाहजहां की बेगम मुमताज की बहन की जूती अनमोल मानी जाती थी। ऐसी जूती पहनना किसी को नसीब नहीं हुआ। यों तो सब दुपट्टे, ओढ़नियां ओढ़ती थीं, लेकिन कभी-कभी बादशाह से पूछकर शहजादियां सिर पर छोटी-छोटी पगड़ियां भी पहन लेती थीं। किले और शहरवालियों में यों तो रंगीन कपड़े पहनने का रिवाज था लेकिन हर मौसम में अलग-अलग रंगों के कपड़े पहने जाते थे। बसंत पर तो बादशाह और बेगमों से लेकर हर दिल्ली-निवासी बसंती रंग में रंग जाता।

तब पर्दा तन जाता था

शाही महलों, अमीरों और खाते-पीते घरानों में पर्दा बहुत था। मुसलमानों की देखादेखी हिंदुओं ने भी पर्दे को अपना लिया था। छुटपन की याद है कि जब हमारी हवेली से लड़कियां और औरतें बाहर सड़क तक सवारियों में बैठने के लिए मंदिरों, जमुनाजी के नहाने या किसी के यहां जाती थीं, तो हवेली से लेकर बाहर सड़क तक पर्दा तन जाता था। जो कोई औरत गली, महल्लों और बाजारों में खुले मुंह दिखायी देती थी उसे वेश्या समझा जाता था। सिर्फ कारीगरों की बीवियां, नौकरानियां, बांदियां, चेरियां, चूड़ीवाली या इसी तरह की औरतें पर्दा नहीं करती थीं। फिर भी उन्हें अपने बड़ों का ध्यान रखना होता था। किसी मर्द को आते देखतीं तो शरम से मुंह छिपा लेती थीं। खद्दर की मोटी चादर ओढ़कर कहती थीं, "ओढ़ी चद्दर, हुई बरब्बर।"

छोटी-छोटी लड़कियां सिर पर ओढ़नी ओढ़तीं, बदन पर कुरती होती और टांगों में इजारे पहनतीं। जब किसी लड़की ने पुरानी ओढ़नी ओढ़ी और जरा भी नाक-भौं चढ़ायी, तो हमारी बुढ़िया नौकरानी जिसका नाम गुनिया था, छेड़कर कहती, "हां, हां, मेरी बन्नो को तो हरदम नयी ओढ़नी चाहिए। वह काहे को पहनने लगी पुरानी ओढ़नी! आ मेरे पास आ

बन्नो, तुझे गीत सुनाऊं।" फिर गाने लगती :

**भाती है जी से बंदी को आंचल की ओढ़नी
ओढ़ूंगी मैं कभी नहीं मलमल की ओढ़नी
मंगवा दो कोई मुझको मसलसन की ओढ़नी
मैं वह तो ओढ़नी की नहीं कल की ओढ़नी**

बन्नो मुंह बनाकर कहती, "बस रहने भी दे अपना गीत—गला ऐसा जैसे फटा ढोल।"

जब कोई लड़की ओढ़नी को ऐसे ही कंधों पर डाल लेती और हुड़दंगा मचाती कहकहे लगाती फिरती, तो गुनिया डांटकर कहती—है-है, कैसी कुलच्छनी है। ओढ़नी ओढ़े एक पट्टी, छाती ढके न पेट।"

मौसमी रंगों की बहार

सीने-पुरोने के समय गुनिया आ बैठती, हर काम में हाथ बटाती। लड़कियों ने घर की बड़ी-बूढ़ियों से तो सब कुछ सीख लिया था। दुपट्टों की रंगाई होती, तो गुनिया से अवश्य पूछा जाता। उसे पंचरंगे दुपट्टे रंगने बहुत अच्छे आते थे। घर में तो हवाई डोरियां, मलमल पिस्तौलिया के हलके रंगों के दुपट्टे पहने जाते थे। दुपट्टों की रंगाई कुछ मुश्किल न थी। बहू-बेटियां रंग भी लेती थीं, कलफ भी दे देती थीं और दुपट्टों को चुनकर ओढ़ भी लेती थीं। गीले दुपट्टे पर अबरक छिड़क देतीं। अबरक की हलकी चमक भली मालूम होती थी। तीज-त्योहारों में कोर-किनारी लगे दुपट्टे पहने जाते थे। जैसा मौसम हुआ वैसा ही दुपट्टा रंग लिया। बसंत पर बसंती, होली पर गेंदई, सावन की तीजों पर हरा और फिर दीवाली से लेकर सारे जाड़ों गहरे रंगों के दुपट्टे ओढ़तीं।

रंगरेज भी कभी-कभी घर की ड्योढ़ी पर आते थे। देहली में झम्मन रंगरेज बहुत मशहूर था। झम्मन रंगरेज के नाम पर दिल्ली में एक गली भी है। क्रैव पर गोटे किनारी की टकन का काम होता था। ठप्पे की गोट और इधर-उधर सुनहरा कच्चा गुखरू और गुखरू के बीच में बेल और उनके ऊपर चंपा या किरन लगा दी जाती थी। कोई-कोई गुखरू के बीच में रेशम जरी मिली काली डोरी भी लगा देती थीं। दुपट्टों पर कारचोबी काम भी होता था और कारचोबी बेलें भी टांगी जाती थीं। सलमे-सितारे, तिकोरे और गजाई का काम भी होता था। मोती, पोथ भी बीच-बीच में लगाये जाते थे। दुपट्टों पर कढ़ाई का काम भी बहुत अच्छा होता था। कारचोबी के काम में और कढ़ाई के काम में फूल, पान की बेलें, अंगूरी बेल, चिड़ियें, तोते, मोर भी बनाये जाते थे। दुपट्टे के दामन या पल्ले के कोनों पर तुरंजें बनायी जातीं। किरन और कलावत्तुओं के पल्लू भी टांके जाते थे। कोरें और ठप्प्पे दुपट्टों पर टंके बहुत सुंदर लगते थे। टसर और रेशम के दुपट्टे भी पहने जाने लगे थे। दुपट्टों पर मुकैश का काम भी होता था। दुपट्टे झिलमिल झिलमिल करते भले मालूम

होते थे। सारे दुपट्टे पर पास-पास सितारे टांकते, तो दुपट्टा बड़ा जगर-जगर करता।

सफेदपोशी

दिल्ली की सफेदपोशी मशहूर थी। मर्द घरों में तो नंगे वदन बनियान, धोती, तहमद या कुरता-पाजामा पहने रहते, लेकिन ज्यों ही घर की ड्योढ़ी से वाहर जाते, खूंटियों पर लटके साफ-सुथरे कपड़े पहनकर निकलते। वड़े-बूढ़ों ने मरते दम तक पुराना देशी लिवास नहीं छोड़ा। हिंदू-मुसलमान एक ही रंग में रंगे थे। लालाजी, मुंशीजी और मियां साहव के पहनावे में कुछ थोड़ा-बहुत अंतर था। कोई सिर पर दुपल्ली टोपी पहने है, तो कोई गोल या छज्जेदार पगड़ी। पराठेवाली गली से थोड़ी ही दूर आगे चलकर किनारी वाजार में पगड़ी बांधनेवाले वैठते थे। वे दिल्लीवालों की हर जाति-बिरादरी के पहनावे को अच्छी तरह जानते थे। वनियों, खत्रियों, कायस्थों, ब्राह्मणों और दूसरी जातियों की पगड़ियां अलग-अलग तरह की होती थीं। वे बिना कुछ पूछे-ताछे पगड़ियां बांध देते थे। कोई दुपल्ली टोपी अपने पटेदार बालों में अटकाये चला जा रहा है, तो कोई चौगोशिया (चार किनारेवाली), पंचगोशिया टोपियां पहने है। किसी की नफीस कामदार मखमली टोपी होती जिसमें जरी-बूटी की जमीन पर चांद और सुराहिया बनी होती थीं। इन टोपियों को तिरछी, बांकी अदाओं से पहना जाता था। साफे और मुंडासे पहनने का भी रिवाज था। बच्चे यों तो घर में सिली लट्ठे की गोल कढ़ी टोपियां पहने रहते, लेकिन शादी-ब्याह में ठप्पे की, वुंदों की, जरी की, सलमा-सितारे-गोटे, किनारी टंकी टोपियां पहनते थे। उन दिनों नंगे सिर रहना बहुत बुरा समझा जाता था।

तरह-तरह के अंगरखे

उन दिनों बदन पर आवेरवां और शबनम के कुरते, अंगरखे पहने जाते थे। अंगरखा हमारे देश का बहुत पुराना लिबास है। इसे हिंदू-मुसलमान दोनों पहनते थे। हिंदुओं के अंगरखे का पर्दा दाहिनी तरफ और मुसलमानों का बायीं तरफ होता था। सादे और कढ़े हुए गोल पर्दे के अंगरखे होते थे। महीन सिली हुई तनी से अंगरखे के पर्दों को बांध लिया जाता था। गरमियों में मलमल, तनजेब और डोरिये के अंगरखे पहने जाते और जाड़े में मखमल के; शादी-ब्याह में जामावार, कारचोबी और जरबफ्त के जामे पहने जाते थे। चोगा पहनने का भी दस्तूर चला आ रहा था। हमारे बड़े-बूढ़े फैशन के सूट-बूट पहननेवालों से कहते थे कि जनाब हमारी पोशाक की यह धाक थी कि हर एक की सज-धज निराली होती थी। अगर नौजवान है, तो एक-एक टांके पर जवानी बरसती है और जो बूढ़ा होता उसमें सादगी दिखायी देती। बांकों का बांकपन, छैलाओं का छैलापन, पहलवानों की पह-

लवानी, अमीर-गरीब की पहचान पोशाकों की काट-छांट से जानी जाती थी। जब हमने ऊंची चोली के अंगरखे पहने तब डोमों और मीरासियों ने भी उन्हें पहनना शुरु कर दिया। हम भी नीची चोलियों के अंगरखे पहनने लगे। ढाके की मलमल, लखनऊ की शरबती, सोनीपत का नैनोन, बनारस का मशरूअ देशी सूती कपड़ों में अपना जवाब नहीं रखते थे। इन कोट-पतलून और सफाचट गालों से हमें चिढ़ होती है। तनी हुई मूंछ, गलमुछे हों तो आदमी मर्द लगता, नहीं तो औरत।

अंगरखे के साथ टांगों में गरारेदार पाजामे पहने जाते थे और पांव में गोल पंजे की सलीमशाही जूतियां या कढ़ी हुई देशी जूतियां पहनी जाती थीं। कौड़िया पुल पर देशी जूतियां बनानेवाले बैठते और सलीमशाही जूतियां बल्लीमारान में मिलती थीं।

तब स्वदेशी पहनावा अच्छा था

बड़े-बूढ़ों को सर्दी, गरमी से बदन को बचाये रखना भी आता था। सिर पर कनटोप चढ़ा लेते, बदन पर रूई की सदरी होती। फलालेन के पाजामे पर मोटे-मोटे हाथ के बने मोजे चढ़ाकर बिनौला बन जाते। क्या मजाल जो सर्दी का नाम भी सता पाये! समय बदलता गया, देशी पहनावा भी बदला। सिर पर क्रिस्टी टोपी, बदन पर अचकन और शेरवानी पहनी जाने लगी। टांगों में चूड़ीदार पाजामा और पांवों में अंगरेजी पंप और फीतेवाले जूते पहने जाने लगे। शुरू-शुरू में दफ्तर-कचहरी जानेवालों को कमीज, टाई, सूट पहनने में बड़ी तकलीफ हुई। बचपन की याद है कि हमारे एक रिश्तेदार, जो सरकारी वकील थे, घर में धोती-कुरता पहने रहते, लेकिन जब कचहरी जाते तो धोती को लपेटकर उस पर पतलून चढ़ा लेते। उनकी पतलून अजीब और फूली हुई दिखायी देती थी। शाम को घर लौटने पर एकदम कोट-पतलून उतार डालते और कहते, "इस तरह के कपड़े पहनकर दिन भर चैन नहीं मिलता। करूं तो क्या करूं! नौकरी पर लात भी नहीं मार सकता। गांधीजी के सत्याग्रह में खद्दर के कपड़े बहुत लोग पहनते थे। यहां तक कि विलायती कपड़ों की होली तक जलायी गयी। लेकिन आजादी के बाद खद्दर के कपड़ों, जवाहर वास्कट के साथ-साथ विलायती फैशन के कपड़ों का रिवाज बढ़ता चला गया। यों तो हम हिंदुस्तानी हैं, लेकिन कपड़े पहनने में हमने विलायतवालों को मात कर दिया है। औरतें मर्दों का लिबास पहने दिखायी देती हैं। इस बात पर एक चुटकला याद आ गया।

किसी साहब ने अपने पास बैठे मेहमान से पूछा, 'जनाब, वह सामने जो लड़का अंगरेजी नाच नाच रहा है, क्या आपका बेटा है?"

उसने तुनककर कहा, "अजी जनाब, वह मेरी लड़की है लड़का नहीं, और मैं उसकी मां हूं, बाप नहीं।"

—९६, बाबर रोड, नयी दिल्ली-१

वे प्रलय तक भटकते रहेंगे

● चंद्रमोहन 'प्रधान'

मार्च, १९३९ की एक दोपहर, दक्षिण अफरीका के धुर नीचे, अंतरीप के छोर पर 'फाल्स-बे!' फाल्स-बे के तट पर लगभग पचास-साठ सैलानी विश्राम कर रहे थे। हिंद महासागर का उष्ण जल किनारे पर थपेड़े दे रहा था।

यकायक खाड़ी के जल पर फैली धुंध को चीरता हुआ एक जहाज सामने से आता दिखायी दिया। देखने में जहाज ऐसा लगता था, मानो वह सीधा संग्रहालय से निकलकर आ रहा हो। शताब्दियों पूर्व की बनावट का वह जहाज चारों तरफ से रस्सियों, मस्तूलों और आगे मांगे पर टंगे लैंपों से सजा, लकड़ी का बना पालदार जहाज था।

जहाज को आता देख सभी लोग उत्सुकता से भर उठे। अभी वे यह अनुमान लगा ही रहे थे कि यह कैसा जहाज है, कहां से आया है, तभी वह जहाज किनारे पर आने के बदले पुनः धुंध में गायब हो गया।

एक अखबार ने इस घटना पर टिप्पणी करते हुए लिखा कि उस समय हवा शांत थी। कहीं से जोरों की हवा की खबर नहीं आयी, तब भी वह जहाज जितनी तीव्र गति से सीधा बढ़ता आ रहा था, यह आश्चर्य की बात थी।

सन १९३९ के 'ब्रिटिश साउथ अफरीकन ऐनुअल' ने लिखा, 'अद्भुत संकल्प एवं दृढ़ता के साथ वह जहाज तैरता हुआ 'ग्लेनसेयेर्न बीच फोक' तक आया। सैलानी लोग तीव्र उत्कंठा के साथ उसे देखने व यह बहस करने लगे कि यह कौन-सा जहाज हो सकता है, और कहां से आया है!'

'वह जहाज एक तरफ को कुछ झुका हुआ था, और ऐसा प्रतीत हो रहा था, जैसे स्ट्रैंडफोंटेन (फाल्स-बे का ही एक निकटवर्ती तट) के किनारे कहीं दुर्घटनाग्रस्त हुआ है। उसे देखने पर लोगों में जब उत्सुकता बढ़ने लगी, तब वह रहस्यमय जहाज हवा में उसी तरह गायब हो गया जिस तरह दिखायी दिया था।'

मृगतृष्णा

इस रहस्यमय जहाज के संबंध में कई मान्यताएं प्रस्तुत की गयी हैं। एक तो यह कि वास्तव में यह कोई मृगतृष्णा रही होगी। सैकड़ों मील दूर के किसी जहाज की प्रतिच्छाया प्रकाश और पानी के कारण यहां आ रही होगी, जैसा कि रेगिस्तानों में प्रकाश, उष्ण वायुमंडल और बालू

की सतह के कारण होता है।

किंतु, जिन लोगों ने इसे देखा, उन्होंने दृढ़तापूर्वक बताया कि इसका बोर्ड, फैला हुआ पेटा, ऊंचा-सा पिछला भाग और तरीके से बंधी रस्सियां, पाल, लैंप आदि आजकल के जहाजों से सर्वथा भिन्न थे। आधुनिक जहाजों की बनावट ही अलग होती है। वह तो असंदिग्ध रूप से कोई १७वीं शती का व्यापारिक जहाज था।

क्या वह 'फ्लाइंग डचमैन' था?

श्रीमती हेलेन टाईडेल नामक एक महिला भी उन प्रत्यक्षदर्शी सैलानियों में थीं। उसने पूरे विश्वास के साथ कहा, "अविश्वासी लोग, जो चाहे कहें, पर वह जहाज 'फ्लाइंग डचमैन' के अलावा दूसरा कोई नहीं हो सकता।"

आखिर, यह 'फ्लाइंग डचमैन' क्या है? लोगों के अनुसार, यह एक भुतहा जहाज या जहाज का भूत है, जिसे गत दो सौ वर्ष पूर्व, अनंत काल तक समुद्रों में भटकते रहने का शाप ईश्वर की ओर से मिला था, जो आज तक किनारों का स्पर्श किये बिना सागरों में तैरता फिर रहा है। हॉलैंड का जहाज होने के कारण वह 'फ्लाइंग डचमैन' कहलाता है।

इस रहस्यपूर्ण जहाज ने विख्यात जरमन संगीतज्ञ वैगनर को भी एक 'ओपेरा' लिखने को बाध्य किया, जिसका नाम है—'डेर फ्लीएजेंडे होलांडेर।' संसार के तमाम नाविक इस भुतहे जहाज को पीढ़ियों से जानते हैं।

यह है क्या?

पुराने रिकार्डों में उल्लेख मिलता है कि सन १६८० में एक डच व्यापारिक जहाज एम्सटर्डम से बटाविया स्थित डच इंडीज के लिए रवाना हुआ। इसका कप्तान था हैंड्रिक वॉन डेर डेक्केन। यह एक अत्यंत चतुर और दक्ष नाविक होने के साथ ही अनुभवी कप्तान भी था। यद्यपि, उसके बारे में बहुत-सी आपत्तिजनक बातें फैली हुई थीं फिर भी उसने जहाज के कप्तान-पद पर अपनी नियुक्ति के बाद एम्सटर्डम बंदरगाह की शराब की दुकानों में खूब

डींगें हांकीं और जोरदार दावा किया कि इस बार की यात्रा उसके भाग्य के लिए बहुत फायदेमंद साबित होगी, और वह अकूत माल के साथ वापस लौटेगा ।

इन बातों को देखते हुए, जहाज के मालिक लोग उसकी नियुक्ति पर मन में कुछ पछताये भी, पर उस समय उससे बढ़िया दूसरा कोई कप्तान उपलब्ध न था ।

ठीक समय पर यह जहाज 'ईस्ट-इंडियन मैन' रवाना हुआ । जब तक वे लोग समशीतोष्ण सागर पट्टी में आगे बढ़ते रहे, तब तक तो सब कुछ ठीक रहा, पर जैसे ही उत्तमाशा अंतरीप (केप ऑव गुडहोप) के निकट आये एक सामान्य वायु के झोंके ने आंधी का रूप धारण कर जहाज के पालों के टुकड़े-टुकड़े कर दिये और पतवारों को तोड़ डाला ।

कई दिन हो गये, पर वह जहाज सागर पर ही इधर से उधर खिलौने-सा उछाला जाता रहा । वह किनारे पर न लग पाया । जब भी वह किनारे पर आने की कोशिशें करता, तभी दक्षिणी-पूर्वीय हवा उसे थपेड़ों से हिला देती और वह तट से दूर ही रह जाता । कहते हैं, इससे कप्तान वॉन डेर डेक्केन का क्रोध सीमा पार करने लगा । उसने बहुत कोशिश की पर अपनी संपूर्ण नौचालन-दक्षता और चतुरता को आजमाकर भी वह किनारे तक पहुंचने में सफल न हो सका ।

कप्तान की चुनौती

कहते हैं, कप्तान वॉन डेर डेक्केन के उन्मादपूर्ण क्रोध और आवेश के महत्त्व को शैतान ने समझा । ईश्वर के विरुद्ध तो शैतान रहता ही है, उसने वॉन डेर डेक्केन को स्वप्न में आदेश दिया कि वह जहाज को तट तक न पहुंचने देने के ईश्वरीय आदेश को चुनौती दे । उन्मत्त क्रोध एवं विवशताजन्य क्षोभ में कप्तान ने एक चुनौती ईश्वर को दे डाली । इस पर एक कविता परंपरा से प्रसिद्ध है—

उन्मत्त क्रोध में, उसने यह भयानक कसम खा ली,
और, जोरों से, आंधी के कोलाहल-सा गरजा
(ओ) मेरे स्थिर कार्यकलाप, एवं दृढ़ जीवन-वृत्त !
इस बल पर—मैं ईश्वर की शक्ति को ठहरने को, ललकारता हूं !
नरक के भीषण पिशाच, यमदूत मुझे डरा नहीं सकते !
भले ही, मैं सागर में,
प्रलय के दिन तक, इधर-उधर भटकता रहूं !

कप्तान के ये विचार इन शब्दों में सबसे पहले किसने प्रस्तुत किये, यह अज्ञात है । पर, लगता है ईश्वर की ओर से इस घोषणा का प्रतिकार तुरंत ही हुआ । फरिश्तों ने निर्णय दिया कि आज से लेकर उस दिन तक—जब महाप्रलय का दिन आयेगा, ईश्वर की तुरही का प्रचंड घोष गूंजकर आकाश को चीर डालेगा, कप्तान वॉन डेर डेक्केन सागर में अपने जहाज सहित इधर-उधर भटकता रहेगा ।

अंत में, जहाज डूब गया। उसके सभी नाविक भी डूब गये, पर कप्तान वॉन डेर डेक्केन एक लंबे दुःस्वप्न की तरह अपने प्रेत जहाज के साथ सातों समुद्रों में, प्रलय-काल तक का रात्रि-जागरण करता हुआ परिभ्रमण कर रहा है।

जॉर्ज पंचम की गवाही

ब्रिटेन के स्वर्गीय सम्राट जार्ज पंचम जब राजा बनने के पूर्व, ट्रेनिंग के दौरान 'एच. एम. एस—बुचांते' पर कर्मचारी के तौर पर तैनात थे, तब उन्होंने अन्य नाविकों सहित, उस भुतहे जहाज को देखा। उस जहाज के उठे हुए पीछे के भाग पर उन्होंने प्राचीन काल के योद्धाओं, नाविकों-वाली पोशाक पहने एक आकृति को भी खड़ा देखा।

'बुचांते' उस समय उत्तमाशा अंतरीप से लगभग पचास मील दक्षिण में था। दूसरे दिन ही उसके नाविकों में से एक, मस्तूल से डेक पर गिरकर मर गया। सम्राट को पूरा विश्वास था कि वह 'फ्लाइंग डचमैन' ही था।

अंतिम बार 'फ्लाइंग डचमैन' के देखे जाने का प्रमाण सितंबर, १९४२ में मिलता है। केपटाउन के मोइल्स-पाइंट पर स्थित अपनी बालकनी में बैठे चार व्यक्तियों ने उसे टेबल-बे की ओर तैरते हुए देखा। वह रोबेन द्वीप की दिशा में जाकर दृष्टि से लुप्त हो गया।

वैज्ञानिक जगत इसी तर्क पर अड़ा है कि सम्राट पंचम और उनके सभी नाविकों ने जिस जहाज को देखा, वह वास्तव में मृगतृष्णा थी।

ऐसी मृगतृष्णा संभव भी है। एक बार ब्रिटेन से पी. एंड ओ. लाइंस का एक डाक-जहाज भारत आ रहा था। उसे एक दिन अदन में देखा गया, जबकि उसकी लॉग-बुक स्पष्ट बता रही थी कि वह उस समय अदन से दो सौ मील की दूरी पर था।

पर, बुद्धि यहीं पर चकराती है। ऐसी मृगतृष्णा में तो दूरस्थ चीजों की हूबहू प्रतिच्छाया दीखती है। पर, इस भुतहे जहाज को देखनेवालों ने स्पष्ट देखा है कि यह दो तीन सौ बरस पुराने ढंग का, लकड़ी का बना, पाल, रस्सियों मांगे पर लटके लैंपों से सुसज्जित-पालदार जहाज था, वैज्ञानिक इस बात की व्याख्या नहीं कर पाये हैं कि देखनेवालों ने ऐसा ही जहाज हर बार कैसे देखा, जो दो सौ साल पुराने ढंग का जहाज था।

—ज्ञान-कला केंद्र, आमगोला, मुजफ्फरपुर

मलाया के नेगरी सेमबिलान कबीले में स्त्रियों का ही बोलबाला है। वहां स्त्री ही अपने पति को भरणपोषण का वचन देती है। विवाह के बाद पति को अपना नाम बदलना पड़ता है और भोजन करने से पूर्व पत्नी की अनुमति लेनी पड़ती है। वहां यदि पत्नी पति को उसकी मां के घर-जैसी सुख-सुविधाएं नहीं दे पाती तो वह उससे तलाक ले सकता है।

विधि-विधान

कु. क. ख. ग., नयी दिल्ली : मैं अपनी बुआ के लड़के से, जो तलाकशुदा है, विवाह करना चाहती हूं; किंतु मुझे बताया गया है कि हिंदू विवाह कानून के अंतर्गत ममेरी बहन से विवाह नहीं हो सकता। कृपया इस बारे में सही कानूनी स्थिति बतायें।

हिंदू विवाह अधिनियम, १९५५ की धारा ५ आप दोनों के विवाह पर प्रतिबंध लगाती है। उक्त अधिनियम की धारा ३ (जी) ४ के अंतर्गत इस प्रकार के रिश्तेवालों का विवाह संभव नहीं है। और ऐसा विवाह कानूनन अव्यवहार्य (वॉयड) माना जाएगा। परंतु यदि आपके रीति-रिवाज इस प्रकार के रिश्तेवालों के विवाह की अनुमति देते हों तो कानून आपके रास्ते में बाधक नहीं होगा।

कानून में इस प्रकार का विवाह करनेवाले व्यक्तियों के विरुद्ध किसी जुरमाने या कैद का प्रावधान नहीं है। नौकरी पर भी इस विवाह का कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता। परंतु विवाह अव्यवहार्य माने जाने के कारण कोई भी पक्ष कभी भी दूसरे को पति या पत्नी मानने से इनकार कर सकता है।

विधि-विधान स्तंभ के अंतर्गत कानून-संबंधी कठिनाइयों के बारे में पाठकों के प्रश्न आमंत्रित हैं। प्रश्नों का समाधान कर रहे हैं राजधानी के एक प्रसिद्ध कानून-विशेषज्ञ—राम प्रकाश गुप्त

आर. एस. शर्मा, मुजफ्फरपुर: मेरी दादी की सौत अभी जीवित हैं। दादा की मृत्यु के बाद वे अपने मायके चली गयीं। उस समय मेरे पिता की अवस्था ५-६ बरस की थी। पिता का पालन-पोषण अन्य रिश्तेदारों ने किया। अब वे हमें अपनी सेवा के लिए अपने पास बुला रही हैं। उनकी कुछ संपत्ति भी है, जिस पर उनके भाई की नजर है। कानूनन उनकी संपत्ति का उत्तराधिकारी कौन होगा?

आपकी दादी की सौत आपके लिए तो दूसरी दादी ही मानी जानी चाहिए। वसीयत किये बिना उनका स्वर्गवास होने की स्थिति में हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के अंतर्गत आपके दादा के सभी उत्तराधिकारी उनकी संपत्ति के भी उत्तराधिकारी माने जाएंगे। यदि इन दूसरी दादी से भी आपके दादा को कोई संतान हो तो वह उनकी संपत्ति की उत्तराधिकारी होंगी, अन्यथा आपके पिता, बुआ व चाचा आदि उनकी संपत्ति के अधिकारी होंगे।

यदि आपकी दूसरी दादी अपने

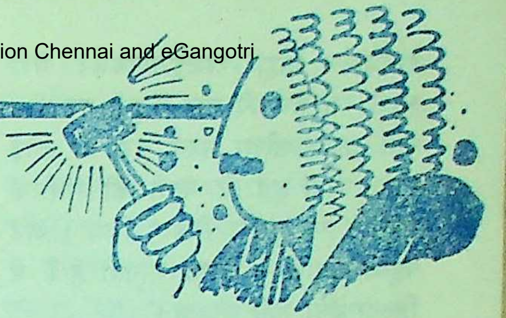

जीवन-काल में वसीयत कर दें, तो संपत्ति के उत्तराधिकार या निर्णय उनके द्वारा प्रदर्शित इच्छा के अनुसार होगा।

कृष्ण कुमार गुप्त, लखीमपुर, खीरी : जब मेरे पिताजी का देहांत हुआ, तब मैं नाबालिग था। मैंने पिताजी द्वारा छोड़ी दुकान केवल २५ रुपये माहवार पर ही दे दी थी। बालिग होने के पश्चात मैंने किरायेदार से दुकान खाली करने के लिए कहा। लेकिन वह मेरी बात पर ध्यान नहीं देता, वह धनवान और नेता टाइप का आदमी है। आप कृपया सलाह दें।

आप अपनी दुकान खाली करवाने के लिए उत्तर प्रदेश शहरी संपत्ति अधिनियम १९७२ की धारा २१ के अंतर्गत कार्यवाही कर सकते हैं। यदि अधिकारी आपके आवेदन की सुनवाई के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि आपको या आपके परिवार को अपने लिए जगह की आवश्यकता है तो वह अधिकारी किरायेदार को जगह खाली करने का आदश दे सकते हैं। उक्त अधिकारी परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए क्षतिपूर्त्ति के रूप में किरायेदार को अधिक से अधिक दो वर्ष तक का किराया देने का आदेश देंगे।

सुरेन्द्रकुमार गुप्ता, दिल्ली : मैं एक मामले में पंच नियुक्त किया गया था। इसका निर्णय मैं दे चुका हूं। अब वह पचांट (अवार्ड) न्यायालय में दाखिल किया जाना है। क्या पंच द्वारा अपना पंचाट न्यायालय में दाखिल करने की कोई अवधि निर्धारित है? यदि हां, तो कितनी?

पंच द्वारा अपना निर्णय न्यायालय में दाखिल करने के लिए कोई समय-सीमा नहीं है। दिल्ली उच्च-न्यायालय का 'मोतीराम बनाम मंगल सिंह व अन्य' (आई. एल. आर. १९७१, दिल्ली ४५१) में दिया गया निर्णय इस मामले में उल्लेखनीय है।

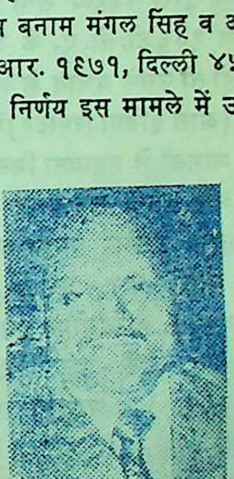

हमारे विधिवेत्ता [illegible] गुप्त

रामप्रसाद सिंह, [illegible]: मेरी शादी १५ वर्ष की उम्र में हुई, पर बीस वर्षों तक प्रतीक्षा करने पर भी कोई संतान नहीं हुई तो पत्नी की मौखिक सहमति पर दूसरा विवाह किया। अब पहली संपत्ति में हिस्सा मांगती है ? मैं हिस्सा देना नहीं चाहता।

आपकी पहली पत्नी को आपके जीवन-काल में आपकी संपत्ति में हिस्सा मांगने का अधिकार नहीं है। आपके स्वर्गवास के बाद पहली पत्नी भी हिस्सा पाने की अधिकारी होगी। उसका भरण-पोषण प्राप्त करने का अधिकार कानून स्वीकार करता है। दूसरा विवाह हो जाने से आपकी पहली पत्नी का अधिकार समाप्त नहीं हो जाता।

दिनेशचंद्र निगम, बांदा : यदि किसी मकान-मालिक द्वारा किराये तथा बेदखली का नोटिस १०६ टी. पी. ए. के अंतर्गत दिया गया हो तो उसके बचाव के लिए ए. आई. आर. (आल इंडिया रिपोर्टर) में उल्लिखित किन मामलों से सहायता मिल सकती है ?

आप अपनी समस्या के समाधान के लिए एम. उल्लाह बनाम ज्वाला प्रसाद (ए. आई. आर. १९७४, इलाहाबाद, पृष्ठ ४१३), वीरेंद्रमोहन बनाम मोहम्मद उमर (ए. आई.-आर. १९७३, पटना, पृष्ठ २९९); भगवान बनाम शिव-सावित्री (ए. आई. आर. १९२५, इलाहाबाद, पृ. १९९), कृष्णमित्रा बनाम लक्ष्मी बाई (ए. आई. आर. १९३८, बंबई, पृ. २१६) तथा मिश्रीलाल बनाम रामगोपाल (१९६६ ए. एल. जे. पृ. ३५) देख लें। दिल्ली उच्च-न्यायालय द्वारा ८-८-१९७७ को मोहनलाल गोयल बनाम श्रीकिशन में किया गया निर्णय भी इस बारे में देखा जा सकता है। मैनेजर शेष सभी मालिकों की तरफ से नोटिस दे सकते हैं। संयुक्त स्वामियों में से कोई एक अन्य मालिकों की अनुमति के बगैर नोटिस नहीं दे सकता (ए. आई. आर. १९५३, नागपुर पृ. १८)।

क. ख. ग., दिल्ली : डेढ़ वर्ष से मेरी पत्नी अपने मायके में रह रही है। वह न तो मेरे साथ रहना चाहती है और न संबंध-विच्छेद ही करना चाहती है। न्यायालय में जाने की बात कहने पर वह मुझ पर तरह-तरह के आरोप लगाने की धमकी देती है। उचित सलाह दीजिए।

आपकी पत्नी को आपके साथ रहकर अपने वैवाहिक दायित्वों को निभाना चाहिए। आप हिंदू विवाह अधिनियम की धारा ९ के अंतर्गत वैवाहिक स्वत्व स्थापना के लिए जिला न्यायाधीश के पास आवेदन कर सकते हैं। यदि आपकी पत्नी बगैर किसी उचित कारण के आपसे अलग रह रही हैं, तो न्यायालय आपके पक्ष में निर्णय दे देगा तथा आपकी पत्नी और पुत्र आपके पास आ जायेंगे। चूंकि आपकी पत्नी ने आपसे अलग रहना स्वयं प्रारंभ किया है, अलग रहने के लिए कारण प्रमाणित करने का उत्तरदायित्व आपकी पत्नी का है। ●

पृथ्वी गरम हो रही है!

• नीरा गर्ग

अमरीका, रूस, ब्रिटेन, फ्रांस और पश्चिम जरमनी के साथ अनेक यूरोपीय समुन्नत देशों को प्रकृति ने अपने आगे बेहद बौना साबित कर दिया। समस्त वैज्ञानिक प्रगति बरफ की मोटी तहों के बीच नौ-नौ आंसू रोती रही।

नये वर्ष के प्रथम दिवस को हमेशा की तरह बाजारों, गिरजाघरों और होस्टलों में वैसी गर्माहट नहीं थी, बल्कि बर्फ की मोटी तहों के बीच थीं घुटी-घुटी चीखें, जो संचार व्यवस्था के लड़खड़ा जाने से सहायता को पुकार भी नहीं सकती थीं। दूसरी ओर आकाश में पक्षियों के झुंड के झुंड दक्षिण आस्ट्रेलिया में गर्मी से बचने के लिए उतर रहे थे। उन दिनों पश्चिम आस्ट्रेलिया का ताप १२५ डिग्री फारेनहाइट तक पहुंच चुका था।

इधर भारत में इस बार मार्च तक गढ़वाल, श्रीनगर, शिमला, मसूरी, रानीखेत आदि पर्वतीय स्थान लगातार हिम और वर्षा [illegible] के बदले झेल रहे थे।

उथल-पुथल कैसे

तरह-तरह की विचारधाराओं के अनुसार कलियुग में बढ़ते अनाचारों और दुराचारों के कारण यह विनाश हुआ है। अतः जप-तप, यज्ञ हो रहे हैं, लेकिन वैज्ञानिक इस प्रक्रिया को वायु-प्रदूषण में सहयोग मानते हैं।

पिछले १००० वर्ष के रिकार्डों को देखने पर आभास होता है कि पूरा संसार दिनोंदिन कहीं ठंडा, तो कहीं गर्म होता जा रहा है।

मौसम बदलने के स्पष्ट प्रमाण उत्खनन से प्राप्त अवशिष्ट अंशों में मिल चुके हैं। वर्षों पहले आज की बंजर जमीन धन-धान्य और ऐश्वर्य से संपन्न थी। मथुरा के आसपास कृष्ण के समय में करील

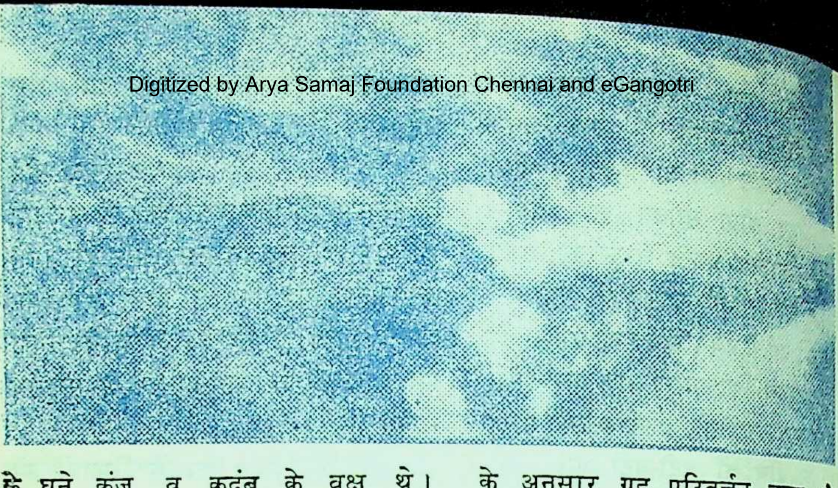

के घने कुंज व कदंब के वृक्ष थे। उन दिनों वहां बेहद वर्षा होती थी। आज उसी मथुरा में २५ इंच से अधिक वर्षा नहीं हो पाती। इस वर्ष मास्को में ७४ वर्ष पुरानी रिकार्ड तोड़ बर्फ देखी गयी। लंदन में भी १५ वर्षों बाद भारी शीत लहरें चलीं। उत्तरी अमरीका में वायुमंडल का ताप हिम-बिंदु से भी २० डिग्री नीचे चला गया था।

बर्फ-अवस्था

आज तक यह कहना मुश्किल है कि मौसमी परिवर्तन क्यों हो रहे हैं ! यूगोस्लाविया के एक भू-भौतिक शास्त्री मिलानकोविख मौसम के बदलते रुख को स्पष्ट करने के लिए एक सिद्धांत प्रतिपादित करते हैं, 'जब सौर-मंडल और पृथ्वी के झुकाव में थोड़ा भी परिवर्तन होता है जैसा कि आज से पचास वर्ष पूर्व हुआ था, तो मौसम में भारी बदलाव आ जाता है। क्योंकि तब सूर्य-विकिरण पृथ्वी पर पहुंचने से ३० प्रतिशत से भी अधिक बदल गया था।' इस सिद्धांत के अनुसार ग्रह परिवर्तन उत्तर और दक्षिण में समान रूप से दूसरी-बर्फ अवस्था आने का संकेत देते हैं। पहली बर्फ अवस्था आज से १००० वर्ष पूर्व थी। यद्यपि इस सिद्धांत की कई बातें सही नहीं हुईं तथापि अमरीका के मौसम-विज्ञानी डॉ. राबर्ट जैस्ट्रा के अनुसार, 'अमरीका की दूसरी बर्फ-अवस्था आने में केवल बीस वर्ष शेष हैं। यह बर्फ-अवस्था छोटी होगी पर यूरोप की विगत अवस्था-जैसी भयंकर होगी।'

सूसैक्स विश्वविद्यालय के डॉ. जॉन ग्रिबिन भी इस मत की पुष्टि करते हुए कहते हैं, 'सूर्य पर सूर्य-धब्बों की अवस्था में परिवर्तन होने से वायुमंडल में भी परिवर्तन आ जाता है। इसी के फलस्वरूप आर्कटिक वायु कनाडा से होकर गुजरते हुए दक्षिण की ओर मुड़ जाती है।'

पृथ्वी गरम हो रही है

उपरोक्त मत के ठीक विपरीत मत देते हैं अमरीकन वैज्ञानिक, 'हरित ग्रहों के प्रभाव से पृथ्वी निरंतर गरम हो रही है। यह

प्रभाव जीवावशेष ईंधन, कोयले और तेल से होता है। यह सब कार्बन डाइ-आक्साइड बनाते हैं, जो पृथ्वी के चारों ओर कंबल की तरह लिपट जाती है और पृथ्वी को गरम कर रही है।'

मौसम मानव के वश में

मौसम-विभाग के डायरेक्टर जनरल पी. के. दास कहते हैं, 'यद्यपि मौसम-शास्त्र अनिश्चितता में डूबा है फिर भी मौसम मानव का गुलाम है। अगर मौसम के घटकों में परिवर्तन कर दिया जाए, तो मौसम बदल जाएगा। ये घटक हैं (१) कार्बन डाइ-आक्साइड (२) ओजोन और (३) वायुप्रदूषणकारी गैसें।

कार्बन डाइ-आइक्साइड पृथ्वी में विकिरित होनेवाली लंबी तरंग-दैर्ध्य किरणों के लिए अच्छा अवशोषक है तो ओजोन छोटी तरंग-दैर्ध्य की किरणों के लिए। इनके आनुपातिक परिवर्तन से ही पृथ्वी का ताप ठंडा व गर्म होता रहता है। वायुमंडल में ओजोन की मात्रा में परिवर्त्तन अत्यधिक खाद, प्रसाधन सामग्री और हवाई जहाजों के क्लोरीन व नाइट्रोजन छोड़ने से होता है। १७ मार्च ७८ को दिल्ली में भयंकर चक्रवात (बवडर) के पहले और बाद में इस क्षेत्र में रेडियो धर्मिता अधिक पायी गयी थी।

धूल का उत्पात

वायु-मंडलीय धूल भी कुछ कम उत्पाती नही हैं। उत्तर-भारत की गर्मियों में प्रति वर्ग मील साढ़े पांच टन बोझ की धूल उड़ा करती है। धूल के उड़ने की मात्रा में अगर किसी प्रकार की कुछ कमी हो जाए तो राजस्थान पानी की बूंद के लिए यों न तरसे, क्योंकि यह धूल-भरी आंधी सूर्य किरणों को परावर्तित कर देती है।

मिट्टी का परावर्त्तन

जब-जब किसी भूमि से पेड़ों को काटकर अनावृत किया जाता है। तब-तब प्रकृति इसका बदला भीषण बाढ़ के रूप में देती है। आजकल 'चिपको आंदोलन' के अंतर्गत हिमालय के वन सभी पत्र-पत्रिकाओं में चर्चा के विषय हैं क्योंकि उत्तर-भारत जुलाई-अगस्त '७८ में भीषण बाढ़ का शिकार हुआ था। पेड़ोंवाले क्षेत्र से मिट्टी अधिक परावर्त्तक होती है। साथ ही कच्चे पहाड़ों को वृक्ष अपनी जड़ों से दृढ़ता देते हैं।

नाभिकीय परीक्षण

ब्रिटेन के आर्थर मेकिस परमाणु बंब को ही भारी वर्षा का कारण मानते हैं। हाल की खोजों से भी यह स्पष्ट हो चुका है कि न्यूक्लियर रिएक्टर से पैदा होनेवाले रासायनिक धुएं से मौसम बदल रहा है।

ऐसी विषम परिस्थितियों में भी भारत के प्रसिद्ध मौसम शास्त्री पी. के. दास आश्वस्त हैं कि जब हमारी उपग्रह-तकनीक और अधिक प्रगति कर लेगी, तब वायुमंडल के ताप-संतुलन से हम मानसून की दशा पहचान लेंगे।

१/६ शांति निकेतन, मोती बाग-१
नयी दिल्ली-२१

केरल की ऐतिहासिक कथाओं के स्रोत

● डॉ. विश्वनाथ अय्यर

चेरमान पेरुमालों के शासनकाल में भी केरल में अनेक बड़े-छोटे प्रदेश उनके अधीन थे किंतु पूरे केरल की शासक सत्ता के सामने सिर उठाने की हिम्मत किसी में नहीं रही। पेरुमाल शासन का युग समाप्त होते ही देश के छोटे-बड़े प्रमुख राज्याधीश अपनी सत्ता जमाने के लिए अधीर हो उठे। परस्पर संघर्ष प्रारंभ हुआ। चेर राज्यवंश से बंधुत्व रखनेवाले एक व्यक्ति को आगे चलकर कोटुंगलूर और कोचीन के राज्याधिकारों की प्राप्ति हुई।

उत्तर केरल के छोटे राज्याधीशों में साहसी व राज्यलोभी कालिकट-नरेश पड़ोसी राज्यों को हराकर, लाल आंखें दिखाकर और हर संभव उपाय से अपने राज्याधिकार को बढ़ाते चले गये। शीघ्र ही केरल का लगभग आधा भाग उनके अधिकार में आ गया। चेरमान पेरुमाल के ही एक बंधु को कोडुङल्लूर का राज्याधिकार मिला। वे वन्नेरी नामक भू-भाग के भी अधिकारी थे। मगर सामूतिरि की बढ़ती भुजाओं ने उनके हाथ से वन्नेरी छीन ली। कोडुङल्लूर को भी खतरे का स्थान बना दिया। अब वे नरेश दक्षिण आये और अपने बंधुवर इटप्पल्लिनरेश को दिये कोचीन टापू को अपना सुरक्षित आवास बना लिया। इसी तरह कोचीन रियासत का श्रीगणेश हुआ।

पथ-प्रदर्शक

कोचीन के दक्षिण में और आसपास भी छोटे-छोटे राजा व रियासतें थीं—वटक्कुंकूर, तेक्कुंकूर, अंपलप्पुपा और कायंकुलम आदि। दक्षिणतम केरल के पद्मनाथपुरम नामक स्थान पर वेणाट राजघराने के राजकुमार प्रभुता बढ़ाते आ रहे थे। उनका शासनाधिकार तिरुवनंतपुरम तक था। उस राजवंश में मार्तांड वर्मा नामक अतिशय प्रतापी चंद्रगुप्त-तुल्य शासक हुए। उनको ऐसे ही दलवा

(दीवान) रामय्यन मिले। दोनों के कठोर परिश्रम और सूझबूझ से ट्रावनकोर रियासत सुदृढ़ बन गयी। ट्रावनकोर व कोचीन दोनों रियासतें भारत में बहुत-सी बातों में पथ-प्रदर्शक बनीं।

फिर भी कोचीन अपनी भौगोलिक विशिष्टता और अपना स्वतंत्र अस्तित्व कायम कर सका। सामूतिरि का राज्य अंगरेज कंपनी के अधीन हो गया और बाद में मलबार में शामिल किया गया। सामूतिरि को वार्षिक पेंशन दी गयी। पालघाट जैसे अन्य राज्यों के राजाओं की भी यही हालत हुई। कोचीन नरेश व ट्रावनकोर नरेश ने ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी से लिखित समझौता किया।

इतिहास की धूपछांह में

इतिहास की इस धूपछांह में प्रत्येक राज्य में कितनी ही घटनाएं हुई होंगी, उनका वर्णन जनता और कथाकार अपनी प्रतिभा के अनुसार जोड़-तोड़कर या बढ़ा-चढ़ाकर करते भी रहे। ऐसी अनेक कहानियां केरलीय जनकथाओं के रूप में प्राप्त हैं। इनमें कथा की सरसता के लिए काफी रोचक बातें जोड़ी भी गयी होंगी।

ट्रावनकोर और कोचीन का रूपायन और विकास मुश्किल से तीन सौ वर्ष पुराना है। अंगरेज कंपनी की छत्रछाया में ही दोनों रियासतें आधुनिक ढंग का विकास पा सकीं। ट्रावनकोर के संस्थापक मार्तंडवर्मा नामक राजा थे। कोचीन के शासकों में सबसे सबल शक्तन तंपुरान थे।

इतिहास के वीर पात्रों के व्यक्तित्व को कई अप्रिय घटनाएं कलंकित भी करती हैं। सम्राट अकबर इसके उदाहरण हैं। मतलब यह कि शक्तन तंपुरान की शासन कथा में कुछ मुसलमानों को कठोर दंड देने का वर्णन है, एक गौड़ सारस्वत को भी। ऐसी घटनाएं अतिरंजित हैं या सच्ची, इसका पता लगाना कठिन है। पर ये कथाएं जल्दी लोगों में फैल जाती हैं।

विशिष्ट व्यक्तियों की कथाएं

मंदिरों, तीर्थों से संबंधित एवं इतिहास पर आश्रित——दोनों श्रेणियों के बाद विशिष्ट व्यक्तियों के अतिशय अद्भुत व्यक्तित्व को प्रमाणित करनेवाली कथाएं उल्लेख योग्य हैं।

केरल के दार्शनिक महापुरुषों की स्पष्ट परंपरा जगद्गुरु शंकराचार्य से प्रारंभ होती है। शंकराचार्य का-सा यश आगे किसी अन्य केरलीय को नहीं मिला। अतः उनकी कथाएं बहुत-सी हैं। संभवतः शंकराचार्य की ये कथाएं केरल की नहीं, संपूर्ण भारत की हैं। वररुचि की कथा केरल की प्रमुख जनकथा मानी गयी है। दक्षिणी कथाधारा के अनुसार केरल के एक वेदपारंगत ब्राह्मण ने विधाता की इच्छा से एक चांडालिन कन्या से ब्याह किया। उनके बारह संतानें हुईं। इनमें कुछ विद्वान, कुछ ज्योतिषी, कुछ निम्न जातिवाले और कुछ तिरस्कृत जातिवाले

हुए। एक का मुंह ही न था, जिसे पिता वररुचि ने एक गांव में मंदिर बनवाकर प्रतिष्ठित कराया। इसी प्रकार विल्वमंगल की कथा केरलीय जनकथा संग्रह में मिलती है। विल्वमंगल बंगाल में भी प्रसिद्ध हैं। वैष्णवों के अग्रणी विल्वमंगल सूर के पथ-दर्शक तक कहे जाते हैं।

केरल के संतकवि एमुत्तच्छन, पूंतानम, मेल्पत्तूर भट्टातिरि आदि की तो कई कथाएं घर-घर में प्रसिद्ध हैं। केरल में बीसवीं सदी के प्रारंभ में भी श्रीनारायण-गुरु और चट्टंपिकल-जैसे साधु हुए। इनकी अद्भुत सिद्धियों की कथाएं बहुत प्रसिद्ध हुई हैं।

साधारण जनता के बीच में भी युग-युग में कुछ विशेष व्यक्तित्व जन्म लेते हैं। इनमें कुछ समाज द्वारा तिरस्कृत होने पर गलत रास्ता पकड़ लेते हैं, पर होते हैं दिल के अच्छे। केरल में वीर साहसी कायंकुलम कोच्चुण्णी हुए थे, जो डाकू का पेशा करते थे। उनकी चतुराई और उदारता की कथाएं प्रसिद्ध रही हैं। इसी प्रकार अपनी अद्भुत मांत्रिक शक्ति से अमर बने कटमट्टत्तु कत्तनार केरल में हुए। चाक्काट के कुंजायित मुसलियार मसखरे थे, जादू-टोने में कुशल भी। इनके दार्शनिक गीत भी प्रसिद्ध हुए। विनोदी प्रकृति के और एक विशिष्ट उदाहरण मुट्टस्सु नंपूतिरि थे।

जातिगत विशेषताएं व विलक्षण आचार

खास-खास व्यक्तियों के पीछे प्रचलित कहानियों की चर्चा अभी तक की है। आगे केरल में चर्चित कुछ जातिगत, समाजगत या खास उपजाति एवं संप्रदाय की कथाएं भी विचारणीय हैं।

केरल के नंपूतिरि पुराने जमाने में बड़े धनी थे। उन वैदिक वृत्तिवाले लोगों का जीवन, भोजन एवं लिबास सरल था। उनमें कुछ लोग बड़े विद्वान, साहित्यकार, ज्योतिषी और वैद्य भी थे।

ज्योतिष

ज्योतिष का केरलीय जनजीवन पर बड़ा प्रभाव रहा है। वाक्य और परल्पेरु केरलीय ज्योतिष-प्रणाली के अंग हैं। परल्पेरु कटपयादि संख्या से संबंधित है और विद्वानों का मत है कि कटपयादि केरल में ही प्रचलित थी। हर आदमी ज्योतिष की कुछ-न-कुछ जानकारी रखता था। विशेषतः यहां 'गणक' नामक उपजाति ही हुई। इसके लोग परंपरागत संपत्ति के रूप में ज्योतिष-विद्या पाते थे। यह प्रवृत्ति ज्योतिष के समान वैद्यक, मांत्रिक आदि के क्षेत्रों में भी मिलती है। ज्योतिष की महत्ता इतनी थी कि रोगी की दवा करने के पहले ज्योतिष परीक्षा की जाती थी कि ग्रह-दशा कैसी है, किस ग्रह की पूजा करनी है, आदि। कुछ लोगों के मतानुसार आर्यभट्ट केरलीय ही थे। यहां आर्यभटीय प्रणाली प्रारंभ में रही। बाद में यहां के विद्वानों ने सम्मिलित रूप से परहित पद्धति की उद्भावना की। इस धारा के अनेक ग्रंथ लिखे गये, कुछ संस्कृत में और कुछ मलया-

म-मणिप्रवाल धारा में। कालांतर में परहित पद्धति में कमियां देखकर हग्-पद्धति का विधान हुआ। इसी को केरलीय ज्योतिषी मानते रहे। बीसवीं सदी में ज्योतिषी परमेश्वरन नंपूतिरि ने 'गणित निर्णय' नामक पद्धति की उद्भावना की जो काफी त्रुटिरहित मानी जाती है। इसी के अनुसार वे वार्षिक पंचांग तैयार करते हैं।

मंत्र-तंत्र

ज्योतिष से घनिष्टता रखनेवाली तंत्रविद्या और मंत्र-विद्या केरल की दो विशिष्ट उपलब्धियां हैं। केरल के मंदिरों की आनुष्ठानिक उपासना-विधि में वेद के मंत्रों की प्रणाली के साथ तांत्रिक प्रणाली का भी समन्वय है। तांत्रिक में मुद्रा का ही महत्व है। यहां बड़े मंदिर के मुख्य पुजारी को तंत्री की उपाधि दी जाती है। यह पद प्रायः वंशपरंपरागत भी रहा है। ग्यारह तंत्री परिवार केरल में प्रसिद्ध रहे हैं।

यक्षी कथाएं

केरल के प्रत्येक प्रसिद्ध मंदिर में मूल देवताओं का मुख्य गर्भगृह होता है। जैसे-शिवजी, विष्णु, दुर्गा आदि का। इनके अलावा छोटे-छोटे और मंदिर भी बड़े प्रांगण में मिलते हैं। इनमें कुछ बड़े मूल देवताओं की छत्रछाया में सेवक की तरह रहनेवाले ग्राम देवताओं के लिए होते हैं।

केरल में यक्षी विशेष उल्लेखनीय है। यहां यक्षी एक धोखेबाज दुर्देवी है। वह पुरुषों का खून पीनेवाली है। चांदनी रात को निर्जन स्थानों पर वह खड़ी रहती है। उसका अप्सरा-सा रूप इतना मादक लगता है कि कोई भी आसानी से उसकी रूपाग्नि को समर्पित हो जाएगा। पर उसकी पीठ का हिस्सा खोखला रहता है। अतः वह पीठ कभी नहीं दिखाती। जब कोई शिकार दिखायी पड़ता है, तब यक्षी किसी उपाय से यात्री को अपनी तरफ आकृष्ट करती है। यह यक्षी मंत्रसिद्धि पाये लोगों की गुलाम बनी रहती है। स्वयं अदृश्य रहती हुई, अपने स्वामी के लिए कई प्रकार की सहायता एवं चमत्कार भी करती है।

कई लोग अपना जन्म दिन भूल जाते हैं, परंतु शादी की तारीख नहीं भूलते... ऐसा क्यों?
दर्दनाक घटनाएं अधिक समय तक याद रहती हैं!
अशोक ससीमाल
5-8-79

केरल में कई छोटे-छोटे उपदेवताओं और दुर्देवताओं के नाम मिलते हैं। इनके नाम एवं स्थान स्थानीय बोली में बदलते रहते हैं। माटन, मरुता आदि के नाम आर्यों के आगमन के पहले के द्राविड़ दुर्देवताओं के हैं।

आयुर्वेद को समृद्ध बनाने में केरल का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। कहा जाता है कि वाग्भट के शिष्य केरल आये थे और यहां बस गये। अष्टांगहृदय की प्रसिद्ध व्याख्या शशिलेखा के लेखक इंदु केरलीय माने जाते हैं। आयुर्वेद, सिद्धवैद्य आदि किसी न किसी वैद्य शाखा की थोड़ी-बहुत जानकारी रखनेवाले हजारों लोग यहां हुए हैं। केरल की आयुर्वेदिक प्रणाली में वातचिकित्सा, मर्मचिकित्सा, पंचकर्म-चिकित्सा, बाल चिकित्सा आदि का विशेष महत्व माना गया है।

आयुर्वेद की लोकप्रियता के कारण केरल के प्रसिद्ध अष्टवैद्य, चतुर्वैद्य, मूर्ख-वैद्य आदि विविध प्रकार की वैद्य संबंधी कथाएं केरल में प्रचलित हैं।

गज कथाएं

केरल की जनकथाओं में ऐतिह्यमाला के रचयिता श्री कोट्टारत्तिल शंकुण्णी ने कई हाथियों की कथाएं विशेष रूप से लिखी हैं। केरल हाथियों का पालना है।

अब भी केरल के मंदिरों के उत्सव की गंभीरता हाथियों की संख्या और शान पर निर्भर है। इसका स्पष्ट प्रमाण केरल के प्रसिद्ध नगर तृश्शूर के मंदिर के पूरम उत्सव में भी मिल सकता है, जहां बीस-बीस हाथी शोभायात्रा में भाग लेते हैं। केरल की गजकथाएं नाम से कई छोटे कथासंग्रह तक प्रस्तुत किये जा सकते हैं।

केरल की तरह अन्य प्रांतों में भी एतिह्य कथाएं होंगी ही। उनके भी स्रोत इसी प्रकार धर्म, इतिहास, परंपरा, मानवीय प्रकृति आदि में ढूंढ़ सकते हैं। केरल की ऐतिह्य कथाओं की तुलना अन्य प्रांतों की ऐतिह्य कथाओं से करने पर कई समान सूत्र भी अवश्य दृष्टिगत होंगे। अतएव सांस्कृतिक साम्य-वैषम्य एवं उनका आधार आदि का अध्ययन करने को थोड़ी-सी सहायक सामग्री इससे मिल जाएगी। इस दृष्टि से केरल की ऐतिह्य कथाएं एक तरफ सामान्य पाठकों के मनोरंजन का साधन हैं, तो दूसरी तरफ प्राचीन सांस्कृतिक इतिहास के पक्ष को ज्योतिर्मय बनानेवाले दीपक हैं।

—अध्यक्ष, हिंदी विभाग,
कोचीन विश्वविद्यालय, कोचीन

नाटिंघम चिड़ियाघर का गोस्टा नामक हाथी एक दिन एक बैंक में बचत-खाता खोलने पहुंचा। कहना न होगा कि चिड़ियाघर का मालिक उसके साथ था। 'हाथी के लिए बचत?' पूछने पर मालिक ने कहा, 'इसे साथी की जरूरत है। गोस्टा को मैं बैंक इसीलिए लाया हूं कि लोग उसके अकेलेपन पर तरस खाकर उसके बचत-खाते में रकम जमा करने लगें।'

कादम्बिनी

लोहे के फेफड़े में कैद संपादक

• प्रभा भारद्वाज

एक संपादक, अस्पताल का एक कमरा और एक पत्रिका का संपादन! कोई संपादिका एक-दो दिन से नहीं, १५ वर्षों से निरंतर अस्पताल के कमरे से संपादन कर रही हो, है न आश्चर्य की बात! लेकिन है यह सत्य—घटना इटली के जेनोवा नगर के एक अस्पताल के कमरे की है। उस कमरे में कुछ विशेषज्ञ सप्ताह में एक बार मिलते हैं। उनकी बातचीत का विषय दवाइयां या इलाज कतई नहीं होता। अस्पताल के कमरे में दवाइयों की चर्चा न हो, आखिर क्यों? वे डॉक्टर हों, तब न! उनमें से कतई कोई डॉक्टर नहीं है। फिर वे सब क्यों आकर मिलते हैं? इसके लिए आइए, आपको मिलवाएं 'दि अदर्स' पत्रिका की अपाहिज संपादिका रोजन्ना बेंजी से।

रोजन्ना बेंजी पिछले १५ वर्षों से इटली के इसी अस्पताल के इसी कमरे से इस पत्रिका का संचालन कर रही हैं।

रोजन्ना बेंजी जब १४ वर्ष की बच्ची थी तभी वह पोलियो की शिकार हुई। बहुत इलाज करवाया, लेकिन कोई लाभ नहीं हुआ। दुर्भाग्य के काले साये ने उसको आ घेरा, और वह पक्षाघात की मरीज बनकर अस्पताल की चहारदीवारी में कैद हो गयी। अस्पताल का घुटनभरा वातावरण और दवाइयां—यही उसका जीवन हो गया था।

धीरे-धीरे उसने स्वयं को व्यवस्थित किया और अस्पताल में ही अध्ययन शुरू कर दिया। इस प्रकार अपने ठहरे हुए जीवन को थोड़ी गति प्रदान की।

उदास और मायूस, अपने जीवन के बोझ से थकी-थकी बुरी तरह टूट गयी थी वह। एक भयावह नैराश्य उसके दिलो-दिमाग पर छाता जा रहा था। तभी एक दिन उसकी निराशा के काले बादल को चीरती हुई मानो एक बिजली कौंध गयी। एक सुनहरे विचार ने जन्म लिया कि क्यों न वह अस्पताल से ही किसी पत्रिका का संपादन करे और वह भी ऐसे लोगों के लिए, जो उसी की तरह अपंग और निराश हो चुके हैं। उसने वहीं कुछ छायाकारों, कलाकारों और लेखकों को निमंत्रित किया। उनसे विचार-विनिमय के बाद

उसने तय किया कि वह एक पत्रिका अवश्य निकालेगी, चाहे उसके रास्ते में कितनी भी बाधाएं आयें। उसने पत्रिका को नाम दिया 'दि अदर्स'।

गले से लेकर फेफड़े तक का उसका शरीर पक्षाघात से पीड़ित था। उसको जीवित रखने के लिए लोहे का फेफड़ा उसके शरीर में लगाया गया है ताकि उसकी श्वास की गति बंद न हो जाए। लेकिन इसी जर्जर शरीर और लोहे के फेफड़े में कैद होने पर भी उसकी प्रबल इच्छा-शक्ति उसे कुछ कर गुजरने की प्रेरणा देती है।

पिछले १५ वर्षों से वह इस पत्रिका का संपादन कर रही है। इसकी प्रसार संख्या लगभग ५,००० है।

इस पत्रिका को चलाने के लिए प्रायः वह रेडियो या टेलीविजन से सूचनाएं प्राप्त करती है। रोजाना मिलनेवाले लोग भी उसके ज्ञान को बढ़ाने में सहायता करते हैं।

पहले-पहल तो उसको यह काम कठिन लगा, लेकिन धीरे-धीरे उसने उन समस्याओं पर विजय प्राप्त कर ली। उसने अपनी योजना को कुछ परिचित पत्रकारों के आगे रखा। उन्होंने उसको यथोचित प्रोत्साहन दिया, स्वयं तो उसमें योगदान देने के लिए वचन दिया ही, कुछ ग्राफिक आर्टिस्ट, मेकअपमैन और प्रिंटर्स को भी उसकी पत्रिका में योगदान देने के लिए राजी कर लिया। उन्होंने उसकी पत्रिका में बिना पारिश्रमिक के काम करना स्वीकार कर लिया और जब तक पत्रिका भलीभांति न चल पड़े, तब तक किसी भी प्रकार की राशि लेने से इनकार कर दिया।

रोजन्ना बेंजी लोगों से टेलीफोन पर इंटरव्यू लेती है और उसका भाई उसके लेखों को टाइप करता है।

रोजन्ना का कहना है कि उसकी पत्रिका में अधिकतर समस्याएं अपाहिज लोगों की ही रहती हैं। उसकी पत्रिका के पाठकों में अधिक संख्या भी ऐसे ही लोगों की है। लेकिन कुछ समस्याएं ऐसे लोगों की भी रखी जाती हैं, जो सामाजिक रूप से अपंग हो चुके हैं, दूसरे शब्दों में किसी कारणवश जिनका समाज ने बहिष्कार कर दिया है। अभी तक तो इस पत्रिका के लिए 'पार्टटाइम' (अल्पकालिक) स्टाफ की ही आवश्यकता महसूस हो रही थी। लेकिन पत्रिका की लोकप्रियता को देखते हुए अब शायद 'फुल टाइम' (पूर्णकालिक) स्टाफ की आवश्यकता हो।

रोजन्ना का विचार है कि यदि उसकी पत्रिका और भी चर्चित हुई तो हो सकता है कि उसे अस्पताल के इस छोटे-से कमरे से पत्रिका को चलाना कठिन हो जाए।

खैर, भविष्य में कुछ भी हो, लेकिन अभी तो रोजन्ना अपने लोहे के फेफड़े को एक दिन में केवल कुछ ही घंटों के लिए हटा सकती है, और वह भी उसकी 'व्हील-चेयर' में लगी एक मोटर से, जिसमें

पोर्टेबल रेसपिरेटर' (जेबी श्वसन-यंत्र) लगा हुआ है।

उसका अधिकांश जीवन अस्पताल की चारपाई पर सिर को पीछे डाले हुए, लेटे-लेटे ही बीता है। उसके सिर के ऊपर बड़ा-सा शीशा लगा है, जिसमें वह सामने और आसपास बैठे लोगों को देख सकती तथा उनसे बातचीत कर सकती है, क्योंकि वह अपने सिर को हिला-डुला नहीं सकती।

जब रोजन्ना से पूछा जाता है कि वह इस तरह सीधे लेटे-लेटे संपादकीय सहयोगियों से बातचीत कैसे कर लेती है, तब वह मुसकराते हुए कहती है, "यह तो बहुत आसान है। सब लोग मेरे इर्द-गिर्द बैठ जाते हैं। मैं सिर पर लगे शीशे में उनकी प्रतिच्छाया देखती रहती हूं, और उनके प्रश्नों के जवाब देती रहती हूं। इस तरह मेरा उनसे संपर्क बना रहता है।"

किसी के यह पूछने पर कि वे अपने क्षति-ग्रस्त शरीर के कारण कभी निराश हुई हैं? वैसी अवस्था में कभी पत्रिका बंद कर देने की सोचती हैं?

उत्तर में रोजन्ना बेंजी का कहना था, "नहीं! कभी नहीं, बल्कि कभी-कभी मुझे स्वयं पर आश्चर्य होता कि मैं यह काम कैसे कर रही हूं! मैं यह सोचकर खुशी से भर जाती हू कि मेरा जीवन इतना मजेदार तथा रोमांचक न हुआ होता और न ही मुझे अपने जीवन से इतनी संतुष्टि प्राप्त होती, यदि मैं इस अपंगता का शिकार न हुई होती। पत्रिका बंद होने का तो प्रश्न ही नहीं उठता, वही तो मेरा जीवन है। मेरे दिल की धड़कनों के बंद होने के साथ ही उसका बंद होना संभव है, अन्यथा नहीं!" ●

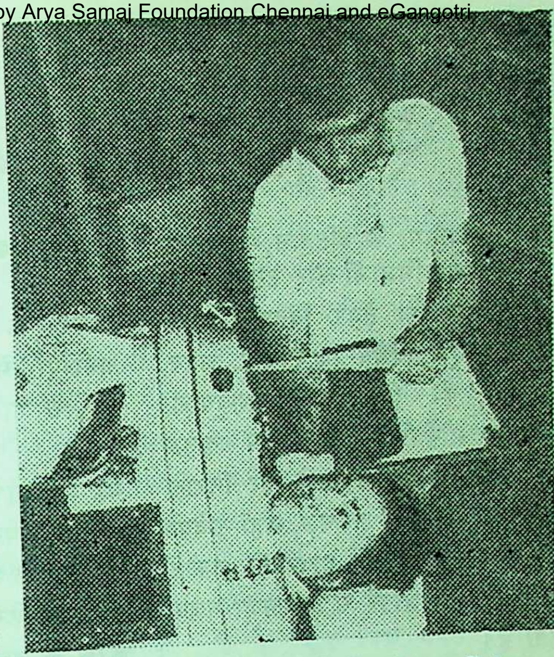

मशीनी फफड़े में कैद-रोजन्ना बेंजी

तुआतारा एक आदिम रेंगनेवाला जीव है। कहते हैं, उसके मस्तक पर तीसरी आंख भी होती है।

एक शहर सदाबहार नजाकत का

● संगमलाल मालवीय

समूची दुनिया के इतिहास में लखनऊ की रंगीनमिजाजी और उसकी पुरातन तहजीब का तेवर बिलकुल अलग रहा है। एक विशेष शिष्टाचार, अदब, नजाकत की मिलीजुली खुशबूवाली सदाबहार भौगोलिक पौध का नाम लखनऊ है। हिंदुस्तान की सरजमीं पर निराले अंदाज का शहर है लखनऊ, जहां सदियों बाद भी भूली-बिसरी यादों की लकीरें अतीत के भव्य आईने में तरोताजा नजर आती हैं।

अवध के नवाबों का इतिहास सन १७३२ से प्रारंभ होता है। इससे पूर्व सन १५९० में अकबर ने लखनऊ में एक सूबेदार की नियुक्ति की थी। यहां का राजकाज मुगल बादशाहत के अंतर्गत था, लेकिन लखनऊ के नवाबों का इतिहास यहां के रंगीनमिजाज सूबेदार नवाब वाजिदअली शाह के नाम से दूर-दूर तक जाना जाता था। नवाब शुजाउद्दौला के बाद उसका बेटा आसफुद्दौला अवध की गद्दी का वारिस बना। मृत्यु से कुछ समय पूर्व शुजाउद्दौला ने फैजाबाद को अपनी राजनीतिक गतिविधियों का केंद्र बनाया था। सरयू नदी का सुहावना तट और भगवान राम की जन्मभूमि 'अवध' के नाम से विख्यात वर्तमान अयोध्या में फैजाबाद का इलाका भी शामिल था।

हम फिदाये लखनऊ

यह बात सच है कि दिल्लीवालों का हर क्षेत्र में अपना रुतबा रहा है। कालांतर में दिल्ली के रईसों और अमीरों को लखनऊ की शरण लेनी पड़ी। यह समय औद्योगीकरण के उत्तरोत्तर फैलाव का युग था। औद्योगिक विस्तार और कल-कारखानों की यांत्रिक गूंज के शुष्क वातावरण से लखनऊ अभी मुक्त था। दिल्ली-दरबार के नामी-गरामी रईसों को लखनऊ का शांतिमय जीवन भा गया। दिल्ली-दरबार की तहजीब लखनऊ की आबोहवा को रास आ गयी। सोने को सुहागे की जरूरत थी। शीघ्र ही लखनऊ सारे भारत में एक विशाल सांस्कृतिक, साहित्यिक एवं राजनीतिक गतिविधियों का केंद्रस्थल बन गया। 'लखनवी' शब्द सभ्यता के पर्याय का प्रतीक बन गया।

लखनवी अदब : पहले अवध की शानो-शौकत के दिनों में क्या मजाल था, कि कोई अभावग्रस्त पड़ोसी

या दोस्त मदद के बिना दम तोड़ दे।

लखनऊ में दोस्ती के किस्से भी बड़े मशहूर रहे हैं। अतिथि-सत्कार के लिए भी लखनवी सदैव से ही मशहूर रहे हैं। लखनऊ की सोसाइटी के तौर-तरीके सभ्य समाज में फैशन के तौर पर पेश किये जाते थे। मधुर मुसकान लिये जब मेजबान अतिथि का स्वागत करते हुए अदब से थोड़ा झुकता था, तो उसका बड़प्पन बढ़ जाता था। ऐसा रिवाज घर के वातावरण से ही शुरू होता है। मदरसे में इसकी शिक्षा नहीं दी जाती। अगर किसी मेहमान (या अजनबी) के साथ कहीं जा रहे हों तो साथवाले को प्राथमिकता देना एक फर्ज माना जाता था। लखनऊवाले आज भी अपनी इस 'पहले आप' की आदत के लिए दूर-दूर तक जाने जाते हैं, लेकिन जब दो लखनवी साथ-साथ हों तो 'पहले आप' के बाद दूसरा व्यक्ति भी 'पहले आप' कहने से नहीं चूकता था। जो भी आगे बढ़कर पहल करता, उसे बदले में 'तसलीम' कहकर स्वीकार करना शिष्टता मानी जाती थी।

खानदानी तेवर और पुरानी आनबान

नवाबशाही का गढ़ ध्वस्त जरूर हो गया लेकिन उनका रुतबा काफी दिनों तक बरकरार रहा, पर एक समय ऐसा भी आया जब पैसे-पैसे को मोहताज हो गया। उनसे जुड़े आश्रित परिवारों को दर-दर भटकने और भीख मांगने की नौबत आ गयी। उदारमना और दिलो-दिमाग से बादशाह लखनऊ के ये नवाब अभी भी खानदानी ठसक के तेवर में स्वयं को जिंदा रखे हुए थे। उनके घर की बेशकीमती वस्तुएं विश्वासपात्र नौकरों की मदद से पानी के भाव नक्खासों के बाजारों में बिकने लगीं। पुरानी शानो-शौकत को बरकरार रखने में नवाबों के ये वंशज बिक गये। लोगों ने इसे आडंबर कहा, लेकिन कुछेक ने खानदानी तेवर बतलाया। लखनऊ का अतीत यहीं पर रजवाड़ों से अलग हो जाता है।

लखनऊ में शाही तवायफों का चलन नवाब शुजाउद्दौला के समय से माना जाता है। नवाब वाजिदअली शाह के समय में यह रिवाज काफी बढ़ चुका था।

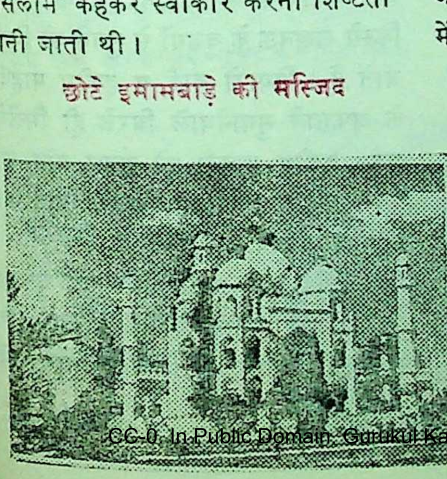

छोटे इमामबाड़े की मस्जिद

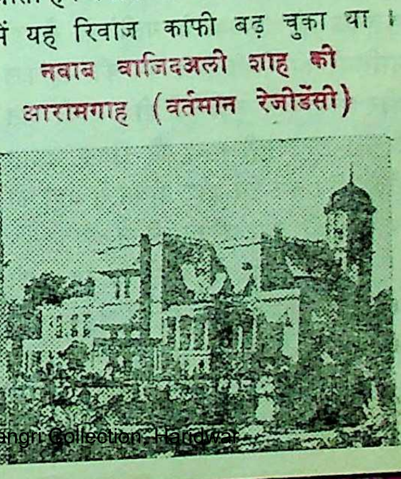

नवाब वाजिदअली शाह की आरामगाह (वर्तमान रेजीडेंसी)

लखनवी तवायफों के कोठे किसी शाही दरबार से कम न होते थे। ऐशो-आराम, तड़क-भड़क और नौकर-चाकरों का काफिला इन कोठों की रौनक से जुड़ा होता था। सुसंस्कृत और सभ्य कहलाने के लिए तवायफों की महफिल में बैठना तत्कालीन लखनऊ की शान-शौकत से जुड़ा हुआ था। लेकिन कालांतर में इन कोठों से लखनऊ का नैतिक पतन प्रारंभ होने लगा।

एक ओर जहां लखनऊ की तवायफों ने कला और संगीत के क्षेत्र में लखनऊ का मान-सम्मान और रुतबा बढ़ाया है तो दूसरी ओर ऐसी तवायफों का भी पूरा काफिला यहां मौजूद था, जिनकी जुल्फों के साये में बैठकर सुकून पानेवाले लोगों का वर्ग भी यहीं की सरजमीं पर फल-फूल रहा था। अवध की विलासिता एवं नैतिक पतन का अंतिम दौर नवाब वाजिदअली शाह के समय में चरम-बिंदु पर पहुंच चुका था।

फूलों के गजरे में दिल की धड़कनें

लखनऊ की 'फूलवाली गली' के सैकड़ों मालियों की रोजी-रोटी रूप की महफिल और बाजार से जुड़ी हुई थी। आधी रात के बाद फूलवाली गली की रौनक जवान होती थी। रूप-रंग और यौवन में यहां की मालिनें भी कम रौबवाली न थीं।

"ताजे फूलों के गजरे में दिल की धड़कनें पिरोकर रख देती थीं जनाब यहां की मालिनें! ये सब तो कल की बातें हैं। मुझे अपनी जवानी के दिन और बचपन याद है। यहीं इस खादिम की जिंदगी गुजर गयी। एक से एक खरीदार आये थे कभी यहां। अब तो उस जमाने की तहजीब के नाम का 'व्यापार' हो रहा है।" बूढ़े माली ने कच्ची बर्फ-सी सफेद दाढ़ी पर आहिस्ता-आहिस्ता हाथ फिराया और खामोश हो गया।

लखनऊ की चंद नामी-गरामी तवायफों की महफिलें तो किसी शाही रंगमहल से कम न होती थीं। आम आदमी तो इनकी महफिलों के बस सपने देख सकता था। ऐसी विख्यात नगरवधुओं की परंपरा में चौधराइन हैदरजान को 'अवध की शान' कहा जाता था, जिनकी महफिलें 'शाही क्लब' का रुतबा पा चुकी थीं।

इन महफिलों में सामाजिक शिष्टाचार की शिक्षा लेने के लिए विशेष तौर पर शाही घरानों के लोग भेजे जाया करते थे। इन नगरवधुओं के दस्तरख्वान भी कम मशहूर न थे। नाजुकमिजाजी और वफादारी में भी इनके अनेक रोचक किस्से लखनऊ के बुजुर्गों से सुनने को मिल जाते हैं। पियारो बाई व हकीम माहदी के अफसाने सुनानेवाले बिरले ही मिलेंगे अब। हकीम माहदी को अवध प्रांत का प्रथम वजीर बनाने में पियारो बाई का बहुत बड़ा हाथ था।

चाय की पहली दुकान

यूरोप और अमरीका-जैसे क्लब और सोसाइटी बनाने का रिवाज भारत में

अंगरेजी राज्य की देन है। अपनी पुस्तक 'दि लास्ट फेज ऑफ ऐन ओरियंटल कल्चर" में मौलवी अब्दुल हलीम शरर लिखते हैं कि अंगरेजों ने काफी रुपया खर्च करके हिंदुस्तान में चाय की दुकानें कई शहरों में खुलवायीं, किंतु पहले दौर में भारतीयों को चाय का अभ्यस्त ये न बना पाये। काफी दुकानें खुलीं और जल्द ही बंद हो गयीं, लेकिन सन १८७८ में जनाब मीर मोहम्मद हुसैन (रिटायर्ड कृषि एवं व्यापार निदेशक) ने काफी साज-सज्जा और सरकारी मदद से एक 'टी-हाउस' चलाने को कोशिश की। दुकान चौक इलाके में खोली गयी। यह दुकान लखनऊ में चाय की पहली दुकान थी। खूबसूरत फर्नीचर और शीशेदार शो-केसवाली यह दुकान बड़ी तड़क-भड़क एवं प्रचार के साथ शुरू की गयी, लेकिन लखनऊवालों के लिए चाय का यह सबसे पहला अड्डा कोई आकर्षण पैदा न कर सका। मीर साहब ने उस सस्ती के जमाने में अच्छी-खासी रकम खर्च करके एक बड़ा आर्थिक नुकसान उठाया। फलतः उन्हें दुकान को हमेशा-हमेशा के लिए बंद कर देना पड़ा। बाद में वे हैदराबाद चले गये, लेकिन आज चाय के अड्डे घर-घर आबाद हो रहे हैं।

शतरंज की शह-मात

लखनऊ के नवाबों, अमीरों, रईसों और ताल्लुकेदारों की नजर में समय की कीमत-जैसी कोई बात न थी। राजकाज की दीन-दुनिया से दूर मुगल बादशाहों के ये लखनवी नवाब कभी कबूतर उड़ाते तो कभी मुरगे लड़ाते। तीतरबाजी, पतंगबाजी और शतरंज की शह-मात पर ये मरने-जीने लगे। तवायफों की महफिलें और घुंघरुओं की रुनझुन पर सांस लेनेवाले अवध के रंगीन-दिल नवाब वाजिदअली शाह के समय में तो लखनऊ के रंगमहल पूरी तरह आबाद थे। नवाब के साथ-साथ यहां के रईसों और ताल्लुकेदारों ने भी वही ढर्रा अपनाया।

उत्थान-पतन

लखनऊ के अंतिम नवाब वाजिदअली शाह १३ फरवरी, सन१८४७ ईसवी को गद्दीनशीन हुए। अवध के अन्य नवाबों

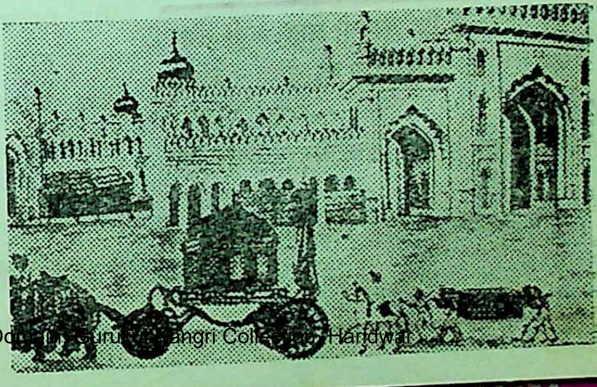

हाथियों द्वारा खींचे जानेवाले रथ पर सवार मोहम्मदअली शाह

की तुलना में वाजिदअली शाह के समय में लखनऊ के कला-जगत का सर्वाधिक विकास हुआ, किंतु अय्याशी की पराकाष्ठा से अवध का पौरुष कांतिहीन हो चुका था।

इस तरह एक दौर आया जब फिरंगियों ने अवध के पौरुष को ललकारा, लेकिन देर हो चुकी थी। लखनऊ ब्रिटिश फौजों से घिर चुका था। ब्रिटिश फौजों के आगे भारतीय सैनिक टिक न सके।

लखनऊ पर अंगरेजों का कब्जा हो चुका था। अंगरेजों द्वारा वाजिदअली शाह को कैद करके मटियाबुर्ज (कलकत्ते में) भेज दिया गया।

मटियाबुर्ज में वाजिदअली शाह की विलासिता का दौर-दौरा कम न हुआ। यहीं पर नवाब ने एक जवान किंतु खूबसूरत पनिहारिन से अस्थायी शादी (मुताह) की। इस पनिहारिन को लखनऊ के इस बेताज नवाब द्वारा 'बेगम नवाब–ए–रस्म' का खिताब दिया गया। 'हर हाईनेस दि लेडी वाटर प्रवाइडर'— जैसी अनेक 'अस्थायी शादियां करने की 'रस्म' का फायदा नवाब ने उठाया।

वह वक्त है कि आदमी आता नहीं नजर
जब तक कि उसके साथ का साया न देखिए
—जफर इकबाल

परत-परत है हर इक चेहरा प्याज की मानिंद
बहुत दिनों से कोई आदमी नहीं देखा
—मौहम्मद आजम

कलकत्ते में अनेक खूबसूरत पार्क बनवाने का श्रेय लखनऊ के शौकीन-मिजाज नवाब वाजिदअली शाह को दिया जा सकता है। कलकत्ते का चिड़ियाघर भी इसी नवाब द्वारा बनवाया गया था। जिसका जिक्र सुविख्यात लेखक अब्दुल हलीम शरर ने अपनी पुस्तक 'दि लास्ट-फेज ऑव एन ओरियंटल कल्चर' में किया है। मटियाबुर्ज में रहते हुए नवाब ने एक और रंगीन लखनऊ की सृष्टि कर ली थी। यहां सब कुछ तो था, पर लखनऊ की जमीन और आबोहवा न थी।

जहां नवाब वाजिदअली शाह की विलासिता और अय्याशी के अनेक किस्से रोचक ढंग से लिखे जा सकते हैं—वहीं पर अवध की खूबसूरत स्थापत्य कला, यहां के आकर्षक उद्यानों और इमारतों के निर्माण के साथ-साथ लखनवी सभ्यता तथा तहजीब की शुरूआत का महत्त्वपूर्ण श्रेय इसी अंतिम नवाब को दिया जा सकता है। लखनऊ का विख्यात कलाजगत नवाब वाजिदअली शाह की देन है। हिंदू-मुस्लिम सभ्यता एवं संस्कृति के समन्वय और भाईचारे की वृद्धि करने में इस नवाब द्वारा अभूतपूर्व भूमिका का निर्वाह किया गया। यही कारण है कि होली, दीवाली, ईद और दशहरे के पर्व एकसाथ मिलकर मनाने की परंपरा लखनऊ के गौरवशाली अतीत की देन है।

—आशीर्वाद, १४७, केशव भादुड़ी रोड,
लखनऊ-२२६००१

लखनऊ का इमामबाड़ा

छाया : प्रेमनाथ

लखनऊ में चौधराइन हैदरजान की महफिलें दूर-दूर तक प्रसिद्ध थीं।

छाया : शिवचंद्र

● आशुतोष मुखर्जी

मांजी को देखकर पहले ही दिन लगा था कि इनके साथ कोई न कोई कहानी जरूर जुड़ी है ! और यह बात मैंने सुबल मिसिर से भी कही थी। सुबल मिसिर मेरा बचपन का मित्र है और मैं उसी के गांव में उसका मेहमान हूं।

दो दिन बाद जब मैं सुबल के साथ मांजी से दोबारा मिला, तो सुबल ने मांजी के बेटे-बहु और अन्य लोगों के सामने ही कह दिया कि मेरे ये कहानीकार दोस्त कह रहे थे कि आपकी जिंदगी में कोई न कोई कहानी जरूर रही है।

इस पर सभी ठहाका लगा उठे थे। मांजी के बेटे महानंद घोष और उसकी पत्नी उर्मिला के ओठों पर कौतुकभरी मुसकान उभर आयी। महानंद घोष कलकत्ता का नामी-गिरामी बैरिस्टर है। वह साल में दो बार बीवी-बच्चों समेत मांजी से मिलने यहां आता है। यह बात भी मैंने सुबल मिसिर से ही सुनी थी कि आज जहां 'मातृ-कुटीर' बंगला खड़ा है, पंद्रह साल पहले वहां छोटा-सा मठकोठा भर था। सुना है कि उस जीर्ण-शीर्ण मठकोठे में अपनी बेटी के साथ कोई वृद्ध-ब्राह्मण रहा करते थे।

मांजी मुझे कौतुकभरी निगाहों से कुछ देर निहारती रहीं फिर बोलीं, "हां, कहानी है तो सही ! लिखोगे तुम ?"

लगभग साठ की उम्र। जाहिर था कि अपनी जवानी में बेहद खूबसूरत रही होगी ! मांजी होमियोपैथी की अच्छी डॉक्टर हैं। वह निःस्वार्थ भाव से लोगों की

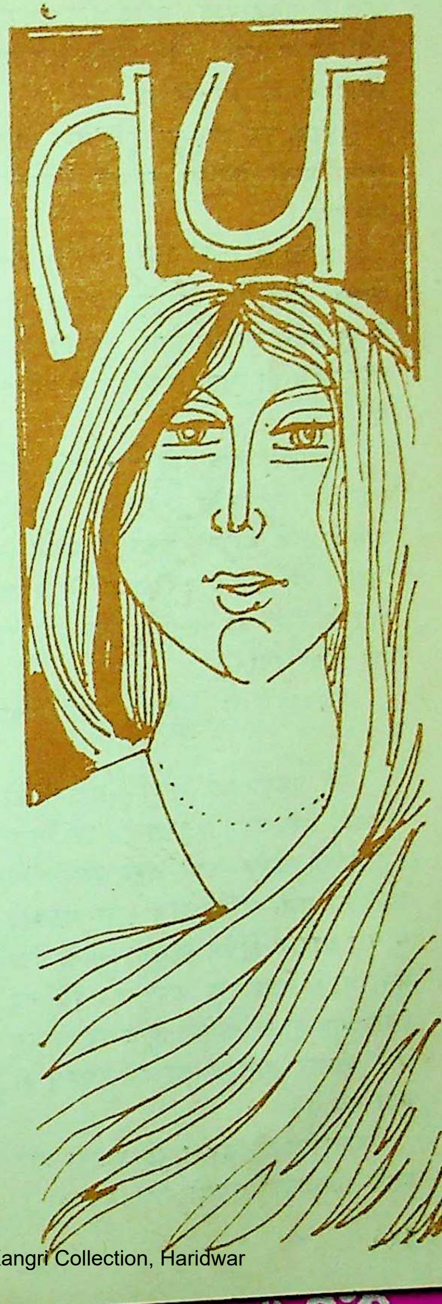

सेवा करती हैं। काफी दूर-दूर से मरीज आते हैं, उनके पास। गरीब और जरूरतमंदों की मददगार और इलाके के हजारों लोगों की भी मां थीं वह।

फिर उस मातृ-कुटीर में मेरा आना-जाना मानो प्रतिदिन का एक नियम-सा बन गया।

मांजी से बातें होतीं। मांजी अगर व्यस्त होतीं, तब बैरिस्टर महानंद घोष से ही बातों का सिलसिला शुरू हो जाता और उनसे भी ज्यादा उनकी पत्नी उर्मिला से।

छुट्टियां खत्म होते ही महानंद घोष सपरिवार कलकत्ता लौट गये। उनके जाने के बाद कहानी लेकर मैं मांजी से मिला। मैंने उन्हें याद दिलाया कि आपने कहा था कि जब कहानी लिख लो तो मुझे दिखा देना।

"अच्छा, तो सुनाओ, क्या लिखा है?"

मैंने पढ़ना शुरू किया——कहानी की शुरुआत इसी जगह से होती है। इस मातृ-कुटीर की जगह कभी यहां जीर्ण-शीर्ण मठकोठा हुआ करता था। उस मठकोठे में वृद्ध ब्राह्मण द्विजेन गांगुली अपनी बेटी मनोरमा के साथ रहा करते थे। वैसे वह अभी प्रौढ़ ही थे, लेकिन हाथ-पैर से पंगु और बीमार होने के कारण असमय ही बूढ़ा गये थे।

मनोरमा की चढ़ती हुई जवानी और इसके अलावा उसकी तेज-मिजाजी! दमकते हुए रूप की वजह से दिलफेंक मजनुओं के जुल्म सहना और तुनकमिजाजी की वजह से अकसर कड़वी परिस्थितियों का सामना करना मानो रोजमर्रा की बात हो गयी।

इतना पढ़कर मैंने एक बार मांजी की तरफ देखा। उनका चेहरा बिलकुल निर्लिप्त और भाव-शून्य था।

मैंने आगे पढ़ना शुरू किया—उस टूटे-फूटे मकान में एक दिन जिस अजनबी के कदम पड़े, वह था कलकत्ते का प्रेमानंद घोष। प्रेमानंद लॉ की अंतिम परीक्षा देने के बाद छुट्टी मनाने अपने सहपाठी रणदा चटर्जी के साथ यहां आया था।

जिस दिन रणदा गांगुली काका से भेंट करने आया, उस दिन प्रेमानंद भी उसके साथ था।

रणदा चटर्जी गांगुली काका की खैरियत पूछते हुए उनके बिछौने के पास ही बैठ गया और अपने-परायों के सुख-दुःख की कहानियां छेड़ बैठा! अजनबी प्रेमानंद घोष की निगाहें उस छाया-मूर्ति के इर्द-गिर्द घूमती रहीं जो आस-पास से गुजरते हुए एकाध झलक दिखा गयी थी।

द्विजेन गांगुली प्रेमानंद घोष का नाम-धाम, लिखाई-पढ़ाई वगैरह के बारे में पूछताछ करते रहे। और उसकी सूरत-शक्ल का गौर से मुआयना कर डाला।

उसे देखकर द्विजेन गांगुली की आंखें चमक उठीं। उन्होंने भी बहाने-बहाने

से एकाध बार मनोरमा को कमरे में बुलाया—कभी चाय-नाश्ता दे जाने के बहाने, कभी खाली प्यालियां ले जाने के बहाने, कभी सौंफ-इलायची दे जाने के बहाने।

उसके जाने के बाद उन्होंने रणदा को संबोधित करके कहा, "भई, मैंने कलकत्ते के पते पर कई चिट्ठियां लिखी थीं कि कोई बढ़िया-सा लड़का बताओ, लेकिन तुमने कुछ नहीं किया। मेरा यह हाल है कि जाने कब बुलावा आ जाए।"

उस दिन कोठी से बाहर निकलते ही प्रेमानंद ने रणदा से खोद-खोदकर पूछना शुरू किया, "मेरा ख्याल है कि ये साहब अपनी बेटी के लिए शायद तुम्हें मांगना चाहते हैं!"

"नहीं, भाई!"

"क्यों? क्या तुम बहुत दुर्लभ हो?"

"नहीं! दरअसल यह लड़की ही मेरे लिए दुर्लभ है। अगर लड़की राजी होती, तब मैं अपने घरवालों के खिलाफ जाकर भी उससे शादी कर लेता।"

"हैरत है? तो क्या लड़की राजी नहीं है?"

"मैंने उसे कभी प्रपोज तो नहीं किया, अगर करूं, तो मैं जानता हूं, वह कभी राजी नहीं होगी। उसमें बस, एक ही ऐब है कि मिजाज की बड़ी तेज है!"

"लेकिन वह राजी क्यों नहीं होगी, क्या तुम उसके लायक नहीं हो?"

"बहरहाल, अगर तुम्हें पसंद हो तो बताओ! द्विजेन काका को आकाश का चांद हाथ लग जाएगा!"

प्रेमानंद का दिल अचानक जोर से धड़क उठा। उसने विस्मय से सवाल किया, "यानी यह लड़की तुम्हारे द्विजेन काका की सगी बेटी नहीं है?'

"नहीं! लेकिन फिर भी उनके लिए बेटी से भी बढ़कर है।" और फिर उस दिन रणदा ने सारा किस्सा कह सुनाया था।

यानी अपनी जवानी के दिनों में द्विजेन गांगुली काफी मस्त-मौला किस्म के इनसान थे। गांजा-शराब के भक्त, नाच-

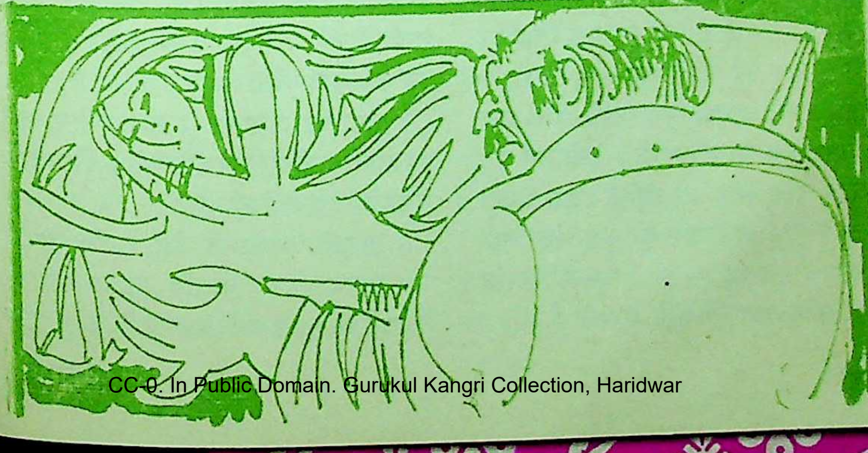

गाने के शौकीन। पैतृक जमींदारी थी जिससे उनका काम अच्छी तरह चल जाता था।

उन्हीं दिनों द्विजेन गांगुली का अचानक किसी अमीर की बेटी पर दिल आ गया। उसे वे सचमुच प्यार करने लगे जबकि वह लड़की उनसे बेहद नफरत करती थी, लेकिन उनके गाने पर फिदा थी। इसीलिए उनके मोह में पड़ गयी। उस लड़की का भाई गांगुली काका का दोस्त था और जात से कायस्थ था। फिर भी गांगुली काका उस लड़की से ब्याह करने को पागल हो उठे। घरवालों को पता चला तो नतीजा यह हुआ कि उसकी किसी अमीर घराने में शादी कर दी गयी और उनसे वह काफी दूर चली गयी।

हताश गांगुली काका अपने नाते-रिश्तेदारों से नाता तोड़कर इस घर में आ बसे। करीब डेढ़ साल बाद, एक सुबह नींद से जागते ही, उन्होंने देखा कि उनके बिछौने पर डेढ़ महीने की एक नन्ही-सी बच्ची पड़ी है। पहले तो उन्हें कुछ समझ नहीं आया। अचानक उनकी निगाह बच्ची की कलाई से बंधी हुई एक चिट पर पड़ी। जिस पर लिखा था—सुनो, मेहरबानी करके बच्ची को अपने पास रख लेना। बेहद निरुपाय थी, इसीलिए इसे तुम्हारे पास छोड़े जा रही हूं। इस घटना के बारे में कभी किसी को कुछ पता नहीं चलेगा। —मणिमाला

मणिमाला ही वही लड़की थी।

गांगुली काका के तो होश उड़ गये। तीन दिन बाद अखबार में छपी खबर में गांगुली काका को पता चला कि मणिमाला ने आत्महत्या कर ली है। गांगुली काका ने उस बच्ची को पाल-पोसकर बड़ा किया। इस बच्ची को लेकर लोगों का कहना है कि वह काका के किसी औरत के साथ किये गये कुकर्म का नतीजा है।

मनोरमा वही लड़की है।

●●

कुछ दिनों में प्रेमानंद का गांगुली काका के घर सुबह-शाम आना प्रतिदिन का नियम बन गया। वह जैसे-जैसे मनोरमा को देखता गया वैसे-वैसे अपने को खोता चला गया।

कलकत्ता लौटने के दसेक दिन पहले प्रेमानंद ने फैसला किया कि वह मनोरमा से विवाह करेगा। इस पर एकमात्र आपत्ति रणदा ने ही उठायी। उसने कहा कि शादी से पहले उसे अपने मां-बाप से बात कर लेनी चाहिए। उसके पिता एक मामूली वकील थे और चाहते थे कि प्रेमानंद की शादी किसी मालदार घराने में हो जिससे वह ढेर सारा पैसे ला सके।

इस पर प्रेमानंद ने कहा, "तब तो यह शादी नहीं हो सकती, क्योंकि पिताजी कभी भी राजी नहीं होंगे!"

गांगुली काका ने प्रेमानंद से सिर्फ एक सवाल किया था कि वह मनोरमा के बारे में सारी बातें जानता है या नहीं,

और यह भी स्पष्ट कर दिया था कि वह उनसे दहेज की उम्मीद न करे। प्रेमानंद ने भी बेहिचक जवाब दिया था कि उसे तो केवल मनोरमा चाहिए।

बिना किसी ताम-झाम के सादगी के साथ दोनों की शादी हो गयी।

जिस दिन प्रेमानंद घोष मनोरमा को लेकर कलकत्ते रवाना होनेवाला था उस रात गांगुली काका ने संदूक में से एक पोटली निकाली। पोटली जब खुली तो प्रेमानंद की आंखें विस्मय से खुली की खुली रह गयीं—पुराने गहनों का अंबार।

पोटली प्रेमानंद को देते हुए गांगुली काका ने कहा, "बीस साल पहले इन गहनों की कीमत बीस हजार थी। अब लगभग ये पैंतीस हजार के होंगे। इन्हें रख लो। संभालकर ले जाना।" ये सारे गहने मनोरमा की मां—मणिमाला के हैं। जिन्हें वह मनोरमा के साथ छोड़ गयी थी।

●●

प्रेमानंद के मां-बाप इस शादी से खुश नहीं थे लेकिन बेहद सुंदर बहू और पैंतीस हजार के गहनों ने उनकी जुबान बंद कर दी।

कुछ महीने तो ठीक-ठाक गुजरे—फिर मनोरमा के तेज-तर्रार स्वभाव ने अपना रंग दिखाया। कभी तो वह ऐसा चंडी-रूप धर लेती कि सभी लोग सकते में आ जाते। धीरे-धीरे घर का माहौल बिगड़ने लगा। इधर रणदा का आना-जाना भी काफी बढ़ गया। ऐसी बद-

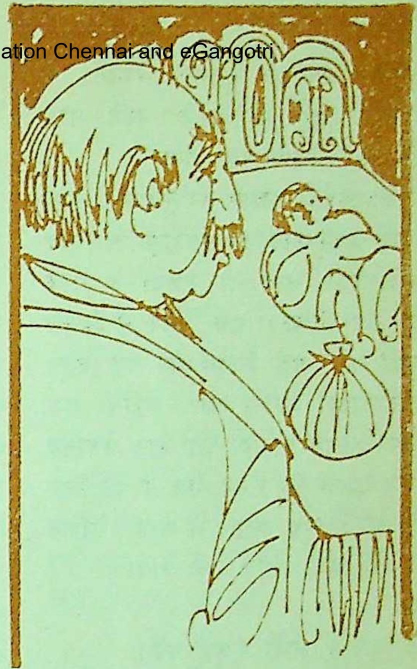

दिमाग और क्रोधी बहू का रणदा से हंसना-बोलना सास-श्वसुर को फूटी आंख नहीं सुहाया। प्रेमानंद के मन में भी शंका पैदा होने लगी। और एक दिन उसने भयंकर रूप ले लिया। प्रेमानंद ने जब जी भरकर गाली-गलौज की तो मनोरमा ने शांतभाव से पूछा, "तुम्हें किस तरह सुख-चैन मिल सकता है, इसका कोई उपाय है?"

"हां, है कि तुम कहीं जाकर मर जाओ, मर सकती हो?"

प्रेमानंद जब शाम को घर लौटा तो पाया, कि मनोरमा घर से गायब है साथ में उसके गहने भी।

दो महीने बाद प्रेमानंद को गांगुली काका का तार मिला कि मनोरमा अब इस दुनिया में नहीं रही। रोना-धोना तो

दूर रहा बाप ने बुलाकर प्रेमानंद से पूछा कि वह जो गहने अपने साथ लायी थी, उनका क्या होगा ?

प्रेमानंद ने रणदा को बुलाकर कहा कि वह आने-जाने का किराया ले जाए और गहने ले आये तो रणदा ने साफ मना कर दिया। तव बाप ने द्विजेन गांगुली को पत्र लिखा कि वह गहने वापस लौटा जाए। चार महीने तक इंतजार करने के बाद इस बार प्रेमानंद ने पत्र डाला कि गहने भेज दें या फिर लिखें तो मैं खुद आकर ले जाऊं। लेकिन फिर भी कोई उत्तर नहीं आया ।

●●

पच्चीस साल गुजर गये।

इस दौरान प्रेमानंद घोष एक मशहूर एडवोकेट वन गये, कार-कोठी, जमीन-जायदाद और ढेरों का बैंक-बैलेंस। लेकिन मन को रत्ती भर भी शांति नहीं।

मनोरमा की मौत के छह महीने के अंदर ही प्रेमानंद ने शादी कर ली, एक मशहूर बैरिस्टर की बेटी सुमित्रा से। पच्चीस साल के दांपत्य जीवन में तीन बेटे भी हो गये, लेकिन पति-पत्नी का मन आज तक नहीं मिला। बाप की अपार दौलत और मां के लाड़-प्यार से तीनों ही लड़के बिगड़ गये।

इन दिनों प्रेमानंद बीमार हैं। पिछले दिनों कोर्ट में ही उन्हें दिल का दौरा पड़ गया था। उनका दिल कमजोर हो चुका है और ब्लड-प्रेशर कभी आंधी की तरह ऊपर चढ़ जाता तथा कभी तूफान की तरह नीचे उतर जाता है। अंदर ही अंदर वह अब दुनिया से विदा लेने की तैयारी कर रहे हैं, जिसका आभास सुमित्रा और उसके बेटों को भी है।

रणदा को बुलाकर प्रेमानंद ने सुमित्रा की मौजूदगी में ही कहा, "बेटों की मंशा है कि मैं अपनी सारी संपत्ति उन्हें संभला दूं, लेकिन वे कैसे लायक बेटे हैं यह तो तुम जानते ही हो। इसलिए मैं आधी सुमित्रा के नाम और आधी में तीनों के बंटवारे की वसीयत कराना चाहता हूं।

सुमित्रा इस बात पर बुरी तरह अचकचा गयी । रणदा ने कोई जवाव देने के वजाय पूछा, "तुमसे कोई मिलने आया था क्या ?"

"नहीं तो। कौन आएगा ?"

"एक लड़का ! आये तो उसी से सुनना कि वह कौन है। अच्छा, मैं चलूं।"

रणदा चले गये । सिर्फ प्रेमानंद ही नहीं सुमित्रा भी आश्चर्य से जम-सी गयी !

●●

अगले दिन प्रेमानंद लेटे हुए थे, सुमित्रा पास ही बैठी थी। नौकर ने खबर दी, "साहब, आप से एक लड़का मिलना चाहता है। कहता है, आप बीमार हैं, इसीलिए आपसे मिलना बहुत जरूरी है!"

"बुला लाओ," उन्होंने कहा।

कमरे में जिसने कदम रखा, उससे निगाहें मिलते ही प्रेमानंद जाने क्यों विमूढ़

रह गये। वह पच्चीस-छब्बीस साल का एक लड़का था। उसके हाथ में चमड़े का एक ब्रीफकेस था। नमस्कार कर वह कुरसी पर बैठ गया। ब्रीफकेस खोलकर उसने एक छोटी-सी पुड़िया निकाली और उसे प्रेमानंद की ओर बढ़ाते हुए कहा, “इसमें एक कवच है, आपकी बीमारी की खबर पाकर मेरी मां ने इसे आपके लिए भेजा है और अनुरोध किया है कि आप इसे धारण करें।

प्रेमानंद कुछेक पल उसकी तरफ एकटक देखते रहे, फिर बोले, “आपकी मां को मेरी बीमारी की खबर कैसे मिली?”

“करीब दो महीने पहले मैं रणदा काकू से मिलने आया था तो मुझे उनसे खबर मिली और मैंने जाकर मां को बताय।”

“तुम्हारा नाम क्या है, बेटे...?”

“महानंद घोष!”

नाम सुनकर दोनों ही चौंक पड़े।

“रणदा से कब का परिचय है?”

“पिछली बार, जब मैं आया था तभी उन्हें पहली बार देखा। बैरिस्टरी पढ़ने विलायत जाना चाहता हूं इसी सिलसिले में उनसे मिला था। वह मेरे पिता के खास दोस्त हैं!”

“तुम्हारे पिता का नाम क्या है?”

“प्रेमानंद घोष।”

सुमित्रा और प्रेमानंद दोनों आवाक् रह गये। ? प्रेमानंद की तो मानो सांस ही कहीं बीच में रुक गयी।

“आप उत्तेजित क्यों हो उठे? शायद, इसीलिए मेरी मां मुझे आपके पास भेजने में हिचकिचा रही थी।

“...लेकिन...वह तो पच्चीस साल पहले मर चुकीं।”

“नहीं, वह मरी नहीं। आपने जो चाहा था, वही उन्होंने तार में लिखवा भेजा था।”

काफी देर तक स्तब्धता छायी रही। प्रेमानंद का निष्क्रिय दिमाग सक्रिय हो अतीत के पर्त-दर-पर्त उघाड़ने लगा... हूबहू अपनी मां का हमशक्ल!...लेकिन

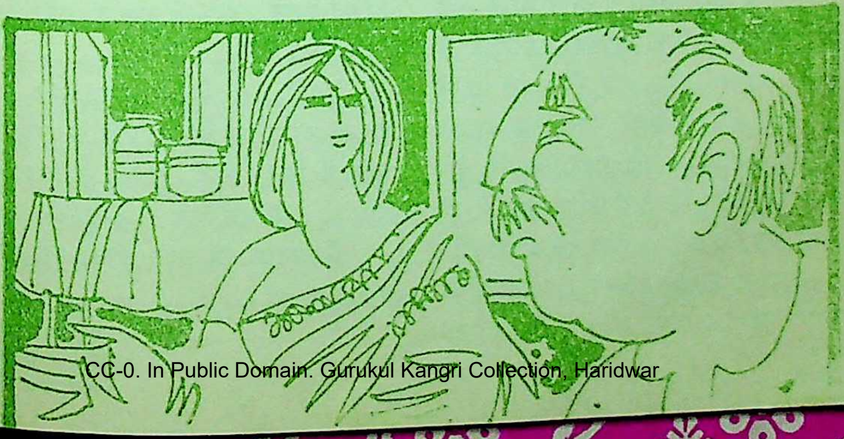

पच्चीस साल बाद अचानक इस कवच के भेजने का मतलब ? इसीलिए कि मैं बीमार हूं या इसलिए कि जायदाद में से इसे भी हिस्सा मिल जाए . . . या फिर इसे विलायत भेजकर बैरिस्टर बनाने में मैं मदद करूं ।

"मैं आपको ज्यादा परेशान नहीं करूंगा", महानंद ने मौन तोड़ते हुए कहा और बैग खोलकर एक बड़ा-सा पैकिट निकाला । उसे उनके आगे रखते हुए कहा, "यह लीजिए, इसमें आपके सारे गहने मौजूद हैं । मेरी मां ने मास्टरी करके मुझे पढ़ाया-लिखाया है, इसमें से एक भी गहना खर्च नहीं किया ।"

प्रेमानंद को प्रचंड आघात-सा लगा । बोले, "ये गहने तुम्हारी मां ने भेजे हैं ?"

"जी, हां ! इन गहनों के लिए ही तो आपने खत लिखे थे ! मां उस वक्त गुस्से में थीं, इसीलिए नहीं भेजे ।"

". . . और आज मुझसे बदला लेने के लिए भेजे हैं ?" प्रेमानंद थरथराये ।

पलभर को खामोश रहने के बाद महानंद बोला, "नहीं, ये गहने मां ने नहीं भेजे, बल्कि उनकी इच्छा समझकर मैं ही ले आया हूं । जब विलायत जाने के लिए मैंने ये गहने मांगे, तब मां ने बताया कि ये उनके नहीं, आपके हैं । मुझे इन गहनों का दोबारा लोभ न हो जाए, इसलिए इन्हें आपको देने आया हूं ।"

इतना कहकर उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना वह उठ खड़ा हुआ, और नमस्ते करके लौट पड़ा । लेकिन लौटते समय उसे उनका आर्त-स्वर सुनायी देता रहा । वह सुमित्रा से कह रहे थे, "देख लिया, सुन लिया न ? लो, ले जाओ और इन्हें अपने बेटों को दे दो । मेरे पास तो सिर्फ यह कवच रहने दो । समझी ?"

● ●

"बस", मांजी ने कहा ।

मैंने उनकी तरफ देखा । वे निस्पंद-सी बैठी हुई थीं । अचानक ही जोरदार आवाज में उन्होंने अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की, "तुमने सुमित्रा के प्रति पक्षपात किया है । उसके दिल में बहुत जहर भरा था । वह बेटों पर भी विश्वास खो बैठी थी और चाह रही थी कि पति सारी वसीयत उसके नाम ही कर जाएं ।"

मैंने कहा, "आपने ये सारी बातें रणदा से ही सुनी होंगी, लेकिन सुनी-सुनायी बातें कभी-कभी पूरी तरह सच नहीं हुआ करतीं ।"

कुछ देर खामोश रहने के बाद वह बोली, "कहानी कमोबेश ठीक ही है । लेकिन इसमें जरा-सी भूल हो गयी है ।"

"क्या ?"

"यही कि मैं मनोरमा नहीं हूं । वह तो भाग्यवान थी जो पति के रहते ही, मांग में सिंदूर लिये, दुनिया से विदा हो गयी । . . . मैं अभागिन तो—सुमित्रा हूं ।"

मैं अवाक रह गया, मानो मुझे काठ मार गया हो ।

—अनु. : सुशील गुप्ता

एक सांस में ढाई मन की खीर

• शक्तिप्रकाश रावत 'सम्राट'

वह सात फुट लंवे थे और शक्ति में साक्षात भीम। उनके सारे शरीर में मानों फौलाद ही फौलाद भरा था। उन्हें लोग पंडित जोरजी तिवारी के नाम से जानते थे। उत्तर प्रदेश के फतेहपुर सीकरी के निवासी पंडित जोरजी तिवारी उन दिनों आसपास के इलाके में खूब चर्चित थे। उनकी ताकत व कद की चारों ओर चर्चा थी।

वात उन दिनों की है, जब जोरजी अपनी भरपूर तरुणावस्था में थे। एक दिन प्रातः विधवा मां ने अपने इकलौते पुत्र जोरजी को बताया कि वह आज एक-दो पड़ोसियों के साथ तीर्थयात्रा के उद्देश्य से हरिद्वार जाना चाह रही हैं।

मां ने जोरजी के हाथों में कुछ रुपये सौंपकर टिकट लाने को कहा। इस पर जोरजी ने हठ किया कि उन्हें भी इस काम के बदले कमीशन के रूप में कम से कम दो रुपये मिलने चाहिए। उस जमाने में दो रुपयों की काफी कद्र थी। गरीब मां बेटे की फरमाइश पूरी न कर सकी। नतीजा यह हुआ कि यात्रा पर जानेवाले पड़ोसी घर से रवाना हो गये और मां अपने बेटे की हठधर्मिता के कारण घर पर मन मसोसकर रह गयी।

तीस सेर लड्डू एक दिन में खा लिये

जव अंवेरा हुआ, तव मां ने जोरजी को वहुत धिक्कारा व उनके आगे दो रुपये फेक दिये। बस, जोरजी को क्या चाहिए था। वह उन रुपयों को लेकर सीधे बाजार की ओर लपक पड़े। उस समय के भावों के अनुसार दो रुपयों के तीस सेर लड्डू आते थे सो तीस' सेर लड्डू धोती में गांठ वांधकर, जोरजी घर लौटे।

घर पर मां अपने बेटे के व्यवहार से बड़ी व्यथित बैठी थी। जोरजी ने घर पर आते ही मां के सामान्य प्रयोग में आ सकने योग्य सामान की एक गठरी वांधी। मां उनकी सारी हरकत देख रही थी ...; देखते ही देखते जोरजी ने मौन बैठी नाराज मां को अपने कंधों पर उठा लिया और चल पड़े पैदल ही रास्ता नापने ! लंवे-लंवे डग भरते हुए वह सकुशल फतेहपुर से हरिद्वार जा पहुंचे ! उन्हें देखकर वे सभी लोग दंग रह गये, जो उनसे लगभग बारह घंटे पूर्व रवाना हुए थे। तीस सेर लड्डुओं

का वजन और उस पर मां के शरीर का बोझ ! मार्ग में जहां भूख सताती, जोरजी बीस-पच्चीस लड्डू उदरस्थ कर लेते और फिर दौड़ पड़ते !

इन दिनों फतेहपुर में नामी पहलवान घूरजी शुक्ल की काफी शोहरत थी। इनके पिता जोरजी के श्रद्धास्पद व्यक्तियों में से एक थे।

एक दिन पंडित जोरजी की इन नामी पहलवान से मुलाकात हो गयी। मिलते ही दोनों ने अभिवादन के लिए हाथ मिलाये। भावावेश में जोरजी ने शुक्ल के हाथ पर अनजाने से हलका-सा अधिक दबाव डाल दिया। पहलवान शुक्ल के मुख से चीख निकल गयी, उनकी अंगुलियों से खून रिस रहा था . . .। चीख सुनते ही जोरजी ने झटके के साथ उनका हाथ छोड़ दिया। अपने इस साधारण 'प्रेम-प्रदर्शन' के परिणाम को देखकर पंडित जोरजी तिवारी ने उसी वक्त उनसे क्षमा-याचना की। यही नहीं, उन्होंने फौरन घूरजी शुक्ल के पिता के पास जाकर भी क्षमा-याचना की। प्रायश्चित करने के लिए जोरजी ने पहलवान मित्र को दूसरे दिन अपने यहां भोजन करने का निमंत्रण भी दे दिया।

पहलवान के स्वागत में जोरजी ने तीन मन दूध की खीर बनायी। जव उसे परोसा गया तो घूरजी शुक्ल को पसीना आने लगा। बमुश्किल ठूंस-ठूंसकर वह अधिकतम १५ सेर खीर ही पी सके। शेष सारी खीर जोरजी कड़ाह पर मुंह लगाकर, एक सांस में ही डकार गये।

एक खेल ताकत का भी

मित्रों के कहने पर वह मनोरंजन के तौर पर अकसर ताकत का एक खेल दिखाया करते थे। एक भरे-पूरे व स्वस्थ ऊंट की पीठ पर आठ मन का बोझ लाद दिया जाता था। खेल दिखाने से पूर्व उसका मुंह किसी एक निश्चित दिशा, जैसे पूर्व की ओर कर दिया जाता था। जोरजी अब उस पूरे ऊंट को मय बोझसहित अपने हाथों से उठाकर उसका मुंह पश्चिम की ओर कर देते थे।

एक अन्य घटना है, जो इनकी मानवेतर शक्ति का परिचय देती है। एक बार फतेहपुर में किसी बेड़ीधारी पराक्रमी पहलवान का आगमन हुआ। इसका तीन मन वजन था और अपने से आधे वजन की लौह जंजीर अपने शरीर पर बांधे, वह बेखटके घूमता था। जमीन पर घिसटती हुई उन लंवी-लंवी बेड़ियों पर यदि किसी का पैर पड़ गया, तो उसे पहलवान के साथ कुश्ती लड़ने के लिए तैयार होना पड़ता था। यही शर्त थी।

किसी सड़क पर घूमते हुए उस पहलवान की बेड़ियों पर अनजाने में एक युवक का पैर पड़ गया। फिर क्या था? पहलवानजी एकदम अकड़ गये और ताल ठोककर वहीं सड़क पर ही उस बेचारे युवक को कुश्ती लड़ने का निमंत्रण देने लगे। आसपास अच्छी-खासी भीड़ लग

गयी । सभी उस पहलवान को समझाने की कोशिश करने लगे ।

संयोगवश, उसी जगह पंडित जोरजी तिवारी भी उपस्थित थे । उन्होंने जब देखा कि पहलवान किसी भी प्रकार नहीं मान रहा है तब वह आगे बढ़े . . . । सभी लोग जोरजी को पहचानते थे । वे कौतुहलवश जोरजी की ओर देखने लगे । सबके सामने ही उन्होंने पहलवान की कमर को एक हाथ से पकड़ा और बेड़ियों समेत उस साढ़े चार मन के वजन को आकाश में टांग दिया ।

पंडित जोरजी तिवारी का नाम आसपास के इलाके में इस कदर व्याप्त था कि खूंख्वार डाकू भी उनसे भय खाते थे । एक बार की बात है, पंडितजी जंगल के रास्ते से कहीं जा रहे थे । अकस्मात रास्ते में डाकुओं की एक टुकड़ी ने उन्हें चारों ओर से घेर लिया । डाकुओं का सरदार "गिरा दे . . . . . . गिरा दे"—कहता हुआ जोरजी के सामने आ डटा (यह "गिरा दे" शब्द घटनास्थल के आसपास के क्षेत्र का प्रमुख शब्द है, जिसका अर्थ है, 'जो कुछ भी पास में हो उसे जमीन पर फेक दिया जाए')।

घरवाली की चूड़ियां गिरती हैं

जोरजी ने शांत भाव से कहा, "देख मेरे भाई, मर्दों के लिए दो ही चीजें गिरती हैं, एक तो घरवाली की चूड़ियां और दूसरी शरीर की हड्डियां । इसलिए यदि तू अपनी पत्नी से पूछकर आया है, तब तो आ . . . और पहले अपनी ओर से पूरी ताकत लगाकर संतोष कर ले । ताकि फिर दुनिया यह न कहे कि जोरजी ने मौका दिये बिना किसी के प्राण ले लिये . . . ।"

जैसे ही दस्युराज ने जोरजी का नाम सुना, उसे गश आ गया । वह चकराकर घड़ाम से गिर पड़ा, पर उसके बाकी साथी किसी तरह गिरते-पड़ते वहां से भागने में सफल हो गये ।

ऐसे विराट बलशाली पुरुष का देहावसान आज से लगभग ३१ वर्ष पूर्व हुआ । उनके जीवन के कई किस्से-कहानियां आज भी आसपास के इलाकों में बच्चों,बूढ़ों व युवकों की जुबान पर मौजूद हैं । तीस-तीस व्यक्तियों की ताकत रखनेवाले जोरजी ताकत में जितने ऊंचे थे, स्वभाव में भी वे उतने ही विनम्र थे। उनकी विनम्रता के कारण ही दूर-दूर तक के लोग उन्हें आदर और सम्मान की दृष्टि से देखते थे ।

—शक्ति निवास, सिद्धबली मार्ग,
कोटद्वार, गढ़वाल

पश्चिमी देशों के गुप्तचरों की आशंका है कि सोवियत संघ ने संसार का पहला अंतरिक्ष-युद्धयान बनाने में काफी सफलता प्राप्त कर ली है। १८ टन वजनी 'कोस्तोकोट' नामक यह अंतरिक्ष-यान जब पृथ्वी के कक्ष में पहुंच जाएगा तो पश्चिमी देशों के 'आंख-कान' समझे जानेवाले तमाम उपग्रह व्यर्थ हो जाएंगे।

नक्षत्र और आपका भविष्य--१

● पं. पुनर्वसु

शुक्र के विषय में आचार्य वराह मिहिर ने लिखा है—कुमुद के फूल-सी आभावाला यह ग्रह अगर किसी के जन्म चक्र में विकार रहित हो, तो जिंदगी के सब क्षेत्रों में विजय देता है। मूल रूप में शुक्र गृहस्थ-जीवन में सुख और विलास का कारक है, मगर साथ ही इसे कूटनीति से भी जोड़ा गया है। शुक्र अगर अशुभ स्थिति में हो, तो जातक प्रेम-प्रसंगों में अधिक रुचि लेता है। और अगर दो क्रूर ग्रहों से घिरा हो, तो रज और शुक्राणुओं में दोष पैदा करता है। यवन जातक के अनुसार, अनेक स्त्रियों से संपर्क रखनेवाला राजा द्वारा सम्मानित, मीठा बोलनेवाला, शुक्रप्रधान व्यक्ति धनी और विलासी होता है।

लग्न में शुक्र

लग्न में शुक्र अगर मेष, सिंह अथवा धनु राशियों का हो और अन्य ग्रहों से दृष्टि न हो, तो विवाह होते-होते व्यक्ति की आयु तीस तक पहुंच जाती है। कहते हैं, धनु का शुक्र तो पैंतीस वर्ष में पत्नी देता है। वृषभ का शुक्र सुंदर पत्नी तो देता है, मगर उसकी प्रवृत्तियां चिंता का कारण बन सकती हैं। मिथुन अथवा कुंभ में व्यक्ति एक पत्नीनिष्ठ होता है। कन्या के शुक्र में अपनी ही पत्नी से असंतुष्ट रहने की प्रवृत्ति होती है। ऐसे लोगों की प्रवृत्ति अविवाहित रहने की भी होती है। कन्या के शुक्रवाले अधिकांशतः स्त्रियों से घिरे देखे गये हैं। कन्या शुक्र की नीच राशि है। फलतः वह छोटी-बड़ी सभी तरह की स्त्रियों को आर्कषित करता है। मकर का शुक्रवाला व्यक्ति बहुत लड़कियां देखभाल कर अंततः शादी किसी साधारण-सी स्त्री से करता है। तुला का शुक्र दो विवाह करवा सकता है। कर्क और वृश्चिक राशियों में एक से अधिक स्त्रियों का सुख मिलता है। मीन का शुक्र कीर्ति के साथ-साथ अमीर और रूपवती स्त्रियों के संपर्क का अवसर प्रदान करता है। मेष, सिंह अथवा धनु का शुक्र अगर द्वितीय भाव में हो, तो आदमी जुआ, सट्टा और लाटरी में धन पाता है। मिथुन का शुक्र द्वितीय में व्यापार द्वारा अच्छा पैसा दिलवाता है। वृषभ, कन्या और मकर के शुक्रवालों को खुद ही धन कमाना पड़ता है। पैतृक संपत्ति न के बराबर मिलती

है। ऐसे लोगों की पत्नी दुर्बल और अकसर रोग-ग्रस्त देखी गयी हैं। तुला का शुक्र द्वितीय भाव में अप्रत्याशित धन दिलवाता है। कर्क, वृश्चिक और मीन में यह शुक्र अगर द्वितीय भाव में हो, तो कविता, चित्रकला, गायन आदि द्वारा अक्षय कीर्ति मिलती है। कुंभ के शुक्र से गूढ़ विषयों में जाने की प्रवृत्ति होती है। अड़तीसवें वर्ष में आकस्मिक धन एवं यश लाभ होता है। इस शुक्र द्वारा पुत्र होने में कठिनाई होती है। अगर पुत्र हुआ तो कारोबार ठीक नहीं चलता।

तृतीय स्थान में शुक्र अशुभ

तृतीय स्थान का शुक्र शुभ नहीं माना गया। यह शुक्र अगर मेष या वृश्चिक का होकर तीसरे भाव में हो कई तरह की विपत्तियां लाता है। वृषभ के शुक्र से कामुकता बहुत ज्यादा होती है। कर्क का शुक्र विवाह में जल्दबाजी करवाता है। मिथुन और कन्या के शुक्रवालों को इस स्थिति में गंभीर और विदुषी स्त्री की तलाश होती है। सिंह का शुक्र धनवान पिता की कन्या दिलवाता है, जबकि तुला का शुक्र विजातीय स्त्री से विवाह करने की प्रवृत्ति देता है। धनु और मीन में यह शुक्र व्यभिचारी बनाता है। ऐसे लोग अपनी पत्नी से मात्र शरीर-सुख के आकांक्षी होते हैं। मकर और कुंभ का शुक्र अगर तृतीय भाव में हो तो स्त्री-सुख कम मिलता है, पत्नी की मृत्यु भी हो सकती है।

भाग्योदय का सूचक शुक्र

चतुर्थ स्थान में शुक्र विवाह के बाद भाग्योदय करता है। वृषभ या तुला का शुक्र-चतुर्थ स्थान में स्थावर संपत्ति के लिए अशुभ है, क्योंकि व्यक्ति ऐसी स्थिति में बहुत विलासी हो जाता है। मेष अथवा वृश्चिक का होकर यह शुक्र माता के लिए बुरा माना गया है, अगर जीवित रही तो हमेशा बीमार रहेगी। हालांकि ऐसे लोगों को स्त्रियों से काफी लाभ होता है। कर्क का शुक्र इस स्थान में हृदयरोग भी पैदा कर सकता है, जबकि सिंह का शुक्र पित्त में विकार देता है। मिथुन, कन्या के शुक्र से स्वतंत्र व्यापार करने की प्रवृति होती है। मगर सफलता कम मिलती है। धनु, मीन के शुक्र से आदमी में परमार्थ का भाव पैदा होता है। जबकि मकर, कुंभ के शुक्र से विदेशी लोगों में मन अधिक रमता है। मकर का शुक्र चतुर्थ भाव में ख्याति देता है।

पंचम स्थान में शुक्र

पंचम का शुक्र संतान की दृष्टि से भाग्यशाली माना गया है। मगर यह शुक्र वृषभ, तुला का हो, तो संतान सुंदर और प्रतिभावान होती है। मेष के शुक्र से नाटक और मिथुन के शुक्र से नयी साहित्यिक विधाओं में गहरी रुचि होती है। कन्या का शुक्र इस स्थान में कम उम्र की स्त्रियों के प्रति राग पैदा करता है, जबकि वृश्चिक में विदेश-सेवा आदि के अवसर देता है। धनु के शुक्र से विद्या

पैरिस ब्यूटी की एक और भेंट

पैरिस ब्यूटी

कॉटन निटिड क्लॉथ व नायलॉन पेंटीज

काटन पैंटीज

शालिनी (रिब्बड फोम)	10.15
शालिनी रिब्बड (इला. लेस)	8.40
शालिनी रिब्बड	6.45
किरन (नेट क्लॉथ)	7.00
रेशमा प्रिंटिड (कलर)	6.00
रेशमा प्रिंटिड (सफेद)	5.25

नायलॉन पैंटीज

सुमन (नायॅलान)	• •12.00
निशा (नायॅलान नेट)	• •11.00
डिम्पल (टेरालीन)	• •12.00
कामिनी (टेरालीन नेट)	• •11.90

मुलायम और आरामदेह। पहनने में नया व सुखद अनुभव।

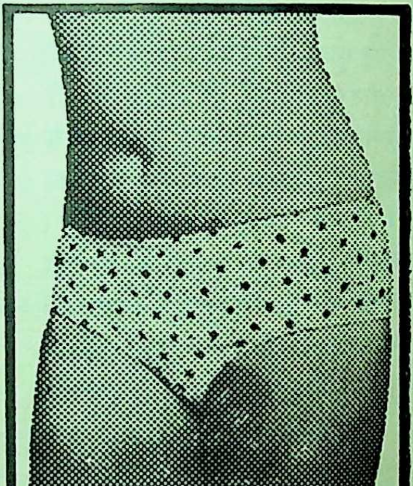

वितरक

पैरिस ब्यूटी सेल्स कार्पोरेशन

बीडनपुरा, अजमल खां रोड, नई दिल्ली-110005 फोन : 566594

TRENDS

अधिक न भी हो तो भी व्यक्ति विद्वान लगता है। मकर के शुक्र से नीच और ओछी स्त्रियों से संपर्क के अवसर आते हैं। पुत्र-पुत्रियों की ओर से हमेशा चिंता के अवसर आते हैं। मीन के शुक्र से अकसर पत्नी वंध्या अथवा रोगग्रस्त रहती है। वह द्विभार्या योग भी होता है। पंचम में सिंह, कर्क के शुक्र से उन्नीस-बीस की आयु में तीव्र कामेच्छा पैदा करता है।

शुक्र और पश्चिमी ज्योतिर्विद

छठवें स्थान का शुक्र पश्चिम के ज्योतिर्विदों के अनुसार बढ़िया माना गया है। यह शुक्र अगर वृषभ, तुला या मकर में हो तो पत्नी बहुत सुंदर मिलती है, कन्या में कुछ-कुछ झगड़ालू होती है। मेष में कर्ज बढ़ता है, जबकि सिंह में धन अधिक देता है। कर्क में कफ विकार अकसर तग करता है। मिथुन में यह शुक्र शत्रु-वृद्धि करता है। वृश्चिक और धनु में एक से अधिक विवाह हो सकते हैं। कर्क, वृश्चिक या मीन में व्यभिचार की प्रवृत्ति होती है। मकर, कुंभ में अपनी पूंजी द्वारा किया गया व्यापार सफल नहीं होता। ऐसे लोगों को साझेदारी भी महंगी पड़ती है।

सप्तम भाव में शुक्र का फल

सप्तम भाव शुक्र के लिए बलवान माना गया है। यह शुक्र अगर वृषभ में हो तो पत्नी विलासी होती है। मेष और मिथुन में पत्नी कुछ-कुछ मर्दाना स्वभाव की होती है। तुला में शुक्र होने से पत्नी पति पर रोब और उसे दबाकर रखने का प्रयत्न करती है। कन्या में यह शुक्र आदमी को तरह-तरह की स्त्रियां दिलवाता है। सिंह या कुंभ में यह शुक्र हो तो पत्नी बहुत मोटी हो सकती है। वृश्चिक में पति की काम-वासना से दुःखी हो जाती है। धनु में विदुषी और मकर में चालाक पत्नी मिलती है। मीन के शुक्र से इस स्थिति में बड़े धनवान घर की पत्नी मिलती है।

आठवें भाव में शुक्र

आठवें भाव में शुक्र वासना में तीव्रता उत्पन्न करता है। मेष, वृश्चिक में यह शुक्र विद्वता देता है। कुंभ में इस शुक्र द्वारा कोई स्थायी अनूठा संस्थान स्थापित करने की प्रवृत्ति होती है। वृषभ, तुला में पत्नी बड़े अभिमानी स्वभाव की मिलती है। जबकि कर्क, कन्या में मृदुल स्वभाव की। मिथुन में यह शुक्र लड़ाकी पत्नी देता है। सिंह में इस शुक्र द्वारा पुत्रों से झगड़ा होता है, यही बात मकर राशि के बारे में भी है। धनु, मीन में यौन-संबंधी रोग होते हैं। मीन के शुक्र के अष्टम स्थान में बैठने से व्यक्ति विदेश-यात्रा निश्चय ही करता है। कुंभ मीन के शुक्र से परित्यक्ता स्त्रियों से संबंध के अवसर आते हैं। कर्क का शुक्र अगर अष्टम में हो तो आदमी शराबी, और वृश्चिक के शुक्र से अफीम, भांग, गांजा आदि खाने-पीने का दुर्व्यसन पाल लेता है।

नवम में शुक्र

नवम भाव में शुक्र के फल विद्वानों ने शुभ बताये हैं। वृषभ में यह शुक्र कन्याएं अधिक

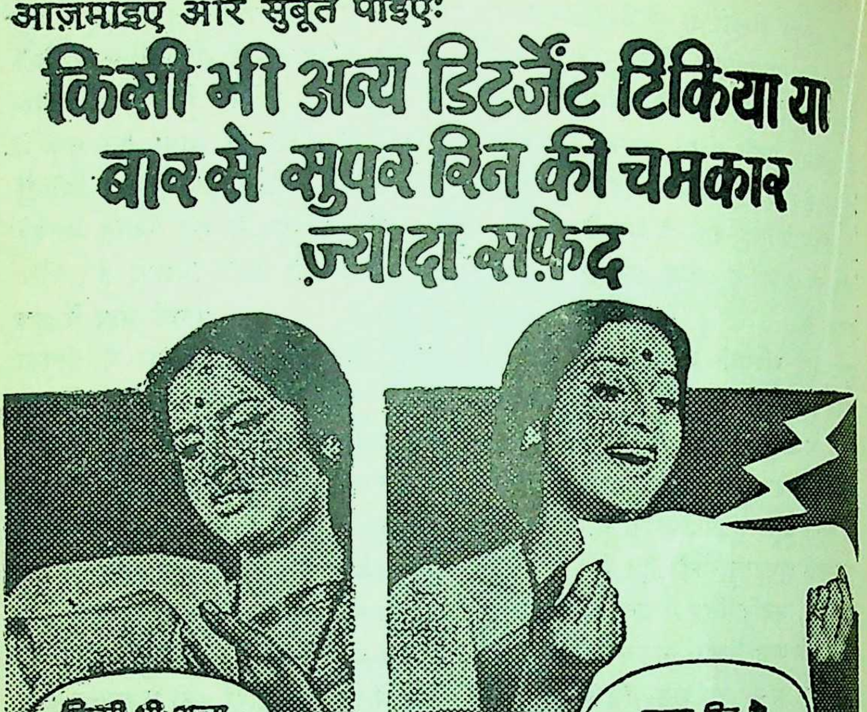

आज़माइए और सुबूत पाइए:

किसी भी अन्य डिटर्जेंट टिकिया या बार से सुपर रिन की चमकार ज़्यादा सफ़ेद

किसी भी अन्य डिटर्जेंट बार से धोया हुआ

सुपर रिन से धोया हुआ

सुपर रिन नियमित इस्तेमाल कीजिए और अपनी आँखों देखिए आपके कपड़े कितने ज़्यादा सफ़ेद नज़र आते हैं, उन कपड़ों से कहीं ज़्यादा सफ़ेद जो आपने किसी अन्य डिटर्जेंट टिकिया या बार से धोये हैं. यह इसलिए कि सुपर रिन में अधिक सफ़ेदी लाने की शक्ति है. आज़माइए और सुबूत पाइए.

सुपर रिन डिटर्जेंट टिकिया

किसी अन्य डिटर्जेंट टिकिया या बार से अधिक सफ़ेदी की शक्ति से भरपूर

हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन

लिंटास-RIN. 34-1519 HI (RR)

देता है। मेष और वृश्चिक में धन और वैभव अधिक होता है। मिथुन और कर्क के शुक्र से नयी खोज करने की इच्छा होती है। सिंह में यश बहुत मिलता है। कन्या और तुला का शुक्र आध्यात्मिकता की ओर ले जाता है। जबकि धनु और मीन में शिक्षा में व्यवधान पैदा करता है। मकर के शुक्र से बहुत यश, बहुत सुख और बहुत लंबी आयु मिलती है। कुंभ में पत्नी कुछ-कुछ वीतराग होती है।

दशम में शुक्र

मेष और वृश्चिक में दशम स्थान के शुक्र से अविवाहित रहने का मन होता है। वृषभ, तुला में उच्च पद मिलता है। मिथुन, कन्या में गणित और ज्योतिष के प्रति रुचि होती है। कर्क, सिंह में यह शुक्र सत्ता देता है। मकर, कुंभ में तकनीकी कामों में रुचि होती है, जबकि धनु, मीन में यह शुक्र वनस्पति-शास्त्र अथवा समाज-सेवा कार्य की ओर ले जाता है।

एकादश में शुक्र

एकादश भाव में शुक्र अगर मेष, सिंह अथवा धनु हों तो कन्याएं अधिक होती हैं। वृषभ, तुला में बड़े भाई के परिवार का खर्च भी उठाना पड़ता है। मिथुन, कर्क, कन्या आदि शुक्र इस स्थान में सुंदर, मगर पतित स्त्रियों के प्रति रुचि पैदा करता है। वृश्चिक मीन में संतान नहीं होती। धनु, मकर और कुंभ में इस शुक्र के कारण तलाक की नौबत आती है। ऐसे लोग काफी कंजूस भी होते हैं, यह शुक्र बत्तीसवें वर्ष के बाद स्थिरता देता है।

द्वादश में शुक्र

द्वादश भाव शुक्र के लिए अच्छा नहीं माना गया। मेष, वृषभ, तुला आदि राशियों में विवाह जल्दी हो जाता है। वृश्चिक में गुप्त-रीति से विवाह करने के उदाहरण भी मिलते हैं। कर्क का शुक्र इस स्थान में दुष्कीर्ति देता है, जबकि सिंह के शुक्र से बहुत तरह का सामाजिक मान-सम्मान मिलता है। कन्या का शुक्र अगर अष्टम में हो तो विचित्र तरह के स्वप्न आते हैं। व्यक्ति अनजानी, परदेसी स्त्रियों से प्रेम संबंध स्थापित करने के लिए लालायित होता है। धनु के शुक्र से गूढ़ विद्याओं की ओर और मकर के शुक्र से व्यक्ति तंत्र-मंत्र आदि में पारंगत होता है कुंभ के शुक्र से पत्नी सुंदर मिलती है और नौकरी में सफलता प्राप्त होती है। मीन का शुक्र अष्टम भाव में उद्दाम कामवासना देता है। मीन के शुक्र से त्याग और भोग दोनों अपनी अति पर होते हैं। यह शुक्र अद्वितीय व्यक्तित्व प्रदान करता है। ऐसे व्यक्ति की संतान भी बहुत प्रतिभाशाली होती है। ●

प्रशा के इमरे सेजेकेली ने तलाक के बाद दोबारा विवाह के लिए एक ऐसी एजेंसी से सहायता ली, जो कंप्यूटर की सहायता से जोड़े मिलाती थी। जानते हैं, कंप्यूटर ने इमरे की कैसे सहायता की? उसने उसकी पूर्व-पत्नी को ही दोबारा विवाह के लिए चुना।

गोष्ठी

गुलशन पामर, मुक्तसर : सूर्यपोत (सनशिप) क्या है ? क्या यह बनाया जा चुका है ? यदि हां, तो कहां ?

सूर्यपोत सौर ऊर्जा से चलनेवाला **विमान** होगा, जिसका डिजाइन इंग्लैंड में तैयार किया जा रहा है। नौ लाख **पौंड** की लागत से बननेवाला यह विमान ८० मीटर लंबा होगा और शुरू में तीन से पांच टन तक भार वहन कर सकेगा। इसकी बाहरी परत पर 'सोलर सेल' लगे होंगे, जिनसे प्राप्त सौर ऊर्जा १०० किलोवाट की दो मोटरों के जरिए सीधे विद्युत में परिवर्तित होकर विमान के इंजन को चलायेगी। आशा है, यह विमान १९८३ तक बनकर तैयार हो जाएगा। बाद में इस डिजायन को विकसित करके ५०० टन तक भार वहन करनेवाले और १००० किलोमीटर प्रतिदिन की उड़ान केवल सौर ऊर्जा के सहारे भर सकनेवाले विमान बनाये जा सकेंगे। इस विमान की विशेषता यह होगी कि यह सीधा ही ऊपर उठकर उड़ सकेगा और इसमें ईंधन का खर्च बहुत कम पड़ेगा। इसकी कार्यक्षमता सामान्य विमानों की तुलना में तीन गुना अधिक होगी।

देवबाला, रांची : दिल की धड़कन चालू रखने के लिए प्रयुक्त होनेवाले 'पेसमेकर' केवल अस्पतालों में प्रयुक्त होते हैं या खरीदकर निजी रूप से भी इस्तेमाल किये जा सकते हैं ?

'पेसमेकर' प्रायः अस्पतालों में ही प्रयुक्त होते हैं, क्योंकि ये बहुत महंगे और आकार में काफी बड़े होते हैं। लेकिन बहुत दिनों से ऐसे पेसमेकरों की आवश्यकता अनुभव की जा रही थी जो कम खर्च में सुलभ, आकार में छोटे और चलते-फिरते या काम-काज करते समय हृदय-रोगियों के साथ रह सकें। इस आवश्यकता की पूर्ति आस्ट्रेलिया की एक फर्म करनेवाली है।

उसके द्वारा विकसित 'पेसमेकर' इतना छोटा है कि रोगी की बांह पर बांधा जा सकता है। लेकिन इससे भी आगे बढ़कर कोशिश यह की जा रही है कि और भी छोटे आकार का 'पेसमेकर' बनाकर रोगी के सीने में ही फिट किया जा सके। अब तक निर्मित 'पेसमेकरों' के साथ एक दिक्कत यह रही है कि वे दिल की धड़कन को एक समान गति पर ही रखने में समर्थ होते थे, जबकि चलते-फिरते या कामकाज करते रोगी के दिल को समय-समय पर बढ़ी हुई धड़कन की जरूरत हो सकती है। इसलिए नये ढंग के 'पेसमेकरों' के निर्माण में यह ध्यान रखा जा रहा है कि वे रोगी की आवश्यकताओं के अनुसार हृदयगति में

परिवर्तन भी कर सकें ।

सुषमा के. मनसुखानी, अंकलेश्वर : CETAC (Communications External Tactical) **'सिटक' क्या है ?**

यह नौसेना के युद्धपोतों की एक नयी संचार-व्यवस्था का नाम है, जो इंग्लैंड में विकसित की गयी है। इसमें एक केंद्रीय कंप्यूटर-प्रणाली के जरिये एक पोत से दूसरे पोत तक, पोत से विमान तक या पोत से तट तक संदेश दिये और लिये जा सकते हैं।

यह प्रणाली मुख्यतः संचार-व्यवस्था में मनुष्य से हो जानेवाली भूलों के कारण होनेवाली हानि को ध्यान में रखकर विकसित की गयी है। युद्ध की स्थितियों में कई बार ऐसा होता है कि संदेशों और सूचनाओं के आदान-प्रदान में मानव-चालित उपकरण मनुष्यों की घबराहट, थकान, अस्वस्थता या आहतावस्था के कारण हुई भूलों के कारण ठीक काम नहीं कर पाते। युद्धपोत नष्ट हो जाने या उसके समस्त नौसैनिकों के मारे जाने-जैसी स्थितियों में कई बार उसके संबंध में जानकारी मिलना कठिन या असंभव हो जाता है। इस नयी संचार प्रणाली के अंतर्गत कंप्यूटर में ऐसी व्यवस्था पहले से ही कर दी जाती है कि कंप्यूटर वांछित स्थानों पर पोत की दिशा, गति, स्थिति, कठिनाइयों आदि की सूचनाएं अपने आप भेजता रह सकता है और मानव-चालित उपकरणों में भूल की संभावना नहीं रहने देता।

हरगोविंद द्विवेदी, कानपुर : 'एंबिग्युइटी' (इसे हिंदी में क्या कहेंगे) क्या है ?

हिंदी में इसे संदिग्धता, द्विवार्थकता, श्लेष या अनेकार्थकता कह सकते हैं। साहित्यिक रचना में अर्थ की संदिग्धता या एक से अधिक अर्थ की संभावना होने पर इसकी उपस्थिति मानी जाती है। विलियम एंप्सन नामक विद्वान ने इसके सात प्रकार बताये हैं :

(१) ऐसा शब्द या वाक्य जिसके एक से अधिक अर्थ निकलें, (२) जब दो या दो से अधिक अर्थों से मिलकर एक अर्थ की व्यंजना होती हो, (३) जब एक ही शब्द द्वारा संदर्भ के अनुसार दो अर्थों की व्यंजना होती हो, (४) किसी उक्ति के ऐसे दो या दो से अधिक अर्थ जो परस्पर मेल न खाते हों, लेकिन किसी जटिल भाव या स्थिति को प्रकट करते हों, (५) ऐसी उपमा जो किसी निश्चित वस्तु को सूचित न करे, लेकिन दोनों वस्तुओं के मध्य की किसी स्थिति को प्रकट करती हो, (६) जब असंगत या परस्पर-विरोधी कथन के कारण किसी उक्ति से कोई अर्थ न निकलता हो और पाठक को विवश होकर परस्पर-विरोधी अर्थ निकालने पड़ें, और (७) जब किसी उक्ति से उसके संदर्भ के सर्वथा विपरीत दो अर्थ निकलते हों।

गुलबहारसिंह 'प्यासा', पाकुड़, बिहार :

फोर्निक्सस्कोप' क्या होता है ?

आंखों की जांच करने के लिए चिकित्सक को प्राय: रोगी की आंख के ऊपरी पलक को उलटकर देखना पड़ता है।

कभी-कभी काफी देर तक उसे उलटे रखना पड़ता है। इससे रोगी को तो कष्ट होता ही है, चिकित्सक का भी एक हाथ इसी में व्यस्त बना रहता है। इस कठिनाई को ध्यान में रखते हुए आंख पर लगाया जा सकनेवाला जो उपकरण निर्मित किया गया है, उसी को 'फोर्निक्सस्कोप' कहते हैं। इस उपकरण को आंख पर लगा देने से पलक जब तक चाहें, उलटाये रख सकते हैं और रोगी को कोई कष्ट नहीं होता। साथ ही चिकित्सक के दोनों हाथ काम करने के लिए मुक्त हो जाते हैं। विशेष रूप से बच्चों और चंचल रोगियों की आंखों की जांच के लिए यह उपकरण बहुत उपयोगी है। अल्युमीनियम की वृत्ताकार परिधि के भीतर लगे एक शीशे और पलक को पकड़ने वाली एक हलकी चिमटी से बने इस उपकरण को नीचे के पलक पर टिकाकर आसानी से आंख पर लगाया जा सकता है। शीशे पर प्रकाश डालने से पलक का पूरा हिस्सा परावर्तित प्रकाश से प्रकाशित हो उठता है और आंख की जांच आसानी से की जा सकती है।

विनोद पुरी 'रंजु', लुधियाना : 'क्रायोसर्जरी' क्या है ?

आंख के ऑपरेशन के लिए अब तक प्रचलित तरीका यह था कि आंख के लैंस को चिमटी की सहायता से पकड़कर अलग कर लिया जाता था। इसमें चाहे जितनी सावधानी बरती जाए, आंख का नाजुक लैंस प्राय: क्षतिग्रस्त हो ही जाता था, अत: आंख के लैंस को अलग करने के लिए 'क्रायोसर्जरी' नामक नयी तकनीक अपनायी गयी। इसके लिए 'क्रायोप्रॉब' नामक मशीन बनायी गयी है, जो प्राय: २० सेंटीमीटर ऊंची, २० सेंटीमीटर गहरी और २५ सेंटीमीटर लंबी होती है। इसका भार तीन किलोग्राम होता है और २५० की वोल्टता पर यह मशीन बिजली से चलती है। इस मशीन में एक पतली और सुनम्य सुई-सी लगी रहती है जो 'क्रायोपेंसिल' कहलाती है। 'क्रायोपेंसिल' आवश्यकतानुसार ऋण ४०° सें. से ऋण ७०° सें. तक ठंडी होती है। इस ठंडी सुई को आंख के लैंस पर छुआते ही लैंस इससे चिपक जाता है और आंख से अलग कर लिया जाता है। इस तरीके से लैंस पर कोई दबाव नहीं पड़ता, इसलिए उसके क्षतिग्रस्त होने की संभावना नहीं रहती।

चलते-चलते एक प्रश्न और...

महेंद्र अकेला, दुर्गापुर : अंधों में काना राजा, तो बहरों में ?

एक काना।

—बिंदु भास्कर

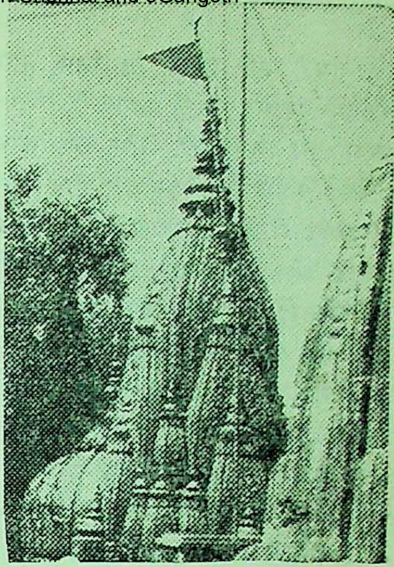

मंदिर और मठों का भविष्य

• राजेन्द्रशंकर भट्ट

एक वर्ष में आठ सौ करोड़! चाहे इसे व्यय के रूप में देखें, चाहे आय के, यह रकम बड़ी मालूम देगी। जब समझ में आएगा कि यह सार्वजनिक रकम का सवाल है तो लगेगा कि इसका हिसाब-किताब होना चाहिए। परंतु वास्तविकता यह है कि इसका कोई हिसाब-किताब नहीं है। यह स्पष्ट नहीं है कि इस बड़े व्यय का तात्कालिक लाभ क्या है? प्राप्त-कर्ता इसे कैसे व्यय करते हैं? मूलतः स्थिति यह है कि इस रकम के संबंध में प्रश्न उठाना ही अनुचित माना जाता है। भारत के मंदिरों-मठों को जो वार्षिक आय होती है, उसका यह मामूली से मामूली अंदाज माना गया है। इलाहाबाद में आयोजित हिंदू सम्मेलन में भाषण करते हुए पंजाब के भूतपूर्व मंत्री महंत रामप्रकाशदास ने इस रकम का उल्लेख किया था। व्यक्तिशः जो अनगिनत लोगों से दान मिलता है, वह इससे अलग है।

जिन स्थानों में, मंदिरों-मठों में, यह वार्षिक आय होती है उनकी चल-अचल संपत्ति का अंदाज तो बहुत ही कठिन है। वार्षिक आय के अनुपात में उसकी कल्पना का प्रयत्न किया जा सकता है, लेकिन सही अनुमान दुःसाध्य लगता है।

व्यक्ति यह रकम स्वेच्छा से देता है, बिना बताये देता है, इस पर प्रश्न उठाना दाता के, उसकी भावना के, विरुद्ध पड़ेगा। जो प्राप्त-कर्ता हैं वे अपने को तर्क और प्रश्नों से परे मानते हैं। वे अपने को परमात्मा के निकट बताते हैं।

एक दृष्टि यह हो सकती है कि परमात्मा की निकटता प्राप्त इतने व्यक्तियों को अपने बीच बनाये रखने का इतना मूल्य तो चुकाया ही जाना चाहिए।

दूसरी बात यह है कि जिन्हें आज धार्मिक विचार माना जाता है, जिनसे सारा देश व्याप्त है, और जो भावी पीढ़ियों को इसी प्रकार ओत-प्रोत रखने के प्रयत्न में हैं, उनका बड़ी सीमा तक, प्रचार और प्रतिपादन इन्हीं संस्थानों, मंदिरों-मठों द्वारा ही तो होता है। इस पर व्यय तो होगा ही, होना चाहिए।

तीसरा सामान्य-सा तर्क तो है ही—'रकम हम को मिलती है, आप बीच में टांग अड़ानेवाले होते कौन हैं?'

विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या इन तीनों से भी भिन्न कोई विचार इस विषय में है, होना चाहिए?

मंदिर-मठ सब अपने समय की सामाजिक आवश्यकता पूरी करने के लिए बनाये गये। उनकी पूजा, उन्हें दान, आज भी सामाजिक आवश्यकता है। यह भी सामाजिक आवश्यकता है कि इन्हें प्राप्त धन को सामाजिक नियंत्रण के परे माना जाए, नहीं तो दिन-प्रतिदिन इस धन की लूट होती रहती, और ये संस्थाएं पनप ही नहीं पातीं। एक सामाजिक आवश्यकता बिना पूरी हुए रह जाती। आज अंतर बहुत नहीं आया है। प्रश्न का प्रयोजन इतना ही है कि ये मंदिर-मठ वास्तव में आज कितनी सामाजिक उपयोगिता पूरी कर रहे हैं। यह प्रश्न दानदाताओं की दृष्टि से नहीं उठाया जा रहा, स्वयं मंदिरों-मठों के हितों को ध्यान में रखकर, उनके विकास को उद्देश्य मानकर, उनके भविष्य की चिंता करके, उठाया जा रहा है।

मुख्यतः शंका यह है कि हमारे धार्मिक संस्थानों में धन का इतना संकलन, क्या उनके बिगड़ने का कारण नहीं है? 'वे बिगड़े कहां हैं,' उलटकर कहा जाएगा। इतने तो नये से नये बन रहे हैं। पुरानों का जीर्णोद्धार हो रहा है। मंदिरों-मठों में जानेवालों की संख्या भी कम नहीं हुई है। परंतु यह स्वीकार किये बिना नहीं चला जा सकता कि समाज को सीधे-सच्चे रास्ते पर रखने का जो दायित्व मंदिरों-मठों पर था, उसे वे नहीं निभा पा रहे। दूसरे, समाज में जो कुछ सर्वोत्कृष्ट था उसे प्रोत्साहित करने की परंपरा भी उनसे नहीं निभ रही। तीसरे, वे ज्ञान की ज्योति और श्रद्धा के आगार हुआ करते थे, अव अंधविश्वास के गढ़ और पाखंड के प्रतीक बन गये हैं।

कुछ दिन हुए नये बने स्वर्ण-नियमों के अंतर्गत अहमदाबाद के एक मठाधीश के यहां तलाशी ली जाने पर सोने-चांदी के पलंग-झूले ही नहीं, ऐसी-ऐसी चीजें मिलीं, जिनका उल्लेख तक शर्म से सिर नीचा कर देता है। और वहां जिस तरह के चित्र और फिल्में मिलीं, उनका तो सार्वजनिक रूप से दिखाया जाना ही अपराध है। इन प्रमाणों के सामने भी क्या यह अनुरोध अनुचित है कि मंदिरों-मठों को भी अपना सामाजिक संदर्भ प्रमाणित करना चाहिए?

प्राप्त रकम के सार्वजनिक निरीक्षण के अभाव में उसका अनुचित उपयोग स्वाभाविक ही था। मुफ्त मिले माल की तरफ दिल बेरहम हो ही जाता है, परंतु यह सिलसिला बहुत दिन चलनेवाला नहीं है। अन्य अनेक देशों में मंदिरों-मठों की जो दुर्गति हुई है, वह तथ्य रूप में सभी को विदित है। हमारे यहां मात्र विदेशियों ने ही मदिरों-मठों में उत्पात किये हैं, भारत की धर्मप्राण जनता ने उनका अभी तक निरादर नहीं किया है, परंतु जिसे नयी और आधुनिक पीढ़ी कहा जाता है, वह इन पूजनीय स्थानों से दूर होती जा रही है। उसकी भी मूलतः ऐसी भावना नहीं है, परंतु मंदिर-मठ उसकी उठती आधुनिक शंकावृत्ति को संतुष्ट नहीं कर पा रहे।

मंदिरों-मठों की आय का अनुचित उपयोग भी उसे रुष्ट और विद्रोही बना रहा है। ऐसे में उसकी ऊपरी श्रद्धा उसे कब तक इनके निकट बनाये रख सकेगी!

जो कुछ, और जितने लोग, मंदिरों-मठों में हैं उनके रख-रखाव और भरण-पोषण के लिए आय का सबको समुचित लगने लायक भाग निकालकर और शेष रकम का समुचित उपयोग करके ही मंदिर-मठ अपने प्रति श्रद्धा, और तदनुसार अपनी आय बनाये रख सकते हैं।

जहां प्रति वर्ष सौ करोड़ रुपये चढ़ाये जाते हैं

विश्व के तीर्थ-स्थलों में 'तिरुमला-तिरुपति देवास्थानाम्' की वार्षिक आमदनी सर्वाधिक है। अनुमान है कि प्रतिवर्ष एक सौ करोड़ रुपये भगवान वेंकटेश्वर को श्रद्धालु भक्त चढ़ाते हैं। यहां भेंट की दर २ रुपये से लेकर ५००० रुपये तक है।

मंदिर में पकनेवाले प्रसाद पर लगभग ढाई करोड़ रुपया वार्षिक व्यय आता है। प्रतिदिन चावल व मिठाई बनाने में ६० व्यक्ति व्यस्त रहते हैं। श्रद्धालु-भक्त पानी अपने कंधों पर ही लाते हैं। लोग विश्वास करते हैं कि मंदिर में सिर्फ सोने के कुएं से ही पानी लाया जा सकता है। आंध्र प्रदेश के चित्तूर जिले में इस मंदिर की स्थापना प्रथम शताब्दी में हुई थी।

इस मंदिर में १२वीं शताब्दी के महान दार्शनिक रामानुजम् द्वारा भगवान की आराधना की १२ विधियां अभी भी परंपरागत रूप से चल रही हैं।

देश में काशी (वाराणसी), पुरी, रामेश्वरम, बद्रीनाथ और वैष्णोदेवी से भी कई गुना अधिक आय तिरुपति मंदिर दे रहा है।

दुनिया के तीर्थ स्थलों में वेटिकन (रोम) लगभग ७५ करोड़, मक्का लगभग ५४ करोड़ व तिरुपति साढ़े बावन करोड़ लोगों का पवित्र स्थल है।

उन्हें अयाचित आय करने की जो सुविधा प्राप्त है, उसका उपयोग चाहे जैसे करने की स्वतंत्रता यदि मंदिर-मठ बनाये रखना चाहते हैं तो उन्हें अपने व्यय को सामाजिक लाभ के प्रति मोड़ना होगा। दक्षिण के तिरुपति मंदिर को आय की दृष्टि से देश में प्रथम स्थान प्राप्त है। वहां से समाज सेवा के लिए व्यय भी बहुत होता है।

परंतु अन्य संस्थानों के क्या हाल हैं ? राजस्थान में उदयपुर के निकट, नाथद्वारा वैष्णव मंदिर आय की दृष्टि से दूसरा माना जाता है। उसके व्यय का कितना भाग सामाजिक हित में, सर्व साधारण के हित में व्यय होता है ? चलो, संप्रदाय तक सीमित कर लें। उसी के व्यापक हित में कितना व्यय किया जाता है ? पुस्तकें और पुस्तकालय ज्ञान-प्रसार के परम प्रभावी साधन हैं। ज्ञान-प्रदाता पाठशालाएं, विद्यालय तथा विश्वविद्यालय होते हैं। इनके लिए नाथद्वारावाले कितना व्यय करते हैं ? वहां आय के दो मार्ग हैं: मंदिर में दी रकम और गोस्वामीजी को दी रकम। जो कुछ गोस्वामीजी को मिलता है वह तो और भी कम सर्वसाधारण के उपयोग में आता है। सामान्यतः भारत के मंदिरों-मठों की स्थिति नाथद्वारा से अच्छी नहीं है।

यदि सभी मंदिर-मठ अपने-अपने मतों के अनुसार आधारभूत ज्ञान और विवेक का विकास तथा प्रचार करें तब भी बहुत लाभ हो सकता है। अंधविश्वास के आधार पर वे टिके रहना चाहते हैं जो सोने का अंडा देनेवाली मुरगी का

मंदिर की आय और

उत्तर भारत में 'श्रीनाथजी' मंदिर के आय-व्यय की स्थिति इस प्रकार है—

आय : १,२०,३३,०६० रुपये

व्यय : १,०२,२१,४१९ रुपये

मंदिर-मंडल की आय का स्रोत श्रीनाथजी के मुख्य-मंदिर के अलावा, देश में मंदिर-मंडल के अधीनस्थ विभिन्न मंदिरों से प्राप्त भेंट हैं, जो कुल बजट का करीब ७० प्रतिशत है। आय का दूसरा स्रोत जमीन-जायदाद से प्राप्त आय है, जो करीब कुल आय का १४ प्रतिशत है।

मंदिर-मंडल के बजट में मुख्य व्यय श्रीनाथजी एवं अन्य मंदिरों में सेवा, पूजा एवं प्रशासनिक व्यय है। वर्तमान वर्ष में यात्रियों के ठहरने एवं उनकी अन्य सुविधा हेतु बजट में १७,७८,००० हजार रुपये का प्रावधान रखा गया है। मंदिर-मंडल द्वारा नाथद्वारा के अल्प-आय व्यक्तियों एवं नाथद्वारा के आसपास १० किलोमीटर दूरी के गांवों में चिकित्सा सुविधा पहुंचाने हेतु

पेट फाड़ने के समान ही सिद्ध होगा।

मंदिर-मठ जहां हैं, वहां से आलोक निकलना चाहिए, सद्वृत्ति का प्रसार होना चाहिए। हो इससे उलटा रहा है, चाहे जिस मंदिर-मठ में चले जाएं, जो कुछ समाज में दूषित और त्याज्य होना चाहिए, वही उनके चारों ओर संकलित हुआ जा रहा है। यह उन्हें ले डूबेगा।

अभी तक हम राजनीतिक और आर्थिक प्रश्नों में उलझे रहे हैं, इस ओर ध्यान कम गया है। कुछ हमारी परंपरागत श्रद्धा मंदिरों-मठों का सम्मान जैसे-तैसे बनाये हुए है। इस अंतराल का लाभ वे अपने को सुधारने के लिए उठा सकते हैं। ऐसा नहीं किया गया तो कोई नहीं कह सकता कि इनका भविष्य क्या होगा?

—स्फटिक, ३, म्यूजियम मार्ग, जयपुर

श्रीनाथजी मंदिर में श्रद्धालुओं की भीड़

जनहित के कार्य

श्रीमद्वल्लभ चल चिकित्सालय चला रहा है। मंडल पांच हजार मजदूरों को आजीविका प्रदान करता है, जिनको प्रतिवर्ष करीब ४ माह तक काम दिया जाता है। मंडल कई छात्रवृत्ति भी प्रदान करता है।

मंदिर-मंडल के पास बहुत बड़ी गौशाला है। इस समय गौशाला में कुल मवेशी करीब १,१००, हैं जिसमें से करीब २५०-३०० गाय-भैंस ही दूध देती हैं, गौशाला पर इस वर्ष ७,४४,००० रुपये के व्यय का प्रावधान है। मंदिर-मंडल द्वारा एक संगीत-शाला भी चलायी जाती है।

अन्य व्यय में परंपरागत बृजवासी समाज को दिया जानेवाला सीधा एवं तिलकायत् महाराज श्री व उनके परिवार को दिये जानेवाले भत्ते शामिल हैं।

मंदिर-मंडल ने हाल ही में उदयपुर विश्वविद्यालय में श्रीमद्वल्लभ शोध केंद्र हेतु ४,५०,००० रुपया देने का प्रस्ताव पास किया है, इसके अलावा मंदिर-मंडल ने उदयपुर में कैंसर उपचार केंद्र हेतु २,५०,००० रु. एवं १,००,००० रु. हृदय रोग संबंधी केंद्र की स्थापना हेतु दिये जाने का प्रस्ताव किया है। ●

शक्ति के चमत्कार

● **मशकूर हुसैन 'याद'**

गालिब ने तो इनसान की सामान्य मानसिक अवस्था को अभिव्यक्त करते हुए कहा था :

ईमाँ मुझे रोके है, जो खींचे है मुझे कुफ्र
काबा मेरे पीछे है, कलीसा मेरे आगे

अर्थात, इनसान के मस्तिष्क में प्रतिकूल शक्तियों का द्वंद्व सदा जारी रहता है। सद्कर्म और कुकर्म की लड़ाई में यह बेचारा सामान्यतः ग्रस्त रहता है, किंतु जन्मकुंडली-विशेषज्ञों का कथन है कि जो व्यक्ति २५ मई से २४ जून के बीच में पैदा होते हैं, उनके व्यक्तित्व में यह लड़ाई विशेष रूप धारण कर लेती है। और इसी कारण यह महाशयगण दोहरे व्यक्तित्त्व के होते हैं।

हमारे मित्र ख्वाजा तोसीफ ४ जून को इस संसार में पधारे थे। उनके व्यक्तित्व का हमने खूब अध्ययन किया। ख्वाजा साहब का नित्य-नियम है कि यदि उनकी तबीयत हलवा खाने पर मचली, तो वे लाल मिर्चों की चटनी बनवाकर खाने लगेंगे। लिखने का जी चाहेगा, तो कलम के बजाय तलवार उठाकर वातावरण में लहराना शुरू कर देंगे। एक दिन क्या देखते हैं कि ख्वाजा सड़क पर खोंमचा लगाये बैठे हैं। हमने पूछा, "हजरत, यह क्या सूझी?"

बोले, "कई दिन से विद्वान बनने की आकांक्षा ने मन को परेशान कर रखा था।"

"तब तो आपको पुस्तकालय में बैठकर पुस्तकें पढ़नी चाहिए थीं।"

एकदम नाराज होकर कहने लगे, "पुस्तकें पढ़कर आज तक कोई विद्वान बना है, जो मैं बन जाता? पुस्तकें तो इनसान को जहालत सिखाती हैं।" इस तर्क के हम कायल हुए हों या न, पर लोग ख्वाजा साहब को अपना पीर मानते हैं।

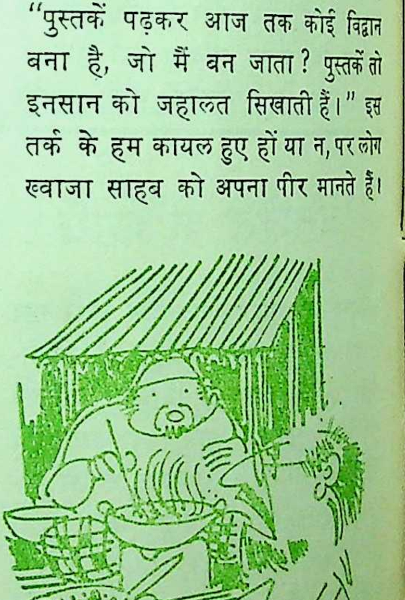

इस समय में जन्म लेनेवाले लोगों के मस्तिष्क भी बड़े तेज होते हैं। कठिन से कठिन समस्या उनके सामने पेश कर दो, वे कंप्यूटर की तरह एक क्षण में उसका उत्तर प्रस्तुत कर देंगे।

"गधे के सिर पर सींग क्यों नहीं हैं?" एक बार हमने पूछा।

तत्काल उत्तर मिला, "इसलिए कि गधा सिर के बजाय टांगों से काम लेता है।"

"और इनसान के बारे में आपका क्या विचार है?"

फिर पूर्ववत उत्तर मिला, "यह एक ऐसा जीव है, जो न सिर से काम लेता है, और न पांव से। इसीलिए न उसके सिर पर सींग हैं, और न ही उसे सही अर्थों में दोलत्ती मारनी आती है।"

मस्तिष्क की तेजी के कारण यह लोग निर्णय भी बहुत जल्दी करते हैं।

पिछले दिनों वे शेखुपुरा गये हुए थे। वहां से वापसी उनके लिए एक समस्या बन गयी, क्योंकि शाम को उनके एक ससुराली संबंधी का क्रिया-संस्कार लाहौर में था, और उसी दिन शाम को लायलपुर में उनके एक मित्र की शादी थी। मन से वह लायलपुर जाना चाहते थे, पर पत्नी के खयाल से उन्हें लाहौर में क्रिया-संस्कार में भी शामिल होना आवश्यक था। ऐसी स्थिति में यदि हम और आप होते, तो बहुत कुछ सोच-विचार के बाद किसी निश्चय पर पहुंचते, पर हाजी साहब ने तत्काल निश्चय किया। वे अड्डे पर पहुंचे। जिस ओर भी जानेवाली कोई बस पहले मिली, उसी में सवार हो गये। वैसे मन ही मन में प्रार्थना कर रहे थे कि लायलपुर की ओर जानेवाली बस पहले मिल जाय, पर हुआ और ही। हाजी साहब को बस-स्टैंड पर पहुंचते ही जो बस सबसे पहले मिली, वह लाहौर जानेवाली थी। ये तुरंत उसमें बैठ गये। संयोगवश हम उस बस में पहले से बैठे थे। हाजी साहब को देखकर प्रसन्न हो गये।

पूछा, "हाजी साहब, क्या लाहौर जा रहे हैं?"

उत्तर मिला, "जी हां!"

पर जैसे ही लाहौर आया, हाजी साहब बस से उतरते ही लायलपुर जानेवाली बस की ओर लपके। हम पुकारते ही रह गये, "हाजी साहब! कहां जा रहे हैं?"

उत्तर दिया, "लायलपुर जा रहा हूं।"

"और लाहौर किसलिए आये थे?"

"इसलिए कि लायलपुर जाना था।"

जब हमने पूछा, "हाजी साहब! आपकी बात समझ में नहीं आयी।" तब रुककर कहने लगे, "कैसे समझ में आ सकती है? किसी ठंडे महीने का जन्म लगता है मियां। मैं जून में पैदा हुआ था और ऐसी तपती दोपहर में जब चील अंडा छोड़ रही थी। इसलिए देख लो, मेरी बुद्धिमानी सदा दोपहर के सूरज की तरह बीच आसमान में रहती है।"

इस समय में पैदा होनेवालों की एक विशेषता है कि वे समाज में उच्च-स्थान प्राप्त करने के लिए बड़ा संघर्ष करते हैं, और जब उसे पा लेते हैं तब उससे बेजार हो जाते हैं। हमें अपने लंगोटिये यार नत्थू के बेटे फत्तू की जन्म-तिथि अच्छी तरह याद है। वह ९ जून को पैदा हुआ था। इस लड़के को पहलवान बनने का बेहद शौक था। बचपन से ही वह महल्ले के लड़कों को उठा-उठाकर मारता था। नत्थू गरीब की हर रोज महल्लेवालों से इसी बात पर कई बार लड़ाई होती थी। नत्थू की पत्नी का तो गला ही स्थायी रूप में बैठ गया था।

खैर, हमारे यार नत्थू का लड़का जवान हुआ, तो सारे गांव में उसकी पहलवानी की धूम मच गयी। फत्तू पहलवान तो प्रसिद्ध हो गया, पर जब उसे यह अहसास हुआ कि वह जिस स्थान को प्राप्त

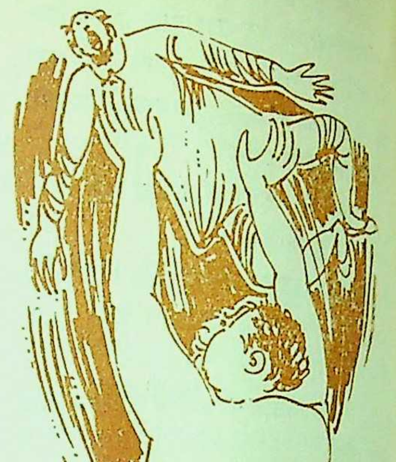

करने का अभिलाषी था, वह प्राप्त हो गया तब वह एकदम अपनी पहलवानी से बेजार हो गया। उसकी बेजारी की यह अवस्था तरह-तरह से प्रकट हुई। कभी घर में पिता को उठाकर हवा में उछाल देता, कभी मां को एक हाथ में दबोचकर गेंद की तरह ऊपर फेंकता। पिछले दिनों उसका बूढ़ा दादा अपने पोते की ख्याति सुनकर उससे मिलने शहर आया, तो फत्तू ने आये दिन अपने दांव-पेच दिखाने की बेजारी में गरीब को वह पटखनी दी कि नीचे गिरते ही उसका दम निकल गया। इस दुर्घटना के बाद से तो फत्तू अपनी पहलवानी से बिलकुल ही बेजार हो गया।

एक दिन हम बहुत निश्चितता से बाजार में चले जा रहे थे। पीछे से किसी ने हमारे दोनों कंधों पर इस जोर से हाथ रखे कि हमें अनुभव हुआ जैसे हम धरती में धंस गये हों।

फिर किसी ने हमें अपनी ओर मोड़ा। पता चला कि बरखुरदार फत्तू हमसे बात करना चाहता है। एकदम रोकर बोला, "चाचा ! तुम ही बताओ, मैं अपने जोर (शक्ति) को कहां ले जाऊं। मेरी इस पहलवानी से क्या लाभ ? मैं दादा को अपने कौतुक दिखा रहा था तभी वे ईश्वर को प्यारे हो गये। चाचा ! बोलते क्यों नहीं, बताओ मैं अब क्या करूं ?" हम अभी कुछ उत्तर देने ही वाले थे कि बरखुरदार फत्तू ने बीच बाजार में हमें हवा में उछाल दिया। संयोगवश हमने उस समय पाजामे की जगह चादर बांध रखी थी। जब हम नीचे आने लगे, तो चादर हवा के कारण फैल गयी। एक तो हमारी बारीक टांगों का सबने तमाशा देखा। दूसरे हम उस समय एक रूसी नर्तकी नजर आ रहे थे। राम-राम करके बरखुरदार फत्तू से पीछा छुड़ाकर भागे।

यों तो यह लोग प्रसन्न रहते हैं, पर इनके मूड का कुछ पता नहीं चलता कि कब आंखें निकालना शुरू कर दें या कब रोने बैठ जाएं। यह वकील या प्रोफेसर बन जाएं, तो खूब सफलता प्राप्त कर सकते हैं। वैसे हमारा मत यह है कि यदि प्रोफेसर या वकील बनें और क्लास-रूम और अदालत के कमरे में टहल-टहलकर भाषण दें तो श्रोतागण, छात्र और अदालत इनसे अधिक प्रभावित हो सकती है। यह ऊंच-नीच को जीवन का अनिवार्य अंग समझते हैं। इसलिए उसकी परवाह नहीं करते। इन लोगों को सफेद रंग बहुत पसंद होता है। यही कारण है कि जब एक बार हमारे मित्र शेख शाहिद बीमार हुए और डॉक्टरों ने उन्हें निर्देश दिया कि वे अंधेरे में रहें। प्रकाश उनके लिए हानिकारक है तब वे बहुत घबराये। संयोगवश उसी कमरे में उनकी मुरगी ने अंडे दे रखे थे, जो अंधेरे के बावजूद साफ नजर आ रहे थे। श्रीमती अंडे उठाने लगीं, तो वे एकदम बोले, "कमरे में अंधेरा सही, आंखों में तो दम है रहने दो।" —अनु.: सुरजीत

शहर है या देश

हांगकांग केवल ३९८ वर्ग मील के क्षेत्रफल में फैला हुआ है। भारत में, केवल दिल्ली राज्य का ही क्षेत्रफल इससे अधिक है। इसके बावजूद, हांगकांग का व्यावसायिक महत्त्व कितना बढ़ा-चढ़ा है, इसका अंदाजा इसी से लग सकता है कि सन १९६८ में उसका निर्यात १,३०४ करोड़ रुपयों का था, जबकि संपूर्ण भारत का निर्यात भी इससे ज्यादा रुपयों का नहीं हो पाया था। साथ में यह भी स्मरणीय है कि इतना जबर्दस्त व्यापार करनेवाले इस शहर की आबादी ४० लाख है।

एक बहुत ही सीधी बात

हर नारी के मन में छुपी है एक पुरानी अभिलाषा
मन चाहे मनुष्य के साथ फिरे, घूमे
बारिश में भीगे
सरदी से कांपे
गरमी झेले
मिट्टी से खेले, मिट्टी को भी भेद बताये
नारी को शरमीला कहनेवालों को शरमाये
और सोचे अपनी कोख में पलनेवाले जीव का नाम
पर दीवानी अभिलाषा के हाथ पड़ी जंजीर
जिससे बंधी तकदीर
जिसमें उलझे महल-दोमहले, गालीचे, दरबान
बिजली से चलनेवाला अटरम-पटरम सामान
मूरख पुरुषों का अरमान
यह तो बदन का है अपमान!
गालीचों के साथ भला नारी कब तक सोयेगी
बेशक रात को तनहाई में छुप-छुपकर रोयेगी

——फहमीदा रियाज

मेरठ में जन्मीं, देश के विभाजन के बाद हैदराबाद (पाकिस्तान) में पलीं, पढ़ीं फहमीदा रियाज आधुनिक उर्दू-काव्य में एक नया सशक्त हस्ताक्षर हैं। उनकी कविताओं का संग्रह 'धूप' राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली से शीघ्र प्रकाश्य।

अजनबी

दृष्टि से जाना जाता है दृश्य
पर क्या
स्रष्टा जानता है, अपनी सृष्टि को ?
मैंने ही तुम्हारा नख-शिख गढ़ा
कोणार्क या हलेबिद की
शिला-मूर्त्तियों की तरह
मैंने ही तुम्हारा आपादमस्तक रंगा
अजंता के भित्ति-चित्र
या बाटिक पेंटिंग की तरह
मैंने ही तुम्हारी हर मुद्रा रची
कत्थककली या मणिपुरी
नृत्य भंगिमाओं की तरह
मैंने ही तुम्हारा हर स्वर साधा
तानसेन या बैजू बावरा
के राग-संधान की तरह
मैंने ही तुम्हारा हर शब्द गूंथा
रामचरितमानस
या भगवद्गीता की तरह
किंतु, क्या मैं जानता हूं
तुम्हारे व्यक्तित्व के शतांश को ?
क्या सागर के लिए
अजनबी नहीं होती है
हर लहर !

—डॉ. वचनदेव कुमार

अध्यक्ष, हिंदी-विभाग, रांची विश्वविद्यालय, रांची

गजल

चौराहों पर केवल आकर्षक नारे हैं
हम सब के सब दिशा-भ्रम के मारे हैं
वह कहते थे, उनके हाथों में सूरज है
बाहर आये, देखा, बस अंधियारे हैं
गंगा-जमुना का दावा करनेवाले भी
तल के नीचे गंदे पानी के धारे हैं
जिसकी चादर पर काले-खूनी धब्बे हैं
उसके हिस्से में सारे चांद सितारे हैं
कैसे पहचाने, चेहरों पर चिपके चेहरे हैं
आगे-आगे सुंदर हैं, पीछे-पीछे कारे हैं
नकली रत्नों की भड़कीली दूकानों पर
पारस को पत्थर कहनेवाले सारे हैं

—पारस तातारी

निदेशक, दूरदर्शन केंद्र, जालंधर

सफ़ेदी ऐसी चकाचौंध
कि जो भी देखे, वो बोले...

यह है
डेट
डिटर्जेंट
टिकिया की
धुलाई

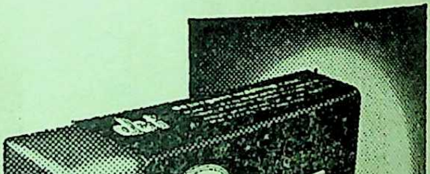
सुप्रीम
डेट
डिटर्जेंट धुलाई की टिकिया

Shilpi DM 35A/78 Hin

नयी कृतियां

एक मर्मस्पर्शी काव्य संग्रह

प्रश्नांतक : आधुनिक यूनानी काव्य के एक शीर्षस्थ हस्ताक्षर वैस्सिलिस विटसाक्सिस की छब्बीस विचार एवं अनुभूति प्रधान कविताओं का संग्रहणीय संकलन है। इन कविताओं के अनुवादक हैं हिंदी के सुपरिचित कवि और आलोचक डॉ. गंगाप्रसाद विमल। वैस्सिलिस विटसाक्सिस बहु आयामी व्यक्तित्ववाले कवि हैं। वे विधिवेत्ता हैं, कथा लेखक हैं, राजनयिक हैं और हैं एक ऐसे भारतविद, जिन्होंने भारतीय संस्कृति, धर्म और दर्शन को अतीत से मिली एक आत्मीयतापूर्ण दृष्टि से देखा है। विटसाक्सिस की कविताएं मानव-चेतना के अतीत का स्पर्श करती हुई अनंत और अनादि से जुड़े चिरंतन प्रश्नों का दार्शनिक चिंतन की पृष्ठभूमि पर समाधान खोजती हैं। वे यह भी बतलाती हैं कि सुदूर अतीत से चली आ रही संस्कृति की धरोहर से वर्तमान क्या पा सकता है। एक प्रकार से उनकी कविताएं अतीत, वर्तमान और भविष्य को परस्पर जोड़नेवाले छोटे-छोटे सेतु कही जा सकती हैं।

'आकांक्षा' शीर्षक कविता में वे लिखते हैं :

मैंने चुपचाप एक इच्छा की
स्वर्णिम मुसकराहट के साथ बढ़ती
इन स्मृतियों और सपनों को देखने की
याद करो।
दिन धीमे से बीत रहा है
कल फिर दूसरा चांद उगेगा
अधिक विकसित ... मुझे आशा है

विटसाक्सिस भारतीय दर्शन एवं चिंतन-परंपरा से बहुत गहरे प्रभावित हैं। कठोपनिषद के एक सूत्र से प्रेरित निम्न कविता कवि के अंतर्द्वंद्व को भलीभांति चित्रित करती है——

सकुचाते हुए मैं खड़ा हूं
ओ! स्वामी
एक बहुमुखी राह में
विकीर्ण करनेवाले जाल हैं
उनमें से हर एक
एकाकी पथों के दिग्दर्शक हैं
क्या मैं हमेशा के लिए
एक याचक भिक्षु हूं
जो हर भिक्षा में
एक ग्रास पा लेता है
जो अपनी क्षुधा कभी
तृप्त नहीं करता
क्या मुझे सदैव मनन करना होगा
कि मेरी कांक्षा की वस्तु
एक खंडित दर्पण के बीच है?

विटसाक्सिस की कविताओं में कहीं-कहीं अंतर्मन को विचलित कर देनेवाली

Glaxo
ग्लैक्सो
मिनाडेक्स
स्वस्थ रक्त और
नयी शक्ति के लिये

ख़ून के रिश्ते कितने गहरे...

मिनाडेक्स का भी आपके ख़ून के साथ गहरा रिश्ता है

स्वस्थ ख़ून अच्छी सेहत का आधार है। और स्वस्थ ख़ून के लिए ज़रूरत है लौहतत्व की। मिनाडेक्स में लौहतत्व की प्रचुर मात्रा के कारण इसके हर चम्मच से आपके ख़ून को पूरा फ़ायदा मिलता है।

रक्तशक्ति दायक
मिनाडेक्स®

CASGM-19-172

रहस्यमयी अंतर्व्यथा के प्रतीक होते हैं:

घुटनों के बल आज रात
स्वामी मैं तुम्हारी शरण में
आया हूं
विश्रान्त आत्मा
और बोझिल हृदय से
पिता
मैंने पूर्ण कोशिश की
और अगर मैं गलत रहा
एक आदमी के रूप में
तो फिर से शुरू कर सकूंगा

डॉ. गंगाप्रसाद विमल ने इन कविताओं का अंगरेजी से अनुवाद किया है। उनके अनुवाद में किसी मौलिक रचना-सा सहज प्रवाह है।

प्रश्नांतक

लेखक--वैस्सिलस विट्साक्सिस, संपादक--राजेन्द्र अवस्थी, गंगाप्रसाद विमल प्रकाशक--पराग प्रकाशन, ३/११४, कर्ण गली विश्वासनगर, शाहदरा, दिल्ली-११०-०२३, पृष्ठ--५२, मूल्य--उल्लेख नहीं।

संकल्प : महेन्द्र भटनागर का बारहवां काव्य-संग्रह है, जिसमें दो स्वर मुख्य रूप से उभरकर सामने आये हैं। एक स्वर है सत्ताजनक विसंगतियों, असमानताओं और कुरूपताओं को उजागर करनेवाला और दूसरा स्वर है कवि का व्यक्तिपरक।

पहले स्वर के संदर्भ में 'हमारे इर्द-गिर्द' शीर्षक कविता का उल्लेख किया जा सकता है। व्यक्तिपरक कविताओं में 'बस एक बार' और 'निकष' कविता सुंदर बन पड़ी है। 'बस एक बार' कविता में प्यार की एक अनबूझ कामना को कवि ने बहुत मार्मिक शब्दों में अभिव्यक्ति दी है। 'निकष' भी ऐसी ही कविता है, जिसमें प्यार और भटकन को बड़े सलीके से अभिव्यंजित किया गया है।

--प्रभा भारद्वाज

संकल्प

लेखक--महेन्द्र भटनागर, प्रकाशक--प्रबुद्ध भारती, जीवाजीगंज, ग्वालियर, पृष्ठ--४८, मूल्य--३ रु.

शब्दों की शताब्दी : आयातित संस्कारों की हिंदी साहित्य में स्थापना करना बहुत दिनों तक एक फैशन की तरह काव्य-जगत में प्रचलित रहा। सांस्कृतिक संक्रमण की इसी स्थिति एवं मानसिकता से उत्प्रेरित 'शब्दों की शताब्दी' के रचनाकार ने 'उत्तर स्थितियां' खंड में जापानी शिल्प 'बोंसाई' को हिंदी कविता में स्थापित करने का प्रयास किया है। प्रयोग के नाम पर भले ही कुछ नया करने का यह प्रयास हो, पर कविता इस कारण अपनी संस्कृति से काफी कट गयी है।

शब्दों की शताब्दी

लेखक--श्रीराम वर्मा, प्रकाशक--स्मृति प्रकाशन, १२४ शहरारा बाग, इलाहाबाद-२११००३, पृष्ठ--६७, मूल्य--८ रु.

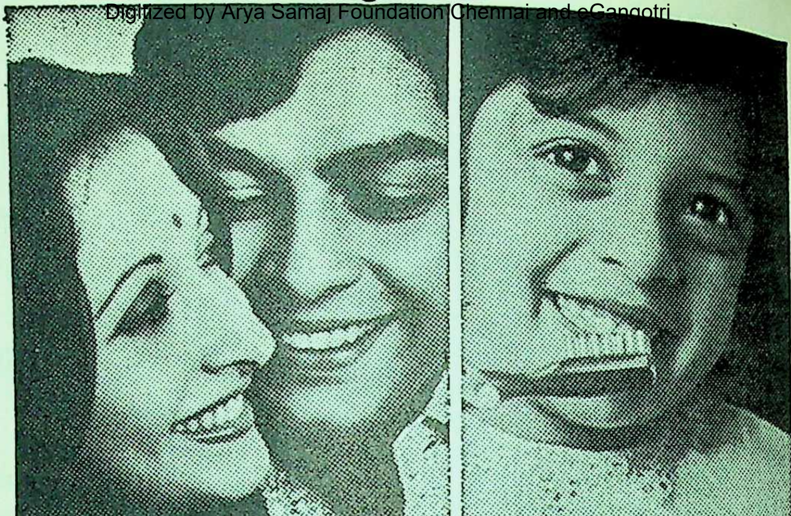

कोलगेट डेन्टल क्रीम से सांस की बदबू रोकिये... दंतक्षय का प्रतिकार कीजिये

हर भोजन के बाद अपने दांत कोलगेट से साफ़ कीजिये। यह ठीक उसी तरह दांतों की रक्षा करता है, जैसे दुनियाभर के दंत विशेषज्ञ कहते हैं।

दांतों में छुपे हुए अन्नकणों में कीटाणु बढ़ते हैं। इनसे सांस में बदबू पैदा होती है, और बाद में दांतों में सड़न।

इसीलिए, हमेशा भोजन के फ़ौरन बाद कोलगेट डेन्टल क्रीम से दांत साफ़ कीजिये। यह सांस को ताजा, दांतों को सफ़ेद और दांतों की सड़न रोकने में असरदार साबित हो चुका है।

अधिक तरोताज़ा सांस और अधिक सफ़ेद दांतो के लिये दुनियाभर में ज़्यादा से ज़्यादा लोग दूसरे टूथपेस्टों के बजाय कोलगेट टूथपेस्ट ही खरीदते हैं।

देखिये, कोलगेट के भरोसेमंद फ़ॉर्मूले का काम:

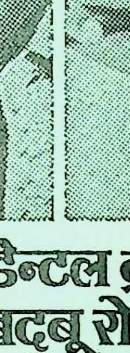

दांतों में छिपे हुए अन्नकणों में सांस में बदबू और दांत में सड़न पैदा करने वाले कीटाणु बढ़ते हैं।

कोलगेट का अनोखा, असरदार झाग दांतों के कोने में छिपे हुए अन्नकणों को और कीटाणुओं को निकाल देता है।

नतीज़ा: आपके दांत आकर्षक सफ़ेद, आपकी सांस तरोताज़ा और दंतक्षय की रोकथाम।

Colgate
DENTAL CREAM
Colgate
STOPS BAD BR
Colgate TRIGARD

दांतों की पूरी सुरक्षा के लिए कोलगेट ट्राइगार्ड टूथब्रश। ये दांतों के एनैमल व मसूड़ों की रक्षा करके दांतों पर जमी परत को हटाते हैं। ८ विभिन्न किस्मों में, परिवार में हरएक के लिए अनुकूल।

सिर्फ़ एक दांतोंका डॉक्टर ही इससे बेहतर देखभाल कर सकता है।

DC.G.64 HN

रचेगा संगीत : राजस्थान शिक्षा विभाग द्वारा शिक्षकों की सृजनात्मक प्रतिभा के विकास हेतु तथा विभिन्न साहित्यिक विधाओं में कार्यरत शिक्षक रचनाकारों को प्रतिनिधित्व प्रदान करने के उद्देश्य से प्रकाशित यह काव्य-संग्रह निश्चित दायरों में बंधी काव्यात्मक एकरसता को तोड़ने में पूर्णतः समर्थ रहा है। कुछ रचनाओं को स्थान मात्र प्रोत्साहन देने हेतु ही प्रदान किया गया है।

रचेगा संगीत (काव्य-संग्रह)

संपादक-- नंदकिशोर आचार्य, प्रकाशक-- राजस्थान प्रकाशन, जयपुर, पृष्ठ--१२३, मूल्य--६ रु. ३४ पै.

जेल में : सुप्रसिद्ध पत्रकार कुलदीप नैयर की जेल-जीवन की अनेक तल्ख एवं अस्वादिष्ट अनुभूतियों एवं सूचना संदर्भों से युक्त कृति **जेल में** भारतीय राजनीति के काले इतिहास के उन अघोषित पृष्ठों को उजागर करती है, जब कि सारे देश में एक 'घुटन' का वातावरण निर्मित हो गया था, तथा देश के चेतनाशील रचनाधर्मियों को 'मीसा' के नाम पर गुमनामी के अंधेरे में जेल की नारकीय जिंदगी जीने को विवश कर दिया गया था। तत्कालीन घुटन, हिंसा और पग-पग पर व्याप्त अनाचार का जीवंत चित्रण कर लेखक ने वर्तमान के समक्ष अनेक अनकहे प्रश्न-चिह्नों को उठाया है जिनका समाधान अभी भी प्रतीक्षित है।

जेल में

लेखक--कुलदीप नैयर, प्रकाशक--राधाकृष्ण प्रकाशन २, अंसारी रोड, दरियागंज, नयी दिल्ली-११०००२, पृष्ठ--१४४, मूल्य--२० रु.

बच्चे समुद्र हैं : आज के परिवेश में जहां कि रचनाकार राजनीतिज्ञों का पिछलग्गू बन, 'दिशा-लेख' के अभाव में भटक गया है, तथा 'संबद्धता' एवं 'प्रतिबद्धता' के काफिलों में जीने लगा है, उन तमाम आडंबरों का सकर्मक उद्घाटन करना सुशील 'राकेश' की रचनाओं की आत्मा है, और वे इस लक्ष्य में काफी कुछ सफल भी हुए हैं।

--सुरेश 'नीरव'

बच्चे समुद्र हैं

लेखक-- सुनील 'राकेश', प्रकाशक--- प्रसंग प्रकाशन, १०२, मोहसिनगंज इलाहाबाद-२११००३, पृष्ठ--८०, मूल्य--१० रु.

गुस्ताखियां : शायद इन गुस्तखियों के लिए लेखक को किसी से माफी मांगने की जरूरत नहीं पड़ेगी, क्योंकि जिनके प्रति ये की गयी हैं उनमें से कुछ तो मुल्के अदम में पहुंच गये हैं और वे अपनी नींद हराम कर लेखक को कोसने हरगिज नहीं आयेंगे और जो अभी मस्ती में जिंदगी की पैंगें मार रहे हैं वे खुद अपने ऊपर हंसेंगे, खीजेंगे और फख्र महसूस करेंगे कि भाई खूब उछाला! इनमें उर्दू अदीबों की जिंदगी की पुर-लुत्फ झलकियां हैं, हंसी-मजाक हैं, फब्तियां हैं और कहीं-

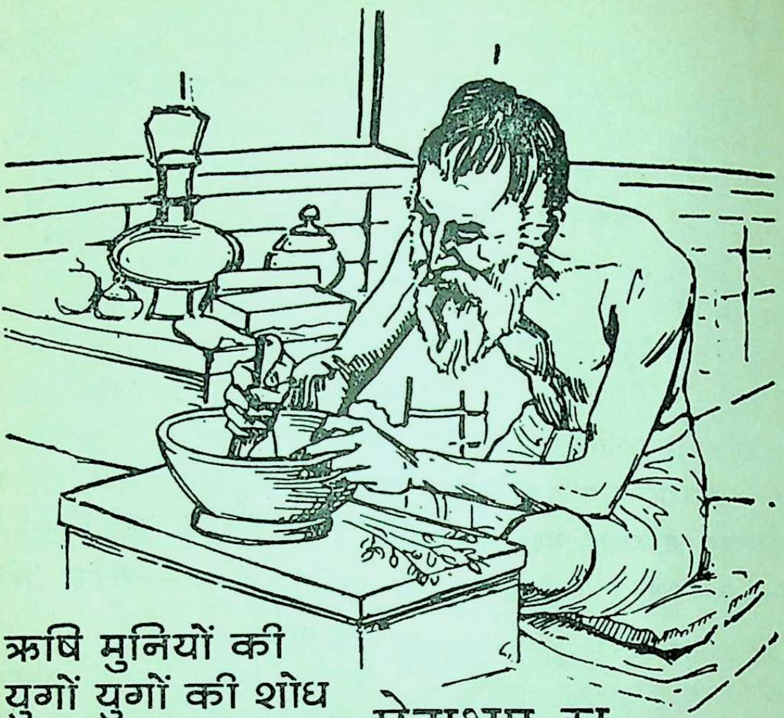

ऋषि मुनियों की
युगों युगों की शोध

सेवाश्रम का

गाय छाप

ब्राह्मी आँवला तैल
BRAHMI AMLA OIL
AYURVED SEVASHRAM LTD.
SEVASHRAM'S
COW BRAND
BLACK
TOOTH POWDER
काला
दन्त-मंजन

ब्राह्मी आँवला
केश-तैल और
काला दन्त-मन्जन

ब्राह्मी आँवला केश-तैल आधुनिक पद्धतिसे निर्मित केवल तैल ही नहीं एक आयुर्वेदिक सौंदर्य प्रसाधन है। तथा काला दन्त-मंजन केवल मंजन ही नहीं एक आयुर्वेदिक औषधि है।

आयुर्वेद सेवाश्रम लिमिटेड,
उदयपुर, वाराणसी, हैदराबाद

heros' AS-143

कहीं लेखक की कलम की नोक की पैनी चुभन—लेखक हैं उर्दू के जानेमाने साहित्यकार प्रकाश पंडित।

—कृष्णचंद्र शर्मा

गुस्ताखियां

लेखक—प्रकाश पंडित, प्रकाशक—पराग प्रकाशन, ३/११४ कर्णगली, विश्वास-नगर, शाहदरा, दिल्ली-३२, पृष्ठ—९६, मूल्य—८ रु.

रंगकर्म : रंगमंच एक प्रयोगशील कला है, जिसे किसी निश्चित ढांचे में नहीं बांधा जा सकता। वास्तव में नाटक लेखक से लेकर निर्देशक, डिजाईनर, तकनीशियन, अभिनेता, दर्शक आदि पर जाकर पूरा होता है। इस पूरी प्रक्रिया के दो प्रमुख स्तंभ होते हैं—लेखक और निर्देशक। नाटक की पटकथा का नियामक यदि लेखक होता है तो प्रदर्शन का निर्देशक। वास्तव में मंच पर नाटक निर्देशक की कला होता है। यही कारण है कि एक ही नाटक के विभिन्न प्रदर्शनों का प्रभाव भिन्न-भिन्न होता है।

प्रस्तुत पुस्तक 'रंगकर्म' पाश्चात्य काव्यशास्त्र ग्रंथमाला की पांचवीं कड़ी है, जिसमें नाट्यमंचन की पूरी प्रक्रिया के सैद्धांतिक और व्यावहारिक धरातलों को स्पष्ट किया गया है। पूरी पुस्तक रंगमंच के सिद्धांत पक्ष पर कम, उसके व्यावहारिक पक्ष पर अधिक बल देती है और संभवतः इसीलिए अधिक रोचक एवं ग्राह्य बन सकी है।

भगवान महावीर कथा : दस अध्यायों में विभक्त यह एक शोध-प्रबंध है, जिसमें महावीर के चरित्र एवं उनकी कथा के स्रोत उनके धर्म, दर्शन, उपदेश तथा समसामयिक एवं परवर्ती प्रभाव आदि का विश्लेषणात्मक वर्णन किया गया है। जैन न होने के कारण लेखक शोध-प्रबंध में पूर्वाग्रहों से काफी मुक्त रहा है।

मेरा पैंतीसवां जन्मदिन : लेखक के प्रथम संकलन की अपेक्षा प्रस्तुत संकलन व्यंग्य की गंभीरता अधिक लिये हुए है। लेखों में हास्य-व्यंग्य हेतु साहित्य और उसकी रूढ़ियों का खुलकर प्रयोग किया गया है। इससे जहां एक ओर लेख वजनी हो गये हैं, वहां वे साहित्य-संस्कारों से विहीन पाठकों को क्लिष्ट लग सकते हैं।

हिमालय के खानाबदोश : हिमालय की गद्दी और गुज्जर जनजातियों के आंचलिक परिवेश, रहन-सहन, रीति-रिवाज आदि पर प्रकाश डालनेवाली यह पुस्तक दोनों जातियों का तुलनात्मक विवेचन भी प्रस्तुत करती है। इन जातियों के विषय में फैली अनेक किंवदंतियों का भी निराकरण किया गया है। कुल मिलाकर पुस्तक इन खानाबदोश जातियों के बारे में अच्छी जानकारी देती है।

—डॉ. शशि शर्मा

मसूड़ों की तकलीफ़ से आराम पाने के आश्चर्यजनक समाचार!

फोरहॅन्स इस्तेमाल करनेवालों द्वारा अपनी खुशी से लिखे सैंकड़ों पत्रों में से दो पत्र।

"....मसूड़ों की हालत बहुत खराब थी...."

"....इस टूथपेस्ट का इस्तेमाल करने से पहले मेरे दांतों और मसूड़ों की हालत बहुत खराब थी.... मसूड़ों की तकलीफ़ ने परेशान कर रखा था। मगर अब इस दशा में जो सुधार हुआ है, उसके लिए आप धन्यवाद के हकदार हैं। आपके फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट को लाखों सलाम।...."

(हस्ताक्षर)– शंकर के. कुंभार,
बम्बई-४०००११

"....दंतपंक्ति मज़बूती से स्वस्थ मसूड़ों में टिकी है...."

"....मैं फोरहॅन्स टूथपेस्ट और डॉक्टर साहब का हृदय से आभारी हूं....दांतों के दर्द और खून आने को रोकने के लिये इन्होंने रोज़ फोरहॅन्स के इस्तेमाल की बात बताई।

अब परिणाम यह है कि....मेरी चमकीली और एकसी दंतपंक्ति मज़बूती से स्वस्थ मसूड़ों में टिकी है....।"

(हस्ताक्षर)– विभूति भूषण बोस,
कलकता-७०००२५

(इन पत्रों के साथ ऐसे ही अन्य पत्रों की फ़ोटोस्टेट कापियां आप जेफ़्री मॅनर्स एण्ड कं. लि. के किसी भी कार्यालय में देख सकते हैं।)

आप भी दांतों के डॉक्टर के बनाये टूथपेस्ट से लाभ उठाइये।

खिले हुए नारंगी रंग के पॅक में
Forhan's
REGISTERED TRADE MARK
Forhan's
FOR THE
GUMS
"BRUSH YOUR TEETH WITH IT"
PREPARED FROM THE FORMULA OF R.J. FORHAN D.D.S. NEW YORK CITY

दांतों के डॉक्टर कहते हैं

नियमित रूप से, ब्रश से दांतों की सफ़ाई और मसूड़ों की मालिश कीजिए और मसूड़ों की तकलीफ़ व दांतों की सड़न से दूर रहिए।

हर रात और हर सवेरे, फोरहॅन्स टूथपेस्ट और फोरहॅन्स डबल एक्शन टूथब्रश से अपने दांतों की सफ़ाई और मसूड़ों की मालिश करना न भूलिए।

डॉक्टर फोरहॅन्स का फ़ॉर्मूला

डॉक्टर फोरहॅन्स का फ़ॉर्मूला अपने असरकारक एस्ट्रिंजेंट के कारण आपके मसूड़ों की सतह मज़बूत बनाता है। और मसूड़ों की तकलीफ़ से दूर रहने में आपकी मदद करता है। फोरहॅन्स से ब्रश करने से आपका पूरा मुँह साफ़ और स्वस्थ बना रहता है।

मसूड़े खराब तो तन्दुरुस्ती खराब

मुफ़्त! 'आपके दांतों और मसूड़ों की रक्षा', दांतों की देखभाल सम्बन्धी रंगीन सूचना पुस्तिका। डाक खर्च के लिये २५ पैसे के टिकट साथ भेजकर इस पते पर लिखिये:
फोरहॅन्स डेन्टल एडवाइज़री ब्यूरो,
पोस्ट बॅग नं. ११४११, फिला. T 123-202
बम्बई-४०००२०
[illegible] लिखिये।

फोरहॅन्स

दांतों के डॉक्टर का बनाया हुआ टूथपेस्ट

202F-172 HIN

रंगकर्म

प्रधान सपादक––डॉ. नगेन्द्र, लेखक––वीरेन्द्र नारायण, प्रकाशक––आलेख प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ–२००, मूल्य––२५ रु.

भगवान महावीर-कथा

लेखक –– डॉ. शोभनाथ पाठक, प्रकाशक––पाठक प्रकाशन कनवानी-२२२१४० जौनपुर उ.प्र., पृष्ठ––२२३, मूल्य–३० रु.

मेरा पैंतीसवां जन्मदिन

लेखक––अशोक शुक्ल, प्रकाशक––आलेख प्रकाशन, दिल्ली पृष्ठ––१३६, मूल्य––१२ रु.

हिमालय के खानाबदोश

लेखक––श्यामसिंह शशि, प्रकाशक––राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली, पृष्ठ––१०३, मूल्य––६ रु.

तानाशाही को चुनौती : आपातकालीन यातना, एवं सामाजिक जुल्मों का एक प्रामाणिक दस्तावेज है, जिसमें लेखक ने भूमिगत गतिविधियों का वह प्रामाणिक इतिहास प्रस्तुत किया है जो पुस्तक के अभाव में अनुद्घाटित ही रह जाता।

तानाशाही को चुनौती

लेखक––प्रो. चंद्रभान गुप्त, प्रकाशक––आपातकालीन संघर्ष इतिहास लेखन समिति मथुरा, पृष्ठ––१६०, मूल्य––५ रु.

बुद्धि-विलास के उत्तर

१. ५ कि. मी., २. बंगलादेश, ३. क. दो यूगोस्लाव पर्वतारोही विगत १३ मई को चढ़े (१७वां सफल दल), ख. पहली बार पश्चिमी पर्वत-श्रेणी मार्ग (वेस्ट रिज रूट) से चढ़े, ४. सिंगरौली (मध्यप्रदेश), २२० वर्गमील क्षेत्र में १६५ मीटर मोटी परत, इस सदी के अंत तक ७ करोड़ ६० लाख टन उत्पादन की क्षमता, ५. भारत, १९७७ में उनकी संख्या ६२८ थी, ६. प्रत्येक देश में महिलाओं की मुक्ति तथा प्रगति का मूल्यांकन, ७. अंकोर मंदिर, ८. क. महाराजा रणजीतसिंह, ख. गुजरांवाला (अब पाकिस्तान में), ९. मस्तिष्क, १०. क. एशिया (२ अरब साढ़े ३५ करोड़)––दुनिया की आधी आबादी से अधिक, ख. शंघाई (१,०८,२०,०००), टोकियो (८५,९२,४२५), न्यूयार्क (७४,८१,६१३)—राष्ट्रसंघ की १९७७ की आबादी-संबंधी वार्षिकी के अनुसार, ११. ज्योति सौर ऊर्जा संस्था, वल्लभ विद्यानगर, गुजरात–विगत जनवरी में स्थापित, १२. चाय, १३. अल्यूमिना सिरेमिक, १४. नॉटिकल (समुद्री) मील, लगभग ६,०८० फुट (१,८५२ मीटर), १५. कैमरा तथा उससे संबंधित पुरजे। ●

भाषा विभाग, हरियाणा चण्डीगढ़

अखिल भारतीय हिन्दी कहानी, निबंध तथा एकांकी प्रतियोगिता वर्ष १९७९-८०

प्रतियोगिता निःशुल्क होगी और निम्नलिखित वर्गों में होगी :-
(क) कहानी (ख) निबंध (साहित्यक एवं सांस्कृतिक) (ग) एकांकी

प्रथम पुरस्कार	२५०/- रुपए
द्वितीय पुरस्कार	१५०/- रुपए
तृतीय पुरस्कार	१००/- रुपए

नियम :-

१. पुरस्कारों को विभाजित किया जा सकता है।

२. पुरस्कृत तथा अच्छी रचनाएं विभागीय पत्रिकाओं में प्रकाशित भी की जा सकेंगी।

३. लेखक द्वारा रचना के सम्बन्ध में निम्न प्रकार से प्रमाण-पत्र अवश्य संलग्न होना चाहिए :-

मैं - - - - - - - - - प्रमाणित करता/करती हूं कि रचना - - - - - - (कहानी / निबंध / एकांकी) मौलिक, अप्रकाशित तथा अप्रसारित है। यह किसी भी प्रतियोगिता या पत्रिका में नहीं भेजी गई है, और प्रतियोगिता का परिणाम निकलने से पूर्व इसे (रचना) कहीं भी नहीं भेजूंगा / भेजूंगी।

लेखक के हस्ताक्षर तथा पूरा पता

४. लेखक का नाम (मोटे अक्षरों में) और पता केवल अग्रेषण पत्र पर होना चाहिए, रचना की किसी प्रति पर नहीं।

५. गत दो वर्षों में प्रतियोगिता के किसी एक वर्ग में निरन्तर विजेता को तीसरे वर्ष पुनः उसी वर्ग में विजेता घोषित होने पर केवल प्रशंसा पत्र ही दिया जाएगा। इस स्थिति में पुरस्कार द्वितीय सर्वोत्तम रचना पर दिया जाएगा।

६. एक वर्ग में लेखक से एक रचना ही स्वीकार्य होगी। लेखक अपनी एक-एक रचना तीनों वर्गों में भी भेज सकता है। किन्तु उसे पुरस्कार एक ही वर्ग में मिलेगा। अन्य दो वर्गों में रचना के पुरस्करणीय होने की स्थिति में उस वर्ग के अंतर्गत उसे केवल रचना के उत्कृष्ट होने का प्रशंसा-पत्र ही दिया जाएगा।

७. रचना में कम से कम १५०० तथा अधिक से अधिक ३००० शब्द होने चाहिएं।

८. प्रतियोगिता में प्राप्त रचनाओं को लौटाया नहीं जाएगा।

रचना की टाईप की हुई अथवा सुवाच्य तीन प्रतियां ३१ जुलाई, १९७९ को सायं ५.०० बजे तक निम्न पते पर अवश्य पहुंच जानी चाहिएं। बाद में प्राप्त रचनाओं पर कोई विचार नहीं किया जाएगा।

निदेशक, भाषा विभाग, हरियाणा,
१५८० / १८-डी, चण्डीगढ़-१६००१८

बस तेरे लिए !

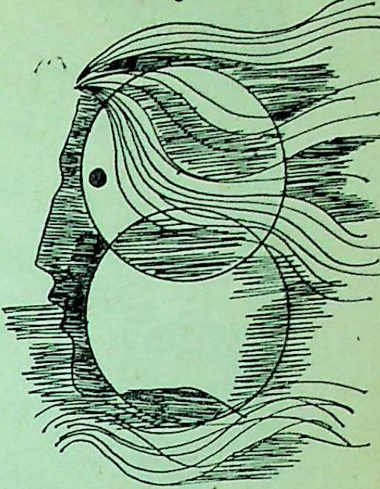

मैंने दर्द संजोया है
वह है तुझको पाने के लिए
मेरे अवलंबन की आशा
मेरे जीवन की परिभाषा
तुम्हीं हो प्रिये ! बस, तुम्हीं हो प्रिये !

मैंने कंटक बीने हैं
पथ के तेरे आने के लिए
मैंने दीप जलाये हैं
तुझको मुझ तक लाने के लिए
तुम दिव्य प्रिये ! दिव्या हो प्रिये !

बहुरूप बनाये हैं मैंने
बहुरंग सजाये हैं मैंने
बहुराग अलापे हैं मैंने
सपने भी सजाये हैं मैंने
प्रियतम ! तुझसे मिलने के लिए

उपवन जो लगाये हैं मैंने
तेरा मन हर लेने के लिए
नवमार्ग बनाया है मैंने
मुझको तुझ तक आने के लिए
तू लक्ष्य प्रिये ! गंतव्य प्रिये !

कविता जो रची है मैंने
अद्भुत, अतिप्रिय, प्रियतम के लिए
जो होंठ हिलाये हैं मैंने
बस नाम तेरा लेने के लिए
अतिप्रिय 'लवलीना' नाम प्रिये !

पलकें जो उठायी हैं मैंने
बस तेरे दर्शन के लिए
प्रतिबिंब बनाया पुतली में
स्थायी तुझे लखने के लिए
ओ प्राण प्रिये ! ओ प्राण प्रिये !

--रामसहाय यात्री

एक द्वीप जिसे देवताओं ने बसाया, सोने के परकोटे से सजाया और जिसे एक दिन क्रोधित समंदर पी गया।...एक द्वीप जो इतिहास की सर्वाधिक रहस्यमय कथा बना हुआ है। प्लेटो के संवादों में वर्णित इस द्वीप को कल्पना की रचना माना जाता था, पर प्रख्यात लेखक—चार्ल्स बर्लिट्ज ने अपनी पुस्तक 'दि मिस्ट्री ऑव अटलांटिस' में सिद्ध कर दिया है कि ऐसे द्वीप का अस्तित्व था। प्रस्तुत है, योगेन्द्रकुमार द्वारा इसी पुस्तक का सार-संक्षेप।

सार-संक्षेप

ह द्वीप जिसे समंदर पी गया

चार्ल्स बर्लिट्ज

समुद्र के बीच में एक विशाल सदाबहार द्वीप था। प्रकृति ने अपना सारा सौंदर्य जैसे वहीं लुटा दिया था। ऊंचे हिममंडित पर्वत-शिखर, उनसे उतरती सर्पिल नदियां। घाटियों में फूलों के इंद्रधनुषी गलीचे बिछे थे, उन पर सतरंगी तितलियां उड़ती फिरतीं। धरती में अमृत था। खेतों में फसलें लहलहातीं और वहां के निवासियों के होठों पर हंसी।

सचमुच उस द्वीप को देवताओं ने अपने लिए बसाया था। द्वीप पर एक नगर बसा था। तांबे, चांदी और सोने के तीन परकोटों से घिरा, ऊंचे-ऊंचे भवनोंवाला सुंदर नगर था। वहां गौरवर्णी लोग बसते थे, उन्हें सब सुख प्राप्त थे। द्वीप के किनारे पर एक विशाल बंदरगाह था। वहां बड़े-बड़े जलयान खड़े थे। उस द्वीप के निवासी लंबी यात्राओं पर जाया करते थे।

बड़े द्वीप से थोड़ी दूर पर छोटे-छोटे द्वीपों की श्रृंखला थी। उन लोगों ने छोटे द्वीपों को पुलों द्वारा बड़े द्वीप से जोड़ लिया था।

वह द्वीप एक स्वर्ग था और वहां रहनेवाले लोग थे देवता, उनके जीवन में सुख-सुविधा, वैभव-विलास की अनवरत धारा प्रवाहित थी। उनके लिए धरती पर ही स्वर्ग उतर आया था।

लेकिन इन स्वर्गिक सुखों का एक दुष्परिणाम भी हुआ। द्वीपवासियों ने निरंतर आनंद व भोग-विलास को ही अपना लक्ष्य मान लिया। वे सब कुछ भूलकर उसमें रमते चले गये। न कोई अनुशासन बचा, न मर्यादा रही। उच्छृंखलता का नग्न नृत्य होने लगा।

देवताओं ने उस पवित्र द्वीप को वरदान में दिया था। वरदान का दुरुपयोग देवता सहन न कर सके। आखिर उन्होंने पापी, विलासी मानवों को दंडित करने का निश्चय किया।

एक रात आकाश में काले-काले बादल उमड़ आये। मूसलाधार बारिश शुरू हुई तो रुकी नहीं और फिर धरती कांपने लगी। वह क्रोध में करवट बदल रही थी। भयंकर भूकंप आया। द्वीप को नष्ट-भ्रष्ट करता गुजर गया। भूकंपीय दबाव के कारण ऊंची लहरें उठने लगीं। एक भयानक विस्फोट हुआ और पूरा द्वीप सदा-सदा के लिए सागर के गर्भ में समा गया।

उसी के साथ वह शानदार नगर, वहां की **अनोखी** सभ्यता, उसके सब प्रतीक नष्ट हो गये। देवताओं का दंड पूरा हो गया **था।** द्वीप के अधिकांश लोगों ने जीवित ही जल-समाधि ले ली। जो कुछ बचे, वे **लकड़ी** के लट्ठों व छोटी-छोटी नौकाओं **के सहारे** दूर के द्वीपों पर पहुंचे, अपने मन **पर उस** विनाश के जल-प्रलय की याद **लिये** हुए।

पढ़नेवालों को यह कथा कुछ परिचित लग सकती है। चाहे वे भारत के हों या अटलांटिक पार पेरू और मेक्सिको के, उत्तर में आइसलैंड के रहनेवाले हों या विश्व-सभ्यताओं के आदिकेंद्र सुमेर 'बेबीलोन' असीरिया के।

हां, संसार की समस्त सभ्यताओं के पास, चाहे वे कहीं की हों या जिन्हें हम अविकसित आदिम-जातियां कहते हैं, उनके पास भी इस प्राचीन जल-प्लावन की याद सुरक्षित है—आख्यानों में, भित्ति चित्रों में, प्राचीन धर्म-ग्रंथों में।

यह बात अपने में कुछ कम आश्चर्यजनक नहीं है कि आधार और तत्त्व की दृष्टि से परस्पर विरोधी सभ्यताएं भी अपने मूल पुरुष का एक-सा ही आख्यान कहती हैं। सभी सभ्यताओं का मूल पुरुष वह व्यक्ति है, जो जल-प्रलय से निकल कर आया और जिसने बाद में एक नयी सभ्यता की नींव डाली। या इसे यों कहें कि उस द्वीप के समुद्र में समाते समय कुछ लोग बचे। जो अलग-अलग दिशाओं में विभिन्न स्थानों पर पहुंचे और उन्होंने फिर से जीवन शुरू किया, लेकिन अपने मूल-स्थान और विनाशक जल-प्रलय की कटुस्मृति जीवन भर उनके मन-मस्तिष्क पर छायी रही और पीढ़ी दर-पीढ़ी वह आख्यायित होती चली गयी।

विश्व की समस्त सभ्यताओं व संस्कृतियों का वह आदिकेंद्र था अटलांटिस नामक एक विशाल द्वीप, जो अटलांटिक सागर में अफरीकी मुख्यभूमि में जिब्राल्टर से दूर अवस्थित था।

एक कपोलकल्पित द्वीप

विश्व-कोश में अटलांटिस को खोया हुआ कपोलकल्पित द्वीप कहा गया है। इसके बारे में सबसे पहले हम महान ग्रीक दार्शनिक प्लेटो की दार्शनिक कृतियों के माध्यम से जानते हैं। जिसमें प्लेटो एथेंस के सोलोन की मिस्र यात्रा का जिक्र करते हुए वहां मिस्री पुजारियों से हुई उसकी भेंट का विवरण देता है। मिस्री पुजारी सोलोन से कहते हैं कि आज से दस हजार वर्ष पहले हरकुलिस (जिब्राल्टर) की खाड़ी से आगे अटलांटिस नामक स्वर्ग-द्वीप था। वहां के निवासियों को उनकी अराजकता के लिए देवताओं ने दंडित किया था। द्वीप एक ही रात में समुद्र में समा गया। वहीं के बचे लोग यहां (मिस्र) आये और उन्होंने मिस्री सभ्यता की नींव डाली।

मिस्री पुजारियों ने अटलांटिस के बारे में प्राचीन मिस्री दस्तावेजों और

कृतियों का हवाला दिया था, जो इस समय उपलब्ध नहीं थीं।

प्लेटो से लेकर आज तक के हजारों वर्षों में अटलांटिस स्वर्ग द्वीप का नाम बार-बार सुनायी देता है।

प्लेटो के समय से ही यह विवादास्पद हो गया था कि अटलांटिस सचमुच कोई द्वीप था या प्लेटो ने अपनी कल्पना के सहारे एक आदर्श राज्य की रूपरेखा प्रस्तुत की थी और अतिचार के प्रति चेतावनी दी थी।

अब तक इस विषय पर लगभग ५००० पुस्तकें व लेख आदि प्रकाशित हो चुके हैं विश्व की सभी भाषाओं में। इसी बात से यह सिद्ध हो जाता है कि अटलांटिस ने मनुष्य की कल्पना को कितना कुरेदा है, प्रेरित किया है।

अस्तित्व की पुष्टि

पिछली डेढ़ शती से लिखी गयीं इन हजारों पुस्तकों में इग्नाटियस डोनेली की पुस्तक सर्वाधिक चर्चित रही है। अब तक उसके पचास से अधिक संस्करण निकल चुके हैं। यह १८८२ में प्रकाशित हुई थी। डोनेली ने अटलांटिस द्वीप के अस्तित्व को यथार्थ मानते हुए अपनी तेरह अवधारणाएं प्रस्तुत की थीं—

१. अंधमहासागर में, भूमध्यसागर के मुहाने के दूसरी ओर एक बड़ा द्वीप था। वह एक बृहत अटलांटिक महाद्वीप का ही हिस्सा था और पुराने समय में उसे अटलांटिस के नाम से पुकारा जाता था।

२. प्लेटो द्वारा दिया गया उस द्वीप का विवरण एक कपोलकल्पना नहीं, वस्तुतः प्राचीन इतिहास का ही अनुस्मरण था।

३. अटलांटिस ही वह स्थान था, जहां पहले-पहले मानव ने अपने बर्बर जीवन से सभ्यता की ओर कदम बढ़ाये।

४. समय बीतने के साथ अटलांटिस एक जनसंख्या बहुल और सशक्त राष्ट्र बन गया। और उसी जाति के लोग नये स्थानों की खोज में बढ़कर मेक्सिको खाड़ी क्षेत्र, मिसीसिपी नदी, अमेजन, दक्षिण अमरीका के प्रशांत तटीय क्षेत्र, भूमध्यसागर, यूरोप के पश्चिमी तट क्षेत्र, बाल्टिक, केस्पियन समुद्र क्षेत्र में फैल गये।

५. यही प्राचीन सभ्यताओं का स्वर्गलोक था।

६. प्राचीन ग्रीस, फीजीशिया, हिंदू स्कैंडेनेवियाई धर्मकथाओं के देवी-देवता यहीं के रहनेवाले लोग थे। और तत्संबंधी कथाएं इनका प्राचीन इतिहास ही थीं।

७. प्राचीन मिस्र, पेरू के पौराणिक आख्यान ही अटलांटिस का मूल धर्म था और वह था सूर्य-पूजा।

८. अटलांटिसवासियों द्वारा स्थापित सबसे पुराना उपनिवेश मिस्र में था।

९. यूरोप की कांस्य सभ्यता के उपकरण अटलांटिस से ही लिये गये थे। सर्वप्रथम लोहा व इस्पात भी अटलांटिसवासियों ने ही बनाया।

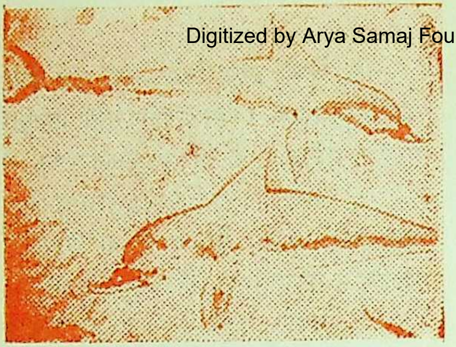

मिनोअन क्रीट से प्राप्त जार पर अंकित समुद्री जीव

१०. यूरोप की समस्त वर्णमालाएं फीनिशियाई वर्णों से निकली हैं। और फीनिशिया ने इसे अटलांटिस से लिया था।

११. आर्य या इंडो-आर्य जातियों का मूल स्थान अटलांटिस ही था।

१२. अटलांटिस एक भयंकर भूकंप के दौरान समुद्र में समा गया। वहां के निवासियों की जीवित ही जल-समाधि हो गयी।

१३. बहुत थोड़े लोग नौकाओं व लट्ठों के सहारे बचकर निकल सके। इस महाविनाश की अमिट छाप उनके मस्तिष्क पर पड़ गयी। और यही कारण है कि संसार की सब जातियों के आख्यानों में जलप्रलय की कथाएं मिलती हैं।

जब भी अटलांटिस की बात होती है तो उसे कपोल-कल्पना कहनेवाले और ऐतिहासिक सत्य माननेवाले दोनों ही वर्ग नजर आते हैं। इसे कपोल-कल्पना कहनेवाले लोगों का काम आसान है, जबकि अटलांटिस के पक्षधरों का बहुत मुश्किल, क्योंकि उन्हें अपनी बात का एक-एक सूत्र तथ्यों-प्रमाणों से सिद्ध करके दिखाना है। इसके बावजूद डूबे अटलांटिस को ढूंढ़ निकालने की दिशा में प्रयास किये गये हैं। वनस्पति-विज्ञान, प्राणि-विज्ञान, भूगर्भ-विज्ञान, जीव-विज्ञान, भूकंप-विज्ञान व भाषा-विज्ञान की कसौटियों पर विद्वानों व वैज्ञानिकों ने अटलांटिस को कसा है और अपने निष्कर्ष दिये हैं।

भूमि : जो द्वीपों में बदल गयी

इन सबसे अटलांटिस द्वीप के संबंध में विशद साहित्य आज सामने है, जो लाखों पृष्ठों में है। अब तक मिले प्रमाणों के आधार पर वैज्ञानिकों का कहना है कि काफी पहले यूरोप और अमरीका एक स्थल पट्टी के जरिये आपस में जुड़े हुए थे, जो पट्टी बाद में टूटकर छोटे-बड़े द्वीपों में बदल गयी। अटलांटिस भी उन्हीं में एक था। भूकंप-विज्ञान के अनुसार अटलांटिक महासागर दुनिया का सबसे अस्थिर क्षेत्र है, यानी——इस क्षेत्र में सबसे ज्यादा भूकंप आते हैं, धरती बहुत ज्यादा करवटें बदलती है। अटलांटिक सागर में मौजूद उत्तरी मध्य पर्वत-शृंखला उत्तरी ब्राजील से लेकर आइसलैंड तक फैली हुई है। वह अत्यंत अस्थिर है—उसके कारण अकसर ही इस क्षेत्र में बड़े-बड़े द्वीप उभरते हैं, डूबते हैं, बनते हैं, टूटते हैं।

इधर विज्ञान के पास खोज के नये-नये उपकरण व विधियां आती जा रही हैं। पानी में खोज की नयी तकनीकी से हर

दिन बीतने के साथ नयी-नयी बातें पता चल रही हैं और उनसे अटलांटिस के पक्षधरों को नया उत्साह मिल रहा है।

पिछले कुछ वर्षों में अटलांटिस को दो बार खोज निकालने का दावा किया गया है—एक बार भूमध्यसागर में और दूसरी बार अटलांटिक के पार बहामा द्वीपसमूह में विमिनी के पास।

परामनोवैज्ञानिक भविष्यवाणी

प्रसिद्ध परामनोवैज्ञानिक एडवर्ड साइस ने १९४० में भविष्यवाणी की थी कि १९६८-६९ में विमिनी के पास एक अटलांटियन मंदिर पानी से बाहर उभर कर आयेगा। उसने कहा था कि पानी में डूबे अटलांटिस का एक भाग बहामा के पास था और बहामा डूबे हुए पोसिडिया द्वीप का ही शीर्ष है। पोसिडिया अटलांटिस का पश्चिमी भाग था। साइस ने कहा था—'पानी से ऊपर आनेवाला अटलांटिस का पहला भाग पोसिडिया ही होगा।'

कितना विचित्र संयोग है कि जहां साइस ने संकेत किया था, उसी स्थल पर पानी में कई भवन ऊपर उभरते दिखायी दिये। वे कितने पुराने हैं, यह बात अभी तक प्रमाणित नहीं हो सकी है। इन भवनों को वायुयान से देखा और छायांकित किया गया।

इस स्थल के दक्षिण समुद्र में एक गहरी खाई है। यहां समुद्र १८,००० फुट गहरा है। साइस ने कहा था कि ये स्थान डूबे हुए अटलांटिस द्वीप के सर्वोच्च अंश हैं।

कैरीबियन द्वीपसमूह के पास पानी में अन्य खंडहर भी देखे गये हैं। हाइटी के तटवर्ती समुद्र में एक पूरा नगर समुद्र में डूबा दिखायी दिया है। सर्वेक्षणों से पता चलता है कि अटलांटिक और कैरीबियन महासागर का तटवर्ती जलमग्न क्षेत्र कभी पानी से ऊपर था और यह उस समय डूबा जब मनुष्य सभ्य हो चुका था।

विमिनी के पास पानी में उभरते

मिनोअन क्रीट से प्राप्त एक सुंदर जार

क्या आप हररोज़ का कामकाज फिरसे करने को उत्सुक हैं?

ग्लैक्सोज़-डी® आपको तुरन्त शक्ति देकर थकान मिटाता है।

ग्लैक्सोज़-डी से आप घर के काम-काज के लिए तैयार हो जाती हैं। क्योंकि ग्लैक्सोज़-डी आप को वह भरपूर शक्ति देता है, जो आप को थकान के बाद फिर से चुस्ती-फुर्ती के लिए चाहिए। डॉक्टरों की सिफारिश पाने वाला ग्लैक्सोज़-डी बहुत उच्च कोटि का ग्लूकोज़ है जो विटामिन-डी, कैल्शियम और फॉस्फरस से युक्त है।

ग्लैक्सोज़-डी आप की थकान मिटाता है और आप को ऐसी शक्ति देता है कि आप मज़े से घर का काम-काज करती रहती हैं।

ग्लैक्सोज़-डी®
सारे परिवार के लिए
तुरन्त शक्ति का साधन

dCA/GL/54/HN/Rev

110597

भवनों की जांच की जा रही है। कुछ सूत्र उन्हें मय सभ्यता के अवशेष बता रहे थे अगर उनका मय होना प्रमाणित हो जाता है तब भी अटलांटिसवाली थ्योरी गलत नहीं होती, क्योंकि स्वयं मय-सभ्यता को भी किसी न किसी रूप में अटलांटिस-वासियों से ही संबंधित बताया जाता है।

द्वीप का अतीत

क्रीट के उत्तर में थेरा नामक द्वीप था। १५०० ईसवी पूर्व एक भूकंप में यह नष्ट हो गया था। इसके परिणामस्वरूप एक बड़ा भूभाग पानी में समा गया था। कुछ लोगों का कहना है कि प्लेटो ने अपने संवाद में इसी द्वीप के समुद्र में समा जाने का संकेत किया था। इतिहास बताता है कि लगभग उसी समय विकसित क्रीटन सभ्यता भी इसी तरह नष्ट हो गयी थी। अरस्तू (३८४-३२२ ईसा पूर्व) प्लेटो का एक शिष्य था। उसने सबसे पहले प्लेटो की अटलांटिस थ्योरी के प्रति अविश्वास व्यक्त किया था। लेकिन उसने स्वयं अटलांटिक महाद्वीप में मौजूद एक बड़े द्वीप का हवाला दिया था, जिसे कार्थेजवासी 'अंतिला' कहकर पुकारते थे।

क्रांतोर (५ सदी ईसा पूर्व) ने इन स्तंभों को देखने की बात कही थी जिन पर अटलांटिस की कथा खुदी हुई थी। अन्य प्राचीन लेखकों ने भी अटलांटिक महासागर में स्थित एक बड़े द्वीप के होने के हवाले दिये हैं, भले ही उन्होंने उसे अटलांटिस न कहकर किसी और नाम से पुकारा हो।

प्लुटार्क (४६-१२० ई.) ने ऐसे महाद्वीप को स्ट्रनेया कहा था। होमर ने भी ऐसे ही एक द्वीप का जिक्र किया था।

मार्सेलिनस (३३०–३९५ ई.) एक रोमन इतिहासकार था। उसने लिखा है—अलेक्जेंड्रिया के बुद्धिजीवी और दार्शनिक अटलांटिस के नष्ट होने को एक ऐतिहासिक तथ्य मानते हैं।

चर्चित मिथक

प्रोक्लस (४१०–४८५ ई.) के अनुसार पश्चिमी यूरोप से दूर समुद्र में कुछ द्वीप हैं। वहां के निवासी कहते हैं कि पहले कभी एक बड़ा द्वीप था, जिसके निवासी उन पर शासन करते थे। उस द्वीप को समुद्र ने निगल लिया था।

होमर (ईसा पूर्व आठवीं सदी) ने अपनी कृति ओडेसी में देवी ऐथेना के मुंह से कहलवाया है—'समुद्र के बीचोंबीच एक द्वीप है। उस पर एक देवी रहती है जो चतुर एटलस की बेटी है।'

कई प्रसंगों में इस द्वीप को भिन्न-भिन्न नामों से पुकारा गया है। यहां नाम इतने महत्त्वपूर्ण नहीं जितना यह तथ्य कि ऐसा हर द्वीप हर बार विस्फोट व भूकंप के बाद समुद्र में समा जाता है।

प्लेटो के अनुसार सबसे पहले उसने अटलांटिस के बारे में मिस्री पुजारियों से सुना था, इसलिए संभव है, किसी प्राचीन मिस्री पेपीरस पट्टी में अटलांटिस का

त्वचा की प्यार भरी पुकार

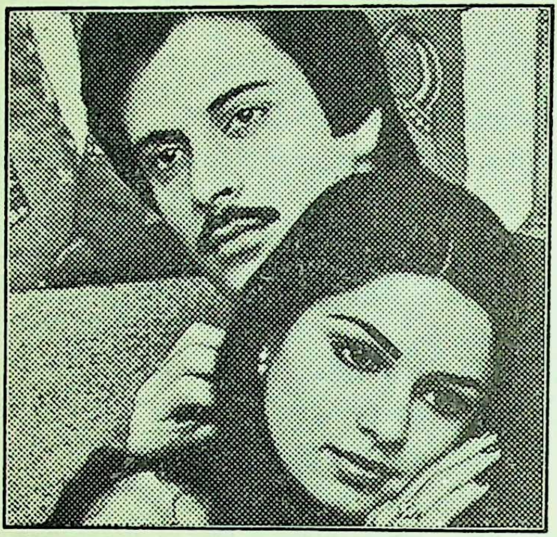

लॅक्मे वैनिशिंग क्रीम—आपका अपना स्वयं संपूर्ण मेक-अप् और आदर्श पाउडर बेस। कोमल इतनी—जैसे किसी का प्यार-भरा स्पर्श। हर मौसम में, हर समय आपका रक्षक ताकि आपका रंग-रूप सदा गोरा, ताज़गी-भरा और बेदाग़-निखरा रहे।

लॅक्मे वैनिशिंग क्रीम

L
Lakmé
VANISHING CREAM

जिन्हें त्वचा की पहचान है

लॅक्मे

लैवेन्डर से महकते सपनों की बहार—लॅक्मे द्वारा साकार

आप जहाँ भी हों, छा जाये हरियाली, ताज़गी। इस कमसिनी में भी आपको इसका रहस्य पता है : और वह है फ्रेंच लैवेन्डर का रहस्य। जो बन्द है लॅक्मे लैवेन्डर टॅल्क में। शीतल, कोमल, लॅक्मे लैवेन्डर टॅल्क।

लॅक्मे लैवेन्डर टॅल्क

Lakmé
Lakmé

आपको अधिक सुन्दर बनाने वाले

लॅक्मे

daCunha/L-VC/LT/5 HN

जि

हव
के
खो
यह
हो
अने
का
से

यह
पुस
डा
अल
सव
कि
मि
संख
अभ
हेरे
पूर्व
हार
अल
जुल
हव
दि
मह
कि
ओ
है

जिक्र मिल जाए।

एक मिस्री रिकॉर्ड में इस बात का हवाला मिला था कि दूसरे मिस्री राजवंश के फराओ ने अटलांटिस के खोये द्वीप की खोज में एक अभियान-दल भेजा था। यह अभियान-दल पांच वर्ष बाद असफल होकर लौट आया था। इसके अतिरिक्त अनेक मिस्री अभिलेखों में उन आक्रमणकारियों का जिक्र है, जो सागर के बीच कहीं से आते थे।

इस संदर्भ में एक उल्लेखनीय बात यह है कि अलेक्जेंड्रिया का प्रसिद्ध मिस्री पुस्तकालय विधर्मियों द्वारा खाक कर डाला गया था। उसमें बहुत बड़ी संख्या में अलभ्य पांडुलिपियां व अभिलेख थे। हो सकता है, अटलांटिस संबंधी कोई संदर्भ किसी दबे स्मारक में छिपा पड़ा हो। ऐसे मिस्री स्मारकों की संख्या हजारों में है जो अभी रेत के नीचे गुम हैं। हेरोडोटस (५ सदी ईसा पूर्व) एक प्रसिद्ध इतिहासकार था। उसने अटलांटिस से मिलते-जुलते कई नामों का हवाला अपनी कृतियों में दिया है। अटलांटिक महासागर में मौजूद किसी द्वीप-सभ्यता की ओर भी इशारा किया है उसने। वह अत्रांतेस, अटलांटेस और नामक कबीलों का भी जिक्र करता है—'जिन्होंने अपने नाम ऊंचे एटलस पर्वत से लिये थे।'

हेरोडोटस के अनुसार भूमध्यसागर पहले सूखा था। कभी एक विनाशक भूकंप आया और अटलांटिक महासागर का जल भूमध्यसागर बेसिन में प्रवेश कर गया। उसी भूकंप के कारण जिब्राल्टर के मुहाने पर मौजूद स्थल-अवरोध समुद्र में समा गया था।

ग्रीक इतिहासकार तिमाजेनस (१ सदी ईसा पूर्व) प्राचीन काल के बारे में बताता है कि वहां के निवासियों के अनुसार उन पर ऐसे लोगों ने हमला किया, जिनका द्वीप समुद्र में समा गया था।

डियोडोरस सिक्यूलस (ईसा से एक सदी पूर्व) ने दो देशों के बीच हुए युद्ध

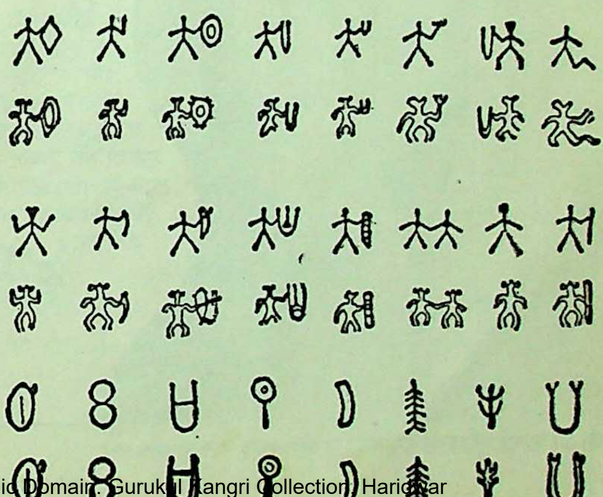

सिंधु-सभ्यता लिपि एवं ईस्टर द्वीप से प्राप्त लिपि में अद्भुत साम्य है। एक रेखावाली लिपि सिंधु-सभ्यता की है तथा उसके नीचे ईस्टर द्वीप की लिपि है।

गर्म हवा के झोंकों से आपकी त्वचा झुलस जाती है। अपनी त्वचा की सुरक्षा कीजिये। ये हैं चार उपाय।

१ गर्मी जितनी बढ़ेगी, आपको उतना ही ज़्यादा पसीना होगा, आपकी त्वचा शुष्क होती जायेगी। ऐसे समय पानी ज़्यादा पीजिये। और हो सके तो ताज़े फलों का रस।

२ शरीर में धूप लगना अच्छा है। इससे शरीर में विटामिन 'डी' बनता है जो कि त्वचा के लिये बहुत ज़रूरी है। पर ख्याल रखिये कड़ी धूप की आँच सीधे-सीधे बदन पर न लगे। आँखों के आसपास की कोमल त्वचा की सुरक्षा के लिये धूप का चश्मा लगाइये।

३ गर्मी के दिनों में होती है बेचैनी— पसीने और घमौरियों की परेशानी। इससे बचने के लिये दिन में दो बार नहाइये। फिर शरीर पर अच्छी तरह पाउडर छिड़किये।

४ हर रात सोने से पहले बोरोलीन का इस्तेमाल बहुत फायदेमंद साबित होगा। सारे शरीर पर हौले-हौले लगाइये यह सुगन्धित ऐन्टिसेप्टिक क्रीम—विशेषतः बाहर से आने के बाद। बोरोलीन का प्रयोग गर्मी के दिनों में आपको चकत्तों और शुष्क-त्वचा की परेशानियों से बचाता है। इसके अलावा, छोटे-मोटे ज़ख्मों के लिये निर्भरयोग्य ऐन्टिसेप्टिक का काम करती है—बोरोलीन।

आपकी त्वचा की सुरक्षा के लिये
सुगन्धित ऐन्टिसेप्टिक क्रीम

बोरोलीन

जी डी फार्मास्युटिकल्स लिमिटेड बोरोलीन हाउस कलकत्ता ७०० ००३

GD 3043

का विवरण दिया है। उनमें से एक का नाम अटलांटियो था। अटलांटियो का वर्णन करते हुए वह कहता है— 'वह देश लीबिया से दूर गहरे समुद्र में था, बहुत बड़ा। पश्चिम में बसे इस द्वीप की जलवायु इतनी मृदु थी कि वहां हर तरह के फल-फूल उगते थे। नगर बहुत बड़ा था और वहां के भवन अत्यंत भव्य।

तरतुलियन (१६०–२४० ईस्वी) ने पृथ्वी में आये परिवर्तनों का जिक्र करते हुए अटलांटिस के समुद्र में डूबने का जिक्र किया था—'डेलेस द्वीप नहीं रहा, समोस तो रेत का ढेर बन गया है और अटलांटिक में लीबिया या एशिया के आकार का एक द्वीप समुद्र में समा गया। इटली के एक हिस्से में दरार पड़ गयी। वहां समुद्र भर गया। अलग हुआ हिस्सा सिसली कहलाया।

ऐसे ही हजारों विवरण विभिन्न देशों के इतिहासों में भरे पड़े हैं। इनमें दिये गये नाम अकसर ही परस्पर विरोधी और भ्रामक हैं, लेकिन एक सूत्र सब में है कि भूमध्यसागरीय देशों के निवासियों को एक ऐसे द्वीप के निवासियों की अस्पष्ट स्मृति थी, जो खुले समुद्र में दूर स्थित था और भयानक भूकंप में टूट-फूटकर समुद्र में समा गया था।

इतिहास का स्मारक

जल-प्रलय का मिथक हर सभ्यता के पास है। यहां एक प्रश्न उभरता है— अटलांटिस अटलांटिक में था—इसलिए भूमध्यसागरीय देशों के पास यह मिथक रहना समझ में आता है और माना भी जा सकता है कि भारत व चीन-जैसे सुदूर एशियाई देशों में भी यह कथा सार्थवाहों के माध्यम से पहुंच गयी, लेकिन नोर्स-मिथकों की सादृश्यता प्रमाणित करना कठिन होगा और सबसे ज्यादा मुश्किल तब पड़ती है, जब हम दक्षिण व मध्य अमरीकी महाद्वीपों के निवासियों के पास भी यही कथा सुरक्षित देखते हैं। क्या यह माना जाए कि अटलांटिस द्वीप के निवासी पूर्व और पश्चिम दोनों दिशाओं में धावे मारते थे और अटलांटिस के समुद्र में समाने के बाद बचे हुए लोग सब दिशाओं में फैल गये थे। हो सकता है, यह घटना कई हजार वर्ष पूर्व, प्लेटो के अनुसार साढ़े दस हजार वर्ष पहले घटी हो। प्राचीन अज्तेक चित्र-लिपि में कोक्सकोक्स आदिमानव का चित्रण है। महाप्रलय के बाद अपनी पत्नी व बच्चों को लेकर वह एक नाव में चला था। कोक्सकोक्स संबंधी यह चित्र प्रमाण मिज्तेक, जापोतेक, लास्क्लान कबीलों के पास भी मौजूद है।

मध्य अमरीकी देशों में स्पानी विजेताओं ने वहां के आदिम निवासियों के नगरों को आग की भेंट चढ़ा दिया। उसी में सब कुछ स्वाहा हो गया। समयोपरांत कुछ स्पेनी लोगों ने बाद में स्मृति के आधार पर उन नष्ट वृत्तांतों का उल्लेख किया था। उसमें तेज बारिश और भूकंपीय उद्वेलन से एक पूरे द्वीप के पानी में समा जाने का उल्लेख था।

जलन से सताती, खुजलाती घमौरियों की बेचैनी भूल जाइये।
नायसिल
अपनाइये!
शीघ्र आराम दिलानेवाला
घमौरियों का
पाउडर
Glaxo
२ पैक में उपलब्ध— नीला और सैण्डलवुड
Glaxo
nycil
PRICKLY HEAT POWDER
नायसिल लाइये—घमौरियां भुलाइये!
केवल ६·६३रु.* में उपलब्ध
* अधिकतम रीटेल कीमत स्थानीय कर अतिरिक्त
Sista's-GN-79-364-C-Hin

कुछ इसी तरह की कथाएं उत्तरी अमरीका के कबीलेवालों से सुनी थीं वहां पहुंचनेवाले खोजियों ने।

जार्ज कटलिन ने एक उत्तर अमरीकी कबीलाई परंपरा का जिक्र किया था—एक आदमी चीखता-चिल्लाता पूरी बस्ती में घूमता है, हर व्यक्ति के सामने झुकता हुआ। हर आदमी उससे पूछता है—"क्या हुआ?" जवाब में वह कहता है, "धरती जलप्रलय में डूब गयी, अकेला मैं ही बचा हूं।"

एक होपी मिथक के अनुसार समुद्र में एक ऐसा विशाल द्वीप था जिस पर अनेक भव्य नगर थे, लेकिन जब वहां के निवासी दुष्ट हो गये तब ईश्वर ने एक जलप्रलय में उसे नष्ट कर दिया।

कोलंबिया के चिबचा आदिवासियों की मान्यता है कि ईश्वर चिबचाकुन ने ही जलप्रलय लाकर संसार को नष्ट कर दिया।

अमरीकी महाद्वीपों में प्रचलित इन जलप्रलय-कथाओं के बारे में सबसे दिलचस्प बात यह है कि जब कोलंबस वहां पहुंचा तब इन प्रलय-कथाओं को वहां के आदिवासी काफी पहले से जानते थे।

पुराने जमाने में फीनिशियाई और कार्थेजियन नाविक ही जिब्राल्टर को पार करके अटलांटिक में जाया करते थे। वे अकसर ही इस तरह की बातें कहते थे—'आगे समुद्र अत्यंत विषम है। एकदम उथला और कीचड़ से भरा। यह कीचड़ एक द्वीप के पानी में डूब जाने से ही बनी है।'

कार्थेज के एडमिरल हेमिल्को ने भी इस तरह कहा था—'समुद्र में घास-फूस बहुत है और वह इतना उथला है कि जमीन दिखायी देती है।'

इस बात के प्रमाण मिलते हैं कि सिकंदर ने फीनिशिया में टायर को जीतने के बाद एक बड़े जहाजी बेड़े को भूमध्यसागर से आगे समुद्र में भेजा ताकि सुदूर अवस्थित दूसरी फीनिशियाई बस्तियों को भी जीता जा सके। लेकिन वह जहाजी बेड़ा गायब हो गया, कुछ पता ही नहीं चला कि उसका हुआ क्या?

अरस्तू बताता है कि कार्थेजवासी जिन द्वीपों की यात्रा किया करते थे उनमें अंतिला नामक द्वीप भी था। यह नाम अटलांटिस से मिलता-जुलता है। अकसर ही जलप्रलय-कथाओं में नष्ट हुए द्वीप को एवलान, एंतिला आदि नामों से पुकारा जाता है।

लोग कहते हैं मनुष्यों में नहीं, पशु-पक्षियों तक में उस खोये द्वीप की स्मृति शेष है और वे इसके प्रमाण में पशु-पक्षी-जगत के कुछ विचित्र जानवरों की ओर संकेत करते हैं—प्रतिवर्ष प्रवासी पक्षी उत्तर अमरीका से दक्षिण अमरीका जाते हैं। जैसे ही प्रवासी पक्षियों के झुंड एजोर द्वीप के पास पहुंचते हैं, वे गोल-गोल घूमने लगते हैं, मानो इस द्वीप को खोज रहे हैं जहां पहले वे मार्ग में उतरकर विश्राम

Sista's-GN-79-364-C-Hin

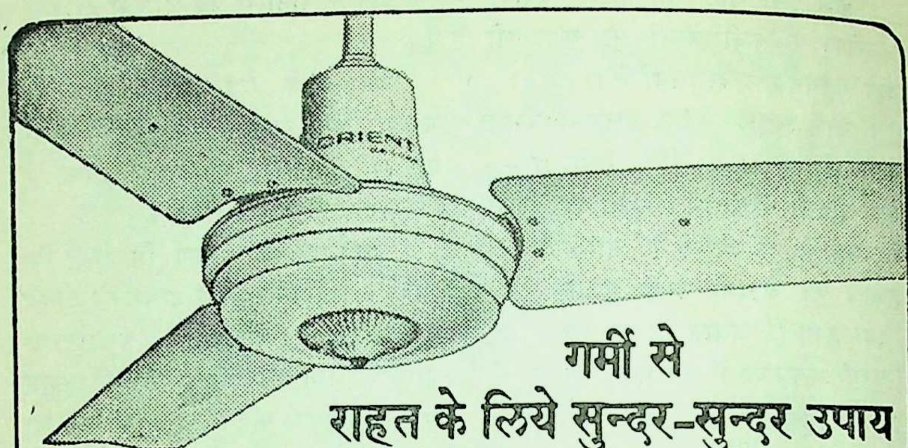

गर्मी से
राहत के लिये सुन्दर-सुन्दर उपाय
ओरिएन्ट
पंखे

आपकी जरुरत, आपकी पसन्द, आपकी खरीदने की सुविधा जैसी भी हो, ओरिएन्ट आपके लिये कहीं अधिक सन्तोषजनक सौदा रहेगा. पंखों का संग्रह इतना बड़ा है कि क्वालिटी में, सुन्दरता में, कीमत की भरपूर वसूली पाने में या चुनने की सुविधा में आप कहीं अधिक फायदे में रहेंगे.
गर्मी से परेशान न हों.
ओरिएन्ट जब साथ है तो आराम आपके पास है.

दो साल की गारन्टी

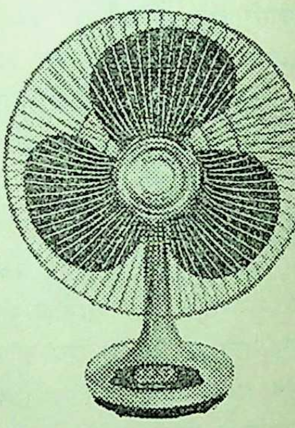

४ सीलिंग पंखे • ६ टेबल पंखे • २ पेडेस्टल पंखे

ओरिएन्ट
पंखा

एक से बढ़कर एक. चुनने के लिये अनेक.

ओरिएन्ट जनरल इण्डस्ट्रीज़ लिमिटेड
६, घोर बीबी लेन, कलकत्ता ७०० ०५४

OGI-3/79/H

करते और दाना चुगते थे। थोड़ी देर इस तरह चक्कर काटने के बाद प्रवासी पक्षी फिर आगे बढ़ जाते हैं। बाद में द. अमरीका से वापस आते समय भी उनका यह विचित्र व्यवहार देखा जा सकता है।

दूसरा उदाहरण है यूरोपियन ईल मछलियों का। इनके संबंध में अरस्तू ने भी एक प्रश्न उठाया था——आखिर वे प्रजनन कहां करती हैं ? क्योंकि हर दो वर्ष बाद नदी-तालाबों में रहनेवाली ईल मछलियां समुद्र की ओर दौड़ती हैं। आज से २००० वर्ष पहले, अरस्तू के समय में केवल इतना ही मालूम था, लेकिन अब हम जान गये हैं कि इन शताब्दियों में हर दो वर्ष बाद ईल मछलियां उत्तर अटलांटिक बेसिन में बरमूडा के चारों ओर फैले सरगासो सागर में जाती हैं और वहां ५०० मीटर की गहराई पर प्रजनन करती हैं। इसके बाद मादा ईल मछलियां मर जाती हैं और नवजात मछलियां फिर से यूरोप की ओर लौटती हैं, दो वर्ष बाद वही प्रक्रिया दोहराने के लिए।

लोग कहते हैं कि ईल मछलियों का लौटना उनके अटलांटिस द्वीप की ओर लौटने की प्रवृत्ति है, जो पहले कभी वहां अवस्थित था। इसी संदर्भ में वनस्पति से भरपूर सरगासो सागर को ही अटलांटिस का स्थान बताया गया है।

इस संबंध में कुछ भूगर्भीय प्रमाण भी उपलब्ध हैं। यूरोप की कांटिनेंटल शेल्फ की जांच से पता चला है कि फ्रांस स्पेन, उत्तरी अफरीका और अमरीका से समुद्र में बहनेवाली नदियां पानी में अपनी घाटियों में काफी दूर तक बहती हैं——कभी-कभी उनका बहाव डेढ़ मील की गहराई तक जा पहुंचता है।

हडसन नदी केन्योन समुद्र में तट से २०० मील आगे तक विस्तारित है। इससे यही पता चलता है कि इस समय सैकड़ों फीट पानी में डूबे नदी-मार्ग तब बने होंगे जब ये हिस्से मुख्यभूमि के शुष्क भाग थे। बाद में या तो जमीन धंस गयी या पानी ऊपर चढ़ आया।

जियोलाजिकल सोसाइटी ऑव अमरीका ने कहा था कि इन तथ्यों से यह पता चलता है समुद्रतट नीचा होने या ऊंचा उठने का यह क्रम विश्वव्यापी है और इसमें कहीं-कहीं ८००० फीट तक का अंतर आया है।

१८९८ में अटलांटिक के आरपार पड़ा समुद्री केबल एजोर द्वीप के पास टूट गया। उसे ठीक करने के लिए समुद्र के अंदर खोज की गयी तो पता चला कि वहां समुद्र तल अनगढ़ शिखरों और गहरी घाटियोंवाला है और १७०० फेदम की गहराई से चट्टान का जो टुकड़ा ऊपर लाया गया, वह ऐसे लावा से बना था जो पानी से ऊपर वातावरणीय दाब में ठंडा होता है। यानी यह स्थान कभी न कभी पानी से ऊपर था।

इसी तरह लगभग दो मील की गहराई से ऐसे पौधे निकाले गये, जो ताजे

पानी में पलते हैं।

आज यूरोप, अफरीकी और अमरीकी महाद्वीपों के बीच गहरा अटलांटिक महासागर है, लेकिन फिर भी दोनों महाद्वीपों पर एक-दूसरे से मिलते-जुलते जीवाश्म और वनस्पति अवशेष पाये गये हैं—और उनसे पता चलता है कि कभी ये क्षेत्र स्थलमार्ग से जुड़े हुए थे। और यह भी प्रमाणित होता है कि अन्य किसी भी महासमुद्र की अपेक्षा अंधमहासागर क्षेत्र में अधिक भूपरिवर्तन हुए हैं, जलस्तर में वृद्धि हुई है या गिरावट आयी है।

१७८३ में आये भूकंप में आइसलैंड की जनसंख्या का पांचवां हिस्सा मौत के मुंह में चला गया था। १९६३–६६ के बीच भूकंपीय गतिविधि के कारण आइसलैंड के दक्षिणी-पश्चिमी तट से २० मील दूर एक नया द्वीप बन गया—यह काफी बड़ा है।

१७७५ में लिस्बन में आये भूकंप से ६०,००० लोग मारे गये थे और वहां की जमीन ६०० फुट नीचे धंस गयी थी।

ये और इस-जैसी अन्य भूकंपीय गतिविधियां इस बात को प्रमाणित करती हैं कि जहां अटलांटिस होने की बात कही जाती है उस क्षेत्र में यह भौमिकीय उलट-पलट प्रक्रिया सबसे तीव्र है। इसलिए यह संभव है कि अटलांटिस ऐसे ही किसी

सफेद दाग से दुखी क्यों?

सफल तेज आयुर्वेदिक इलाज की खोज

यदि आप सफेद दाग के कारण दुखी हैं तो अब निराश न हों। सफेद दाग असाध्य नहीं है। सही इलाज कराने से यह भी दूसरे रोगों की तरह मिट जाता है। हमने सफेद दाग के हजारों रोगियों को रोग से मुक्ति दिलाकर उनके प्रशंसापत्र प्राप्त किया है। कई वर्षों के लगातार मेहनत एवम् खोज के बाद सफेद दाग की चिकित्सा में पूर्ण सफलता प्राप्त की है। यह इतना तेज एवम् प्रभावी है कि इलाज शुरू होते ही दाग का रंग बदलने लगता है और शीघ्र ही रोग के सभी विकारों को खत्मकर दागको चमड़ी के प्राकृतिक रग मे मिला देता है। वैसे मरीज जो कई प्रकार का इलाज करा कर निराश हो गए थे, वे भी हमारे इलाज से अच्छे हुए हैं। यदि आप भी इन दागों के कारण दुखी हैं, और सभी प्रकार का इलाज कराकर निराश हो गए हों, तो भी एक बार अवश्य आजमा कर देखें। रोग विवरण लिखें। अभी प्रचार हेतु एक पैकेट दवा मुफ्त दी जा रही है। चाहें तो स्वयम् आकर मिलें।

हमारा इलाज हजारों रोगियों पर परिक्षित है। अतः विश्वसनीय है

श्री आयुर्वेदिक फार्मेसी (का) पो० कतरी सराय (गया)

झटके का शिकार होकर समुद्र में समा गया हो।

और यह भी कि हम पृथ्वी के इतिहास में जैसे-जैसे पीछे जाते हैं, पता चलता है कि उसका उद्वेलन आज के मुकाबले में अधिक ही था। आज इस बात के वैज्ञानिक प्रमाण मिलते हैं कि सहारा मरुभूमि कभी सागर थी और भूमध्यसागर सूखी जमीन। उत्तरी समुद्र से निकाले गये पाषाणयुगीन उपकरणों और हाथीदांत से पता चलता है कि यह कभी तटीय स्थल-क्षेत्र था। राकी पर्वतों पर शार्क मछलियों के जीवाश्म मिले हैं। इन्हीं से प्रमाणित है कि कभी जल थल था और थल जल। आज भूगर्भ विज्ञानी अटलांटिस द्वीप के अस्तित्व की संभावना तो स्वीकार करते हैं, पर वह किस समय था, इस बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता।

आज हम जानते हैं कि हमारे पूर्वज किन्हीं बातों में हमसे बहुत आगे थे।

हजारों वर्ष पहले भी लोग इस बात को जानते थे कि सूर्य-परिक्रमा के दौरान यूरेनस ग्रह की अपनी चंद्रमाओं पर पड़ती है, जबकि निश्चित रूप से उस समय दूरवीक्षण यंत्र नहीं थे, क्योंकि अनेक चित्रों में यूरेनस देवता को अपने बच्चों को पहले खाते और फिर उगलते हुए दिखाया गया है।

प्राचीन असीरिया की राजधानी निनेवा की खुदाई के दौरान एक ऐसा शीशा मिला जो आधुनिक ऑप्टिकल लेंस की तरह का है। यह आज से २००० वर्ष पहले की उपलब्धि है।

इसी तरह की चमत्कारिक वस्तुएं लीबिया व उत्तरी अफरीका के मकबरों में भी मिली हैं। प्लूटार्क के अनुसार प्राचीन सिसली में एक ऐसा यंत्र बनाया गया था जिससे सूर्य की विशालता का अंदाजा लगाया जा सकता था।

१६ वीं शती के एक तुर्की नाविक के पास ऐसा विश्व मानचित्र देखा गया था जिसमें दक्षिण अमरीका, अफरीका और दक्षिणी ध्रुव के कुछ क्षेत्र दिखाये गये थे। सवाल यह है कि उस समय के मानचित्र में दक्षिणी ध्रुवप्रदेश को कैसे शामिल किया जा सका। दक्षिणी ध्रुवक्षेत्र के आधुनिक सर्वेक्षणों में से उस नक्शे की सत्यता प्रमाणित हो जाती है। क्या यह आश्चर्यजनक नहीं है कि उस नक्शे का आधार उन ग्रीक मानचित्रों को बताया जाता है जो हजारों वर्ष पहले अलेक्जेंड्रिया के पुस्तकालय में रखे हुए थे और जिन्हें नष्ट कर दिया गया।

और गिजा के पिरामिडों को तो सुपरमैनों द्वारा ही निर्मित माना जाएगा। उनकी ऊंचाई, उनमें लगे भीमकाय पत्थर और निर्माण में प्रयुक्त ज्यामितीय आकल्पनों की शुद्धता चमत्कारिक ही कही जा सकती है। एक पिरामिड की उत्तरी दीवार में लाखों टन चट्टानों के बीच एक ऐसा छिद्र पाया गया है जिसके जरिये किंग्स चेंबर में बैठकर ध्रुवतारे को देखा जा

सकता है।

उन्नत मिस्री सभ्यता का उद्गम अब तक रहस्य बना हुआ है। ईसा से ३२०० वर्ष पूर्व वहां प्रथम राजकुल का शासन आया था। उस समय मिस्र को एकाएक पाषाण युग से एकदम उछलकर उन्नत सभ्यता के दौर में खड़ा पाते हैं। यह परिवर्तन जैसे रातोरात हो गया था।

आखिर वे लोग कौन थे? प्राचीन मिस्री इतिहासज्ञ अपने पूर्वजों को देवता बनाते हैं? क्या ये लोग अटलांटिस से आये थे, और मिस्र में उन्होंने अपनी सभ्यता-संस्कृति को फिर से जमाया था?

प्राचीन मिस्र और दक्षिण-मध्य अमरीकी सभ्यताओं में काफी साम्यता है। दोनों ही सूर्य-पूजक थे, दोनों की स्थापत्य-शैली भी लगभग एक-सी है। इन क्षेत्रों के आदिवासी यह मानते हैं कि उनकी संस्कृति के जनक बाहर से आये थे। क्या ये वही लोग थे जो मिस्र भी गये थे—यानी अटलांटिस के वासी।

एक बात और है—इंका, अज्तेक और मय जातियों की पूर्ववर्ती सभ्यताएं एकदम चरम पर थीं। उन्होंने जो कुछ बनाया वह कल्पनातीत है, लेकिन उनके बाद आनेवालों में उतनी प्रखरता नहीं दिखायी देती—क्यों?

कई दक्षिण व मध्य अमरीकी नगर

सफेद दाग का इलाज
सफल तेज असर-कारक इलाज का खोज
इसने सफेद दाग के हजारों रोगियों को रोग मुक्ति दिलाकर अनेक प्रशंसा पत्र प्राप्त किया है। वर्षों लगातार परिश्रम एवं खोज के बाद सफेद दाग के इलाज पर पूर्ण सफलता प्राप्त की है। यह इतनी तेज असर कारक है कि इसके शुरु होते ही दागों का रंग बदलने लगता है और शिघ्र ही रोग होने वाले सभी कारणों को रोक कर, दागों को चमड़े के रंगों में मिला देता है। हमने काफी ऐसे मरीजों को जो यह सोचकर कि अब मेरा दाग नहीं मिटेगा, बैठ गये थे उन्हें भी जड़ से छुटकारा दिलाया है। हजारों ने लाभ पाया हैं और नित्य पा रहे हैं। अभी प्रचार हेतु एक फायल दवा मुफ्त दी जा रही है। यदि आप अनेक प्रकार से निराश हो गये हों, तो भी इसे एक बार अवश्य आजमा कर देखें। दाग कहां-कहां कितने बड़े एवं कितने दिनों से हैं, अवश्य लिखें। चाहें तो आकर मिलें।
इलाज का दावा कोई भी कर सकता है विश्वास लाभ देख कर करें।
पता :- भारत आयुर्वेदाश्रम, पो० कतरी सराय (गया) भारत

हजारों फुट ऊंचे पर्वत शिखर क्षेत्रों में बसे हैं। वहां के भवनों में जो पत्थर प्रयोग किये गये हैं—वे पिरामिड में लगे पत्थरों से भी भारी हैं—बिना आधुनिक उपकरणों के उन्हें ऊपर तक कैसे पहुंचाया गया होगा? कौन थे वे सुपरमैन? यह क्षेत्र एंडीज पर्वतमाला के कारण भूकंपीय दृष्टि से अत्यंत अस्थिर है इसलिए इन प्राचीन भवनों को भूकंप-रोधी तरीके से बनाया गया था—यानी पत्थरों को सीधे-सीधे एक दूसरे के ऊपर न रखकर उन्हें भूकंपीय दोलन की आड़ी-तिरछी रेखाओं की तरह काटकर एक दूसरे में फंसाया गया, ताकि भूकंप का प्रभाव न पड़े। ऐसी प्रविधि की जानकारी किसने दी उन्हें?

पेरू में लीमा से १६० मील दक्षिण में पृथ्वी पर अनोखे ज्यामितीय आकल्पन और पशु-पक्षियों व मनुष्यों के विशाल चित्र हैं—इतने बड़े कि उन्हें पूरी तौर पर वायुयान से ही देखा जा सकता है। आश्चर्य है, उन्हें किन चित्रकारों ने बनाया होगा? क्या अटलांटिस से आये लोगों ने।

अटलांटिस सचमुच था या नहीं इस संबंध में बहुत से परस्पर विरोधी तर्क दिये जाते हैं— सबसे पहले प्लेटो के शिष्य अरस्तू ने विरोधी मत प्रकट किया था—उसने (प्लेटो) ही उसे (अटलांटिस) बनाया (कल्पना की थी) था और फिर स्वयं ही नष्ट भी कर दिया।

यहां यह उल्लेखनीय है कि ऐसी बहुत-सी बातें जिन्हें हम पहले कपोल-कल्पना कहते थे, पुरातात्त्विक व अन्य प्रमाणों के मिलने के बाद अब सच समझे जाने लगे हैं। उनमें पोंपेई और हरकुलिनम के भूकंपीय लावे में दबे नगरों और ट्रॉय को खोजे जाने से पहले गप ही कहा जाता था।

अगर अटलांटिस कभी था, तो वहां के निवासियों की कोई न कोई भाषा व लिपि अवश्य रही होगी? क्या किसी को उसके बारे में कुछ मालूम है? हां, आज बास्क जाति के लोग अपने को अटलांटिस-वासियों के वंशज मानते हैं और कहते हैं कि रोमन लिपि अपनाने से पहले उनकी भाषा व लिपि दूसरी ही थी। समस्त यूरोपीय भाषाओं में बास्क एकदम अलग-थलग दिखायी देती है और पता चलता है कि यह अमरीकी-इंडियन भाषाओं के नजदीक है। उनकी भाषा के कुछ शब्द एकदम पुरापाषाणकालीन दिखायी देते हैं।

मिस्री चित्र-लिपि विश्व की प्राचीनतम लिपियों में मानी जाती है। मिस्री लोग इसे देवताओं की भाषा-लिपि मानते थे। वे उन्हें पश्चिमी समुद्र से आया मानते हैं। लेकिन सर्वप्रथम अक्षर-लिपि अपनाने का श्रेय फीनिशियनों को दिया जाता है। ये वही नाविक जाति के लोग थे, जो व्यापार के सिलसिले में अटलांटिस की दिशा में जाया करते थे। क्या हम यह मानें कि फीनिशियनों को इनकी प्रेरणा अटलांटिस से मिली थी।

रोमन विजय से पहले इटली में रहने-

110397

बाली रहस्यमय एत्रुस्कन जाति को अटलांटिस-वासियों का ही वंशज माना जाता था, क्योंकि प्लेटो ने उनके बारे में कहा——'उन्हें (एत्रुस्कनों को) अटलांटिसवासियों ने पराजित किया था।'

'अटलांटिस कभी था या नहीं' के अनसुलझे विवाद के साथ यह प्रश्न भी अकसर उठाया जाता रहा है कि अगर अटलांटिस था तो कहां?

कुछ का कहना है कि प्लेटो के कहे अनुसार यह अटलांटिक में था——क्योंकि उसे प्राचीन मिस्री अभिलेखों के आधार पर पुजारियों ने बताया था। कई खोजी यह मानते हैं कि अटलांटिस वर्तमान सहारा मरुस्थल के नीचे है, क्योंकि पहले यहां तक समुद्र था। दूसरी ओर कुछ लोग कहते हैं कि अटलांटिस वर्तमान उत्तरी ध्रुव के नीचे है। कई विद्वान यह मानते हैं कि अटलांटिस और कुछ नहीं एक ऐतिहासिक संस्कृति को प्लेटो द्वारा दिया गया मात्र एक नाम है।

तथ्यों की ज़ांच से एक बात और उभरकर आती है कि प्लेटो द्वारा पहले-पहल अटलांटिस का जिक्र किये जाने के वाद इस विचार का विरोध शुरू हो गया था। इसे गप्प कहकर खिल्ली उड़ायी जाती थी, लेकिन जैसे-जैसे समय बीता और विभिन्न वैज्ञानिक दृष्टियों से इस थ्योरी पर खोज की गयी तो अटलांटिस को एकदम कपोल-कल्पना कहनेवालों की संख्या में कमी आती गयी और यह माना जाने लगा——हो सकता है इस तरह की कोई द्वीप-सभ्यता अटलांटिक में कभी न कभी मौजूद रही हो।

ग्रीक पुरातत्वविद डॉ. स्प्रीडान मरितोस का कहना है कि थेरा द्वीप ही अटलांटिस था। उनके अनुसार क्रीट का मिनोअन साम्राज्य रहस्यपूर्ण ढंग से मिट गया और इसकी राजधानी नोसेस एक भूकंप में नष्ट हो गयी। थेरा का द्वीप टुकड़े-टुकड़े होकर पानी में डूब गया। यह ईसा से १५ सदी पहले हुआ था। इसके कारण उठनेवाली लहरने से दूर-दूर तक की समुद्रतटीय बस्तियों को प्रभावित किया होगा और शायद, इसी से जल प्रलय के मिथकों ने जन्म लिया। खुदाई के बाद थोरा और कीट पर १३० फोट मोटी भूकंपीय राख की परतें मिली हैं।

निश्चित रूप में अब अटलांटिस संबंधी खोज का आधार अधिक वैज्ञानिक होता जा रहा है, क्योंकि विज्ञान ने पूर्वापेक्षा अधिक परिष्कृत उपकरण व प्रविधियां जुटा दी हैं।

हाल ही में समुद्र में ऐसे द्वीपों का पता चला है जो अटलांटिस जितने बड़े तो नहीं, पर फिर इतने बड़े जरूर हैं जिन पर काफी लोग रह सकते हैं।

हो सकता है कभी खोजी वैज्ञानिक पुरातत्त्वविद सचमुच अतलांटिस को खोज निकालें। ●

दि हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड की ओर से सन्तोष नाथ द्वारा हिन्दुस्तान
टाइम्स प्रेस, नयी दिल्ली में मुद्रित तथा प्रकाशित

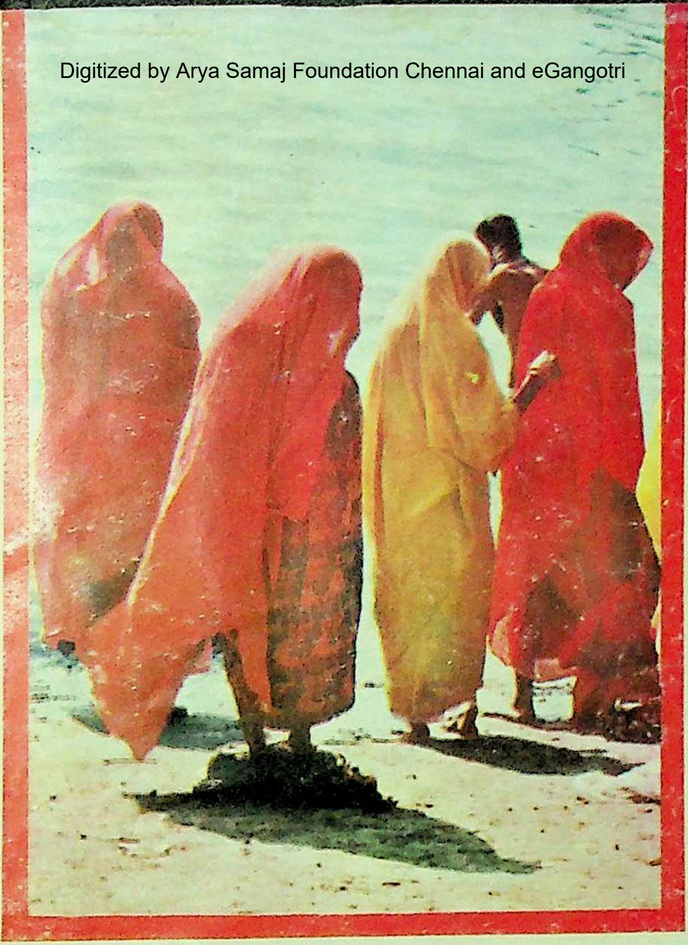

छाया : अजीतकुमार

समस्यापूर्ति— २

बंदी हैं हम अब भी कैदियों की तरह ...

ऊपर प्रकाशित चित्र को ध्यान से देखिए और उसके नीचे बड़े अक्षरों में लिखी पंक्ति पढ़िए। इन्हें लेकर आपको एक कविता लिखनी है—गीत, गजल या छंद-हीन पंक्तियां भी। आपकी कविता छह पंक्तियों से किसी भी स्थिति में अधिक नहीं होनी चाहिए। रचना आपकी मौलिक हो। जो श्रेष्ठ रचना होगी, उसे पुरस्कृत किया जाएगा।

प्रथम पुरस्कार——२५ रुपये

द्वितीय पुरस्कार—१५ रुपये

पहुंचने की अंतिम तिथि—— ३० जून, १९७६

THREE IN ONE
all the eletrical gadgets
at
HINDUSTAN
TRADERS CO.

SUMEET RALLI MIXERS
TAPE RECORDERS
TWO-IN ONE GAS &
ELECTRIC COOKING RANGER
HINDUSTAN & OTHER
WASHING MACHINES
TV GAMES GAS TANDOORS
TOASTERS AUTO PRESS
GEYSERS HEAT CONVECTORS
HOT CABINETS OVENS
PRESSURE COOKERS
CALCULATORS
RACOLD BAJAJ KLEERTONE
& ELITE ELECTRICALS

ALL THE TV'S AT
HINDUSTAN TRADERS

Spencer's
Weston
BIGSTON
STANDARD
Texla®
CROWN TV
televista
Shelton
Bharat TV
AVAILABLE ON INSTALMENTS

ALL THE FRIDGES
AT
HINDUSTAN TRADERS

Kelvinator
Godrej
Leonard
ALLWYN
GEM
Voltas
GULMARG
ZENITH
DELIVERY EX-STOCK

HTC
HINDUSTAN

HINDUSTAN TRADERS CO.

32, South Patel Nagar Market New Delhi-8 Ph 589546, 583261
B-10/12 Ring Road, Rajouri Garden, New Delhi- Ph 588238
R-5, Green Park Market, New Delhi-110016) Ph. 669768

NEW SHOW ROOM:
in the Heart of the Capital
96, Panchkuin Road (Near Lady Hardinge Hospital),
New Delhi-110055. Phone: 310247

311/93 XII/84

[redacted]

Compiled
1999-2000

22